Yoga Vasishtha, Book 4 — Sthiti

Existence. Sanskrit with English and Hindi.

From yogavasishtha.com — edition of 28 September 2026. The Sanskrit is in the public domain. The English and Hindi translations were made with a language model and have not been reviewed by a Sanskrit scholar: read them as a study aid, not as an authority. Each verse gives the Sanskrit in Devanagari and IAST, then the English, then the Hindi.

Chapter 1

4.1.1

अथोत्पत्तिप्रकरणादनन्तरमिदं श्रृणु । स्थितिप्रकरणं राम ज्ञातं निर्वाणकारि यत् ॥ १ ॥

athottpattiprakaraṇādanantaramidaṃ śṛṇu | sthitiprakaraṇaṃ rāma jñātaṃ nirvāṇakāri yat || 1 ||

Now, right after the chapter on how the world comes into being, listen to this: the chapter on how it goes on existing, Rama. Knowing this brings liberation.

अब जगत की उत्पत्ति वाले प्रकरण के तुरंत बाद यह सुनो, हे राम। यह जगत के टिके रहने का प्रकरण है, और इसे जान लेने से मुक्ति मिलती है।

4.1.2

एवं तावदिदं विद्धि दृश्यं जगदिति स्थितम् । अहं चेत्याद्यनाकारं भ्रान्तिमात्रमसन्मयम् ॥ २ ॥

evaṃ tāvadidaṃ viddhi dṛśyaṃ jagaditi sthitam | ahaṃ cetyādyanākāraṃ bhrāntimātramasanmayam || 2 ||

So, first understand this: this world that you see standing before you, and the sense of I and everything like it, none of this has any real shape. It is only an illusion, made of what does not exist.

तो पहले यह समझ लो, यह जो जगत तुम्हें दिखाई देता है, और मैं का भाव और उससे जुड़ी हर चीज़, इनका कोई असली रूप नहीं है। यह सिर्फ एक भ्रम है, जो न होने वाली चीज़ से बना है।

4.1.3

अकर्तृकमरङ्गं च गगने चित्रमुत्थितम् । अद्रष्टृकं चानुभवमनिद्रं स्वप्नदर्शनम् ॥ ३ ॥

akartṛkamaraṅgaṃ ca gagane citramutthitam | adraṣṭṛkaṃ cānubhavamanidraṃ svapnadarśanam || 3 ||

It is a picture with no painter and no canvas, rising in the open sky. It is an experience with no one to experience it, a dream seen without being asleep.

यह एक ऐसी तस्वीर है जिसका न कोई चित्रकार है, न कोई कैनवास, और जो खुले आकाश में उठ खड़ी होती है। यह एक ऐसा अनुभव है जिसे अनुभव करने वाला कोई नहीं है, बिना सोए देखा गया सपना।

4.1.4

भविष्यत्पुरनिर्माणं चित्तसंस्थमिवोदितम् । मर्कटानलतापान्तमसदेवार्थसाधकम् ॥ ४ ॥

bhaviṣyatpuranirmāṇaṃ cittasaṃsthamivoditam | markaṭānalatāpāntamasadevārthasādhakam || 4 ||

It is like building a city that does not exist yet, something that rises as if it stood only in the mind. It dies down like the heat of a monkeys fire, and though it is made of nothing real, it still gets its work done.

यह एक ऐसे शहर को बनाने जैसा है जो अभी है ही नहीं, जो मानो सिर्फ मन में बना खड़ा है। यह बंदरों की आग की गर्मी की तरह ठंडी पड़ जाती है, और असली न होने पर भी अपना काम कर जाती है।

4.1.5

ब्रह्मण्यनन्यदन्याभमम्ब्वावर्तवदास्थितम्। सद्भूमपि निःशून्यं तेजः सौरमिवाम्बरे ॥ ५ ॥

brahmaṇyananyadanyābhamambvāvartavadāsthitam | sadrūmapi niḥśūnyaṃ tejaḥ sauramivāmbare || 5 ||

It is not different from Brahman, though it looks like something else, it stands the way a whirlpool stands in water. Though it has the shape of something real, it is not empty, like the suns light in the open sky.

यह ब्रह्म से अलग नहीं है, भले ही यह कुछ और दिखाई दे, यह वैसे ही खड़ा है जैसे पानी में भंवर खड़ा होता है। यह असली जैसा दिखता है, पर खाली नहीं है, जैसे खुले आकाश में सूरज की रोशनी।

4.1.6

रत्नाभापुंजमिव खे दृश्यमानमभित्तिमत्। गन्धर्वाणां पुरमिव दृश्यं नित्यमभित्तिमत् ॥ ६ ॥

ratnābhāpuṃjamiva khe dṛśyamānamabhittimat | gandharvāṇāṃ puramiva dṛśyaṃ nityamabhittimat || 6 ||

It appears in the sky like a heap of jewel light, with no wall behind it. It is seen there always, like the city of the Gandharvas, with no wall behind it either.

यह आकाश में रत्नों की चमक के ढेर जैसा दिखाई देता है, जिसके पीछे कोई दीवार नहीं है। यह हमेशा गंधर्वों के उस नगर जैसा दिखता है, जिसके पीछे भी कोई दीवार नहीं है।

4.1.7

मृगतृष्णाम्ब्विवासत्यं सत्यवत्प्रत्ययप्रदम्। संकल्पपुरवत्प्रौढमनुभूतमसन्मयम् ॥ ७ ॥

mṛgatṛṣṇāmbvivāsatyaṃ satyavatpratyayapradam | saṃkalpapuravatprauḍhamanubhūtamasanmayam || 7 ||

It is unreal, like the water of a mirage, yet it convinces you it is real, the way a true thing does. It is fully formed, like a city built only by imagination, and though you experience it, it is made of what does not exist.

यह मृगतृष्णा के पानी जैसा झूठा है, फिर भी यह तुम्हें ऐसे यकीन दिलाता है जैसे कोई सच्ची चीज़ दिलाती है। यह पूरी तरह बना बनाया लगता है, जैसे केवल कल्पना से बना कोई शहर, और अनुभव में आने पर भी यह न होने वाली चीज़ से बना है।

4.1.8

कथार्थप्रतिभानात्म न क्वचित्स्थितमस्थितम्। निःसारमप्यतीवान्तःसारं स्वप्नाचलोपमम् ॥ ८ ॥

kathārthapratibhānātma na kvacitsthitamasthitam | niḥsāramapyatīvāntaḥsāraṃ svapnācalopamam || 8 ||

Its nature is like the meaning inside a story, it stands nowhere at all, it has no fixed place. Though it has no real substance, it feels intensely solid from within, like a mountain seen in a dream.

इसका स्वभाव किसी कहानी के भीतर के अर्थ जैसा है, यह कहीं भी टिका हुआ नहीं है, इसकी कोई तय जगह नहीं है। इसमें कोई असली सार नहीं है, फिर भी यह भीतर से बहुत ठोस लगता है, जैसे सपने में दिखा कोई पहाड़।

4.1.9

भूताकाशमिवाकारभासुरं शून्यमात्रकम्। शरदभ्रमिवाग्रस्थमलमक्षयमक्षतम् ॥ ९ ॥

bhūtākāśamivākārabhāsuram śūnyamātrakam | śaradabhramivāgrasthamalamakṣayamakṣatam || 9 ||

Like the empty space inside things, it shines with a shape, though it is nothing but emptiness. Like an autumn cloud standing right in front of you, it is, in truth, never destroyed and never broken.

जैसे चीज़ों के भीतर की खाली जगह होती है, यह एक आकार लेकर चमकता है, हालांकि यह खालीपन के सिवा कुछ नहीं है। जैसे तुम्हारे ठीक सामने खड़ा शरद ऋतु का बादल, यह सच में कभी नष्ट नहीं होता और कभी टूटता नहीं।

4.1.10

वर्णो व्योममलस्येव दृश्यमानमवस्तुकम्। स्वप्नाङ्गनारताकारमर्थनिष्ठमनर्थकम्॥ १०॥

varṇo vyomamalasyeva dṛśyamānamavastukam | svapnāṅganāratākāramarthaniṣṭhamanarthakam || 10 ||

It is like a color that seems to appear on the sky, though the sky is clean and has nothing on it, you can see it, but it is not a real thing. It is like making love to a woman in a dream, it feels like it means something, but it means nothing at all.

यह एक ऐसे रंग जैसा है जो आकाश पर दिखाई देता प्रतीत होता है, जबकि आकाश साफ है और उस पर कुछ भी नहीं है, तुम उसे देख सकते हो, पर वह असली चीज़ नहीं है। यह सपने में किसी स्त्री के साथ प्रेम करने जैसा है, लगता तो है कि इसका कोई मतलब है, पर इसका कोई मतलब नहीं है।

4.1.11

चित्रोद्यानमिवोत्फुल्लमरसं सरसाकृति। प्रकाशमपि निस्तेजश्चित्रार्कानलवत्स्थितम्॥ ११॥

citrodyānamivotphullamarasaṃ sarasākṛti | prakāśamapi nistejaścitrārkānalavatsthitam || 11 ||

It is like a garden in a painting, in full bloom, yet with no juice or life in it, though it has the shape of something fresh and full of sap. It shines, yet it has no heat in it, like the sun and the fire painted in a picture.

यह चित्र में बने बगीचे जैसा है, पूरी तरह खिला हुआ, फिर भी उसमें कोई रस या जान नहीं है, भले ही उसका आकार ताज़ा और रस से भरी चीज़ जैसा है। यह चमकता है, फिर भी उसमें कोई गर्मी नहीं है, जैसे चित्र में बनाए गए सूरज और आग।

4.1.12

अनुभूतं मनोराज्यमिवासत्यमवास्तवम्। चित्रपद्माकर इव सारसौगन्ध्यवर्जितम्॥ १२॥

anubhūtaṃ manorājyamivāsatyamavāstavam | citrapadmākara iva sārasaugandhyavarjitam || 12 ||

It is experienced, yet it is untrue and unreal, like a kingdom built only in the mind. It is like a painted lotus pond, without any real substance or fragrance in it.

यह अनुभव में आता है, फिर भी यह झूठा और असत्य है, जैसे सिर्फ मन में बनाया गया कोई राज्य। यह चित्र में बने कमल के तालाब जैसा है, जिसमें न कोई असली सार है, न कोई खुशबू।

4.1.13

शून्ये प्रकचितं नानावर्णमाकारितात्मकम्। अपिण्डग्रहमाशून्यमिन्द्रचापमिवोत्थितम्॥ १३॥

śūnye prakacitaṃ nānāvarṇamākāritātmakam | apiṇḍagrahamāśūnyamindracāpamivotthitam || 13 ||

It shines out in emptiness, showing many colors, its whole being nothing but an appearance with no substance behind it. It cannot be grasped as a solid thing, it is completely without substance, yet it rises up like a rainbow.

यह खालीपन में चमकता है, कई रंग दिखाते हुए, इसका पूरा अस्तित्व बस एक दिखावा है जिसके पीछे कोई सार नहीं है। इसे किसी ठोस चीज़ की तरह पकड़ा नहीं जा सकता, यह पूरी तरह सारहीन है, फिर भी यह इंद्रधनुष की तरह उठ खड़ा होता है।

4.1.14

परामर्शेन शुष्यद्भिर्भूतपेलवपल्लवैः। कृतं जडमसारात्म कदलीस्तम्भभासुरम्॥ १४॥

parāmarśena śuṣyadbhirbhūtapelavapallavaiḥ | kṛtaṃ jaḍamasārātma kadalīstambhabhāsuram || 14 ||

It is made of the tender, withering young shoots of created things, fragile at the slightest touch. It is dull, with no real substance in it, shining only like the trunk of a banana tree.

यह बनी हुई चीज़ों की कोमल, मुरझाती नई कोंपलों से बना है, जो हल्के से छूने पर भी बिखर जाती हैं। यह जड़ है, इसमें कोई असली सार नहीं है, यह बस केले के तने की तरह चमकता है।

4.1.15

स्फुरितेक्षणदृष्टान्धकारचक्रकवर्तनम् । अत्यन्तमभवद्रूपमपि प्रत्यक्षवत्स्थितम् ॥ १५ ॥

sphuritekṣaṇadṛṣṭāndhakāracakravartanam | atyantamabhavadrūpamapi pratyakṣavatsthitam || 15 ||

It is like the wheel of darkness you see turning when your eye trembles or flutters. Even though such a thing has never really come into being at all, it stands right there in front of you as if you could touch it.

यह वैसा ही है जैसे आँख के काँपने या फड़कने पर अंधेरे का एक चक्कर घूमता दिखाई देता है। ऐसी चीज़ असल में कभी बनी ही नहीं, फिर भी यह ठीक तुम्हारे सामने ऐसे खड़ी दिखती है जैसे तुम उसे छू सको।

4.1.16

वार्बुद्बुदमिवाभोगि शून्यमन्तःस्फुरद्वपुःरसात्मकं चाप्यरसमविच्छिन्नक्षयोदयम् ॥ १६ ॥

vārbudbudamivābhogi śūnyamantaḥsphuradvapuḥrasātmakaṃ cāpyarasamavicchinnakṣayodayam || 16 ||

It is like a bubble on water, it looks full and round, but is empty inside, its body flickering within. It seems to be full of essence, yet it has no essence at all, it keeps rising and dying away without a break.

यह पानी पर बने बुलबुले जैसा है, देखने में भरा और गोल लगता है, पर अंदर से खाली है, इसका शरीर भीतर ही भीतर टिमटिमाता रहता है। यह सार से भरा लगता है, पर इसमें कोई सार है ही नहीं, यह बिना रुके उठता और मिटता रहता है।

4.1.17

नीहार इव विस्तारि गृहीतं सन्न किंचन जडशून्यास्पदं शून्यं केषांचित्परमाणुवत् ॥ १७ ॥

nīhāra iva vistāri gṛhītaṃ sanna kiṃcana jaḍaśūnyāspadaṃ śūnyaṃ keṣāṃcitparamāṇuvat || 17 ||

It spreads out like fog, it seems like something you can grasp, but it turns out to be nothing at all. It is the home of a dull emptiness, to some it is like a mere atom, empty.

यह कोहरे की तरह फैलता है, लगता है जैसे इसे पकड़ा जा सकता है, पर यह कुछ भी नहीं निकलता। यह एक सुस्त खालीपन का घर है, कुछ लोगों के लिए यह मामूली से एक कण जैसा है, खाली।

4.1.18

किंचिद्भूतमयोऽस्मीति स्थितं शून्यमभूतकम्गृह्यमाणोऽप्यसद्रूपो निशाचर इवास्थितम् ॥ १८ ॥

kiṃcidbhūtamayo'smīti sthitaṃ śūnyamabhūtakamgṛhyamāṇo'pyasadrūpo niśācara ivāsthitam || 18 ||

It stands there thinking, I am made of something real, yet it is empty, it is not a real thing at all. Even while you can feel it right there, its form is untrue, it stands just like a demon that walks at night.

यह ऐसे खड़ा रहता है मानो सोच रहा हो, मैं किसी असली चीज़ से बना हूँ, फिर भी यह खाली है, यह असल में कुछ भी नहीं है। तुम इसे ठीक वहाँ महसूस भी कर सकते हो, तब भी इसका रूप झूठा है, यह बिल्कुल वैसे ही खड़ा रहता है जैसे रात में घूमने वाला कोई राक्षस।

4.1.19

श्रीराम उवाचमहाकल्पक्षये दृश्यमास्ते बीज इवाङ्कुरःपरे भूय उदेत्येतत्तत एव एति किं वद ॥ १९ ॥

śrīrāma uvācamahākalpakṣaye dṛśyamāste bīja ivāṅkuraḥpare bhūya udetyetattata eveti kiṃ vada || 19 ||

Sri Rama said: When the great cosmic age ends, the world we see remains within the Supreme, the way a sprout stays inside a seed. Later it rises again from that very same source. Tell me, what does this mean?

श्री राम ने कहा: जब महाकल्प का अंत होता है, तब यह दिखने वाला संसार परम तत्व में वैसे ही छिपा रहता है जैसे बीज में अंकुर छिपा रहता है। फिर वह उसी स्रोत से दोबारा उठ खड़ा होता है। मुझे बताइए, इसका क्या अर्थ है?

4.1.20

एवं बोधाः किमज्ञाः स्युरुत ज्ञा इति च स्फुटम्यथावद्भगवन्ब्रूहि सर्वसंशयशान्तये ॥ २० ॥

evaṃ bodhāḥ kimajñāḥ syuruta jñā iti ca sphuṭamyathāvadbhagavanbrūhi sarvasaṃśayaśāntaye || 20 ||

So tell me clearly, are these knowing beings ignorant, or are they wise? Please, Lord, tell me exactly as it is, so that all my doubts are put to rest.

तो यह साफ़-साफ़ बताइए कि ये जानने वाले जीव अज्ञानी हैं या ज्ञानी हैं। हे भगवन, जैसा सच में है वैसा ही बताइए, ताकि मेरे सारे संदेह मिट जाएँ।

4.1.21

श्रीवसिष्ठ उवाच । इदं बीजेऽङ्कुर इव दृश्यमास्ते महाशये । ब्रूते य एवमज्ञत्वमेतत्तस्यास्ति शैशवम् ॥ २१ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | idaṃ bīje'ṅkura iva dṛśyamāste mahāśaye | brūte ya evamajñatvametattasyāsti śaiśavam || 21 ||

Sri Vasishtha said: This visible world stays within the great being, the way a sprout stays inside a seed. Whoever says this and takes it as the plain truth, that itself shows he is still a child in understanding.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह दिखने वाला संसार उस महान सत्ता में वैसे ही रहता है जैसे बीज में अंकुर रहता है। जो कोई इसे यही मानकर पूरा सच समझ ले, समझो उसकी समझ अभी बच्चों जैसी ही है।

4.1.22

शृण्वेतत्किमसंबन्धं कथमेतदवास्तवम् । विपरीतो बोध एष वक्तुः श्रोतुश्च मोहकृत् ॥ २२ ॥

śṛṇvetatkimasaṃbandhaṃ kathametadavāstavam | viparīto bodha eṣa vaktuḥ śrotuśca mohakṛt || 22 ||

Listen to this: how is this comparison without a real connection, how is it not true to fact? This backward understanding confuses both the one who says it and the one who hears it.

यह सुनो: यह तुलना असल में कैसे बेमेल है, यह बात सच से कैसे परे है। यह उल्टी समझ कहने वाले और सुनने वाले, दोनों को भ्रम में डाल देती है।

4.1.23

बीजे किलाङ्कुर इव जगदास्त इतीह या । बुद्धिः सा सत्प्रलापार्थं मूढा शृणु कथं किल ॥ २३ ॥

bīje kilāṅkura iva jagadāsta itīha yā | buddhiḥ sā satpralāpārthaṃ mūḍhā śṛṇu kathaṃ kil || 23 ||

The idea that the world sits inside a seed the way a sprout does, that idea is spoken only as a manner of speaking. If someone takes it as the literal truth, it is a foolish idea. Listen, and I will show you how.

यह सोच कि संसार बीज में वैसे ही रहता है जैसे अंकुर रहता है, यह बात तो बस कहने भर के लिए कही जाती है। अगर कोई इसे शब्दशः सच मान ले, तो यह मूर्खता है। सुनो, मैं बताता हूँ यह कैसे है।

4.1.24

बीजं भवेत्स्वयं दृश्यं चित्तादीन्द्रियगोचरम् । यवधानादिधान्यानि युक्तः पत्राङ्कुरोद्भवः ॥ २४ ॥

bījaṃ bhavetsvayaṃ dṛśyaṃ cittādīndriyagocaram | yavadhānādidhānyāni yuktaḥ patrāṅkurodbhavaḥ || 24 ||

A real seed is itself something we can see, something the mind and the senses can reach, like grains of barley or paddy. From such grains, the sprouting of a leaf and a shoot rightly follows.

असली बीज तो खुद दिखाई देने वाली चीज़ होता है, जिसे मन और इंद्रियाँ पहचान सकती हैं, जैसे जौ या धान के दाने। ऐसे ही दानों से पत्ती और अंकुर का फूटना ठीक तरह से होता है।

4.1.25

मनःषष्ठेन्द्रियातीतं यत्स्यादतितरामणु । बीजं तद्भवितुं शक्तं स्वयंभूर्जगतां कथम् ॥ २५ ॥

manaḥṣaṣṭhendriyātītaṃ yatsyādatitarāmaṇu | bījaṃ tadbhavituṃ śaktaṃ svayaṃbhūrjagatāṃ katham || 25 ||

But that which is beyond the mind and the five senses, and is said to be finer than the finest, how could that be able to act as a seed? How can something so different from a seed be called the self-born source of all the worlds?

पर जो मन और पाँचों इंद्रियों से भी परे है, और जिसे सबसे सूक्ष्म कहा जाता है, वह भला बीज कैसे बन सकता है? जो बीज जैसा है ही नहीं, वह सब लोकों का अपने-आप बना हुआ स्रोत कैसे कहलाए?

4.1.26

आकाशादपि सूक्ष्मस्य परस्य परमात्मनः । सर्वाख्यानुपलम्भस्य कीदृशी बीजता कथम् ॥ २६ ॥

ākāśādapi sūkṣmasya parasya paramātmanaḥ | sarvākhyānupalambhasya kīdṛśī bījatā katham || 26 ||

The highest Self is finer even than empty space, and it cannot be grasped or named by anything at all. What kind of seed-nature could such a thing have? How?

परमात्मा आकाश से भी सूक्ष्म है, और उसे किसी नाम से पकड़ा या समझा नहीं जा सकता। ऐसे में उसमें बीज जैसा गुण कैसे हो सकता है? कैसे?

4.1.27

तत्सूक्ष्ममसदाभासमसदेव ह्यतादृशम् । कीदृशी बीजता तत्र बीजाभावे कुतोऽङ्कुरः ॥ २७ ॥

tatsūkṣmamasadābhāsamasadeva hyatādṛśam | kīdṛśī bījatā tatra bījābhāve kuto'ṅkuraḥ || 27 ||

That subtle reality only looks like something that does not exist, it is truly unlike anything else, and not a solid thing itself. So what kind of seed-nature could it have there? And if there is no seed, where could a sprout come from?

वह सूक्ष्म तत्व तो बस न होने जैसा दिखता है, वह किसी और चीज़ जैसा नहीं है और खुद कोई ठोस वस्तु भी नहीं है। तो उसमें बीज वाला गुण कहाँ से आएगा? और जब बीज ही नहीं है, तो अंकुर कहाँ से आएगा?

4.1.28

गगनाङ्गादपि स्वच्छे शून्ये तत्र परे पदे । कथं सन्ति जगन्मेरुसमुद्रगगनादयः ॥ २८ ॥

gaganāṅgādapi svacche śūnye tatra pare pade | kathaṃ santi jagannmerusamudragaganādayaḥ || 28 ||

In that highest state, which is clear and empty, finer even than the substance of the sky, how can the world, Mount Meru, the oceans, the sky, and everything else exist there?

उस परम अवस्था में, जो आकाश के तत्व से भी ज़्यादा साफ़ और खाली है, वहाँ यह संसार, मेरु पर्वत, समुद्र, आकाश और बाकी सब कुछ कैसे रह सकता है?

4.1.29

न किंचिद्यत्कथं किंचित्तत्रास्ते वस्तु वस्तुनि । अस्ति चेत्तत्कथं तत्र विद्यमानं न दृश्यते ॥ २९ ॥

na kiṃcidyatkathaṃ kiṃcittatrāste vastu vastuni | asti cet tatkathaṃ tatra vidyamānaṃ na dṛśyate || 29 ||

That which is nothing at all, how can any object exist inside it, one thing inside another thing? And if it really does exist there, then why, though it exists, is it not seen?

जो चीज़ सिरे से कुछ भी नहीं है, उसके भीतर कोई वस्तु, एक चीज़ के भीतर दूसरी चीज़, कैसे रह सकती है? और अगर वह सच में वहाँ है, तो होते हुए भी वह दिखती क्यों नहीं?

4.1.30

न किंचिदात्मनः किंचित्कथमेति कुतोऽथवा । शून्यरूपाद्घटाकाशाज्जातोऽद्रिः क्व कुतः कदा ॥ ३० ॥

na kiṃcidātmanaḥ kiṃcikathameti kuto'thavā | śūnyarūpāddhaṭākāśājjāto'driḥ kva kutaḥ kadā || 30 ||

Nothing can turn into something on its own, so how, and from where, could it arise? Has a mountain ever been born from the empty space closed inside a pot? Where, from where, and when has that happened?

जो कुछ नहीं है, वह अपने-आप कुछ कैसे बन जाए, और कहाँ से बने? क्या कभी घड़े के भीतर बंद खाली जगह से कोई पहाड़ पैदा हुआ है? कहाँ, कहाँ से, और कब ऐसा हुआ है?

4.1.31

प्रतिपक्षे कथं किंचिदास्ते च्छायातपे यथा । कथमास्ते तमो भानौ कथमास्ते हिमोऽनले ॥ ३१ ॥

pratipakṣe kathaṃ kiṃcidāste cchāyātape yathā | kathamāste tamo bhānau kathamāste himo'nale || 31 ||

How can anything exist inside its own opposite? Just as shade cannot exist inside sunlight, how can darkness exist inside the sun, and how can frost exist inside fire?

कोई चीज़ अपने विपरीत के भीतर कैसे रह सकती है? जैसे धूप में छाया नहीं रह सकती, वैसे ही सूरज में अंधेरा कैसे रहेगा, और आग में बर्फ़ कैसे रहेगी?

4.1.32

मेरुरास्ते कथमणौ कुतः किंचिदनाकृतौ । तदतद्रूपयोरैक्यं क्व च्छायातपयोरिव ॥ ३२ ॥

meruraāste kathamaṇau kutaḥ kiṃcidanākṛtau | tadatadrūpayoraikyaṃ kva cchāyātapayoriva || 32 ||

How can Mount Meru exist inside an atom? How can anything with a shape exist inside what has no shape at all? Where can a thing and its very opposite ever become one, just as shade and sunlight never do?

मेरु पर्वत किसी परमाणु के भीतर कैसे समा सकता है? जिसका कोई आकार ही नहीं, उसके भीतर आकार वाली कोई चीज़ कैसे रह सकती है? कोई चीज़ और उसका ठीक उल्टा कभी एक कैसे हो सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे छाया और धूप कभी एक नहीं होते?

4.1.33

साकारवटधानादावङ्कुराः सन्ति युक्तिमत् । नाकारे तन्महाकारं जगदस्तीत्ययुक्तिकम् ॥ ३३ ॥

sākāravataḍhānādāvṅkurāḥ santi yuktimat | nākāre tanmahākāraṃ jagadastītyayuktikam || 33 ||

In things that have a shape, like a banyan seed or a grain, sprouts reasonably come up. But to say that this vast, shaped world exists inside something that has no shape at all, that makes no sense.

जिन चीज़ों का आकार होता है, जैसे बरगद का बीज या कोई दाना, उनमें से अंकुर निकलना ठीक बात है। पर यह कहना कि यह विशाल, आकार वाला संसार किसी बिलकुल निराकार चीज़ के भीतर रहता है, यह बात बेतुकी है।

4.1.34

देशान्तरे यच्च नरान्तरे च बुद्ध्यादिसर्वेन्द्रियशक्ति दृश्यम् । नास्त्येव तत्तद्विधबुद्धिबोधे न किंचिदित्येव तदुच्यते च ॥ ३४ ॥

deśāntare yacca narāntare ca buddhyādisarvendriyaśakti dṛśyam | nāstyeva tattadvidhabuddhibodhe na kiṃcidityeva taducyate ca || 34 ||

A thing that is seen through the power of the mind and the senses, in one place and by one person, does not exist at all in the same way for the understanding of another place or another person. This, having no existence apart from one particular mind, is exactly what we call nothing.

जो चीज़ मन और इंद्रियों की ताकत से एक जगह और एक व्यक्ति को दिखती है, वही चीज़ किसी दूसरी जगह या दूसरे व्यक्ति की वैसी ही समझ में बिलकुल नहीं होती। यही बात, यानी किसी एक मन के बाहर उसका कोई वजूद न होना, असल में कुछ भी नहीं कहलाती है।

4.1.35

कार्यस्य तत्कारणतां प्रयातं वक्तीति यस्तस्य विमूढबोधः । कैर्नाम तत्कार्यमुदेति तस्मात्स्वैः कारणाद्यैः सहकारिरूपैः ॥ ३५ ॥

kāryasya tatkāraṇatāṃ prayātaṃ vaktīti yastasya vimūḍhabodhaḥ | kairnāma tatkāryamudeti tasmātsvaiḥ kāraṇādyaiḥ sahakārirūpaiḥ || 35 ||

Whoever says that an effect simply comes from being caused by that one thing, his understanding is entirely confused. After all, an effect only arises from a cause together with its own other causes and the many supporting conditions that work along with it.

जो कोई यह कहे कि कोई परिणाम बस उस एक कारण से पैदा हो गया, उसकी समझ पूरी तरह गड़बड़ है। असल में कोई भी परिणाम अपने कारण से, और उसके साथ काम करने वाले बाकी कई सहायक कारणों के साथ मिलकर ही पैदा होता है।

4.1.36

दुर्बुद्धिभिः कारणकार्यभावं संकल्पितं दूरतरे व्युदस्य । तदेव तत्सत्यमनादिमध्यं जगत्तदेतत्स्थितमित्यवेहि ॥ ३६ ॥

durbuddhibhiḥ kāraṇakāryabhāvaṃ saṃkalpitaṃ dūratare vyudasya | tadeva tatsatyamanādimadhyaṃ jagattadetatsthitamityavehi || 36 ||

So set aside, far away, this whole idea of cause and effect, it is only something foolish minds have imagined. Know instead that the one truth, which has no beginning and no middle, is itself what stands here as this world.

इसलिए कारण और कार्य के इस पूरे विचार को दूर हटा दो, यह तो बस मूर्ख मनों की कल्पना है। यह जान लो कि वही एक सत्य, जिसका न कोई आरंभ है न मध्य, वही यहाँ इस संसार के रूप में मौजूद है।

Chapter 2

4.2.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथैतदभ्युपगमे वच्मि वेद्यविदां वर । समस्तकलनातीते महाचिद्व्योम्नि निर्मले ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athaitadabhyupagame vacmi vedyaavidāṃ vara | samastakalanātīte mahācidvyomni nirmale || 1 ||

Sri Vasishtha said: accepting this, I will now speak, best of the knowers of what can be known, about that pure, great space of consciousness which is beyond all division.

श्री वसिष्ठ बोले: यह मानकर, अब मैं कहता हूं, हे जानने योग्य बातों के सबसे बड़े जानकार, उस शुद्ध, महान चेतना के आकाश के बारे में, जो हर तरह के बंटवारे से परे है।

4.2.2

जगदाद्यङ्कुरस्तत्र यद्यस्ति तदसौ तदा । कैरिवोदेति कथय कारणैः सहकारिभिः ॥ २ ॥

jagadādyaṅkuras tatra yadyasti tadasau tadā | kairivodeti kathaya kāraṇaiḥ sahakāribhiḥ || 2 ||

If the first sprout of the world exists there, then tell me, by what causes and what helping conditions does it arise?

अगर वहां संसार का पहला अंकुर मौजूद है, तो बताओ, वह किन कारणों और किन सहायक कारणों से पैदा होता है?

4.2.3

सहकारिकारणानामभावे त्वङ्कुरोद्गतिः । वन्ध्याकन्येव दृष्टेह न कदाचन केनचित् ॥ ३ ॥

sahakārikāraṇānāmabhāve tvāṅkurodgatiḥ | vandhyākanyeva dṛṣṭeha na kadācana kenacit || 3 ||

But without helping causes, the world's sprouting is never seen by anyone here, just as the daughter of a barren woman is never seen.

पर सहायक कारणों के बिना, संसार का अंकुरित होना यहां किसी ने कभी नहीं देखा, बिल्कुल वैसे ही जैसे बांझ स्त्री की बेटी कभी नहीं देखी जाती।

4.2.4

सहकारिकारणानामभावे यद्यवोदितम् । मूलकारणमेवाङ्ग तत्स्वभावस्थितिं गतम् ॥ ४ ॥

sahakārikāraṇānāmabhāve yadyavoditam | mūlakāraṇamevāṅga tatsvabhāvasthitiṃ gatam || 4 ||

And if, without helping causes, it never arose at all, then, dear one, the root cause itself simply stayed in its own natural state.

और अगर सहायक कारणों के बिना वह कभी पैदा ही नहीं हुआ, तो हे प्रिय, मूल कारण खुद अपनी स्वाभाविक अवस्था में ही बना रहा।

4.2.5

सर्गादौ सर्गरूपेण ब्रह्मैवात्मनि तिष्ठति । यथास्थितमनाकारं क्व जन्यजनकक्रमः ॥ ५ ॥

sargādau sargarūpeṇa brahmaivātmani tiṣṭhati | yathāsthitamanākāraṃ kva janyajanakakramaḥ || 5 ||

At the start of creation, Brahman alone stays within itself, in the form of creation, remaining just as it is, without any shape. So where is there any order of a thing produced and a thing that produces it?

सृष्टि के आरंभ में, ब्रह्म अकेला ही, सृष्टि के रूप में, अपने आप में टिका रहता है, बिल्कुल वैसे ही जैसे वह है, बिना किसी आकार के। तो फिर पैदा होने वाली चीज़ और पैदा करने वाली चीज़ का क्रम कहां है?

4.2.6

अथ पृथ्व्यादयोऽन्ये वा केचिदत्रोपकुर्वते । सहकारिकारणत्वं तत्पूर्वं चात्र दूषणम् ॥ ॥ ६ ॥

atha pṛthvyādayo'nye vā kecidatro'pakurvate | sahakārikāraṇatvaṃ tatpūrvaṃ cātra dūṣaṇam || 6 ||

Now suppose earth and the other elements, or something else, help out here as co-operating causes, that idea, as already shown, is itself the flaw in this.

अब मान लो कि पृथ्वी आदि तत्व, या कोई और चीज़, यहां सहायक कारण के रूप में मदद करते हैं, तो यह बात, जैसा पहले बताया जा चुका है, खुद ही यहां गलत है।

4.2.7

तस्मात्पदे जगच्छान्तमास्ते तत्सहकारिभिः । चित्तात्प्रसरतीत्युक्तिर्वालस्य न विपश्चितः ॥ ॥ ७ ॥

tasmātpade jagacchāntamāste tatsahakāribhiḥ | cittātprasaratītyuktirvālasya na vipaścitaḥ || 7 ||

So the world, together with its so-called helping causes, remains still and at rest in that one state. To say it spreads out from the mind is something a child would say, not a wise person.

इसलिए संसार, अपने तथाकथित सहायक कारणों समेत, उसी एक अवस्था में शांत और स्थिर बना रहता है। यह कहना कि वह मन से फैलता है, किसी बच्चे की बात है, किसी समझदार इंसान की नहीं।

4.2.8

तस्माद्राम जगन्नासीन्न चास्ति न भविष्यति । चेतनाकाशमेवाशु कचतीत्थमिवात्मनि ॥ ॥ ८ ॥

tasmādrāma jagannāsīnna cāsti na bhaviṣyati | cetanākāśamevāśu kacatītthamivātmani || 8 ||

Therefore, Rama, the world never existed, does not exist now, and will not exist later. It is only the space of consciousness that instantly shines like this within itself.

इसलिए, हे राम, संसार न कभी था, न अभी है, न आगे कभी होगा। यह तो बस चेतना का आकाश है, जो अपने ही भीतर पल भर में इस तरह चमक उठता है।

4.2.9

अत्यन्ताभाव एवास्य जगतो विद्यते यदा । तदा ब्रह्मेदमखिलमिति तद्राम नान्यथा ॥ ॥ ९ ॥

atyantābhāva evāsya jagato vidyate yadā | tadā brahmedamakhilamiti tadrāma nānyathā || 9 ||

When it is understood that this world has absolutely never existed at all, then all this is Brahman, that is so, Rama, and not otherwise.

जब यह समझ आ जाए कि यह संसार कभी सिरे से था ही नहीं, तब यह सब कुछ ब्रह्म ही है, यही सच है, राम, और कुछ नहीं।

4.2.10

पूर्व प्रध्वंसनान्योन्याभावैर्यदुपशाम्यति । न शाम्यत्येव तच्चित्ते शाम्यत्येव तु दृश्यते ॥ ॥ १० ॥

pūrva pradhvaṃsanānyonyābhāvairyadupaśāmyati | na śāmyatyeva taccitte śāmyatyeva tu dṛśyate || 10 ||

Whatever seems to stop through not yet having arisen, through destruction, or through one thing simply not being another, none of that truly stops in consciousness. It only looks like it stops, when merely seen.

जो कुछ 'अभी पैदा न होना', 'नाश होना', या 'एक चीज़ का दूसरी न होना', इन तरीकों से रुकता हुआ दिखता है, वह चेतना में असल में कभी नहीं रुकता। देखने में भर वह रुकता हुआ लगता है।

4.2.11

अत्यन्ताभाव एवास्य भावैर्यदुपशाम्यति । न शाम्यत्येव सच्चित्ते क्व शाम्यत्येव दृश्यता ॥ ११ ॥

atyantābhāva evāsya bhāvairyadupaśāmyati | na śāmyatyeva saccitte kv śāmyatyeva dṛśyatā || 11 ||

Only the world's absolute non-existence is real. Whatever seems to stop because other things arise, does not truly stop in true consciousness, so how could the seen world itself ever really stop?

संसार का सिरे से न होना ही असली बात है। जो कुछ दूसरी चीज़ों के आने से रुकता हुआ दिखे, वह सच्ची चेतना में असल में कभी नहीं रुकता, तो फिर यह दिखने वाला संसार खुद कैसे सच में रुक सकता है?

4.2.12

अत्यन्ताभाव एवातो जगद्दृश्यस्य सर्वथा । वर्जयित्वेतरा युक्तिर्नास्त्येवानर्थसंक्षये ॥ १२ ॥

atyantābhāva evāto jagaddṛśyasya sarvathā | varjayitvetarā yuktirnāstyevānarthasaṃkṣaye || 12 ||

So the seen world's absolute non-existence, in every respect, is the truth. Leaving this aside, there is no other real way to end this harmful illusion.

इसलिए दिखने वाले इस संसार का हर तरह से सिरे से न होना ही सच है। इसे छोड़कर, इस नुकसानदेह भ्रम को खत्म करने का और कोई तरीका नहीं है।

4.2.13

चिदाकाशस्य बोधोऽयं जगद्भातीति यत्स्थितम् । अयं सोऽहमिदं नाहं लोके चित्रकथा यथा ॥ १३ ॥

cidākāśasya bodho'yaṃ jagadbhātīti yatsthitam | ayaṃ so'hamidaṃ nāhaṃ loke citrakathā yathā || 13 ||

This is simply the awareness of the space of consciousness, the fact that a world appears. Ideas like this is that, I, this, and not I are like a painted story in this world.

यह बस चेतना के आकाश की वह जानकारी है, कि एक संसार दिखाई देता है। यह वह है, मैं, यह, मैं नहीं, ऐसी बातें इस दुनिया में एक चित्रित कहानी जैसी हैं।

4.2.14

इदमद्यादि पृथ्व्यादि तथेदं वत्सरादि च । अयं कल्पः क्षणश्चायमिमे मरणजन्मनी ॥ १४ ॥

idamadyādi pṛthvyādi tathedaṃ vatsarādi ca | ayaṃ kalpaḥ kṣaṇaścāyamime maraṇajanmanī || 14 ||

This today and the rest, this earth and the rest, this year and the rest, this long age, this single instant, this dying, this being born.

यह आज वगैरह, यह धरती वगैरह, यह साल वगैरह, यह लंबा युग, यह एक पल, यह मरना, यह जन्म लेना।

4.2.15

अयं कल्पान्तसंरम्भो महाकल्पान्त एष सः । अयं स सर्गप्रारम्भो भाव्यभावक्रमस्त्वसौ ॥ १५ ॥

ayaṃ kalpāntasaṃrambho mahākalpānta eṣa saḥ | ayaṃ sa sargaprārambho bhāvyabhāvakramastvāsau || 15 ||

This is the start of an age ending, that is the great dissolution of all ages, this is the beginning of creation, and that is the whole order of things coming to be and ceasing to be.

यह किसी युग के खत्म होने की शुरुआत है, वह सारे युगों के महाप्रलय की बात है, यह सृष्टि की शुरुआत है, और वह हर चीज़ के बनने और मिटने का क्रम है।

4.2.16

लक्ष्माणीमानि कल्पानामिमा ब्रह्माण्डकोटयः । एते चेमे परिगता इमे भूय उपागताः ॥ १६ ॥

lakṣmāṇīmāni kalpānāmimā brahmāṇḍakoṭayaḥ | ete ceme parigatā ime bhūya upāgatāḥ || 16 ||

These are the signs by which the ages are marked, these are the tens of millions of universes. These ages have gone by, and these have come around again.

ये उन युगों की पहचान के निशान हैं, ये करोड़ों ब्रह्मांड हैं। ये युग बीत चुके हैं, और ये फिर से आ चुके हैं।

4.2.17

इमानि धिष्ण्यजालानि देशकालकला इमाः । महाचित्परमाकाशमनावृतमनन्तकम् ॥ १७ ॥

imāni dhiṣṇyajālāni deśakālakalā imāḥ | mahācitparamākāśamanāvṛtamanantakam || 17 ||

These are the webs of worlds, these are the divisions of place and time, and all of it is only the great consciousness, the highest space, open and endless.

ये सब लोकों के जाल हैं, ये जगह और समय के टुकड़े हैं, और यह सब कुछ बस वह महान चेतना है, वह सबसे ऊंचा आकाश, जो खुला हुआ और अनंत है।

4.2.18

यथापूर्वं स्थितं शान्तमित्येवं कचति स्वयम् । परमाणुसहस्रांशुभास एता महाचितेः ॥ १८ ॥

yathāpūrvaṃ sthitaṃ śāntamityevaṃ kacati svayam | paramāṇusahasrāṃśubhāsa etā mahāciteḥ || 18 ||

Remaining just as it was before, at peace, it shines on its own. These appearances are like the light of a thousand rays streaming from tiny specks, all belonging to that great consciousness.

जैसा पहले था, शांत, वैसे ही वह खुद-ब-खुद चमकता है। ये सब उस महान चेतना के छोटे-छोटे कणों से निकलती हज़ारों किरणों की रोशनी जैसे हैं।

4.2.19

स्वयमन्तश्चमत्कारो यः समुद्गीर्यते चिता । तत्सर्गभानं भातीदमरूपं नतु भित्तिमत् ॥ १९ ॥

svayamantaścamatkāro yaḥ samudgīryate citā | tatsargabhānaṃ bhātīdamarūpaṃ natu bhittimat || 19 ||

The wonder that rises up on its own from within, thrown up by consciousness itself, that shining appearance of creation has no shape of its own. It does not rest on any solid support.

वह अचरज जो अपने आप भीतर से उठता है, चेतना द्वारा खुद उछाला जाता है, सृष्टि की वह चमक किसी ठोस चीज़ पर टिकी हुई नहीं है, उसका अपना कोई आकार नहीं है।

4.2.20

नोद्यन्ति नच नश्यन्ति नायान्ति नच यान्ति च । महाशिलासु लेखानां सन्निवेशा इवाचलाः ॥ २० ॥

nodyanti na ca naśyanti nāyānti na ca yānti ca | mahāśilāsu lekhānāṃ sanniveśā ivācalāḥ || 20 ||

They do not rise up and they do not perish, they do not come and they do not go, like carvings set into a huge rock, unmoving.

वे न उठते हैं, न मिटते हैं, न आते हैं, न जाते हैं, जैसे किसी बड़ी चट्टान पर खुदे हुए निशान, बिल्कुल अडिग।

4.2.21

इमे सर्गाः प्रस्फुरन्ति स्वात्मनात्मनि निर्मले । नभसीव नभोभागा निराकारा निराकृतौ ॥ २१ ॥

ime sargāḥ prasphuranti svātmanātmani nirmale | nabhasīva nabhobhāgā nirākārā nirākṛtau || 21 ||

These creations flicker into view all by themselves, within the pure self, formless things within the formless, like patches of sky within the sky.

ये सृष्टियां खुद-ब-खुद उस शुद्ध आत्मा के भीतर चमक उठती हैं, बिना आकार वाली चीज़ें बिना आकार के भीतर, जैसे आकाश के भीतर आकाश के टुकड़े।

4.2.22

द्रवत्वानीव तोयस्य स्पन्दा इव सदागतौ । आवर्ता इव चाम्भोधेर्गुणिनो वा यथा गुणाः ॥ २२ ॥

dravatvānīva toyasya spandā iva sadāgatau | āvartā iva cāmbhodherguṇino vā yathā guṇāḥ || 22 ||

Like the wetness that belongs to water, like the movement in the ever-blowing wind, like whirlpools in the ocean, or like qualities belonging to the thing that has them.

जैसे पानी में उसकी तरलता होती है, जैसे हमेशा बहती हवा में हलचल होती है, जैसे समंदर में भंवर होते हैं, या जैसे किसी चीज़ में उसके अपने गुण होते हैं।

4.2.23

विज्ञानघनमेवैकमिदमेवमवस्थितम् । सोदयास्तमयारम्भमनन्तं शान्तमाततम् ॥ २३ ॥

vijñānaghanamevaikamidamevamavasthitam | sodayāstamayārambhamanantaṃ śāntamātatam || 23 ||

All this is just one single, solid mass of awareness, existing in this way. Seeming to rise and set, it is still endless, at peace, and spread through everything.

यह सब बस एक ही ठोस चेतना का पिंड है, जो इसी तरह मौजूद है। उगने और डूबने जैसा दिखते हुए भी, यह अनंत है, शांत है, और हर जगह फैला हुआ है।

4.2.24

सहकार्यादिहेतूनामभावे शून्यतो जगत् । स्वयंभूर्जायते चेति किलोन्मत्तकफूत्कृतम् ॥ २४ ॥

sahakāryādihetūnāmabhāve śūnyato jagat | svayaṃbhūrjāyate ceti kilaunmattakaphūtkṛtam || 24 ||

To say the world is born all by itself out of nothingness, with no helping causes at all, that is really just the ranting of a madman.

यह कहना कि संसार बिना किसी सहायक कारण के, खुद-ब-खुद, शून्य से पैदा हो जाता है, यह सच में एक पागल आदमी की बड़बड़ाहट है।

4.2.25

प्रशान्तसर्वार्थकलाकलङ्को निरस्तनिःशेषविकल्पतल्पः । चिराय विद्रावितदीर्घनिद्रो भवाभयो भूषितभूः प्रबुद्धः ॥ २५ ॥

praśāntasarvārthakalākalaṅko nirastaniḥśeṣavikalpatalpaḥ | cirāya vidrāvitadīrghanidro bhavābhayo bhūṣitabhūḥ prabuddhaḥ || 25 ||

Such a person is the truly awake one. Every trace of worldly concern in him has grown still, he has thrown away completely his whole bed of doubts and mental games, he has driven off, for good, his long sleep of ignorance, he has no fear left of this life, and he is the one who graces the earth.

ऐसा इंसान ही सच में जागा हुआ है। उसके भीतर सांसारिक चीज़ों का हर निशान शांत हो चुका है, उसने अपने शक और मन के खेल की पूरी बिछौना पूरी तरह छोड़ दी है, उसने अपनी अज्ञान की लंबी नींद हमेशा के लिए भगा दी है, उसे इस जीवन का कोई डर नहीं रहा, और वही है जो धरती को शोभा देता है।

Chapter 3

4.3.1

श्रीराम उवाच । महाकल्पान्तसर्गादौ प्रथमोऽसौ प्रजापतिः । स्मृत्यात्मा जायते मन्ये स्मृत्यात्मैव ततो जगत् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | mahākalpāntasargādau prathamo'sau prajāpatiḥ | smṛtyātmā jāyate manye smṛtyātmaiva tato jagat || 1 ||

Sri Rama said: At the very start of creation, right after the great dissolution, that first Prajapati is born, I think, as memory itself. And from him, the world too is nothing but memory.

श्रीराम ने कहा, सृष्टि के बिलकुल शुरू में, महाप्रलय के ठीक बाद, वह पहला प्रजापति, मुझे लगता है, याद के रूप में ही जन्म लेता है। और उसी से यह जगत भी सिर्फ याद के रूप में बनता है।

4.3.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । महाप्रलयसर्गादावेवमेतद्रघूद्वह । स्मृत्यात्मैव भवत्यादौ प्रथमोऽसौ प्रजापतिः ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mahāpralayasargādāvevametadraghūdvaha | smṛtyātmaiva bhavatyādau prathamo'sau prajāpatiḥ || 2 ||

Sri Vasishtha said: It is just so, best of the Raghus. At the start of creation, right after the great dissolution, that first Prajapati is, in the beginning, nothing but memory itself.

श्रीवशिष्ठ ने कहा, हे रघुकुल के श्रेष्ठ, ऐसा ही है। सृष्टि के शुरू में, महाप्रलय के ठीक बाद, वह पहला प्रजापति शुरुआत में सिर्फ याद के रूप में ही होता है।

4.3.3

तत्संकल्पात्मकजगत्स्मृत्यात्मैवमिदं ततः । भाति संकल्पनगरं स्थितं पूर्वं प्रजापतेः ॥ ३ ॥

tatsaṃkalpātmakajagatsmṛtyātmaivamidaṃ tataḥ | bhāti saṃkalpanagaraṃ sthitaṃ pūrvaṃ prajāpateḥ || 3 ||

His world, made from his own intention, is thus itself nothing but memory. From this, there appears a city built only of thought, one that had already existed before, belonging to Prajapati.

उसकी इच्छा से बना यह जगत इसी तरह याद के सिवा कुछ नहीं है। इससे एक ऐसा नगर दिखाई देता है जो केवल सोच से बना है, जो पहले से ही प्रजापति का बना हुआ था।

4.3.4

स्मृतिर्न संभवत्येव सर्गादौ परमात्मनः । जन्माभावात्कथं कुत्र नभसीव महाद्रुमः ॥ ४ ॥

smṛtirna saṃbhavatyeva sargādau paramātmanaḥ | janmābhāvātkathaṃ kutra nabhasīva mahādrumaḥ || 4 ||

For the Supreme Self, memory cannot arise at all at the start of creation. Since there was no birth, how could it arise, or where. It would be like a huge tree growing in empty sky.

परमात्मा के लिए सृष्टि के शुरू में याद बन ही नहीं सकती। जब जन्म ही नहीं हुआ, तो याद कैसे और कहां बनेगी। यह वैसा ही है जैसे खाली आकाश में कोई बड़ा पेड़ उग आए।

4.3.5

श्रीराम उवाच । न संभवति किं ब्रह्मन्सर्गादौ प्राक्तनी स्मृतिः । महाप्रलयसंमोहैर्नश्यति प्राक्स्मृतिः कथम् ॥ ५ ॥

śrīrāma uvāca | na saṃbhavati kiṃ brahman sargādau prāktanī smṛtiḥ | mahāpralayasaṃmohairnaśyati prāksmṛtiḥ katham || 5 ||

Sri Rama said: Brahmin, is it not possible that at the start of creation there is memory carried over from before. How does that earlier memory get destroyed by the confusion of the great dissolution?

श्रीराम ने कहा, हे ब्राह्मण, क्या यह नहीं हो सकता कि सृष्टि के शुरू में पहले की याद बनी रहे। महाप्रलय की उलझन से पहले की वह याद कैसे मिट जाती है?

4.3.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । ये महाप्रलये प्राज्ञाः सर्वे ब्रह्मादयः पुरा । किल निर्वाणमायातास्तेऽवश्यं ब्रह्मतां गताः ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ye mahāpralaye prājñāḥ sarve brahmādayaḥ purā | kila nirvāṇamāyātāste'vaśyaṃ brahmatāṃ gatāḥ || 6 ||

Sri Vasishtha said: All those wise ones of old, Brahma and the rest, who reached liberation at the great dissolution, they necessarily became one with Brahman.

श्रीवशिष्ठ ने कहा, महाप्रलय में जो पुराने ज्ञानी लोग थे, ब्रह्मा वगैरह सब, जिन्हें मुक्ति मिली, वे सब जरूर ब्रह्म ही बन गए।

4.3.7

प्राक्तनः कः स्मृतेः कर्ता तस्मात्कथय सुव्रत । स्मृतिर्निर्मूलतां याता स्मर्तुर्मुक्ततया यतः ॥ ७ ॥

prāktanaḥ kaḥ smṛteḥ kartā tasmātkathaya suvrat | smṛtirnirmūlatāṃ yātā smarturmmuktatayā yataḥ || 7 ||

Then who was the one who first made that memory. Tell me this, good and faithful one. Memory has lost its root, because the one who remembers has become free.

तो फिर उस याद को पहले किसने बनाया। हे अच्छे व्रत वाले, यह मुझे बताओ। याद अपनी जड़ खो चुकी है, क्योंकि याद करने वाला मुक्त हो चुका है।

4.3.8

अतः स्मर्तुरभावेन स्मृतिर्वोदेति किं कथम् । अवश्यं हि महाकल्पे सर्वे मोक्षैकभागिनः ॥ ८ ॥

ataḥ smarturabhāvena smṛtirvodeti kiṃ katham | avaśyaṃ hi mahākalpe sarve mokṣaikabhāginaḥ || 8 ||

So, since the rememberer no longer exists, does memory arise at all, and how. At the great kalpa, everyone, without exception, becomes a partaker of liberation alone.

तो जब याद करने वाला ही नहीं रहा, तो याद बनती कैसे है, और कैसे। महाकल्प में हर कोई, बिना किसी छूट के, सिर्फ मुक्ति ही पाता है।

4.3.9

नानुभूतेऽनुभूते च स्वतश्चिद्व्योम्नि या स्मृतिः । सा जगद्भूरिति प्रौढा दृश्या सास्त्येव चित्प्रभा ॥ ९ ॥

nānubhūte'nubhūte ca svataścidvyomni yā smṛtiḥ | sā jagadbhūriti prauḍhā dṛśyā sāstyeva citprabhā || 9 ||

Whatever memory arises on its own in the space of awareness, whether of something experienced or something never experienced, that memory, fully grown and visible, is what is called the ground of the world. It is nothing but the light of awareness itself.

चेतना के आकाश में अपने आप जो भी याद उठती है, चाहे वह अनुभव की हुई चीज़ की हो या बिना अनुभव की हुई चीज़ की, वही याद, पूरी तरह बनकर और दिखती हुई, जगत का आधार कहलाती है। वह चेतना की रोशनी के सिवा कुछ नहीं है।

4.3.10

भाति संवित्प्रभैवेयमनाद्यन्तावभासिनी । यत्तदेतज्जगदिति स्वयंभूरिति च स्थितम् ॥ १० ॥

bhāti saṃvitprabhaiveyam anādyantāvabhāsinī | yattadetajjagaditi svayaṃbhūriti ca sthitam || 10 ||

This same light of awareness alone is what shines, appearing without beginning or end. Whatever this is, it stands fixed both as the world and as the self-born.

यही चेतना की रोशनी है जो चमकती है, बिना शुरुआत और बिना अंत के दिखती हुई। यह जो भी है, वह जगत के रूप में भी टिका है और खुद से पैदा हुए के रूप में भी।

4.3.11

अनादिकालसंसिद्धं यद्भानं ब्रह्मणो निजम् । स आतिवाहिको देहो विराजो जगदाकृतिः ॥ ११ ॥

anādikālasaṃsiddhaṃ yadbhānaṃ brahmaṇo nijam | sa ātivāhiko deho virājo jagadākṛtiḥ || 11 ||

Brahman's own shining, fixed since time without any beginning, is the subtle body that carries everything onward. It is Viraj, the very shape the world takes.

ब्रह्म की अपनी चमक, जो बिना शुरुआत वाले समय से टिकी हुई है, वही वह सूक्ष्म शरीर है जो सब कुछ आगे ले जाता है। यही विराट है, जगत का रूप है।

4.3.12

परमाणाविदं भाति त्रिजगत्सवनाभ्रखम् । देशकालक्रियाद्रव्यदिनरात्रिक्रमान्वितम् ॥ १२ ॥

paramāṇāvidam bhāti trijagatsavanābhraxam | deśakālakriyādravyadinarātrakramānvitam || 12 ||

Within a single atom, this whole appears, the three worlds spread out like a cloud filling the sky, complete with their own place, time, action, matter, and the sequence of day and night.

एक ही परमाणु के भीतर यह सब कुछ दिखाई देता है, तीनों लोक आकाश में फैले बादल जैसे फैले हुए, अपनी जगह, समय, काम, चीज़ों और दिन-रात के क्रम के साथ।

4.3.13

परमाणुः प्रविततस्तस्यास्ते तादृगेव च । भाति भासुरताकारि तादृग्गिरिकुलं पुनः ॥ १३ ॥

paramāṇuḥ pravitataḥ tasyāste tādṛgeva ca | bhāti bhāsuratākāri tādṛggirikulaṃ punaḥ || 13 ||

The atom, when it expands, still stays just as it was. It shines, bright in its form, and just so, once again, a whole range of mountains appears.

परमाणु जब फैलता है, तब भी वह वैसा ही रहता है। वह चमकता है, अपने रूप में उजला, और उसी तरह फिर से पहाड़ों की एक पूरी कतार दिखाई देती है।

4.3.14

तत्रापि तादृगाकारमेव प्रत्यनुसंततम् । दृश्यमाभाति भारूपमेतदङ्ग न वास्तवम् ॥ १४ ॥

tatrāpi tādṛgākāram eva pratyanusantatam | dṛśyam ābhāti bhārūpam etad aṅga na vāstavam || 14 ||

There too, that same shape goes on repeating again and again, appearing to be seen. But this, dear one, is only a shining appearance. It is not real.

वहां भी वही आकार बार-बार दोहराता चला जाता है, और दिखने में आता है। पर यह, प्रिय, केवल एक चमकती हुई झलक है। यह सच नहीं है।

4.3.15

इत्यस्त्यन्तो नं सदृष्टेरसदृष्टेश्च वा क्वचित्। अस्यास्त्वभ्युदितं बुद्धं नाबुद्धं प्रति वानघ॥ १५॥

ityastyanto naṃ saddṛṣṭerasaddṛṣṭeśca vā kvacit | asyāstvabhyuditaṃ buddhaṃ nābuddhaṃ prati vānagha || 15 ||

So there is no end anywhere, either to seeing it as real or to seeing it as unreal. But what has come to light here is grasped by the one who understands, not by the one who does not understand, innocent one.

तो इसे सच मानने का या झूठ मानने का कहीं कोई अंत नहीं है। पर यहां जो सामने आया है, उसे वही समझता है जो समझदार है, न कि वह जो नहीं समझता, हे निष्पाप।

4.3.16

बुद्धं प्रतीदं ब्रह्मैव केवलं शान्तमव्ययम्। अबुद्धं प्रति बुद्ध्यैतद्भासुरं भुवनान्वितम्॥ १६॥

buddhaṃ pratīdaṃ brahmaiva kevalaṃ śāntamavyayam | abuddhaṃ prati buddhyaitadbhāsuraṃ bhuvanānvitam || 16 ||

For the one who understands, this is simply Brahman alone, peaceful and unchanging. For the one who does not understand, this same thing, grasped by the mind, appears bright and full of worlds.

जो समझता है, उसके लिए यह सिर्फ ब्रह्म है, शांत और अटल। जो नहीं समझता, उसके लिए यही चीज़, मन से पकड़ी हुई, चमकीली और लोकों से भरी हुई दिखती है।

4.3.17

यथेदं भासुरं भाति जगदण्डकजृम्भितम्। यथा कोटिसहस्राणि भान्त्यन्यान्यप्यणावणौ॥ १७॥

yathedaṃ bhāsuraṃ bhāti jagadaṇḍakajṛmbhitam | yathā koṭisahasrāṇi bhāntyananyānyapyanāvaṇau || 17 ||

Just as this bright world shines, spread out as a vast cosmic egg, so too do millions upon millions of other, different worlds shine, atom within atom.

जैसे यह चमकीला जगत एक बड़े अंडे की तरह फैलकर चमकता है, वैसे ही लाखों-करोड़ों दूसरे, अलग-अलग जगत भी परमाणु के भीतर परमाणु में चमकते हैं।

4.3.18

यथा स्तम्भे पुत्रिकान्तस्तस्याः स्वाङ्गेषु पुत्रिका। तस्याश्च पुत्रिकास्त्यङ्गे तथा त्रैलोक्यपुत्रिका॥ १८॥

yathā stambhe putrikāntastasyāḥ svāṅgeṣu putrikā | tasyāśca putrikāstyāṅge tathā trailokyaputrikā || 18 ||

Just as in a carved post there is a small figure, and on that figure's own body there is another small figure, and on that one's body yet another figure, so it is with the three worlds, a figure within a figure within a figure.

जैसे किसी खंभे में एक छोटी गुड़िया बनी होती है, और उस गुड़िया के अपने शरीर पर एक और छोटी गुड़िया होती है, और उसके शरीर पर फिर एक और, वैसे ही तीनों लोक हैं, एक गुड़िया के भीतर गुड़िया, और उसके भीतर फिर गुड़िया।

4.3.19

नाभिन्ना नापि संख्येया यथाद्रौ परमाणुकाः । तथा ब्रह्म बृहन्मेरौ त्रैलोक्यपरमाणवः ॥ १९ ॥

nābhinnā nāpi saṃkhyeyā yathādrāu paramāṇukāḥ | tathā brahma bṛhanmerau trailokyaparamāṇavaḥ || 19 ||

Just as, in a mountain, the tiny atoms cannot be told apart or counted, so too, in Brahman, the vast Mount Meru, the atoms that make up the three worlds cannot be told apart or counted.

जैसे किसी पहाड़ में छोटे-छोटे परमाणु न तो अलग-अलग पहचाने जा सकते हैं, न गिने जा सकते हैं, वैसे ही ब्रह्म में, जो एक विशाल मेरु पर्वत है, तीनों लोक बनाने वाले परमाणु न पहचाने जा सकते हैं, न गिने जा सकते हैं।

4.3.20

सूर्याद्यंशुषु संख्यातुं शक्यन्ते लघवोऽणवः । उत्पद्यन्ते चिदादित्ये त्रैलोक्यपरमाणवः ॥ २० ॥

sūryādyaṃśuṣu saṃkhyātuṃ śakyante laghavo'ṇavaḥ | utpadyante cidāditye trailokyaparamāṇavaḥ || 20 ||

The tiny specks of dust that float in a ray of sunlight can be counted. It is in the sun of pure awareness that the atoms of the three worlds are born.

सूरज की किरण में उड़ने वाले छोटे-छोटे धूल के कण गिने जा सकते हैं। पर चेतना के सूरज में ही तीनों लोक के परमाणु पैदा होते हैं।

4.3.21

यथाणवो वहन्त्यर्कदीप्तिष्वप्सु रजःसु च । तथा वहन्ति चिद्व्योम्नि त्रैलोक्यपरमाणवः ॥ २१ ॥

yathāṇavo vahantyarkadīptiṣvapsu rajaḥsu ca | tathā vahanti cidvyomni trailokyaparamāṇavaḥ || 21 ||

Just as tiny specks float in sunlight, in water, and in dust, so, in the space of pure awareness, the atoms of the three worlds float.

जैसे छोटे-छोटे कण धूप में, पानी में और धूल में तैरते हैं, वैसे ही चेतना के आकाश में तीनों लोक के परमाणु तैरते हैं।

4.3.22

शून्यानुभवमात्रात्म भूताकाशमिदं यथा । सर्गानुभवमात्रात्म चिदाकाशमिदं तथा ॥ २२ ॥

śūnyānubhavamātrātma bhūtākāśamidaṃ yathā | sargānubhavamātrātma cidākāśamidaṃ tathā || 22 ||

Just as this physical space, in its own nature, is nothing but the experience of emptiness, so this space of awareness, in its own nature, is nothing but the experience of creation.

जैसे यह भौतिक आकाश अपने स्वभाव में खालीपन के अनुभव के सिवा कुछ नहीं है, वैसे ही यह चेतना का आकाश अपने स्वभाव में सृष्टि के अनुभव के सिवा कुछ नहीं है।

4.3.23

सर्गस्तु सर्गशब्दार्थतया बुद्धो नयत्यधः । स ब्रह्मशब्दार्थतया बुद्धः श्रेयो भवत्यलम् ॥ २३ ॥

sargas tu sargaśabdārthatayā buddho nayaty adhaḥ | sa brahmaśabdārthatayā buddhaḥ śreyo bhavaty alam || 23 ||

Creation, when understood simply as creation, pulls one down. That same thing, when understood as Brahman, becomes the highest good.

सृष्टि को अगर सिर्फ सृष्टि समझा जाए, तो यह नीचे खींचती है। वही चीज़, अगर ब्रह्म समझी जाए, तो सबसे बड़ा भला बन जाती है।

4.3.24

विज्ञानात्मा शासिता विश्वबीजं ब्रह्मैवालं स्वं चिदाकाशमात्रम्। यस्माज्जातं यत्तदेवेति विद्याद्वेद्यं स्वान्तर्बोधसंबोधमात्रम्॥ २४॥

vijñānātmā śāsitā viśvabījaṃ brahmaivālaṃ svaṃ cidākāśamātram | yasmājjātaṃ yattadeveti vidyādvedyaṃ svāntarbodhasaṃbodhamātram || 24 ||

The self that truly knows, the ruler of all, the seed of the whole universe, is simply Brahman itself, one's own self, nothing but the space of pure awareness. Whatever this is born from, it stays that very same thing, one should know this. And what is to be known is nothing but waking up to what is already there inside one's own awareness.

जो आत्मा सचमुच जानती है, जो सबकी शासक है, जो पूरे जगत का बीज है, वह सिर्फ ब्रह्म ही है, अपना ही आत्मा है, चेतना के आकाश के सिवा कुछ नहीं। यह जिससे पैदा हुआ है, वह वही बना रहता है, यह जान लेना चाहिए। और जो जानने लायक है, वह कुछ और नहीं, बस अपने भीतर की चेतना में जाग जाना है।

Chapter 4

4.4.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इन्द्रियग्रामसंग्रामसेतुना भवसागरः । तीर्यते नेतरेणेह केनचिन्नाम कर्मणा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | indriyagrāmasaṃgrāmasetunā bhavasāgaraḥ | tīryate netareṇeha kenacinnāma karmaṇā || 1 ||

Shri Vasishtha said: The ocean of worldly existence is crossed here only by the bridge that is fighting the senses. It is not crossed by any other action at all.

श्री वशिष्ठ ने कहा, संसार का सागर इंद्रियों के समूह से लड़ने वाले पुल से ही पार होता है। किसी और काम से यह कभी पार नहीं होता।

4.4.2

शास्त्रसत्संगमाभ्यासात्सविवेको जितेन्द्रियः । अत्यन्ताभावमेतस्य दृश्यस्याप्यवगच्छति ॥ २ ॥

śāstrasatsaṃgamābhyāsātsaviveko jitendriyaḥ | atyantābhāvametasya dṛśyasyāpyavagacchati || 2 ||

Through practicing scripture and the company of the good, a person gains discernment and conquers the senses. Such a person comes to understand that even this visible world has no existence at all.

शास्त्र पढ़ने और अच्छे लोगों की संगति करने के अभ्यास से मनुष्य में समझ आती है और उसकी इंद्रियां वश में होती हैं। तब वह जान लेता है कि यह दिखने वाला जगत भी वास्तव में बिल्कुल है ही नहीं।

4.4.3

एतत्ते कथितं सर्वं स्वरूपं रूपिणां वर । संसारसागरश्रेण्यो यथा यान्ति प्रयान्ति च ॥ ३ ॥

etatte kathitaṃ sarvaṃ svarūpaṃ rūpiṇāṃ vara | saṃsārasāgarasreṇyo yathā yānti prayānti ca || 3 ||

O best of embodied beings, I have told you everything about the true nature of embodied beings, and how the crowds of beings in the ocean of worldly existence keep coming and going.

हे शरीर धारण करने वालों में सबसे श्रेष्ठ, मैंने तुम्हें बता दिया है कि शरीरधारी जीवों का असली स्वरूप क्या है, और यह भी बता दिया है कि संसार के सागर में जीवों के समूह कैसे बार-बार आते हैं और जाते हैं।

4.4.4

बहुनात्र किमुक्तेन मनःकर्मद्रुमाङ्कुरः । तस्मिंश्छिन्ने जगच्छाखी छिन्नः कर्मतनुर्भवेत् ॥ ४ ॥

bahunātra kimuktena manaḥkarmadrumāṅkuraḥ | tasmiṃśchinne jagacchākhī chinnaḥ karma tanurbhavet || 4 ||

What need is there to say more here? The mind is the sprout of the tree of action. When that sprout is cut, the tree of the world is cut, and the body made of action ceases to exist.

यहाँ ज्यादा कहने से क्या फायदा? मन ही कर्म के पेड़ का अंकुर है। जब यह अंकुर कट जाता है, तो संसार का पूरा पेड़ कट जाता है, और कर्मों से बना यह शरीर भी समाप्त हो जाता है।

4.4.5

मनः सर्वमिदं राम तस्मिन्नन्तश्चिकित्सिते । चिकित्सितो वै सकलो जगज्जालामयो भवेत् ॥ ५ ॥

manaḥ sarvamidaṃ rāma tasminnantascikitsite | cikitsito vai sakalo jagajjālāmayo bhavet || 5 ||

O Rama, all this is mind alone. When the mind is thoroughly cured within, then the whole disease that is this tangled web of the world is cured too.

हे राम, यह सब कुछ मन ही है। जब मन का भीतर से पूरी तरह इलाज हो जाता है, तो संसार के जाल जैसी यह पूरी बीमारी भी ठीक हो जाती है।

4.4.6

तदेतज्जायते लोके मनोमननमाकुलम् । मनसो व्यतिरेकेण देहः क्व किल दृश्यते ॥ ६ ॥

tadetajjāyate loke manomananamākulam | manaso vyatirekeṇa dehaḥ kva kila dṛśyate || 6 ||

This whole confused world is born from the mind's own thinking. Without the mind, where is a body ever seen?

यह उलझा हुआ जगत मन के विचार से ही पैदा होता है। मन के बिना शरीर कहीं भी नहीं दिखता।

4.4.7

दृश्यात्यन्तासंभवेन ऋते नान्येन हेतुना । मनःपिशाचः प्रशमं याति कल्पशतैरपि ॥ ७ ॥

dṛśyātyantāsaṃbhavena ṛte nānyena hetunā | manaḥpiśācaḥ praśamaṃ yāti kalpaśatairapi || 7 ||

Only by realizing that the visible world utterly does not exist, by no other means, does the demon that is the mind come to rest, even after a hundred kalpas.

दिखने वाला यह जगत बिल्कुल है ही नहीं, यह बात समझे बिना, मन नाम का यह पिशाच कभी शांत नहीं होता, चाहे सौ कल्प क्यों न बीत जाएं।

4.4.8

एतच्च संभवत्येव मनोव्याधिचिकित्सिते । दृश्यात्यन्तासंभवात्म परमौषधमुत्तमम् ॥ ८ ॥

etaccā saṃbhavatyeva manovyādhicikitsite | dṛśyātyantāsaṃbhavaātma paramauṣadhamuttamam || 8 ||

And this can happen. The disease of the mind is cured when it is treated with the supreme and best medicine, which is simply the realization that the seen world utterly does not exist.

और यह हो सकता है। मन की यह बीमारी तभी ठीक होती है जब उसका इलाज सबसे अच्छी और सबसे बड़ी दवा से किया जाए, और वह दवा बस यही है कि दिखने वाला जगत बिल्कुल है ही नहीं।

4.4.9

मनो मोहमुपादत्ते म्रियते जायते मनः । तत्स्वचिन्ताप्रसादेन बध्यते मुच्यते पुनः ॥ ९ ॥

mano mohamupādatte mriyate jāyate manaḥ | tatsvacintāprasādena badhyate mucyate punaḥ || 9 ||

The mind falls into delusion; the mind dies and the mind is born. By the way it thinks about itself, it gets bound, and by that same thinking, it is set free again.

मन ही मोह में फंस जाता है, मन ही मरता है, मन ही जन्म लेता है। अपने ही विचार के कारण यह बंधता है, और अपने ही विचार के कारण यह फिर से मुक्त हो जाता है।

4.4.10

स्फुरतीदं जगत्सर्वं चित्ते मननमूर्च्छिते । शून्यमेवाम्बरे स्फारे गन्धर्वाणां पुरं यथा ॥ १० ॥

sphuratīdaṃ jagatsarvaṃ citte mananamūrcchite | śūnyamevāmbare sphāre gandharvāṇāṃ puraṃ yathā || 10 ||

This whole world appears when thought swells up in the mind, just as a city of Gandharvas appears in the empty, vast sky, though the sky is truly empty.

यह पूरा जगत तभी दिखाई देता है जब मन में विचार उठकर बढ़ जाता है, ठीक वैसे ही जैसे खाली और विशाल आकाश में गंधर्वों का शहर दिखाई देता है, जबकि आकाश सचमुच खाली ही होता है।

4.4.11

मनसीदं जगत्कृत्स्नं स्फारं स्फुरति चास्ति च। पुष्पगुच्छ इवामोदस्तत्स्थं तस्मादिवेतरत्॥ ११॥

manasīdaṃ jagatkṛtsnaṃ sphāraṃ sphurati cāsti ca | puṣpaguccha ivāmodastatsthaṃ tasmādivetarat || 11 ||

This entire vast world flashes forth and exists within the mind, the way the fragrance in a bunch of flowers seems, while sitting right there in them, to be something separate from them.

यह पूरा विशाल जगत मन के भीतर ही उठता है और उसी में रहता है, ठीक वैसे ही जैसे फूलों के गुच्छे में रहने वाली खुशबू उन्हीं फूलों में होते हुए भी उनसे अलग जैसी लगती है।

4.4.12

यथा तिलकणे तैलं गुणो गुणिनि वा यथा। यथा धर्मिणि वा धर्मस्तथेदं चित्तके जगत्॥ १२॥

yathā tilakaṇe tailaṃ guṇo guṇini vā yathā | yathā dharmiṇi vā dharmastathedaṃ cittake jagat || 12 ||

As oil is in a sesame seed, or as a quality is in the thing that has it, or as a property is in the thing it belongs to, so is this world in the mind.

जैसे तेल तिल के दाने में होता है, या जैसे कोई गुण उस वस्तु में होता है जिसमें वह गुण है, या जैसे कोई विशेषता उस चीज़ में होती है जिसकी वह विशेषता है, वैसे ही यह जगत मन में होता है।

4.4.13

रश्मिजालं यथा सूर्ये यथालोकस्तु तेजसि। यथौष्ण्यं चित्रभानौ च मनसीदं तथा जगत्॥ १३॥

raśmijālaṃ yathā sūrye yathālokastu tejasi | yathauṣṇyaṃ citrabhānau ca manasīdaṃ tathā jagat || 13 ||

As a web of rays is in the sun, as light is in fire, and as heat is in flame, so is this world in the mind.

जैसे सूरज में किरणों का जाल होता है, जैसे लौ में रोशनी होती है, और जैसे आग में गर्मी होती है, वैसे ही यह जगत मन में है।

4.4.14

शैत्यं यथैव तुहिने यथा नभसि शून्यता। यथा चञ्चलता वायौ मनसीदं तथा जगत्॥ १४॥

śaityaṃ yathaiva tuhine yathā nabhasi śūnyatā | yathā cañcalatā vāyau manasīdaṃ tathā jagat || 14 ||

As coldness is in frost, as emptiness is in the sky, and as movement is in the wind, so is this world in the mind.

जैसे ठंडक बर्फ में होती है, जैसे खालीपन आकाश में होता है, और जैसे चंचलता हवा में होती है, वैसे ही यह जगत मन में होता है।

4.4.15

मनो जगज्जगदखिलं तथा मनः परस्परं त्वविरहिते सदैव हि। तयोर्द्वयोर्मनसि निरन्तरं क्षिते क्षितं जगन्नतु जगति क्षिते मनः॥ १५॥

mano jagajjagadakhilaṃ tathā manaḥ parasparaṃ tvavirahite sadaiva hi | tayordvayormanasi nirantaraṃ kṣite kṣitaṃ jagannatu jagati kṣite manaḥ || 15 ||

Mind is the world, and this whole world is nothing but mind; the two are always inseparable from one another. Yet between the two, when the mind ceases completely, the world ceases too, but when the world ceases, the mind does not cease.

मन ही जगत है, और यह पूरा जगत मन ही है, ये दोनों हमेशा एक-दूसरे से अलग नहीं होते। फिर भी इन दोनों में से, जब मन पूरी तरह मिट जाता है, तब जगत भी मिट जाता है, पर जब जगत मिट जाता है, तब मन नहीं मिटता।

Chapter 5

4.5.1

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ पूर्वापरविदां वर । अयं मनसि संसारः स्फारः कथमिव स्थितः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvadharmajña pūrvāparavidāṃ vara | ayaṃ manasi saṃsāraḥ sphāraḥ kathamiva sthitaḥ || 1 ||

Rama said: Lord, you know every truth, best among those who know the beginning and the end. How does this vast world stand in the mind?

श्रीराम ने कहा, हे भगवन, आप हर सत्य को जानते हैं, आदि और अंत को जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ हैं। यह इतना विशाल संसार मन में कैसे टिका हुआ है?

4.5.2

यथायं मनसि स्फारः संसारः स्फुरति स्फुरन् । दृष्टान्तदृष्ट्या स्फुटया तथा कथय मेऽनघ ॥ २ ॥

yathāyaṃ manasi sphāraḥ saṃsāraḥ sphurati sphuran | dṛṣṭāntadṛṣṭyā sphuṭayā tathā kathaya me'nagha || 2 ||

Tell me clearly, with a plain example, how this vast world flashes and appears in the mind, faultless one.

हे निष्पाप, यह विशाल संसार मन में जिस तरह चमकता और प्रकट होता है, वह मुझे किसी स्पष्ट उदाहरण से समझाइए।

4.5.3

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथैन्दवानां विप्राणां जगन्त्यवपुषामपि । स्थितानि जातदार्ढ्यानि मनसीदं तथा स्थितम् ॥ ३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathaindavānāṃ viprāṇāṃ jagantyavapuṣāmapi | sthitāni jātadārḍhyāni manasīdaṃ tathā sthitam || 3 ||

Vasishtha said: Take the moon-brahmins. Their worlds had no bodies, yet once formed they stood firm. This world stands fixed in the mind the same way.

वसिष्ठ ने कहा, उन चंद्र-ब्राह्मणों को देखो। उनके जगत बिना शरीर के थे, फिर भी बनने के बाद वे मजबूती से टिक गए। यह संसार भी मन में उसी तरह जमा हुआ है।

4.5.4

लवणस्य यथा राज्ञश्चेन्द्रजालाकुलाकृतेः । चण्डालत्वमनुप्राप्तं तथेदं मनसि स्थितम् ॥ ४ ॥

lavaṇasya yathā rājñaścendrajālākulākṛteḥ | caṇḍālatvamanuprāptaṃ tathedaṃ manasi sthitam || 4 ||

Just as King Lavana's very shape was thrown into confusion by a magician's illusion, and he came to live as an outcaste, so this stands fixed in the mind.

जैसे राजा लवण का रूप एक जादूगर के भ्रम से बिगड़ गया, और वह एक चांडाल बनकर रहने लगा, वैसे ही यह संसार मन में जमा हुआ है।

4.5.5

भार्गवस्य चिरं कालं स्वर्गभोगबुभुक्षया । यथा भोगाधिनाथत्वं संसारित्वं बभूव च ॥ ५ ॥

bhārgavasya ciraṃ kālaṃ svargabhogabubhukṣayā | yathā bhogādhināthatvaṃ saṃsāritvaṃ babhūva ca || 5 ||

For a long time, from a wish to enjoy heaven's pleasures, Bhrigu's son became a ruler over pleasures, and so fell into worldly life.

बहुत समय तक, स्वर्ग के सुख भोगने की इच्छा से, भृगु के पुत्र सुखों के स्वामी बन गए, और इस तरह सांसारिक जीवन में फंस गए।

4.5.6

भोगेश्वरत्वं च यथा तथेदं मनसि स्थितम्। श्रीराम उवाच। भगवन्भृगुपुत्रस्य स्वर्गभोगबुभुक्षया ॥ ६ ॥

bhogeshvaratvaṃ cha yathā tathedaṃ manasi sthitam| śrīrāma uvācha| bhagavanbhṛguputrasya svargabhogabubhukṣhayā || 6 ||

And how he became a lord of pleasures, that is how this stands fixed in the mind. Rama said: Lord, by the wish of Bhrigu's son to enjoy heaven's pleasures,

और वे सुखों के स्वामी कैसे बने, यह संसार मन में उसी तरह जमा हुआ है। श्रीराम ने कहा, हे भगवन, भृगु के पुत्र की स्वर्ग के सुख भोगने की इच्छा से,

4.5.7

कथं भोगाधिनाथत्वं संसारित्वं बभूव च। श्रीवसिष्ठ उवाच। श्रृणु राम पुरा वृत्तं संवादं भृगुकालयोः ॥ ७ ॥

kathaṃ bhogādhināthatvaṃ saṃsāritvaṃ babhūva cha| śrīvasiṣṭha uvācha| śṛṇu rāma purā vṛttaṃ saṃvādaṃ bhṛgukālayoḥ || 7 ||

how did he become a ruler over pleasures, and how did he fall into worldly life? Vasishtha said: Listen, Rama, to what happened long ago, the talk between Bhrigu and Kala.

वे सुखों के स्वामी कैसे बने, और सांसारिक जीवन में कैसे फंस गए? वसिष्ठ ने कहा, राम, सुनो, बहुत पहले जो हुआ था, भृगु और काल के बीच की बातचीत।

4.5.8

सानौ मन्दरशैलस्य तमालविटपाकुले। पुरा मन्दरशैलस्य सानौ कुसुमसंकुले ॥ ८ ॥

sānau mandarashailasya tamālaviṭapākule| purā mandarashailasya sānau kusumasaṅkule || 8 ||

There was a ridge of Mount Mandara, thick with tamala tree branches. Long ago, that same ridge of Mount Mandara was crowded with flowers.

मंदार पर्वत की एक चोटी थी, जो तमाल वृक्षों की शाखाओं से घनी थी। बहुत पहले, मंदार पर्वत की उसी चोटी पर फूल भरे हुए थे।

4.5.9

अतप्यत तपो घोरं कस्मिंश्चिद्भगवान्भृगुः। तमुपास्ते स्म तेजस्वी बालः पुत्रो महामतिः ॥ ९ ॥

atapyata tapo ghoraṃ kasmiṃścidbhagavānbhṛguḥ| tamupāste sma tejasvī bālaḥ putro mahāmatiḥ || 9 ||

There, at one time, the lord Bhrigu practiced fierce austerities. A radiant, wise young boy, his son, waited on him.

वहीं, एक समय, भगवान भृगु कठोर तप कर रहे थे। एक तेजस्वी और बुद्धिमान बालक, उनका पुत्र, उनकी सेवा करता था।

4.5.10

शुक्रः सकलचन्द्राभः प्रकाश इव भासुरः। भृगुर्वनवरे तस्मिन्समाधावेव संस्थितः ॥ १० ॥

śukraḥ sakalacandrābhaḥ prakāśa iva bhāsuraḥ| bhṛgurvanavare tasmin samādhāveva saṃsthitaḥ || 10 ||

Shukra shone like the full moon, bright as light itself. Bhrigu, in that fine forest, stayed fixed in deep meditation.

शुक्र पूर्णिमा के चाँद जैसे चमकते थे, प्रकाश की तरह उज्ज्वल। भृगु उस सुंदर वन में गहरे ध्यान में स्थिर बैठे रहते थे।

4.5.11

सर्वकालं समुत्कीर्णो वनोपलतलादिव । शुक्रः कुसुमशय्यासु कलधौताजिरेषु च ॥ ११ ॥

sarvakālaṃ samutkīrṇo vanopalatalādiva| śukraḥ kusumaśayyāsu kaladhautājireṣu ca || 11 ||

At all times he sat still, as if carved from the bare rock of the forest. Shukra, meanwhile, played on beds of flowers and in courtyards of gold,

भृगु हर समय ऐसे स्थिर बैठे रहते थे मानो वन की चट्टान से तराशे गए हों। इधर शुक्र फूलों की सेजों पर और सोने जैसे आँगनों में खेलते थे,

4.5.12

मन्दरोद्दामदोलासु बालो रमणलीलया । विद्याविद्यादृशोर्मध्ये शुक्रः प्राप्तमहापदः ॥ १२ ॥

mandaroddāmadolāsu bālo ramaṇalīlayā| vidyāvidyādṛśormadhye śukraḥ prāptamahāpadaḥ || 12 ||

and on Mount Mandara's long swings, a boy at play, delighting in his games. Caught between the sight of knowledge and the sight of ignorance, Shukra fell into great danger.

और मंदार पर्वत के लंबे झूलों पर, एक बालक की तरह अपने खेलों में मगन रहते थे। ज्ञान और अज्ञान की दो दृष्टियों के बीच फंसकर, शुक्र एक बड़े संकट में पड़ गए।

4.5.13

त्रिशङ्कुरिव रोदोन्तरवर्तत तदाकुलः । निर्विकल्पसमाधिस्थे स कदाचित्पितर्यथ ॥ १३ ॥

triśaṅkuriva rodontaravartata tadākulaḥ| nirvikalpasamādhisthē sa kadācitpitaryatha || 13 ||

He was restless then, like Trishanku hanging between heaven and earth, while his father, at that time, sat deep in thought-free meditation.

वे उस समय त्रिशंकु की तरह बेचैन थे, जो स्वर्ग और धरती के बीच लटका रहता है, यह तब हुआ जब उनके पिता उस समय निर्विचार ध्यान में गहरे बैठे थे।

4.5.14

अव्यग्रोऽभवदेकान्ते जितारिरिव भूमिपः । ददर्शाप्सरसं तत्र गच्छन्तीं नभसः पथा ॥ १४ ॥

avyagrō'bhavadēkāntē jitāririva bhūmipaḥ| dadarśāpsarasaṃ tatra gacchantīṃ nabhasaḥ pathā || 14 ||

Then, alone, he grew free of restlessness, like a king who has beaten his enemies. There he saw a nymph of heaven moving along a path in the sky.

फिर, अकेले में, वे बेचैनी से मुक्त हो गए, जैसे कोई राजा जिसने अपने शत्रुओं को हरा दिया हो। वहाँ उन्होंने स्वर्ग की एक अप्सरा को आकाश के मार्ग पर चलते देखा।

4.5.15

क्षीरोदमध्यलुलितां लक्ष्मीमिव जनार्दनः । मन्दारमालावलितां मन्दानिलचलालकाम् ॥ १५ ॥

kṣīrodamadhyalulitāṃ lakṣmīmiva janārdanaḥ| mandāramālāvalitāṃ mandānilacalālakām || 15 ||

He saw her as Vishnu once saw Lakshmi tossed in the middle of the Ocean of Milk, garlanded with mandara flowers, her curls stirring in a soft breeze.

उन्होंने उसे वैसे देखा जैसे विष्णु ने लक्ष्मी को क्षीर सागर के बीच में देखा था, मंदार के फूलों की माला पहने, उसकी लटें हल्की हवा में हिल रही थीं।

4.5.16

हारझाङ्कारिगमनां सुगन्धितनभोनिलाम् । लावण्यपादपलतां मदघूर्णितलोचनाम् ॥ १६ ॥

hārajhaṅkārigamanāṃ sugandhitanabhonilām | lāvaṇyapādapalatāṃ madaghūrṇitalocanām || 16 ||

Her necklace jingled as she moved, her fragrance perfumed the sky's breeze. She was like a vine twining the tree of beauty, her eyes swimming as if drunk.

उसके चलने पर हार की झंकार होती थी, उसकी खुशबू आकाश की हवा को महका देती थी। वह सुंदरता के वृक्ष से लिपटी हुई एक बेल जैसी थी, उसकी आँखें नशे में डूबी हुई सी घूम रही थीं।

4.5.17

अमृतीकृततद्देशां देहेन्दूदयदीप्तिभिः । कान्तामालोक्य तस्याभूदुल्लसत्तरलं मनः ॥ १७ ॥

amṛtīkṛtataddeśāṃ dehendūdayadīptibhiḥ | kāntāmālokya tasyābhūdullasattaralaṃ manaḥ || 17 ||

Her body's rising moonlike glow turned that whole place into nectar. Seeing that lovely woman, his mind grew restless with delight.

उसके शरीर की चाँद जैसी बढ़ती चमक ने उस पूरी जगह को अमृत जैसा बना दिया। उस सुंदर स्त्री को देखकर, उनका मन खुशी से बेचैन हो उठा।

4.5.18

दृष्टनिर्मलपूर्णेन्दुवपुरम्बुनिधेरिव । साप्यालोक्य शुक्रमुखं तथा परवशा ह्यभूत् ॥ १८ ॥

dṛṣṭanirmalapūrṇenduvapurambunidheriva | sāpyālokya śukramukhaṃ tathā paravaśā hyabhūt || 18 ||

And she too, seeing Shukra's face, was swept away the same way, like the ocean rising at the sight of the clear, full moon.

और वह भी शुक्र का चेहरा देखकर उसी तरह बहक गई, जैसे साफ पूर्णिमा के चाँद को देखकर समुद्र में ज्वार उठता है।

4.5.19

मनसिजेषु पराहतमाशयं स परिबोध्य मनस्तदनूशना । विगलितेतरवृत्तितयात्मना स च वधूमय एव वभूव ह ॥ १९ ॥

manasijeṣu parāhatamāśayaṃ sa paribodhya manastadanūśanā | vigalitetaravṛttitayātmanā sa ca vadhūmay a eva vabhūva ha || 19 ||

Shukra felt the god of love strike down his mind. Everything else in him dissolved away, and he became nothing but that woman, his whole self turned into her.

शुक्र ने महसूस किया कि काम देवता ने उनके मन पर चोट कर दी है। उनके भीतर बाकी सब कुछ घुल गया, और वे उस स्त्री के सिवा कुछ न रहे, उनका पूरा अस्तित्व मानो वही बन गया।

Chapter 6

4.6.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ तां मनसा ध्यायंस्तत्रैवामीलितेक्षणः । आरब्धवान्मनोराज्यमिदमेकः किलोशना ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha tāṃ manasā dhyāyaṃstatraivāmīlitekṣaṇaḥ | ārabdhavānmanorājyamidamekaḥ kilośanā || 1 ||

Vasishtha said: Then, thinking of her in his mind, with his eyes shut right there, Ushanas, all alone, they say, began this kingdom of his mind.

वसिष्ठ जी बोले: फिर वहीं आँखें बंद करके, मन में उसी स्त्री को याद करते हुए, उशना ने अकेले ही, ऐसा कहते हैं, अपने मन में यह कल्पना की दुनिया बसानी शुरू कर दी।

4.6.2

एषा हि ललना व्योम्नि सहस्रनयनालये । संप्राप्तोऽयमहं स्वर्गमालोलसुरसुन्दरम् ॥ २ ॥

eṣā hi lalanā vyomni sahasranayanālaye | saṃprāpto'yamahaṃ svargamālolasurasundaram || 2 ||

This is that woman, in the sky, in the home of Indra, the thousand-eyed god. I have arrived at this heaven, beautiful with the gods moving about.

यह रही वह स्त्री, आकाश में, हज़ार आँखों वाले इंद्र के घर में। मैं इस स्वर्ग में आ पहुँचा हूँ, जो घूमते हुए देवताओं से सुंदर लग रहा है।

4.6.3

इमे ते मृदुमन्दारकुसुमोत्तंससुन्दराः । द्रवत्कनकनिष्यन्दविलासिवपुषः सुराः ॥ ३ ॥

ime te mṛdumandārakusumottamsasundarāḥ | dravatkanakaniṣyandavilāsivapuṣaḥ surāḥ || 3 ||

Here are the gods, beautiful with garlands of soft mandara flowers, their bodies shining like flowing molten gold.

ये रहे देवता, जो कोमल मंदार फूलों की मालाओं से सुंदर लग रहे हैं, और जिनके शरीर पिघले हुए सोने की तरह चमक रहे हैं।

4.6.4

इमास्ता लोचनोल्लासदृष्टनीलाब्जदृष्टयः । मुग्धहासविलासिन्यः कान्ता हरिणदृष्टयः ॥ ४ ॥

imāstā locanollāsadṛṣṭanīlābjadṛṣṭayaḥ | mugdhahāsavilāsinyaḥ kāntā hariṇadṛṣṭayaḥ || 4 ||

Here are those lovely women, their eyes shining like blue lotuses, playful with charming smiles, their eyes like a deer's.

ये रहीं वे सुंदर स्त्रियाँ, जिनकी आँखें नीले कमल जैसी चमक रही हैं, जो अपनी मोहक मुस्कान से चंचल हैं, और जिनकी आँखें हिरनी जैसी हैं।

4.6.5

इमे ते कौसुमोद्योता अन्योन्यप्रतिबिम्बिताः । विश्वरूपोपमाकारा मरुतो मत्तकाशिनः ॥ ५ ॥

ime te kausumodyotā anyonyapratibimbitāḥ | viśvarūpopamākārā maruto mattakāśinaḥ || 5 ||

Here are the wind-gods, shining with flowers, each one reflected in the others, their shapes like every form at once, looking as if drunk with joy.

ये रहे वायु के देवता, जो फूलों से चमक रहे हैं, जो एक-दूसरे में दिख रहे हैं, जिनके रूप हर आकार जैसे लगते हैं, और जो मानो खुशी में झूम रहे हैं।

4.6.6

ऐरावणकटामोदविरक्तमधुपश्रुताः । इमास्ताः काकलीगीता गीर्वाणगणगीतयः ॥ ६ ॥

airāvaṇakaṭāmodaviraktamadhupaśrutāḥ | imāstāḥ kākalīgītā gīrvāṇagaṇagītayaḥ || 6 ||

Here are the songs of the hosts of gods, sung in sweet, gentle voices, heard together with the hum of bees drawn only to the sweet smell flowing from the elephant Airavata's forehead.

ये रहे देवताओं के समूहों के गीत, जो मीठी, कोमल आवाज़ में गाए जा रहे हैं, और जिनके साथ उन भौंरों की गुनगुनाहट सुनाई देती है जो ऐरावत हाथी के माथे से बहती मीठी सुगंध पर ही मोहित हैं।

4.6.7

इयं सा कनकाम्भोजचलद्वैरिञ्चसारसा । मन्दाकिनीतटोद्यानविश्रान्तसुरनायका ॥ ७ ॥

iyam sā kanakāmbhojacaladvairiñcasārasā | mandākinītaṭodyānaviśrāntasuranāyakā || 7 ||

This is the Mandakini, the river of heaven, with golden lotuses and Brahma's cranes moving on it, where the lords of the gods rest in the gardens on its banks.

यह रही मंदाकिनी, स्वर्ग की नदी, जिस पर सोने के कमल और ब्रह्मा जी के सारस पक्षी तैर रहे हैं, और जिसके किनारे के बागों में देवताओं के प्रमुख विश्राम करते हैं।

4.6.8

एते ते यमचन्द्रेन्द्रसूर्यानलजलानिलाः । लोकपालास्तनुद्योतकीर्णदीप्तानलार्चिषः ॥ ८ ॥

ete te yamacandrendrasūryānalajalānilāḥ | lokapālāstanudyotakīrṇadīptānalārciṣaḥ || 8 ||

Here are the guardians of the directions - Yama, the Moon, Indra, the Sun, Fire, Water, and Wind - their bodies scattering light like the blazing flames of fire.

ये रहे दिशाओं के रक्षक — यम, चंद्रमा, इंद्र, सूर्य, अग्नि, जल और वायु — जिनके शरीर आग की धधकती लपटों की तरह चारों ओर रोशनी बिखेर रहे हैं।

4.6.9

अयं स रणवृत्तान्तहेतिकण्डूयिताननः । ऐरावणो रणे दन्तप्रोतदैत्येन्द्रमण्डलः ॥ ९ ॥

ayaṃ sa raṇavṛttāntahetikaṇḍūyitānanaḥ | airāvaṇo raṇe dantaprotadaityendramāṇḍalaḥ || 9 ||

This is Airavata, the elephant. His face still itches for the weapons of old battles, and in war he has pierced whole troops of demon kings on his tusks.

यह रहा ऐरावत हाथी। इसका मुँह अब भी पुरानी लड़ाइयों के हथियारों के लिए मचल रहा है, और युद्ध में इसने राक्षसों के राजाओं के पूरे-पूरे झुंड अपने दाँतों पर छेद दिए हैं।

4.6.10

इमे ते भूतलस्थानाद्व्योम्नि तारकतां गताः । वैमानिकाश्चरच्चारुचामीकरमयातपाः ॥ १० ॥

ime te bhūtalasthānādvyomni tārakatāṃ gatāḥ | vaimānikāścaraccārucāmīkaramayātapāḥ || 10 ||

Here are those who ride flying chariots. From their place on earth they have gone up to become like stars in the sky, moving with a beautiful golden glow.

ये रहे वे लोग जो उड़नेवाले रथों में चलते हैं। धरती पर अपनी जगह से वे आकाश में जाकर तारों जैसे बन गए हैं, और सुंदर सुनहरी चमक के साथ चल रहे हैं।

4.6.11

मेरूषलतलास्फालसीकराकीर्णदेवताः । एतास्ताः कीर्णमन्दारा गङ्गासलिलवीचयः ॥ ११ ॥

merūṣalatalāsphālasīkarākīrṇadevatāḥ | etāstāḥ kīrṇamandārā gaṅgāsalilavīcayaḥ || 11 ||

Here are the waves of the Ganga's waters, scattered with mandara flowers, that sprinkle the gods with fine spray where they strike against the slopes of Meru.

ये रहीं गंगा की लहरें, जिन पर मंदार के फूल बिखरे हैं, और जो मेरु पर्वत की ढलानों से टकराकर देवताओं पर बारीक फुहार बिखेर रही हैं।

4.6.12

एताः प्रसृतमन्दारमञ्जरीपुञ्जपिञ्जराः । दोलालोलाप्सरःश्रेण्यः शक्रोपवनवीथयः ॥ १२ ॥

etāḥ prasṛtamandāramañjarīpuñjapiñjarāḥ | dolālolāpsaraḥśreṇyaḥ śakropavanavīthayaḥ || 12 ||

Here are the lanes of Indra's garden, golden with clusters of spreading mandara blossoms, where rows of heavenly women swing on swings.

ये रही इंद्र के बाग की गलियाँ, जो फैले हुए मंदार फूलों के गुच्छों से सुनहरी दिख रही हैं, और जहाँ अप्सराओं की पंक्तियाँ झूलों पर झूल रही हैं।

4.6.13

इमे ते कुन्दमन्दारमकरन्दसुगन्धयः । चन्द्रांशुनिकराकाराः पारिजातसमीरणाः ॥ १३ ॥

ime te kundamandāramakarandasugandhayaḥ | candrāṃśunikarākārāḥ pārijātasamīraṇāḥ || 13 ||

Here is the breeze from the parijata tree, sweet with the smell of jasmine and mandara flowers, looking like a mass of moonbeams.

यह रही पारिजात वृक्ष की हवा, जो चमेली और मंदार के फूलों की खुशबू से मीठी है, और जो चाँदनी की किरणों के समूह जैसी दिखती है।

4.6.14

पुष्पकेसरनीहारपटवासरणोत्सुकैः । लताङ्गनागणैर्व्याप्तमिदं तन्नन्दनं वनम् ॥ १४ ॥

puṣpakesaranīhārapaṭavāsaraṇotsukaiḥ | latāṅganāgaṇairvyāptamidaṃ tannandanaṃ vanam || 14 ||

This is the Nandana garden. It is full of vine-nymphs enjoying the mist of flower pollen and its smell like scented powder.

यह रहा नंदन वन। यह उन बेल जैसी सुंदरियों से भरा है जो फूलों के पराग की धुंध और उसकी सुगंधित पाउडर जैसी खुशबू में मगन हैं।

4.6.15

कान्तगीतरवानन्दप्रनर्तितसुराङ्गनौ । इमौ तौ वल्लकीस्निग्धस्वरौ नारदतुम्बुरू ॥ १५ ॥

kāntagītaravānandapranartitasurāṅganau | imau tau vallakīsnigdhasvarau nāradatumburū || 15 ||

Here are Narada and Tumburu, the two whose sweet lute tones and joyful songs make the heavenly women dance.

ये रहे नारद और तुम्बुरु, वे दोनों जिनके वीणा के मीठे सुर और आनंददायक गीत देवांगनाओं को नचा देते हैं।

4.6.16

इमे ते पुण्यकर्तारो भूरिभूषणभूषिताः । व्योमन्युड्डीयमानेषु विमानेषु च संस्थिताः ॥ १६ ॥

ime te puṇyakartāro bhūribhūṣaṇabhūṣitāḥ| vyomanyuḍḍīyamāneṣu vimāneṣu ca saṃsthitāḥ || 16 ||

Here are those who did good deeds. Decked with many ornaments, they sit in flying chariots soaring through the sky.

ये रहे वे लोग जिन्होंने पुण्य के काम किए हैं। बहुत सारे गहनों से सजे हुए, वे आकाश में उड़ते हुए रथों में बैठे हैं।

4.6.17

मदमन्मथमत्ताङ्ग्य इमास्ताः सुरयोषितः। देवेश्वरं निषेवन्ते वनं वनलता इव ॥ १७ ॥

madamanmathamattāṅgya imāstāḥ surayoṣitaḥ| deveśvaraṃ niṣevante vanaṃ vanalatā iva || 17 ||

Here are the heavenly women, their bodies full of passion and desire. They serve Indra, the lord of the gods, the way forest vines cling to a tree.

ये रहीं देवताओं की स्त्रियाँ, जिनके शरीर काम और नशे से भरे हैं। वे देवताओं के स्वामी इंद्र की सेवा करती हैं, जैसे जंगल की बेलें किसी पेड़ से लिपटी रहती हैं।

4.6.18

इन्द्राश्मजालकुसुमाश्चिन्तामणिगुलुच्छकाः। कल्पवृक्षा इमे पक्वफलस्तबकदन्तुराः ॥ १८ ॥

indrāśmajālakusumāścintāmaṇigulucchakāḥ| kalpavṛkṣā ime pakvaphalastabakadanturāḥ || 18 ||

Here are the wish-granting trees, their flowers clusters of sapphires, their bunches wish-granting gems, thick with clusters of ripe fruit.

ये रहे कल्पवृक्ष, जिनके फूल नीलमणियों के गुच्छे हैं, जिनके गुच्छे चिंतामणि जैसे रत्न हैं, और जो पके फलों के गुच्छों से लदे हुए हैं।

4.6.19

इह तावदिमं शक्रमहमासनसंस्थितम्। द्वितीयमिव त्रैलोक्यस्रष्टारमभिवादये ॥ १९ ॥

iha tāvadimaṃ śakramahamāsanasansthitam| dvitīyamiva trailokyasraṣṭāramabhivādaye || 19 ||

Now here, I bow to this Indra, seated on his throne, as if he were a second creator of the three worlds.

अब यहाँ, मैं सिंहासन पर बैठे इस इंद्र को प्रणाम करता हूँ, मानो यह तीनों लोकों का दूसरा रचयिता हो।

4.6.20

इति संचिन्त्य शुक्रेण मनसैव शचीपतिः। तेनाभिवादितस्तत्र द्वितीय इव खे भृगुः ॥ २० ॥

iti saṃcintya śukreṇa manasaiva śacīpatiḥ| tenābhivāditastatra dvitīya iva khe bhṛguḥ || 20 ||

Thinking this to himself, Shukra bowed to Indra, the husband of Shachi, there in the sky, looking like a second Bhrigu.

यह मन ही मन सोचकर, शुक्र ने वहाँ आकाश में इंद्र को, जो शची के पति हैं, प्रणाम किया, और वे मानो दूसरे भृगु जैसे लग रहे थे।

4.6.21

अथ सादरमुत्थाय शुक्रः शक्रेण पूजितः। गृहीतहस्त आनीय समीपमुपवेशितः ॥ २१ ॥

atha sādaramutthāya śukraḥ śakreṇa pūjitaḥ | gṛhītahasta ānīya samīpamupaveśitaḥ || 21 ||

Then Indra rose with respect and honored Shukra. Taking him by the hand, he brought him close and sat him down beside himself.

फिर इंद्र आदर से उठे और शुक्र का सम्मान किया। उनका हाथ पकड़कर, वे उन्हें पास लाए और अपने पास बिठाया।

4.6.22

धन्यस्त्वदागमे नाथ स्वर्गोऽयं शुक्र शोभते। उष्यतां चिरमेवेह शक्र इत्थमुवाच तम् ॥ २२ ॥

dhanyastvadāgame nātha svargo'yaṃ śukra śobhate | uṣyatāṃ cirameveha śakra itthamuvāca tam || 22 ||

Blessed, O lord, is this heaven at your coming; it shines all the more, O Shukra. Stay here a long time. So Indra spoke to him.

हे स्वामी, आपके आने से यह स्वर्ग धन्य हो गया है; यह और भी चमक रहा है, हे शुक्र। यहाँ बहुत दिनों तक ठहरिए। इंद्र ने उनसे ऐसा ही कहा।

4.6.23

अथ तत्रोपविश्यासौ भार्गवः शोभिताननः । श्रियं जहार शशिनः सकलस्यामलस्य च ॥ २३ ॥

atha tatroparviśyāsau bhārgavaḥ śobhitānanaḥ | śriyaṃ jahāra śaśinaḥ sakalasyāmalasya ca || 23 ||

Then Shukra, the son of Bhrigu, sat down there, his face shining so bright it outdid the beauty of the full moon without a single mark on it.

फिर भृगु के पुत्र शुक्र वहाँ बैठ गए, उनका चेहरा इतना चमक रहा था कि उसने पूरे चाँद की शोभा को भी मात दे दी, जिस पर एक भी दाग़ नहीं था।

4.6.24

सकलसुरगणाभिवन्दितोऽसौ भृगुतनयः शतमन्युपार्श्वसंस्थः । चिरतरमतुलामवाप तुष्टिं नरपतिसत्तमलालनं बभूव ॥ २४ ॥

sakalasuragaṇābhivandito'sau bhṛgutanayaḥ śatamanyupārśvasaṃsthaḥ | cirataramatulāmavāpa tuṣṭiṃ narapatisattamalālanaṃ babhūva || 24 ||

Honored by all the hosts of gods, the son of Bhrigu sat beside Indra. For a very long time he felt a happiness that had no equal, and he lived cherished by the greatest of kings.

सभी देवताओं के समूहों से सम्मानित होकर, भृगु के पुत्र इंद्र के पास बैठे। बहुत लंबे समय तक उन्हें ऐसा सुख मिला जिसके बराबर कोई नहीं था, और वे सबसे बड़े राजा के दुलार में रहे।

Chapter 7

4.7.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति शुक्रः पुरं प्राप्य वैबुधं स्वेन तेजसा । विसस्मार निजं भावं प्राक्तनं व्यसनं विना ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti śukraḥ puraṃ prāpya vaibudhaṃ svena tejasā | visasmāra nijaṃ bhāvaṃ prāktanaṃ vyasanaṃ vinā || 1 ||

Sri Vasishtha said, in this way Shukra reached the city of the gods by his own power. There, with no misfortune at all, he forgot what he used to be.

श्री वसिष्ठ जी बोले, इस तरह शुक्र अपनी ही शक्ति से देवताओं के नगर में पहुंचे। वहां, बिना किसी मुसीबत के ही, वे अपने पहले वाले रूप को भूल गए।

4.7.2

मुहूर्तमिव विश्रम्य तस्य पार्श्वे शचीपतेः । स्वर्गं विहर्तुमुत्तस्थौ स्वर्गाभिपरिमोदितः ॥ २ ॥

muhūrtamiva viśramya tasya pārśve śacīpateḥ | svargaṃ vihartumuttasthau svargābhiparimoditaḥ || 2 ||

He rested a short while beside Indra, and then, delighted by heaven, he got up to roam through heaven.

वे थोड़ी देर इंद्र के पास आराम करके बैठे, फिर स्वर्ग को देखकर बहुत खुश हुए और स्वर्ग में घूमने के लिए उठ खड़े हुए।

4.7.3

स्वःश्रियं स समालोक्य लोललोचनवाञ्छिताम् । स्त्रैणं द्रष्टुं जगामासौ नलिनीमिव सारसः ॥ ३ ॥

svaḥśriyaṃ sa samālokya lolalocanavāñchitām | straiṇaṃ draṣṭuṃ jagāmāsau nalinīmiva sārasaḥ || 3 ||

He looked at the beauty of heaven, the kind that restless eyes long to see, and went to look at its women, like a crane going to a lotus pond.

उन्होंने स्वर्ग की उस सुंदरता को देखा, जिसे देखने के लिए बेचैन आंखें तरसती हैं, और वहां की स्त्रियों को देखने चल पड़े, जैसे कोई सारस पक्षी कमल के तालाब की ओर जाता है।

4.7.4

तत्र तां मृगशावाक्षीं कान्तामध्यगतामसौ । ददर्श विपिनान्तस्थां भृगुश्चूतलतामिव ॥ ४ ॥

tatra tāṃ mṛgaśāvākṣīṃ kāntāmadhyagatāmasau | dadarśa vipināntasthāṃ bhṛguścūtalatāmiva || 4 ||

There, among the lovely women, Shukra saw her, the one with eyes like a young deer, standing at the edge of a grove, like a mango creeper.

वहां सुंदर स्त्रियों के बीच शुक्र ने उसे देखा, हिरन के बच्चे जैसी आंखों वाली, जो जंगल के किनारे खड़ी थी, जैसे कोई आम की बेल खड़ी हो।

4.7.5

सापि तं भार्गवं राम दृष्ट्वा परवशाभवत् । तामालोक्य लसल्लोलविलासवलिताकृतिम् ॥ ५ ॥

sāpi taṃ bhārgavaṃ rāma dṛṣṭvā paravaśābhavat | tāmālokya lasallolavilāsavalitākṛtim || 5 ||

She too, O Rama, on seeing Shukra, lost hold of herself. And he, looking at her, whose glowing figure swayed with a restless, playful charm,

हे राम, उसने भी शुक्र को देखकर अपने आप पर काबू न रख सकी। और शुक्र भी उसे देखकर, उसका चमकता हुआ शरीर चंचल और चुलबुले नाज़ से हिल रहा था,

4.7.6

आसीद्विलीयमानाङ्गो ज्योत्स्नामिन्दुमणिर्यथा । विलीयमानसर्वाङ्गस्तामवैक्षत कामिनीम् ॥ ६ ॥

āsīdvilīyamānāṅgo jyotsnāmindumaṇiryathā | vilīyamānasarvāṅgastāmavaikṣata kāminīm || 6 ||

His whole body began to melt, as a moon-gem melts in moonlight. With his whole body melting, he gazed at that woman full of desire.

उनका पूरा शरीर पिघलने लगा, जैसे चांदनी में चंद्रकांत मणि पिघल जाती है। पूरा शरीर पिघलाते हुए वे उस वासना से भरी स्त्री को देखते रहे।

4.7.7

चन्द्रकान्त इव ज्योत्स्नां शीतलां खे विलासिनीम् । तेनावलोकिता सापि तत्परायणतां गता ॥ ७ ॥

candrakānta iva jyotsnāṃ śītalāṃ khe vilāsinīm | tenāvalokitā sāpi tatparāyaṇatāṃ gatā || 7 ||

As a moon-gem gazes at the cool moonlight playing in the sky, so he gazed at her. And looked at by him, she too became wholly devoted to him.

जैसे चंद्रकांत मणि आकाश में खेलती हुई ठंडी चांदनी को निहारती है, वैसे ही वे उसे निहारते रहे। और उनकी नज़र पड़ते ही वह भी पूरी तरह उन्हीं की होकर रह गई।

4.7.8

निशान्ते चक्रवाकेन कान्तेव परिकूजिता । रसाद्विकसिता नूनमन्योन्यमनुरक्तयोः ॥ ८ ॥

niśānte cakravākena kānteva parikūjitā | rasādvikasitā nūnamanyonyamanuraktayoḥ || 8 ||

Like a female chakravaka bird called to by her mate at the end of night, she blossomed with delight, the two of them truly in love with each other.

जैसे रात खत्म होते ही नर चकवा पक्षी की पुकार सुनकर मादा चकवी खिल उठती है, वैसे ही वह खुशी से खिल उठी, दोनों सचमुच एक-दूसरे पर मोहित थे।

4.7.9

प्रातरर्कनलिन्योर्या शोभा सैव तयोरभूत् । संकल्पितार्थदायित्वाद्देशस्याभूच्च तेन सा ॥ ९ ॥

prātararkanalinyoryā śobhā saiva tayorabhūt | saṃkalpitārthadāyitvāddeśasyābhūcca tena sā || 9 ||

Whatever glow the sun and the lotus share at dawn, that same glow was between the two of them. And since it gave them exactly what they wished for, that same glow filled the place too.

सुबह सूरज और कमल के बीच जो चमक होती है, वही चमक इन दोनों के बीच थी। और चूंकि उससे उन्हें मनचाही चीज़ मिल रही थी, इसलिए वही चमक उस जगह पर भी फैल गई।

4.7.10

सर्वाङ्गं विवशीकृत्य कामायैव समर्पिता । पेतुः स्मरशरास्तस्या मृदुष्वङ्गेषु भूरिशः ॥ १० ॥

sarvāṅgaṃ vivashīkṛtya kāmāyaiva samarpitā | petuḥ smaraśarāstasyā mṛduṣvaṅgeṣu bhūriśaḥ || 10 ||

Her whole body overpowered, she gave herself completely to desire. Love's arrows fell again and again on her soft limbs.

उसका पूरा शरीर बेबस हो गया, और वह पूरी तरह वासना के हवाले हो गई। प्रेम के बाण बार-बार उसके कोमल अंगों पर गिरने लगे।

4.7.11

पलाशेष्विव पद्मिन्या धारा इव पयोमुचः । सा बभूवस्मरोद्भूता लोलालिवलयाकुला ॥ ११ ॥

palāśeṣviva padminyā dhārā iva payomucaḥ | sā babhūvasmarodbhūtā lolālivlayākulā || 11 ||

Like rain falling on the petals of a lotus, desire broke out in her, and she seemed surrounded by a ring of restless bees.

जैसे बारिश की बूंदें कमल की पंखुड़ियों पर गिरती हैं, वैसे ही उसमें वासना जाग उठी, और वह मानो बेचैन भौंरों के घेरे से घिर गई।

4.7.12

मन्दवाताभिनुन्नाया मञ्जर्याः सहधर्मिणी । नीलनीरजनेत्रान्तां हंससारसगामिनीम् ॥ १२ ॥

mandavātābhinunnāyā mañjaryāḥ sahadharmiṇī | nīlanīrajnetrāntāṃ haṃsasārasagāminīm || 12 ||

She matched a spray of blossoms swaying in a soft breeze. Her eyes were shaped like blue lotuses at the corners, and she walked with the gait of a swan or a crane.

वह धीमी हवा में हिलती हुई फूलों की एक डाली जैसी लग रही थी। उसकी आंखों के कोने नीले कमल जैसे थे, और वह हंस या सारस जैसी चाल से चलती थी।

4.7.13

मदनः क्षोभयामास गजः कमलिनीमिव । अथ तां तादृशीं दृष्ट्वा शुक्रः संकल्पितार्थभाक् ॥ १३ ॥

madanaḥ kṣobhayāmāsa gajaḥ kamalinīmiva | atha tāṃ tādṛśīṃ dṛṣṭvā śukraḥ saṃkalpitārthabhāk || 13 ||

Desire stirred her, as an elephant stirs a lotus pond. Then, seeing her like this, Shukra got what he had set his heart on.

काम-देव ने उसे मथ डाला, जैसे कोई हाथी कमल के तालाब को मथ देता है। फिर उसे इस हाल में देखकर शुक्र को वह मिल गया जो वे चाहते थे।

4.7.14

तमः संकल्पयामास संहार इव भूतभुक् । त्रिविष्टपस्य देशोऽसौ बभूव तिमिराकुलः ॥ १४ ॥

tamaḥ saṃkalpayāmāsa saṃhāra iva bhūtabhuk | triviṣṭapasya deśo'sau babhūva timirākulaḥ || 14 ||

He brought darkness into being, complete, like the fire that swallows everything when the world ends. And that whole realm of heaven became wrapped in darkness.

उन्होंने अंधेरा फैला दिया, पूरी तरह से, जैसे प्रलय की आग सब कुछ निगल जाती है। और स्वर्ग का वह पूरा इलाका अंधेरे में डूब गया।

4.7.15

भूलोकस्यान्धतमसा लोकालोकतटो यथा । लज्जान्धकारतीक्ष्णांशौ तस्मिंस्तिमिरमण्डले ॥ १५ ॥

bhūlokasyāndhatamasā lokālokataṭo yathā | lajjāndhakāratīkṣṇāṃśau tasmiṃstimiramaṇḍale || 15 ||

That circle of darkness was like the blinding dark that lies beyond the edge of the world, at the border of Lokaloka mountain. Inside it, even sharp light was swallowed by a darkness born of shame.

अंधेरे का वह घेरा वैसा ही था जैसा लोकालोक पर्वत की सीमा पर, दुनिया की हद के बाहर, फैला हुआ घना अंधेरा होता है। उसके अंदर तेज़ रोशनी भी शर्म से बने अंधेरे में डूब गई।

4.7.16

प्रतिष्ठामागते तस्य मिथुनस्येव मण्डले । तेषु सर्वेषु भूतेषु गतेष्वभिमतां दिशम् ॥ १६ ॥

pratiṣṭhāmāgate tasya mithunasyeva maṇḍale | teṣu sarveṣu bhūteṣu gateṣvabhimatāṃ diśam || 16 ||

Once that darkness had settled, as if it belonged only to that couple, all the others there went off, each in the direction they liked.

जब वह अंधेरा जम गया, मानो सिर्फ उसी जोड़े का हो, तो वहां मौजूद बाकी सब लोग अपनी-अपनी मनचाही दिशा में चले गए।

4.7.17

तस्मात्प्रदेशाद्भूलोके दिनान्ते विहगेष्विव । सा दीर्घचञ्चलापाङ्गी प्रवृद्धमदनव्यथा ॥ १७ ॥

tasmātpradeśādbhūlokē dināntē vihagēṣviva | sā dīrghacañcalāpāṅgī pravṛddhamadanavyathā || 17 ||

From that place she went down to the mortal world, at day's end, like birds going home. Her glances were long and restless, and her longing for love had grown intense.

उस जगह से वह मृत्युलोक में चली गई, दिन ढलते वक़्त, जैसे पंछी अपने घोंसले लौटते हैं। उसकी नज़रें लंबी और बेचैन थीं, और प्रेम की तड़प उसमें बहुत बढ़ गई थी।

4.7.18

आजगाम भृगोः पुत्रं मयूरी वारिदं यथा । धवलागारमध्यस्थे पर्यङ्के परिकल्पिते ॥ १८ ॥

ājagāma bhṛgoḥ putraṃ mayūrī vāridaṃ yathā | dhavalāgāramadhyasthe paryaṅkē parikalpite || 18 ||

She came to Shukra as a peahen comes to a raincloud, to a bed made ready inside a white house.

वह शुक्र के पास ऐसे आई जैसे मोरनी बादल के पास आती है, एक सफेद घर के बीच में तैयार बिछे हुए बिस्तर की ओर।

4.7.19

विवेश भार्गवस्तत्र क्षीरोद इव माधवः । सा करावलम्ब्यास्य विवेशावनताननाः ॥ १९ ॥

viveśa bhārgavastatra kṣīroda iva mādhavaḥ | sā karāvavalambyāsya viveśāvanatānanā || 19 ||

Shukra went in there, like Vishnu going into the Ocean of Milk. She, holding on to his hand, went in with her face bowed down.

शुक्र वहां अंदर गए, जैसे विष्णु क्षीरसागर में जाते हैं। वह उनका हाथ थामे हुए, अपना चेहरा झुकाकर अंदर गई।

4.7.20

रराज च सुरेभस्य हृदि लग्नेव पद्मिनी । उवाच चेदं मधुरं रसस्नेहाक्तया गिरा ॥ २० ॥

rarāja ca surebhasya hṛdi lagnēva padminī | uvāca cedaṃ madhuraṃ rasasnēhāktayā girā || 20 ||

And she looked lovely, clinging to Shukra's heart, like a lotus clinging to its stalk. Then, in a voice soft with love, she said this sweet thing,

और वह शुक्र के हृदय से लिपटी हुई वैसे ही सुंदर लग रही थी जैसे कमल अपने डंठल से लिपटा हो। फिर प्रेम से भीगी हुई आवाज़ में उसने यह मीठी बात कही,

4.7.21

वचो मधुरमानन्दविलासवलिताक्षरम् । पश्यामलेन्दुवदनमण्डलीकृतकार्मुकः ॥ २१ ॥

vaco madhuramānandavilāsavalitākṣaram | paśyāmalenduvadanamaṇḍalīkṛtakārmukaḥ || 21 ||

Her words were sweet, their sounds curling with joy and playfulness, look, moon-faced one, this bodiless Kama has bent his bow into a full circle,

उसके बोल मीठे थे, उनमें खुशी और नखरे की मिठास घुली थी, देखो, हे चांद जैसे मुखवाले, इस बिना शरीर वाले कामदेव ने अपने धनुष को पूरा गोल मोड़ लिया है,

4.7.22

अबलामनुबध्नाति मामेष किल नाङ्गकः । पाहि मामबलां नाथ दीनां त्वच्छरणामिह ॥ २२ ॥

abalāmanubadhnāti māmeṣa kila nāṅgakaḥ | pāhi māmabalāṃ nātha dīnāṃ tvaccharṇāmiha || 22 ||

And indeed he is binding me, weak as I am. Save me, my lord, this humble, weak woman who has come to you for shelter.

और सचमुच वह मुझ कमज़ोर को बांधे जा रहा है। हे नाथ, मुझे बचाओ, मैं एक दीन-हीन, कमज़ोर स्त्री हूं जो तुम्हारी शरण में आई हूं।

4.7.23

कृपणाश्वासनं साधो विद्धि सच्चरितव्रतम् । स्नेहदृष्टिमजानद्भिर्मूढैरेव महामते ॥ २३ ॥

kṛpaṇāśvāsanaṃ sādho viddhi saccaritavratam | snehadṛṣṭimajānadbhirmūḍhairēva mahāmate || 23 ||

Know this, good man, comforting someone helpless is the true duty of good people. Only fools, wise one, fail to see the look of love.

हे भले पुरुष, यह जान लो, किसी बेबस को दिलासा देना ही अच्छे लोगों का असली धर्म है। हे बुद्धिमान, केवल मूर्ख ही प्रेम की नज़र को नहीं पहचान पाते।

4.7.24

प्रणया अवगण्यन्ते न रसज्ञैः कदाचन । अशङ्कितोपसंपन्नः प्रणयोऽन्योन्यरक्तयोः ॥ २४ ॥

praṇayā avagaṇyante na rasajñaiḥ kadācana | aśaṅkitopasaṃpannaḥ praṇayo'nyonyaraktayoḥ || 24 ||

Those who understand true feeling never look down on an act of love. Love between two who are truly devoted to each other comes without any doubt.

जो लोग सच्चे भाव को समझते हैं, वे प्रेम के किसी भी काम को कभी छोटा नहीं समझते। जो दोनों एक-दूसरे के सच्चे प्रेमी हों, उनके बीच का प्रेम बिना किसी शक के आता है।

4.7.25

अधःकरोति निष्यन्दं चन्द्रमाह्लादनं प्रिय । न तथा सुखयत्येषा चेतस्त्रिभुवनेशिता ॥ २५ ॥

adhaḥkaroti niṣyandaṃ candramāhlādanaṃ priya | na tathā sukhayatyēṣā cetastribhuvaneśitā || 25 ||

This surpasses even the moon's cool, delightful glow, my love. Even ruling over the three worlds would not please the heart as much as this.

मेरे प्रिय, यह तो चांद की ठंडी, सुहानी चमक से भी बढ़कर है। तीनों लोकों का राज भी दिल को इतना सुख नहीं देता जितना यह देता है।

4.7.26

यथा परस्परानन्दः स्नेहः प्रथमरक्तयोः । त्वत्पादस्पर्शनेनेयं समाश्वस्तास्मि मानद ॥ २६ ॥

yathā parasparānandaḥ snehaḥ prathamaraktayoḥ | tvatpādaspṛśaneneyaṃ samāśvastāsmi mānada || 26 ||

Just as the love between two people newly in love is itself full of shared joy, so, by the touch of your foot, I have found comfort, giver of honor.

जैसे नए-नए प्रेम में पड़े दो लोगों का प्यार खुद ही आपसी खुशी से भरा होता है, वैसे ही तुम्हारे पैर के छूने भर से मुझे चैन मिल गया है, हे मान देने वाले।

4.7.27

चन्द्रपादपरामृष्टा यथा निशि कुमुद्वती । संस्पर्शामृतपानेन तव जीवामि सुन्दर ॥ २७ ॥

candrapādaparāmṛṣṭā yathā niśi kumudvatī | saṃsparśāmṛtapānena tava jīvāmi sundara || 27 ||

As the night-lotus, touched by the moon's rays, blooms at night, so I live by drinking the nectar of your touch, beautiful one.

जैसे रात में चांद की किरणें छूते ही कुमुदिनी खिल उठती है, वैसे ही मैं तुम्हारे स्पर्श का अमृत पीकर जी रही हूं, हे सुंदर।

4.7.28

चन्द्रांशुरसपानेन चकोरी चपला यथा । मामिमां चरणालीनां भ्रमरीं करपल्लवैः ॥ २८ ॥

candrāṃśurasapānena cakorī capalā yathā | māmimāṃ caraṇālīnāṃ bhramarīṃ karapallavaiḥ || 28 ||

As the restless chakori bird lives by drinking in the essence of moonrays, so take me, a bee clinging to your feet, in your tender fingers,

जैसे बेचैन चकोर पक्षी चांद की किरणों का रस पीकर जीता है, वैसे ही मुझे, तुम्हारे पैरों से लिपटी हुई एक भौंरी को, अपनी कोमल उंगलियों से उठा लो,

4.7.29

आलिङ्ग्यामृतसंपूर्णे स्वपद्महृदये कुरु । इत्युक्त्वा पुष्पमृद्वङ्गी सा तस्य पतितोरसि । व्याघूर्णितालिनयना सुतरोरिव मञ्जरी ॥ २९ ॥

āliṅgyāmṛtasaṃpūrṇe svapadmahṛdaye kuru | ityuktvā puṣpamṛdvaṅgī sā tasya patitorasi | vyāghūrṇitālinayanā sutaroriva mañjarī || 29 ||

and embrace me, and place me, full of nectar, in your lotus heart. Saying this, she, her body soft as a flower, fell upon his chest, her eyes rolling like bees, like a cluster of blossoms falling from a beautiful tree.

और मुझे गले लगा लो, और अमृत से भरी हुई मुझे अपने कमल जैसे हृदय में बसा लो। यह कहकर, फूल जैसे कोमल शरीर वाली वह उनके सीने पर गिर पड़ी, उसकी आंखें भौंरों जैसी घूम रही थीं, जैसे किसी सुंदर पेड़ से फूलों का एक गुच्छा गिर पड़ा हो।

4.7.30

तौ दम्पती तत्र विलासकान्ती विवेशतुस्तासु वनस्थलीषु । किञ्ज्ल्कगौरानिलघूर्णितासु रक्तौ द्विरेफाविव पद्मिनीषु ॥ ३० ॥

tau dampatī tatra vilāsakāntī vivēśatus tāsu vanasthalīṣu | kiñjalkagaurānilaghūrṇitāsu raktau dvirēphāviva padminīṣu || 30 ||

There that couple, glowing with delight, went into the forest groves, which were stirring in a breeze golden with flower-pollen. Full of passion, the two of them were like a pair of bees among the lotus pools.

वहां वह जोड़ा, खुशी से चमकता हुआ, जंगल के उन कुंजों में चला गया, जो फूलों के पराग से सुनहरी हवा में हिल रहे थे। प्रेम में डूबे हुए, वे दोनों ऐसे लग रहे थे जैसे कमल के तालाबों के बीच भौंरों की एक जोड़ी हो।

Chapter 8

4.8.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति चित्तविलासेन चिरमुत्प्रेक्षितैः प्रियैः । प्रणयैर्भार्गवस्यासीत्तुष्टये सुसमागमः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti cittavilāsena ciramutprekṣitaiḥ priyaiḥ | praṇayairbhārgavasyāsīttuṣṭaye susamāgamaḥ || 1 ||

Vasishtha said: in this way, through the play of his own mind, Bhargava met, with love, the dear ones he had long imagined, and this union made him fully content.

वसिष्ठ बोले कि इस तरह अपने मन के खेल से भार्गव को उन प्रिय लोगों से मिलन हुआ जिनकी उसने बहुत दिन से कल्पना कर रखी थी, और प्रेम से हुए इस मिलन ने उसे पूरा संतोष दिया।

4.8.2

मन्दारमालाकलया विबुधासवमत्तया । तदा तेन तया सार्धं द्वितीयेनामलेन्दुना ॥ २ ॥

mandāramālākalayā vibudhāsavamattayā | tadā tena tayā sārdhaṃ dvitīyenāmalendunā || 2 ||

He himself was like a second spotless moon, and he was together with her - she wore a strand of mandara flowers and was flushed with the wine of the gods.

वह खुद एक दूसरे निर्मल चाँद जैसा था, और वह उसके साथ था, वह मंदार के फूलों की माला पहने थी और देवताओं की शराब से मस्त थी।

4.8.3

विहृतं मत्तहंसासु हेमपङ्कजिनीषु च । तटीष्वमरवाहिन्याः सह चारणकिंनरैः ॥ ३ ॥

vihṛtaṃ mattahaṃsāsu hemapaṅkajinīṣu ca | taṭīṣvamaravāhinyāḥ saha cāraṇakiṃnaraiḥ || 3 ||

They played among ponds of golden lotuses full of drunk swans, and on the banks of the river of the gods, together with the Charanas and Kinnaras.

वे सोने के कमलों वाले उन तालाबों में खेले जहाँ मतवाले हंस थे, और देवताओं की नदी के किनारे, चारणों और किन्नरों के साथ।

4.8.4

पीतमिन्दुदलस्यन्दैर्देवैः सह रसायनम् । पारिजातलताजालनिलयेषु विलासिना ॥ ४ ॥

pītamindudalasyandairdevaiḥ saha rasāyanam | pārijātalatājālanilayeṣu vilāsinā || 4 ||

That playful one drank the nectar flowing in drops from the moon, together with the gods, in the bowers among the thickets of parijata creepers.

उस रसिक ने देवताओं के साथ चाँद से टपकते हुए अमृत को पिया, यह पारिजात की लताओं के झुरमुट वाले कुंजों में हुआ।

4.8.5

चारुचैत्ररथोद्यानलतालोलासुदोलया । चिरं विलसितं व्यग्रैः सह विद्याधरीगणैः ॥ ५ ॥

cārucaitrarathodyānalatālolāsudolayā | ciraṃ vilasitaṃ vyagraiḥ saha vidyādharīgaṇaiḥ || 5 ||

In the beautiful Chaitraratha garden, on a swing that swayed among the creepers, they played for a long time, together with eager groups of Vidyadhari women.

सुंदर चैत्ररथ बगीचे में, लताओं के बीच झूलते हुए झूले पर, वे बहुत देर तक खेलते रहे, यह विद्याधरी स्त्रियों के उत्सुक समूहों के साथ हुआ।

4.8.6

नन्दनोपवनाभोगो मन्दरेणेव वारिधिः । भृशमालोड्यतां नीतः प्रथमैः सह शाम्भवैः ॥ ६ ॥

nandanopavanābhogo mandareṇeva vāridhiḥ | bhṛśamāloḍyatāṃ nītaḥ prathamaiḥ saha śāmbhavaiḥ || 6 ||

The whole of the Nandana grove was stirred up thoroughly, like the ocean churned by Mount Mandara, together with the chief attendants of Shiva.

पूरा नंदन वन ऐसे मथ डाला गया जैसे मंदार पर्वत ने समुद्र को मथ डाला था, यह शिव के प्रमुख गणों के साथ हुआ।

4.8.7

बालहेमलताजालजटालासु नदीषु च । भ्रान्तमुन्मत्तनागेन मैरवीष्वज्जिनीष्विव ॥ ७ ॥

bālahamalatājālajaṭālāsu nadīṣu ca | bhrāntamunmattanāgena mairavīṣvajjinīṣviva || 7 ||

In rivers tangled thick with young golden creepers, in the Mairavi and Ajjini streams, he wandered like a maddened elephant.

सोने जैसी नयी लताओं के जाल से भरी नदियों में, मैरवी और अज्जिनी धाराओं में, वह मतवाले हाथी की तरह भटकता रहा।

4.8.8

कैलासवनकुञ्जेषु तया सह विलासिना । हरेन्दुधवला रात्र्यः क्षिपिता गणगीतिभिः ॥ ८ ॥

kailāsavanakuñjeṣu tayā saha vilāsinā | harendudhavalā rātryaḥ kṣipitā gaṇagītibhiḥ || 8 ||

In the groves of the Kailasa forest, together with her, that playful one passed nights white as Shiva's moon, amid the songs of Shiva's attendants.

कैलास वन के कुंजों में, उसके साथ, वह रसिक शिव के चाँद जैसी सफ़ेद रातें बिताता रहा, यह शिव के गणों के गीतों के बीच हुआ।

4.8.9

गन्धमादनशैलस्य विश्रम्योपरि सानुषु । सा तेन कनकाम्भोजैरापादमभिमण्डिता ॥ ९ ॥

gandhamādanaśailasya viśramyopari sānuṣu | sā tena kanakāmbhojairāpādamabhimaṇḍitā || 9 ||

Resting on the peaks of Mount Gandhamadana, she was adorned by him with golden lotuses from head to foot.

गंधमादन पर्वत की चोटियों पर विश्राम करते हुए, उसने उसे सिर से पैर तक सोने के कमलों से सजाया।

4.8.10

लोकालोकतटान्तेषु विचित्राश्चर्यहारिषु । क्रीडितं कृतहासेन राम तेन तया सह ॥ १० ॥

lokālokataṭānteṣu vicitraāścaryahāriṣu | krīḍitaṃ kṛtahāsena rāma tena tayā saha || 10 ||

O Rama, at the edges of the shores of Lokaloka, rich with strange wonders, he played there, laughing, together with her.

हे राम, लोकालोक के किनारों पर, जो अनोखे अचरजों से भरे थे, वह वहाँ हँसते हुए उसके साथ खेला।

4.8.11

मन्दरान्तरकच्छेषु सार्धं हरिणशावकैः । अवसत्स समाः षष्टिं कल्पितामरमन्दिरे ॥ ११ ॥

mandarāntarakaccheṣu sārdhaṃ hariṇaśāvakaiḥ | avasats samāḥ ṣaṣṭiṃ kalpitāmaramandire || 11 ||

In the river valleys within Mount Mandara, together with young fawns, he lived for sixty years, in a home built like that of the gods.

मंदार पर्वत के भीतर की घाटियों में, हिरनों के बच्चों के साथ, वह साठ साल तक रहा, यह देवताओं जैसे बनाए घर में हुआ।

4.8.12

क्षीरार्णवतटीष्वस्य वनितासहचारिणः । क्षीणं कृतयुगादर्धं श्वेतद्वीपजनैः सह ॥ १२ ॥

kṣīrārṇavataṭīṣvasya vanitāsahacāriṇaḥ | kṣīṇaṃ kṛtayugādardhaṃ śvetadvīpajanaiḥ saha || 12 ||

On the shores of the Ocean of Milk, moving about together with his woman, half of a Krita age passed for him, together with the people of the White Island.

क्षीर सागर के किनारों पर, अपनी स्त्री के साथ घूमते हुए, उसका आधा कृत युग बीत गया, यह श्वेतद्वीप के लोगों के साथ हुआ।

4.8.13

गन्धर्वनगरोद्यानलीलाविरचनैरसौ । स्रष्टानन्तजगत्सृष्टेः कालस्यानुकृतिं गतः ॥ १३ ॥

gandharvanagarodyānalīlāviracanairasau | sraṣṭānanta jagatsṛṣṭeḥ kālasya anukṛtiṃ gataḥ || 13 ||

By building gardens in play, like cities in the sky, he became a creator of endless worlds, and came to look like Time itself.

खेल-खेल में आकाश के नगरों जैसे बगीचे बनाकर, वह अनगिनत जगत का रचनेवाला बन गया, और खुद काल जैसा दिखने लगा।

4.8.14

अथावसदसौ शुक्रः पुरन्दरपुरे पुनः । सुखं चतुर्युगान्यष्टौ हरिणेक्षणया सह ॥ १४ ॥

athāvasadasau śukraḥ purandarapure punaḥ | sukhaṃ caturyugānyaṣṭau hariṇekṣaṇayā saha || 14 ||

Then that Shukra lived again in Indra's city, happily, for eight cycles of the four ages, together with the deer-eyed woman.

फिर वह शुक्र इंद्र की नगरी में फिर से रहा, सुख से, चार युगों वाले आठ चक्रों तक, यह उस हिरनी जैसी आँखों वाली स्त्री के साथ हुआ।

4.8.15

पुण्यक्षयानुसंधानात्ततश्चावनिमण्डले । तयैव सह मानिन्या पपातोपहताकृतिः ॥ १५ ॥

puṇyakṣayānusandhānāttataścāvanimaṇḍale | tayaiva saha māninyā papātopahatākṛtiḥ || 15 ||

Then, when his store of merit ran out, he fell down to the earth, his body broken, together with that same proud woman.

फिर, जब उसका पुण्य समाप्त हो गया, वह धरती पर गिर पड़ा, उसका शरीर टूट गया, यह उसी अभिमानी स्त्री के साथ हुआ।

4.8.16

परालूनसमस्ताङ्गो हृतस्यन्दननन्दनःचिन्तापरवशो ध्वस्तः समितीव हतो भटः ॥ १६ ॥

parālūnasamastāṅgo hṛtasyandananandanaḥcintāparavaśo dhvastaḥ samitīva hato bhaṭaḥ || 16 ||

All his limbs cut away as if by an enemy, his chariot and his joys torn from him, he was helpless with worry, destroyed like a warrior killed in battle.

उसके सारे अंग जैसे किसी शत्रु ने काट डाले हों, उसका रथ और उसके सुख छीन लिए गए, वह चिंता से बेबस हो गया, युद्ध में मारे गए योद्धा की तरह नष्ट हो गया।

4.8.17

पतितस्यावनौ तस्य चिन्तया सह दीर्घयाशरीरं शतधा जातं शिलापातीव निर्झरः ॥ १७ ॥

patitasyāvanau tasya cintayā saha dīrghayāśarīraṃ śatadhā jātaṃ śilāpātīva nirjharaḥ || 17 ||

As he lay fallen on the ground, with his long-drawn anguish, his body broke into a hundred pieces, like a mountain stream shattering as it falls over rock.

जब वह ज़मीन पर गिरा पड़ा था, अपनी लंबी चिंता के साथ, उसका शरीर सौ टुकड़ों में टूट गया, जैसे पहाड़ी झरना चट्टान पर गिरकर बिखर जाता है।

4.8.18

संशीर्णयोर्देहकयोश्चित्तके व्यसनाविलेविचेरतुस्तयोर्व्योम्नि निर्नीडौ विहगौ यथा ॥ १८ ॥

saṃśīrṇayordehakayościttake vyasanāvileviceratustayorvyomni nirnīḍau vihagau yathā || 18 ||

Their two bodies decayed, and with minds clouded by misfortune, the two of them wandered like two nestless birds in the sky.

उनके दोनों शरीर गल गए, और दुर्भाग्य से धुँधले मन के साथ, वे दोनों आकाश में बिना घोंसले के दो पक्षियों की तरह भटकते रहे।

4.8.19

तत्राविविशतुश्चान्द्रं ते चित्ते रश्मिजालकम्प्रालेयतामुपेत्याशु शालितामथ जग्मतुः ॥ १९ ॥

tatrāviviśatuścāndraṃ te citte raśmijālakamprāleyatāmupetyāśu śālitāmatha jagmatuḥ || 19 ||

There, the two of them, as mind alone, entered the web of the moon's rays; quickly they turned into dew, and then they became grains of rice.

वहाँ, वे दोनों, केवल मन के रूप में, चाँद की किरणों के जाल में समा गए; जल्दी ही वे ओस बन गए, और फिर चावल के दाने बन गए।

4.8.20

शालींस्तान्भुक्तवान्पक्वान्दशार्णेषु द्विजोत्तमःस शुक्रः शुक्रतामेत्य तद्भार्यातनयोऽभवत् ॥ २० ॥

śālīṃstānbhuktavānpakvāndaśārṇeṣu dvijottamaḥsa śukraḥ śukratāmetya tadbhāryātanayo'bhavat || 20 ||

A great Brahmin in the Dasharna country ate those cooked grains of rice; and that Shukra, turning into seed, became the son of that Brahmin's wife.

दशार्ण देश के एक श्रेष्ठ ब्राह्मण ने वे पके हुए चावल के दाने खाए; और वह शुक्र, वीर्य बनकर, उसी की पत्नी का पुत्र बन गया।

4.8.21

ततो मुनीनां संसर्गात्तपस्युग्रे व्यवस्थितः । अवसन्मेरुगहने मन्वन्तरमनिन्दितः ॥ २१ ॥

tato munīnāṃ saṃsargāttapasyugre vyavasthitaḥ | avasanmerugahane manvantaramaninditaḥ || 21 ||

Then, through the company of sages, he settled into fierce austerity; and, blameless, he lived deep in Mount Meru's forests for a whole Manvantara.

फिर, मुनियों के साथ रहकर, वह कठोर तप में लग गया; और निर्दोष रहते हुए, वह मेरु पर्वत के घने जंगलों में एक पूरे मन्वंतर तक रहा।

4.8.22

तत्र तस्य समुत्पन्नो मृग्याः पुत्रो नराकृतिः । तत्स्नेहेन परं मोहं पुनरप्यायायौ क्षणात् ॥ २२ ॥

tatra tasya samutpanno mṛgyāḥ putro narākṛtiḥ | tatsnehena paraṃ mohaṃ punarapyāyayau kṣaṇāt || 22 ||

There, a son was born to him from a doe, in human form; and through love for that son, deep delusion came over him again in a moment.

वहाँ, एक हिरनी से उसे एक पुत्र हुआ, जो मनुष्य के रूप में था; और उस पुत्र के प्रेम से, एक पल में फिर से गहरा मोह उस पर छा गया।

4.8.23

पुत्रस्यास्य धनं मेऽस्तु गुणाश्चायुश्च शाश्वतम् । इत्यनारतचिन्ताभिर्जहौ सत्यामवस्थितिम् ॥ २३ ॥

putrasyāsya dhanaṃ me'stu guṇāścāyuśca śāśvatam | ityanāratacintābhirjahau satyāmavasthitim || 23 ||

Let this son of mine have wealth, and good qualities, and life everlasting - with such endless worrying, he lost his true, steady state.

मेरे इस बेटे को धन मिले, गुण मिलें, और अमर जीवन मिले, ऐसी लगातार चिंताओं से उसने अपनी सच्ची, स्थिर स्थिति खो दी।

4.8.24

धर्मचिन्तापरिभ्रंशात्पुत्रार्थं भोगचिन्तया । क्षीणायुषं तमहरन्मृत्युः सर्प इवानिलम् ॥ २४ ॥

dharmacintāparibhrṃśātputrārthaṃ bhogacintayā | kṣīṇāyuṣaṃ tamaharanmṛtyuḥ sarpa ivānilam || 24 ||

Because his thought had turned away from dharma, worrying instead about pleasure for his son's sake, death carried him off, his lifespan used up, as a snake swallows the wind.

धर्म का विचार छोड़कर, अपने बेटे के सुख की चिंता में पड़कर, मृत्यु उसे ले गई, उसकी उम्र समाप्त हो गई, जैसे साँप हवा को निगल जाता है।

4.8.25

भोगैकचिन्तया सार्धं सममुत्क्रान्तचेतनः । प्राप्य मद्रेशपुत्रत्वमासीन्मद्रमहीपतिः ॥ २५ ॥

bhogaikacintayā sārdhaṃ samamutkrāntacetanaḥ | prāpya madreśaputratvamāsīnmadramahīpatiḥ || 25 ||

With his mind fixed only on pleasure, his life left his body at that very moment; and he was reborn as the son of the king of Madra, and he himself became the king of the Madra land.

उसका मन केवल सुख पर टिका था, उसी पल उसके प्राण निकल गए; और वह मद्र देश के राजा का बेटा बनकर जन्मा, और खुद मद्र देश का राजा बन गया।

4.8.26

मद्रदेशे चिरं कृत्वा राज्यमुत्सन्नशात्रवम् । जरामभ्याजगामात्र हिमाशनिरिवाम्बुजम् ॥ २६ ॥

madradeśe ciraṃ kṛtvā rājyamutsannaśātravam | jarāmabhyājagāmātra himāśanirivāmbujam || 26 ||

After ruling the kingdom in the Madra country for a long time, its enemies all destroyed, he came to old age here, as frost strikes a lotus.

मद्र देश में लंबे समय तक राज्य करने के बाद, जिसमें सारे शत्रु मिटा दिए गए थे, वह यहाँ बुढ़ापे को पहुँचा, जैसे पाला कमल पर पड़ता है।

4.8.27

मद्रराजतनुं चारुं तपोवासनया सह । तत्याज तेन जातोऽसौ तपस्वी तापसात्मजः ॥ २७ ॥

madrarājatanuṃ cāruṃ tapovāsanayā saha | tatyāja tena jāto'sau tapasvī tāpasātmajaḥ || 27 ||

He gave up his fine body as the king of Madra, along with his old leaning toward austerity; and through that, he was born again as an ascetic, the son of an ascetic.

उसने मद्र देश के राजा वाला अपना सुंदर शरीर छोड़ दिया, अपने तप की पुरानी आदत के साथ; और उसी से, वह फिर एक तपस्वी के रूप में जन्मा, एक तपस्वी का बेटा।

4.8.28

समङ्गाया महानद्यास्तटमासाद्य तापसः । तपस्तेपे महाबुद्धिः स राम विगतज्वरः ॥ २८ ॥

samaṅgāyā mahānadyāstataṃ āsādya tāpasaḥ | tapastepe mahābuddhiḥ sa rāma vigatajvaraḥ || 28 ||

Reaching the bank of the great river Samanga, that ascetic, O Rama, a man of great wisdom, performed austerity, his fever gone.

समंगा नाम की बड़ी नदी के किनारे पहुँचकर, वह तपस्वी, हे राम, बड़ी बुद्धि वाला, तप करने लगा, उसका ताप जाता रहा।

4.8.29

विविधजन्मदशां विविधाशयः समनुभूय शरीरपरम्पराः । सुखमतिष्ठदसौ भृगुनन्दनो वरनदीसुतटे दृढवृक्षवत् ॥ २९ ॥

vividhajanmadśāṃ vividhāśayaḥ samanubhūya śarīraparamparāḥ | sukhamatiṣṭhadasau bhṛgunandano varanadīsutate dṛḍhavṛkṣavat || 29 ||

Having lived through many kinds of birth, with many changing states of mind, passing through one body after another, that son of Bhrigu at last stood at ease on the fine bank of that river, steady like a firm tree.

अनेक तरह के जन्मों को, बदलते हुए मन की कई दशाओं के साथ, एक के बाद एक शरीर पाकर जी लेने के बाद, वह भृगु का बेटा आखिर उस नदी के सुंदर किनारे पर सुख से खड़ा हो गया, एक मजबूत पेड़ की तरह स्थिर।

Chapter 9

4.9.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति चिन्तयतस्तस्य शुक्रस्य पितुरग्रतः । जगामातितरां कालो बहुसंवत्सरात्मकः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti cintayatastasya śukrasya pituregrataḥ | jagāmātitaraṃ kālo bahusaṃvatsarātmakaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said, while Shukra was thinking like this, right in front of his father, a long time passed, as long as many years.

श्री वशिष्ठ बोले, जब शुक्र ऐसा सोच ही रहे थे, तब उनके पिता के सामने ही इतना समय बीत गया जितना कई सालों में बीतता है।

4.9.2

अथ कालेन महता पवनातपजर्जरः । कायस्तस्य पपातोर्व्यां छिन्नमूल इव द्रुमः ॥ २ ॥

atha kālena mahatā pavanātapajarjaraḥ | kāyastasya papātourvyāṃ chinnamūla iva drumaḥ || 2 ||

Then, after a long time, his body, worn out by wind and heat, fell to the ground, like a tree whose root has been cut.

फिर, बहुत समय बाद, उनका शरीर हवा और धूप से थककर जमीन पर गिर पड़ा, जैसे जड़ कटा हुआ पेड़ गिरता है।

4.9.3

मनस्तु चञ्चलाभोगं तासु तासु दशासु च । बभ्रामातिविचित्रासु वनराजिष्विवैणकः ॥ ३ ॥

manastu cañcalābhogaṃ tāsu tāsu daśāsu ca | babhrāmātivicitrāsu vanarājiṣvivaiaṇakaḥ || 3 ||

But his mind, restless, kept moving through one strange condition after another, like a deer wandering through forest after forest.

पर उनका मन बेचैन होकर एक के बाद एक अजीब हालत में भटकता रहा, जैसे कोई हिरन जंगल दर जंगल भटकता है।

4.9.4

भ्रान्तमुद्भ्रान्तमभितश्चक्रार्पितमिवाकुलम् । मनस्तस्य विशश्राम समङ्गासरितस्तटे ॥ ४ ॥

bhrāntamudbhrāntamabhitaścakrārpitamivākulam | manastasya viśaśrāma samāṅgāsaritastataḥ || 4 ||

His mind, wandering, utterly wandering on every side, restless like something spinning on a wheel, came to rest on the bank of the river Samanga.

उनका मन इधर उधर पूरी तरह भटकता हुआ, जैसे किसी पहिये पर घूम रहा हो, आखिर समंगा नदी के किनारे जाकर टिक गया।

4.9.5

अनन्तवृत्तान्तघनां पेलवां सुदृढामपि । तां संसृतिदशां शुक्रो विदेहोऽनुभवन्स्थितः ॥ ५ ॥

anantavṛttāntaghanāṃ pelavāṃ sudṛḍhāmapi | tāṃ saṃsṛtidśāṃ śukro videho'nubhavansthitaḥ || 5 ||

Shukra, now without a body, stayed there feeling that state of worldly life, which was thick with endless happenings, fragile, and yet also very solid.

शुक्र अब बिना शरीर के वहीं रहकर संसार की उस दशा को महसूस करते रहे, जो अनगिनत घटनाओं से भरी हुई, कमजोर भी थी और साथ ही बहुत मजबूत भी।

4.9.6

मन्दराचलसानुस्था सा तनुस्तस्य धीमतः । तापप्रसरसंशुष्का चर्मशेषा बभूव ह ॥ ६ ॥

mandarācalasānusthā sā tanustasya dhīmataḥ | tāpaprasarasaṃśuṣkā carmaśeṣā babhūva ha || 6 ||

That body of wise Shukra, lying on a ridge of Mount Mandara, dried up by the spreading heat, was left as nothing but skin.

बुद्धिमान शुक्र का वह शरीर, मंदराचल पर्वत की एक चोटी पर पड़ा हुआ, फैलती गर्मी से सूखकर सिर्फ चमड़ी भर रह गया।

4.9.7

शरीररन्ध्रप्रवहद्वातसीत्काररूपया । चेष्टा दुःखक्षयानन्दात्काकल्येव प्रगायति ॥ ७ ॥

śarīrarandhrapravahadvātasītkārarūpayā | ceṣṭā duḥkhakṣayānandātkākalyeva pragāyati || 7 ||

Through the whistling sound of wind passing through the holes in the body, it seemed to sing sweetly, as if happy that its suffering had ended.

शरीर के छेदों में से बहती हवा की सीटी जैसी आवाज से, वह मानो मीठा गा रहा था, जैसे उसका दुख खत्म होने की खुशी में हो।

4.9.8

मनोवराकमवटे लुठितं भवभूमिषु । हसतीवेति शुभ्राभ्रसितया दन्तमालया ॥ ८ ॥

manovarākamavaṭe luṭhitaṃ bhavabhūmiṣu | hasatīveti śubhrābhraśitayā dantamālayā || 8 ||

With its row of teeth white as a bright cloud, it seemed to be laughing at the poor mind that had rolled about in the pit, through the many grounds of worldly life.

अपने चमकते बादल जैसे सफेद दांतों की कतार से, वह मानो उस बेचारे मन पर हंस रहा था, जो संसार की जमीनों में गड्ढे में लोटता रहा था।

4.9.9

दर्शयन्ती जगच्छून्यं वपुरक्ष्णोरकृत्रिमम् । मुखारण्यजरत्कूपरूपया गर्तशोभया ॥ ९ ॥

darśayantī jagacchūnyaṃ vapurakṣṇorakṛtrimam | mukhāraṇyajaratkūparūpayā gartaśobhayā || 9 ||

With the hollow beauty of its eye sockets, like two old wells in the forest of its face, it showed the plain, true shape of empty eyes, showing that the world itself is empty.

अपनी आंखों के गड्ढों की उस सूनी सुंदरता से, जो चेहरे के जंगल में दो पुराने कुओं जैसी थी, वह आंखों का असली, सीधा रूप दिखा रहा था, यह दिखाते हुए कि यह दुनिया खुद खाली है।

4.9.10

तापोपतप्ता संसिक्ता वर्षाजलभरेण सा । प्रागनुस्मरणोल्लासमिव वाष्पं विमुञ्चति ॥ १० ॥

tāpopataptā saṃsiktā varṣājalabhareṇa sā | prāganusmaraṇollāsamiva vāṣpaṃ vimuñcati || 10 ||

Scorched by heat, when it was soaked by heavy rain water, it let out steam, as if from the joy of remembering earlier times.

गर्मी से झुलसा हुआ वह शरीर जब भारी बारिश के पानी से भीगता, तो भाप छोड़ता, जैसे पुरानी बातें याद करके खुश हो रहा हो।

4.9.11

चन्द्रानिलविलासेन लुलिता वनभूमिषु । धारानिकरपातेन विनुन्ना जलदागमे ॥ ११ ॥

candrānilavilāsena lulitā vanabhūmiṣu | dhārānikarapātena vinunnā jaladāgame || 11 ||

It was tossed about by the play of moonlight and breeze on the forest ground, and pushed around by heavy streams of rain when the rainy season's clouds came.

जंगल की जमीन पर चांदनी और हवा के खेल से वह हिलता डुलता रहा, और बरसात के बादल आने पर तेज बारिश की धाराओं से इधर उधर धकेला जाता रहा।

4.9.12

प्रावृण्निर्झररूपेण प्लुता गिरिनदीतटे । पांशुना पवनोत्थेन दुष्कृतेनेव रूषिता ॥ १२ ॥

prāvṛṇnirjhararūpeṇa plutā girinadītaṭe | pāṃśunā pavanotthena duṣkṛteneva rūṣitā || 12 ||

It was swept by the monsoon torrent at the bank of the mountain stream, and covered with dust raised by the wind, as if stained with a sin.

पहाड़ी नदी के किनारे बरसाती तेज धार से वह बह जाता, और हवा से उड़ी धूल से ऐसे ढक जाता जैसे किसी पाप के दाग से रंगा हो।

4.9.13

शुष्ककाष्ठवदालोला वातेषु कृतखाकृतिः । तारमारुतसीत्कारे वने तप इवास्थिता ॥ १३ ॥

śuṣkakāṣṭhavadālolā vāteṣu kṛtakhākṛtiḥ | tāramārutasītkāre vane tapa ivāsthitā || 13 ||

Swaying in the wind like a dry piece of wood, hollow in shape, amid the loud hiss of the wind in the forest, it seemed to sit still like someone doing penance.

सूखी लकड़ी की तरह हवा में हिलता, अंदर से खोखला, जंगल में हवा की तेज सीटी के बीच, वह मानो तप करने वाले किसी साधु की तरह चुपचाप बैठा हुआ लग रहा था।

4.9.14

वक्रा शुष्कान्त्रतन्त्री च भूतभाङ्कारकारिणी । अरण्यलक्ष्मीर्बाल्येव शून्या चर्ममयोदरी ॥ १४ ॥

vakrā śuṣkāntratantri ca bhūtabhāṅkārakāriṇī | araṇyalakṣbhīrbālyeva śūnyā carmamayodarī || 14 ||

Bent and crooked, with its dried intestines like the strings of an instrument, making a droning sound for the spirits, it looked like a young forest goddess, empty inside, its belly nothing but skin.

टेढ़ा मेढ़ा, उसकी सूखी आंतें किसी बाजे के तारों जैसी, भूत प्रेतों के लिए गूंजती आवाज निकालता, वह मानो जंगल की किसी छोटी बच्ची जैसी देवी लग रहा था, अंदर से खाली, जिसका पेट सिर्फ चमड़ी भर था।

4.9.15

रागद्वेषविहीनत्वात्तस्य पुण्याश्रमस्य तु । महातपस्त्वाच्च भृगोर्न भुक्ता मृगपक्षिभिः ॥ १५ ॥

rāgadveṣavihīnatvāttasya puṇyāśramasya tu | mahātapastvācca bhṛgor na bhunktā mṛgapakṣibhiḥ || 15 ||

But because that holy hermitage was free from liking and hating, and because of Bhrigu's great power of penance, the body was not eaten by animals or birds.

पर क्योंकि वह पवित्र आश्रम राग और द्वेष से मुक्त था, और भृगु के महान तप के कारण, उस शरीर को किसी जानवर या पक्षी ने नहीं खाया।

4.9.16

यमनियमकृशीकृताङ्गयष्टिश्चरति तपः स्म भृगूद्वहस्य चेतः । तनुरथ पवनापनीतरक्ता चिरमलुठन्महतीषु सा शिलासु ॥ १६ ॥

yamanīyamakṛśīkṛtāṅgayaṣṭiścarati tapaḥ sma bhṛgūdvahasya cetaḥ| tanuratha pavanāpanītaraktā ciramaluṭhanmahatīṣu sā śilāsu || 16 ||

The mind of Bhrigu's son, its body made thin by the rules of yama and niyama, kept practicing penance, and the body itself, its blood dried up by the wind, lay for a long time rolling on the great rocks.

भृगु के बेटे का मन, जिसका शरीर यम और नियम के पालन से दुबला हो गया था, तप करता रहा, और वह शरीर, जिसका खून हवा से सूख गया था, बड़ी बड़ी चट्टानों पर बहुत देर तक पड़ा लुढ़कता रहा।

Chapter 10

4.10.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ वर्षसहस्रेण दिव्येन परमेश्वरः । भृगुः परमसंबोधाद्विरराम समाधितः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha varṣasahasreṇa divyena parameśvaraḥ | bhṛguḥ paramasaṃbodhād virarāma samādhitaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Then, after a thousand heavenly years, Bhrigu, the great and glorious sage, rose from his deep meditation, for he had reached the highest awakening.

श्री वशिष्ठ बोले, फिर एक हज़ार दिव्य वर्षों के बाद, महान और तेजस्वी भृगु मुनि अपनी गहरी समाधि से बाहर आए, क्योंकि उन्हें सबसे बड़ा बोध हो चुका था।

4.10.2

नापश्यदग्रे तनयं विनयावनताननम् । सामन्तं गुणसेनायाः पुण्यं मूर्तमिव स्थितम् ॥ २ ॥

nāpaśyad agre tanayaṃ vinayāvanatānanam | sāmantaṃ guṇasenāyāḥ puṇyaṃ mūrtam iva sthitam || 2 ||

He did not see, in front of him, his son, the one whose face used to bend down in humility, the prince who served under Gunasena, who used to stand there like virtue itself given a body.

उन्हें अपने सामने अपना बेटा नहीं दिखा, वही बेटा, जो हमेशा विनम्रता से सिर झुकाए रहता था, गुणसेना के अधीन एक राजा, जो वहाँ मानो पुण्य खुद मूर्ति बनकर खड़ा हो।

4.10.3

अपश्यत्केवलं कायकङ्कालं पुरतो महत् । देहयुक्तमिवाभाग्यं दारिद्र्यमिव मूर्तिमत् ॥ ३ ॥

apaśyat kevalaṃ kāyakaṅkālaṃ purato mahat | dehayuktam ivābhāgyaṃ dāridryam iva mūrtimat || 3 ||

He saw only a huge skeleton lying in front of him, as if bad luck had taken on a body, as if poverty itself had taken physical form.

उन्हें सामने बस एक बड़ा-सा हड्डियों का ढांचा दिखा, मानो बदकिस्मती ने खुद शरीर ले लिया हो, मानो गरीबी खुद मूर्त रूप में खड़ी हो।

4.10.4

तापशुष्कवपुः कृत्तिरन्ध्रस्फुरिततित्तिरि । संशुष्कान्त्रोदरगुहाछायाविश्रान्तदर्दुरम् ॥ ४ ॥

tāpaśuṣkavapuḥ kṛttir andhrasphuritatittiri | saṃśuṣkāntrōdaraguhāchāyāviśrāntadarduram || 4 ||

That body, dried up by suffering, its skin had holes in it where a partridge fluttered, and in the shaded hollow of its belly, where the guts had dried up, a frog lay resting.

वह शरीर दुख से सूखकर ऐसा हो गया था कि उसकी खाल में छेद हो गए थे, जिनमें एक तीतर पक्षी फड़फड़ाता था, और उसके पेट की सूखी अंतड़ियों की छाया भरी गुफा में एक मेंढक आराम कर रहा था।

4.10.5

नेत्रगर्तकसंसक्तप्रसूतनवकीटकम् । पर्शुकापञ्जरप्रोतकोशकारकृमिव्रजम् ॥ ५ ॥

netragartakasaṃsaktaprasūtanavakīṭakam | parśukāpañjaraprotakośakārakṛmivrajam || 5 ||

In the pits of its eyes clung newly hatched insects, and through the cage of its ribs were threaded swarms of worms that spin cocoons.

उसकी आँखों के गड्ढों में अभी अभी जन्मे कीड़े चिपके हुए थे, और उसकी पसलियों के पिंजरे में कोया बनाने वाले कीड़ों के झुंड आर पार पिरोए हुए थे।

4.10.6

प्राक्तनीमुपभोगेहामिष्टानिष्टफलप्रदाम्धाराधौतान्त्रया तद्वद्भृशं शुष्कास्थिमालया ॥ ६ ॥

prāktanī'mupabhogehāmiṣṭāniṣṭaphalapradāmdhārādhautāntrayā tadvadbhṛśaṃ śuṣkāsthimālayā || 6 ||

Gone now was its old hunger for pleasures, the kind that bring both good results and bad. Some stream had washed its insides hollow, and just as much, it was strung with a garland of dry bones.

उसकी वह पुरानी चाह अब जा चुकी थी जो सुख भोगने की होती है और अच्छे बुरे दोनों तरह के फल देती है। किसी धारा ने उसके भीतरी हिस्से को धोकर खोखला कर दिया था, और वैसे ही, उस पर सूखी हड्डियों की माला सी बंधी हुई थी।

4.10.7

शिरोघटेन शुभ्रेण मसृणेन्दुवर्चसाविडम्बयच्च कर्पूराप्लुतलिङ्गशिरःश्रियम् ॥ ७ ॥

śiroghaṭena śubhreṇa masṛṇenenduvarcasāviḍambayacca karpūrāplutaliṅgaśiraḥśriyam || 7 ||

Its skull was pale and smooth, glowing like the moon. It looked like a mocking copy of the head of Shiva's linga smeared with camphor.

उसकी खोपड़ी सफ़ेद और चिकनी थी, चाँद जैसी चमक लिए हुए। वह ऐसी लगती थी मानो कपूर से लिपटे शिवलिंग के ऊपरी हिस्से की नकल उड़ा रही हो।

4.10.8

ऋज्व्या संशुष्कशिरया स्वास्थिमात्रावशेषयाग्रीवयात्मानुसृतया दीर्घीकुर्वदिवाकृतिम् ॥ ८ ॥

ṛjvyā saṃśuṣkaśirayā svāsthimātrāvaśeṣayāgrīvayātmānusṛtayā dīrghīkurvadivākṛtim || 8 ||

Its neck was straight, its veins all dried up, nothing left of it but bare bone, running straight down in line with the body, as if it were stretching its shape out longer still.

उसकी गर्दन सीधी थी, उसकी नसें सूख चुकी थीं, उसमें बस नंगी हड्डी बची थी, जो शरीर की सीध में सीधी नीचे तक जाती थी, मानो वह अपने आकार को और लंबा किए जा रही हो।

4.10.9

मृणालिकापाण्डुरया धारावभृतमांसयानासाग्रास्थिकया वक्त्रे कृतसीमाकृतिं दधत् ॥ ९ ॥

mṛṇālikāpāṇḍurayā dhārāvabhṛtamāṃsayānāsāgrāsthikayā vaktre kṛtasīmākṛtiṃ dadhat || 9 ||

The bone of its nose, pale as a lotus stem, its flesh all washed away, stood out sharp on its face like a fixed, cut out edge.

उसकी नाक की हड्डी, कमल की डंडी जैसी पीली, जिसका मांस पूरी तरह धुल चुका था, चेहरे पर एक तेज़, कटी हुई सी धार के रूप में उभरी हुई थी।

4.10.10

दीर्घकन्धरया नूनमुन्नतीकृतवक्त्रयाप्रेक्षमाणमिव प्राणानुत्क्रान्तानम्बरोदरे ॥ १० ॥

dīrghakandharayā nūnamunnatīkṛtavaktrayāprekṣamāṇamiva prāṇānutkrāntānambarodare || 10 ||

Its neck was long, and its face tilted up high, as though, without truly being able to see, it were still looking for its own life breath, which had already flown off into the wide sky.

उसकी गर्दन लंबी थी, और चेहरा ऊँचा उठा हुआ था, मानो वह, बिना ठीक से देख पाए, अब भी अपने उस प्राण को ढूंढ रहा हो, जो पहले ही उड़कर विशाल आकाश में जा चुका था।

4.10.11

जङ्घोरुजानुदोर्दण्डैर्द्विगुणां दीर्घतां गतैः । प्रतिष्ठानमिवाशान्तं दीर्घाध्वश्रमभीतितः ॥ ११ ॥

jaṅghorujānudordaṇḍairdviguṇāṃ dīrghatāṃ gataiḥ | pratiṣṭhānamivāśāntaṃ dīrghādhvaśramabhītitaḥ || 11 ||

Its shins, thighs, knees, and arms had all stretched out to twice their normal length, restless, like something that cannot settle down, afraid of how tiring a long road ahead will be.

उसकी पिंडलियाँ, जांघें, घुटने और भुजाएँ, सब अपनी सामान्य लंबाई से दुगनी हो गई थीं, बेचैन, जैसे कोई चीज़ टिक ही न पा रही हो, मानो उसे आगे के लंबे रास्ते की थकान का डर हो।

4.10.12

उदरेणातिरिक्तेन चर्मशेषेण शोषिणा । प्रदर्शयदिवाज्ञस्य हृदयस्यातिशून्यताम् ॥ १२ ॥

udareṇātiriktena carmaśeṣeṇa śoṣiṇā | pradarśayadivājñasya hṛdayasyātiśūnyatām || 12 ||

Its belly was shrunken, with nothing left but loose, dry skin. It seemed to show just how completely empty a fool's heart can be.

उसका पेट पिचक गया था, उसमें बस ढीली, सूखी खाल बची थी। मानो वह दिखा रहा हो कि एक मूर्ख का दिल कितना पूरी तरह खाली हो सकता है।

4.10.13

प्रेक्ष्य तच्छुष्ककङ्कालमालानं दुःखदन्तिनः । पूर्वापरपरामर्शमकुर्वन्भृगुरुत्थितः ॥ १३ ॥

prekṣya tacchuṣkakaṅkālamālānaṃ duḥkhadantinaḥ | pūrvāparaparāmarśamakurvanbhṛgurutthitaḥ || 13 ||

Seeing that dry skeleton, like a post strong enough to tie down the elephant of grief, Bhrigu got up at once, without pausing to weigh what had happened against what would come next.

उस सूखे ढांचे को देखकर, जो मानो दुख के हाथी को बाँधने का खूँटा हो, भृगु तुरंत उठ खड़े हुए, बिना यह सोचे कि पहले क्या हुआ था और आगे क्या होगा।

4.10.14

आलोकसमकाले हि प्रतिभानं ततो भृगोः । चिरमुत्क्रान्तजीवः किं मत्पुत्रोऽयमिति क्षणात् ॥ १४ ॥

ālokasamakāle hi pratibhānaṃ tato bhṛgoḥ | ciramutkrāntajīvaḥ kiṃ matputro'yamiti kṣaṇāt || 14 ||

Right at that moment, in an instant, a thought flashed through Bhrigu's mind: could this be my son, who died so long ago?

ठीक उसी पल, एक ही क्षण में, भृगु के मन में यह ख़याल कौंध गया, क्या यह मेरा वही बेटा है, जिसके प्राण कब का निकल चुके हैं?

4.10.15

अचिन्तयत एवास्य भविष्यं तनयं ततः । कालं प्रति बभूवाशु कोपः परमदारुणः ॥ १५ ॥

acintayata evāsya bhaviṣyaṃ tanayaṃ tataḥ | kālaṃ prati babhūvāśu kopaḥ paramadāruṇaḥ || 15 ||

Just as he sat there pondering his son's fate, a terrible rage rose in him at once against Death.

जैसे ही वे वहाँ बैठे अपने बेटे के भाग्य के बारे में सोच रहे थे, उसी वक़्त उनके मन में काल के प्रति एक भयानक क्रोध जाग उठा।

4.10.16

अकाल एव मत्पुत्रो नीतः किमिति कोपितः । कालाय शापमुत्सृष्टुं भगवानुपचक्रमे ॥ १६ ॥

akāla eva matputro nītaḥ kimiti kopitaḥ | kālāya śāpamutsṛṣṭuṃ bhagavānupacakrame || 16 ||

Why has my son been taken away before his time? Thinking this, furious, the great sage began to pronounce a curse on Death.

मेरे बेटे को उसका समय आने से पहले ही क्यों ले लिया गया? यही सोचकर, गुस्से में भरे उस महान मुनि ने काल को शाप देना शुरू कर दिया।

4.10.17

अथाकलितरूपोऽसौ कालः कवलितप्रजः । आधिभौतिकमास्थाय वपुर्मुनिमुपाययौ ॥ १७ ॥

athākalitarūpo'sau kālaḥ kavalitaprajaḥ | ādhibhautikamāsthāya vapurmuminupāyayau || 17 ||

Then Death, whose true form no one can grasp, who has swallowed up every living being, took on a solid, physical body and came to the sage.

तब काल, जिसका असली रूप कोई समझ नहीं सकता, जिसने हर जीव को निगल लिया है, एक ठोस, दिखने वाला शरीर धारण करके उस मुनि के पास आया।

4.10.18

खड्गपाशधरः श्रीमान्कुण्डली कवचान्वितः । षड्भुजः षण्मुखो बह्व्या वृतः किङ्करसेनया ॥ १८ ॥

khaḍgapāśadharaḥ śrīmānkuṇḍalī kavacānvitaḥ | ṣaḍbhijaḥ ṣaṇmukho bahvyā vṛtaḥ kiṅkarasenayā || 18 ||

He carried a sword and a noose, was glowing bright, wore earrings and armor, had six arms and six faces, and was surrounded by a huge army of servants.

उसके हाथ में तलवार और फंदा था, वह चमक रहा था, उसने कुंडल और कवच पहन रखे थे, उसकी छह भुजाएँ और छह मुँह थे, और वह सेवकों की एक बड़ी सेना से घिरा हुआ था।

4.10.19

यच्छरीरसमुत्थेन ज्वालाजालेन वल्गता । फुल्लकिंशुकवृक्षस्य बभारादेः श्रियं नभः ॥ १९ ॥

yaccharīrasamutthena jvālājālena valgatā | phullakiṃśukavṛkṣasya babhārādreḥ śriyaṃ nabhaḥ || 19 ||

From his body rose a net of leaping flames, and because of them the sky took on the beauty of a mountain covered with kimshuka trees in fiery bloom.

उसके शरीर से लपटों का एक जाल उठ रहा था, और उसकी वजह से आकाश वैसा ही सुंदर दिखने लगा जैसे आग जैसे खिले हुए किंशुक के पेड़ों से ढका कोई पहाड़।

4.10.20

यत्करस्थत्रिशूलाग्रनिःसृतैरग्निमण्डलैः । विरेजुरुदितैराशाः कानकैरिव कुण्डलैः ॥ २० ॥

yatkarasthatriśūlāgraniḥsṛtairagnimaṇḍalaiḥ | virejuruditairāśāḥ kānakairiva kuṇḍalaiḥ || 20 ||

From the tip of the trident in his hand shot out rings of fire, and lit up by these fiery rings, the four directions of the sky shone as if wearing golden earrings.

उसके हाथ में मौजूद त्रिशूल की नोक से आग के घेरे निकल रहे थे, और इन जलते हुए घेरों से जगमगाकर दिशाएँ ऐसी चमक रही थीं मानो उन्होंने सोने के कुंडल पहन रखे हों।

4.10.21

यत्परश्वसनापास्तशिखरा मेदिनीभृतः । दोलामिव समारूढाश्चेलुः पेतुश्च घूर्णिताः ॥ २१ ॥

yatparaśvasanāpāstasiśikhara medinībhṛtaḥ | dolāmiva samārūḍhāścheluḥ petuśca ghūrṇitāḥ || 21 ||

His fierce breath tore the peaks off the mountains. The mountains swayed and reeled as if set on a swing, and some of them came crashing down.

उसकी तेज़ साँसों ने पहाड़ों की चोटियाँ उखाड़ दीं। पहाड़ ऐसे हिलने डुलने और घूमने लगे मानो किसी झूले पर बैठे हों, और कुछ तो गिर भी पड़े।

4.10.22

यत्खड्गमण्डलोद्द्योतैः श्यामं बिम्बं विवस्वतः । कल्पदग्धजगद्धूमपर्याकुलमिवावभौ ॥ २२ ॥

yatkhaḍgamaṇḍaloddyotaiḥ śyāmaṃ bimbaṃ vivasvataḥ | kalpadagdhajagaddhūmaparyākulamivāvabhau || 22 ||

The flashing glow of the circle of his sword turned the sun's bright disc dark, so that it looked choked with the smoke of a whole world burning at the end of an age.

उसकी तलवार के घेरे से निकलती चमक ने सूरज के चमकीले गोले को काला कर दिया, जिससे वह ऐसा लगने लगा मानो किसी युग के अंत में जलती हुई पूरी दुनिया के धुएँ से भर गया हो।

4.10.23

स उपेत्य महाबाहो कुपितं तं महामुनिम् । कल्पक्षुब्धाब्धिगम्भीरं सान्त्वपूर्वमुवाच ह ॥ २३ ॥

sa upetya mahābāho kupitaṃ taṃ mahāmunim | kalpakṣubdhābdhigambhīraṃ sāntvapūrvamuvāca ha || 23 ||

Strong armed Rama, that is how Death went up to the great sage, whose fury ran as deep as the ocean churned up at the end of an age, and first spoke to him with soft, calming words.

हे बलशाली राम, इस तरह काल उस महान मुनि के पास गया, जिनका क्रोध किसी युग के अंत में मथे गए समुद्र जितना गहरा था, और पहले उनसे नरम, शांत करने वाले शब्दों में बात की।

4.10.24

विज्ञातलोकस्थितयो मुने दृष्टपरावराः । हेतुनापि न मुह्यन्ति किं नु हेतुं विनोत्तमाः ॥ २४ ॥

vijñātalokasthitayo mune dṛṣṭaparāvarāḥ | hetunāpi na muhyanti kiṃ nu hetuṃ vinottamāḥ || 24 ||

O sage, those who truly understand how this world works, who have seen both the higher and the lower truths, do not lose their clarity even when there is real reason to. So how could the wisest of men lose it for no reason at all?

हे मुनि, जो लोग सच में जानते हैं कि यह संसार कैसे चलता है, जिन्होंने ऊँची और नीची, दोनों तरह की सच्चाई देख ली है, वे असली वजह होने पर भी अपना विवेक नहीं खोते। फिर सबसे बुद्धिमान लोग बिना किसी वजह के अपना विवेक कैसे खो सकते हैं?

4.10.25

त्वमनन्ततपा विप्रो वयं नियतिपालकाः । तेन संपूज्यसे पूज्यः साधो नेतरयेच्छया ॥ २५ ॥

tvamanantatapā vipro vayaṃ niyatipālakāḥ | tena saṃpūjyase pūjyaḥ sādho netarayecchayā || 25 ||

You are a brahmin whose penance never ends. We are the keepers of destiny. That is why you are worshipped and deserve worship, good man, and not because of anyone's random wish.

आप एक ऐसे ब्राह्मण हैं जिनकी तपस्या का कोई अंत नहीं है। हम भाग्य के रखवाले हैं। इसी वजह से आपकी पूजा होती है और आप पूजा के लायक हैं, हे साधु, न कि किसी की मनमानी इच्छा से।

4.10.26

मा तपःक्षपयाऽबुद्धे कल्पकालमहानलैः । यो न दग्धोऽस्मि मे तस्य किं त्वं शापेन धक्ष्यसि ॥ २६ ॥

mā tapaḥkṣapayā'buddhe kalpakālamahānalaiḥ| yo na dagdho'smi me tasya kiṃ tvaṃ śāpena dhakṣyasi || 26 ||

Do not think, you foolish man, that you can destroy me with the power of your penance. I was not burned even by the great fires that end an age. So how will you burn me with a mere curse?

हे मूर्ख, यह मत सोचो कि तुम अपनी तपस्या की ताकत से मुझे नष्ट कर दोगे। जो मैं उन बड़ी आग से भी नहीं जला जो एक युग के अंत में जलती हैं, उसे तुम एक श्राप से कैसे जला दोगे?

4.10.27

संसारावलयो ग्रस्ता निगीर्णा रुद्रकोटयः। भुक्तानि विष्णुवृन्दानि क्व न शक्ता वयं मुने ॥ २७ ॥

saṃsārāvalayo grastā nigīrṇā rudrakoṭayaḥ| bhuktāni viṣṇuvṛndāni kva na śaktā vayaṃ mune || 27 ||

We have swallowed whole cycles of the world. We have devoured crores of Rudras. We have eaten up whole groups of Vishnus. Sage, where are we not able to reach?

हमने संसार के पूरे चक्रों को निगल लिया है। हमने करोड़ों रुद्रों को निगल लिया है। हमने विष्णुओं के समूहों को खा लिया है। हे मुनि, हम कहाँ नहीं पहुँच सकते?

4.10.28

भोक्तारो हि वयं ब्रह्मन्भोजनं युष्मदादयः। स्वयं नियतिरेषा हि नावयोरेतदीहितम् ॥ २८ ॥

bhoktāro hi vayaṃ brahmanbhojanaṃ yuṣmadādayaḥ| svayaṃ niyatireṣā hi nāvayoreta dīhitam || 28 ||

We are the eaters, brahmin, and people like you are the food. This is destiny acting on its own. Neither of us has wished for this.

हे ब्राह्मण, हम खाने वाले हैं और तुम जैसे लोग भोजन हैं। यह भाग्य खुद-ब-खुद हो रहा काम है। हम दोनों में से किसी ने भी यह नहीं चाहा है।

4.10.29

स्वयमूर्ध्वं प्रयात्यग्निः स्वयं यान्ति पयांस्यधः। भोक्तारं भोजनं याति सृष्टिं चाप्यन्तकः स्वयम् ॥ २९ ॥

svayamūrdhvaṃ prayātyagniḥ svayaṃ yānti payāṃsyadhaḥ| bhoktāraṃ bhojanaṃ yāti sṛṣṭiṃ cāpyantakaḥ svayam || 29 ||

Fire on its own goes upward. Water on its own goes downward. Food on its own goes to the one who eats it. And death on its own goes toward everything that is created.

आग खुद ही ऊपर जाती है। पानी खुद ही नीचे जाता है। भोजन खुद ही खाने वाले के पास जाता है। और मृत्यु खुद ही हर बनी हुई चीज़ की ओर जाती है।

4.10.30

इदमित्थं मुने रूपं ममेह परमात्मनः। स्वात्मनि स्वयमेवात्मा स्वत एव विजृम्भते ॥ ३० ॥

idamitthaṃ mune rūpaṃ mameha paramātmanaḥ| svātmani svayamevātmā svata eva vijṛmbhate || 30 ||

Sage, this is exactly what the form of the highest self is like here, in me. Within itself, the self alone, all by itself, unfolds on its own.

हे मुनि, यहाँ मुझमें परम आत्मा का रूप ठीक ऐसा ही है। आत्मा अपने ही भीतर, अकेली, अपने आप से फैलती है।

4.10.31

नेह कर्ता न भोक्तास्ति दृष्ट्या नष्टकलङ्कया। बहवश्चेह कर्तारो दृष्ट्याऽनष्टकलङ्कया ॥ ३१ ॥

neha kartā na bhoktāsti dṛṣṭyā naṣṭakalaṅkayā | bahavaśceha kartāro dṛṣṭyānaṣṭakalaṅkayā || 31 ||

Seen with a vision whose stain is fully washed away, here there is no doer and no one who enjoys the results. Seen with a vision whose stain is not washed away, here there are many doers.

जिस दृष्टि का दाग पूरी तरह धुल चुका है, उससे देखने पर यहाँ न कोई करने वाला है, न कोई भोगने वाला। जिस दृष्टि का दाग अभी नहीं धुला है, उससे देखने पर यहाँ बहुत सारे करने वाले दिखते हैं।

4.10.32

कर्तृताकर्तृते ब्रह्मन्केवलं परिकल्पिते । असम्यग्दर्शनेनैव न सम्यग्दर्शनस्य ते ॥ ३२ ॥

kartṛtākartṛte brahmankevalaṃ parikalpite | asamyagdarśanenaiva na samyagdarśanasya te || 32 ||

Brahmin, being a doer and not being a doer are both only imagined. This happens only through wrong seeing, not for someone whose seeing is right.

हे ब्राह्मण, करने वाला होना और न होना, दोनों बस कल्पना हैं। यह सिर्फ गलत देखने की वजह से होता है, सही देखने वाले के लिए नहीं।

4.10.33

पुष्पाणि तरुखण्डेषु भूतानि भुवनेषु च । स्वयमायान्ति यान्तीह कल्पते हेतुनामभिः ॥ ३३ ॥

puṣpāṇi tarukhaṇḍeṣu bhūtāni bhuvaneṣu ca | svayamāyānti yāntīha kalpate hetunāmabhiḥ || 33 ||

Flowers come and go on the branches of trees, and beings come and go in the worlds, all by themselves. Here, it is only made up using names like cause.

पेड़ की डालियों पर फूल खुद ही आते-जाते हैं, और दुनिया में जीव खुद ही आते-जाते हैं। यहाँ तो बस कारण जैसे नामों से कल्पना गढ़ी जाती है।

4.10.34

अब्बिम्बितस्य चन्द्रस्य चलने कर्त्रकर्तृते । न सत्ये नानृते यद्वत्तद्वत्कालस्य सृष्टिषु ॥ ३४ ॥

abbimbitasya candrasya calane kartṛkartṛte | na satye nānṛte yadvat tadvatkālasya sṛṣṭiṣu || 34 ||

Take the moon reflected in water. When it seems to move, calling it a doer or not a doer is neither true nor false. It is the same with time, in the things it creates.

जैसे पानी में दिखने वाला चाँद है। जब वह हिलता हुआ लगे, तो उसे करने वाला कहना या न कहना, न सच है न झूठ। समय और उसकी बनाई चीज़ों के साथ भी यही बात है।

4.10.35

मनो मिथ्याभ्रमाभोगे कर्तृताकर्तृतामयीम् । करोति कलनां रज्ज्वां भ्रान्तेक्षण इवाहिताम् ॥ ३५ ॥

mano mithyābhraṃābhoge kartṛtākartṛtāmayīm | karoti kalanāṃ rajjvāṃ bhrāntekṣaṇa ivāhitām || 35 ||

In its wandering through false confusion, the mind builds up an idea made of being a doer and not being a doer, just as someone with confused eyes sees a snake placed on a rope.

झूठी उलझन में भटकते हुए मन करने वाला होने और न होने का खयाल गढ़ लेता है, ठीक वैसे ही जैसे धुँधली नज़र वाला कोई आदमी रस्सी पर रखा साँप देख लेता है।

4.10.36

तेन मागा मुने कोपमापदामीदृशः क्रमः । यद्यथा तत्तथैवाशु सत्यमालोकयाकुलः ॥ ३६ ॥

tena māgā mune kopamāpadāmīdṛśaḥ kramaḥ | yadyathā tattathaivāśu satyamālokayākulaḥ || 36 ||

So sage, do not give in to anger. This is simply how troubles unfold, one after another. Whatever happens, happens exactly as it must, right away. See the truth, and stay calm.

इसलिए हे मुनि, गुस्से में मत आओ। मुसीबतें बस इसी क्रम से आती हैं। जो जैसे होना है, वह वैसे ही तुरंत होता है। सच को देखो और शांत रहो।

4.10.37

न वयं प्रतिभार्थेहा नाभिमानवशीकृताः । स्वतो हि तात वशगाः केवलं नियतौ स्थिताः ॥ ३७ ॥

na vayaṃ pratibhārthehā nābhimānavashīkṛtāḥ | svato hi tāta vashagāḥ kevalaṃ niyatau sthitāḥ || 37 ||

We are not driven by a wish to show off our cleverness, and we are not ruled by pride. Dear one, we are governed only by our own nature, resting simply within destiny.

हम अपनी होशियारी दिखाने की चाह से कुछ नहीं करते, और न ही घमंड के वश में हैं। हे प्रिय, हम बस अपने स्वभाव के अधीन हैं, और सिर्फ भाग्य में टिके रहते हैं।

4.10.38

प्रकृतव्यवहारेहानियतीर्निंयतेर्वशात् । प्राज्ञाः समभिवर्तन्ते नाभिमानमहातमः ॥ ३८ ॥

prakṛtavyavahārehāniyatīrniṃyatervaśāt | prājñāḥ samabhivartante nābhimānamahātamaḥ || 38 ||

The wise carry out their everyday actions and efforts only under the sway of destiny, not through the great darkness of pride.

बुद्धिमान लोग अपने रोज़ के काम और कोशिश सिर्फ भाग्य के वश में होकर करते हैं, घमंड के बड़े अंधेरे से नहीं।

4.10.39

कर्तव्यमेव नियतं केवलं कार्यकोविदैः । सुषुप्तिवृत्तिमाश्रित्य कदाचित्त्वं न नाशय ॥ ३९ ॥

kartavyameva niyataṃ kevalaṃ kāryakovidaiḥ | suṣuptivṛttimāśritya kadācittvaṃ na nāśaya || 39 ||

Those skilled in action simply do what has to be done, since that is fixed by fate. Do not ever ruin this by slipping into a dull state like deep sleep.

काम में कुशल लोग बस वही करते हैं जो करना तय है, क्योंकि यह भाग्य से तय है। गहरी नींद जैसी सुस्त हालत में जाकर इसे कभी मत बिगाड़ो।

4.10.40

क्व सा ज्ञानमयी दृष्टिः क्व महत्त्वं क्व धीरता । मार्गे सर्वप्रसिद्धेऽपि किमन्ध इव मुह्यसि ॥ ४० ॥

kva sā jñānamayī dṛṣṭiḥ kva mahattvaṃ kva dhīratā | mārge sarvaprasiddhe'pi kimandha iva muhyasi || 40 ||

Where is that vision made of knowledge now? Where is your greatness? Where is your steadiness? Even on a path known to everyone, why are you as confused as a blind man?

वह ज्ञान से भरी नज़र अब कहाँ है? तुम्हारी महानता कहाँ है? तुम्हारा धैर्य कहाँ है? सबको मालूम रास्ते पर भी तुम अंधे आदमी की तरह क्यों भटक रहे हो?

4.10.41

स्वकर्मफलपाकोत्थामविचार्य दशां मुने । किं मूर्ख इव सर्वज्ञ मुधा मां शप्तुमिच्छसि ॥ ४१ ॥

svakarmaphalapākotthāmavicārya daśāṃ mune | kiṃ mūrkha iva sarvajña mudhā māṃ śaptumicchasi || 41 ||

Sage, without looking closely at this state that has come from the ripening of the fruit of your own past actions, why, even though you know everything, do you want to curse me for nothing, like a fool?

हे मुनि, अपने ही पुराने कर्मों के फल पकने से आई इस हालत को बिना ठीक से समझे, तुम सब कुछ जानते हुए भी मूर्ख की तरह मुझे बेकार में क्यों श्राप देना चाहते हो?

4.10.42

देहिनामिह सर्वेषां शरीरं द्विविधं मुने । किं न जानासि तं देहमेकमन्यन्मनोभिधम् ॥ ४२ ॥

dehināmiha sarveṣāṃ śarīraṃ dvividhaṃ mune | kiṃ na jānāsi taṃ deham ekam anyan manobhidham || 42 ||

Sage, everyone here who has a body has two kinds of body. Don't you know this: one is that body itself, and the other is called the mind?

हे मुनि, यहाँ जिसके पास भी शरीर है, उसका शरीर दो तरह का होता है। क्या तुम यह नहीं जानते कि एक तो यह शरीर है, और दूसरे को मन कहते हैं?

4.10.43

तत्र देहो जडोऽत्यर्थमाविनाशपरायणः । मनस्तुच्छं च नियतं कदर्थीक्रियते तव ॥ ४३ ॥

tatra deho jado'tyarthamāvināśaparāyaṇaḥ | manastucchaṃ ca niyataṃ kadarthīkriyate tava || 43 ||

Of these two, the body has no awareness at all, and it is only headed toward its own destruction. As for the mind, though it is a small thing, you keep treating it wrongly all the time.

इन दोनों में से शरीर पूरी तरह बेसुध है, और वह बस अपने नाश की ओर ही जा रहा है। रहा मन, वह छोटी सी चीज़ है, फिर भी तुम उसके साथ लगातार गलत बर्ताव करते हो।

4.10.44

चतुरेण यथा साधो रथः सारथिनोह्यते । कुर्वता किंचन स्नेहाद्देहोऽयं मनसा तथा ॥ ४४ ॥

catureṇa yathā sādho rathaḥ sārathinohyate | kurvatā kiṃcana snehād deho'yaṃ manasā tathā || 44 ||

Good man, just as a skilled charioteer drives a chariot, doing his work with care, so too this body is driven by the mind.

हे साधु, जैसे एक कुशल सारथी ध्यान से अपना काम करते हुए रथ चलाता है, वैसे ही यह शरीर मन के द्वारा चलाया जाता है।

4.10.45

असत्संकल्पः क्रियते सच्छरीरं विनाश्यते । क्षणेन मनसा पङ्कपुरुषः शिशुना यथा ॥ ४५ ॥

asatsaṃkalpaḥ kriyate saccarīraṃ vināśyate | kṣaṇena manasā paṅkapuruṣaḥ śiśunā yathā || 45 ||

In an instant, the mind turns an unreal thought into something done, and destroys the real body, just as a child makes and breaks a figure of mud in a moment.

मन एक पल में झूठे खयाल को हकीकत बना देता है, और असली शरीर को नष्ट कर देता है, ठीक वैसे ही जैसे कोई बच्चा एक पल में मिट्टी की मूरत बनाता और तोड़ता है।

4.10.46

चित्तमेवेह पुरुषस्तत्कृतं कृतमुच्यते । तद्बद्धं कलनाहेतोः कलनास्तं विमुच्यते ॥ ४६ ॥

cittameveha puruṣastatkṛtaṃ kṛtamucyate | tadbaddhaṃ kalanāhetoḥ kalanāstaṃ vimucyate || 46 ||

Here, the mind itself is the real person. Whatever it does is called an action. It stays bound because it keeps forming ideas, and when that forming of ideas comes to rest, it is set free.

यहाँ मन ही असली व्यक्ति है। वह जो भी करता है, उसे काम कहा जाता है। वह खयाल गढ़ते रहने की वजह से बंधा रहता है, और जब यह खयाल गढ़ना रुक जाता है, तो वह मुक्त हो जाता है।

4.10.47

अयं देह इवात्रस्थमिदमङ्गमिदं शिरः । इदं स्फारविकारं तन्मन एवाभिधीयते ॥ ४७ ॥

ayaṃ deha ivātrasthamidamaṅgamidaṃ śiraḥ | idaṃ sphāravikāraṃ tanmana evābhidhīyate || 47 ||

This body that seems to stand here, with its limbs and its head, this whole display of change is itself simply called the mind.

यह शरीर जो यहाँ हाथ-पैर और सिर के साथ खड़ा दिखता है, यह पूरा बदलाव का तमाशा असल में मन ही कहलाता है।

4.10.48

मनो हि जीवाज्जीवाख्यं निश्चयैकतया नु धीः । अहङ्कारोऽभिमन्तृत्वान्नानाता स्वयमेव हि ॥ ४८ ॥

mano hi jīvāj jīvākhyam niścayaikatayā nu dhīḥ | ahaṅkāro'bhimantṛtvān nānātā svayameva hi || 48 ||

This same mind is called the living being because of its hold on life. It is called reason when it settles firmly on one decision. It is called ego when it takes itself to be the one who acts. And all this variety and difference is made by the mind itself.

यही मन जीवन से जुड़े होने के कारण जीव कहलाता है। जब यह किसी एक फैसले पर पक्का हो जाता है, तो इसे बुद्धि कहा जाता है। जब यह खुद को करने वाला मानने लगता है, तो इसे अहंकार कहा जाता है। और यह सारी विविधता और भेद मन खुद ही बनाता है।

4.10.49

देहवासनया चेतस्त्वन्यानि स्वानि चेच्छया । पार्थिवानि शरीराणि ह्यसन्ति परिपश्यति ॥ ४९ ॥

dehavāsanayā cetastvanyāni svāni ceccayā | pārthivāni śarīrāṇi hyasantiparipaśyati || 49 ||

Because of its habit of clinging to a body, and out of its own wish, the mind keeps seeing earthly bodies, both its own and others, as real, even though they do not truly exist.

शरीर से जुड़े रहने की आदत के कारण, और अपनी ही इच्छा से, मन धरती के शरीरों को, चाहे अपने हों या दूसरों के, सच मानकर देखता रहता है, जबकि वे असल में हैं ही नहीं।

4.10.50

आलोकयति चेत्सत्यं तदा सत्यमयीं मनः । शरीरभावनां त्यक्त्वा परामायाति निर्वृतिम् ॥ ५० ॥

ālokayati cet satyaṃ tadā satyamayīṃ manaḥ | śarīrabhāvanāṃ tyaktvā parāmāyāti nirvṛtim || 50 ||

If the mind sees what is true, then, filled with that truth, it gives up the feeling of being a body and reaches the highest peace.

अगर मन सच को देख ले, तो वह सच से भर जाता है और शरीर होने का भाव छोड़कर परम शांति पा लेता है।

4.10.51

तन्मनस्तव पुत्रस्य समाधौ त्वयि संस्थिते । स्वमनोरथमार्गेण दूराद्दूरतरं गतम् ॥ ५१ ॥

tanmanastava putrasya samādhau tvayi saṃsthite | svamanorathamārgeṇa dūrāddūrataraṃ gatam || 51 ||

While you sat deep in meditation, your son's mind went, following its own wandering wishes, farther and farther away.

जब तुम गहरी समाधि में बैठे थे, तब तुम्हारे बेटे का मन अपनी ही कल्पनाओं के पीछे भटकते हुए दूर से दूर चला गया।

4.10.52

इममौशनसं त्यक्त्वा देहं मन्दरकन्दरे । प्रयातो वैबुधं सद्म नीडोड्डीनः खगो यथा ॥ ५२ ॥

imamauśanasam tyaktvā deham mandarakandare | prayāto vaibudham sadma nīḍoḍḍīnaḥ khago yathā || 52 ||

Leaving behind this body of Aushanasa in a cave of Mount Mandara, he went to the world of the gods, like a bird that has flown from its nest.

मंदराचल की एक गुफा में औशनस नाम के इस शरीर को छोड़कर, वह देवताओं की दुनिया में चला गया, जैसे घोंसले से उड़ा हुआ कोई पक्षी।

4.10.53

तत्र मन्दरगुञ्जेषु पारिजाततलेषु च । नन्दनोद्यानखण्डेषु लोकपालपुरेषु च ॥ ५३ ॥

tatra mandaraguñjeṣu pārijātatalēṣu ca | nandanodyānakhaṇḍeṣu lokapālapureṣu ca || 53 ||

There, in the humming groves of Mount Mandara, at the foot of the Parijata trees, in parts of the Nandana garden, and in the cities of the guardians of the directions.

वहाँ, मंदराचल के गूँजते उपवनों में, पारिजात वृक्षों के नीचे, नंदन वन के हिस्सों में, और दिशाओं के रखवालों के नगरों में।

4.10.54

मुने चतुर्युगान्यष्टौ विश्वाचीं देवसुन्दरीम् । असेवत महातेजाः षट्पदः पद्मिनीमिव ॥ ५४ ॥

munē caturyugānyaṣṭau viśvācīṃ dēvasundarīm | asēvata mahātējāḥ ṣaṭpadaḥ padminīmiva || 54 ||

O sage, for eight cycles of the four ages, that greatly radiant being enjoyed Vishvachi, the beautiful woman of the gods, the way a bee enjoys a lotus.

हे मुनि, आठ चतुर्युगों तक उस तेजस्वी पुरुष ने देवताओं की सुंदरी विश्वाची को उसी तरह भोगा जैसे भौंरा कमल को भोगता है।

4.10.55

तीव्रसंवेगसंपन्नस्वसंकल्पोपकल्पिते । अथ पुण्यक्षये जाते नीहार इव शार्वरे ॥ ५५ ॥

tīvrasaṃvegasampannasvasaṃkalpopakalpite | atha puṇyakṣaye jāte nīhāra iva śārvare || 55 ||

That world had been shaped only by his own intense and eager imagination. Then his merit ran out, as quickly as mist fades in the night.

वह दुनिया केवल उसकी अपनी उतावली और गहरी कल्पना से बनी थी। फिर उसका पुण्य वैसे ही चुक गया जैसे रात का कोहरा जल्दी छँट जाता है।

4.10.56

प्रम्लानकुसुमोत्तंसः खिन्नाङ्गावयवोल्लसः । स पपात तया सार्धं कालपक्वं फलं यथा ॥ ५६ ॥

pramllānakusumottaṁsaḥ khinnāṅgāvayavollasaḥ | sa papāta tayā sārdhaṃ kālapakvaṃ phalaṃ yathā || 56 ||

With his flower garland withered and the glow of his tired limbs faded, he fell, together with her, the way a ripe fruit falls.

उसकी फूलों की माला मुरझा चुकी थी और थके हुए अंगों की चमक फीकी पड़ गई थी, वह उसके साथ वैसे ही गिर पड़ा जैसे पका हुआ फल गिर जाता है।

4.10.57

वैबुधं तत्परित्यज्य नभस्येव शरीरकम् । भूताकाशमथासाद्य वसुधायां व्यजायत ॥ ५७ ॥

vaibudhaṃ tatparityajya nabhasyeva śarīrakam | bhūtākāśamathāsādya vasudhāyāṃ vyajāyata || 57 ||

He gave up that divine body into the sky, as if into empty space, then reached the region of elemental ether and was born on the earth.

उसने उस देव-शरीर को आकाश में यूँ छोड़ दिया मानो खाली जगह में, फिर तत्वों वाले आकाश में पहुँचकर पृथ्वी पर जन्म ले लिया।

4.10.58

आसीद्विप्रो दशार्णेषु कोसलेषु महीपतिः । धीवरोऽथ महाटव्यां हंसस्त्रिपथगातटे ॥ ५८ ॥

āsīdvipro daśārṇeṣu kosaleṣu mahīpatiḥ | dhīvaro'tha mahāṭavyāṃ haṃsastripathagātaṭe || 58 ||

He was a Brahmin in Dasharna, a king in Kosala, then a fisherman in a great forest, and a swan on the bank of the Ganges, the river of three paths.

वह दशार्ण देश में एक ब्राह्मण था, कोसल में एक राजा, फिर एक बड़े जंगल में मछुआरा, और त्रिपथगा यानी गंगा नदी के किनारे एक हंस।

4.10.59

सूर्यवंशे नृपः पौण्ड्रः सौरशाल्वेषु देशिकः । कल्पं विद्याधरः श्रीमान्धीमानथ मुनेः सुतः ॥ ५९ ॥

sūryavaṃśe nṛpaḥ pauṇḍraḥ sauraśālveṣu deśikaḥ | kalpaṃ vidyādharaḥ śrīmāndhīmānatha muneḥ sutaḥ || 59 ||

He was a Paundra king in the solar dynasty, a teacher among the Saurashalvas, for a whole world age a glorious Vidyadhara, and then a wise sage's son.

वह सूर्यवंश में पौण्ड्र राजा था, सौरशाल्वों में एक गुरु, फिर एक पूरे कल्प तक एक तेजस्वी विद्याधर, और फिर एक बुद्धिमान मुनि का पुत्र।

4.10.60

मद्रेष्वथ महीपालस्ततस्तापसबालकः । वासुदेव इति ख्यातः समङ्गायास्टटे स्थितः ॥ ६० ॥

madreṣvatha mahīpālastatastāpasabālakaḥ | vāsudeva iti khyātaḥ samamgāyāstataṭe sthitaḥ || 60 ||

Then a king in Madra, then a young ascetic known by the name Vasudeva, living on the bank of the river Samanga.

फिर मद्र देश में राजा, फिर एक तपस्वी बालक, जिसे वासुदेव नाम से जाना गया, समंगा नदी के किनारे रहने वाला।

4.10.61

अन्यास्वपि विचित्रासु वासनावशतः स्वयम् । विषमास्वेव पुत्रस्ते चचारान्तरयोनिषु ॥ ६१ ॥

anyāsvapi vicitrāsu vāsanāvaśataḥ svayam | viṣamāsveva putraste cacārāntarayoniṣu || 61 ||

By the pull of his own inner impressions, your son also wandered, on his own, through other strange and difficult births in between.

अपनी ही वासनाओं के खिंचाव में, तुम्हारा बेटा और भी अजीब और कठिन योनियों में, बीच-बीच में, अपने आप भटकता रहा।

4.10.62

अभूद्विन्ध्यनगे भूयः किरातः कैकटेषु च । सौवीरेष्वथ सामन्तस्त्रिगर्तेषु च गर्दभः ॥ ६२ ॥

abhūdviṃdhyanage bhūyaḥ kirātaḥ kaikaṭeṣu ca | sauvīreṣvatha sāmantastrigarteṣu ca gardabhaḥ || 62 ||

He became again a hill hunter, on the Vindhya mountain and among the Kaikatas, then a vassal chief among the Sauviras, and a donkey among the Trigartas.

वह फिर से एक जंगली शिकारी बना, विंध्य पर्वत पर भी और कैकटों में भी, फिर सौवीरों में एक छोटा राजा, और त्रिगर्तों में एक गधा।

4.10.63

वंशगुल्मः किरातेषु हरिणश्चीनजङ्गले । सरीसृपस्तालवृक्षे तमाले वनकुक्कुटः ॥ ६३ ॥

vaṃśagulmaḥ kirāteṣu hariṇaścīnajaṅgale | sarīsṛpastālavṛkṣe tamāle vanakukkuṭaḥ || 63 ||

A clump of bamboo among the Kiratas, a deer in the forest of China, a creeping creature on a palm tree, a wild jungle fowl in a Tamala tree.

किरातों के बीच बाँस की एक झाड़ी, चीन के जंगल में एक हिरन, ताड़ के पेड़ पर एक रेंगने वाला जीव, और तमाल के पेड़ पर एक जंगली मुर्गा।

4.10.64

अयं स पुत्रो भवतो भूत्वा मन्त्रविदां वरः । प्रजजाप पुरा विद्यां विद्याधरपुरप्रदाम् ॥ ६४ ॥

ayaṃ sa putro bhavato bhūtvā mantravidāṃ varaḥ | prajajāpa purā vidyāṃ vidyādharapurapradām || 64 ||

This same son of yours, having become the foremost knower of mantras, once recited a spell that opens the way to the city of the Vidyadharas.

तुम्हारा यही बेटा, मंत्र जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ बनकर, एक बार वह विद्या जपता रहा जो विद्याधरों के नगर तक पहुँचा देती है।

4.10.65

तेनासावभवद्ब्रह्मन्व्योम्नि विद्याधरो महान् । हारकुण्डलकेयूरलीलानिचयलालकः ॥ ६५ ॥

tenāsāvabhavadbrahmanvyomni vidyādharo mahān | hārakuṇḍalakeyūralīlānicayalālakaḥ || 65 ||

By that, O Brahmin, he became a great Vidyadhara in the sky, delighting in a rich array of necklaces, earrings, and armlets.

इससे, हे ब्राह्मण, वह आकाश में एक महान विद्याधर बन गया, जो हार, कुंडल और बाजूबंदों के ठाट-बाट में मगन रहता था।

4.10.66

नायिकानलिनीभानुः पुष्पचाप इवापरः । विद्याधरीणां दयितो गन्धर्वपुरभूषणः ॥ ६६ ॥

nāyikānalinībhānuḥ puṣpacāpa ivāparaḥ | vidyādharīṇāṃ dayito gandharvapurabhūṣaṇaḥ || 66 ||

To those women he was like the sun that opens the lotus, another god of love with his flower bow, beloved of the Vidyadhara women, an ornament of the Gandharva city.

उन स्त्रियों के लिए वह सूरज जैसा था जो कमल खिलाता है, मानो फूलों के धनुष वाला दूसरा कामदेव, विद्याधरियों का प्रिय, और गंधर्वों के नगर की शोभा।

4.10.67

स कल्पावधिमासाद्य द्वादशादित्यधामनि । जगाम भस्मशेषत्वं शलभः पावके यथा ॥ ६७ ॥

sa kalpāvadhimāsādya dvādaśādityadhāmani | jagāma bhasmaśeṣatvaṃ śalabhaḥ pāvake yathā || 67 ||

Having reached the end of that world age, in the blaze of the twelve suns, he was reduced to ashes, like a moth in a flame.

उस कल्प का अंत आने पर, बारह सूर्यों की आग में, वह वैसे ही राख होकर रह गया जैसे पतंगा आग में जलकर।

4.10.68

जगन्निर्माणरहिते स्फारे नभसि सा ततः । वासना तस्य बभ्राम निर्नीडा विहगी यथा ॥ ६८ ॥

jagannirmāṇarahite sphāre nabhasi sā tataḥ | vāsanā tasya babhrāma nirnīḍā vihagī yathā || 68 ||

Then, in the vast empty sky where no world had yet been formed, his impression wandered, like a bird without a nest.

फिर उस विशाल खाली आकाश में, जहाँ अभी तक कोई दुनिया नहीं बनी थी, उसकी वह वासना वैसे ही भटकती रही जैसे बिना घोंसले की कोई चिड़िया भटकती है।

4.10.69

अथ कालेन संजाते विचित्रारम्भकारिणि । संसाररचनारम्भे ब्राह्मे रात्रिविपर्यये ॥ ६९ ॥

atha kālena saṃjāte vicitrārambhakāriṇi | saṃsāraracanārambhe brāhme rātriviparyaye || 69 ||

Then, as time went on, a strange new beginning came, the start of the shaping of the world, when Brahma's night turned into day.

फिर समय बीतने के साथ एक अनोखी शुरुआत हुई, दुनिया की फिर से रचना का आरंभ, जब ब्रह्मा की रात पलटकर दिन में बदल गई।

4.10.70

सा मुने वासना तस्य वातव्याचलिता सती । कृते ब्राह्मणतामेत्य जातोऽद्य वसुधातले ॥ ७० ॥

sā mune vāsanā tasya vātavyācalitā satī | kṛte brāhmaṇatāmetya jāto'dya vasudhātale || 70 ||

Then that impression of his, O sage, stirred up by the wind, took on the state of a Brahmin in the Krita age, and today he is born on the face of the earth.

हे मुनि, तब हवा से हिली हुई उसकी वह वासना कृतयुग में ब्राह्मण रूप पाकर आज इस धरती पर जन्मी है।

4.10.71

वासुदेवाभिधानोऽसौ मुने विप्रकुमारकः । जातो मतिमतां मध्ये समधीताखिलश्रुतिः ॥ ७१ ॥

vāsudevābhidhāno'sau mune viprakumārakaḥ | jāto matimatāṃ madhye samadhītākhilaśrutiḥ || 71 ||

This one, O sage, named Vasudeva, is born as a Brahmin boy among wise men, having studied all the scriptures fully.

हे मुनि, यही वासुदेव नाम का ब्राह्मण बालक बुद्धिमान लोगों के बीच जन्मा है, जिसने सारे वेद-शास्त्रों का पूरी तरह अध्ययन कर लिया है।

4.10.72

कल्पं विद्याधरो भूत्वा नद्यास्त्वथ महामुने । तपश्चरति ते पुत्रः समङ्गायास्तटे स्थितः ॥ ७२ ॥

kalpaṃ vidyādharo bhūtvā nadyāstvatha mahāmune | tapaścarati te putraḥ samaṅgāyāstataḥ sthitaḥ || 72 ||

Having been a Vidyadhara for a whole world age, O great sage, your son now, by the river, practices penance, settled on the bank of the Samanga.

हे महामुनि, एक पूरे कल्प तक विद्याधर रहकर, तुम्हारा बेटा अब नदी के पास, समंगा नदी के किनारे बसकर तपस्या कर रहा है।

4.10.73

विविधविषयवासनानुवृत्त्या खदिरकरञ्जकरालकोटरासु । जगति जठरयोनिषु प्रयातो गहनतरासु च काननस्थलीषु ॥ ७३ ॥

vividhaviṣayavāsanānuvṛttyā khadirakarañjakarālakoṭarāsu | jagati jaṭharayoniṣu prayāto gahanatarāsu ca kānanasthalīṣu || 73 ||

Following his many desires for sense objects, he passed into womb births in this world, into the fearsome hollows of Khadira and Karanja trees, and into the deeper stretches of forest land.

तरह-तरह की विषय-वासनाओं का पीछा करते हुए, वह इस संसार में गर्भ-योनियों में जाता रहा, खदिर और करंज के पेड़ों की डरावनी खोखलों में, और घने जंगलों के इलाकों में।

Chapter 11

4.11.1

काल उवाच । अद्योद्दामतरङ्गौघभाङ्काररणितानिले । तीर एव तरङ्गिण्यास्तपस्तपति ते सुतः ॥ १ ॥

kāla uvāca | adyodāmataraṅgaughabhāṅkāraraṇitānile | tīra eva taraṅgiṇyāstapastapati te sutaḥ || 1 ||

Kala said, today your son is doing his penance right on the bank of the river, in air that roars with the crash of wild, surging waves.

काल ने कहा, आज तुम्हारा बेटा नदी के किनारे तपस्या कर रहा है, ऐसी हवा में जो बेकाबू लहरों की गरज से गूंज रही है।

4.11.2

जटावानक्षवलयी जितसर्वेन्द्रियभ्रमः । तत्र वर्षशतान्यष्टौ संस्थितस्तपसि स्थिरे ॥ २ ॥

jaṭāvānakṣavalayī jitasarvendriyabhramaḥ | tatra varṣaśatānyaṣṭau saṃsthitastapasi sthire || 2 ||

He wears matted hair and a string of prayer beads, and he has conquered all the confusion of his senses. There he has remained firm in unbroken penance for eight hundred years.

उसने जटाएं बांध रखी हैं और हाथ में माला है, और उसने अपनी सारी इंद्रियों के भटकाव पर काबू पा लिया है। वहां वह आठ सौ साल से बिना रुके तपस्या में डटा हुआ है।

4.11.3

यदीच्छसि मुने द्रष्टुं तं स्वप्नाभं मनोभ्रमम् । तत्समुन्मील्य विज्ञाननेत्रमाशु विलोकय ॥ ३ ॥

yadīcchasi mune draṣṭuṃ taṃ svapnābhaṃ manobhramam | tatsamunmīlya vijñānānetramāśu vilokaya || 3 ||

Sage, if you wish to see him, that son who is like a dream, a mere confusion of mind, then open your eye of wisdom and look at once.

हे मुनि, अगर तुम उसे देखना चाहते हो, अपने उस बेटे को जो सपने जैसा है, बस मन का एक भटकाव है, तो अपनी ज्ञान की आंख खोलो और तुरंत देख लो।

4.11.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्ते जगदीशेन कालेन समदृष्टिना । मुनिः संचिन्तयामास ज्ञानाक्ष्णा तनयेहितम् ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityukte jagadīśena kālena samadṛṣṭinā | muniḥ saṃcintayāmāsa jñānākṣṇā tanayehitam || 4 ||

Sri Vasishtha said, when Kala, the lord of the world who looks on everything equally, had said this, the sage looked with his eye of knowledge into what had happened to his son.

श्री वसिष्ठ ने कहा, जब जगत के स्वामी काल ने, जो सबको एक समान नज़र से देखते हैं, यह कहा, तो मुनि ने अपनी ज्ञान की आंख से देखा कि उनके बेटे के साथ क्या हुआ है।

4.11.5

ददर्श च मुहूर्तेन प्रतिभानवशादसौ । पुत्रोदन्तमशेषेण बुद्धिदर्पणबिम्बितम् ॥ ५ ॥

dadarśa ca muhūrtena pratibhānavśādasau | putrodatamamśeṣeṇa buddhidarpanaśabdimbibitam || 5 ||

And in a moment, through the power of his own insight, he saw his son's whole story completely, reflected as in a mirror in his intellect.

और एक ही पल में, अपनी सूझ की ताकत से, उसने अपने बेटे की पूरी कहानी पूरी तरह देख ली, जैसे वह उसकी बुद्धि रूपी आईने में झलक रही हो।

4.11.6

पुनर्मन्दरसानुस्थां स्वस्थां कालाग्रसंस्थितांसमङ्गायास्तटादेत्य विवेश स्वतनुं भृगुः ॥ ६ ॥

punarmandarasānusthāṃ svasthāṃ kālāgrasaṃsthitāmsamaṅgāyāstaṭādetya viveśa svatanuṃ bhṛguḥ || 6 ||

Bhrigu then came from the bank of the river Samanga and entered his own body again, the body that was resting at ease on the ridge of Mount Mandara, seated before Kala.

फिर भृगु समंगा नदी के किनारे से आए और अपने उसी शरीर में फिर से समा गए, जो मंदार पर्वत की चोटी पर आराम से बैठा हुआ था, काल के सामने।

4.11.7

विस्मयस्मेरया दृष्ट्या कालमालोक्य कान्तयावीतरागमुवाचेदं वीतरागो मुनिर्वचः ॥ ७ ॥

vismayasmerayā dṛṣṭyā kālamālokya kāntayāvītarāgamuvācedaṃ vītarāgo munirvacaḥ || 7 ||

Looking at Kala, who was free of craving, with a lovely gaze that smiled in wonder, the sage, himself free of craving, spoke these words.

काल की तरफ देखते हुए, जो किसी चाह से मुक्त थे, एक सुंदर नज़र से जिसमें अचरज की मुस्कान थी, मुनि ने, जो खुद भी हर चाह से मुक्त थे, यह शब्द कहे।

4.11.8

भगवन्भूतभव्येश बाला वयमनुज्ज्वलाःत्वादृशामेव धीर्देव त्रिकालामलदर्शिनी ॥ ८ ॥

bhagavanbhūtabhavyeśa bālā vayamanujjvalāḥtvādṛśāmeva dhīrdeva trikālāmaladarśinī || 8 ||

Lord, ruler of what has been and what is to come, we are like children, dim and unclear. Only a mind like yours, god, sees all three times, past, present and future, without any flaw.

हे भगवन, जो हो चुका और जो होने वाला है उसके स्वामी, हम तो बच्चों जैसे हैं, धुंधले और नासमझ। केवल आप जैसी बुद्धि ही, हे देव, तीनों समय यानी भूत, वर्तमान और भविष्य को बिना किसी दोष के देख पाती है।

4.11.9

नानाकारविकाराढ्या सत्येवासत्यरूपिणीविभ्रमं जनयत्येषा धीरस्यापि जगत्स्थितिः ॥ ९ ॥

nānākāravikārāḍhyā satyevāsatyarūpiṇīvibhramaṃ janayatyeṣā dhīrasyāpi jagatsthitiḥ || 9 ||

This state of the world is rich with many shapes and changes. It looks real, though its nature is unreal, and it creates confusion even in a steady, wise person.

यह संसार की स्थिति तरह तरह के रूपों और बदलावों से भरी है। यह सच जैसी दिखती है, हालांकि इसका असली रूप झूठा है, और यह एक स्थिर और समझदार इंसान को भी उलझन में डाल देती है।

4.11.10

त्वमेव देव जानासि त्वदभ्यन्तरवर्ति यत्रूपमस्या मनोवृत्तेरिन्द्रजालविधायकम् ॥ १० ॥

tvameva deva jānāsi tvadabhyantaravarti yatrūpamasyā manovṛtterindrajālavidhāyakam || 10 ||

You alone, god, know the true shape, hidden within you, of this working of the mind that conjures illusions like a magician.

केवल आप ही, हे देव, जानते हैं वह असली रूप, जो आपके भीतर छिपा है, इस मन की उस हरकत का जो जादूगर की तरह भ्रम रचती है।

4.11.11

मत्पुत्रस्यास्य भगवन्मृत्युः किल न विद्यतेतेनेमं मृतमालोक्य जातः संभ्रमवानहम् ॥ ११ ॥

matputrasyāsya bhagavanmṛtyuḥ kila na vidyatetenemaṃ mṛtamālokya jātaḥ saṃbhramavānaham || 11 ||

Lord, this son of mine truly has no death in him. That is why, when I saw him dead, I became confused and troubled.

हे भगवन, मेरे इस बेटे में सच में मौत नाम की कोई चीज़ है ही नहीं। इसीलिए, जब मैंने उसे मरा हुआ देखा, तो मैं घबरा गया और उलझन में पड़ गया।

4.11.12

अक्षीणाजीवितं पुत्रं कालो मे नीतवानितिनियतेर्वशतो देव तुच्छापीच्छा ममोदिता ॥ १२ ॥

akṣīṇājīvitaṃ putraṃ kālo me nītavānitiniyatervaśato deva tucchāpīcchā mamoditā || 12 ||

Thinking, Kala has taken away my son whose life was not yet finished, under the pull of fate, god, even this small, unworthy wish rose up in me.

यह सोचकर कि काल मेरे उस बेटे को ले गया जिसकी उम्र अभी बाकी थी, नियति के दबाव में, हे देव, मेरे मन में यह छोटी सी, बेकार इच्छा भी उठ आई।

4.11.13

ननु विज्ञातसंसारगतयो वयमापदांसंपदां चैव गच्छामो हर्षामर्षवशं विभो ॥ १३ ॥

nanu vijñātasaṃsāragatayo vayamāpadāmsaṃpadāṃ caiva gacchāmo harṣāmarṣavaśaṃ vibho || 13 ||

It is true, lord, that we understand how this world works, and yet, over its troubles and its gains, we still fall under the hold of joy and anger.

यह सच है, हे विभु, कि हम समझते हैं यह संसार कैसे चलता है, फिर भी, इसकी मुसीबतों और इसकी कमाई पर, हम फिर भी खुशी और गुस्से के वश में आ जाते हैं।

4.11.14

अयुक्तकारिणि क्रोधः प्रसादो युक्तकारिणिकर्तव्य इति रूढेयं संसारे भगवन् स्थितिः ॥ १४ ॥

ayuktakāriṇi krodhaḥ prasādo yuktakāriṇikartavya iti rūḍheyaṃ saṃsāre bhagavan sthitiḥ || 14 ||

Show anger to one who does wrong, and show favor to one who does right, this, lord, is the fixed rule that has taken hold in this world.

जो गलत करे उस पर गुस्सा करो, और जो सही करे उस पर मेहरबानी करो, यही, हे भगवन, इस संसार में जड़ जमाया हुआ पक्का नियम है।

4.11.15

इदं कार्यमिदं नेति यावत्कार्यं जगद्भ्रमःतस्यैतत्संपरित्यागो हेय एव जगद्गुरो ॥ १५ ॥

idaṃ kāryamidaṃ neti yāvatkāryaṃ jagadbhramaḥtasyaitatsaṃparityāgo heya eva jagadguro || 15 ||

The thought, this must be done, this must not, as long as it runs, is itself the world's delusion. Letting go of it completely is what must be done, teacher of the world.

यह ख्याल कि यह करना है, यह नहीं करना है, जब तक यह चलता रहता है, यही संसार का भ्रम है। इसे पूरी तरह छोड़ देना ही सही काम है, हे जगत के गुरु।

4.11.16

केवलं तावकीं चिन्तामनालोक्य यदा वयम्। भगवन्भवते क्रुद्धा याताः स्मस्तेन बाध्यताम्॥ १६॥

kevalaṃ tāvakīṃ cintāmanālokya yadā vayaṃ | bhagavanbhava te kruddhā yātāḥ smastena bādhyatām || 16 ||

The only thing is this, it was when we, without paying heed to your true intention, once grew angry at you, lord, that we became guilty of that wrong.

बस इतनी ही बात है, जब हमने आपकी असली मंशा को समझे बिना, एक बार आप पर गुस्सा किया था, हे भगवन, तभी हम उस गलती के दोषी बने।

4.11.17

त्वयेदानीमहं देव स्मारितस्तनयेहितम्। समङ्गायास्तटे तेन दृष्टोऽयं तनयो मया॥ १७॥

tvayedānīmahaṃ deva smāritastanayehitam | samaṅgāyāstata te na dṛṣṭo'yaṃ tanayo mayā || 17 ||

Just now, god, you reminded me of what had happened to my son. Because of that, I saw this son of mine on the bank of the river Samanga.

अभी, हे देव, आपने मुझे याद दिलाया कि मेरे बेटे के साथ क्या हुआ था। उसी वजह से, मैंने अपने इस बेटे को समंगा नदी के किनारे देखा।

4.11.18

मनो जगति भूतानां द्वे शरीरेऽत्र सर्वगम्। मन एव शरीरं हि येनेदं भाव्यते जगत्॥ १८॥

mano jagati bhūtānāṃ dve śarīre'tra sarvagam | mana eva śarīraṃ hi yenenedaṃ bhāvyate jagat || 18 ||

For every being in this world, there are two bodies, and of the two, the mind is the one that reaches everywhere. The mind alone is truly the body, it is what makes this world come into being.

इस दुनिया में हर जीव के दो शरीर होते हैं, और इन दोनों में से, मन ही वह है जो हर जगह पहुंचता है। असली शरीर तो मन ही है, यही इस दुनिया को अस्तित्व में लाता है।

4.11.19

काल उवाच। सम्यगुक्तं त्वया ब्रह्मन् शरीरं मन एव च। करोति देहं संकल्पात्कुम्भकारो घटं यथा॥ १९॥

kāla uvāca | samyaguktam tvayā brahman śarīraṃ mana eva ca | karoti dehaṃ saṅkalpātkumbhakāro ghaṭaṃ yathā || 19 ||

Kala said, you have spoken well, brahmin, the body is indeed the mind. It makes the body out of its own intention, the way a potter makes a pot.

काल ने कहा, तुमने अच्छा कहा है, हे ब्राह्मण, शरीर सच में मन ही है। यह अपनी सोच से शरीर बनाता है, जैसे कुम्हार घड़ा बनाता है।

4.11.20

करोत्यकृतमाकारं कृतं नाशयति क्षणात्। संकल्पेन मनोमोहाद्बालो वेतालकं यथा॥ २०॥

karotyakṛtamākāraṃ kṛtaṃ nāśayati kṣaṇāt | saṅkalpena manomohādbālo vetālakaṃ yathā || 20 ||

It makes a shape that never existed, and destroys what it has made in an instant, all through mere intention, out of the mind's own confusion, just as a child imagines a ghost and then makes it vanish.

यह ऐसा रूप बना देता है जो पहले था ही नहीं, और जो बना उसे एक पल में मिटा देता है, सिर्फ सोच से, मन के भ्रम से, जैसे कोई बच्चा एक भूत की कल्पना कर लेता है और फिर उसे मिटा देता है।

4.11.21

तथा च संभ्रमस्वप्नमिथ्याज्ञानादिभासुराः। गन्धर्वनगराकारा दृष्टा मनसि शक्तयः॥ २१॥

tathā ca saṃbhramasvapnamithyājñānādibhāsurāḥ| gandharvanagarākārā dṛṣṭā manasi śaktayaḥ|| 21 ||

In the same way, there are powers in the mind that show themselves in the shape of a city in the sky, shining out as confusion, as dreams, as false ideas, and the like.

उसी तरह, मन में ऐसी शक्तियां हैं जो आकाश में बसे एक शहर जैसा रूप ले लेती हैं, जो घबराहट, सपने, झूठे ज्ञान वगैरह के रूप में चमक उठती हैं।

4.11.22

स्थूलदृष्टिदशां त्वेतामवलम्ब्य महामुने। पुंसो मनः शरीरं च कायौ द्वाविति कथ्यते॥ २२॥

sthūladṛṣṭidaśāṃ tvetāmavalambya mahāmune| puṃso manaḥ śarīraṃ ca kāyau dvāviti kathyate|| 22 ||

But, great sage, if we go by this level of coarse, ordinary seeing, it is said that a person has two bodies, the mind and the body.

पर, हे महामुनि, अगर हम इस मोटी, आम नज़र के हिसाब से देखें, तो कहा जाता है कि इंसान के दो शरीर होते हैं, मन और शरीर।

4.11.23

मनो मननिर्माणमात्रमेतज्जगत्त्रयम्। न सन्नासदिव स्फारमुदितं नेतरन्मुने॥ २३॥

mano mananirmāṇamātrametajjagattriyam| na sannāsadiva sphāramuditaṃ netaranmune|| 23 ||

Sage, this whole world of the three realms is nothing but something built by the mind's own thinking. It is not real, and not unreal either, it has simply appeared, vast as it looks, and it is nothing more than that.

हे मुनि, यह तीनों लोकों वाली पूरी दुनिया मन की सोच से बनी एक रचना मात्र है। यह न सच है, न झूठ, बस यह उठ खड़ी हुई है, दिखने में बहुत बड़ी, और इससे ज़्यादा कुछ नहीं है।

4.11.24

चित्तदेहाङ्गलतया भेदवासनयेद्धया। द्विचन्द्रत्वमिवाज्ञानान्नानातेयं समुत्थिता॥ २४॥

cittadehāṅgalatayā bhedavāsanayeddhayā| dvicandratvamivājñānānnānāteyaṃ samutthitā|| 24 ||

Because the mind clings to the body like a vine to a branch, and because the deep-seated habit of seeing things as separate keeps feeding it, this sense of many-ness has risen up, just as, out of a defect, a person sees two moons instead of one.

क्योंकि मन शरीर से यूं चिपका रहता है जैसे कोई बेल किसी डाल से, और क्योंकि चीज़ों को अलग अलग देखने की गहरी आदत इसे हवा देती रहती है, इसी वजह से यह अनेकता का एहसास पैदा हुआ है, ठीक वैसे ही जैसे किसी नुक्स की वजह से इंसान को एक की जगह दो चांद दिखने लगते हैं।

4.11.25

भेदवासनया पश्यत्पदार्थनिचयं मनः। भिन्नं पश्यति सर्वत्र घटावटपटादिकम्॥ २५॥

bhedavāsanayā paśyatpadārthanicayaṃ manaḥ| bhinnaṃ paśyati sarvatra ghaṭāvaṭapaṭādikam|| 25 ||

Because of this habit of seeing things as separate, the mind looks at the whole heap of objects and sees them everywhere as different things, a pot, a well, a cloth, and so on.

इसी अलग अलग देखने की आदत के चलते, मन चीज़ों के पूरे ढेर को देखता है और हर जगह उन्हें अलग अलग चीज़ों जैसा देखता है, जैसे घड़ा, कुआं, कपड़ा वगैरह।

4.11.26

कृशोऽतिदुःखी मूढोऽहमेताश्चान्याश्च भावनाः । भावयत्स्वविकल्पोत्थां याति संसारितां मनः ॥ २६ ॥

kṛśo'taduḥkhī mūḍho'hametāścānyāśca bhāvanāḥ | bhāvayatsvavikalpotthāṃ yāti saṃsāritāṃ manaḥ || 26 ||

The mind thinks, "I am weak, I am in great pain, I am foolish," and other such thoughts, and so it falls into the wandering state of birth and death, a state born from its own imagination.

मन सोचता है, "मैं कमज़ोर हूँ, मैं बहुत दुखी हूँ, मैं मूर्ख हूँ," और ऐसे ही और खयाल सोचता है, और इस तरह वह जन्म-मरण की भटकती हुई स्थिति में जा गिरता है, एक ऐसी स्थिति जो उसकी अपनी ही कल्पना से पैदा हुई है।

4.11.27

मननं कृत्रिमं रूपं ममैतन्न यतोऽस्म्यहम् । इति तत्त्यागतः शान्तं चेतो ब्रह्म सनातनम् ॥ २७ ॥

mananaṃ kṛtrimam rūpaṃ mamaitanna yato'smyaham | iti tattyāgataḥ śāntaṃ ceto brahma sanātanam || 27 ||

Thinking is a made-up, artificial thing. It is not mine, because I am not that thinking. Understanding this and giving it up, the mind becomes quiet, and that quiet mind is the eternal Brahman.

सोचना एक बनावटी चीज़ है। यह मेरा नहीं है, क्योंकि मैं वह सोच नहीं हूँ। यह समझकर उसे छोड़ देने से मन शांत हो जाता है, और वह शांत मन ही सनातन ब्रह्म है।

4.11.28

यथा प्रविततास्भोधौ द्रुतां नैकतरङ्गिणि । शाम्यत्स्पन्दतयानेककल्लोलावलिशालिनि ॥ २८ ॥

yathā pravitatāmbhodhau drutāṃ naikataraṅgiṇi | śāmyatsapandatayānekakallolāvaliśālini || 28 ||

Think of a vast ocean, flowing on and on, full of countless waves, its motion settling down, rich with row upon row of billows.

एक विशाल समुद्र की कल्पना करो, जो लगातार बहता है, जिसमें अनगिनत लहरें हैं, जिसकी हलचल धीरे-धीरे शांत होती जाती है, और जिसमें लहरों की कई पंक्तियाँ उठती हैं।

4.11.29

वार्यात्मनि समे स्वच्छे शुद्धे स्वादुनि शीतले । अविनाशिनि विस्तीर्णे महामहिमनि स्फुटे ॥ २९ ॥

vāryātmani same svacche śuddhe svāduni śītale | avināśini vistīrṇe mahāmahimani sphuṭe || 29 ||

That ocean is made only of water, level, clear, pure, sweet, and cool. It cannot be destroyed, it stretches out wide, and its greatness stands plain to see.

वह समुद्र सिर्फ पानी से बना है, समतल, साफ़, शुद्ध, मीठा और ठंडा। वह कभी नष्ट नहीं होता, बहुत फैला हुआ है, और उसकी महानता साफ़ दिखती है।

4.11.30

ह्रस्वस्तरङ्गः स्वं रूपं भावयन्त्यस्वभावतः । ह्रस्वोऽस्मीति विकल्पेन करोति स्वेन भावनाम् ॥ ३० ॥

hrasvastaraṅgaḥ svaṃ rūpaṃ bhāvayantyasvabhāvataḥ | hrasvo'smīti vikalpena karoti svena bhāvanām || 30 ||

In that ocean, a short wave pictures its own shape wrongly, against its true nature, and through the thought "I am short," builds a fancy about itself.

उसी समुद्र में एक छोटी लहर अपने असली रूप के बारे में गलत सोचती है, और "मैं छोटी हूँ" ऐसा खयाल करके अपने बारे में एक कल्पना बना लेती है।

4.11.31

दीर्घस्तरङ्गः स्वं रूपं भावयन्त्यस्वभावतः । दीर्घोऽस्मीति विकल्पेन करोति स्वेन भावनाम् ॥ ३१ ॥

dīrghastaraṅgaḥ svaṃ rūpaṃ bhāvayantyasvabhāvataḥ | dīrgho'smīti vikalpena karoti svena bhāvanām || 31 ||

A long wave likewise pictures its own shape wrongly, against its true nature, and through the thought "I am long," builds a fancy about itself.

वैसे ही एक लंबी लहर भी अपने असली रूप के बारे में गलत सोचती है, और "मैं लंबी हूँ" ऐसा खयाल करके अपने बारे में एक कल्पना बना लेती है।

4.11.32

ह्रस्वश्चैव परिभ्रष्टरूपोऽस्मीति तलातलम् । भावयन्भूतलं याति तादृग्भावनया स्वया ॥ ३२ ॥

hrasvaścaiva paribhraṣṭarūpo'smīti talātalam | bhāvayanbhūtalaṃ yāti tādṛgbhāvanayā svayā || 32 ||

And that short wave thinks, "I have lost my shape, I am falling down to the depths below," and through this fancy of its own, it simply sinks down to the level ground.

और वह छोटी लहर सोचती है, "मेरा आकार बिगड़ गया है, मैं नीचे गहराई में डूब रही हूँ," और अपनी इसी कल्पना के चलते वह बस नीचे ज़मीन के बराबर बैठ जाती है।

4.11.33

उत्पन्नश्च पलादूर्ध्वमुत्थितोऽस्मीति भावितः । सरश्मिरत्नजालस्तु शोभते दीप्तया श्रिया ॥ ३३ ॥

utpannaśca palādūrdhvamutthito'smīti bhāvitaḥ | sarasmi-ratnajālas tu śobhate dīptayā śriyā || 33 ||

Another wave, once risen up out of it, thinks, "I have shot upward," and, covered with a net of rays and jewels, shines with a blazing glory.

एक और लहर, ऊपर उठकर सोचती है, "मैं ऊपर उछल गई," और किरणों तथा रत्नों के जाल से ढकी हुई वह तेज चमक से चमकती है।

4.11.34

तुषारकरबिम्बस्थः शीतलोऽस्मीति बिम्बति । सतटाचलदावाग्निप्रतिबिम्बो ज्वलद्वपुः ॥ ३४ ॥

tuṣārakarabimbasthaḥ śītalo'smīti bimbitaḥ | satatācaladāvāgni-pratibimbo jvaladvapuḥ || 34 ||

One wave, sitting in the reflection of the cool moon's circle, thinks "I am cool" as the moon shows in it. Another, showing the forest fire on the mountain slope, has a burning body.

एक लहर ठंडे चाँद की गोलाई का प्रतिबिंब पाकर सोचती है, "मैं ठंडी हूँ," क्योंकि उसमें चाँद दिखता है; एक और लहर, जिसमें पहाड़ की ढलान पर लगी जंगल की आग दिखती है, उसका शरीर जलता हुआ महसूस होता है।

4.11.35

बिभेति बत दग्धोऽस्मीत्यात्तमौनश्च कम्पते । प्रतिबिम्बितवेलाद्रितटपक्षवनद्रुमः ॥ ३५ ॥

bibheti bata dagdho'smītyāttamauṇaśca kampate | pratibimbitalādrītaṭapakṣavanadrumaḥ || 35 ||

That wave, showing the reflection of the trees on the slope of the shore mountain, is afraid. It thinks, "I am burnt!", falls silent, and shakes.

वह लहर, जिसमें किनारे के पहाड़ की ढलान पर खड़े जंगल के पेड़ों का प्रतिबिंब दिखता है, डर जाती है; वह सोचती है, "मैं जल गई!", चुप हो जाती है, और काँपने लगती है।

4.11.36

महदारम्भसंरम्भसंयुक्तोऽस्मीति राजते । विशल्लोलानिलात्यन्तध्वस्तलोलशरीरकः ॥ ३६ ॥

mahadārambhasaṃrambhasaṃyukto'smīti rājate | viśallolānilātyantadhvastalolaśarīrakaḥ || 36 ||

Another wave shines proudly, thinking "I am caught up in some great, forceful undertaking," even while the restless wind rushing into it utterly batters its unsteady little body.

एक और लहर गर्व से चमकती है और सोचती है, "मैं किसी बड़े और ज़ोरदार काम में लगी हूँ," जबकि अंदर घुसती बेचैन हवा उसके डगमगाते नन्हे शरीर को पूरी तरह तहस-नहस कर देती है।

4.11.37

खण्डशः परियातोऽस्मीत्यात्तक्रन्द इवारवी । न चोर्मयस्ते जलधेर्व्यतिरिक्ताः पयोधरात् ॥ ३७ ॥

khaṇḍaśaḥ pariyāto'smītyāttakranda ivāravī | na cormayaste jaladhervyatiriktāḥ payodharāt || 37 ||

Yet another cries out as if wailing, thinking "I have broken into pieces." But these waves are not really separate from the sea, the great store of water.

एक और लहर मानो रोते हुए चिल्लाती है और सोचती है, "मैं टुकड़ों में टूट गई।" पर असल में ये लहरें उस समुद्र से, पानी के उस बड़े भंडार से, अलग नहीं हैं।

4.11.38

नचैकं रूपमेतेषां किंचित्सन्नाप्यसन्मयम् । नचैते ह्रस्वदैर्घ्याद्या गुणास्तेषु न तेषु ते ॥ ३८ ॥

nacaikaṃ rūpameteṣāṃ kiṃcitsannāpyasanmayam | nacaite hrasvadairghyādyā guṇāsteṣu na teṣu te || 38 ||

None of these waves truly has even one form of its own, whether we call it real or unreal. Qualities like "short" and "long" do not really belong to the waves, and the waves do not really belong to those qualities.

इन लहरों में से किसी का भी अपना कोई असली रूप नहीं है, चाहे उसे सच कहो या झूठ। "छोटा" और "लंबा" जैसे गुण असल में लहरों के नहीं हैं, और लहरें भी असल में उन गुणों की नहीं हैं।

4.11.39

नोर्मयः संस्थिता ह्यब्धौ न तत्तत्र न संस्थिताः । केवलं स्वस्वभावस्थसंकल्पविकलीकृताः ॥ ३९ ॥

normayaḥ saṃsthitā hyabdhau na tattatra na saṃsthitāḥ | kevalaṃ svasvabhāvasthasaṃkalpavikalīkṛtāḥ || 39 ||

The waves do not really stand in the ocean as separate things, and yet it is not that they do not stand there at all. They are simply cut into separate pieces by a thought that rests on their own nature.

लहरें समुद्र में अलग चीज़ों की तरह असल में नहीं खड़ी हैं, फिर भी ऐसा भी नहीं कि वे वहाँ बिलकुल नहीं हैं। वे तो बस एक ऐसे खयाल से अलग-अलग टुकड़ों में बाँट दी गई हैं, जो उन्हीं के अपने स्वभाव पर टिका है।

4.11.40

नष्टानष्टाः पुनर्जाता जाताजाताः पुनः पुनः । परस्परपरामर्शान्नान्यतामुपयान्त्यलम् ॥ ४० ॥

naṣṭānaṣṭāḥ punarjātā jātājātāḥ punaḥ punaḥ | parasparaparāmarśānnānyatāmupayāntyalam || 40 ||

They are destroyed, yet not destroyed. They are born again and again, yet also unborn. By looking at one another, they never truly become different from each other.

वे मिट जाती हैं, फिर भी नहीं मिटतीं। बार-बार जन्म लेती हैं, फिर भी अजन्मी रहती हैं। एक-दूसरे को देखकर भी वे असल में एक-दूसरे से अलग नहीं बन पातीं।

4.11.41

एकरूपाम्बुसामान्यमया एव निरामयाः । तथैवास्मिन्प्रविततेसिते शुद्धे निरामये ॥ ४१ ॥

ekarūpāmbusāmānyamayā eva nirāmayāḥ | tathaivāsminpravitate site śuddhe nirāmaye || 41 ||

They are made only of one and the same water, and so they have no flaw. In just this way, in this vast, bright, pure, and flawless one,

वे सब सिर्फ एक ही पानी से बनी हैं, इसलिए उनमें कोई खोट नहीं है। ठीक इसी तरह, इस विशाल, उजले, शुद्ध और निर्दोष तत्व में,

4.11.42

ब्रह्ममात्रैकवपुषि ब्रह्मणि स्फाररूपिणि । सर्वशक्तावनाद्यन्ते पृथग्वदपृथक्कृताः ॥ ४२ ॥

brahmamātraikavapuṣi brahmaṇi sphārarūpiṇi | sarvaśaktāvanādyante pṛthagvadapṛthakkṛtāḥ || 42 ||

in Brahman, whose one and only body is Brahman itself, whose form is boundless, who holds all power, who has no beginning and no end, things are made to look separate, though they are not separate at all.

उस ब्रह्म में, जिसका एक-मात्र शरीर स्वयं ब्रह्म ही है, जिसका रूप असीम है, जिसमें सारी शक्ति है, जिसका न कोई आदि है न अंत, चीज़ें अलग-अलग दिखाई तो देती हैं, पर असल में अलग नहीं हैं।

4.11.43

संस्थिताः शक्तयश्चित्रा विचित्राचारचञ्चलाः । नानाशक्तिर्हि नानात्वमेति स्वे वपुषि स्थितिम् ॥ ४३ ॥

saṃsthitāḥ śaktayaścitrā vicitrācāracañcalāḥ | nānāśaktirhi nānātvameti sve vapuṣi sthitim || 43 ||

Many wondrous powers stand there, restless with all kinds of curious behavior. This manifold power indeed takes on manifold forms, while still standing within its own single body.

उसमें कई अद्भुत शक्तियाँ मौजूद हैं, जो तरह-तरह के अनोखे बर्तावों में बेचैन रहती हैं। यह अनेक-रूपी शक्ति सच में कई रूप ले लेती है, फिर भी अपने एक ही शरीर के भीतर टिकी रहती है।

4.11.44

बृंहितं ब्रह्मणि ब्रह्म पयसीवोर्मिमण्डलम् । स्त्रीपुमान्व्यङ्गरूपेण ब्रह्मैव परिवर्तते ॥ ४४ ॥

bṛṃhitaṃ brahmaṇi brahma payasīvormimaṇḍalam | strīpumānvyaṅgarūpeṇa brahmeva parivartate || 44 ||

Brahman swells up within Brahman, the way a ring of waves swells up within water. Taking on the shape marked out as woman and man, it still only turns as Brahman.

ब्रह्म ब्रह्म के भीतर ही उठता-फैलता है, जैसे पानी के भीतर लहरों का घेरा उठता है। स्त्री और पुरुष के रूप में दिखते हुए भी वह असल में ब्रह्म बनकर ही घूमता रहता है।

4.11.45

कल्पनान्या जगन्नाम्नी नासीदस्ति भविष्यति । ब्रह्मणो जगतो भेदो मनागपि न विद्यते ॥ ४५ ॥

kalpanānyā jagannāmnī nāsīdasti bhaviṣyati | brahmaṇo jagato bhedo manāgapi na vidyate || 45 ||

There is no other thing called "the world." It never existed, does not exist now, and will never exist. Between Brahman and the world there is not even the slightest difference.

"दुनिया" नाम की कोई अलग चीज़ है ही नहीं, वह पहले भी नहीं थी, अभी भी नहीं है, और आगे भी नहीं होगी। ब्रह्म और दुनिया में ज़रा भी फ़र्क नहीं है।

4.11.46

संपूर्णं खल्विदं ब्रह्म जगद्ब्रह्मैव केवलमिति भावय यत्नेन ह्यन्यत्सर्वं परित्यज ॥ ४६ ॥

saṃpūrṇaṃ khalvidaṃ brahma jagadbrahmaiva kevalamiti bhāvaya yatnena hyanyatsarvaṃ parityaja || 46 ||

This is completely and entirely Brahman. The world is nothing but Brahman. Meditate on this with real effort, and give up everything else.

यह सब पूरी तरह ब्रह्म ही है। दुनिया ब्रह्म के सिवा कुछ भी नहीं है। इसी बात पर पूरी मेहनत से मनन करो, और बाकी सब कुछ छोड़ दो।

4.11.47

नानारूपिण्येकरूपा वैरूप्यशतकारिणीनियतिर्नियताकारा पदार्थमधितिष्ठति ॥ ४७ ॥

nānārūpiṇyekarūpā vairūpyaśatakāriṇīniyatirniyatākārā padārthamadhitiṣṭhati || 47 ||

Niyati, the fixed law that runs all things, has many forms yet is only one. It creates a hundred different kinds of change in shape, but its own form stays fixed, and it governs over every single thing.

नियति, यानी हर चीज़ को चलाने वाला तय नियम, के कई रूप हैं, फिर भी वह एक ही है। वह सैकड़ों तरह के रूप-बदलाव पैदा करती है, पर उसका अपना रूप हमेशा तय रहता है, और वह हर एक चीज़ पर हुकूमत करती है।

4.11.48

जडाजडमुपादत्ते चित्तमायाति चिन्मयेवासनारूपिणी शक्तिः स्वस्थरूपा स्थितात्मनः ॥ ४८ ॥

jaḍājaḍamupādatte cittamāyāti cinmayevāsanārūpiṇī śaktiḥ svastharūpā sthitātmanaḥ || 48 ||

This power, which belongs to the steady Self and whose own form always stays as it is, takes on both non-living and living things, turns into the mind, and although it appears made of habits and impressions, is in truth made only of pure awareness.

यह शक्ति, जो उस अटल आत्मा की है, और जिसका अपना रूप हमेशा वैसा ही बना रहता है, निर्जीव और सजीव, दोनों तरह की चीज़ों का रूप ले लेती है, मन बन जाती है, और आदतों-संस्कारों जैसी दिखने पर भी असल में शुद्ध चेतना से ही बनी है।

4.11.49

ब्रह्मैवानघ तेनेदं स्फाराकारं विजृम्भतेनानारूपैः प्रतिस्पन्दैः परिपूर्ण इवार्णवः ॥ ४९ ॥

brahmaivānagha tenedaṃ sphārākāraṃ vijṛmbhatenānārūpaiḥ pratispandaiḥ paripūrṇa ivārṇavaḥ || 49 ||

O sinless one, it is Brahman alone, and that is why all this spreads out into vast shapes, full of many forms and movements, like an ocean brimming full of waves.

हे निष्पाप, यह सब ब्रह्म ही है, और इसीलिए यह अनेक रूपों और हलचलों से भरकर विशाल आकारों में फैलता है, ठीक वैसे जैसे समुद्र लहरों से लबालब भरा होता है।

4.11.50

नानातां स्वयमादत्ते नानाकारविहारतःआत्मैवात्मन्यात्मनैव समुद्राम्भ इवाम्भसि ॥ ५० ॥

nānātāṃ svayamādatte nānākāravihārataḥātmaivātmanyātmanaiva samudrāmbha ivāmbhasi || 50 ||

It takes on manyness all by itself, through its own play of many shapes, the Self acting within the Self, by the Self alone, just as sea water moves within water.

वह खुद ही अनेक रूपों के इस खेल से अनेकता धारण कर लेता है, आत्मा आत्मा में, आत्मा के ज़रिए ही, ठीक वैसे जैसे समुद्र का पानी पानी में ही रहता है।

4.11.51

व्यतिरिक्ता न पयसो विचित्रा वीचयो यथा । व्यतिरिक्ता न विश्वेशात्समग्राः कल्पनास्तथा ॥ ५१ ॥

vyatiriktā na payaso vicitrā vīcayo yathā | vyatiriktā na viśveśāt samagrāḥ kalpanāstathā || 51 ||

Just as the many different waves are never separate from the water, so all these imagined things are never separate from the Lord of the universe.

जैसे तरह-तरह की अलग-अलग लहरें पानी से कभी अलग नहीं होतीं, वैसे ही ये सारी कल्पनाएँ भी विश्व के ईश्वर से कभी अलग नहीं हैं।

4.11.52

शाखापुष्पलतापत्रफलकोरकयुक्तयः । यथैकस्मिंस्तथा बीजे सर्वदा सर्वशक्तिता ॥ ५२ ॥

śākhāpuṣpalatāpatraphalakorakayuktayaḥ | yathaikasmiṃstathā bīje sarvadā sarvaśaktitā || 52 ||

Just as a single tree has branches, flowers, vines, leaves, fruit, and buds, in the same way the seed always holds within it the power for all of this.

जैसे एक ही पेड़ में डालियाँ, फूल, बेलें, पत्ते, फल और कलियाँ होती हैं, वैसे ही बीज में हमेशा इन सबकी शक्ति छिपी रहती है।

4.11.53

विचित्रवर्णता यद्वद्दृश्यते कठिनातपे । विचित्रशक्तिता तद्वद्देवेशे सदसन्मयी ॥ ५३ ॥

vicitravarṇatā yadvaddṛśyate kaṭhinātape | vicitraśaktitā tadvaddeveśe sadasanmayī || 53 ||

Just as many different colors are seen in strong sunlight, in the same way many different powers, made of both the real and the unreal, exist in the Lord of the gods.

जैसे तेज़ धूप में तरह-तरह के रंग दिखाई देते हैं, वैसे ही देवों के स्वामी में सत् और असत् से बनी अनेक तरह की शक्तियाँ हैं।

4.11.54

विचित्ररूपोदेतीयमविचित्रात्स्थितिः शिवात् । एकवर्णात्पयोवाहाच्छक्रचापलता यथा ॥ ५४ ॥

vicitrarūpodeītyamavicitrātsthitiḥ śivāt | ekavarṇātpayovāhācchakracāpalatā yathā || 54 ||

This world of many different forms rises from the one, unchanging Shiva, just as a rainbow with all its colors rises from a cloud that has only one color.

यह अनेक रूपों वाला संसार उस एक-से, बिना भेद वाले शिव से उठता है, जैसे एक ही रंग के बादल से इंद्रधनुष के अनेक रंग निकलते हैं।

4.11.55

अजडाज्जडतोदेति जाड्यभावनहेतुका । ऊर्णनाभाद्यथा तन्तुर्यथा पुंसः सुषुप्तता ॥ ५५ ॥

ajaḍājjḍatodeti jāḍyabhāvanahhetukā | ūrṇanābhādyathā tanturyathā puṃsaḥ suṣuptatā || 55 ||

From the conscious self, dullness arises, and it arises only because of the very thought of dullness, just as a thread comes out of a spider, and just as deep sleep arises from within a person.

चेतन आत्मा से जड़ता पैदा होती है, और यह सिर्फ़ जड़ता के विचार के कारण ही पैदा होती है, जैसे मकड़ी से धागा निकलता है, और जैसे व्यक्ति के भीतर से ही गहरी नींद पैदा होती है।

4.11.56

अचितश्चेतसः शक्तिं स्वबन्धायेच्छया शिवः । तनोति तान्तवं कोशं कोशकारकृमिर्यथा ॥ ५६ ॥

acitaścetasaḥ śaktiṃ svabandhāyecchayā śivaḥ | tanoti tāntavaṃ kośaṃ kośakārakṛmiryathā || 56 ||

Shiva, by his own wish, spins the power of the mind, which seems lifeless, into a cocoon of thread to bind himself, just as a silkworm spins its own cocoon.

शिव अपनी ही इच्छा से, ख़ुद को बाँधने के लिए, मन की उस शक्ति को, जो जड़ जैसी लगती है, धागे के कोए में बुन देते हैं, जैसे रेशम का कीड़ा अपना कोया ख़ुद बुनता है।

4.11.57

स्वेच्छयात्मात्मनो ब्रह्मन्भावयित्वैष विस्मृतिम् । करोति कठिनं बन्धं कोशकारकृमिर्यथा ॥ ५७ ॥

svecchayātmātmano brahmanbhāvayitvaiṣa vismṛtim | karoti kaṭhinaṃ bandhaṃ kośakārakṛmiryathā || 57 ||

O wise one, the self, by its own wish, brings about this forgetting of itself, and so makes a tight bondage for itself, just as a silkworm makes its own hard cocoon.

हे ज्ञानी, आत्मा अपनी ही इच्छा से अपने बारे में यह भूल पैदा करती है, और इस तरह अपने लिए एक कड़ा बंधन बना लेती है, जैसे रेशम का कीड़ा अपना सख़्त कोया ख़ुद बना लेता है।

4.11.58

स्वेच्छयात्मात्मनो ब्रह्मन्भावयित्वा स्वकं वपुः । संसारान्मोक्षमाप्नोति स्वालानादिव वारणः ॥ ५८ ॥

svecchayātmātmano brahmanbhāvayitvā svakaṃ vapuḥ | saṃsārānmokṣamāpnoti svālānādiva vāraṇaḥ || 58 ||

O wise one, the self, by its own wish, shapes its own body, and so wins freedom from this cycle of birth and death, just as an elephant breaks free from the very post it was tied to.

हे ज्ञानी, आत्मा अपनी ही इच्छा से अपना शरीर गढ़ती है, और इस तरह इस जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति पा लेती है, जैसे हाथी उसी खूँटे से आज़ाद हो जाता है जिससे वह बँधा था।

4.11.59

यथैव भावयत्यात्मा सततं भवति स्वयम् । तथैवापूर्यते शक्त्या शीघ्रमेव महानपि ॥ ५९ ॥

yathaiva bhāvayatyātmā satataṃ bhavati svayam | tathaivāpūryate śaktyā śīghram eva mahān api || 59 ||

Whatever the self keeps imagining itself to be, it constantly turns into just that, and however great it may be, it fills up with that power very fast.

आत्मा अपने बारे में जैसा भी सोचती रहती है, वह हमेशा वैसी ही बन जाती है, और चाहे वह कितनी भी बड़ी क्यों न हो, वह उस शक्ति से बहुत जल्दी भर जाती है।

4.11.60

भाविता शक्तिरात्मानमात्मतां नयति क्षणात् । अनन्तमखिलं प्रावृड्निहिका महती यथा ॥ ६० ॥

bhāvitā śaktirātmānamātmatāṃ nayati kṣaṇāt | anantamakhilaṃ prāvṛḍmihikā mahatī yathā || 60 ||

A power that is dwelt on turns the self completely into that very thing in an instant, just as a great mist covers everything without leaving anything out.

जिस शक्ति का बार-बार चिंतन किया जाता है, वह पल भर में आत्मा को पूरी तरह वैसा ही बना देती है, जैसे घना कोहरा हर चीज़ को बिना कुछ छोड़े पूरी तरह ढक लेता है।

4.11.61

या शक्तिरुदिता शीघ्रं याति तन्मयतामजः । य एवर्तुः स्थितं यातस्तन्मयो भवति द्रुमः ॥ ६१ ॥

yā śaktiruditā śīghraṃ yāti tanmayatāmajaḥ | ya evartuḥ sthitaṃ yātastanmayo bhavati drumaḥ || 61 ||

Whatever power rises up, the unborn self quickly becomes that very thing, just as when a season comes and settles in, the tree becomes filled with that season's own nature.

जो भी शक्ति उठती है, अजन्मा आत्मा फ़ौरन वैसी ही बन जाती है, जैसे जब कोई ऋतु आकर ठहर जाती है, तो पेड़ उसी ऋतु के गुणों से भर जाता है।

4.11.62

न मोक्षो मोक्ष ईशस्य न बन्धो बन्ध आत्मनः । बन्धमोक्षदृशौ लोके न जाने प्रोत्थिते कुतः ॥ ६२ ॥

na mokṣo mokṣa īśasya na bandho bandha ātmanaḥ | bandhamokṣadṛśau loke na jāne protthe kutaḥ || 62 ||

For the Lord there is no real liberation, and for the self there is no real bondage. I do not know where these two ideas of bondage and freedom, seen in the world, sprang up from.

ईश्वर के लिए कोई असली मुक्ति नहीं है, और आत्मा के लिए कोई असली बंधन नहीं है। मुझे नहीं पता कि दुनिया में दिखने वाले बंधन और मुक्ति के ये दोनों विचार आख़िर कहाँ से पैदा हुए।

4.11.63

नास्ति बन्धो न मोक्षोऽस्ति तन्मयस्त्विव लक्ष्यते । ग्रस्तं नित्यमनित्येन मायामयमहो जगत् ॥ ६३ ॥

nāsti bandho na mokṣo'sti tanmayastviva lakṣyate | grastaṃ nityamaniyena māyāmayamaho jagat || 63 ||

There is no bondage, and there is no liberation, it only looks as if the self were tied up in them. Ah, this world is pure illusion: it is eternal, yet it looks trapped inside what does not last.

न कोई बंधन है, न कोई मुक्ति, बस ऐसा दिखता है जैसे आत्मा इनमें बँधी हो। अरे, यह संसार तो माया मात्र है: यह शाश्वत है, फिर भी ऐसा लगता है जैसे यह किसी नाशवान चीज़ में फँसा हो।

4.11.64

यदैव चित्तं कलितं किलानेनाकलात्मना । कोशकारवदात्मायमनेनावलितस्तदा ॥ ६४ ॥

yadaiva cittaṃ kalitaṃ kilānenākalātmanā | kośakāravadātmāyamanenāvalitas tadā || 64 ||

As soon as the mind is shaped by this self, who has no parts, the self at once gets wrapped up in that mind, like a silkworm caught in its own cocoon.

जैसे ही यह अखंड आत्मा मन को गढ़ती है, वैसे ही आत्मा उसी मन में लिपट जाती है, जैसे रेशम का कीड़ा अपने ही कोए में लिपट जाता है।

4.11.65

अन्योन्यरूपास्त्वत्यन्तं विकल्पितशरीरकाः । मनःशक्तय एतस्मादिमा निर्यान्ति कोटयः ॥ ६५ ॥

anyonyarūpāstvatyantaṃ vikalpitasharīrakāḥ | manaḥśaktaya etasmādimā niryānti koṭayaḥ || 65 ||

From this self come out millions and millions of powers of the mind, each one different from the rest, each one with a body that is nothing but an imagined thing.

इसी आत्मा से मन की करोड़ों शक्तियाँ निकलती हैं, हर एक दूसरे से बिलकुल अलग, और हर एक का शरीर बस एक कल्पना मात्र होता है।

4.11.66

तज्जास्तत्स्थाः पृथग्रूपाः समुद्रादिव वीचयः । तज्जास्तत्स्थाः पृथक्स्थाश्च चन्द्रादिव मरीचयः ॥ ६६ ॥

tajjāstatsthāḥ pṛthagrūpāḥ samudrādiva vīcayaḥ | tajjāstatsthāḥ pṛthaksathāśca candraādiva marīcayaḥ || 66 ||

These powers are born from that self and rest within it, yet each one has its own separate form, like waves born from the sea. They are born from it and rest within it, yet stand apart from one another, like moonbeams that come from the moon.

ये शक्तियाँ उसी आत्मा से पैदा होती हैं और उसी में टिकी रहती हैं, फिर भी हर एक का अपना अलग रूप होता है, जैसे समुद्र से पैदा हुई लहरें। ये उसी से पैदा होती हैं और उसी में टिकी रहती हैं, फिर भी एक-दूसरे से अलग खड़ी रहती हैं, जैसे चाँद से निकली किरणें।

4.11.67

अस्मिन्स्पन्दमये स्फारे परमात्ममहाम्बुधौ । चिज्जले विततीभोगे चिन्मात्ररसमालिनि ॥ ६७ ॥

asminsapandamaye sphāre paramātmamahāmbudhau | cijjale vitatābhoge cinmātrarasamālini || 67 ||

This is the vast, ever-shaking, great ocean of the highest self, whose water is consciousness itself, whose spread has no end, and which is full through and through with the taste of pure awareness.

यह परम आत्मा का विशाल, लगातार हिलता-डुलता महासागर है, जिसका जल स्वयं चेतना है, जिसका फैलाव अंतहीन है, और जो पूरी तरह शुद्ध चेतना के रस से भरा है।

4.11.68

काश्चित्स्थिरा ब्रह्मविष्णू काश्चिद्रुद्रत्वमागताः । काश्चित्पुरुषतां प्राप्ताः काश्चिद्देवत्वमागताः । लहर्यः प्रस्फुरन्त्येताः स्वभावोद्भावितात्मकाः । काश्चिद्यममहेन्द्रार्कवह्निवैश्रवणादिकाः । घ्नन्ति कुर्वन्ति तिष्ठन्ति लहर्यश्चपलैषणाः । काश्चित्किंनरगन्धर्वविद्याधरसुरादिकाः । उत्पतन्ति पतन्त्युग्रा लहर्यः परिवल्गिताः । काश्चित्किंचित्स्थिराकारा यथा कमलजादिकाः । काश्चिदुत्पन्नविध्वस्ता यथा सुरनरादिकाः ॥ ६८ ॥

kāścitsthirā brahmaviṣṇū kāścidrudratvamāgatāḥ | kāścitpuruṣatāṃ prāptāḥ kāściddēvatvamāgatāḥ | laharyaḥ prasphurantyētāḥ svabhāvōdbhāvitātmakāḥ | kāścidyamamahēndrārkavahnavaiśravaṇādikāḥ | ghnanti kurvanti tiṣṭhanti laharyaścapalaiṣaṇāḥ | kāścitkiṃnaragandharvavidyādharasurādikāḥ | utpatanti patantyugrā laharyaḥ parivalgitāḥ | kāścitkiṃcitsthirākārā yathā kamalajādikāḥ | kāścidutpannavidhvastā yathā suranarādikāḥ || 68 ||

Some of these waves stay still as Brahma and Vishnu; some take on the form of Rudra. Some become human beings, some become gods. These waves shimmer and shake, each one shaped by its own nature. Some become Yama, Indra, the Sun, Fire, and Kubera. Restless in their wants, these waves strike, create, and stand still, each one doing what its own nature calls for. Some become kinnaras, gandharvas, vidyadharas, and other gods. Fierce and leaping, these waves rise up and fall back down. Some keep a somewhat fixed shape, like Brahma the lotus-born and others like him. Some rise up and are destroyed at once, like gods and men.

इनमें से कुछ लहरें ब्रह्मा और विष्णु बनकर स्थिर रहती हैं; कुछ रुद्र का रूप ले लेती हैं। कुछ इंसान बन जाती हैं, कुछ देवता बन जाती हैं। ये लहरें चमकती और हिलती-डुलती हैं, हर एक अपने ही स्वभाव से बनी हुई। कुछ लहरें यम, इंद्र, सूर्य, अग्नि और कुबेर बन जाती हैं। अपनी बेचैन चाहों में ये लहरें मारती हैं, बनाती हैं, और टिकी रहती हैं, हर एक अपने स्वभाव के मुताबिक़ काम करती है। कुछ लहरें किन्नर, गंधर्व, विद्याधर और दूसरे देवता बन जाती हैं। ये उग्र, उछलती लहरें ऊपर उठती हैं और नीचे गिरती हैं। कुछ लहरें कुछ हद तक स्थिर रूप रखती हैं, जैसे कमल से जन्मे ब्रह्मा और उन जैसे और लोग। कुछ लहरें पैदा होते ही नष्ट हो जाती हैं, जैसे देवता और मनुष्य।

4.11.69

कृमिकीटपतङ्गाहिगोमशाजगरादिकाः । काश्चित्तस्मिन्महाम्भोधौ स्फुरन्त्येतेम्बुबिन्दुवत् ॥ ६९ ॥

kṛmikīṭapataṅgāhigomashājagarādikāḥ | kāścittasminmahāmbhodhau sphurantyetembudubinduvat || 69 ||

Worms, insects, moths, snakes, jackals, pythons, and other such creatures, some of these flash for a moment in that great ocean, like tiny drops of water.

कीड़े, कीट, पतंगे, साँप, सियार, अजगर और ऐसे ही दूसरे जीव, इनमें से कुछ उस महासागर में पानी की बूँदों की तरह पल भर के लिए चमक उठते हैं।

4.11.70

काश्चिच्चला नरमृगगृध्रजम्बुलकादिकाः । स्फुरन्ति गिरिकुञ्जेषु वेलावनतटेष्विव ॥ ७० ॥

kāściccalā naramṛgagṛdhrajambulakādikāḥ | sphuranti girikuñjeṣu velāvanataṭeṣviva || 70 ||

Some of these waves move and stir, appearing as men, deer, vultures, jackals, and other such creatures, flickering in mountain groves the way things flicker on a wooded seashore.

कुछ लहरें चंचल होकर मनुष्य, हिरण, गिद्ध, सियार और ऐसे ही दूसरे जीवों के रूप में पहाड़ों की घाटियों में वैसे ही चमकती हैं जैसे समुद्र किनारे के जंगल में चीज़ें चमकती हैं।

4.11.71

सुदीर्घजीविताः काश्चित्काश्चिदत्यल्पजीविताः अतुच्छकलनाः काश्चित्काश्चित्तुच्छशरीरकाः ॥ ७१ ॥

sudīrghajīvitāḥ kāścitkāścidatyalpajīvitāḥ atucchakalanāḥ kāścitkāścittucchaśarīrakāḥ || 71 ||

Some of these live very long, and some live only a very short time. Some have large, impressive forms, and some have small, ordinary bodies.

इनमें से कुछ बहुत लंबे समय तक जीती हैं, और कुछ बहुत कम समय के लिए। कुछ के बड़े और प्रभावशाली रूप होते हैं, और कुछ के शरीर छोटे और मामूली होते हैं।

4.11.72

संसारस्वप्नसंरम्भे काश्चित्स्थैर्येण भाविताः सुविकल्पहताः काश्चिच्छङ्कन्ते सुस्थिरं जगत् ॥ ७२ ॥

saṃsārasvapnasamrambe kāścitsthairyena bhāvitāḥ suvikalpahatāḥ kāścicchaṅkante susthiraṃ jagat || 72 ||

In this dream-like rush of worldly life, some of these become sure that things are lasting. Others, confused by their own doubts and ideas, come to believe that the world is solid and permanent.

इस सांसारिक जीवन की सपने जैसी हड़बड़ी में, इनमें से कुछ यह मान बैठती हैं कि चीज़ें स्थायी हैं। कुछ और, अपने ही विचारों और शंकाओं में उलझकर, यह समझ बैठती हैं कि यह संसार पक्का और टिकाऊ है।

4.11.73

अल्पाल्पभावनाः काश्चिद्दैन्यदोषवशीकृताः कृशोऽतिदुःखी मूढोऽहमितिदुःखैर्वशीकृताः ॥ ७३ ॥

alpālpabhāvanāḥ kāściddainyadoṣavaśīkṛtāḥ kṛśo'taduḥkhī mūḍho'hamitiduḥkhairvaśīkṛtāḥ || 73 ||

Some of these think very little of themselves, overcome by a sense of misery, telling themselves, "I am weak, I am deeply unhappy, I am foolish," and so they stay ruled by their own suffering.

इनमें से कुछ अपने बारे में बहुत छोटी सोच रखती हैं, दुख और दीनता के भाव से दबी रहती हैं, यह कहते हुए कि "मैं कमज़ोर हूँ, मैं बहुत दुखी हूँ, मैं मूर्ख हूँ," और इस तरह अपने ही दुखों के वश में रहती हैं।

4.11.74

काश्चित्स्थावरतां याताः काश्चिद्देवत्वमागताः काश्चित्पुरुषतां प्राप्ताः काश्चिदर्णवतां गताः ॥ ७४ ॥

kāścitsthāvaratāṃ yātāḥ kāściddēvatvamāgatāḥ kāścitpuruṣatāṃ prāptāḥ kāścidaṛṇavatāṃ gatāḥ || 74 ||

Some have become still things like plants and rocks. Some have become gods. Some have become human beings. Some have become oceans.

कुछ लहरें पेड़-पौधों और पत्थरों जैसी अचल चीज़ें बन गई हैं। कुछ देवता बन गई हैं। कुछ मनुष्य बन गई हैं। कुछ समुद्र बन गई हैं।

4.11.75

काश्चित्स्थिता जगति कल्पशतान्यनल्पाः काश्चिद्व्रजन्ति परमं पदमिन्दुशुद्धाः ब्रह्मार्णवात्समुदिता लहरीविलोलाश्चित्संविदो हि मननापरनामवत्यः ॥ ७५ ॥

kāścitsthitā jagati kalpaśatānyanalpāḥ kāścidvrajanti paramaṃ padamindуśuddhāḥ brahmārṇavātsamuditā laharīvilolāścitsaṃvidohi mananāparanāmavatyaḥ || 75 ||

Some of these waves stay in the world for hundreds of world-ages, and there are many such waves. Others, pure as the moon, go on to the highest state. These trembling waves, risen from the ocean of Brahman, are nothing but consciousness itself, which also goes by another name, the mind.

इनमें से कुछ लहरें संसार में सैकड़ों कल्पों तक टिकी रहती हैं, और ऐसी लहरें बहुत सारी हैं। कुछ, चाँद जैसी निर्मल होकर, परम पद को प्राप्त हो जाती हैं। ब्रह्म के सागर से उठी ये काँपती हुई लहरें असल में चेतना ही हैं, जिसे एक और नाम से मन भी कहा जाता है।

Chapter 12

4.12.1

काल उवाच । सुरासुरनराकारा इमा याः संविदो मुने । ब्रह्मार्णवादभिन्नास्ताः सत्यमेतन्मृषेतरत् ॥ १ ॥

kāla uvāca | surāsuranarākārā imā yāḥ saṃvido mune | brahmārṇavādabhinnāstāḥ satyametanmṛṣetarat || 1 ||

Time said, sage, these awarenesses that take the shape of gods, demons, and men are not different from the ocean of Brahman. This is the truth, anything else is false.

काल ने कहा, हे मुनि, देवता, असुर और मनुष्य के रूप में दिखने वाली ये सारी चेतनाएँ ब्रह्म के सागर से अलग नहीं हैं। यही सच है, बाकी सब झूठ है।

4.12.2

मिथ्याभावनया ब्रह्मन्स्वविकल्पकलङ्किताः । न ब्रह्म वयमित्यन्तर्निश्चयेन ह्यधोगताः ॥ २ ॥

mithyābhāvanayā brahman svavikalpakalaṅkitāḥ | na brahma vayamityantarniṃścayena hyadhogatāḥ || 2 ||

Brahmin, through false imagining they become stained by their own thought constructs. Deep inside they become sure, we are not Brahman, and because of this they fall down low.

हे ब्राह्मण, झूठी कल्पना के कारण वे अपने ही मन के भ्रम से दागी हो जाती हैं। भीतर ही भीतर यह पक्का मान लेती हैं कि हम ब्रह्म नहीं हैं, और इसी वजह से नीचे गिर जाती हैं।

4.12.3

ब्रह्मणो व्यतिरिक्तत्वं ब्रह्मार्णवगता अपि । भावयन्त्यो विमुह्यन्ति भीमासु भवभूमिषु ॥ ३ ॥

brahmaṇo vyatiriktatvaṃ brahmārṇavagatā api | bhāvayantyo vimuhyanti bhīmāsu bhavabhūmiṣu || 3 ||

Even while they rest inside the ocean of Brahman, by believing they are separate from Brahman they become confused, and they wander lost in the frightening lands of birth and rebirth.

ब्रह्म के सागर के भीतर रहते हुए भी, ब्रह्म से अलग होने की भावना के कारण वे भ्रमित हो जाती हैं और जन्म-मरण की डरावनी दुनिया में भटकती रहती हैं।

4.12.4

या एताः संविदो ब्राह्म्यो मननैककलङ्किताः । एतत्कर्मणां बीजमप्यकर्मैव विद्धि ताः ॥ ४ ॥

yā etāḥ saṃvido brāhmyo mananaikakalaṅkitāḥ | etatkarmaṇāṃ bījamapyakarmaiva viddhi tāḥ || 4 ||

Know this. These awarenesses that belong to Brahman are stained only by thinking, and that is why they become the seed of these actions, yet in themselves they are no action at all.

यह जान लो। ये चेतनाएँ जो ब्रह्म की हैं, केवल सोचने भर से दागी हो जाती हैं, और इसी वजह से वे इन कर्मों का बीज बन जाती हैं, फिर भी अपने आप में वे कोई कर्म नहीं हैं।

4.12.5

संकल्परूपयैवान्तर्मुने कलनयैतया । कर्मजालकरञ्जानां बीजमुष्ट्या करालया ॥ ५ ॥

saṃkalparūpayaivāntarmune kalanayaitayā | karmajālakarañjānāṃ bījamuṣṭyā karālayā || 5 ||

This same inner working, the will inside you, sage, grips like a fierce fist a handful of seeds, the seeds of the karanja tree that make up the tangled net of action.

यही भीतरी क्रिया है, हे मुनि, यानी भीतर का संकल्प, जो एक मुट्ठी बीज को डरावनी मुट्ठी की तरह कसकर पकड़ लेता है, ये बीज करंज के पेड़ के हैं, जो कर्मों के उलझे जाल को बनाते हैं।

4.12.6

इमा जगति विस्तीर्णाः शरीरोपलपङ्क्तयः । तिष्ठन्ति परिवल्गन्ति रुदन्ति च हसन्ति च ॥ ६ ॥

imā jagati vistīrṇāḥ śarīropalapaṅktayaḥ | tiṣṭhanti parivalganti rudanti ca hasanti ca || 6 ||

These rows of body after body, scattered across the world like stones, stand there, move about, weep, and laugh.

शरीर पर शरीर की ये पंक्तियाँ, जो दुनिया भर में पत्थरों की तरह बिखरी हैं, वहीं खड़ी रहती हैं, इधर-उधर घूमती हैं, रोती हैं और हँसती हैं।

4.12.7

आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं स्पन्दनैः पवनो यथा । उल्लसन्ति निलीयन्ते म्लायन्ति विहसन्ति च ॥ ७ ॥

ābrahmas tambaparyantaṃ spandanaiḥ pavano yathā | ullasanti nilīyante mlāyanti vihasanti ca || 7 ||

From Brahma, the very highest, down to a single blade of grass, everything trembles like the wind, flaring up, disappearing, withering, and bursting into laughter.

ब्रह्मा जैसे सबसे ऊँचे से लेकर एक तिनके तक, सब कुछ हवा की तरह काँपता है, चमकता है, मिट जाता है, मुरझाता है और खिलखिला उठता है।

4.12.8

ता एताः काश्चिदत्यच्छा यथा हरिहरादयः । काश्चिदल्पविमोहस्था यथोरगनरामराः ॥ ८ ॥

tā etāḥ kāścidatyacchā yathā hariharādayaḥ | kāścidalpavimohasthā yathoraganarāmarāḥ || 8 ||

Of these, some are utterly clear and pure, like Vishnu, Shiva, and the other great gods. Some stand in only a little delusion, like serpents, men, and gods.

इनमें से कुछ बिलकुल निर्मल और शुद्ध हैं, जैसे विष्णु, शिव और बाकी बड़े देवता। कुछ थोड़े से भ्रम में खड़ी हैं, जैसे साँप, मनुष्य और देवता।

4.12.9

काश्चिदत्यन्तमोहस्था यथा तरुतृणादयः । काश्चिदज्ञानसंमूढाः कृमिकीटत्वमागताः ॥ ९ ॥

kāścidatyantamohasthā yathā tarutṛṇādayaḥ | kāścidajñānasammūḍhāḥ kṛmikīṭatvamāgatāḥ || 9 ||

Some stand in complete delusion, like trees and grass. Some, wholly confused by ignorance, have come down to the state of worms and insects.

कुछ पूरी तरह भ्रम में डूबी हैं, जैसे पेड़ और घास। कुछ अज्ञान में इतनी उलझी हैं कि कीड़े-मकोड़े की हालत में जा पहुँची हैं।

4.12.10

काश्चिचत्तृणवदुह्यन्ते दूरे ब्रह्ममहोदधेः । अप्राप्तभूमिका एता यथोरगनगादयः ॥ १० ॥

kāścicattṛṇavaduhyante dūre brahmamahodadheḥ | aprāptabhūmikā etā yathoraganagādayaḥ || 10 ||

Some are carried off like straw, far from the great ocean of Brahman. These have not yet reached the right stage, like serpents and mountains.

कुछ तिनके की तरह बहा दी जाती हैं, ब्रह्म के महासागर से बहुत दूर। ये अभी सही पड़ाव तक नहीं पहुँच पाई, जैसे साँप और पहाड़।

4.12.11

सत्त्वमात्रं समालोक्य काश्चिदेवमुपागताः । जाताजाता निखन्यन्ते कृतान्तजरठाखुना ॥ ११ ॥

sattvamātraṃ samālokya kāścidevamupāgatāḥ | jātājātā nikhanyante kṛtāntajaraṭhākhunā || 11 ||

Some, seeing nothing but their own bare existence, come to this end. Whether already born or not yet born, the old rat called death digs them in and buries them.

कुछ अपने बस होने भर को देखकर इस हाल तक पहुँच जाती हैं। चाहे जन्मी हों या अभी जन्मी न हों, मौत नाम का वह बूढ़ा चूहा उन्हें खोदकर गाड़ देता है।

4.12.12

काश्चिदन्तरमासाद्य ब्रह्मतत्त्वमहाम्बुधेः । गतास्तत्तां समं कार्यैर्हरिब्रह्महरादिकाः ॥ १२ ॥

kāścidantaramāsādya brahmatattvamahāmbudheḥ | gatāstattāṃ samaṃ kāryairharibrahmaharādikāḥ || 12 ||

Some have gone deep into the great ocean that is the truth of Brahman. They have become one with that state of Brahman even while carrying out their own work, these are Vishnu, Brahma the creator, Shiva, and the rest.

कुछ ब्रह्म के सत्य रूपी महासागर की गहराई में उतर चुकी हैं। वे अपना काम करते हुए भी उसी ब्रह्म रूप में लीन हो गई हैं, ये हैं विष्णु, सृष्टि रचने वाले ब्रह्मा, शिव और बाकी सब।

4.12.13

अल्पमोहात्मिकाः काश्चित्तमेव ब्रह्मवारिधिम् । अदृष्टपारभूम्यौघमवलम्ब्य व्यवस्थिताः ॥ १३ ॥

alpamohātmikāḥ kāścittameva brahmavāridhim | adṛṣṭapārabhūmyaughamavalambya vyavasthitāḥ || 13 ||

Some, with only a little delusion left in them, stand firm, resting on that same ocean of Brahman, a flood so vast that no one has seen its far shore.

कुछ, जिनमें बस थोड़ा सा भ्रम बचा है, उसी ब्रह्म रूपी सागर के सहारे मजबूती से टिकी रहती हैं, यह ऐसा सागर है जिसका दूसरा किनारा किसी ने नहीं देखा।

4.12.14

काश्चिद्भोक्तव्यजन्मौघभुक्तजन्मौघकोटयः । वन्ध्याः प्रकाशतामस्यः संस्थिता भूतजातयः ॥ १४ ॥

kāściddbhoktavyajanmaughabhuktajanmaughakoṭayaḥ | vandhyāḥ prakāśatāmasyaḥ saṃsthitā bhūtajātayaḥ || 14 ||

Some classes of beings exist in the millions, with endless births still to be lived and endless births already lived, going nowhere, whether they are of the light or of the dark.

प्राणियों की कुछ जातियाँ करोड़ों की संख्या में हैं, जिनके आगे अनगिनत जन्म जीने बाकी हैं और पीछे अनगिनत जन्म जी चुकी हैं, फिर भी कहीं नहीं पहुँचतीं, चाहे वे उजाले वाली हों या अंधेरे वाली।

4.12.15

काश्चिदूर्ध्वादधो यान्ति यथा हस्तान्महत्फलम् । ऊर्ध्वादूर्ध्वतरं काश्चिदधस्तात्काश्चिदप्यधः ॥ १५ ॥

kāścidūrdhvādadho yānti yathā hastānmahatphalam | ūrdhvādūrdhvataraṃ kāścidadhastātkāścidapyadhaḥ || 15 ||

Some fall from a high place to a low one, like a heavy fruit slipping out of a hand. Some rise from a high place to a still higher one. Some sink from a low place to one still lower.

कुछ ऊँचाई से नीचे गिर जाती हैं, जैसे हाथ से कोई भारी फल छूटकर गिर पड़े। कुछ ऊँचाई से और ऊँचाई पर चली जाती हैं। कुछ नीचे से और नीचे उतर जाती हैं।

4.12.16

बहुसुखदुःखकराकराक्षयेयं परमपदास्मरणात्समागतेह । परमपदावगमात्प्रयाति नाशं विहगपतिस्मरणाद्विषव्यथेव ॥ १६ ॥

bahusukhaduḥkhakarākarākṣaye yaṃ paramapadāsmaraṇātsamāgate ha | paramapadāvagamāt prayāti nāśaṃ vihagapatismaraṇād viṣavyatheva || 16 ||

This endless round, which brings so much pleasure and pain, has come about here only because the highest state was forgotten. Once the highest state is known, it is destroyed completely, just as remembering Garuda, the king of birds, ends the pain of snake poison.

यह अनंत चक्र, जो इतना सुख और दुख देता है, यहाँ केवल इसलिए बना है क्योंकि उस परम पद को भुला दिया गया। जब वही परम पद पहचान में आ जाता है, तो यह चक्र पूरी तरह मिट जाता है, ठीक वैसे ही जैसे पक्षियों के राजा गरुड़ को याद करने भर से साँप के जहर की पीड़ा मिट जाती है।

Chapter 13

4.13.1

काल उवाच । एतासां भूतजातीनामूर्मीणामिव सागरात् । विविधानां विचित्राणां लतानामिव माधवे ॥ १ ॥

kāla uvāca | etāsāṃ bhūtajātīnāmūrmīṇāmiva sāgarāt | vividhānāṃ vicitrāṇāṃ latānāmiva mādhave || 1 ||

Kala said: These many kinds of beings arise in all sorts of different and wondrous forms, the way waves rise up from the ocean, the way vines grow thick in the spring.

काल ने कहा, ये तरह-तरह के जीव अलग-अलग और अनोखे रूपों में पैदा होते हैं, जैसे समुद्र से लहरें उठती हैं, जैसे बसंत में बेलें घनी होकर उगती हैं।

4.13.2

भव्या जितमनोमोहा दृष्टलोकपरावराः । जीवन्मुक्ता भ्रमन्तीह यक्षगन्धर्वकिंनराः ॥ २ ॥

bhavyā jitamanomohā dṛṣṭalokaparāvarāḥ | jīvanmuktā bhramantīha yakṣagandharvakiṃnarāḥ || 2 ||

Those who are truly good, who have conquered the confusion of the mind, who have seen the higher worlds and the lower worlds, are freed while still alive, and they wander here as yakshas, gandharvas, and kinnaras.

जो सचमुच अच्छे हैं, जिन्होंने मन के मोह पर जीत पा ली है, जिन्होंने ऊपर के और नीचे के सभी लोक देख लिए हैं, वे जीते-जी मुक्त होकर यहाँ यक्ष, गंधर्व और किन्नर बनकर घूमते हैं।

4.13.3

अन्ये तु काष्ठकुड्याभा मूढाः स्थावरजगमाः । अपरे क्षीणमोहास्ते किं तेषां प्रविचार्यते ॥ ३ ॥

anye tu kāṣṭhakuḍyābhā mūḍhāḥ sthāvarajagamāḥ | apare kṣīṇamohāste kiṃ teṣāṃ pravicāryate || 3 ||

But other beings, whether they stay in one place or move about, are foolish, as dull as wood or a wall; and still other beings have their delusion worn away completely, so what is left to say about them?

पर कुछ और जीव, चाहे वे एक जगह जमे रहें या घूमते-फिरते हों, मूर्ख हैं, लकड़ी या दीवार जैसे बेजान; और कुछ जीव ऐसे हैं जिनका मोह पूरी तरह मिट चुका है, तो उनके बारे में अब कहने को क्या बचा है।

4.13.4

लोके प्रबुध्यमानानां भूतानामात्मसिद्धये । विहरन्तीह शास्त्राणि कल्पितान्युदितात्मभिः ॥ ४ ॥

loke prabudhyamānānāṃ bhūtānāmātmasiddhaye | viharantīha śāstrāṇi kalpitānyuditātmbhiḥ || 4 ||

So that beings who are just waking up in this world may come to know their own true self, the scriptures made by those whose own self has already woken up move about here.

जो जीव इस दुनिया में अभी-अभी जाग रहे हैं, वे अपने असली स्वरूप को पहचान सकें, इसीलिए यहाँ वे शास्त्र चलते हैं जिन्हें उन लोगों ने बनाया है जिनकी अपनी आत्मा पहले से जाग चुकी है।

4.13.5

विलीयते मनोमोहः सच्छास्त्रप्रविचारणात् । नभोविहरणाद्भानोः शार्वरं तिमिरं यथा ॥ ५ ॥

vilīyate manomohaḥ sacchāstrapravicāraṇāt | nabhoviharaṇādbhānoḥ śārvaraṃ timiraṃ yathā || 5 ||

The mind's delusion melts away through careful study of true scripture, just as the darkness of night melts away when the sun moves across the sky.

सच्चे शास्त्र पर ध्यान से विचार करने से मन का मोह उसी तरह मिट जाता है, जैसे सूरज के आकाश में घूमने से रात का अंधेरा मिट जाता है।

4.13.7

अक्षीयमाणं हि मनो मोहायैव न सिद्धये । नीहार इव संछाद्य वेताल इव वल्गति ॥ ७ ॥

akṣīyamāṇaṃ hi mano mohāyaiva na siddhaye | nīhāra iva saṃchādya vetāla iva valgati || 7 ||

Indeed, a mind that has not been worn down brings only delusion, not true understanding; it covers everything like fog, and it leaps about like a spirit inside a dead body.

सच तो यह है कि जो मन क्षीण नहीं हुआ है, वह सिर्फ मोह ही पैदा करता है, सच्चा ज्ञान नहीं देता; वह कोहरे की तरह सब कुछ ढँक देता है और मुर्दे में घुसी आत्मा की तरह उछलता-कूदता है।

4.13.8

सर्वेषामेव देहानां सुखदुःखार्थभाजनम् । शरीरं मन एवेह नतु मांसमयं मुने ॥ ८ ॥

sarveṣāmeva dehānāṃ sukhaduḥkhārthabhājanam | śarīraṃ mana eva iha natu māṃsamayaṃ mune || 8 ||

Of all bodies, sage, the mind alone is the true vessel that holds pleasure and pain; the real body here is this mind, not the one made of flesh.

हे मुनि, सब देहों में सुख और दुख को भरने वाला असली पात्र मन ही है; असली शरीर यह मन ही है, न कि यह मांस से बना शरीर।

4.13.9

योऽयं मांसास्थिसंघातो दृश्यते पाञ्चभौतिकः । मनोविकल्पनं विद्धि न देहः परमार्थतः ॥ ९ ॥

yo'yaṃ māṃsāsthisamghāto dṛśyate pāñcabhautikaḥ | manovikalpanaṃ viddhi na dehaḥ paramārthataḥ || 9 ||

This lump of flesh and bone that you see, made of the five elements, know this to be nothing but the mind's own imagining; in the deepest sense it is not a body at all.

यह जो मांस और हड्डियों का पिंड दिखाई देता है, जो पाँच तत्वों से बना है, इसे मन की अपनी कल्पना ही समझो; गहरी सच्चाई में यह शरीर है ही नहीं।

4.13.10

मनःशरीरेण तव पुत्रोऽयं कृतवान्मुने । तदेव प्राप्तवानाशु वयं नात्रापराधिनः ॥ १० ॥

manaḥśarīreṇa tava putro'yaṃ kṛtavānmune | tadeva prāptavānāśu vayaṃ nātrāparādhinaḥ || 10 ||

Using this mind-made body of his, sage, this son of yours did what he did, and he has quickly received exactly that result; we are not at fault in this.

हे मुनि, आपके इस पुत्र ने अपने इस मन से बने शरीर के जरिए जो किया, उसी का फल उसे तुरंत मिल गया; इसमें हमारा कोई दोष नहीं है।

4.13.11

स्वया वासनया लोको यद्यत्कर्म करोति यः । स तथैव तदाप्नोति नेतरस्येह कर्तृता ॥ ११ ॥

svayā vāsanayā loko yadyatkarma karoti yaḥ | sa tathaiva tadāpnoti netarasyeha kartṛtā || 11 ||

Whatever action anyone in this world does, driven by his own inner tendencies, he receives exactly that in return; no one else has any part in doing it.

इस दुनिया में जो भी व्यक्ति अपनी ही वासना यानी मन के पुराने संस्कार से जो भी काम करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है; उसमें किसी और का कोई हाथ नहीं होता।

4.13.12

स्वानुसंहितमन्तर्यन्मनोवासनया स्वयाको नाम भुवनेशोऽस्ति तत्कर्तुं यस्य शक्तता ॥ १२ ॥

svānusaṃhitamantaryanmanovāsanayā svayāko nāma bhuvaneśo'sti tatkartuṃ yasya śaktatā || 12 ||

Whatever is bound up within a person by his own mental tendency, what lord of the world is there who has the power to undo that?

किसी व्यक्ति के भीतर उसकी अपनी ही मन की वासना से जो बंध जाता है, उसे बदलने की ताकत भला किस लोक के स्वामी के पास है?

4.13.13

ये सर्गा नरकाभोगा या जन्ममरणैषणाःस्वप्नमनोमननेनेदं स निष्पन्दोऽपि दुःखदः ॥ १३ ॥

ye sargā narakābhogā yā janmamaraṇaiṣaṇāḥsvapnamanomananenedaṃ sa niṣpando'pi duḥkhadaḥ || 13 ||

The worlds that are full of hell's suffering, and the many longings for birth and death, all come from the thinking of a dreaming mind; and this world, even though it does not truly move on its own, still causes pain.

जो सृष्टियाँ नरक जैसे दुखों से भरी हैं, और जन्म-मृत्यु की जो तरह-तरह की चाहतें हैं, ये सब सपने देखने वाले मन के सोचने से पैदा होती हैं; और यह संसार, खुद कहीं हिलता-डुलता न होते हुए भी, फिर भी दुख देता है।

4.13.14

बहुनात्र किमुक्तेन शब्दसंग्रहकारिणाउत्तिष्ठ भगवन्यामो यत्र ते तनयः स्थितः ॥ १४ ॥

bahunātra kimuktena śabdasaṃgrahakāriṇāuttiṣṭha bhagavanyāmo yatra te tanayaḥ sthitaḥ || 14 ||

What is the use of saying so much and piling up words? Rise up, revered sir, let us go to where your son is.

इतना सब कहने और शब्दों का ढेर लगाने से क्या फायदा? हे पूज्य, उठिए, चलिए वहाँ चलते हैं जहाँ आपका बेटा है।

4.13.16

तत्प्राणपवनश्चित्तान्मुक्त इन्द्वंशुवत्फलमवश्यायतया भूत्वा वीर्यं तेनान्तरास्थितः ॥ १६ ॥

tatprāṇapavanaścittānmukta indvaṃśuvatphalamavaśyāyatayā bhūtvā vīryaṃ tenāntarāsthitaḥ || 16 ||

That breath of life, once it left the mind, became like a moon-ray turning into frost on a fruit, and its inner strength stayed shut inside by that.

वह प्राण-वायु मन से मुक्त होकर मानो चाँदनी की किरण किसी फल पर ओस-पाला बन जाए, वैसी बन गई, और उसकी शक्ति उसी के अंदर बंद रह गई।

4.13.17

इत्युक्त्वा भगवान्कालो हसन्निव जगद्गतिम्हस्ताद्धस्तेन जग्राह भृगुमिन्दुमिवांशुमान् ॥ १७ ॥

ityuktvā bhagavānkālo hasanniva jagadgatimhastāddhastena jagrāha bhṛgumindumivāṃśumān || 17 ||

Having said this, the lord Kala, smiling as though at the way of the world, took Bhrigu by the hand, the way the radiant sun takes hold of the moon.

यह कहकर, भगवान काल, मानो संसार की चाल पर मुस्कुराते हुए, भृगु का हाथ पकड़कर उठा लिया, जैसे तेजस्वी सूर्य चाँद को थाम लेता है।

4.13.18

अहो नु चित्रा नियतेर्व्यवस्थेति वदंछनैः। भगवान्भृगुरुत्तस्थावुदयाद्रेर्यथा रविः ॥ १८ ॥

aho nu citrā niyatervyavastheti vadaṃchanaiḥ| bhagavānbhṛguruttasthāvudayādreryathā raviḥ || 18 ||

Ah, how strange indeed is the working of fate, he said softly; and the revered Bhrigu rose up, just as the sun rises from the mountain of sunrise.

अहो, नियति की व्यवस्था कितनी अनोखी है, यह धीरे से कहते हुए, पूज्य भृगु उठ खड़े हुए, जैसे उदयाचल पर्वत से सूरज उगता है।

4.13.19

तेजोनिधी ह सममङ्ग समुत्थितौ तौ भातस्तदाम्बरतले सतमालजाले। तुल्योदयाविव नभस्यमले विहर्तुमभ्युत्थितौ सजलदौ सकलेन्दुसूर्यौ ॥ १९ ॥

tejonidhī ha samamaṅga samutthitau tau bhātastadāmbaratale satamālajāle| tulyodayāviva nabhasyamale vihartumabhyutthitau sajaladau sakalendusūryau || 19 ||

The two of them, glowing like two stores of light, rose up together, dear one, and shone in the sky above a thick cluster of dark tamala trees; they looked just like the full moon and the sun rising together among clouds in a clear sky to go roaming, their rising was so alike.

वे दोनों, मानो तेज के दो भंडार हों, हे प्रिय, एक साथ उठ खड़े हुए और तब घने काले तमाल वृक्षों के ऊपर आकाश में चमकने लगे; वे बिलकुल वैसे ही लग रहे थे जैसे निर्मल आकाश में बादलों के बीच पूर्ण चाँद और सूरज घूमने के लिए एक साथ उठे हों, इतना एक जैसा था उनका उठना।

4.13.20

श्रीवाल्मीकिरुवाच। इत्युक्तवत्यथ मुनौ दिवसो जगाम सायतनाय विधयेऽस्तमिनो जगाम। स्नातुं सभा कृतनमस्करणा जगाम श्यामाक्षये रविकरैश्च सहाजगाम ॥ २० ॥

śrīvālmīkiruvāca| ityuktavatyatha munau divaso jagāma sāyatanāya vidhaye'stamino jagāma| snātuṃ sabhā kṛtanamaskarṇā jagāma śyāmākṣaye ravikaraiśca sahājagāma || 20 ||

Sri Valmiki said: When the sage had spoken like this, the day passed; the sun went down to set for the evening rites; the assembly, having offered their salutations, went to bathe; and the evening twilight came, along with the sun's last rays.

श्री वाल्मीकि ने कहा, मुनि के यह कहने के बाद दिन बीत गया; सूरज संध्या के विधि-विधान के लिए डूबने चला गया; सभा ने प्रणाम करके स्नान करने के लिए प्रस्थान किया; और सूरज की आखिरी किरणों के साथ शाम ढल आई।

Chapter 14

4.14.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथ कालभृगू देवौ मन्दराचलकन्दरात् । गन्तुं प्रवृत्ताववनौ समङ्गासरितस्तटम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atha kālabhṛgū devau mandarācalakandarāt | gantuṃ pravṛttāvavanau samaṅgāsaritastataṃ || 1 ||

Sri Vasishtha said: after that, the two radiant beings Kala and Bhrigu set out from a cave of Mount Mandara, going down toward the earth, to the bank of the river Samanga.

श्री वसिष्ठ जी ने कहा, इसके बाद काल और भृगु नाम के वे दोनों तेजस्वी देवता मन्दराचल पर्वत की एक गुफा से निकले और पृथ्वी की ओर, समङ्गा नदी के किनारे जाने के लिए चल पड़े।

4.14.2

तौ शैलादवरोहन्तौ दृष्टवन्तौ महाद्युती । नवहैमलताजालकुञ्जसुप्तनभश्चरान् ॥ २ ॥

tau śailādavarohantau dṛṣṭavantau mahādyutī | navahaimalatājālakujñjasuptanabhaścarān || 2 ||

As those two, shining with great splendor, climbed down from the mountain, they saw sky-wanderers sleeping in bowers woven from fresh golden vines.

पहाड़ से नीचे उतरते हुए वे दोनों, जो बड़े तेज से चमक रहे थे, उन्होंने देखा कि आकाश में विचरने वाले लोग सोने जैसी नई लताओं से बुनी झाड़ियों में सो रहे थे।

4.14.3

वल्लीवलयदोलाभिः क्रीडतो गगनाङ्गणे । हरिणीमुग्धमुग्धाक्षिप्रेक्षितस्मारितोत्पलान् ॥ ३ ॥

vallīvalayadolābhiḥ krīḍato gaganāṅgaṇe | hariṇīmugdhāmugdhākṣiprekṣitasmaritotpalān || 3 ||

Those sky-wanderers were swinging on swings made of looped vines in the open yard of the sky, and their innocent, doe-like glances called blue lotuses to mind.

वे आकाश में विचरने वाले लोग आकाश के खुले आँगन में लताओं के झूलों पर झूल रहे थे, और उनकी भोली भाली, हिरनी जैसी आँखों की चितवन देखकर नीले कमल याद आ जाते थे।

4.14.4

सिद्धानध्यासितोत्तुङ्गशिलाशकलविष्टरान् । धृताकारानिवोत्साहान्हेलादृष्टजगत्त्रयान् ॥ ४ ॥

siddhānadhyāsitottuṅgaśilāśakalaviṣṭarān | dhṛtākārānivotsāhānhelādṛṣṭajagattrayān || 4 ||

They also saw the Siddhas, seated on slabs of high rock, looking as if enthusiasm itself had taken a body, watching the three worlds with easy, playful indifference.

उन्होंने सिद्धों को भी देखा, जो ऊँची चट्टानों के टुकड़ों पर बैठे थे, मानो उत्साह ने खुद शरीर धारण कर लिया हो, और जो तीनों लोकों को बड़ी सहजता और खेल भाव से देख रहे थे।

4.14.5

कृताजस्रपतत्पुष्पधारासारनिमज्जनान् । तालोत्तालकृतोद्धस्तहस्तान्हस्तिघटापतीन् ॥ ५ ॥

kṛtājasrapatatpuṣpadhārāsāranimajjanān | tālottālakṛtoddhastahastānhastighaṭāpatīn || 5 ||

And they saw the lead elephants of the herds, endlessly soaked by a steady downpour of falling flowers, trunks raised high, trumpeting out a loud rhythm.

उन्होंने हाथियों के झुंडों के मुखिया हाथियों को भी देखा, जो गिरते हुए फूलों की लगातार बौछार में भीगे जा रहे थे, और जो अपनी सूँड़ ऊँची उठाकर जोर जोर से गरज रहे थे।

4.14.6

मदावलेपनिद्रालून्मदान्मूर्तानिव स्थितान्। पुष्पकेसररक्ताङ्गपवनारुणवालधीन्॥ ६॥

madāvalepanidrālūnmadaanmūrtāniva sthitān | puṣpakesararaktāṅgapavanāruṇavāladhīn || 6 ||

Those elephants were drowsy with the liquid running from their own temples in their frenzy, standing as if wild excitement itself had taken a body, their skin turned red and their tails reddened by flower pollen carried on the wind.

वे हाथी अपने ही मद में कनपटियों से बहते रस के कारण उनींदे हो रहे थे, और ऐसे खड़े थे मानो उन्माद ने खुद शरीर धारण कर लिया हो, उनका शरीर लाल हो गया था और हवा में उड़ते फूलों के पराग से उनकी पूँछ भी लाल हो गई थी।

4.14.7

चञ्चलाश्चमराश्चारून्भूभृन्मण्डलचामरान्। कृताजस्त्रपतत्पुष्पधारासारनिमज्जनान्॥ ७॥

cañcalāścamarāścārūnbhūbhṛnmaṇḍalacāmarān | kṛtājastrapatatpuṣpadhārāsāranimajjanān || 7 ||

They saw restless, lovely yaks too, like the very fly-whisks of the mountain ranges, also endlessly soaked by the steady downpour of falling flowers.

उन्होंने चंचल और सुंदर चँवर गायों को भी देखा, जो मानो पहाड़ों की कतारों के चँवर ही हों, और जो गिरते हुए फूलों की लगातार बौछार में भीगी जा रही थीं।

4.14.8

किन्नरान्भूमखर्जूराञ्शाखासरलतां गतान्। परस्परफलाघातक्ष्वेडावर्जितकीचकान्॥ ८॥

kinnarānbhūmakhajūrāñśākhāsaralatāṃ gatān | parasparaphalāghātakṣveḍāvarjitakīcakān || 8 ||

They saw kinnaras among date palms whose fronds grew straight like branches, and hollow bamboo stalks that hissed and whistled as their fruits struck against each other again and again.

उन्होंने खजूर के पेड़ों के बीच किन्नरों को देखा, जिनकी शाखाएँ सीधी बढ़ी हुई थीं, और उन्होंने खोखले बाँसों को भी देखा, जो अपने फलों के बार बार आपस में टकराने से सीटी जैसी आवाज़ करते सरसरा रहे थे।

4.14.9

धातुपाटलदुर्वक्रान्मर्कटान्नटनोत्कटान्। लतावितानसंछन्नसानूपवनमन्दिरान्॥ ९॥

dhātupāṭaladurvakrānmārkaṭānnataṇotkaṭān | latāvitānasanchannasānūpavanamandirān || 9 ||

They saw monkeys stained pink by mineral ore, their limbs crooked, dancing about wildly, and garden bowers on the mountain ridges, completely canopied over with vines.

उन्होंने बंदरों को भी देखा, जो खनिज मिट्टी से गुलाबी रंग के हो गए थे, जिनके अंग टेढ़े थे और जो जोर जोर से नाच रहे थे, और पहाड़ की चोटियों पर बने बगीचों को भी देखा, जो पूरी तरह लताओं से ढके हुए थे।

4.14.10

सिद्धानमरनारीभिर्मन्दारकुसुमाहतान्। धातुपाटलनिर्द्वारपयोदपटसंवृतान्॥ १०॥

siddhānamaranārībhirmandārakusumāhatān | dhātupāṭalanirdvārapayodapaṭasaṃvṛtān || 10 ||

And they saw Siddhas being pelted with mandara blossoms by immortal women, screened off by clouds like one unbroken curtain tinted pink by mineral ore.

उन्होंने सिद्धों को भी देखा, जिन पर देवांगनाएँ मंदार के फूल बरसा रही थीं, और जो बादलों के एक ऐसे बिना जोड़ के परदे से घिरे थे, जो खनिज मिट्टी से मानो गुलाबी हो गया हो।

4.14.11

तटानजनसंसर्गान्बौद्धान्प्रव्रजितानिव । सरितः कुन्दमन्दारपिनद्धलहरीघटाः । सागरोत्कतयेवात्तमधुमासप्रसाधनाः ॥ ११ ॥

taṭānjanasaṃsargānbauddhānpravrajitāniva | saritaḥ kundamandārapinaddhalaharīghaṭāḥ | sāgarotkata yevāttamadhumāsaprasādhanāḥ || 11 ||

They saw riverbanks dark as kohl, like Buddhist monks who had renounced the world. And the rivers themselves had their clustered waves strung with jasmine and mandara flowers, as if, longing for the sea, they had put on spring's finest ornaments to go and meet it.

उन्होंने नदियों के किनारे देखे, जो काजल जैसे काले थे, मानो घर बार छोड़ चुके बौद्ध भिक्षु हों। और नदियाँ खुद, उनकी लहरों के झुंड चमेली और मंदार के फूलों से गुँथे हुए थे, मानो समुद्र से मिलने की चाह में उन्होंने वसंत के सबसे सुंदर गहने पहन लिए हों।

4.14.12

पुष्पभारपिनद्धाङ्गान्वृक्षान्पवनकम्पितान् । क्षीबानिव मधुप्राप्तौ घूर्णान्मधुकरेक्षणान् ॥ १२ ॥

puṣpabhārapinaddhāṅgānvṛkṣānpavanakampitān | kṣībāniva madhuprāptau ghūrṇānmadhukarekṣaṇān || 12 ||

They saw trees too, their branches weighed down with flowers, swinging in the wind, reeling like people drunk on wine, with bees hovering over them like eyes.

उन्होंने पेड़ों को भी देखा, जिनकी डालियाँ फूलों के बोझ से झुकी हुई थीं, जो हवा में झूल रहे थे, और शराब पीकर मस्त हुए लोगों की तरह डोल रहे थे, जिन पर मंडराते भँवरे मानो आँखों जैसे लग रहे थे।

4.14.13

शैलराजश्रियं स्फीतां पश्यन्तौ तावितस्ततः । प्राप्तवन्तौ वसुमतीं पुरपत्तनमण्डिताम् ॥ १३ ॥

śailarājaśriyaṃ sphītāṃ paśyantau tāvitastataḥ | prāptavantau vasumatīṃ purapattanamaṇḍitām || 13 ||

Looking here and there at the rich splendor of the king of mountains, the two of them reached the earth, adorned with cities and towns.

पहाड़ों के राजा की भरपूर शोभा को इधर उधर देखते हुए, वे दोनों पृथ्वी पर आ पहुँचे, जो शहरों और नगरों से सजी हुई थी।

4.14.14

क्षणादवापतुस्तत्र पुष्पलोलतरङ्गिणीम् । समङ्गां सरितं साधु सर्वपुष्पमयीमिव ॥ १४ ॥

kṣaṇādavāpatustatra puṣpalolataraṅgiṇīm | samaṅgāṃ saritaṃ sādhu sarvapuṣpamayīmiva || 14 ||

In an instant they reached the river Samanga, its waves rippling with flowers, a river that seemed made entirely of blossoms.

एक ही पल में वे समङ्गा नदी के पास पहुँच गए, जिसकी लहरें फूलों से हिल रही थीं, मानो पूरी नदी फूलों से ही बनी हो।

4.14.15

शान्तेन्द्रियं समाधिस्थमचञ्चलमनोमृगम् । सुचिरादिव विश्रान्तं सुचिरश्रमशान्तये ॥ १५ ॥

śāntendriyaṃ samādhisthamacañcalamanomṛgam | sucirādiva viśrāntaṃ suciraśramaśāntaye || 15 ||

He was calm in his senses, seated deep in meditation, the restless deer of his mind grown still, resting as if after a very long effort, to lay to rest a long, deep weariness.

वह अपनी इंद्रियों से शांत था, गहरे ध्यान में बैठा था, उसके मन का चंचल हिरन भी शांत हो गया था, और वह ऐसे विश्राम कर रहा था मानो बहुत दिनों की थकान मिटाने के लिए बहुत देर बाद आराम कर रहा हो।

4.14.17

चिन्तयन्तमिवानन्ताश्चिरभुक्ताऽचिरोज्झिताः । संसारसागरगतीर्हर्षशोकनिरन्तराः ॥ १७ ॥

cintayantamivānantāścirabhuktā'cirōjjhitāḥ | saṃsārasāgaragatīrhṛṣaśōkanirantarāḥ || 17 ||

It was as if he were thinking about the endless turns of the ocean of worldly life, things held on to for a long time and then dropped in a moment, joy and sorrow following one after the other without a break.

ऐसा लगता था मानो वह संसार रूपी समुद्र के अनंत चक्करों के बारे में सोच रहा हो, वे चीज़ें जो बहुत दिनों तक भोगी जाती हैं पर एक पल में छूट जाती हैं, जहाँ खुशी और दुख एक के बाद एक बिना रुके आते रहते हैं।

4.14.18

नूनं निश्चलतां यातमतिभ्रमितचक्रवत् । अनन्तजगदावर्तविवर्तातिशयादिव ॥ १८ ॥

nūnaṃ niścalatāṃ yātamatibhramitacakravat | anantajagadāvartavivartātiśayādiva || 18 ||

He had truly become completely still, like a wheel spun so fast that it looks as if it is not moving at all, as if the endless spinning of this world, carried to its very extreme, had itself brought him to rest.

वह वाकई पूरी तरह से स्थिर हो गया था, जैसे कोई पहिया इतनी तेज़ी से घुमाया जाए कि वह रुका हुआ ही दिखने लगे, मानो इस संसार के अनंत चक्करों की अति ने ही उसे आखिरकार शांत कर दिया हो।

4.14.19

एकान्तसंस्थितं कान्तं कान्त्येकाकिनमाश्रितम् । उपशान्तेहसंभग्नचित्तसंभ्रमसंगमम् ॥ १९ ॥

ekāntasaṃsthitaṃ kāntaṃ kāntyekākinamāśritam | upaśāntehasaṃbhagnacittasaṃbhramasamgamam || 19 ||

He sat alone in a quiet place, beautiful, with nothing for company but his own radiance. Here in this world, every tie in him to a confused, troubled mind had been broken and calmed.

वह एक शांत, एकांत जगह में अकेला बैठा था, सुंदर था, और अपने ही तेज के सिवा उसके पास कोई साथी नहीं था। इस दुनिया में उसका उलझे और परेशान मन से हर नाता टूट चुका था और शांत हो चुका था।

4.14.20

निर्विकल्पसमाधिस्थं विरतं द्वन्द्ववृत्तितः । हसन्तमखिलां लोकगतिं शीतलया धिया ॥ २० ॥

nirvikalpasamādhisthaṃ viratam dvandvavṛttitaḥ | hasantamakhilāṃ lokagatiṃ śītalayā dhiyā || 20 ||

He was established in thought-free meditation, and had stopped reacting to opposites like pleasure and pain. With a cool, calm mind, he was laughing at the entire course of the world.

वह निर्विकल्प समाधि में स्थित था, और सुख दुख जैसी विपरीत चीज़ों पर प्रतिक्रिया करना उसने छोड़ दिया था। वह ठंडी, शांत बुद्धि से पूरी दुनिया के चाल चलन पर हँस रहा था।

4.14.21

विगताखिलवृत्तान्तं विगताशेषभोक्तृतम् । निरस्तकल्पनाजालमालम्बितमहापदम् ॥ २१ ॥

vigatākhilavṛttāntaṃ vigatāśeṣabhoktṛtam | nirastakalpanājālamālambitamahāpadam || 21 ||

Every worldly happening had left him behind. He was no longer, in any way, an experiencer of anything. He had thrown off the whole net of imagination, and had taken his place in the highest, greatest state.

दुनिया की हर घटना उससे पीछे छूट चुकी थी। वह अब किसी भी चीज़ का भोक्ता नहीं रह गया था। उसने कल्पना के पूरे जाल को फेंक दिया था, और सबसे ऊँची, सबसे बड़ी अवस्था में जगह पा ली थी।

4.14.22

अनन्तविश्रान्तिते पदे विश्रान्तमात्मनि । प्रतिबिम्बमगृह्णन्तं सितं मणिमिवास्थितम् ॥ २२ ॥

anantaviśrāntitate pade viśrāntamātmani | pratibimbamagṛhṇantaṃ sitaṃ maṇimivāsthitam || 22 ||

He was resting in his own Self, in a state that was itself one vast, endless rest. He took in no reflection of anything around him, sitting there like a clear white gem that nothing can stain.

वह अपने ही आत्मा में विश्राम कर रहा था, ऐसी अवस्था में जो खुद एक बड़ा, अनंत विश्राम ही थी। उसके भीतर आसपास की किसी चीज़ का कोई प्रतिबिंब नहीं उतरता था, वह वहाँ ऐसे बैठा था जैसे कोई निर्मल सफेद रत्न जिस पर कोई दाग नहीं लग सकता।

4.14.23

हेयोपादेयसंकल्पविकल्पाभ्यां समुज्झितम् । संप्रबुद्धमतिं धीरं ददर्श तनयं भृगुः ॥ २३ ॥

heyopādeyasaṃkalpavikalpābhyāṃ samujjhitam | saṃprabuddhamatiṃ dhīraṃ dadarśa tanayaṃ bhṛguḥ || 23 ||

Bhrigu saw his son, whose mind was now fully awake, steady and wise, who had let go of every notion of what to accept and what to reject.

भृगु ने अपने पुत्र को देखा, जिसका मन अब पूरी तरह जाग चुका था, जो स्थिर और बुद्धिमान था, और जिसने क्या स्वीकार करना है और क्या छोड़ना है, इस सोच विचार को पूरी तरह छोड़ दिया था।

4.14.24

तमालोक्य भृगोः पुत्रं कालो भृगुमुवाच ह । वाक्यमब्धिध्वनिनिभं तव पुत्रस्त्वसाविति ॥ २४ ॥

tamālokya bhṛgoḥ putraṃ kālo bhṛgumuvāca ha | vākyamabdhidhvaninibhaṃ tava putrastvasāviti || 24 ||

Seeing Bhrigu's son like this, Kala said to Bhrigu, in a voice as deep as the roar of the ocean, this one here is indeed your son.

भृगु के पुत्र को इस तरह देखकर काल ने भृगु से समुद्र की गर्जना जैसी गहरी आवाज़ में कहा, यह तुम्हारा ही बेटा है।

4.14.25

विबुध्यतामिति गिरा समाधेर्विरराम सः । भार्गवोऽम्भोदघोषेण शनैरिव शिखण्डभृत् ॥ २५ ॥

vibudhyatāmiti girā samādhervirarāma saḥ | bhārgavo'mbhodaghoṣeṇa śanairiva śikhaṇḍabhṛt || 25 ||

At the word wake up, he, the son of Bhrigu, slowly came out of his deep meditation, the way a peacock slowly stirs at the far off rumble of a cloud.

जाग जाओ यह शब्द सुनकर भृगु का पुत्र धीरे धीरे अपनी गहरी समाधि से बाहर आया, जैसे बादल की दूर की गड़गड़ाहट सुनकर मोर धीरे धीरे चौंकता है।

4.14.26

उन्मील्य नेत्रे सोऽपश्यदन्ते कालभृगू प्रभू । समोदयाविवायातौ देवौ शशिदिवाकरौ ॥ २६ ॥

unmīlya netre so'paśyadante kālabhṛgū prabhū | samodayāvivāyātau devau śaśidivākarau || 26 ||

Opening his eyes, he saw close by the two masters, Kala and Bhrigu, who had come together like the moon and the sun rising side by side.

आँखें खोलकर उसने पास ही दोनों स्वामियों, काल और भृगु को देखा, जो साथ साथ आए थे, जैसे चाँद और सूरज एक साथ उगते हैं।

4.14.27

कदम्बलतिकापीठादथोत्थाय ननाम तौ। समौ समागतौ कान्तौ विप्रौ हीरहराविव ॥ २७ ॥

kadambalatikāpīṭhādathottāya nanāma tau | samau samāgatau kāntau viprau hīraharāviva || 27 ||

Then he rose from his seat of kadamba vines and bowed to the two of them, matched in stature, arrived together, handsome brahmins, like Hari and Hara.

फिर वह कदंब की लताओं वाले अपने आसन से उठा और उन दोनों को प्रणाम किया, जो एक समान, साथ आए हुए, सुंदर ब्राह्मण थे, मानो हरि और हर हों।

4.14.28

मिथःकृतसमाचाराः शिलायां समुपाविशन्। मेरुपृष्ठे जगत्पूज्या ब्रह्मविष्णुहरा इव ॥ २८ ॥

mithaḥkṛtasamācārāḥ śilāyāṃ samupāviśan | merupṛṣṭhe jagatpūjyā brahmaviṣṇuharā iva || 28 ||

After greeting one another, all three sat down together on a rock on the ridge of Mount Meru, honoured by the whole world, like Brahma, Vishnu, and Shiva.

एक दूसरे का अभिवादन करने के बाद, तीनों मेरु पर्वत की चोटी पर एक चट्टान पर साथ बैठ गए, जो पूरी दुनिया के द्वारा पूजे जाते थे, मानो ब्रह्मा, विष्णु और शिव हों।

4.14.29

अथ शान्तजपो राम स समङ्गातटे द्विजः। तावुवाच वचः शान्तममृतस्यन्दसुन्दरम् ॥ २९ ॥

atha śāntajapo rāma sa samangātaṭe dvijaḥ | tāvuvāca vacaḥ śāntamamṛtasyandasundaram || 29 ||

Then, Rama, that brahmin, his recitation now stilled, sitting on the bank of the river Samanga, spoke peaceful words to the two of them, sweet as a stream of nectar.

फिर, हे राम, वह ब्राह्मण, जिसका जप अब शांत हो चुका था, समंगा नदी के किनारे बैठकर उन दोनों से शांत शब्दों में बोला, जो अमृत की धारा जैसे मीठे थे।

4.14.30

भवतोर्दर्शनेनाहमद्य निर्वृतिमागतः। सममागतयोर्लोके शीतलोष्णरुचोरिव ॥ ३० ॥

bhavatordarśanenāhamadya nirvṛtimāgataḥ | samamāgatayorloke śītaloṣṇarucoriva || 30 ||

By seeing the two of you today, I have found deep peace, as if the cool moon and the hot sun had come together in this world.

आज तुम दोनों को देखकर मुझे गहरी शांति मिली है, मानो ठंडा चाँद और गरम सूरज इस दुनिया में एक साथ आ गए हों।

4.14.31

यो न शास्त्रेण तपसा न ज्ञानेनापि विद्यया। विनष्टो मे मनोमोहः क्षीणोऽसौ दर्शनेन वाम् ॥ ३१ ॥

yo na śāstreṇa tapasā na jñānenāpi vidyayā | vinaṣṭo me manomohaḥ kṣīṇo'sau darśanena vām || 31 ||

The confusion of my mind, which no scripture, no penance, no knowledge, and no learning could destroy, has melted away simply from seeing the two of you.

मेरे मन का जो भ्रम न शास्त्र से मिटा, न तपस्या से, न ज्ञान से और न विद्या से, वह तुम दोनों को देखते ही मिट गया।

4.14.32

न तथा सुखयन्त्यन्तर्निर्मलामृतवृष्टयः । यथा प्रहर्षयन्त्येता महतामेव दृष्टयः ॥ ३२ ॥

na tathā sukhayantyantarnirmalāmṛtavṛṣṭayaḥ | yathā praharṣayantyetā mahatāmeva dṛṣṭayaḥ || 32 ||

Even showers of pure nectar inside the heart do not bring as much joy as the sight of great people does.

हृदय के अंदर गिरती अमृत की शुद्ध बूँदें भी उतना सुख नहीं देतीं, जितना बड़े लोगों को देखने से मिलता है।

4.14.33

चरणाभ्यामिमं देशं भवन्तौ भूरितेजसौ । कौ पवित्रितवन्तौ नः शशाङ्कार्काविवाम्बरम् ॥ ३३ ॥

caranābhyāmimaṃ deśaṃ bhavantau bhūritejasau | kau pavitritavantau naḥ śaśāṅkārkāvivāmbaram || 33 ||

You two, brimming with such greatness, have purified this land for us with your own feet, as the moon and the sun grace the sky. Who else could do that.

तुम दोनों, इतने तेजस्वी होकर, अपने पैरों से इस धरती को हमारे लिए पवित्र कर चुके हो, जैसे चाँद और सूरज आकाश को सुशोभित करते हैं। और कौन ऐसा कर सकता है।

4.14.34

इत्युक्तवन्तं प्रोवाच भृगुर्जन्मान्तरात्मजम् । स्मरात्मानं प्रबुद्धोऽसि नाज्ञोऽसीति रघूद्वह ॥ ३४ ॥

ityuktavantaṃ provāca bhṛgurjanmāntarātmajam | smarātmānaṃ prabuddho'si nājño'sīti raghūdvaha || 34 ||

Rama, Bhrigu then said to his son from another birth, remember who you are, you are awake, you are not ignorant.

हे राम, तब भृगु ने अपने पूर्वजन्म के पुत्र से कहा, अपने आप को याद करो, तुम जागे हुए हो, अज्ञानी नहीं हो।

4.14.35

प्रबोधितोऽसौ भृगुणा जन्मान्तरदशां निजाम् । मुहूर्तमात्रं सस्मार ध्यानोन्मीलितलोचनः ॥ ३५ ॥

prabodhito'sau bhṛguṇā janmāntaradaśāṃ nijām | muhūrtamātraṃ sasmāra dhyānounmīlitalocanaḥ || 35 ||

Reminded by Bhrigu, he entered meditation with his eyes half open, and for just one moment he remembered his own condition from an earlier birth.

भृगु द्वारा याद दिलाए जाने पर उसने आँखें खुली रखते हुए ध्यान में प्रवेश किया, और एक ही पल में उसे अपने पिछले जन्म की अपनी स्थिति याद आ गई।

4.14.36

अथासौ विस्मयात्स्मेरमुखो मुदितमानसः । वितर्कमन्थरां वाचमुवाच वदतां वरः ॥ ३६ ॥

athāsau vismayātsmeramukho muditamānasaḥ | vitarkamantharāṃ vācamuvāca vadatāṃ varaḥ || 36 ||

Then, his face smiling in wonder and his heart full of joy, he, the finest of speakers, spoke, his words slow with deep thought.

फिर, आश्चर्य से मुस्कुराते हुए और मन में खुशी भरे, वह, सबसे अच्छा वक्ता, गहरे विचार में डूबे धीमे शब्दों में बोला।

4.14.37

जगत्यविदितारम्भा नियतिः परमात्मनः । यद्वशादिदमाभोगि जगच्चक्रं प्रवर्तते ॥ ३७ ॥

jagatyaviditārambhā niyatiḥ paramātmanaḥ | yadvashādidamābhogi jagaccakraṃ pravartate || 37 ||

In this world, the law of the highest self has no known beginning. It is by its power that this whole wheel of the world, filled with its pleasures, keeps turning.

इस दुनिया में परम आत्मा के नियम की शुरुआत किसी को पता नहीं। उसी की ताकत से यह पूरा संसार चक्र, जो सुखों से भरा है, घूमता रहता है।

4.14.38

ममानन्तान्यतीतानि जन्मान्यविदितान्यपि । दशाफलान्यनन्तानि कल्पान्तकलितादिव ॥ ३८ ॥

mamānantānyatītāni janmānyaviditānyapi | daśāphalānyanantāni kalpāntakalitādiva || 38 ||

I have had endless past births, even ones I do not know of, each one carrying endless results of its own condition, as though counted from the end of a whole cosmic age.

मेरे अनगिनत पिछले जन्म रहे हैं, कुछ तो ऐसे भी जिनके बारे में मुझे पता भी नहीं, और हर एक के अपने हालात के अनगिनत नतीजे रहे हैं, मानो किसी पूरे कल्प के अंत से गिने गए हों।

4.14.39

दृष्टाः कठिनसंरम्भा विभवोऽप्यर्जनभ्रमाः । विहृतं वीतशोकासु चिरं मेरुस्थलीषु च ॥ ३९ ॥

dṛṣṭāḥ kaṭhinasamrambhā vibhavo'pyarjanabhramāḥ | vihṛtaṃ vītaśokāsu ciraṃ merusthalīṣu ca || 39 ||

I have seen fierce struggles, and the illusion of chasing after wealth and power, and I have also spent a long time wandering, at ease, through the sorrow free lands of Mount Meru.

मैंने कठोर संघर्ष देखे हैं, और धन संपत्ति कमाने का भ्रम भी देखा है, और मेरु पर्वत के दुख रहित प्रदेशों में लंबे समय तक चैन से घूमा भी हूँ।

4.14.40

पीतमामोदि मन्दारकेसरारुणितं पयः । मन्दाकिन्याः सकह्लारं तटीष्वमरभूभृतः ॥ ४० ॥

pītamāmodi mandārakeśarāruṇitaṃ payaḥ | mandākinyāḥ sakahlāraṃ taṭīṣvamarabhūbhṛtaḥ || 40 ||

On the banks of the river Mandakini on the mountain of the gods, I have drunk fragrant water, reddened by the pollen of coral tree flowers and mixed with white lotuses.

देवताओं के पर्वत पर मंदाकिनी नदी के किनारे मैंने सुगंधित पानी पिया है, जो मंदार फूलों के पराग से लाल हो गया था और सफ़ेद कमलों से मिला हुआ था।

4.14.41

भ्रान्तं मन्दरकुञ्जेषु फुल्लहेमलतालिषु । मेरोः कल्पतरुच्छायापुष्पसुन्दरसानुषु ॥ ४१ ॥

bhrāntaṃ mandarakuñjeṣu phullahemlatāliṣu | meroḥ kalpataruśchāyāpuṣpasundarasānuṣu || 41 ||

I have wandered among the groves of Mount Mandara, through rows of blooming golden vines, and on the ridges of Mount Meru, beautiful with flowers in the shade of the wish granting trees.

मैं मंदार पर्वत के बागों में, खिली हुई सुनहरी लताओं की कतारों के बीच घूमा हूँ, और मेरु पर्वत की उन चोटियों पर भी, जो कल्पवृक्षों की छाया में फूलों से सुंदर लगती हैं।

4.14.42

न तदस्ति न यद्भुक्तं न तदस्ति न यत्कृतम्। न तदस्ति न यद्दृष्टमिष्टानिष्टासु वृत्तिषु ॥ ४२ ॥

na tadasti na yadbhuktaṃ na tadasti na yatkṛtam| na tadasti na yaddṛṣṭamiṣṭāniṣṭāsu vṛttiṣu|| 42||

There is nothing I have not tasted, nothing I have not done, and nothing I have not seen, whether in pleasant times or in unpleasant ones.

ऐसा कुछ नहीं जो मैंने चखा न हो, ऐसा कुछ नहीं जो मैंने किया न हो, और ऐसा कुछ नहीं जो मैंने देखा न हो, चाहे वह सुख के पल रहे हों या दुख के।

4.14.43

ज्ञातं ज्ञातव्यमधुना दृष्टं द्रष्टव्यमक्षतम्। विश्रान्तोऽथचिरं श्रान्तो गतो मे सकलो भ्रमः ॥ ४३ ॥

jñātaṃ jñātavyamadhunā dṛṣṭaṃ draṣṭavyamakṣatam| viśrānto'thaciraṃ śrānto gato me sakalo bhramaḥ|| 43||

Now I have come to know all that was to be known, and to see all that was to be seen, fully and without any loss. After being tired for so long, I am now at rest. All my confusion is gone.

अब मुझे वह सब पता चल गया है जो जानने योग्य था, और वह सब देख लिया है जो देखने योग्य था, पूरी तरह और बिना किसी कमी के। इतने लंबे समय तक थका रहने के बाद अब मुझे चैन मिला है। मेरा सारा भ्रम खत्म हो गया है।

4.14.44

उत्तिष्ठ तात गच्छामः पश्यामो मन्दरस्थिताम्। तां तनुं तावदाशुष्कां शुष्कां वनलतामिव ॥ ४४ ॥

uttiṣṭha tāta gacchāmaḥ paśyāmo mandarasthitām| tāṃ tanuṃ tāvadāśuṣkāṃ śuṣkāṃ vanalatāmiva|| 44||

Get up, father, let us go. Let us go see that body of mine on Mount Mandara. By now it must be withered and dry, like a dried up forest vine.

उठो पिताजी, चलो चलें। चलो वह मेरा शरीर देखें जो मंदार पर्वत पर पड़ा है। अब तक वह मुरझा कर सूख गया होगा, जैसे जंगल की सूखी हुई लता।

4.14.45

न समीहितमस्तीह नासमीहितमस्ति मे। नियते रचनां द्रष्टुं केवलं विहराम्यहम् ॥ ४५ ॥

na samīhitamastīha nāsamīhitamasti me| niyate racanāṃ draṣṭuṃ kevalaṃ viharāmyaham|| 45||

I have nothing here that I want, and nothing that I do not want. I simply move about, only to watch the workings of destiny.

यहाँ मुझे न तो कुछ चाहिए और न ही कुछ न चाहिए। मैं तो बस नियति का खेल देखने के लिए घूमता रहता हूँ।

4.14.46

यदतिसुभगमार्यसेवितं तत्स्थिरमनुयामि यदेकभावबुद्ध्या। तदलमभिमता मतिर्ममास्तु प्रकृतमिमं व्यवहारमाचरामि ॥ ४६ ॥

yadatisubhagamāryasevitaṃ tatsthiramanuyāmi yadekabhāvabuddhyā| tadalamabhimatā matirmamāstu prakṛtamimaṃ vyavahāramācarāmi|| 46||

I follow whatever is truly good and is practiced by noble people, whatever lasts, holding it with a mind fixed on the one single truth. Let my mind be content with just that much resolve, while I go on carrying out these ordinary everyday affairs.

जो सचमुच अच्छा है और जिसे भले लोग अपनाते हैं, जो टिकाऊ है, उसी का मैं पालन करता हूँ, एक ही सच पर मन टिकाकर। मेरा मन बस इतने ही निश्चय से संतुष्ट रहे, और मैं यह सामान्य रोज़मर्रा का जीवन चलाता रहूँ।

Chapter 15

4.15.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । विचारयन्तस्तत्त्वज्ञा इति ते जागतीर्गतीः । समङ्गायास्तटात्तस्मात्प्रचेलुश्चञ्चलासवः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | vicārayantastattvajñā iti te jāgatīrgatīḥ | samaṅgāyāstataṭāttasmātpraceluścañcalāsavaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said, thinking over the ways of the world like this, those wise knowers of truth set out from the bank of the river Samanga, moving fast, full of restless energy.

श्री वशिष्ठ बोले, इस तरह दुनिया के तौर तरीकों के बारे में सोचते हुए, वे सच को जानने वाले समझदार लोग समंगा नदी के किनारे से चल पड़े, तेज़ी से, बेचैन जोश के साथ।

4.15.2

क्रमादाकाशमाक्रम्य निर्गत्याम्बुदकोटरैः । संप्रापुः सिद्धमार्गेण क्षणान्मन्दरकन्दरम् ॥ २ ॥

kramādākāśamākramya nirgatyāmbudakotaraiḥ | saṃprāpuḥ siddhamārgeṇa kṣaṇānmandarakandaram || 2 ||

Step by step they rose into the sky, passed out through gaps in the clouds, and by the path the siddhas use, in a moment they reached a cave on Mount Mandara.

धीरे धीरे वे आकाश में ऊपर उठे, बादलों के बीच के खाली हिस्सों से होकर निकले, और सिद्धों वाले रास्ते से, पल भर में मंदार पर्वत की एक गुफा में पहुंच गए।

4.15.3

अधित्यकायां तस्याद्रेरार्द्रपर्णावगुण्ठिताम् । ददर्श भार्गवः शुष्कां पूर्वजन्मोद्भवां तनुम् ॥ ३ ॥

adhityakāyāṃ tasyādrerārdraparṇāvaguṇṭhitām | dadarśa bhārgavaḥ śuṣkāṃ pūrvajanmodbhavāṃ tanum || 3 ||

On the high ground of that mountain, hidden under wet leaves, Bhargava saw a dried up body, the body he had had in an earlier birth.

उस पर्वत की ऊंची सपाट जगह पर, गीली पत्तियों के नीचे छिपा हुआ, भार्गव ने एक सूखा हुआ शरीर देखा, वह शरीर जो उनका पिछले जन्म में था।

4.15.4

उवाचेदं च हे तात तन्वी तनुरियं हि सा । या त्वया सुखसंभोगैः पुरा समभिलालिता ॥ ४ ॥

uvācedaṃ ca he tāta tanvī tanurayaṃ hi sā | yā tvayā sukhasaṃbhogaiḥ purā samabhilālitā || 4 ||

He said this. Dear one, this slender body is indeed the one you once enjoyed with such delight.

उन्होंने यह कहा, हे प्रिय, यह पतला सा शरीर वही है जिसे तुमने पहले बड़े सुख से भोगा था।

4.15.5

इयं सा मत्तनुर्यस्याः कर्पूरागुरुचन्दनैः । अङ्गमङ्गीकृतस्नेहा धात्री चिरमलेपयत् ॥ ५ ॥

iyam sā mattanuryasyāḥ karpūrāgurucandanaiḥ | aṅgamaṅgīkṛtasnehaḥ dhātrī ciramalepayat || 5 ||

This is that body of mine whose limbs a loving nurse rubbed for a long time with camphor, aloe wood, and sandalwood.

यह मेरा वही शरीर है जिसके अंगों पर एक प्यार करने वाली धाय ने लंबे समय तक कपूर, अगर और चंदन मला था।

4.15.6

इयं सा मत्तनुर्यस्या मन्दारकुसुमोत्करैः । रचिता शीतला शय्या मेरूपवनभूमिषु ॥ ६ ॥

iyam sā mattanuryasyā mandārakusumotkaraiḥ | racitā śītalā śayyā merūpavanabhūmiṣu || 6 ||

This is that body of mine for whom a cool bed of heaped up coral tree flowers was made in the gardens at the foot of Mount Meru.

यह मेरा वही शरीर है जिसके लिए मेरु पर्वत की तलहटी वाले बागों में मंदार के फूलों के ढेर से एक ठंडा बिस्तर बनाया गया था।

4.15.7

इयं सा मत्तनुर्मत्तदेवस्त्रीगणलालिता । सरीसृपमुखक्षुण्णा पश्य शेते धरातले ॥ ७ ॥

iyam sā mattanurmattadevastrīgaṇalālitā | sarīsṛpamukhakṣuṇṇā paśya śete dharātale || 7 ||

This is that body of mine that groups of love drunk heavenly women once petted. Look now, gnawed by the mouths of crawling creatures, it lies on the bare ground.

यह मेरा वही शरीर है जिसे प्यार में डूबी स्वर्ग की स्त्रियों के झुंड दुलारते थे। अब देखो, रेंगने वाले जीवों के मुंह से कुतरा हुआ, यह खुली ज़मीन पर पड़ा है।

4.15.8

चन्दनोद्यानखण्डेषु मम तन्वा ययानया । चिरं विलसितं सेयं शुष्ककङ्कालतां गता ॥ ८ ॥

candanodyānakhaṇḍeṣu mama tanvā yayānayā | ciraṃ vilasitaṃ seyaṃ śuṣkakaṅkālatāṃ gatā || 8 ||

In plots of sandalwood gardens I once played for so long with this very body of mine, and that same body has now become a dry skeleton.

चंदन के बागों के हिस्सों में मैंने बहुत लंबे समय तक इसी शरीर के साथ खेल किया था, और वही शरीर अब सूखा हुआ ढांचा बन गया है।

4.15.9

सुराङ्गनाङ्गसंसर्गादुत्तुङ्गानङ्गभङ्गया । चेतोवृत्त्या रहितया तन्वाद्य मम शुष्यते ॥ ९ ॥

surāṅganāṅgasasarāduttuṅgānaṅgabhaṅgayā | cetovṛttyā rahitayā tanvādya mama śuṣyate || 9 ||

This body of mine once rose to the highest waves of passion through touching the limbs of heavenly women. Today, with no movement of mind left in it, it is drying up.

स्वर्ग की स्त्रियों के अंगों को छूने से यह मेरा शरीर कभी वासना की सबसे ऊंची लहरों तक उठा था। आज, इसमें मन की कोई हलचल नहीं बची, यह सूख रहा है।

4.15.10

तेषु तेषु विलासेषु तासु तासु दशासु च । तथा तद्भावनाबन्धः कथं स्वस्थोऽसि देहक ॥ १० ॥

teṣu teṣu vilāseṣu tāsu tāsu daśāsu ca | tathā tadbhāvanābandhaḥ kathaṃ svastho'si dehaka || 10 ||

Caught up in this pleasure and that, in this state and that, and bound each time by clinging to it, dear body, how could you ever have truly been at peace?

इस सुख में उस सुख में, इस हाल में उस हाल में फंसकर, और हर बार उससे चिपककर, हे शरीर, तू सच में कभी चैन से कैसे रह सकता था?

4.15.11

हा तनो शवनामासि तापसंशोषमागता । कङ्कालतां प्रयातासि मां भीषयसि दुर्भगे ॥ ११ ॥

hā tano śavanāmāsi tāpasaṃśoṣamāgatā | kaṅkālatāṃ prayātāsi māṃ bhīṣayasi durbhage || 11 ||

Alas, body! Now you carry the name corpse. You have dried up completely from the heat, you have turned into a bare skeleton, and you frighten me, you poor wretched thing.

हाय शरीर! अब तू लाश कहलाता है। तू गर्मी से पूरी तरह सूख गया है, तू निरा ढांचा बन गया है, और तू मुझे डरा रहा है, बेचारे अभागे।

4.15.12

देहेनाहंविलासेषु येनैव मुदितोऽभवम् । कङ्कालतामुपगतात्तस्मादेव बिभेम्यहम् ॥ १२ ॥

dehenāhaṃvilāseṣu yenaiava mudito'bhavam | kaṅkālatāmupagatāttasmādeva bibhemyaham || 12 ||

The very body through which I once took delight in pleasures, that same body, now turned into a bare skeleton, is what frightens me.

जिस शरीर से मैं कभी सुखों में खुश हुआ करता था, वही शरीर अब निरा ढांचा बनकर मुझे डरा रहा है।

4.15.13

ताराजालसमाकारो यत्र हारोऽभवत्पुरा । ममोरसि निलीयन्ते तत्र पश्य पिपीलिकाः ॥ १३ ॥

tārājālasamākāro yatra hāro'bhavatpurā | mamorasi nilīyante tatra paśya pipīlikāḥ || 13 ||

Look, where a necklace like a net of stars once lay, there on my chest, ants now creep and hide.

देखो, जहां कभी तारों के जाल जैसा हार पड़ा रहता था, वहां मेरी छाती पर अब चींटियां छिपती फिर रही हैं।

4.15.14

द्रवत्काञ्चनकान्तेन लोभं नीता वराङ्गनाः । येन मद्वपुषा तेन पश्य कङ्कालतोह्यते ॥ १४ ॥

dravatkāñcanakāntena lobhaṃ nītā varāṅganāḥ | yena madvapuṣā tena paśya kaṅkālatohyate || 14 ||

Look, the very body of mine that once, glowing like melted gold, drew beautiful women into desire, now carries nothing but a bare skeleton.

देखो, मेरा वही शरीर जो कभी पिघले सोने जैसी चमक से सुंदर स्त्रियों को लालच में डाल देता था, अब सिर्फ एक ढांचा ढो रहा है।

4.15.15

पश्य मे विततास्येन तापसंशुष्ककृत्तिना । मत्कङ्कालकुवक्रेण वित्रास्यन्ते वने मृगाः ॥ १५ ॥

paśya me vitatāsyena tāpasaṃśuṣkakṛttinā | matkaṅkālakuvakreṇa vitrāsyante vane mṛgāḥ || 15 ||

Look, with its mouth hanging open and its skin dried up by the heat, this crooked, twisted skeleton of mine frightens the deer in the forest.

देखो, मुंह फैलाए, गर्मी से सूखी खाल के साथ, मेरे इस टेढ़े मेढ़े ढांचे से जंगल के हिरण डर जाते हैं।

4.15.16

पश्यामि संशुष्कतया शवोदरदरी मम । प्रकाशार्कांशुजालेन विवेकेनेव शोभते ॥ १६ ॥

paśyāmi saṃśuṣkatayā śavodaradarī mama | prakāśārkāṃśujālena vivekeneva śobhate || 16 ||

I see the hollow, cave like belly of my corpse, dried through and through. Lit up by streams of bright sunlight, it shines as if lit up by wisdom itself.

मैं अपनी लाश के पेट की गुफा जैसी खोखली जगह को देखता हूं, जो पूरी तरह सूख चुकी है। तेज़ धूप की किरणों से जगमगाती हुई, यह मानो समझ की रोशनी से चमक रही है।

4.15.17

मत्तनुः परिशुष्केयं स्थितोत्तानाचलोपले । वैराग्यं नयतीवात्मतुच्छत्वेनान्तरं सताम् ॥ १७ ॥

mattanuḥ pariśuṣkeyaṃ sthitottānācalopale | vairāgyaṃ nayatīvātmatucchatvenāntaraṃ satām || 17 ||

This withered body of mine, lying stretched out on a mountain rock, seems by its own utter smallness to turn the hearts of good people toward true renunciation.

मेरा यह सूखा हुआ शरीर, पहाड़ की चट्टान पर फैला पड़ा, अपनी तुच्छता से मानो अच्छे लोगों के मन को सच्चे वैराग्य की ओर मोड़ रहा है।

4.15.18

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धलोभाद्विमुक्तया । निर्विकल्पसमाध्येव तदेतच्छुष्यते गिरौ ॥ १८ ॥

śabdarūparasasparśagandhalobhādvimuktayā | nirvikalpasamādhyeva tadetacchuṣyate girau || 18 ||

Freed now from all craving for sound, sight, taste, touch, and smell, this body of mine is drying up here on the mountain as if sitting in a meditation beyond all thought.

आवाज़, रूप, स्वाद, स्पर्श और गंध की हर चाह से मुक्त होकर, यह मेरा शरीर इस पहाड़ पर मानो हर विचार से परे किसी समाधि में बैठा हुआ सूख रहा है।

4.15.19

मुक्ताचित्तपिशाचेन नूनं सुखमिवास्थिता । तनुर्दैवतभङ्गेभ्यो न बिभेति मनागपि ॥ १९ ॥

muktācittapiśācena nūnaṃ sukhamivāsthitā | tanurdaiavata bhaṅgebhyo na bibheti manāgapi || 19 ||

Having thrown off the demon that is the mind, this body now rests as if truly at ease. It no longer fears even the smallest blow of fate.

मन नाम के भूत को उतार फेंककर, यह शरीर अब मानो सचमुच चैन से टिका है। यह अब भाग्य की छोटी से छोटी चोट से भी नहीं डरता।

4.15.20

संशान्ते चित्तवेताले यामानन्दकलां तनुः । याति तामपि राज्येन जागतेन न गच्छति ॥ २० ॥

saṃśānte cittavetāle yāmānandakalāṃ tanuḥ | yāti tāmapi rājyena jāgatena na gacchati || 20 ||

Once the ghost that is the mind has been fully stilled, the body reaches a measure of bliss that not even rule over the whole world can give.

जब मन नाम का प्रेत पूरी तरह शांत हो जाता है, तो शरीर आनंद के जिस हिस्से तक पहुंचता है, वहां तक पूरी दुनिया का राज भी नहीं पहुंचा सकता।

4.15.21

पश्य विश्रान्तसंदेहं विगताशेषकौतुकम् । निरस्तकलनाजालं सुखं शेते कथं वने ॥ २१ ॥

paśya viśrāntasaṃdehaṃ vigatāśeṣakautukam | nirastakalanājālaṃ sukhaṃ śete kathaṃ vane || 21 ||

Look how it lies here in the forest at ease, all doubt put to rest, all curiosity gone, every web of imagining thrown off.

देखो यह जंगल में कैसे चैन से पड़ा है, हर शक मिट चुका है, हर उत्सुकता जा चुकी है, कल्पना का हर जाल उतर चुका है।

4.15.22

चित्तमर्कटसंरम्भसंक्षुब्धः कायपादपः । तथा वेगेन चलति यथाऽऽमूलान्निकृन्तति ॥ २२ ॥

cittamarkaṭasaṃrambhasaṃkṣubdhaḥ kāyapādapaḥ | tathā vegena calati yathā''mūlānnikṛntati || 22 ||

The body is a tree, and the mind is a monkey. When that monkey rages and shakes it, the tree sways so hard that it tears itself up by the very roots.

शरीर एक पेड़ है, और मन एक बंदर है। जब वह बंदर गुस्से में आकर उसे हिलाता है, तो पेड़ इतनी ज़ोर से हिलता है कि वह जड़ से ही उखड़ जाता है।

4.15.23

चित्तानर्थविमुक्तोऽद्रौ गजाभ्रहरिविग्रहम् । नाद्य पश्यति मे देहः परानन्द इव स्थितः ॥ २३ ॥

cittānarthavimukto''drau gajābhrahari vigraham | nādya paśyati me dehaḥ parānanda iva sthitaḥ || 23 ||

Freed from the mischief of the mind, my body no longer sees, in the clouds over this mountain, shapes like an elephant or a lion. Today it rests as if in the highest bliss.

मन की शरारत से मुक्त होकर, मेरा शरीर अब इस पहाड़ के ऊपर बादलों में हाथी या शेर जैसी शक्लें नहीं देखता। आज यह मानो सबसे ऊंचे आनंद में टिका हुआ है।

4.15.24

सर्वाशाज्वरसंमोहमिहिकाशरदागमम् । अचित्तत्वं विना नान्यच्छ्रेयः पश्यामि जन्तुषु ॥ २४ ॥

sarvāśājvarasaṃmohami hikāśaradāgamam | acittatvaṃ vinā nānyacchreyaḥ paśyāmi jantuṣu || 24 ||

The feverish delusion of every desire is like fog rolling in with the cold season. Apart from being entirely free of the mind, I see nothing else that is truly good for any living being.

हर चाह का बुखार जैसा भ्रम सर्दी के मौसम के साथ आने वाले कोहरे जैसा है। मन से पूरी तरह मुक्त होने के अलावा, मुझे किसी भी जीव के लिए और कोई सच्ची भलाई नज़र नहीं आती।

4.15.25

त एव सुखसंभोगसीमान्तं समुपागताः । महाधिया शान्तधियो ये याता विमनस्कताम् ॥ २५ ॥

ta eva sukhasaṃbhogasīmāntaṃ samupāgatāḥ | mahādhiyā śāntadhiyo ye yātā vimanaskatām || 25 ||

Only those whose minds have grown calm through great wisdom, and who have reached the state where no thoughts stir, arrive at the very edge of happiness.

जिनकी बुद्धि बड़ी समझ से शांत हो गई है, और जो बिना विचार वाली अवस्था तक पहुँच गए हैं, वही लोग सुख के सबसे आखिरी छोर तक पहुँचते हैं।

4.15.26

सर्वदुःखदशामुक्तां संस्थितां विगतज्वराम् । दिष्ट्या पश्याम्यमननां वने तनुमिमामहम् ॥ २६ ॥

sarvaduḥkhadaśāmuktāṃ saṃsthitāṃ vigatajvarām | diṣṭyā paśyāmyamananāṃ vane tanumimām aham || 26 ||

By good luck, I see this body here in the forest, free from every kind of suffering, calm, free from mental burning, and without thought.

अच्छी बात है कि मैं इस शरीर को यहाँ जंगल में देख रहा हूँ, यह हर तरह के दुख से मुक्त है, शांत है, मन की जलन से रहित है, और सोच-विचार से खाली है।

4.15.27

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ भार्गवेण तदा किल । सुबहून्युपभुक्तानि शरीराणि पुनःपुनः ॥ २७ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvadharmajña bhārgaveṇa tadā kila | subahūnyupabhukttāni śarīrāṇi punaḥpunaḥ || 27 ||

Rama said, lord, you who know all the codes of right conduct, back then Bhargava took on and used many, many bodies, one after another.

श्रीराम ने कहा, हे भगवन, आप हर धर्म को जानने वाले हैं, भार्गव ने उस समय बहुत सारे शरीर बार-बार लेकर भोगे थे।

4.15.28

भृगुणोत्पादिते काये तत्तस्मिंस्तस्य किं पुनः । महानतिशयो जातः परिदेवनमेव वा ॥ २८ ॥

bhṛguṇotpādite kāye tattasmiṃstasya kiṃ punaḥ | mahānatisayo jātaḥ paridevanameva vā || 28 ||

In the body that Bhrigu produced, what more happened to him there. Did some great wonder occur, or was it only grief.

भृगु ने जो शरीर बनाया था, उसमें आगे उसके साथ क्या हुआ। क्या कोई बड़ा अचरज हुआ, या सिर्फ दुख हुआ।

4.15.29

श्रीवसिष्ठ उवाच । शुक्रस्य कलना राम यासौ जीवदशां गता । कर्मात्मिका समुत्पन्ना भृगोर्भार्गवरूपिणी ॥ २९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śukrasya kalanā rāma yāsau jīvadaśāṃ gatā | karmātmikā samutpannā bhṛgorbhārgavarūpiṇī || 29 ||

Vasishtha said, Rama, that flicker of thought belonging to Shukra, which had reached the state of a living being, was born as a thing made of past action, taking the shape of Bhrigu's son Bhargava.

वसिष्ठ बोले, हे राम, शुक्र का वह सूक्ष्म विचार, जो जीव की अवस्था में पहुँच गया था, कर्म से बना हुआ जन्मा और भृगु के पुत्र भार्गव के रूप में प्रकट हुआ।

4.15.30

सा हीदंप्रथमत्वेन समुपेत्य परात्पदात् । भूताकाशपदं प्राप्य वातव्यावलिता सती ॥ ३० ॥

sā hīdaṃprathamatvena samupetya parātpadāt | bhūtākāśapadaṃ prāpya vātavyāvalitā satī || 30 ||

That thought, coming down from the highest state as though for the very first time, first reached the stage of empty space, and then mixed together with wind.

वह विचार, मानो पहली बार परम अवस्था से नीचे आकर, पहले खाली आकाश की अवस्था में पहुँचा, फिर हवा के साथ मिल गया।

4.15.31

प्राणापानप्रवाहेण प्रविश्य हृदयं भृगोः । क्रमेण वीर्यतामेत्य संपन्नौशनसी तनुः ॥ ३१ ॥

prāṇāpānapravāheṇa praviśya hṛdayaṃ bhṛgoḥ | krameṇa vīryatāmetya saṃpannaauśanasī tanuḥ || 31 ||

Entering Bhrigu's heart along with the flow of the in breath and the out breath, it slowly turned into seed, and so the body of Ushanas was formed.

साँस के अंदर-बाहर जाने की धारा के साथ भृगु के हृदय में घुसकर, वह धीरे-धीरे वीर्य बन गया, और इस तरह उशना का शरीर बना।

4.15.32

विहितब्राह्मसंस्कारा तत्र सा पितुरग्रगा । कालेन महता प्राप्ता शुष्ककङ्कालरूपताम् ॥ ३२ ॥

vihitabrāhmasaṃskārā tatra sā pituragragā | kālena mahatā prāptā śuṣkakaṅkālarūpatām || 32 ||

There, after the proper brahmin rites were done for it, that body, the first child of the father, after a long time turned into a dry skeleton.

वहाँ उसके लिए ब्राह्मण के सारे संस्कार पूरे होने के बाद, पिता की उस पहली संतान का शरीर, बहुत समय बीतने पर सूखे कंकाल में बदल गया।

4.15.33

इदंप्रथममायाता यदासौ ब्रह्मणस्तनुः । अतस्तां प्रति शुक्रेण तदा तत्परिदेवितम् ॥ ३३ ॥

idaṃprathamamāyātā yadāsau brahmaṇastanuḥ | atastāṃ prati śukreṇa tadā tatparidevitam || 33 ||

Because that brahmin's body had come into being as if for the very first time, Shukra grieved over it at that time.

क्योंकि ब्राह्मण का वह शरीर मानो पहली बार बना था, इसलिए शुक्र ने उस समय उसके लिए विलाप किया।

4.15.34

वीतरागोऽप्यनिच्छोऽपि समङ्गाविप्ररूपवान्। स शुशोच तनुं शुक्रः स्वभावो ह्येष देहजः ॥ ३४ ॥

vītarāgo'pyaniccho'pi samāṅgāviprarūpavān | sa śuśoca tanuṃ śukraḥ svabhāvo hyeṣa dehajaḥ || 34 ||

Even though Shukra had no passion and no desire left, and had the full form of a brahmin with every limb, he still grieved for the body. This is simply the nature that comes from having a body.
शुक्र को न कोई राग था न कोई इच्छा, और उसका शरीर पूरी तरह ब्राह्मण जैसा ही था, फिर भी वह उस शरीर के लिए दुखी हुआ। यह तो बस शरीर पाने से आने वाला स्वभाव है।

4.15.35

ज्ञस्याज्ञस्य च देहस्य यावद्देहमयं क्रमः। लोकवद्व्यवहारोऽयं सक्त्यासक्त्याथवा सदा ॥ ३५ ॥

jñasyājñasya ca dehasya yāvaddēhamayaṃ kramaḥ | lokavadvyavahāro'yaṃ saktyāsaktyāthavā sadā || 35 ||

As long as the body's course goes on, both the one who knows the truth and the one who does not know it behave like ordinary people in the world, whether attached or detached, always.
जब तक शरीर की यह चाल चलती रहती है, ज्ञानी हो या अज्ञानी, दोनों का व्यवहार दुनिया के आम लोगों जैसा ही दिखता है, चाहे वे किसी चीज़ से जुड़े हों या न जुड़े हों, हमेशा।

4.15.36

ये परिज्ञातगतयो ये चाज्ञाः पशुधर्मिणः। लोकसंव्यवहारेषु ते स्थिता लोकजालवत् ॥ ३६ ॥

ye parijñātagatayo ye cājñāḥ paśudharmiṇaḥ | lokasaṃvyavahāreṣu te sthitā lokajālavat || 36 ||

Those who fully know where they are going, and those who are ignorant and live like animals, both look the same in the everyday business of the world, as if both were caught in the world's net.
जिन्होंने सच्चाई को पूरी तरह जान लिया है, और जो अज्ञानी होकर पशु जैसा जीवन जीते हैं, दोनों ही रोज़मर्रा की दुनियादारी में एक जैसे दिखते हैं, मानो दोनों संसार के जाल में फँसे हों।

4.15.37

व्यवहारे यथैवाज्ञस्तथैवाखिलपण्डितः। वासनामात्रभेदोऽत्र कारणं बन्धमोक्षदम् ॥ ३७ ॥

vyavahāre yathaivājñastathaivākhilapaṇḍitaḥ | vāsanāmātrabhedo'tra kāraṇaṃ bandhamokṣadam || 37 ||

In outward conduct, the wise man behaves exactly like the ignorant one. Here the only difference is in their inner mental habits, and that difference is what causes bondage or freedom.
बाहरी व्यवहार में समझदार आदमी भी अनजान आदमी जैसा ही दिखता है। यहाँ बस उनकी भीतरी आदतों और वासनाओं का फर्क होता है, और यही फर्क बंधन या मुक्ति की वजह बनता है।

4.15.38

यावच्छरीरं तावद्धि दुःखे दुःखं सुखे सुखम्। असंसक्तधियो धीरा दर्शयन्त्यप्रबुद्धवत् ॥ ३८ ॥

yāvaccharīraṃ tāvaddhi duḥkhe duḥkhaṃ sukhe sukham | asaṃsaktadhiyo dhīrā darśayantyaprabuddhavat || 38 ||

As long as there is a body, there is suffering in suffering and happiness in happiness. Even steady people whose minds are not attached show this, as if they too were not awake to the truth.
जब तक शरीर है, तब तक दुख में दुख महसूस होता है और सुख में सुख महसूस होता है। जिनका मन किसी चीज़ से जुड़ा नहीं है, वे धीर लोग भी ऐसा ही दिखाते हैं, मानो वे भी जागे हुए न हों।

4.15.39

सुखेषु सुखिता नित्यं दुःखिता दुःखवृत्तिषु । महात्मानो हि दृश्यन्ते दृश्य एवाप्रबुद्धवत् ॥ ३९ ॥

sukheṣu sukhitā nityaṃ duḥkhitā duḥkhavṛttiṣu | mahātmāno hi dṛśyante dṛśya evāprabuddhavat || 39 ||

Great souls too are seen to be happy always in happiness, and sad in states of sadness. To see them, they look just like people who are not awake to the truth.

महान आत्माएँ भी सुख में हमेशा सुखी और दुख की हालत में दुखी दिखाई देती हैं। देखने में वे भी उन लोगों जैसी ही लगती हैं जो जागे हुए नहीं हैं।

4.15.40

सूर्यस्य प्रतिबिम्बानि क्षुभ्यन्ति न पुनः स्थिरम् । चलाचलतया तज्ज्ञो लोकवृत्तिषु तिष्ठति ॥ ४० ॥

sūryasya pratibimbāni kṣubhyanti na punaḥ sthiram | calācalatayā tajjño lokavṛttiṣu tiṣṭhati || 40 ||

The reflections of the sun tremble, but the fixed sun itself does not. In the same way, the one who knows the truth stays in the business of the world, seeming to move while staying still.

सूरज के प्रतिबिंब हिलते हैं, पर खुद स्थिर सूरज नहीं हिलता। वैसे ही सच्चाई को जानने वाला व्यक्ति दुनिया के कामकाज में रहता है, हिलता हुआ दिखता है पर भीतर से स्थिर रहता है।

4.15.41

अवस्थित इव स्वस्थः प्रतिबिम्बेषु भास्करः । संत्यक्तलोककर्मापि बुद्ध एवाप्रबुद्धधीः ॥ ४१ ॥

avasthita iva svasthaḥ pratibimbeṣu bhāskaraḥ | saṃtyaktalokakarmāpi buddha evāprabuddhadhīḥ || 41 ||

The sun seems to sit inside each reflection while staying fixed in itself. In the same way, the awakened person, even after giving up all worldly work, looks as if his mind were not awake at all.

सूरज हर प्रतिबिंब में मौजूद दिखता है, पर खुद अपनी जगह पर स्थिर रहता है। वैसे ही जागा हुआ व्यक्ति, दुनिया के सारे काम छोड़ने के बाद भी, ऐसा दिखता है मानो उसका मन जागा ही न हो।

4.15.42

मुक्तबुद्धीन्द्रियो मुक्तो बद्धकर्मेन्द्रियोऽपि हि । बद्धबुद्धीन्द्रियो बद्धो मुक्तकर्मेन्द्रियोऽपि हि ॥ ४२ ॥

muktabuddhīndriyo mukto baddhakarmendriyo'pi hi | baddhabuddhīndriyo baddho muktakarmendriyo'pi hi || 42 ||

One whose mind is free is truly free, even if his organs of action are still tied up in work. One whose mind is tied up is truly tied up, even if his organs of action are free from work.

जिसका मन मुक्त है वह सचमुच मुक्त है, भले ही उसके काम करने वाले अंग अभी भी काम में बंधे हों। जिसका मन बंधा है वह सचमुच बंधा है, भले ही उसके काम करने वाले अंग काम से आज़ाद हों।

4.15.43

सुखदुःखदृशो लोके बन्धमोक्षदृशस्तथा । हेतुर्बुद्धीन्द्रियाण्येव तेजांसीव प्रकाशने ॥ ४३ ॥

sukhaduḥkhadṛśo loke bandhamokṣadṛśastathā | heturbuddhīndriyāṇyeva tejāṃsīva prakāśane || 43 ||

Seeing happiness and suffering in the world, and likewise seeing bondage and freedom, the cause of this is the mind and senses alone, just as light alone is the cause of seeing things.

दुनिया में सुख और दुख का दिखना, और वैसे ही बंधन और मुक्ति का दिखना, इसका कारण मन और इंद्रियाँ ही हैं, जैसे रोशनी ही चीज़ों को दिखाने का कारण होती है।

4.15.44

बहिर्लोकोचिताचारस्त्वन्तराचारवर्जितः । समो ह्यतीव तिष्ठ त्वं संशान्तसकलैषणः ॥ ४४ ॥

bahirlokocitācārastvantarācāravarjitaḥ | samo hyatīva tiṣṭha tvaṃ saṃśāntasakalaiṣaṇaḥ || 44 ||

Outwardly behave in a way that fits the world, but inwardly stay free of such activity. Remain very even minded, with all your wants completely calmed.

बाहर से दुनिया के हिसाब से व्यवहार करो, पर भीतर से ऐसी किसी हलचल से मुक्त रहो। बहुत सम भाव से रहो, और अपनी सारी चाहतों को पूरी तरह शांत कर लो।

4.15.45

सर्वैषणाविमुक्तेन स्वात्मनात्मनि तिष्ठता । कुरु कर्माणि कार्याणि नूनं देहस्य संस्थितिः ॥ ४५ ॥

sarvaiṣaṇāvimuktena svātmanātmani tiṣṭhatā | kuru karmaṇi kāryāṇi nūnaṃ dehasya saṃsthitiḥ || 45 ||

Freed from all wanting, and standing in the self by yourself, do the actions that need to be done. Surely this is only for keeping the body going.

सारी चाहतों से मुक्त होकर और अपने आप में स्थिर रहते हुए, जो काम करने ज़रूरी हैं वे करो। यह तो बस शरीर को बनाए रखने के लिए है।

4.15.46

आधिव्याधिमहावर्तगर्तसंसारवर्त्मनि । ममतोग्रान्धकूपेऽस्मिन्मा पतातापदायिनि ॥ ४६ ॥

ādhivyādhimahāvartagartasaṃsāravartmani | mamatogrāndhakūpe'sminmā patātāpadāyini || 46 ||

Do not fall into this path of the world, a deep pit full of great whirlpools of mental pain and disease, this fierce blind well of possessiveness that brings only disaster.

इस दुनिया के रास्ते में मत गिरो, यह मानसिक पीड़ा और बीमारी के बड़े भँवरों वाला गहरा गड्ढा है, ममता का यह भयानक अंधा कुआँ है, जो सिर्फ मुसीबत लाता है।

4.15.47

न त्वं भावेषु नो भावास्त्वयि तामरसेक्षण । शुद्धबुद्धस्वभावस्त्वमात्मान्तः सुस्थिरो भव ॥ ४७ ॥

na tvaṃ bhāveṣu no bhāvāstvayi tāmarasekṣaṇa | śuddhabuddhasvabhāvastvamātmāntaḥ susthiro bhava || 47 ||

You are not inside things, and things are not inside you, lotus eyed one. Your nature is pure and awake. Be fully steady inside yourself.

हे कमल जैसी आँखों वाले, तुम चीज़ों के अंदर नहीं हो, और चीज़ें तुम्हारे अंदर नहीं हैं। तुम्हारा स्वभाव शुद्ध और जागा हुआ है। अपने भीतर पूरी तरह स्थिर हो जाओ।

4.15.48

त्वं ब्रह्म ह्यमलं शुद्धं त्वं सर्वात्मा च सर्वकृत् । सर्वं शान्तमजं विश्वं भावयन्वै सुखी भव ॥ ४८ ॥

tvaṃ brahma hyamalaṃ śuddhaṃ tvaṃ sarvātmā ca sarvakṛt | sarvaṃ śāntamajaṃ viśvaṃ bhāvayanvai sukhī bhava || 48 ||

You are Brahman, stainless and pure. You are the self inside everything, and you do everything. Seeing the whole universe as calm and never born, be happy.

तुम ही ब्रह्म हो, निर्मल और शुद्ध। तुम ही हर चीज़ के अंदर की आत्मा हो, और सब कुछ तुम ही करते हो। इस पूरे विश्व को शांत और कभी न जन्मा हुआ मानते हुए, खुश रहो।

4.15.49

व्यपगतममतामहान्धकारः पदममलं विगतैषणं समेत्य । प्रभवसि यदि चेतसो महात्मंस्तदतिधिये महते सते नमस्ते ॥ ४९ ॥

vyapagatamamatāmahāndhakāraḥ padamamalaṃ vigataiṣaṇaṃ sametya | prabhavasi yadi cetaso mahātmanstadatidhiye mahate sate namaste || 49 ||

If you drive away the great darkness of selfish attachment, reach that stainless state free of craving, and become the master of your own mind, great soul, then hail to you, of matchless wisdom, great and real.

अगर तुम ममता के भारी अंधेरे को दूर करके, बिना चाहत वाली उस निर्मल अवस्था को पाकर, अपने मन के मालिक बन जाओ, हे महान आत्मा, तो हे असाधारण बुद्धि वाले, महान और सच्चे, तुम्हें नमस्कार।

Chapter 16

4.16.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथाक्षिप्य वचस्तस्य तनयस्य तथा भृगोः । उवाच भगवान्कालो वचो गम्भीरनिःस्वनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athākṣipya vacastasya tanayasya tathā bhṛgoḥ | uvāca bhagavānkālo vaco gambhīranisvanaḥ || 1 ||

Vasishtha said that Kala, the god of time, then cut short the words of the son and of Bhrigu alike, and spoke in a deep, grave voice.

वसिष्ठ ने कहा कि इसके बाद काल, यानी समय के देवता, ने पुत्र और भृगु दोनों की बात बीच में ही रोक दी और गंभीर, भारी आवाज़ में बोले।

4.16.2

काल उवाच । समङ्गातापसीमेतां तनुं संत्यज्य भार्गव । प्रविशेमां तनुं साधो नगरीमिव पार्थिवः ॥ २ ॥

kāla uvāca | samaṅgātāpasīmetāṃ tanuṃ saṃtyajya bhārgava | praviśemāṃ tanuṃ sādho nagarīmiva pārthivaḥ || 2 ||

Kala said, Shukra, give up this body of the ascetic woman Samanga, and enter this other body, good man, just as a king enters a city.

काल ने कहा, हे शुक्र, तपस्विनी समंगा के इस शरीर को छोड़ दो, और हे साधु पुरुष, इस दूसरे शरीर में प्रवेश करो, जैसे कोई राजा किसी नगर में प्रवेश करता है।

4.16.3

काले पूर्वजया तन्वा तपः कृत्वा तया पुनः । गुरुत्वमसुरेन्द्राणां कर्तव्यं भवतानघ ॥ ३ ॥

kāle pūrvajayā tanvā tapaḥ kṛtvā tayā punaḥ | gurutvamasurendrāṇāṃ kartavyaṃ bhavatānagha || 3 ||

In time, with your former body, do penance again, and then, sinless one, you must become the teacher of the demon kings.

समय आने पर, अपने पहले वाले शरीर से फिर तपस्या करो, और हे निष्पाप, फिर तुम्हें दानवों के राजाओं के गुरु बनना होगा।

4.16.4

महाकल्पान्त आयाते भवता भार्गवी तनुः । अपुनर्ग्रहणायैषा त्याज्या प्रम्लानपुष्पवत् ॥ ४ ॥

mahākalpānta āyāte bhavatā bhārgavī tanuḥ | apunargrahaṇāyaiṣā tyājyā pramllānapuṣpavat || 4 ||

Only when the great cycle of time comes to its end must you give up this body of yours, Shukra, thrown away like a withered flower, never to be taken up again.

महाकल्प का अंत आने पर ही, हे शुक्र, तुम्हें अपना यह शरीर छोड़ना होगा, जैसे मुरझाया हुआ फूल फेंक दिया जाता है, फिर कभी उसे धारण नहीं करना।

4.16.5

जीवन्मुक्तपदं प्राप्तस्तन्वा प्राक्तनरूपया । महासुरेन्द्रगुरुतां कुर्वंस्तिष्ठ महामते ॥ ५ ॥

jīvanmuktapadaṃ prāptastanvā prāktanarūpayā | mahāsurendragurutāṃ kurvaṃstiṣṭha mahāmate || 5 ||

Having reached the state of one who is free while still alive, with this body of your former form, remain there, great-minded one, acting as the teacher of the great demon kings.

हे महाबुद्धिमान, अपने पुराने रूप वाले इसी शरीर से जीते-जी मुक्ति की स्थिति पाकर, वहीं टिके रहो और बड़े-बड़े दानव राजाओं के गुरु बनकर रहो।

4.16.6

कल्याणमस्तु वां यामो वयं त्वभिमतां दिशम्। न किंचिदपि यच्चित्तं यस्य नाभिमतं भवेष्पत्॥ ६॥

kalyāṇamastu vāṃ yāmo vayaṃ tvabhimatāṃ diśam | na kiṃcidapi yaccittaṃ yasya nābhimataṃ bhaveṣpat || 6 ||

May good come to both of you. We now go wherever we please. There is nothing in the mind that fails to become just as it wishes.

तुम दोनों का भला हो। हम अब जहाँ चाहें वहाँ जाते हैं। मन में जो भी इच्छा हो, वह सब वैसी ही सच हो जाती है।

4.16.7

इत्युक्त्वा मुञ्चतोर्वाष्पं तयोः सोऽन्तरधीयत। तप्तांग्योरिव रोदस्योः सममंशुभिरंशुमान्॥ ७॥

ityuktvā muñcatorvāṣpaṃ tayoḥ so'ntaradhīyata | taptāṃgyoriva rodasyoḥ samamaṃśubhiraṃśumān || 7 ||

Having said this, while the two of them, father and son, were shedding tears, Kala vanished, just as the sun disappears together with its rays from the sky and the earth when both have grown hot.

यह कहकर, जब पिता और पुत्र दोनों की आँखों से आँसू बह रहे थे, तब काल वैसे ही ओझल हो गए जैसे सूरज तपे हुए आकाश और धरती दोनों से अपनी किरणों समेत एक साथ छिप जाता है।

4.16.8

गते तस्मिन्भगवति कृतान्ते भवितव्यताम्। विचार्य भार्गवोऽभेद्यां नियतेर्नियतां गतिम्॥ ८॥

gate tasminbhagavati kṛtānte bhavitavyatām | vicārya bhārgavo'bhedyāṃ niyaterniyatāṃ gatim || 8 ||

After that lord Kala had gone, Shukra thought about what was bound to happen, about the fixed and unbreakable path of fate.

जब काल भगवान चले गए, तो शुक्र ने सोचा कि आगे क्या होने वाला है, और भाग्य का जो रास्ता तय है, वह कभी टूटता नहीं।

4.16.9

कालकारणसंशुष्कां भाविपुष्पशुभोदयाम्। विवेश तां तनुं बालां सुलतामिव माधवः॥ ९॥

kālakāraṇasaṃśuṣkāṃ bhāvipuṣpaśubhodayām | viveśa tāṃ tanuṃ bālāṃ sulatāmiva mādhavaḥ || 9 ||

He entered that young body, dried up by the working of time but destined to bloom well in the future, the way spring enters a healthy young creeper.

वह उस छोटे-से शरीर में समा गया, जो समय के प्रभाव से सूखा हुआ था पर आगे चलकर अच्छी तरह खिलने वाला था, ठीक वैसे ही जैसे बसंत किसी अच्छी-भली नई बेल में उतर आता है।

4.16.10

सा ब्राह्मणीतनुर्भूमौ विवर्णवदनाङ्गिका। पपात कम्पिता तूर्णं छिन्नमूला लता यथा॥ १०॥

sā brāhmaṇītanurbhūmau vivarṇavadanāṅgikā | papāta kampitā tūrṇaṃ chinnamūlā latā yathā || 10 ||

That body of the Brahmin woman Samanga fell to the ground, its face and limbs gone pale, shaking, all at once, like a creeper cut off at the root.

ब्राह्मणी समंगा का वह शरीर ज़मीन पर गिर पड़ा, उसका चेहरा और अंग फीके पड़ गए, वह काँपने लगा, एकदम अचानक, जैसे जड़ से कटी हुई बेल गिर जाती है।

4.16.11

तस्यां प्रविष्टजीवायां पुत्रतन्वां महामुनिः । चकाराप्यायनं मन्त्रैः स कमण्डलुवारिभिः ॥ ११ ॥

tasyāṃ praviṣṭajīvāyāṃ putratanvāṃ mahāmuniḥ | cakārāpyāyanaṃ mantraiḥ sa kamaṇḍaluvāribhiḥ || 11 ||

Into that body of the son, now filled with life, the great sage Bhrigu poured strength with mantras and with water from his water pot.

पुत्र के उस शरीर में, जिसमें अब जीव आ चुका था, महामुनि भृगु ने मंत्रों से और अपने कमंडल के जल से शक्ति भर दी।

4.16.12

सर्वा नाड्यस्ततस्तन्वास्तस्याः पूर्णा विरेजिरे । सरितः प्रावृषीवाम्बुपूरपूरितकोटराः ॥ १२ ॥

sarvā nāḍyastatastanvāstasyāḥ pūrṇā virejire | saritaḥ prāvṛṣīvāmbupūrapūritakoṭarāḥ || 12 ||

Then all the channels of that body became full and shone brightly, like rivers in the rainy season, their hollows filled up with rushing water.

फिर उस शरीर की सारी नाड़ियाँ भर गईं और चमक उठीं, जैसे बरसात में नदियाँ अपने गड्ढों तक पानी से भर जाती हैं।

4.16.13

नलिनी प्रावृषीवासौ मधाविव नवा लता । यदा पूर्णा तदा तस्याः प्रान्ताः पल्लविता बभुः ॥ १३ ॥

nalinī prāvṛṣīvāsau madhāviva navā latā | yadā pūrṇā tadā tasyāḥ prāntāḥ pallavitā babhuḥ || 13 ||

Like a lotus pond in the rainy season, or a fresh creeper in spring, when it became full, its limbs, like new leaves, came freshly alive.

जैसे बरसात में कमल का तालाब भर जाता है, या बसंत में कोई नई बेल खिल उठती है, वैसे ही जब वह शरीर भर गया, तो उसके अंग नई कोंपलों की तरह ताज़ा हो उठे।

4.16.14

अथ शुक्रः समुत्तस्थौ वहत्प्राणसमीरणः । रसमारुतसंयोगादापूर्ण इव वारिदः ॥ १४ ॥

atha śukraḥ samuttasthau vahatprāṇasamīraṇaḥ | rasamārutasaṃyogādāpūrṇa iva vāridaḥ || 14 ||

Then Shukra rose up, his breath of life now flowing, like a rain cloud grown full from the joining of moisture and wind.

फिर शुक्र उठ खड़े हुए, उनकी प्राण-वायु बहने लगी, जैसे कोई बादल नमी और हवा के मिलने से भरपूर हो जाता है।

4.16.15

पुरोऽभिवादयामास पितरं पावनाकृतिम् । प्रथमोल्लासितो मेघः स्तनितेनेव पर्वतम् ॥ १५ ॥

puro'bhivādayāmāsa pitaraṃ pāvanākṛtim | prathamollāsito meghaḥ staniteneiva parvatam || 15 ||

He bowed before his father, whose very form could purify, just as a cloud, freshly stirred, greets a mountain with its first roll of thunder.

उन्होंने अपने पिता के सामने प्रणाम किया, जिनका रूप ही पवित्र करने वाला था, ठीक वैसे ही जैसे अभी उठा हुआ बादल अपनी पहली गरज से पहाड़ का अभिवादन करता है।

4.16.16

पिताथ प्राक्तनीं तन्वा आलिलिङ्गाकृतिं ततः । स्नेहार्द्रवृत्तिर्जलदश्चिरादद्रितटीमिव ॥ १६ ॥

pitātha prāktanīṃ tanvā ālilińgākṛtiṃ tataḥ | snehaārdra-vṛttirjaladaścirādadritaṭīmiva || 16 ||

Then the father, his heart softened with love, took his son's body in his arms, that form which was like Shukra's own former self, the way a rain cloud, after a long time, embraces a mountainside.

फिर पिता ने, प्रेम से भीगे मन के साथ, अपने पुत्र के उस शरीर को गले लगाया, जो शुक्र के ही पुराने रूप जैसा था, ठीक वैसे ही जैसे कोई बादल बहुत समय बाद पहाड़ की ढलान को गले लगाता है।

4.16.17

भृगुर्ददर्श सस्नेहं प्राक्तनीं तानवीं तनुम् । मत्तो जातेयमित्यास्थां हसन्नपि महामतिः ॥ १७ ॥

bhṛgurdadarśa sasnehaṃ prāktanīṃ tānavīṃ tanum | matto jāteyamityāsthāṃ hasannapi mahāmatiḥ || 17 ||

Bhrigu, the great sage, looked with love at that slender body, the same form Shukra had worn before, smiling even as he held fast to the thought, this one is born from me.

महाबुद्धिमान भृगु ने उस दुबले शरीर को प्रेम से देखा, जो शुक्र का वही पुराना रूप था, और मुस्कराते हुए भी यही मानते रहे कि यह मुझसे ही जन्मा है।

4.16.18

मत्पुत्रोऽयमिति स्नेहो भृगुमप्यहरत्तदा । परमात्मीयता देहे यावदाकृतिभाविनी ॥ १८ ॥

matputro'yamiti sneho bhṛgumapyaharattadā | paramātmīyatā dehe yāvadākṛtibhāvinī || 18 ||

This is my son, such love swept over Bhrigu too just then, for the feeling that a body is mine stays strongest only as long as it keeps its shape.

यह मेरा पुत्र है, ऐसा सोचकर उस पल भृगु का मन भी प्रेम से भर गया, क्योंकि शरीर को अपना मानने की भावना तभी तक सबसे गहरी रहती है जब तक उसका रूप बना रहता है।

4.16.19

बभूवतुः पितापुत्रौ तावथान्योन्यशोभितौ । निशावसानमुदितावर्कपद्माकराविव ॥ १९ ॥

babhūvatuḥ pitāputrau tāvathānyonyaśobhitau | niśāvasānamuditāvarkapadmākarāviva || 19 ||

Father and son then shone together, each one made more beautiful by the other, like the sun and a lotus pond, both waking up at the end of night.

पिता और पुत्र दोनों साथ में ऐसे चमक उठे कि एक-दूसरे से और सुंदर लग रहे थे, जैसे रात खत्म होने पर सूरज और कमल का तालाब दोनों एक साथ जाग उठते हैं।

4.16.20

चिरसंगमसंबद्धाविव चक्राह्वदम्पती । घनागमनसस्नेहौ मयूरजलदाविव ॥ २० ॥

cirasaṃgamasambaddhāviva cakrāhvadampatī | ghanāgamanasasnehaumayūrajaladāviva || 20 ||

They were like a pair of chakravaka birds bound together after a long separation, or like a peacock full of love at the coming of the clouds.

वे दोनों ऐसे लग रहे थे जैसे लंबे बिछोह के बाद फिर से मिले चकवा-चकवी का जोड़ा, या जैसे बादल के आने पर मोर प्रेम से भर उठता है।

4.16.21

चिरकालदृढोत्कण्ठौ तुल्ययोग्यतया तया । स्थित्वा तत्र मुहूर्तं तावथोत्थाय महामती ॥ २१ ॥

cirakāladṛḍhotkaṇṭhau tulyayogyatayā tayā | sthitvā tatra muhūrtaṃ tāvathotthāya mahāmatī || 21 ||

Long had the two of them felt a deep longing for each other, well matched in this same feeling. They stayed there a while, then the two great-minded ones got up.

बहुत समय से दोनों के मन में एक-दूसरे के लिए गहरी तड़प थी, और इस बात में दोनों एक बराबर थे। वे वहाँ कुछ देर ठहरे रहे, फिर दोनों महाबुद्धिमान उठ खड़े हुए।

4.16.22

समङ्गाद्विजदेहं तं भस्मसात्तत्र चक्रतुः । को हि नाम जगज्जातमाचारं नानुतिष्ठति ॥ २२ ॥

samaṅgādvijadehaṃ taṃ bhasmasāttatra cakratuḥ | ko hi nāma jagajjātamācāraṃ nānutiṣṭhati || 22 ||

And there they burned to ashes that body of the Brahmin woman Samanga, for who, once born into this world, does not follow its customs.

और वहाँ उन्होंने ब्राह्मणी समंगा के उस शरीर को जलाकर राख कर दिया, क्योंकि इस संसार में जन्मा हुआ ऐसा कौन है जो इसके रीति-रिवाज न निभाए।

4.16.23

एवं तौ कानने तस्मिन्पावने भृगुभार्गवौ । संस्थितौ तापसौ दीप्तौ दिवीव शशिभास्करौ ॥ २३ ॥

evaṃ tau kānane tasminpāvane bhṛgubhārgavau | saṃsthitau tāpasau dīptau divīva śaśibhāskarau || 23 ||

So the two of them, Bhrigu and Shukra, stayed on in that sacred forest, both ascetics, both shining, like the moon and the sun in the sky.

इस तरह भृगु और शुक्र दोनों उस पवित्र वन में रहने लगे, दोनों तपस्वी, दोनों चमकते हुए, जैसे आकाश में चाँद और सूरज चमकते हैं।

4.16.24

चेरतुर्ज्ञातविज्ञेयौ जीवन्मुक्तौ जगद्गुरू । देशकालदशौघेषु सुसमौ सुस्थिरौ ततः ॥ २४ ॥

ceraturjñātavijñeyau jīvanmuktau jagadgurū | deśakāladashauṅheṣu susamau susthirau tataḥ || 24 ||

Both had known all there was to know, both were free while still alive, both were teachers of the world. From then on they moved about steady and unshaken through the floods of place, time, and circumstance.

दोनों ने जो जानने योग्य था, वह सब जान लिया था, दोनों जीते-जी मुक्त थे, दोनों संसार के गुरु थे। इसके बाद वे स्थान, समय और परिस्थिति की बाढ़ों के बीच भी स्थिर और अडिग होकर घूमते रहे।

4.16.25

अथासुरगुरुत्वं स शुक्रः कालेन लब्धवान् । भृगुरप्यात्मनो योग्ये पदेऽतिष्ठदनामये ॥ २५ ॥

athāsuragurutvaṃ sa śukraḥ kālena labdhvān | bhṛgurapyātmano yogye pade'tiṣṭhadanāmaye || 25 ||

In time, Shukra became the teacher of the demon kings, and Bhrigu too stayed on in his own rightful place, free from trouble.

समय के साथ शुक्र दानवों के राजाओं के गुरु बन गए, और भृगु भी अपने ही उचित स्थान पर बिना किसी कष्ट के टिके रहे।

4.16.26

शुक्रोऽसौ प्रथममिति क्रमेण जातस्तस्मात्सत्परमपदादुदारकीर्तिःस्वेनाशु स्मृतिपदविभ्रमेण पश्चादन्येषु प्रविलुलितो दशान्तरेषु ॥ २६ ॥

śukro'sau prathamamiti krameṇa jātastasmātsatparamapadādudārakīrtiḥsvenāśu smṛtipadavibhrameṇa paścādanyeṣu pravilulito daśāntareṣu || 26 ||

This Shukra, of wide fame, was born again in this way, first in the order of events, out of that true and highest state. But soon after, through his own quick loss of memory, he tumbled into other, different conditions.

यह शुक्र, जो बड़ी कीर्ति वाला था, इस तरह पहले उसी सच्चे और सबसे ऊँचे पद से फिर जन्मा। पर उसके बाद, अपनी ही याददाश्त के जल्दी बिगड़ जाने से, वह अलग-अलग दूसरी स्थितियों में जा भटका।

Chapter 17

4.17.1

श्रीराम उवाच । भगवन्भृगुपुत्रस्य प्रतिभासानुभूतितः । यथैषा सफला जाता तथान्यस्य न किं भवेत् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavanbhṛguputrasya pratibhāsānubhūtitḥ | yathaiṣā saphalā jātā tathānyasya na kiṃ bhavet || 1 ||

Rama said, lord, the son of Bhrigu had an experience that felt like a mere appearance, and yet it turned out to be real and effective. So why should the same thing not happen for someone else too.

राम ने कहा, भगवन, भृगु के पुत्र को जो अनुभव हुआ वह एक भ्रम जैसा ही था, फिर भी वह सच और असरदार साबित हुआ। तो यही किसी और के साथ क्यों नहीं हो सकता।

4.17.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । इयं प्रथममुत्पन्ना सा तनुर्ब्रह्मणः पदात् । शुद्धा जातिर्भार्गवस्य नान्यजन्मकलङ्किता ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iyaṃ prathamamutpannā sā tanurbrahmaṇaḥ padāt | śuddhā jātirbhārgavasya nānyajanmakalaṅkitā || 2 ||

Vasishtha said, this body of Bhrigu's son was the very first one to be born, straight from Brahma's own place. It was a pure birth, not marked or spoiled by any birth that came before it.

वसिष्ठ ने कहा, भृगु के पुत्र का यह शरीर सबसे पहले जन्मा था, सीधे ब्रह्मा के उसी स्थान से। यह एक शुद्ध जन्म था, इससे पहले के किसी जन्म का दाग़ इस पर नहीं था।

4.17.3

सर्वैषणानां संशान्तौ शुद्धचित्तस्य या स्थितिः । तत्सत्यमुच्यते सैषा विमला चिदुदाहृता ॥ ३ ॥

sarvaiṣaṇānāṃ saṃśāntau śuddhacittasya yā sthitiḥ | tatsatyamucyate saiṣā vimalā cidudāhṛtā || 3 ||

When every desire is fully calmed, the state that a pure mind reaches is called the truth. That same state is spoken of as clean, stainless awareness.

जब सारी इच्छाएँ पूरी तरह शांत हो जाती हैं, तो शुद्ध मन जिस अवस्था में पहुँचता है, उसी को सत्य कहा जाता है। उसी को निर्मल चेतना भी कहा गया है।

4.17.4

मनोनिर्मलसत्त्वात्म यद्भावयति यादृशम् । तत्तथाशु भवत्येव यथावर्तो भवेत्पयः ॥ ४ ॥

manonirmalasattvātma yadbhāvayati yādṛśam | tattathāśu bhavatyeva yathāvarto bhavetpayaḥ || 4 ||

The mind, which is pure by nature, quickly turns into whatever it imagines, exactly as it imagines it, just as water forms itself into a whirlpool.

मन, जो अपने स्वभाव से शुद्ध है, जो कुछ भी सोचता है, वैसा ही तुरंत बन जाता है, जैसे पानी खुद भँवर बन जाता है।

4.17.5

यथा भृगुसुतस्यैव विभ्रमः प्रोत्थितः स्वयम् । प्रत्येकमप्येवमेव दृष्टान्तोऽत्र भृगोः सुतः ॥ ५ ॥

yathā bhṛgusutasyaiva vibhramaḥ prothitaḥ svayam | pratyekamapyevameva dṛṣṭānto'tra bhṛgoḥ sutaḥ || 5 ||

Just as this illusion rose up on its own in Bhrigu's son, the very same thing happens, in the same way, in every single being. Bhrigu's son is only the example here.

जैसे यह भ्रम भृगु के पुत्र में अपने आप उठा, वैसे ही यह ठीक उसी तरह हर एक प्राणी में होता है। भृगु का पुत्र तो यहाँ सिर्फ़ एक उदाहरण है।

4.17.6

बीजस्याङ्कुरपत्रादि स्वं चमत्कुरुते यथा। सर्वेषां भूतसङ्घानां भ्रमखण्डास्तथैव हि॥ ६॥

bījasyaṅkurapatrādi svaṃ camatkurute yathā | sarveṣāṃ bhūtasaṅghānāṃ bhramakhṇḍāstathaiva hi || 6 ||

Just as a seed brings out its own wonder, the sprout, the leaf, and so on, in the same way all these many beings are just pieces of one illusion.

जैसे एक बीज अपने आप अपना चमत्कार दिखाता है, अंकुर, पत्ता वगैरह, वैसे ही ये सारे प्राणी भी एक ही भ्रम के टुकड़े हैं।

4.17.7

यदिदं दृश्यते विश्वमेवमेवाखिलं जगत्। प्रत्येकमुदितं मिथ्या मिथ्यैवास्तमुपैति च॥ ७॥

yadidaṃ dṛśyate viśvamevamevākhilaṃ jagat | pratyekamuditaṃ mithyā mithyaivāstamupaiti ca || 7 ||

This whole visible universe works the same way. Each thing in it rises up falsely, and it falls away falsely too.

यह जो दिखने वाला विश्व है, यह पूरा जगत भी ऐसे ही है। इसमें हर चीज़ झूठे रूप से उठती है, और झूठे रूप से ही मिट जाती है।

4.17.8

नास्तमेति नचोदेति जगत्किंचन कस्यचित्। भ्रान्तिमात्रमिदं मायामुग्धेव परिजृम्भते॥ ८॥

nāstameti nacodeti jagatkiṃcana kasyacit | bhrāntimātramidaṃ māyāmugdheva parijṛmbhate || 8 ||

In truth, nothing in this world ever rises and nothing ever ends, for anyone. This is only confusion. It spreads out like something dazed by a magic spell.

सच तो यह है कि इस जगत में न कुछ उठता है, न कुछ मिटता है, किसी के लिए भी नहीं। यह सब सिर्फ़ एक भ्रम है। यह ऐसे फैलता है जैसे कोई जादू के असर से मोहित हो गया हो।

4.17.9

यथा संप्रतिभासस्थः स्वयं संसारखण्डकः। तथा तेषां सहस्राणि मिथ्या दृष्टानि सन्ति हि॥ ९॥

yathā saṃpratibhāsasthaḥ svayaṃ saṃsārakhṇḍakaḥ | tathā teṣāṃ sahasrāṇi mithyā dṛṣṭāni santi hi || 9 ||

Just as this one piece of the world stands here, appearing real all on its own, in the same way thousands of such worlds are seen to exist, but falsely.

जैसे संसार का यह एक टुकड़ा अपने आप यहाँ असली जैसा दिखता है, वैसे ही ऐसे हज़ारों टुकड़े भी देखे जाते हैं, पर झूठे रूप में।

4.17.10

स्वप्नसंकल्पनगरव्यवहाराः परस्परम्। पृथग्यथा न दृश्यन्ते तथैते संसृतिभ्रमाः॥ १०॥

svapnasankalpanagaravyavahārāḥ parasparam | pṛthagyathā na dṛśyante tathaite saṃsṛtibhramāḥ || 10 ||

Just as the events of a dream, and the doings of a city built only by imagination, are not seen as separate from one another, so too these illusions of worldly life are not separate from one another.

जैसे सपने की घटनाएँ और सिर्फ़ कल्पना से बने शहर के काम एक-दूसरे से अलग नहीं दिखते, वैसे ही संसार के ये सारे भ्रम भी एक-दूसरे से अलग नहीं हैं।

4.17.11

एवं नगरवृन्दानि नभस्संकल्परूपिणि। सन्ति तानि न दृश्यन्ते मिथ्याज्ञानदृशं विना॥ ११॥

evaṃ nagaravṛndāni nabhassaṃkalparūpiṇi | santi tāni na dṛśyante mithyājñānadṛśaṃ vinā || 11 ||

In the same way, whole cities appear in the sky, made only of imagination. They do exist, but no one sees them except through the eye of false knowledge.

इसी तरह आकाश में कल्पना से बने कई शहर होते हैं। वे होते तो हैं, पर झूठे ज्ञान की नज़र के बिना कोई उन्हें देख नहीं पाता।

4.17.12

पिशाचयक्षरक्षांसि सन्त्येवंरूपकाणि ह । संकल्पमात्रदेहानि सुखदुःखमयानि च ॥ १२ ॥

piśācayakṣarakṣāṃsi santyevaṃrūpakāṇi ha | saṃkalpamātradehāni sukhaduḥkhamayāni ca || 12 ||

Ghosts, spirits, and demons really do exist and take just such forms. Their bodies are made only of thought, and they are full of pleasure and pain too.

भूत-प्रेत, यक्ष और राक्षस भी सच में इसी तरह के रूप में होते हैं। उनके शरीर सिर्फ़ कल्पना से बने हैं, और वे भी सुख-दुख से भरे हैं।

4.17.13

एवमेव वयं चेमे संपन्ना रघुनन्दन । स्वसंकल्पात्मकाकारा मिथ्यासत्यत्वभाविनः ॥ १३ ॥

evameva vayaṃ ceme saṃpannā raghunandana | svasaṃkalpātmakākārā mithyāsatyatvabhāvinaḥ || 13 ||

In just the same way, Rama, we ourselves, and all these beings here, have come into existence. Our forms are made only of our own imagining, and their nature is both false and, at the same time, seemingly real.

हे राम, इसी तरह हम भी और ये सब भी बने हैं। हमारे रूप सिर्फ़ अपनी ही कल्पना से बने हैं, फिर भी इनका स्वभाव झूठा भी है और साथ ही सच जैसा भी।

4.17.14

एवंरूपैव हि परे विद्यते सर्गसंततिः । न वास्तवी वस्तुता तु संस्थितैवमवस्तुनि ॥ १४ ॥

evaṃrūpaiva hi pare vidyate sargasaṃtatiḥ | na vāstavī vastutā tu saṃsthitaivamavastuni || 14 ||

In the highest reality, creation goes on and on in just this same way, but it has no real substance at all. It stands, just like this, resting on something that is not truly a thing.

परम सत्य में सृष्टि का यह सिलसिला इसी रूप में चलता रहता है, पर इसमें कोई असली ठोसपन नहीं है। यह वैसे ही टिका है, किसी ऐसी चीज़ पर जो असल में कोई चीज़ है ही नहीं।

4.17.15

प्रत्येकमुदितं विश्वमेवमेव मुधैव हि । वनगुल्मकरूपेण वसन्तैकरसो यथा ॥ १५ ॥

pratyekamuditaṃ viśvamevameva mudhaiva hi | vanagulmakarūpeṇa vasantaikaraso yathā || 15 ||

Each part of this universe rises up on its own, but all of it is empty in just the same way, just as spring, though it is one single thing, shows itself through many forms, as forest and bush.

यह विश्व हर जगह अलग-अलग रूप में उठता हुआ दिखता है, पर यह सब उसी तरह खोखला है। जैसे बसंत एक ही होता है, फिर भी वह जंगल और झाड़ियों जैसे कई रूपों में दिखाई देता है।

4.17.16

प्रथमोऽयं स्वसंकल्पः प्रथामभ्यागतो यथा । तथातिपरमार्थेन दृष्टेनेत्थं विभाव्यते ॥ १६ ॥

prathamo'yaṃ svasaṃkalpaḥ prathāmabhyāgato yathā | tathātiparamārthena dṛṣṭenaitthaṃ vibhāvyate || 16 ||

This first thought that a person forms in their own mind is the one that goes on to become an accepted, established fact. In the same way, through the highest truth, direct seeing makes it plain that this is exactly how it works.

मन में उठने वाला यह पहला अपना विचार आगे चलकर एक मानी हुई सच्चाई बन जाता है। ठीक उसी तरह, परम सत्य के आधार पर, सीधे देखने से यह साफ़ समझ में आता है कि यही सच है।

4.17.17

प्रत्येकमुदितं चित्तं स्वस्वभावोदरस्थितम्। इदमित्थं समारम्भं जगत्पश्यन्विनश्यति ॥ १७ ॥

pratyekamuditaṃ cittaṃ svasvabhāvodarasthitam | idamitthaṃ samārambhaṃ jagatpaśyanvinashyati || 17 ||

Each mind rises on its own and stays inside its own nature. Watching this world start in just this way, that mind too comes to an end.

हर मन अपने आप उठता है और अपने ही स्वभाव के भीतर रहता है। इस तरह जगत को शुरू होते देखकर, वह मन भी खत्म हो जाता है।

4.17.18

प्रतिभासवशादस्ति नास्ति वस्त्ववलोकनात्। दीर्घस्वप्नो जगज्जालमालानं चित्तदन्तिनः ॥ १८ ॥

pratibhāsavaśādasti nāsti vastvavalokanāt | dīrghasvapno jagajjālamālānaṃ cittadantinaḥ || 18 ||

It exists because it appears; look straight at the real thing, and it does not exist. This web of the world is a long dream - it is the post that ties down the elephant of the mind.

यह दिखने के कारण है, इसलिए है; असली चीज़ को सीधे देखो तो यह नहीं है। जगत का यह जाल एक लंबा सपना है - यह मन रूपी हाथी को बांधने का खूंटा है।

4.17.19

चित्सत्तैव जगत्सत्ता जगत्सत्तैव चित्तकम्। एकाभावाद्वयोर्नाशः स च सत्यविचारणात् ॥ १९ ॥

citsattaiava jagatsattā jagatsattaiava cittakam | ekābhāvādvayornāśaḥ sa ca satyavicāraṇāt || 19 ||

The existence of awareness is exactly the existence of the world; the existence of the world is exactly the existence of the mind. If either one of the two is missing, both are gone - and that comes from looking closely for the truth.

चेतना का होना ही जगत का होना है, और जगत का होना ही मन का होना है। इन दोनों में से एक भी न हो तो दोनों मिट जाते हैं - और यह सच को गहराई से जांचने से होता है।

4.17.20

शुद्धस्य प्रतिभासो हि सत्यो भवति चेतसः। प्रमार्जनादिव मणेर्मलिनस्येह युक्तितः ॥ २० ॥

śuddhasya pratibhāso hi satyo bhavati cetasaḥ | pramārjanādiva maṇermalinasyeha yuktitaḥ || 20 ||

When the mind becomes pure, what it shows becomes true - just as a dirty gem becomes clear here through the right kind of polishing.

जब मन शुद्ध हो जाता है, तो वह जो दिखाता है वह सच हो जाता है - जैसे एक गंदा रत्न सही तरीके से रगड़ने पर साफ़ हो जाता है।

4.17.21

चिरमेकदृढाभ्यासाच्छुद्धिर्भवति चेतसः। अनाक्रान्तस्य संकल्पैः प्रतिभोदेति चेतसः ॥ २१ ॥

ciramekadṛḍhābhyāsācchuddhirbhavati cetasaḥ| anākrāntasya saṃkalpaiḥ pratibhodeti cetasaḥ || 21 ||

After a long time of one steady practice, the mind becomes pure. When the mind is not overrun by its own thoughts, true insight rises in it.

लंबे समय तक एक ही दृढ़ अभ्यास से मन शुद्ध होता है। जब मन अपने ही विचारों से घिरा नहीं होता, तब उसमें सच्ची समझ जागती है।

4.17.22

सुवर्णं न स्थितिं याति मलवत्यंशुके यथा । एका दृष्टिः स्थितिं याति न म्लाने चित्तके तथा ॥ २२ ॥

suvarṇaṃ na sthitiṃ yāti malavatyāṃśuke yathā| ekā dṛṣṭiḥ sthitiṃ yāti na mlāne cittake tathā || 22 ||

Just as gold does not hold on a dirty cloth, in the same way, a single clear sight does not stay steady in a dirty, dulled mind.

जैसे गंदे कपड़े पर सोना नहीं टिकता, वैसे ही मैले और धुंधले मन में एक साफ़ नज़र स्थिर नहीं रहती।

4.17.23

श्रीराम उवाच । प्रतिभासात्मनि जगत्येते कालक्रियाक्रमाः । सोदयास्तमया जाताः कथं शुक्रस्य चेतसः ॥ २३ ॥

śrīrāma uvāca| pratibhāsātmani jagatyete kālakriyākramāḥ| sodayāstamayā jātāḥ kathaṃ śukrasya cetasaḥ || 23 ||

Rama said: in a world whose very nature is just appearance, how do these events of time, one after another, with their rising and setting, happen in Shukra's mind?

श्रीराम ने कहा - जिस जगत का स्वभाव ही केवल दिखावा है, उसमें समय की ये एक के बाद एक घटनाएं, उदय और अस्त के साथ, शुक्र के मन में कैसे घटती हैं?

4.17.24

श्रीवसिष्ठ उवाच । यादृग्जगदिदं दृष्टं शुक्रेण पितृशास्त्रतः । तादृक्कस्य स्थितं चित्ते मयूराण्डे मयूरवत् ॥ २४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca| yādṛgjagadidaṃ dṛṣṭaṃ śukreṇa pitṛśāstrataḥ| tādṛk kasya sthitaṃ citte mayūrāṇḍe mayūravat || 24 ||

Sri Vasishtha said: the world that Shukra saw, based on his father's teaching - in whose mind does such a world stay fixed the same way? It is like a peacock already there inside a peacock's egg.

श्रीवसिष्ठ ने कहा - जैसा जगत शुक्र ने अपने पिता की शिक्षा से देखा, वैसा ही जगत ठीक उसी तरह किसके मन में बसा रहता है? यह वैसे ही है जैसे मोर के अंडे में मोर पहले से मौजूद होता है।

4.17.25

स्वभावकोशस्थमिदं तदेतेन क्रमोदितम् । बीजेनाङ्कुरपत्रादिलतापुष्पफलं यथा ॥ २५ ॥

svabhāvakośasthamidaṃ tadetenakramoditam| bījenāṅkurapatrādilatāpuṣpaphalaṃ yathā || 25 ||

This world sits stored inside its own nature, and from there it rises step by step - just as from a seed comes the sprout, then the leaf, the vine, the flower, and the fruit.

यह जगत अपने ही स्वभाव के भीतर छिपा रहता है, और वहीं से यह एक-एक करके उभरता है - जैसे बीज से अंकुर, फिर पत्ता, बेल, फूल और फल निकलते हैं।

4.17.26

जीवो यद्वासनाबद्धस्तदेवान्तः प्रपश्यति । स्वरूपं चात्र दृष्टान्तो दीर्घस्वप्नस्त्विदं जगत् ॥ २६ ॥

jīvo yadbāsanābaddhastadevāntaḥ prapaśyati | svarūpaṃ cātra dṛṣṭānto dīrghasvapnastvidaṃ jagat || 26 ||

The living self is bound by its own inner impressions, and it sees exactly those inside itself. The example for how this really works is this: this world is nothing but a long dream.

जीव अपने ही मन के संस्कारों से बंधा होता है, और वह अपने भीतर वही देखता है। यह असल में कैसे काम करता है, इसका उदाहरण यह है - यह जगत एक लंबा सपना ही है।

4.17.27

प्रत्येकमुदितो राम नूनं संसृतिखण्डकः । रात्रौ सैन्यनरस्वप्नजालवत्स्वात्मनि स्फुटः ॥ २७ ॥

pratyekamudito rāma nūnaṃ saṃsṛtikhṇḍakaḥ | rātrau sainyanarasvapnajālavatsvātmani sphuṭaḥ || 27 ||

Rama, each such world that rises is truly just a fragment of the round of rebirth. It shows up clearly inside one's own self, like a dream of an army of men at night.

हे राम, इस तरह उठने वाला हर जगत सचमुच जन्म-मरण के चक्र का एक टुकड़ा भर है। यह अपने ही भीतर उतनी ही साफ़ तरह दिखता है, जितना रात में देखी गई सैनिकों की सेना का सपना।

4.17.28

श्रीराम उवाच । एष संसृतिखण्डोत्थो मिथः स मिलति स्वयम् । नो वा मिलति तन्मे त्वं यथावद्वक्तुमर्हसि ॥ २८ ॥

śrīrāma uvāca | eṣa saṃsṛtikhṇḍottho mithaḥ sa milati svayam | no vā milati tanme tvaṃ yathāvadvaktumarhasi || 28 ||

Rama said: does this thing that rises from a fragment of the round of rebirth meet another such fragment by itself, or does it not meet at all? Please tell me this exactly as it is.

श्रीराम ने कहा - जन्म-मरण के चक्र के इस टुकड़े से उठी हुई यह चीज़, क्या यह अपने आप किसी दूसरे टुकड़े से मिलती है, या बिलकुल नहीं मिलती? कृपया मुझे यह ठीक-ठीक बताइए।

4.17.29

श्रीवसिष्ठ उवाच । मलिनं हि मनोऽवीर्यं न मिथः श्लेषमर्हति । अयोऽयसि च संतप्ते शुद्धे तप्तं तु लीयते ॥ २९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | malinaṃ hi mano'vīryaṃ na mithaḥ śleṣam arhati | ayo'yasi ca santapte śuddhe taptaṃ tu līyate || 29 ||

Sri Vasishtha said: a mind that is dirty and has no strength cannot join with another mind. But hot iron melts and joins with another piece of pure iron when that too is hot.

श्रीवसिष्ठ ने कहा - जो मन गंदा है और जिसमें ताकत नहीं है, वह किसी दूसरे मन से नहीं जुड़ सकता। पर गरम लोहा किसी दूसरे शुद्ध और गरम लोहे में पिघलकर मिल जाता है।

4.17.30

चित्ततत्त्वानि शुद्धानि संमिलन्ति परस्परम् । एकरूपाणितोयानि यान्त्यैक्यंनाविलानि हि ॥ ३० ॥

cittatattvāni śuddhāni saṃmilanti parasparam | ekarūpāṇito yāntyaikyaṃnāvilāni hi || 30 ||

Pure minds merge into each other, the way clear water of the same kind becomes one - but muddy water does not become one that way.

शुद्ध मन आपस में एक-दूसरे में मिल जाते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक जैसा साफ़ पानी आपस में मिलकर एक हो जाता है - पर गंदला पानी उस तरह एक नहीं होता।

4.17.31

शुद्धिर्हि चित्तस्य विवासनत्वमभूतसंवेदनमेकरूपम् । तस्याशु शुद्ध्या भवति प्रबुद्धस्तन्मात्रयुक्त्या परसंगमेति ॥ ३१ ॥

śuddhirhi cittasya vivāsanatvamabhūtasaṃvedanamekarūpam | tasyāśu śuddhyā bhavati prabuddhastanmātrayuktyā parasangaṃeti || 31 ||

The mind's purity means being completely free of its old inner impressions - one awareness, always the same, with nothing false in it. Through that mind becoming pure quickly, a person wakes up. By holding to that purity alone, one joins with the Supreme.

मन की शुद्धता का मतलब है उसके पुराने संस्कारों से पूरी तरह मुक्त होना - एक ऐसी जागरूकता जो हमेशा एक-सी रहती है और जिसमें कोई झूठ नहीं होता। मन के जल्दी शुद्ध हो जाने से इंसान जाग जाता है। उसी शुद्धता को थामे रहने से वह परमात्मा से जुड़ जाता है।

Chapter 18

4.18.1

श्रीवसिष्ठ उवाचसर्वसंसृतिखण्डेषु भूतबीजकलात्मनःतन्मात्रप्रतिभासस्य प्रतिभासेन भिन्नता ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvācasarvasaṃsṛtikhaṇḍeṣu bhūtabījakalātmanaḥtanmātrapratibhāsasya pratibhāsena bhinnatā || 1 ||

Sri Vasishtha said, in every one of the countless parts of this whole round of worldly life, each part carrying within it a portion of the seed of the elements, the subtle element that appears there seems different from part to part, but that difference is only in how it looks, not in what it truly is.
श्री वशिष्ठ बोले, इस पूरे संसार चक्र के हर एक हिस्से में, जो तत्वों के बीज का एक अंश लिए हुए है, वहाँ जो सूक्ष्म तत्व दिखाई देता है, वह हर हिस्से में अलग जैसा लगता है, पर यह फ़र्क़ सिर्फ़ दिखने में है, असल में नहीं।

4.18.2

प्रवृत्तिर्वा निवृत्तिर्वा तन्मात्रावृत्तिपूर्वकम्सर्वस्य जीवजातस्य सुषुप्तत्वादनन्तरम् ॥ २ ॥

pravṛttirvā nivṛttirvā tanmātrāvṛttipūrvakamsarvasya jīvajātasya suṣuptatvādanantaram || 2 ||

For every living being, right after deep sleep, whether it becomes active or stays still, this only happens once the subtle element has returned.
हर जीव के लिए, गहरी नींद के तुरंत बाद, चाहे वह सक्रिय हो जाए या शांत रहे, यह तभी होता है जब सूक्ष्म तत्व फिर से लौट आता है।

4.18.3

प्रवृत्तिभाजो ये जीवास्ते तन्मात्रप्रदर्शिनःतन्मात्रैकतया सर्गान्मिथः पश्यन्ति कल्पितान् ॥ ३ ॥

pravṛttibhājo ye jīvāste tanmātrapradarśinaḥtanmātraikatayā sargānmithaḥ paśyanti kalpitān || 3 ||

Those living beings who become active are the ones who bring the subtle element into view. And because that subtle element is the same in all of them, they see each other's imagined worlds.
जो जीव सक्रिय हो जाते हैं, वही सूक्ष्म तत्व को प्रकट करते हैं। और चूँकि यह सूक्ष्म तत्व सबमें एक ही है, इसलिए वे एक दूसरे की कल्पना की हुई दुनिया को देख पाते हैं।

4.18.4

तन्मात्रैक्यप्रणालेन चित्राः सर्गजलाशयाःपरस्परं संमिलन्ति घनतां यान्ति चाभितः ॥ ४ ॥

tanmātraikyapraṇālena citrāḥ sargajalāśayāḥparasparaṃ saṃmilanti ghanatāṃ yānti cābhitaḥ || 4 ||

Through this one shared channel of the subtle element, the many different pools of creation flow into each other, and on every side they thicken into one solid mass.
सूक्ष्म तत्व की इस एक साझा धारा के ज़रिए, सृष्टि के अलग अलग जलाशय आपस में मिल जाते हैं, और चारों ओर से गाढ़े होकर एक ठोस रूप ले लेते हैं।

4.18.5

केचित्पृथक्स्थितिगताः पृथगेव लयं गताःकेचिन्मिथः संमिलिता जगद्गुञ्जा स्थिताक्षता ॥ ५ ॥

kecitpṛthaksthitigatāḥ pṛthageva layaṃ gatāḥkecinmithaḥ saṃmilitā jagadguñjā sthitākṣatā || 5 ||

Some of these stay apart from the start and dissolve apart, alone. Others mix together with each other and remain as whole, unbroken world bubbles.
इनमें से कुछ शुरू से ही अलग रहते हैं और अलग अलग ही लीन हो जाते हैं। कुछ आपस में मिल जाते हैं और एक साबुत, बिना टूटे हुए दुनिया के बुलबुले के रूप में बने रहते हैं।

4.18.6

जगद्ब्रुञ्जासहस्राणि यत्रासंख्यान्यणावणौ । अपरस्परलग्नानि काननं ब्रह्म नाम तत् ॥ ६ ॥

jagadruñjāsahasrāṇi yatrāsaṃkhyānyaṇāvaṇau| aparaspiralagnāni kānanaṃ brahma nāma tat || 6 ||

In atom after atom there sit thousands upon thousands of these world bubbles, too many to count, never touching one another, and that whole gathering of them is what is called Brahman.

कण कण में हज़ारों हज़ार ऐसे दुनिया के बुलबुले बसे हैं, जिनकी गिनती नहीं हो सकती, और वे कभी एक दूसरे को नहीं छूते, उन सबका यह पूरा जमघट ही ब्रह्म कहलाता है।

4.18.7

मिथः संमिलनेनैता घनतां समुपागताः । यद्यद्यत्र यथा रूढं तत्तत्पश्यति नेतरत् ॥ ७ ॥

mithaḥ saṃmilanenaitā ghanatāṃ samupāgatāḥ| yadyadyatra yathā rūḍhaṃ tattatpaśyati netarat || 7 ||

By mixing into each other this way, these become dense and solid. And wherever something has become fixed as real, a person sees only that thing there, nothing else.

इस तरह आपस में मिलकर ये गाढ़े और ठोस बन जाते हैं। और जहाँ जो चीज़ पक्की सच्चाई की तरह जम चुकी है, वहाँ इंसान को सिर्फ़ वही चीज़ दिखती है, और कुछ नहीं।

4.18.8

वर्तमानं मनोराज्यं नैष्फल्यं समुपागता । सा कृत्तिर्मनसो ज्ञेया तस्य जीवपरम्परा ॥ ८ ॥

vartamānaṃ manorājyaṃ naiṣphalyaṃ samupāgatā| sā kṛttirmansaso jñeyā tasya jīvaparamparā || 8 ||

This present imagined world of the mind has stopped being fruitless, it has become real. Know that this is the mind's own making, the chain of living beings it produces.

मन की यह मौजूदा कल्पित दुनिया अब बेकार नहीं रही, यह असली बन चुकी है। जान लो कि यह मन की ही रचना है, और इसी से जीवों की यह कड़ी बनती है।

4.18.9

परस्परं संमिलतां सर्गाणां रूढभाविनाम् । देहसत्ता भृशं रूढा देहाभावस्तु विस्मृतिः ॥ ९ ॥

parasparaṃ saṃmilatāṃ sargāṇāṃ rūḍhabhāvinām| dehasattā bhṛśaṃ rūḍhā dehābhāvastu vismṛtiḥ || 9 ||

As these worlds mix into each other and settle into being fixed and real, the existence of the body becomes very deeply fixed as real. Not having a body, on the other hand, is simply forgotten.

जैसे जैसे ये दुनियाएँ आपस में मिलकर पक्की सच्चाई बनती जाती हैं, वैसे वैसे शरीर का होना बहुत गहराई से सच्चाई की तरह जम जाता है। और शरीर का न होना, बस भुला दिया जाता है।

4.18.10

देहत्वपरिरूढत्वाच्चिद्धेम्ना विस्मृतात्मना । मिथ्यानुभूताऽविद्या तु शुद्धा कटकतामिता ॥ १० ॥

dehatvaparirūḍhatvācciddhenā vismṛtātmanā| mithyānubhūtā'vidyā tu śuddhā kaṭakatāmitā || 10 ||

Because being a body has become so deeply fixed as real, the pure gold of consciousness forgets its own true self. This falsely felt thing we call ignorance, even though it is pure at its core, has simply taken the shape of a bangle, the way gold takes the shape of a bangle.

शरीर होने का यह भाव इतनी गहराई से जम चुका है कि चेतना का शुद्ध सोना अपने असली रूप को भूल जाता है। यह झूठा अनुभव, जिसे हम अज्ञान कहते हैं, भीतर से शुद्ध होते हुए भी, बस उसी तरह कंगन का आकार ले लेता है जैसे सोना कंगन का रूप ले लेता है।

4.18.12

सर्वेषां जीवराशीनामात्मावस्थात्रयं श्रितः । जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्याख्यमत्र देहो न कारणम् ॥ १२ ॥

sarveṣāṃ jīvarāśīnāmātmāvasthātrayaṃ śritaḥ | jāgratsvapnasuṣuptyākhyamatra deho na kāraṇam || 12 ||

For every single living being, the true self rests in three states, called waking, dreaming, and deep sleep. Here, the body is not the cause of this.

हर एक जीव के लिए, असली आत्मा तीन अवस्थाओं में रहती है, जिन्हें जागृति, स्वप्न और गहरी नींद कहा जाता है। यहाँ शरीर इसका कारण नहीं है।

4.18.13

एवमात्मनि जीवत्वे सत्यवस्थात्रयात्मनि । नचाम्भसीव वीचित्वमस्मिन्कचति देहता ॥ १३ ॥

evamātmani jīvatve satyavasthātrayātmani | nacāmbhasīva vīcitvamasminkacati dehatā || 13 ||

So when the self takes the form of a living being, its whole nature is just these three states. Bodyhood does not stand out in it as something separate, just as being a wave does not stand out in water as something separate from the water.

इस तरह जब आत्मा जीव का रूप लेती है, तो उसकी पूरी प्रकृति बस यही तीन अवस्थाएँ हैं। इसमें शरीर होना अलग से कोई चीज़ नहीं दिखता, ठीक वैसे ही जैसे पानी में लहर होना पानी से अलग कोई चीज़ नहीं दिखती।

4.18.14

चित्कलापदमासाद्य सुषुप्तान्तपदस्थितम् । बुद्धो निवर्तेते जीवो मूढः सर्गे प्रवर्तते ॥ १४ ॥

citkalāpadamāsādya suṣuptāntapadasthitam | buddho nivartete jīvo mūḍhaḥ sarge pravartate || 14 ||

When a living being reaches this point, a mere trace of consciousness standing right at the edge just past deep sleep, the wise one stops there, while the ignorant one moves forward into the world.

जब कोई जीव इस बिंदु तक पहुँचता है, जो चेतना की बस एक हल्की झलक है और गहरी नींद के ठीक बाद की सीमा पर टिकी होती है, तो समझदार जीव वहीं रुक जाता है, जबकि नादान जीव आगे दुनिया में बढ़ जाता है।

4.18.15

यथा शुद्धः प्राणमरुत्परप्राणादिवेदनात् । वेत्ति वेद्यं मनोराज्यं तथा सर्गान्तराश्रयम् ॥ १५ ॥

yathā śuddhaḥ prāṇamārutparaprāṇādivedanāt | vetti vedyam manorājyaṃ tathā sargāntarāśrayam || 15 ||

Just as the pure self comes to know the mind's imagined world, a dream, by noticing the breath, the wind, and the other vital airs, in the same way it comes to know whatever rests inside a different world.

जिस तरह शुद्ध आत्मा साँस, वायु और बाकी प्राणों को महसूस करके मन की कल्पित दुनिया यानी सपने को जान लेती है, उसी तरह वह किसी और दुनिया के भीतर की चीज़ों को भी जान लेती है।

4.18.16

सर्वगत्वाच्चितः कश्चित्परसर्गेण नीयते । सर्गे सर्गे पृथग्रूपं सन्ति सर्गान्तराण्यपि ॥ १६ ॥

sarvagatvācchitaḥ kaścitparasargeṇa nīyate | sarge sarge pṛthagrūpaṃ santi sargāntarāṇyapi || 16 ||

Because consciousness is present everywhere, some part of it gets carried along by another being's world. Each world has its own separate form, and inside each world there are further worlds too.

चेतना हर जगह मौजूद होने के कारण, उसका कोई हिस्सा किसी और की दुनिया के साथ बह जाता है। हर दुनिया का अपना अलग रूप होता है, और हर दुनिया के भीतर आगे और भी दुनियाएँ होती हैं।

4.18.17

तेष्वप्यन्तस्थसर्गौघाः कदलीदलपीठवत् । सर्वसर्गान्तरादूरं पत्रपीवरवृत्तिमत् ॥ १७ ॥

teṣvapyantasthasargaughāḥ kadalīdalapīṭhavat | sarvasargāntarādūraṃ patrapīvaravṛttimat || 17 ||

Inside those worlds too, there are whole streams of further worlds, layered like the sheaths of a banana tree trunk, each one set far apart from all the others, yet each just as thick and solid as those very leaf layers.

उन दुनियाओं के भीतर भी, आगे कई दुनियाओं की धाराएँ होती हैं, जो केले के तने की परतों की तरह एक के भीतर एक जमी होती हैं, हर एक बाकी सबसे बहुत दूर होकर भी, उन्हीं पत्तों की तरह मोटी और ठोस होती है।

4.18.18

स्वभावशीतलं ब्रह्म कदलीदलमण्डपः । कदल्यामन्यता नास्ति यथा पत्रशतेष्वपि ॥ १८ ॥

svabhāvaśītalaṃ brahma kadalīdalamaṇḍapaḥ | kadalyāmanyatā nāsti yathā patraśateṣvapi || 18 ||

Brahman, cool and calm by its own nature, is like a whole pavilion built of banana tree leaf layers. In the banana tree there is no real difference from one layer to another, even when there are hundreds of leaves.

ब्रह्म, जो अपने स्वभाव से ही शीतल और शांत है, केले के तने की परतों से बने एक पूरे मंडप जैसा है। केले के तने में एक परत और दूसरी परत में कोई असली फ़र्क़ नहीं होता, चाहे उसमें सैकड़ों पत्ते क्यों न हों।

4.18.19

ब्रह्मतत्त्वेऽन्यता नास्ति तथा सर्गशतेष्वपि । बीजमेव रसात्फुल्लं भूत्वा बीजं पुनर्भवेत् ॥ १९ ॥

brahmatattve'nyatā nāsti tathā sargaśateṣvapi | bījameva rasātphullaṃ bhūtvā bījaṃ punarbhave || 19 ||

In the true nature of Brahman there is no real difference, and the same is true even among hundreds of worlds. It is like a seed, out of its own sap it grows into a full plant, and that plant again becomes a seed.

ब्रह्म के असली स्वरूप में कोई फ़र्क़ नहीं है, और यही बात सैकड़ों दुनियाओं के बीच भी सच है। यह ठीक एक बीज जैसा है, अपने ही रस से वह पूरा पौधा बनकर खिल उठता है, और वह पौधा फिर से बीज बन जाता है।

4.18.20

तथा ब्रह्म मनो भूत्वा बोधाद्ब्रह्म परं भवेत् । रसकारणकं बीजं फलभावेन जृम्भते ॥ २० ॥

tathā brahma mano bhūtvā bodhād brahma paraṃ bhavet | rasakāraṇakaṃ bījaṃ phalabhāvena jṛmbhate || 20 ||

In the same way, Brahman becomes the mind, and through awakening it becomes the highest Brahman once again. A seed, whose growth is caused by its own sap, unfolds itself into the shape of a fruit.

उसी तरह, ब्रह्म ही मन बन जाता है, और जागने पर वही फिर से परम ब्रह्म बन जाता है। जैसे एक बीज, जिसका बढ़ना उसके अपने ही रस से होता है, फैलकर फल का रूप ले लेता है।

4.18.21

ब्रह्मकारणको जीवो जगद्रूपेण जृम्भते । रसस्य कारणं किं स्यादिति वक्तुं न युज्यते ॥ २१ ॥

brahmakāraṇako jīvo jagadrūpeṇa jṛmbhate | rasasya kāraṇaṃ kiṃ syāditi vaktuṃ na yujyate || 21 ||

The living being, whose cause is Brahman, spreads out in the shape of the world, just as the fruit unfolds from the seed. But it makes no sense to ask what causes that first sap.

जीव, जिसका कारण ब्रह्म है, दुनिया के रूप में फैल जाता है, ठीक जैसे बीज से फल फैलता है। पर यह पूछना ठीक नहीं कि उस पहले रस का कारण क्या है।

4.18.22

ब्रह्मणः कारणं किं स्यादिति वक्तुं न युज्यते। स्वभावो निर्विशेषत्वात्परो वक्तुं न युज्यते॥ २२॥

brahmaṇaḥ kāraṇaṃ kiṃ syāditi vaktuṃ na yujyate | svabhāvo nirviśeṣatvātparo vaktuṃ na yujyate || 22 ||

In the same way, it makes no sense to ask what causes Brahman itself. Since its very nature has no distinctions in it, it makes no sense to say that anything stands beyond it or above it.

उसी तरह, यह पूछना भी ठीक नहीं कि ब्रह्म का कारण क्या है। चूँकि उसका स्वभाव पूरी तरह निर्विशेष यानी बिना किसी भेद के है, इसलिए यह कहना भी ठीक नहीं कि उससे परे या ऊपर कुछ और है।

4.18.23

नाकारणे कारणादि परे वस्त्वादिकारणेविचारणीयः सारो हि किमसारविचारणैः॥ २३॥

nākāraṇe kāraṇādi pare vastvādikāraṇevicāraṇīyaḥ sāro hi kimasāravicāraṇaiḥ || 23 ||

There is no point looking for a cause where there is none. What should truly be examined is the essence within that supreme thing which is the cause of everything. What use is there in examining things that have no essence at all?

जहाँ कोई कारण है ही नहीं, वहाँ कारण ढूँढ़ने का कोई मतलब नहीं। असली जाँच तो उस परम तत्व के भीतर के सार की होनी चाहिए, जो हर चीज़ का कारण है। जिन चीज़ों में कोई सार ही नहीं, उन्हें जाँचने से क्या फ़ायदा?

4.18.24

बीजं जहद्बीजवपुः फलीभूतं विलोक्यते। ब्रह्माजहन्निजवपुः फलं बीजे च संस्थितम्॥ २४॥

bījaṃ jahadbījavapuḥ phalībhūtaṃ vilokyate | brahmājahannijavapuḥ phalaṃ bīje ca saṃsthitam || 24 ||

A seed gives up being a seed and is seen turning into a fruit. But Brahman never gives up its own true form, its fruit stays right there within the seed itself.

एक बीज अपना बीज होना छोड़कर फल के रूप में बदला हुआ दिखता है। पर ब्रह्म कभी अपना असली रूप नहीं छोड़ता, उसका फल तो बीज के भीतर ही टिका रहता है।

4.18.25

बीजस्याकृतिमत्सर्वं तेनानाकृतिमत्पदम्न युज्यते समीकर्तुं तस्मान्नास्त्युपमा शिवे॥ २५॥

bījasyākṛtimatsarvaṃ tenānākṛtimatpadamna yujyate samīkartuṃ tasmānnāstyupamā śive || 25 ||

Everything about a seed has some shape. So that shapeless being cannot be matched with it. That is why there is no comparison for the pure, blessed reality.

बीज से जुड़ी हर चीज़ का एक न एक आकार होता है। इसलिए उस निराकार सत्ता की उससे बराबरी नहीं हो सकती। यही कारण है कि उस शुद्ध, कल्याणकारी सत्य के लिए कोई उपमा नहीं है।

4.18.26

स्वमेव जायतेऽस्वाभं न च तज्जायतेऽन्यदृक्। अतो न जातं नाजातं विद्धि ब्रह्म नभो जगत्॥ २६॥

svameva jāyate'svābhaṃ na ca tajjāyate'nyadṛk | ato na jātaṃ nājātaṃ viddhi brahma nabho jagat || 26 ||

The self alone gives rise to something that does not look like itself, yet what is born is not really separate from it either. So know that Brahman, the sky, and this world are neither born nor unborn.

आत्मा खुद से ऐसी चीज़ पैदा करती है जो देखने में उससे अलग लगती है, फिर भी जो पैदा होता है वह उससे बिल्कुल अलग भी नहीं है। इसलिए जानो कि ब्रह्म, आकाश और यह जगत, न तो पैदा हुए हैं और न अजन्मे हैं।

4.18.27

दृश्यं पश्यन्स्वमात्मानं न द्रष्टा संप्रपश्यति । प्रपञ्चाक्रान्तसंवित्तेः कस्योदेति निजा स्थितिः ॥ २७ ॥

dṛśyaṃ paśyansvamātmānaṃ na draṣṭā saṃprapaśyati | prapañcākrāntasaṃvitteḥ kasyodeti nijā sthitiḥ || 27 ||

While looking at things, the seer does not see himself. When the mind is fully caught up in the world, whose own true state can ever show itself?

चीज़ों को देखते हुए, देखने वाला खुद को नहीं देखता। जब मन पूरी तरह जगत में उलझा हो, तो किसकी अपनी सच्ची स्थिति सामने आ सकती है?

4.18.28

मृगतृष्णाजलभ्रान्तौ सत्यां कैव विदग्धता । विदग्धतायां सत्यां तु कैवासौ मृगतृष्णिका ॥ २८ ॥

mṛgatṛṣṇājalabhrāntau satyāṃ kaiva vidagdhatā | vidagdhatāyāṃ satyāṃ tu kaivāsau mṛgatṛṣṇikā || 28 ||

When a person mistakes a mirage for water, where is his cleverness? But when there truly is cleverness, what is that mirage worth?

जब कोई मृगतृष्णा को पानी समझ बैठता है, तो उसकी समझदारी कहाँ रही? लेकिन जब सच्ची समझ हो, तो वह मृगतृष्णा फिर है ही क्या?

4.18.29

आकाशविशदो द्रष्टा सर्वाङ्गोऽपि न पश्यति । नेत्रं निजमिवात्मानं दृशीभूतमहो भ्रमः ॥ २९ ॥

ākāśaviśado draṣṭā sarvāṅgo'pi na paśyati | netraṃ nijamivātmānaṃ dṛśībhūtamaho bhramaḥ || 29 ||

The seer is as clear as the sky. Even with every part of a body, he does not really see - just as an eye cannot see itself. What a delusion, that he seems to turn into a thing that is seen!

देखने वाला आकाश जैसा निर्मल है। शरीर के सारे अंग होते हुए भी, वह असल में देखता नहीं - जैसे आँख खुद अपनी आँख को नहीं देख पाती। कैसा भ्रम है कि वह खुद एक दिखने वाली चीज़ बन जाता है!

4.18.30

आकाशविशदो द्रष्टा सर्वाङ्गोऽपि न पश्यति । तेषां निजमिवात्मानं दृशीभूतमिवाभ्रमः ॥ ३० ॥

ākāśaviśado draṣṭā sarvāṅgo'pi na paśyati | teṣāṃ nijamivātmānaṃ dṛśībhūtamivābhraṃaḥ || 30 ||

The seer is as clear as the sky. Even with every part of a body, he does not really see. But for those who understand this, even though their own self seems to turn into the world that is seen, there is no delusion in it.

देखने वाला आकाश जैसा निर्मल है। शरीर के सारे अंग होते हुए भी, वह असल में देखता नहीं। पर जो लोग यह समझते हैं, उनके लिए खुद का यह रूप दिखने वाले जगत जैसा लगने पर भी, इसमें कोई भ्रम नहीं है।

4.18.31

आकाशविशदं ब्रह्म यत्नेनापि न लभ्यते । दृश्ये दृश्यतया दृष्टे त्वस्य लाभः सुदूरतः ॥ ३१ ॥

ākāśaviśadaṃ brahma yatnenāpi na labhyate | dṛśye dṛśyatayā dṛṣṭe tvasyalābhaḥ sudūrataḥ || 31 ||

Brahman, clear as the sky, cannot be reached even by great effort. And if what is seen is looked at as nothing more than a thing seen, reaching Brahman stays far, far away.

आकाश जैसा निर्मल ब्रह्म बड़ी मेहनत करने पर भी नहीं मिलता। और अगर दिखने वाली चीज़ को सिर्फ एक दिखने वाली चीज़ मानकर देखा जाए, तो ब्रह्म को पाना बहुत दूर की बात बनी रहती है।

4.18.32

तादृग्भावस्वरूपेण विना यत्र न दृश्यतेतत्रापि दूरोदस्तैव द्रष्टुः सूक्ष्मस्य दृश्यता ॥ ३२ ॥

tādṛgbhāvasvarūpeṇa vinā yatra na dṛśyatetatrāpi dūrodastaiva draṣṭuḥ sūkṣmasya dṛśyatā || 32 ||

Nothing is ever seen unless it carries something of that same nature within it. Even so, the seer, who is very subtle, stays impossible to see; that remains a far-off thing.

बिना उस जैसी प्रकृति के कोई भी चीज़ कभी नहीं दिखती। फिर भी, देखने वाला जो बहुत सूक्ष्म है, वह दिखाई ही नहीं देता - यह बात दूर की ही बनी रहती है।

4.18.33

दृश्यं च दृश्यते तेन द्रष्टा राम न दृश्यतेद्रष्टैव संभवत्येको नतु दृश्यमिहास्ति हि ॥ ३३ ॥

dṛśyaṃ ca dṛśyate tena draṣṭā rāma na dṛśyatedraṣṭaiva saṃbhavatyeko natu dṛśyamihāsti hi || 33 ||

Because of that awareness, the thing that is seen gets seen, but the seer himself, Rama, is never seen. Only the seer truly exists, as the one; there is really no separate thing seen here at all.

उसी चेतना की वजह से दिखने वाली चीज़ दिखती है - पर हे राम, देखने वाला खुद कभी नहीं दिखता। असल में सिर्फ देखने वाला ही एक होकर मौजूद है; यहाँ कोई अलग दिखने वाली चीज़ है ही नहीं।

4.18.34

द्रष्टा सर्वात्मको दृश्ये स्थितश्चेत्कैव द्रष्टृतासर्वशक्तिमता राज्ञा यद्यत्संपद्यते यथा ॥ ३४ ॥

draṣṭā sarvātmako dṛśye sthitaścetkaiva draṣṭṛtāsarvaśaktimatā rājñā yadyatsaṃpadyate yathā || 34 ||

If the seer, who is the very self of everything, stays fixed inside the thing that is seen, then what does being a seer even mean? Think of it this way: for an all-powerful king, whatever happens, happens exactly as he wills it.

अगर देखने वाला, जो हर चीज़ का असली आत्मा है, दिखने वाली चीज़ के भीतर ही स्थिर होकर रह जाए, तो फिर देखने वाला होना का मतलब ही क्या बचा? इसे ऐसे समझो - एक सर्वशक्तिमान राजा के लिए जो कुछ भी होता है, वह ठीक वैसे ही होता है जैसा वह चाहता है।

4.18.35

तत्तथानुभवत्याशु स एवोदेति तत्तथायथा मधुरसोल्लासः खण्डो भवति भासुरः ॥ ३५ ॥

tattathānubhavatyāśu sa evodeti tattathāyathā madhurasollāsaḥ khaṇḍo bhavati bhāsuraḥ || 35 ||

He at once feels it in just that way; he himself rises up as that, in that way, just as the sweet taste of sugarcane juice itself turns into a shining lump of sugar candy.

वह उसे उसी रूप में तुरंत महसूस करता है; वह खुद उसी रूप में उठ खड़ा होता है - जैसे गन्ने के रस की मिठास खुद एक चमकीली शक्कर की डली बन जाती है।

4.18.36

रसतामजहच्चैव फलपुष्पलतोन्नतःचिदुल्लासस्तथा जीवो भूयो भवति देहकः ॥ ३६ ॥

rasatāmajahaccaiva phalapuṣpalatonnataḥcidullāsastathā jīvo bhūyo bhavati dehakaḥ || 36 ||

The sap, without ever losing its own nature as sap, rises up into fruit, flower, and vine. In the same way, the glow of consciousness, as the living self, turns once again into a body.

जैसे रस अपनी रस-प्रकृति को छोड़े बिना ही फल, फूल और बेल के रूप में उठ खड़ा होता है, वैसे ही चेतना का यह उल्लास जीव के रूप में एक बार फिर देह बन जाता है।

4.18.37

चिन्मात्रतां तामजहदेव दर्शनदृक्मयम्। अन्तःस्वानुभवश्चैव जगत्स्वप्नं प्रपश्यति ॥ ३७ ॥

cinmātratāṃ tāmajahadeva darśanadṛkmayam | antaḥsvānubhavaścaiva jagatsvapnaṃ prapaśyati || 37 ||

Without ever losing that state of being pure consciousness alone, it turns into seeing itself. And it is this inner experience alone that looks at the world as a dream.

शुद्ध चेतना मात्र होने की उस अवस्था को छोड़े बिना ही, वह देखने और दर्शन रूप बन जाती है। और यही भीतर का अपना अनुभव है, जो जगत को एक सपने की तरह देखता है।

4.18.38

अहंतादिरसे भौमे खण्डकत्वमिवात्मनि। नानाखण्डसहस्रौघैरद्वितीयैर्निजात्मनः ॥ ३८ ॥

ahaṃtādirase bhaume khaṇḍakatvamivātmani | nānākhaṇḍasahasraughairadvitīyairnijātmanaḥ || 38 ||

Just as sugarcane juice breaks into lumps of sugar candy, so within the self, the feeling of I arises broken into countless thousands of pieces of one's own single self, pieces that, in truth, are not really separate from each other.

जैसे गन्ने का रस टूटकर शक्कर की डलियों में बदल जाता है, वैसे ही आत्मा के भीतर मैं का भाव अपने ही एक आत्मा के हज़ारों टुकड़ों में बँटा हुआ दिखता है - जो टुकड़े असल में एक-दूसरे से अलग नहीं हैं।

4.18.39

यथोदेति रसो भौमश्चित्तथोदेत्यसंभ्रमम्। चिद्रसोल्लासवृक्षाणां कचतामात्मनात्मनि ॥ ३९ ॥

yathodeti raso bhaumaścittathodetyasaṃbhramam | cidrasollāsavṛkṣāṇāṃ kacatāmātmanātmani || 39 ||

Just as sap rises up from the earth, so consciousness rises up in that same easy, untroubled way. Among these trees that are consciousness's own sap and delight, it takes shape shining forth, by itself, within itself.

जैसे धरती से रस उठता है, वैसे ही चेतना भी उसी सहज, बिना उलझन के ढंग से उठती है। चेतना के अपने रस और आनंद रूपी इन पेड़ों में, वह खुद ही अपने भीतर चमकती हुई प्रकट होती है।

4.18.40

दृश्यशाखाशताड्यानामिह नान्तोऽवगम्यते। खण्डः प्रत्येकमेवायं यथा रसचमत्कृतिम् ॥ ४० ॥

dṛśyaśākhāśatāḍyānāmiha nānto'vagamyate | khaṇḍaḥ pratyekamevāyaṃ yathā rasacamatkṛtim || 40 ||

These are trees rich with hundreds of branches of visible things, and here their end cannot be found. Yet each single lump of candy, just like the rest, is a marvel made of that same sap.

ये पेड़ दिखने वाली चीज़ों की सैकड़ों शाखाओं से भरे हैं, और यहाँ इनका कोई अंत नहीं मिलता। फिर भी शक्कर की हर एक डली, बाकी सबकी तरह, उसी रस का एक चमत्कार है।

4.18.41

स्वादयत्येवमेषा चित्पृथक्पश्यति संस्थितिम्। या योदेति यथा यस्या जीवशक्तेः स्वसंसृतिः ॥ ४१ ॥

svādayatyevameṣā citpṛthakpaśyati saṃsthitim | yā yodeti yathā yasyā jīvaśakteḥ svasaṃsṛtiḥ || 41 ||

In this way this consciousness tastes each thing, seeing every state as separate. Whichever part of it rises, and in whatever way it rises, that becomes the own life-round of that living being's power.

इस तरह यह चेतना हर चीज़ को चखती है, और हर स्थिति को अलग-अलग करके देखती है। इसका जो भी अंश जिस रूप में उठता है, वही उस जीव-शक्ति का अपना जीवन-चक्र बन जाता है।

4.18.42

तां तां तथैति सा स्वात्मचिद्रूपभुवनस्थितिम् । जीवसंसृतयः काश्चिन्प्रमिलन्ति परस्परम् ॥ ४२ ॥

tāṃ tāṃ tathaiti sā svātmacidrūpabhuvanasthitim | jīvasaṃsṛtayaḥ kāścinpramilanti parasparam || 42 ||

In just that way, this consciousness reaches each and every state of a world made from its own self. Some of these life-journeys of different beings come to blend together with one another.

इसी तरह यह चेतना अपने ही स्वरूप से बने हर संसार जैसी स्थिति तक पहुँचती है। अलग-अलग जीवों के ये जीवन-चक्र कभी-कभी आपस में मिल भी जाते हैं।

4.18.43

स्वयं विहृत्य संसारे शाम्यन्ति चिरकालतः । सूक्ष्मया परया दृष्ट्या त्वं पश्य ज्ञानचेतसा ॥ ४३ ॥

svayaṃ vihṛtya saṃsāre śāmyanti cirakālataḥ | sūkṣmayā parayā dṛṣṭyā tvaṃ paśya jñānacetasā || 43 ||

After wandering on their own through this world for a very long time, they finally settle down and grow calm. You, look at this with a subtle, higher sight, with a mind full of true knowledge.

अपने आप संसार में बहुत लंबे समय तक भटकने के बाद, वे आखिरकार शांत हो जाते हैं। तुम इसे एक सूक्ष्म और श्रेष्ठ दृष्टि से, ज्ञान से भरे मन के साथ देखो।

4.18.44

जगज्वालसहस्राणि परमाण्वन्तरेष्वपि । चित्ते नभसि पाषाणे ज्वालायामनिले जले ॥ ४४ ॥

jagajvālasahasrāṇi paramāṇvantareṣvapi | citte nabhasi pāṣāṇe jvālāyāmanile jale || 44 ||

Thousands of blazing worlds exist even inside the smallest specks of matter, in the mind, in the sky, in stone, in a flame, in the wind, in water.

हज़ारों जलते हुए जगत सबसे छोटे कणों के भीतर भी मौजूद हैं - मन में, आकाश में, पत्थर में, आग की लपट में, हवा में, पानी में।

4.18.45

सन्ति संसारलक्षाणि तिले तैलमिवाखिले । सिद्धिमेति यदा चेतस्तदा जीवो भवेच्चितिः ॥ ४५ ॥

santi saṃsāralakṣāṇi tile tailamivākhile | siddhimeti yadā cetastadā jīvo bhaveccitiḥ || 45 ||

Hundreds of thousands of such worlds exist in everything, the way oil exists in a sesame seed. When the mind reaches full accomplishment, then the living self itself becomes pure consciousness.

हर चीज़ में लाखों संसार इसी तरह मौजूद हैं, जैसे तिल में तेल होता है। जब मन पूरी सिद्धि पा लेता है, तब जीव खुद शुद्ध चेतना बन जाता है।

4.18.46

शुद्धा च सा सर्वगता तेन तन्मेलनं मिथः । सर्वेषां पद्मजादीनां स्वसत्ताभ्रमरूपकः ॥ ४६ ॥

śuddhā ca sā sarvagatā tena tanmelanaṃ mithaḥ | sarveṣāṃ padmajādīnāṃ svasattābharamarūpakaḥ || 46 ||

That consciousness is pure and present everywhere; because of this, all things secretly blend into one another. The sense that everyone, from Brahma the creator down to the rest, has a separate existence of their own is really just a kind of delusion.

वह चेतना शुद्ध है और हर जगह मौजूद है; इसी वजह से सब चीज़ें आपस में गुप्त रूप से घुल-मिल जाती हैं। ब्रह्मा से लेकर बाकी सबके अलग-अलग अस्तित्व होने का भाव, असल में बस एक भ्रम है।

4.18.47

जगद्दीर्घमहास्वप्नः सोऽयमन्तः समुत्थितः । स्वप्नात्स्वप्नान्तरं यान्ति काश्चिद्भूतपरम्पराः ॥ ४७ ॥

jagaddīrghamahāsvapnaḥ so'yamantaḥ samutthitaḥ | svapnātsvapnāntaraṃ yānti kāścidbhūtaparamparāḥ || 47 ||

This world is one long, great dream, rising up from within. Some lines of living beings pass from one dream into yet another dream.

यह जगत एक लंबा, बहुत बड़ा सपना है, जो भीतर से ही उठ खड़ा हुआ है। कुछ जीवों की कड़ियाँ एक सपने से दूसरे सपने में जाती रहती हैं।

4.18.48

तेनोपलम्भः कुड्यादावसौ दृढतरः स्थितः । यद्यत्र चिद्भावयति तत्तत्राशु भवत्यलम् ॥ ४८ ॥

tenopalambhaḥ kuḍyādāvasau dṛḍhataraḥ sthitaḥ | yadyatra cidbhāvayati tattatrāśu bhavatyalam || 48 ||

Because of this, the feeling that things like a wall are completely real and solid stays very firm. Whatever the mind pictures, and wherever it pictures it, appears there at once, fully formed.

इसी वजह से दीवार जैसी चीज़ों के सच्चे और ठोस होने का एहसास बहुत पक्का बना रहता है। मन जो कुछ भी सोचे और जहां कहीं भी सोचे, वह वहां तुरंत, पूरी तरह से बन जाता है।

4.18.49

तया स्वप्नेऽपि यद्दृष्टं तत्काले सत्यमेव तत् । चिदणोरन्तरे सन्ति समस्तानुभवाणवः ॥ ४९ ॥

tayā svapne'pi yadṛṣṭaṃ tatkāle satyameva tat | cidaṇorantare santi samastānubhavāṇavaḥ || 49 ||

Even in a dream, whatever it sees is completely real at that moment. Inside one tiny particle of consciousness, all the tiny particles of experience exist.

सपने में भी वह जो कुछ देखता है, उस पल वह पूरी तरह सच होता है। चेतना के एक छोटे से कण के भीतर अनुभव के सारे कण मौजूद रहते हैं।

4.18.50

यथा बीजान्तरे पत्रलतापुष्पफलाणवः । परमाणुजगत्यन्तर्मन्ये चित्परमाणवः ॥ ५० ॥

yathā bījāntare patralatāpuṣpaphalāṇavaḥ | paramāṇujagatyantarmanye citparamāṇavaḥ || 50 ||

Just as a tiny seed already holds the leaf, the vine, the flower, and the fruit inside it, I think that inside a world made of tiny particles, there are particles of consciousness.

जैसे एक छोटे बीज के भीतर पत्ता, बेल, फूल और फल पहले से ही छिपे होते हैं, वैसे ही मुझे लगता है कि कणों से बने इस संसार के भीतर चेतना के कण होते हैं।

4.18.51

देशकालक्रियाद्रव्यैः स्वैरेवाणुभिरेव चित् । अणूननुभवत्यन्तरितराणि नसंभवात् ॥ ५१ ॥

deśakālakriyādravyaiḥ svair evāṇubhireva cit | aṇūnanubhavatyantaritarāṇi nasaṃbhavaāt || 51 ||

Consciousness feels things only through its own particles of place, time, action, and object. It never feels what belongs to another, because that cannot happen.

चेतना चीज़ों को सिर्फ़ अपने ही स्थान, समय, क्रिया और वस्तु के कणों के ज़रिए महसूस करती है। वह किसी दूसरे के कणों को कभी महसूस नहीं करती, क्योंकि ऐसा हो ही नहीं सकता।

4.18.52

स्वयं सर्गस्य कचितः स्वप्ने चिदणुखण्डकः । ब्रह्मादेः कीटनिष्ठस्य देहदृष्ट्यानुभावितः ॥ ५२ ॥

svayaṃ sargasya kacitaḥ svapne cidaṇukhaṇḍakaḥ | brahmādeḥ kīṭaniṣṭhasya dehadṛṣṭyānubhāvitaḥ || 52 ||

A tiny piece of that particle of consciousness itself glows within this dream we call creation. It is felt through whatever body it looks from, whether that body is the great Brahma's or a small worm's.

चेतना के उस कण का एक छोटा टुकड़ा इस सृष्टि रूपी सपने में खुद चमकता है। वह जिस भी शरीर से देखता है, उसी के हिसाब से महसूस करता है, चाहे वह ब्रह्मा जैसा बड़ा शरीर हो या कीड़े जैसा छोटा।

4.18.53

कचितं किंचिदेवेह वस्तुतस्तु न किंचन । स्वयं सत्यं स्वादयन्ते द्वैतं चित्परमाणवः ॥ ५३ ॥

kacitaṃ kiṃcideveha vastutastu na kiṃcana | svayaṃ satyaṃ svādayante dvaitaṃ citparamāṇavaḥ || 53 ||

What shows up here looks like something, but in truth it is nothing at all. The tiny particles of consciousness are themselves real, yet they taste this as if it were two things, a seer and a seen.

यहां जो कुछ दिखता है, वह कुछ लगता तो है, पर असल में कुछ भी नहीं है। चेतना के कण खुद तो सच्चे हैं, फिर भी वे इसे दो चीज़ों जैसा महसूस करते हैं, एक देखने वाला और एक दिखने वाला।

4.18.54

स्वयं प्रकचति स्फारदेहश्चिदणुखण्डकः । नेत्रादिकुसुमद्वारैः संविदामोदमुद्गिरन् ॥ ५४ ॥

svayaṃ prakacati sphāradehaścidaṇukhaṇḍakaḥ | netrādikusumadvāraiḥ saṃvidāmōdamudgiran || 54 ||

That tiny piece of consciousness shines on its own, its form spreads out wide, and through doorways like flowers, the eyes and the other senses, it lets out the fragrance of its own awareness.

चेतना का वह टुकड़ा खुद-ब-खुद चमकता है, उसका रूप फैल जाता है, और आंख जैसे फूल-रूपी द्वारों से वह अपनी चेतना की खुशबू फैलाता है।

4.18.55

संपश्यतितरां कश्चिद्बहीरूपेण चिद्घटः । सर्वगत्वादनाशित्वादृश्यबीजस्य वै चितेः ॥ ५५ ॥

saṃpaśyatitarāṃ kaścidvahīrūpeṇa ciddhaṭaḥ | sarvagatvādanāśitvādṛśyabījasya vai citeḥ || 55 ||

Because consciousness, the seed of everything that is seen, reaches everywhere and is never destroyed, a single vessel of consciousness sees, very clearly, in the form of an outer world.

चूंकि चेतना, जो हर दिखने वाली चीज़ का बीज है, हर जगह मौजूद है और कभी नष्ट नहीं होती, इसलिए चेतना का एक घड़ा यानी एक मन बाहरी संसार के रूप में बहुत साफ़-साफ़ देखता है।

4.18.56

अन्तरेवाखिलं कश्चित्पश्यत्यविमलं जगत् । तत्रातिकालकलनादुन्मज्जति निमज्जति ॥ ५६ ॥

antarevākhilaṃ kaścitpaśyatyavimalaṃ jagat | tatrātikālakalanādunmajjati nimajjati || 56 ||

Someone sees this whole, unclean world only within himself. There, as long stretches of time pass, it rises up and sinks down, again and again.

कोई एक अपने भीतर ही यह पूरा मैला संसार देखता है। वहां लंबे समय के बीतने से यह बार-बार कभी उभरता है, कभी डूब जाता है।

4.18.57

स्वप्नात्स्वप्नान्तरं तत्र तथा पश्यन्पुनःपुनः । मिथ्या वटेषु लुठति शिलेव शिखरच्युता ॥ ५७ ॥

svapnātsvapnāntaraṃ tatra tathā paśyanpunaḥpunaḥ | mithyā vaṭeṣu luṭhati śileva śikharacyutā || 57 ||

Seeing again and again like this, moving from one dream into another dream, it tumbles about, unreal, among spreading banyan trees, like a boulder that has broken loose and fallen from a mountain peak.

इस तरह बार-बार एक सपने से दूसरे सपने में देखते हुए, यह फैले हुए बरगद के पेड़ों के बीच झूठ-मूठ लुढ़कता रहता है, जैसे कोई चट्टान पहाड़ की चोटी से टूटकर लुढ़क रही हो।

4.18.58

केचित्संमिलिताः केचिदात्मन्येवाभ्रमे स्थिताः । मग्नाः स्वसंवित्प्रसरे स्फुरन्तो देहखण्डकाः ॥ ५८ ॥

kecitsaṃmilitāḥ kecidātmanyevābhraṃe sthitāḥ | magnāḥ svasaṃvitprasare sphuranto dehakhaṇḍakāḥ || 58 ||

Some of these little body fragments mix together with others; some stay alone, lost in their own confusion. Flickering into being, they are all sunk inside the spread of their own awareness.

शरीर के ये छोटे-छोटे टुकड़े कभी आपस में मिल जाते हैं, कभी अकेले अपनी ही उलझन में खोए रहते हैं। चमकते हुए ये टुकड़े असल में अपनी ही चेतना के फैलाव में डूबे रहते हैं।

4.18.59

स्वयमन्तः प्रपश्यन्ति ये जगज्जीवविभ्रमम् । तैस्तैः कैश्चित्ततं दृश्यमसत्स्वप्नवदाश्रितम् ॥ ५९ ॥

svayamantaḥ prapaśyanti ye jagajjīvavibhramam | taiḥtaiḥ kaiścittataṃ dṛśyamasatsvapnavadāśritam || 59 ||

Those who see within themselves this whirl of world and living being, through each of them the visible world spreads out, and it is unreal, resting on nothing, just like a dream.

जो अपने भीतर ही संसार और जीव के इस भ्रम को देखते हैं, उन्हीं में से हर एक के ज़रिए यह दिखने वाला संसार फैलता है, और यह सपने की तरह झूठा और बिना आधार का है।

4.18.60

सर्वात्मत्वात्स्वभावस्य तद्दृश्यं सत्यमात्मनि । सर्वगं विद्यते यत्र तत्र सर्वमुदेति हि ॥ ६० ॥

sarvātmatvātsvabhāvasya taddṛśyaṃ satyamātmani | sarvagaṃ vidyate yatra tatra sarvamudeti hi || 60 ||

Since its true nature is the very self of everything, this visible world is real within the self. Wherever this all-reaching awareness is present, everything indeed arises there.

क्योंकि इसका असली स्वभाव सबका आत्मा होना है, इसलिए यह दिखने वाला संसार आत्मा के भीतर सच्चा है। जहां कहीं भी यह सब जगह मौजूद चेतना है, वहीं सब कुछ पैदा होता है।

4.18.61

जीवान्तः प्रतिभासस्य सर्वस्य पुनरन्तरे । जीवखण्ड उदेत्युच्चैस्तस्यान्तरितरोऽपि च ॥ ६१ ॥

jīvāntaḥ pratibhāsasya sarvasya punarantare | jīvakhaṇḍa udetyuccais tasyāntaritaro'pi ca || 61 ||

Inside one living being, within each thing it perceives, another fragment of a living being clearly rises up. And inside that one too, still another one appears.

एक जीव के भीतर, उसे दिखने वाली हर चीज़ के भीतर, जीव का एक और टुकड़ा साफ़ उभर आता है। और उसके भीतर भी एक और टुकड़ा प्रकट हो जाता है।

4.18.62

जीवान्तर्जायते जीवस्तस्यान्तरपि जीवकः । सर्वत्र रम्भादलवज्जीवो जीवान्तरेव हि ॥ ६२ ॥

jīvāntarjāyate jīvastasyāntarapi jīvakaḥ | sarvatra rambhādalavajjīvo jīvāntareva hi || 62 ||

Inside one living being, another living being is born, and inside that one, yet another. It is everywhere like the layers of a banana tree trunk, peel one away and there is just another layer, a living being is always found only inside another living being.

एक जीव के भीतर दूसरा जीव जन्म लेता है, और उसके भीतर भी एक और जीव। यह हर जगह केले के तने की परतों जैसा है, एक परत हटाओ तो नीचे बस एक और परत मिलती है, जीव हमेशा किसी दूसरे जीव के ही भीतर मिलता है।

4.18.63

दृश्यबुद्धिपरावृत्तौ सममेतदनन्तरम् । हेम्नीव कटकादित्वं परिज्ञातं विनश्यति ॥ ६३ ॥

dṛśyabuddhiparāvṛttau samametadanantaram | hemnīva kaṭakāditvaṃ parijñātaṃ vinaśyati || 63 ||

The moment the mind's view turns back from seeing this world as something separate and real, this whole appearance vanishes at once, just as the name bracelet for a piece of gold vanishes the moment you clearly recognise it as simply gold.

जिस पल मन का यह नज़रिया पलट जाता है कि दिखने वाली चीज़ अलग और सच्ची है, उसी पल यह सारा दृश्य मिट जाता है, ठीक वैसे ही जैसे सोने के गहने को जब साफ़-साफ़ पहचान लिया जाए कि यह तो बस सोना है, तो उसका कंगन नाम मिट जाता है।

4.18.64

विचारो यस्य नोदेति कोऽहं किमिदमित्यलम् । तस्यान्तर्न विमुक्तोऽसौ दीर्घो जीवज्वरभ्रमः ॥ ६४ ॥

vicāro yasya nōdēti kō'haṃ kimidamityalam | tasyāntarn na vimuktō'sau dīrghō jīvajvarabhramaḥ || 64 ||

If someone never truly asks who am I, what is this, then inside him this long fever of feeling like a small separate self never goes away.

जिस किसी के मन में यह सवाल ठीक से नहीं उठता कि मैं कौन हूं, यह क्या है, उसके भीतर से खुद को एक अलग, सीमित जीव मानने वाला यह लंबा बुखार जैसा भ्रम कभी नहीं जाता।

4.18.65

विचारः सफलस्तस्य विज्ञेयो यस्य सन्मतेः । दिनानुदिनमायाति तानवं भोगगृध्रता ॥ ६५ ॥

vicāraḥ saphalastasya vijñeyō yasya sanmateḥ | dinānudinamāyāti tānavaṃ bhōgagṛdhratā || 65 ||

You can know that someone's search is bearing fruit, and that his mind is turning good, when his hunger for pleasures grows thinner, day by day.

यह तब समझ लो कि किसी की यह खोज सफल हो रही है और उसका मन अच्छा बनता जा रहा है, जब उसकी भोग-विलास की लालच दिन-ब-दिन कम होती जाए।

4.18.66

यथा देहोपयुक्तं हि करोत्यारोग्यमौषधम् । तथेन्द्रियजयेऽभ्यस्ते विवेकः फलितो भवेत् ॥ ६६ ॥

yathā dēhōpayuktaṃ hi karōtyārōgyamauṣadhaṃ | tathēndriyajayē'bhyastē vivēkaḥ phalitō bhavēt || 66 ||

Just as medicine, when used the right way on the body, brings good health, in the same way, when you practice controlling your senses, your power to tell right from wrong begins to bear fruit.

जैसे दवा को शरीर पर सही तरीके से इस्तेमाल करने पर वह सेहत देती है, वैसे ही जब इंद्रियों पर काबू पाने का अभ्यास किया जाता है, तो सही-गलत परखने की समझ फल देने लगती है।

4.18.67

विवेकोऽस्ति वचस्येव चित्रेऽग्निरिव भास्वरः । यस्य तेनापरित्यक्ता दुःखायैवाविवेकिता ॥ ६७ ॥

viveko'sti vacasyeva citre'gniriva bhāsvaraḥ | yasya tenāparityaktā duḥkhāyaivāvivekitā || 67 ||

For some people, understanding lives only in their words, like a fire painted in a picture, it looks bright but gives no warmth. Such a person never actually lets go of his lack of understanding, and it stays with him only to cause him suffering.

कुछ लोगों की समझ सिर्फ़ बातों में ही रहती है, जैसे किसी तस्वीर में बनी आग चमकती तो है पर गर्मी नहीं देती। ऐसा इंसान अपनी नासमझी को कभी सच में नहीं छोड़ पाता, और यह नासमझी उसे बस दुख ही देती रहती है।

4.18.68

यथा स्पर्शेन पवनः सत्तामायाति नो गिरा । तथेच्छातानवेनैव विवेकोऽस्य विबुध्यते ॥ ६८ ॥

yathā sparśena pavanaḥ sattāmāyāti no girā | tathecchātānavenaiva viveko'sya vibudhyate || 68 ||

Just as you know the wind is real by feeling it, not just by talking about it, in the same way, someone's understanding is known to be real only when his desires actually grow thinner.

जैसे हवा के होने का पता उसे छूकर और महसूस करके चलता है, सिर्फ़ बातों से नहीं, वैसे ही किसी की समझ सच्ची है या नहीं, यह तभी पता चलता है जब उसकी इच्छाएं वाकई कम होती जाएं।

4.18.69

चित्रामृतं नामृतमेव विद्धि चित्रानलं नानलमेव विद्धि । चित्राङ्गना नूनमनङ्गनेति वाचा विवेकस्त्वविवेक एव ॥ ६९ ॥

citrāmṛtaṃ nāmṛtameva viddhi citrānalaṃ nānalameva viddhi | citrāṅganā nūnamanaṅganeti vācā vivekastvaviveka eva || 69 ||

Know this: nectar painted in a picture is not real nectar. Fire painted in a picture is not real fire. A woman painted in a picture is surely not a real woman. In the same way, understanding that lives only in words is really no understanding at all.

यह समझ लो, तस्वीर में बना अमृत असली अमृत नहीं होता। तस्वीर में बनी आग असली आग नहीं होती। तस्वीर में बनी स्त्री सच में स्त्री नहीं होती। ठीक वैसे ही, जो समझ सिर्फ़ बातों में रहती है, वह असल में समझ है ही नहीं।

4.18.70

पूर्वं विवेकेन तनुत्वमेति रागोऽथ वैरं च समूलमेव । पश्चात्परिक्षीयत एव यत्नः स पावनो यत्र विवेकितास्ति ॥ ७० ॥

pūrvaṃ vivekena tanutvameti rāgo'tha vairaṃ ca samūlameva | paścātparikṣīyata eva yatnaḥ sa pāvano yatra vivekitāsti || 70 ||

First, through right understanding, both attachment and hatred grow thin, right down to their root. After that, even the effort to keep trying grows less and less. Wherever this understanding is, everything there becomes pure.

पहले सही समझ आने से लगाव और नफ़रत, दोनों जड़ से ही पतले पड़ने लगते हैं। उसके बाद कोशिश करने की ज़रूरत भी धीरे-धीरे कम होती जाती है। जहां भी यह समझ होती है, वहां सब कुछ पवित्र हो जाता है।

Chapter 19

4.19.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जीवबीजं परं ब्रह्म सर्वत्र खमिव स्थितम् । तेन जीवोदरजगत्यपि जीवोऽस्त्यनेकधा ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jīvabījaṃ paraṃ brahma sarvatra khamiva sthitam | tena jīvodarajagatyapi jīvo'styaneakdhā || 1 ||

Sri Vasishtha said: The seed of the individual self is the highest Brahman itself, present everywhere like space. Because of this, even inside the world within a living being's own body, life exists in many separate forms on its own.

श्री वसिष्ठ बोले: जीव का बीज तो परम ब्रह्म ही है, जो हर जगह आकाश की तरह फैला हुआ है। इसी वजह से किसी जीव के भीतर बसी दुनिया में भी जीव अपने आप कई अलग-अलग रूपों में मौजूद रहता है।

4.19.2

चिद्घनैकघनात्मत्वाज्जीवान्तर्जीवजातयः । कदलीदलवत्सन्ति कीटा इव धरोदरे ॥ २ ॥

ciddhanaikaghanātmatvājjīvāntarjīvajātayaḥ | kadalīdalavatsanti kīṭā iva dharodare || 2 ||

Because consciousness is one single dense whole, many kinds of living beings exist within a single living being, just as many layers lie inside a banana trunk, just as worms live inside the earth.

चूंकि चेतना एक ही सघन इकाई है, इसलिए एक जीव के भीतर भी कई तरह के जीव मौजूद होते हैं, जैसे केले के तने में कई परतें होती हैं, जैसे धरती के भीतर कीड़े रहते हैं।

4.19.3

यो यो नाम यथा ग्रीष्मे कल्पस्वेदाद्भवेत्कृमिः । यद्यद्दृश्यं शुद्धचित्खं तज्जीवो भवति स्वतः ॥ ३ ॥

yo yo nāma yathā grīṣme kalpasvedādbhavetkṛmiḥ | yadyaddṛśyaṃ śuddhacitkhaṃ tajjīvo bhavati svataḥ || 3 ||

Just as, in summer, a small creature is born on its own from moisture, whatever name it may go by, in the same way, whatever we see, since it is really pure consciousness itself, becomes a living being on its own.

जैसे गर्मी में नमी से अपने आप कोई कीड़ा पैदा हो जाता है, चाहे उसका नाम कुछ भी हो, वैसे ही जो कुछ भी दिखाई देता है, चूंकि वह असल में शुद्ध चेतना ही है, वह अपने आप एक जीव बन जाता है।

4.19.4

यथा यथा यतन्ते ते जीवकाः स्वात्मसिद्धये । तथा तथा भवन्त्याशु विचित्रोपासनक्रमैः ॥ ४ ॥

yathā yathā yatante te jīvakāḥ svātmasiddhaye | tathā tathā bhavantyāśu vicitropāsanakramaiḥ || 4 ||

Whatever these small living beings work hard to achieve for themselves, they quickly become exactly that, through their own different ways of worship.

ये छोटे-छोटे जीव अपने लिए जो कुछ भी पाने की कोशिश करते हैं, वे अपनी अलग-अलग तरह की पूजा-उपासना के जरिए जल्दी ही वैसे ही बन जाते हैं।

4.19.5

देवान्देवयजो यान्ति यक्षा यक्षान्त्व्रजन्ति हि । ब्रह्म ब्रह्मयजो यान्ति यदतुच्छं तदाश्रयेत् ॥ ५ ॥

devāndevayajo yānti yakṣā yakṣāntvrajanti hi | brahma brahmayajo yānti yadatucchaṃ tadāśrayet || 5 ||

Those who worship gods reach the gods. Those who worship yakshas reach the yakshas. Those who worship Brahman reach Brahman. So one should hold on to what is not small, the highest one.

देवताओं की पूजा करने वाले देवताओं तक पहुंचते हैं। यक्षों की पूजा करने वाले यक्षों तक पहुंचते हैं। ब्रह्म की पूजा करने वाले ब्रह्म तक पहुंचते हैं। इसलिए इंसान को उसी का सहारा लेना चाहिए जो छोटा नहीं, सबसे बड़ा है।

4.19.6

स मुक्तो भृगुपुत्रो हि निर्मलत्वात्स्वसंविदः । बद्धः प्रथमदृष्टेन दृश्येनाशु स्वभावतः ॥ ६ ॥

sa mukto bhṛguputro hi nirmalatvātsvasaṃvidaḥ | badhdhaḥ prathamadṛṣṭena dṛśyenāśu svabhāvataḥ || 6 ||

Bhrigu's son is indeed free, because his own awareness is pure. Yet the moment he sees a first thing, he quickly becomes bound to it, by his very nature.

भृगु का पुत्र सच में मुक्त है, क्योंकि उसकी अपनी चेतना निर्मल है। लेकिन जैसे ही वह पहली बार किसी चीज़ को देखता है, वह अपने स्वभाव से ही तुरंत उससे बंध जाता है।

4.19.7

भुवि जाता परिम्लाना बाला यत्प्रथमं पुरः । संवित्प्राप्नोति तद्रूपा भवत्यन्या न काचन ॥ ७ ॥

bhuvijātā parimlānā bālā yatprathamaṃ puraḥ | saṃvitprāpnoti tadrūpā bhavatyanā nakācana || 7 ||

A young girl, born in this world, weak and faded, whatever she first perceives in front of her, her awareness takes on exactly that form; it becomes nothing else at all.

इस धरती पर जन्मी एक कमज़ोर, मुरझाई-सी बालिका, वह सबसे पहले अपने सामने जो कुछ भी देखती है, उसकी चेतना ठीक वैसा ही रूप ले लेती है; वह और कुछ नहीं बनती।

4.19.8

श्रीराम उवाच । जाग्रत्स्वप्नदशाभेदं भगवन्वक्तुमर्हसि । कथं च जाग्रज्जाग्रत्स्यात्स्वप्नो जाग्रद्भ्रमः कथम् ॥ ८ ॥

śrīrāma uvāca | jāgratsvapnadaśābhedaṃ bhagavanvaktumarhasi | kathaṃ ca jāgrajjāgratsyātsvapno jāgradbhamaḥ katham || 8 ||

Sri Rama said: Master, please tell me the difference between the waking state and the dream state. How can what is called waking really be waking? And how can a dream become a waking illusion, seeming just like being awake?

श्री राम बोले: हे भगवन, मुझे जाग्रत अवस्था और स्वप्न अवस्था का भेद बताइए। जिसे जाग्रत कहा जाता है वह सचमुच जाग्रत कैसे होती है? और सपना जागने जैसा भ्रम बनकर जागने जैसा कैसे लगने लगता है?

4.19.9

श्रीवसिष्ठ उवाच । स्थिरप्रत्यययुक्तं यत्तज्जाग्रदिति कथ्यते । अस्थिरप्रत्ययं यत्स्यात्तत्स्वप्नः समुदाहृतः ॥ ९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sthirapratyayayuktaṃ yattajjāgraditi kathyate | asthirapratyayaṃ yatsyāttatsvapnaḥ samudāhṛtaḥ || 9 ||

Sri Vasishtha said: Whatever comes with a steady, lasting sense of reality is called waking. Whatever comes with a sense that is unstable and does not last is called a dream.

श्री वसिष्ठ बोले: जो कुछ स्थिर और टिकाऊ अनुभव के साथ आता है, उसे जाग्रत कहा जाता है। जो कुछ अस्थिर अनुभव के साथ आता है, जो टिकता नहीं, उसे स्वप्न कहा जाता है।

4.19.10

जाग्रत्त्वे क्षणदृष्टः स्यात्स्वप्नः कालान्तरे स्थितः । तज्जाग्रत्स्वप्नतामेति स्वप्नो जाग्रत्त्वमृच्छति ॥ १० ॥

jāgrattve kṣaṇadṛṣṭaḥ syātsvapnaḥ kālāntare sthitaḥ | tajjāgratsvapnatāmeti svapno jāgrattvamṛcchati || 10 ||

In the waking state, if something is seen only for an instant, it behaves like a dream. But if a dream lasts over a stretch of time, it behaves like waking. So the waking state can turn into a dream, and a dream can turn into waking.

जाग्रत अवस्था में अगर कोई चीज़ सिर्फ एक पल के लिए दिखे, तो वह सपने जैसी हो जाती है। और अगर सपना काफी देर तक बना रहे, तो वह जागने जैसा हो जाता है। इस तरह जागना सपना बन सकता है, और सपना जागना बन सकता है।

4.19.11

जाग्रत्स्वप्नदशाभेदो न स्थिरास्थिरते विना । समः सदैव सर्वत्र समस्तोऽनुभवोऽनयोः ॥ ११ ॥

jāgratsvapnadaśābhedo na sthirāsthirate vinā | samaḥ sadaiva sarvatra samasto'nubhavo'nayoḥ || 11 ||

There is no real difference between the waking state and the dream state except this: one is stable and the other is unstable. Apart from that, the experience of both is always the same everywhere, in every way.

जाग्रत अवस्था और स्वप्न अवस्था में इसके सिवा कोई फर्क नहीं है कि एक स्थिर है और दूसरी अस्थिर। इसके अलावा दोनों का अनुभव हमेशा, हर जगह, हर तरह से एक जैसा ही होता है।

4.19.12

स्वप्नोऽपि स्वप्नसमये स्थैर्याज्जाग्रत्त्वमृच्छति । अस्थैर्याज्जाग्रदेवास्ते स्वप्नस्तादृशबोधतः ॥ १२ ॥

svapno'pi svapnasamaye sthairyājjāgrattvamṛcchati | asthairyājjāgradevāste svapnastādṛśabodhataḥ || 12 ||

Even a dream, while it is happening, becomes like waking if it feels steady and stable. And even the waking state becomes like a dream if it feels unstable. It all depends on how steady that awareness feels.

सपना भी, जब वह चल रहा होता है, अगर स्थिर और टिकाऊ महसूस हो तो जागने जैसा बन जाता है। और जागना भी, अगर अस्थिर महसूस हो तो सपने जैसा हो जाता है। यह सब इस पर निर्भर करता है कि वह अनुभव कितना स्थिर लगता है।

4.19.13

स्वप्नोऽपि जाग्रद्बुद्ध्यंशो जाग्रत्त्वमनुगच्छति । स्वप्नता स्वप्नबुद्ध्या तु यथासंवेदनं स्थितम् ॥ १३ ॥

svapno'pi jāgradbuddhyṃśo jāgrattvamanugacchati | svapnatā svapnabuddhyā tu yathāsaṃvedanaṃ sthitam || 13 ||

Even a dream, when part of it is felt with the conviction of being awake, takes on the nature of waking. And being a dream, when felt with the conviction of it being a dream, stays exactly as a dream. It all depends on how it is experienced.

सपना भी, जब उसका कोई हिस्सा जागने जैसे यकीन के साथ महसूस हो, तो जागने जैसा बन जाता है। और सपने का सपना होना, जब स्वप्न जैसे यकीन से महसूस हो, तो वैसा ही स्वप्न बना रहता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसे कैसे अनुभव किया जाता है।

4.19.14

यत्तु यावत्स्थिरं बुद्धं तत्तावज्जाग्रदुच्यते । क्षणभङ्गात्तु तत्स्वप्नो यथा भवति तच्छृणु ॥ १४ ॥

yattu yāvatsthiraṃ buddhaṃ tattāvajjāgraducyate | kṣaṇabhaṅgāttu tatsvapno yathā bhavati tacchṛṇu || 14 ||

Whatever is known as steady, for as long as it stays steady, is called waking. But the very same thing, when it breaks apart in an instant, is a dream. Listen to how this happens.

जो कुछ स्थिर जाना जाता है, जब तक वह स्थिर रहता है, उसे जाग्रत कहा जाता है। लेकिन वही चीज़, जब एक पल में टूट जाती है, तो सपना कहलाती है। सुनो यह कैसे होता है।

4.19.15

जीवधातुः शरीरेऽन्तर्विद्यते येन जीव्यते । तेजो वीर्यं जीवधातुरित्याद्यभिधमङ्ग यत् ॥ १५ ॥

jīvadhātuḥ śarīre'ntarvidyate yena jīvyate | tejo vīryaṃ jīvadhāturityādyabhidhamaṅga yat || 15 ||

There is a life-force inside the body, by which a person lives. Dear one, this is what is called by such names as vital energy, vigor, or the life-force.

शरीर के भीतर एक जीवनी-शक्ति होती है, जिसके कारण इंसान जीता है। हे प्रिय, इसी को तेज, वीर्य, जीवनी-शक्ति जैसे नामों से पुकारा जाता है।

4.19.16

व्यवहारी यदा कायो मनसा कर्मणा गिरा । भवेत्तदा मरुन्नुन्नो जीवधातुः प्रसर्पति ॥ १६ ॥

vyavahārī yadā kāyo manasā karmaṇā girā | bhavettadā marunnunno jīvadhātuḥ prasarpati || 16 ||

When the body becomes active through the mind, through actions, and through speech, then the life-force, driven by the breath, spreads through the body.

जब शरीर मन, कर्म और वाणी के जरिए सक्रिय हो जाता है, तब सांस से धकेली गई जीवनी-शक्ति पूरे शरीर में फैल जाती है।

4.19.17

तस्मिन्प्रसर्पत्यङ्गेषु सर्वा संविदुदेति हि । दृष्टत्वात्प्रैति चित्ताख्यमन्तर्लीनजगद्भ्रमम् ॥ १७ ॥

tasminprasarpatyangeṣu sarvā saṃvidudeti hi | dṛṣṭatvāt praiti cittākhyamantarlīnajagadbhramam || 17 ||

As that life-force spreads through the limbs, all awareness rises up. Because it now appears as something seen, it turns into what we call the mind, the illusion of a whole world hidden inside.

जैसे-जैसे वह जीवनी-शक्ति अंगों में फैलती है, समूची चेतना जाग उठती है। चूंकि अब वह देखी हुई चीज़ जैसी लगने लगती है, इसलिए वह मन कहलाने लगती है, जो भीतर छुपी हुई एक पूरी दुनिया का भ्रम है।

4.19.18

ईक्षणादिषु रन्ध्रेषु प्रसरन्ती बहिर्मयम् । नानाकारविकाराढ्यं रूपमात्मनि पश्यति ॥ १८ ॥

īkṣaṇādiṣu randhreṣu prasarantī bahirmayam | nānākāravikārāḍhyaṃ rūpamātmani paśyati || 18 ||

Spreading out through openings like the eyes and the other senses, it sees within itself a shape that seems to be outside, full of many different forms and changes.

आंखों और बाकी इंद्रियों के छिद्रों से बाहर की ओर फैलकर, वह अपने भीतर ही एक ऐसा रूप देखती है जो बाहर का जैसा लगता है, जो कई तरह के आकारों और बदलावों से भरा होता है।

4.19.19

स्थिरत्वात्तत्तथैवाथ जाग्रदित्यवगम्यते । जाग्रत्क्रम इति प्रोक्तः सुषुप्तादिक्रमं श्रृणु ॥ १९ ॥

sthiratvāttattathaivātha jāgradityavagamyate | jāgratkramam iti proktaḥ suṣuptādikramaṃ śṛṇu || 19 ||

Because it stays steady in that same way, this state is understood as waking. This is called the waking process. Now listen to the process of deep sleep and what comes after.

क्योंकि वह चेतना उसी तरह स्थिर बनी रहती है, इसलिए इसे जागने की अवस्था समझा जाता है। इसे जागने का क्रम कहा गया है। अब सुषुप्ति और उसके बाद की अवस्थाओं का क्रम सुनो।

4.19.20

मनसा कर्मणा वाचा यदा क्षुभ्यति नो वपुः । शान्तात्मा तिष्ठति स्वस्थो जीवधातुस्तदा त्वसौ ॥ २० ॥

manasā karmaṇā vācā yadā kṣubhyati no vapuḥ | śāntātmā tiṣṭhati svastho jīvadhātustadā tv asau || 20 ||

When the body is not disturbed by the mind, by action, or by speech, then that living force stays calm and settled within itself.

जब मन, कर्म और वाणी से शरीर में कोई हलचल नहीं होती, तब वह जीवनी शक्ति शांत होकर अपने भीतर स्थिर रहती है।

4.19.21

समतामागतैर्वातैः क्षोभ्यते न हृदम्बरे निर्वातसदने दीपो यथाऽऽलोकैककारकः ॥ २१ ॥

samatāmāgatervātairkṣobhyate na hṛdambare nirvātasadane dīpo yathā'ālokaikakārakaḥ || 21 ||

When the breaths have become even and settled, the space of the heart is not disturbed by them, just as a lamp in a room with no wind burns alone and gives a steady light.

जब प्राण-वायु सम और शांत हो जाती है, तब हृदय का यह भीतरी आकाश उससे विचलित नहीं होता, ठीक वैसे ही जैसे बिना हवा वाले कमरे में दीपक अकेला स्थिर होकर प्रकाश देता है।

4.19.22

ततः सरति नाङ्गेषु संवित्क्षुभ्यति तेन नो न चेक्षणादीन्यायाति रन्ध्राण्यायाति नो बहिः ॥ २२ ॥

tataḥ sarati nāṅgeṣu saṃvitkṣubhyati tena no na cekṣaṇādīnyāyāti randhrāṇyāyāti no bahiḥ || 22 ||

Then that awareness does not spread through the limbs and is not disturbed by the breath. It does not go out through the openings such as the eyes, it does not go outward at all.

तब वह चेतना शरीर के अंगों में नहीं फैलती और उससे विचलित भी नहीं होती। वह आँख जैसे छिद्रों से बाहर नहीं जाती, वह बिल्कुल भी बाहर नहीं जाती।

4.19.23

जीवोऽन्तरेव स्फुरति तैलसंविद्यथा तिले शीतसंविद्धिम इव स्नेहसंविद्यथा घृते ॥ २३ ॥

jīvo'ntareva sphurati tailasaṃvidyathā tile śītasaṃviddhim iva snehasaṃvidyathā ghṛte || 23 ||

The living force then stirs only within, like the oil hidden inside a sesame seed, like the coldness hidden inside frost, like the richness hidden inside ghee.

जीव तब केवल भीतर ही स्पंदित होता है, जैसे तिल के भीतर छिपा तेल, जैसे बर्फ के भीतर छिपी ठंडक, जैसे घी के भीतर छिपी चिकनाई।

4.19.24

जीवाकारा कला काचिच्छितिः स्वच्छतयात्मनि दशामायाति सौषुप्तिं सौम्यवातां विचेतनाम् ॥ २४ ॥

jīvākārā kalā kācicciitiḥ svacchatayātmani daśāmāyāti sauṣuptiṃ saumyavātāṃ vicetanām || 24 ||

A small part of awareness, taking the shape of the living force, settles by its own clearness into the state called deep sleep, a state where the breath is calm and gentle and ordinary awareness is absent.

चेतना का एक छोटा अंश, जीव का रूप लेकर, अपनी निर्मलता के कारण भीतर ही सुषुप्ति नाम की अवस्था में पहुँच जाता है, जिसमें श्वास शांत और हल्की होती है और सामान्य जागने वाली चेतना नहीं रहती।

4.19.25

ज्ञात्वा वैचित्युपरते साम्यं व्यवहरन्नपि जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तेषु संबुद्धस्तुर्यवान्स्मृतः ॥ २५ ॥

jñātvā vaicitryuparate sāmyaṃ vyavaharannapi jāgratsvapnasuṣupteṣu saṃbuddhasturyavānsmṛtaḥ || 25 ||

The one who has known that sameness once every sense of difference has ended, and who still goes about waking, dream, and deep sleep like anyone else, that awakened person is remembered as one who has reached the fourth state.

जिसने भेद के मिट जाने पर उस समता को जान लिया है, और जो जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति में औरों की तरह ही व्यवहार करते हुए भी जागा हुआ है, उसी को तुरीय अवस्था वाला कहा गया है।

4.19.26

सुषुप्ते सौम्यतां यातैः प्राणैः संचाल्यते यदा । स जीवधातुः सा संवित्ततश्चित्ततयोदिता ॥ २६ ॥

suṣupte saumyatāṃ yātaiḥ prāṇaiḥ saṃcālyate yadā| sa jīvadhātuḥ sā saṃvittatascittatayoditā || 26 ||

In deep sleep, when that living force, that same awareness, is stirred a little by the breath that has grown gentle, it then rises up in the form of thought.

सुषुप्ति में जब वह जीव-शक्ति, यानी वही चेतना, शांत हो चुकी प्राण-वायु से थोड़ी हिल जाती है, तब वह विचार के रूप में उठ खड़ी होती है।

4.19.27

स्वान्तःसंस्थजगज्जालं भावाभावैः क्रमभ्रमैः । पश्यति स्वान्तरेवाशु स्फारं बीज इव द्रुमम् ॥ २७ ॥

svāntaḥsaṃsthajagajjālaṃ bhāvābhāvaiḥ kramabhramaiḥ| paśyati svāntarevāśu sphāraṃ bīja iva drumam || 27 ||

Within itself it quickly sees the whole web of the world sitting inside it, appearing and disappearing in a sequence that only seems real, spread out just as a tree is spread out inside a seed.

वह अपने ही भीतर, अपने अंदर बसे संसार के इस जाल को तुरंत देख लेता है, जो प्रकट और अप्रकट होने के एक भ्रामक क्रम में फैला हुआ है, ठीक वैसे ही जैसे बीज के भीतर वृक्ष फैला हुआ रहता है।

4.19.28

जीवधातुर्यदा वातैः किंचित्संक्षुभ्यते भृशम् । ततोऽस्म्यहं सुप्त इति पश्यत्यात्मनि खे गतिम् ॥ २८ ॥

jīvadhāturyadā vātaiḥ kiṃcitsaṃkṣubhyate bhṛśam| tato'smyahaṃ supta iti paśyatyātmani khe gatim || 28 ||

When the living force is stirred quite strongly by the breath, it then sees within itself, in that inner space, the thought moving, I am asleep.

जब जीव-शक्ति प्राण-वायु से काफी ज़्यादा हिल उठती है, तब वह अपने भीतर के आकाश में यह विचार उठता हुआ देखती है कि मैं सोया हुआ हूँ।

4.19.29

यदाम्भसा प्लाव्यतेऽसौ तदा वार्यादिसंभ्रमम्। अन्तरेवानुभवति स्वामोदं कुसुमं यथा ॥ २९ ॥

yadāmbhasā plāvyate'sau tadā vāryādisaṃbhramam| antarevānubhavati svāmodaṃ kusumaṃ yathā || 29 ||

When that sleeping body is drenched with water, it then feels within itself the stir of water and things like it, held inside just as a flower holds its own scent.

जब सोया हुआ शरीर पानी से भीग जाता है, तब वह भीतर ही भीतर पानी जैसी चीज़ों की हलचल महसूस करता है, ठीक वैसे ही जैसे फूल अपनी ही खुशबू को अपने भीतर रखता है।

4.19.30

यदा पित्तादिनाक्रान्तस्तदा ग्रीष्मादिसंभ्रमम्। अन्तरेवामुभवति स्फारं बहिरिवाखिलम् ॥ ३० ॥

yadā pittādināākrāntastadā grīṣmādisaṃbhramam| antarevāmubhavati sphāraṃ bahirivākhilam || 30 ||

When the body is overcome by excess bile, it then feels within itself the stir of summer heat and things like it, spread out fully as if it were happening outside.

जब शरीर पित्त की अधिकता से घिर जाता है, तब वह भीतर ही भीतर गर्मी जैसी चीज़ों की हलचल महसूस करता है, जो इतनी फैली हुई लगती है मानो बाहर हो रही हो।

4.19.31

रक्तापूर्णो रक्तवर्णान्देशान्कालान्बहिर्यथापश्यत्यनुभवात्मत्वात्तत्रैव च निमज्जति ॥ ३१ ॥

raktāpūrṇo raktavarṇāndeśānkālānbahiryathāpaśyatyanubhavātmatvāttatraiva ca nimajjati || 31 ||

One whose body is full of excess blood sees, as if it were outside him, places and times colored red, and because experience itself is the nature of the self, he sinks completely into that very experience.

जिसके शरीर में रक्त की अधिकता होती है, वह मानो बाहर ही लाल रंग के स्थान और समय देखता है, और क्योंकि अनुभव ही आत्मा का स्वरूप है, इसलिए वह उसी अनुभव में पूरी तरह डूब जाता है।

4.19.32

सेवते वासनां यां तां सोऽन्तः पश्यति निद्रितःपवनक्षोभितो रन्ध्रैर्बहिरक्षादिभिर्यथा ॥ ३२ ॥

sevate vāsanāṃ yāṃ tāṃ so'ntaḥ paśyati nidritaḥpavanakṣobhito randhrairbahirakṣādibhiryathā || 32 ||

Whatever inclination he keeps feeding, the sleeping person sees that very thing within himself, just as, stirred by the breath, one sees the outside world through openings such as the eyes.

जिस वासना को वह बार-बार सींचता है, सोया हुआ व्यक्ति उसी को अपने भीतर देखता है, ठीक वैसे ही जैसे प्राण-वायु से हलचल होने पर आँख जैसे छिद्रों से बाहर की दुनिया दिखाई देती है।

4.19.33

अनाक्रान्तेन्द्रियच्छिद्रो यतः क्षुभ्दोऽन्तरेव सःसंविदानुभवत्याशु स स्वप्न इति कथ्यते ॥ ३३ ॥

anākrāntendriyacchidro yataḥ kṣubdho'ntareva saḥsaṃvidānubhavatyāśu sa svapna iti kathyate || 33 ||

Since the openings of the senses are not taken over by the breath, and the stir stays only within, he quickly knows that state through awareness alone, and this is called a dream.

क्योंकि इन्द्रियों के छिद्र प्राण-वायु के अधीन नहीं होते और हलचल केवल भीतर ही रहती है, इसलिए वह भीतर ही भीतर उस अवस्था को शीघ्र जान लेता है, और इसी को स्वप्न कहा जाता है।

4.19.34

समाक्रान्तेन्द्रियच्छिद्रो यः क्षुभ्दो वायुना यदापरिपश्यति तज्जाग्रदित्याहुर्मुनिसत्तमाः ॥ ३४ ॥

samākrāntendriyacchidro yaḥ kṣubdho vāyunā yadāparipaśyati tajjāgradityāhurmunisattamāḥ || 34 ||

When the openings of the senses are fully taken over, and a person, stirred by the breath, sees everything clearly, the greatest sages call that state waking.

जब इन्द्रियों के छिद्र पूरी तरह सक्रिय हो जाते हैं और प्राण-वायु से हलचल होकर व्यक्ति सब कुछ स्पष्ट देखता है, तब सबसे बड़े मुनि उस अवस्था को जाग्रत कहते हैं।

4.19.35

इति विदितवता त्वयाधुनान्तः प्रथितमहामतिनेह सत्यताख्यासति जगति नैव भावनीया मृतिहतिसंहृतिदोषभावनी या ॥ ३५ ॥

iti viditavatā tvayādhunāntaḥ prathitamahāmatineha satyatākhyāasati jagati naiva bhāvanīyā mṛtihatisaṃhṛtidoṣabhāvanī yā || 35 ||

Now that you have understood this, and your understanding has grown great and clear within you, you must never think of this unreal world as real. That very idea of it being real is the flaw that breeds death, destruction, and dissolution.

अब जब तुमने यह समझ लिया है, और तुम्हारी समझ भीतर से महान और स्पष्ट हो गई है, तो इस असत् संसार को कभी सच मत मानो। उसे सच मान लेना ही वह दोष है जो मृत्यु, विनाश और लय को जन्म देता है।

Chapter 20

4.20.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एतत्ते कथितं सर्वं मनोरूपनिरूपणम् । मया राघव नान्येन केनचिन्नाम हेतुना ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | etatte kathitaṃ sarvaṃ manorūpanirūpaṇam | mayā rāghava nānyena kenacinnāma hetunā || 1 ||

Sri Vasishtha said: Rama, I have told you all this about the true nature of the mind, and I told it to you for no other reason at all.

श्री वशिष्ठ ने कहा, हे राम, मैंने तुम्हें मन के असली स्वरूप के बारे में यह सब कुछ बताया है, और मैंने यह किसी और वजह से नहीं बताया।

4.20.2

दृढनिश्चयवच्चेतो यद्भावयति भूरिशः । तत्तां यात्यनलाश्लेषादयःपिण्डोऽग्नितामिव ॥ २ ॥

dṛḍhaniścayavacceto yadbhāvayati bhūriśaḥ | tattāṃ yātyanalāśleṣādayaḥpiṇḍo'gnitāmiva || 2 ||

Whatever the mind fixes upon again and again with firm conviction, it turns into that very thing, just as a ball of iron becomes like fire itself when it stays in close contact with fire.

मन जिस चीज़ का बार-बार दृढ़ विश्वास के साथ चिंतन करता है, वह वैसा ही बन जाता है, जैसे लोहे का गोला आग के संपर्क में रहकर आग जैसा हो जाता है।

4.20.3

भावाभावग्रहोत्सर्गदृशश्चेतनकल्पिताः । नासत्या नापि सत्यास्ता मनश्चापलकारिताः ॥ ३ ॥

bhāvābhāvagrahotsargadṛśaścetanakalpitāḥ | nāsatyā nāpi satyāstā manaścāpalakāritāḥ || 3 ||

The ideas of something existing or not existing, of grasping it or letting it go, are shaped by the conscious self; they are neither false nor true, but are caused simply by the restlessness of the mind.

किसी चीज़ के होने या न होने का, उसे पकड़ने या छोड़ने का जो भाव मन में उठता है, वह चेतना की ही रचना है; वह न झूठा है न सच्चा, बल्कि सिर्फ मन की चंचलता से पैदा हुआ है।

4.20.4

मनो मोहे तु कर्तृ स्यात्कारणं च जगत्स्थितेः । विश्वरूपतयैवेदं तनोति मलिनं मनः ॥ ४ ॥

mano mohe tu kartṛ syātkāraṇaṃ ca jagatsthiteḥ | viśvarūpatayaive daṃ tanoti malinaṃ manaḥ || 4 ||

The mind is the one that causes delusion, and it is the cause behind the world's continued existence. This impure mind spreads itself out by taking on the very form of the universe.

मन ही मोह का कर्ता है और यही संसार के बने रहने का कारण है। यह मैला मन स्वयं संसार का रूप धारण करके फैल जाता है।

4.20.5

मनो हि पुरुषो नाम तं नियोज्य शुभे पथि । तज्जयैकान्तसाध्या हि सर्वा जगति भूतयः ॥ ५ ॥

mano hi puruṣo nāma taṃ niyojya śubhe pathi | tajjayaikāntasādhyā hi sarvā jagati bhūtayaḥ || 5 ||

The mind indeed is what is called a person. Set it upon the good path, for every success in this world is achieved only by conquering the mind.

मन ही तो व्यक्ति कहलाता है। इसे अच्छे मार्ग पर लगाओ, क्योंकि संसार में हर सफलता मन को जीतने से ही मिलती है।

4.20.6

पुरुषश्चेच्छरीरं स्यात्कथं शुक्रो महामतिः । अगमद्विविधाकारं जन्मान्तरशतभ्रमम् ॥ ६ ॥

puruṣaśceccharīraṃ syātkathaṃ śukro mahāmatiḥ | agamadvividhākāraṃ janmāntaraśatabhramam || 6 ||

If the person were just the body, then how could the very wise Shukra pass through so many different forms, wandering through hundreds of other births?

अगर व्यक्ति सिर्फ शरीर होता, तो बहुत बुद्धिमान शुक्र सैकड़ों अलग-अलग जन्मों में भटकते हुए इतने तरह-तरह के रूपों में कैसे गए?

4.20.7

अतश्चित्तं हि पुरुषः शरीरं चेत्यमेव हि । यन्मयं च भवत्येतत्तदवाप्नोत्यसंशयम् ॥ ७ ॥

ataścittaṃ hi puruṣaḥ śarīraṃ cetya meva hi | yanmayaṃ ca bhavatyetattadavāpnotyasaṃśayam || 7 ||

So it is the mind, not the body, that is truly the person; the body is only something the mind perceives. Whatever the mind turns into, that is exactly what it attains, without doubt.

इसलिए असली व्यक्ति मन ही है, शरीर नहीं; शरीर तो बस मन के द्वारा देखी जाने वाली एक चीज़ है। मन जिस रूप में बदल जाता है, वही उसे निश्चित रूप से मिल जाता है।

4.20.8

यदतुच्छमनायासमनुपाधि गतभ्रमम् । यत्नात्तदनुसंधानं कुरु तत्तामवाप्स्यसि ॥ ८ ॥

yadatuccham anāyāsam anupādhi gatabhramam | yatnāt tadanusaṃdhānaṃ kuru tattāmavāpsyasi || 8 ||

Whatever is not trivial, needs no effort, is not tied to any condition, and is free of confusion, search for that with diligent effort, and you will attain that very state.

जो तुच्छ नहीं है, जिसके लिए कोई मेहनत नहीं करनी पड़ती, जो किसी शर्त पर निर्भर नहीं है, और जिसमें कोई भ्रम नहीं है, उसकी खोज मेहनत से करो, और तुम उसी अवस्था को पा लोगे।

4.20.9

अभिपतति मनःस्थितं शरीरं नतु वपुराचरितं मनः प्रयाति । अभिपततु तवात्र तेन सत्यं सुभग मनः प्रजहात्वसत्यमन्यत् ॥ ९ ॥

abhipatati manaḥsthitaṃ śarīraṃ natu vapurācaritaṃ manaḥ prayāti | abhipatatu tavātra tena satyaṃ subhaga manaḥ prajahātvasatyamanyat || 9 ||

The body follows whatever is fixed in the mind, but the mind does not follow what the body does. So let this truth take hold in you here, dear one; let your mind give up everything else that is false.

शरीर वही करता है जो मन में तय होता है, पर मन शरीर के किए हुए का अनुसरण नहीं करता। इसलिए हे प्रिय, यह सच्चाई तुम्हारे भीतर उतर जाए; तुम्हारा मन बाकी सब झूठ को छोड़ दे।

Chapter 21

4.21.1

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ संशयो यो महानयम् । हृदि व्यावर्तते लोलः कल्लोल इव सागरे ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvadharmajña saṃśayo yo mahānayam | hṛdi vyāvartate lolaḥ kallola iva sāgare || 1 ||

Sri Rama said, Lord, you know all truth. This great doubt of mine turns restlessly in my heart, like a wave in the ocean.

श्रीराम ने कहा, हे भगवन, आप सब सत्य को जानने वाले हैं। मेरे मन में यह जो बहुत बड़ा संदेह है, वह समुद्र की लहर की तरह बेचैन होकर मेरे हृदय में घूमता रहता है।

4.21.2

दिक्कालाद्यनवच्छिन्ने तते नित्ये निरामये । म्लाना संविन्मनोनाम्नी कुतः केयमुपस्थिता ॥ २ ॥

dikkālādyanavacchinne tate nitye nirāmaye | mlānā saṃvinmanonāmnī kutaḥ keyamupasthitā || 2 ||

In that reality which is not limited by place or time, which is vast, eternal and free from any flaw, how has this dim thing called mind come to be, this fading of pure awareness. What is it, and where did it come from.

जो दिशा और काल से बंधा नहीं है, जो फैला हुआ, नित्य और हर दोष से रहित है, उसमें यह मन नाम की धुंधली चीज़ कैसे आ गई, जो चेतना का ही मुरझाया हुआ रूप है। यह है क्या, और यह कहाँ से आई है।

4.21.3

यस्मादन्यन्न नामास्ति न भूतं न भविष्यति । कुतः कीदृक्कथं तत्र कलङ्कस्तस्य विद्यते ॥ ३ ॥

yasmādanyanna nāmāsti na bhūtaṃ na bhaviṣyati | kutaḥ kīdṛkkathaṃ tatra kalaṅkastasya vidyate || 3 ||

Besides that reality nothing exists, nothing existed before, and nothing will exist later. So how could any stain be found in it, what would it look like, and how could it happen.

उस सत्य के अलावा न कुछ है, न पहले कभी था, न आगे कभी होगा। तो फिर उसमें कोई दाग कैसे हो सकता है, वह कैसा दिखेगा, और यह कैसे हो सकता है।

4.21.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । साधु राम त्वया प्रोक्तं जाता ते मोक्षभागिनी । मतिरुत्तमनिष्यन्दा नन्दनस्येव मञ्जरी ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sādhu rāma tvayā proktaṃ jātā te mokṣabhāginī | matiruttamanisyaṃdā nandanasyaiva mañjarī || 4 ||

Sri Vasishtha said, well spoken, Rama. What you have said shows that your mind is now fit for liberation, flowing forth in its finest form, like a blossoming twig from Nandana, the garden of the gods.

श्री वसिष्ठ ने कहा, बहुत अच्छा कहा राम। तुमने जो कहा उससे पता चलता है कि तुम्हारी बुद्धि अब मोक्ष के योग्य हो गई है, वह अपने सबसे अच्छे रूप में बह रही है, जैसे देवताओं के बाग नंदन की कोई फूलती हुई डाली।

4.21.5

पूर्वापरविचारार्थतत्परेयं मतिस्तव । संप्राप्स्यसि पदं प्रोच्चैर्यत्प्राप्तं शंकरादिभिः ॥ ५ ॥

pūrvāparavicārārthatatpareyaṃ matistava | saṃprāpsyasi padaṃ procchairyatprāptaṃ śaṅkarādibhiḥ || 5 ||

This mind of yours is set on examining the matter fully, from beginning to end. You will reach that high state which Shiva and other great ones have reached.

तुम्हारी यह बुद्धि इस विषय को शुरू से आखिर तक पूरी तरह जांचने में लगी है। तुम वही ऊँचा पद पाओगे जो शिव और दूसरे महान लोगों ने पाया है।

4.21.7

सिद्धान्तकाले भवता प्रष्टव्योऽहमिदं परम् । करामलकवत्तेन सिद्धान्तस्ते भविष्यति ॥ ७ ॥

siddhāntakāle bhavatā praṣṭavyo'hamidaṃ param | karāmalakavatten siddhāntaste bhaviṣyati || 7 ||

At the time of the final conclusion you must ask me this highest question once more. Then your conclusion will become as clear and certain as a fruit held in your own palm.

जब अंतिम निष्कर्ष का समय आएगा, तब तुम मुझसे यह सबसे बड़ा प्रश्न फिर से पूछना। तब तुम्हारा निष्कर्ष तुम्हारी अपनी हथेली पर रखे फल जितना साफ़ और पक्का हो जाएगा।

4.21.8

सिद्धान्तकाले प्रश्नोक्तिरेषा तव विराजते । प्रावृषीव हि केकोक्तिर्युक्ता शरदि हंसगीः ॥ ८ ॥

siddhāntakāle praśnoktireṣā tava virājate | prāvṛṣīva hi kekoktiryuktā śaradi haṃsagīḥ || 8 ||

This question of yours will truly shine at the time of the final conclusion, just as the peacock's cry belongs to the rainy season, and the swan's call belongs to autumn.

यह तुम्हारा प्रश्न अंतिम निष्कर्ष के समय सचमुच शोभा देगा, जैसे मोर की बोली बरसात में शोभा देती है, और हंस की बोली शरद ऋतु में शोभा देती है।

4.21.9

सहजो नीलिमा व्योम्नि शोभते प्रावृषः क्षये । प्रावृषि त्वतनूदग्रपयोदपटलोत्थितः ॥ ९ ॥

sahajo nīlimā vyomni śobhate prāvṛṣaḥ kṣaye | prāvṛṣi tvatanūdagrapayodapaṭaḷotthitaḥ || 9 ||

The sky's own natural blue color shows itself clearly only after the rains have passed. During the rains it is covered instead by huge, towering banks of thick cloud.

आकाश का अपना नीला रंग तभी साफ़ दिखता है जब बरसात बीत जाती है। बरसात के समय वह घने और ऊँचे उठे हुए बादलों के समूह से ढका रहता है।

4.21.10

अयं प्रकृत आरब्धो मनोनिर्णय उत्तमः । यद्वशाज्जनताजन्म तदाकर्णय सुव्रत ॥ १० ॥

ayaṃ prakṛta ārabdho manonirṇaya uttamaḥ | yadvāśājjajanatājanma tadākarṇaya suvrat || 10 ||

This fine inquiry into the mind, which was called for, has now begun. Listen, Rama of firm vows, to how it is that the mind's power gives rise to the birth of every living being.

मन के बारे में यह जो अच्छी खोज ज़रूरी थी, वह अब शुरू हो चुकी है। हे दृढ़ व्रत वाले राम, सुनो कि मन की शक्ति से ही हर प्राणी का जन्म कैसे होता है।

4.21.11

एवं प्रकृतिरूपेयं मनोमननधर्मिणी । कर्मेति राम निर्णीतं सर्वैरेव मुमुक्षुभिः ॥ ११ ॥

evaṃ prakṛtirūpeyaṃ manomananadharmiṇī | karmaiti rāma nirṇītaṃ sarvaireva mumukṣubhiḥ || 11 ||

So this mind, whose very nature is to keep thinking, takes the form of primal nature. And all who seek liberation, Rama, agree in calling this action.

तो यह मन, जिसका स्वभाव ही सोचते रहना है, प्रकृति का रूप ले लेता है। और मोक्ष चाहने वाले सभी लोग, हे राम, इसे ही कर्म कहते हैं।

4.21.12

शृणु दर्शनभेदेन तन्नामाभिमताकृतिम्वाग्मिनां वदतां यातं चित्राभिः शास्त्रदृष्टिभिः ॥ १२ ॥

śṛṇu darśanabhedena tannāmābhimatākṛtimvāgmināṃ vadatāṃ yātaṃ citrābhiḥ śāstradṛṣṭibhiḥ || 12 ||

Listen. Depending on which school of thought speaks, this same mind is given different names and different natures. This is what eloquent teachers have said, using many different scriptural viewpoints.

सुनो। अलग-अलग दर्शन के अनुसार, इसी मन को अलग-अलग नाम और अलग-अलग रूप दिए गए हैं। यही बात वाकपटु गुरुओं ने अलग-अलग शास्त्रों की दृष्टि से कही है।

4.21.13

यं यं भावमुपादत्ते मनो मननचञ्चलम्तत्तामेति घनामोदमन्तःस्थः पवनो यथा ॥ १३ ॥

yaṃ yaṃ bhāvamupādatte mano mananacañcalamtattāmeti ghanāmodamantaḥsthaḥ pavano yathā || 13 ||

Whatever feeling the restless, ever-thinking mind takes hold of, it turns into that very thing, just as air trapped inside a flower takes on its thick fragrance.

यह हमेशा सोचने वाला बेचैन मन जिस भी भाव को पकड़ लेता है, वह खुद वैसा ही बन जाता है, जैसे फूल के अंदर की हवा उसकी गहरी खुशबू ले लेती है।

4.21.14

ततस्तमेव निर्णीय तमेव च विकल्पयन्अन्तःस्थया रञ्जनया रञ्जयन्स्वामहंकृतिम् ॥ १४ ॥

tatastameva nirṇīya tameva ca vikalpayanantaḥsthayā rañjanayā rañjayansvāmahaṃkṛtim || 14 ||

Then, having fixed on that very thing and turning it over in many ways in thought, the mind dyes its own sense of I with that inner color.

फिर उसी चीज़ को तय करके और उसे अलग-अलग तरह से सोचते हुए, मन अपने भीतर के रंग से अपने ही मैं के भाव को रंग देता है।

4.21.15

तन्निश्चयमुपादाय तत्रैव रसमृच्छतियन्मयत्वं शरीरे तु ततो बुद्धीन्द्रियेषु च ॥ १५ ॥

tanniścayamupādāya tatraiva rasamṛcchatiyanmayatvaṃ śarīre tu tato buddhīndriyeṣu ca || 15 ||

Once the mind settles into that certainty, it finds its pleasure right there. Then this same identity, being made of that one thing, spreads to the body, and to the intellect and the senses.

जब मन उस निश्चय में बैठ जाता है, तो उसे वहीं आनंद मिलने लगता है। फिर यही पहचान, जो उसी एक चीज़ से बनी है, शरीर में और फिर बुद्धि व इंद्रियों में भी फैल जाती है।

4.21.16

यन्मयं हि मनो राम देहस्तदनु तद्वशःतत्तामायाति गन्धान्तः पवनो गन्धतामिव ॥ १६ ॥

yanmayaṃ hi mano rāma dehastadanu tadvaśaḥtattāmāyāti gandhāntaḥ pavano gandhatāmiva || 16 ||

Rama, whatever the mind is filled with, the body follows right behind it and comes under its control. The body then takes on that same quality, just as air inside a fragrant flower itself becomes fragrant.

राम, मन जिस भी चीज़ से भरा होता है, शरीर उसके पीछे-पीछे चलता है और उसके वश में आ जाता है। शरीर भी वैसा ही बन जाता है, जैसे खुशबूदार फूल के अंदर की हवा खुद खुशबूदार हो जाती है।

4.21.17

बुद्धीन्द्रियेषु वल्गत्सु कर्मेन्द्रियगणस्ततः । स्फुरति स्वत एवोर्वी रजोलोल इवानिले ॥ १७ ॥

buddhīndriyeṣu valgatsu karmeindriyagaṇastataḥ | sphurati svata evorvī rajolola ivānile || 17 ||

When the senses of perception become excited, the organs of action then start moving on their own, like dust on the earth blown restless by the wind.

जब ज्ञान की इंद्रियां उत्तेजित हो जाती हैं, तो कर्म की इंद्रियां अपने आप हरकत में आ जाती हैं, जैसे धरती की धूल हवा से उड़कर बेचैन हो जाती है।

4.21.18

कर्मेन्द्रियगणे क्षुब्धे स्वशक्तिं प्रणयत्यलम् । कर्म निष्पद्यते स्फारं पांसुजालमिवानिले ॥ १८ ॥

karmeindriyagaṇe kṣubdhe svaśaktiṃ praṇayaty alam | karma niṣpadyate sphāraṃ pāṃsujālam ivānile || 18 ||

When the organs of action are stirred up, they pour out their full power, and action springs up all around, like a cloud of dust rising thick in the wind.

जब कर्म की इंद्रियां हिल जाती हैं, तो वे अपनी पूरी ताकत लगा देती हैं, और चारों तरफ काम होने लगता है, जैसे हवा में धूल का घना बादल उठता है।

4.21.19

एवं हि मनसः कर्म कर्मबीजं मनः स्मृतम् । अभिन्नैव तयोः सत्ता यथा कुसुमगन्धयोः ॥ १९ ॥

evaṃ hi manasaḥ karma karmabījaṃ manaḥ smṛtam | abhinnaiva tayoḥ sattā yathā kusumagandhayoḥ || 19 ||

In this way action belongs to the mind, and the mind is remembered as the seed of action. Yet the being of the two is not divided, they are one, like a flower and its smell.

इस तरह काम मन का होता है, और मन को ही काम का बीज कहा गया है। फिर भी दोनों का होना अलग नहीं है, वे एक ही हैं, जैसे फूल और उसकी खुशबू।

4.21.20

यादृशं भावमादत्ते दृढाभ्यासवशान्मनः । तथा स्पन्दाख्यकर्माख्यप्रथाशाखा विमुञ्चति ॥ २० ॥

yādṛśaṃ bhāvamādatte dṛḍhābhyāsavaśānmanaḥ | tathā spandākhyakarmākhyaprathāśākhā vimuñcati || 20 ||

Whatever state the mind takes on through firm, repeated habit, it then sends out branches of that same kind, the branch called movement and the branch called action.

मन पक्के और बार-बार के अभ्यास से जैसी भी हालत पकड़ लेता है, वह वैसी ही डालियां फैलाता है, एक डाली हलचल कहलाती है और दूसरी काम कहलाती है।

4.21.21

तथा क्रियां तत्फलतां निष्पादयति चादरात्। ततस्तमेव चास्वादमनुभूयाशु बध्यते ॥ २१ ॥

tathā kriyāṃ tatphalatāṃ niṣpādayati cādarāt | tatastameva cāsvādam anubhūyāśu badhyate || 21 ||

In this way the mind eagerly carries an action through to its result. Then, having tasted the enjoyment of it, it quickly becomes bound.

इस तरह मन बड़े मन से काम को उसके फल तक पूरा करता है। फिर उसका स्वाद चखकर वह जल्दी ही बंध जाता है।

4.21.22

यं यं भावमुपादत्ते तं तं वस्त्विति विन्दतितत्तच्छ्रेयोऽन्यन्नास्तीति निश्चयोऽस्य च जायते ॥ २२ ॥

yaṃ yaṃ bhāvamupādatte taṃ taṃ vastviti vindatitattacchreyo'nyannāstīti niścayo'sya ca jāyate || 22 ||

Whatever feeling the mind takes hold of, it comes to see as a real thing. And then it becomes certain that there is nothing better than this, nothing else.

मन जिस भी भाव को पकड़ लेता है, उसे वह एक सच्ची चीज़ मानने लगता है। और फिर उसे यह पक्का यकीन हो जाता है कि इससे बेहतर कुछ और नहीं है।

4.21.23

धर्मार्थकाममोक्षार्थं प्रयतन्ते सदैव हि मनांसि दृढभिन्नानि प्रतिपत्त्या स्वयैव च ॥ २३ ॥

dharmārthakāmamokṣārthaṃ prayatante sadaiva himanāṃsi dṛḍhabhinnāni pratipattyā svayaiva ca || 23 ||

Minds are always firmly split apart from one another by their own separate beliefs, and for that reason they keep striving for duty, wealth, desire, and freedom.

मन हमेशा अपनी-अपनी अलग मान्यता के कारण एक-दूसरे से पूरी तरह बंटे रहते हैं, और इसी वजह से वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के लिए बार-बार प्रयास करते रहते हैं।

4.21.24

मनो वै कापिलानां तु प्रतिपत्तिनिजामलमुररीकृत्य निर्णीय कल्पिताः शास्त्रदृष्टयः ॥ २४ ॥

mano vai kāpilānāṃ tu pratipattinijāmalamurarīkṛtya nirṇīya kalpitāḥ śāstradṛṣṭayaḥ || 24 ||

The followers of Kapila say the mind alone is real. They took this up as their own firm and pure belief, settled on it, and built their scriptures around it.

कपिल के अनुयायी कहते हैं कि केवल मन ही असली है। उन्होंने इसी को अपनी पक्की और शुद्ध मान्यता मान लिया, इसी पर टिक गए, और इसी के आधार पर अपने शास्त्र बना डाले।

4.21.25

मोक्षे तु नान्यथा प्राप्तिरिति भावितचेतसःस्वां दृष्टिं प्रतिबिम्बन्ति स्थिताः स्वनियमभ्रमैः ॥ २५ ॥

mokṣe tu nānyathā prāptiriti bhāvitacetasaḥsvāṃ dṛṣṭiṃ pratibimbanti sthitāḥ svaniyamabhramaiḥ || 25 ||

Convinced in their minds that there is no other way to reach freedom except this one, they only mirror their own view, staying trapped in the illusion of rules they made up themselves.

अपने मन में यह पक्का मानकर कि मुक्ति पाने का इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं है, वे बस अपने ही विचार को दोहराते रहते हैं, और अपने ही बनाए नियमों के भ्रम में बंधे रहते हैं।

4.21.26

वेदान्तवादिनो बुद्ध्या ब्रह्मेदमिति रूढयामुक्तिः शमदमोपेता निर्णीय परिकल्पिता ॥ २६ ॥

vedāntavādino buddhyā brahmedamiti rūḍhayāmuktiḥ śamadamopetā nirṇīya parikalpitā || 26 ||

The followers of Vedanta made up their minds, through long habit, that this is Brahman. Settling on this, they built a kind of freedom joined with peace and self-control.

वेदांत के अनुयायियों ने अपनी बुद्धि में बार-बार यही मान लिया कि यही ब्रह्म है। इसी बात को तय करके उन्होंने शांति और आत्मसंयम से जुड़ी हुई मुक्ति की कल्पना गढ़ ली।

4.21.27

मुक्तौ तु नान्यथा प्राप्तिरिति भावितचेतसः । स्वां दृष्टिं प्रविवृण्वन्ति स्वैरेव नियमभ्रमैः ॥ २७ ॥

muktau tu nānyathā prāptiriti bhāvitacetasaḥ | svāṃ dṛṣṭiṃ pravivṛṇvanti svairēva niyamabhramaiḥ || 27 ||

With their minds convinced that there is no other way to reach liberation except this, they keep unfolding their own view, held by the illusion of the rules they set for themselves.

अपने मन में यह मानकर कि मुक्ति पाने का इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है, वे अपने ही विचार को फैलाते रहते हैं, और अपने ही बनाए नियमों के भ्रम में उलझे रहते हैं।

4.21.28

विज्ञानवादिनो बुद्ध्या स्फुरत्स्वभ्रमपूरया । मुक्तिः शमदमोपेता निर्णीय परिकल्पिता ॥ २८ ॥

vijñānavādino buddhyā sphuratsvabhramapūrayā | muktiḥ śamadamopetā nirṇīya parikalpitā || 28 ||

Those who teach that awareness alone is real used a mind flooded by their own shimmering illusion. On that basis they settled on and built a freedom joined with calm and self-control.

जो लोग यह मानते हैं कि केवल चेतना ही सच है, उन्होंने अपनी बुद्धि का सहारा लिया, जो उनके अपने ही चमकते हुए भ्रम की बाढ़ से भरी थी। इसी के आधार पर उन्होंने शांति और आत्मसंयम से जुड़ी मुक्ति की कल्पना कर ली।

4.21.29

मुक्तौ तु नान्यथा प्राप्तिरिति भावितचेतसः । स्वां दृष्टिं प्रविवृण्वन्ति स्वैरेव नियमभ्रमैः ॥ २९ ॥

muktau tu nānyathā prāptiriti bhāvitacetasaḥ | svāṃ dṛṣṭiṃ pravivṛṇvanti svairēva niyamabhramaiḥ || 29 ||

With their minds convinced that there is no other way to reach liberation except this, they keep unfolding their own view, held by the illusion of the rules they set for themselves.

अपने मन में यह मानकर कि मुक्ति पाने का इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है, वे अपने ही विचार को फैलाते रहते हैं, और अपने ही बनाए नियमों के भ्रम में उलझे रहते हैं।

4.21.30

आर्हतादिभिरन्यैश्च स्वयाभिमतयेच्छया । चित्राश्चित्रसमाचारैः कल्पिताः शास्त्रदृष्टयः ॥ ३० ॥

ārhatādibhiranyaiśca svayābhimatayecchayā | citrāścitrasamācāraiḥ kalpitāḥ śāstradṛṣṭayaḥ || 30 ||

The Arhatas and other teachers followed whatever they themselves preferred. With all sorts of different practices, they built all sorts of different scriptural views.

अर्हत और दूसरे शिक्षक भी अपनी-अपनी पसंद की इच्छा के अनुसार चले। तरह-तरह के अलग-अलग आचरणों से उन्होंने तरह-तरह के अलग-अलग शास्त्रीय मत गढ़ लिए।

4.21.31

निर्निमित्तोत्थसौम्याम्बुबुद्बुदौघैरिवोत्थितैः । स्वनिश्चितैरिति प्रौढा नानाकारा हि रीतयः ॥ ३१ ॥

nirnimittottasauṃyāmbubudbudaughairivottithaiḥ | svaniścitairiti prauḍhā nānākārā hi rītayaḥ || 31 ||

Just as bubbles rise for no reason out of calm water, these ways of thinking arise without any real cause. Settled only by each side's own conviction, they grow elaborate and take on many different shapes.

जैसे शांत पानी में बिना किसी कारण के बुलबुले उठ आते हैं, वैसे ही ये सारे विचार-मार्ग बिना किसी असली वजह के उठ खड़े होते हैं। हर कोई सिर्फ अपनी ही मान्यता पर टिक कर इन्हें बड़ा और जटिल बना लेता है, और इस तरह ये अलग-अलग रूप ले लेते हैं।

4.21.32

सर्वासामेव चैतासां रीतीनामेवमाकरः । मनो नाम महाबाहो मणीनामिव सागरः ॥ ३२ ॥

sarvāsāmeva caitāsāṃ rītīnāmevamākaraḥ | mano nāma mahābāho maṇīnāmiva sāgaraḥ || 32 ||

Of all these many ways, O mighty-armed one, the single source is the mind itself, just as the ocean is the one source of every gem.

हे महाबाहु, इन सभी अलग-अलग मार्गों का एक ही स्रोत मन है, ठीक वैसे ही जैसे समुद्र सारे रत्नों का एक ही स्रोत है।

4.21.33

न निम्बेक्षू कटुस्वादू शीतोष्णौ नेन्दुपावकौ । यद्यथा परमाभ्यस्तमुपलब्धं तथैव तत् ॥ ३३ ॥

na nimbeṣū kaṭusvādū śītoṣṇau nendupāvakau | yadyathā paramābhyastamupalabdhaṃ tathaiva tat || 33 ||

Neem is not bitter on its own, and sugarcane is not sweet on its own; the moon is not cold on its own, and fire is not hot on its own. Whatever a person has practiced for a long time as the highest truth, that is exactly how it is experienced.

नीम अपने आप में कड़वा नहीं है, और गन्ना अपने आप में मीठा नहीं है; चाँद अपने आप में ठंडा नहीं है, और आग अपने आप में गर्म नहीं है। इंसान जिस बात को जिस तरह से बरसों तक सबसे बड़ी सच्चाई मानकर अभ्यास करता है, उसे वैसा ही अनुभव होता है।

4.21.34

यस्त्वकृत्रिम आनन्दस्तदर्थं प्रयतैर्नरैः । मनस्तन्मयतां नेयं येनासौ समवाप्यते ॥ ३४ ॥

yastvakṛtrim ānandastadarthaṃ prayatainaraiḥ | manastanmayatāṃ neyaṃ yenāsau samavāpyate || 34 ||

But there is a bliss that is not man-made. For the sake of that bliss, a person who makes the effort should guide the mind to become one with it, in whatever way that bliss is actually reached.

लेकिन एक ऐसा आनंद है जो बनाया हुआ नहीं है, जो सहज है। उसी आनंद के लिए, मेहनत करने वाले व्यक्ति को अपने मन को उसी के साथ एक कर लेना चाहिए, जिस भी तरीके से वह आनंद सच में पाया जाता है।

4.21.35

दृश्यं संपरिडिम्भं स्वं तुच्छं परिहरन्मनः । तज्जाभ्यां सुखदुःखाभ्यां नावश्यं परिकृष्यते ॥ ३५ ॥

dṛśyaṃ saṃpariḍimbaṃ svaṃ tucchaṃ pariharanmanaḥ | tajjābhyāṃ sukhaduḥkhābhyāṃ nāvaśyaṃ parikṛṣyate || 35 ||

When the mind gives up the visible world, this whole surrounding show that it made for itself, and treats it as worthless, it does not have to be dragged along by the pleasure and pain that world produces.

जब मन इस दिखने वाली दुनिया को, जो उसके अपने चारों ओर फैला हुआ एक तमाशा है, बेकार समझकर छोड़ देता है, तो उसे उस दुनिया से पैदा होने वाले सुख-दुख में जबरन घसीटा नहीं जाता।

4.21.36

अपवित्रमसद्रूपं मोहनं भयकारणम् । दृश्यमाभासमाभोगि बन्धमाभावयानघ ॥ ३६ ॥

apavitramasadrūpaṃ mohanaṃ bhayakāraṇam | dṛśyamābhāsamābhogi bandhamābhāvayānagh || 36 ||

O sinless one, think of the visible world as bondage: it is unclean, unreal, deluding, a cause of fear, a mere appearance that only looks solid.

हे निष्पाप, इस दिखने वाली दुनिया को बंधन समझो: यह अशुद्ध है, असली नहीं है, भरमाने वाली है, डर की जड़ है, और सिर्फ एक दिखावा है जो ठोस लगता है।

4.21.37

मायैषा सा ह्यविद्यैषा भावनैषा भयावहा । संविदस्तन्मयत्वं यत्तत्कर्मेति विदुर्बुधाः ॥ ३७ ॥

māyaiṣā sā hyavidyaiṣā bhāvanaiṣā bhayāvahā | saṃvidastanmayatvaṃ yattatkarmeiti vidurbudhāḥ || 37 ||

This is Maya. This is ignorance. This is only a thought, and it brings fear. When awareness becomes fused with what it imagines, the wise call that very thing action, karma.

यही माया है। यही अविद्या है। यह सिर्फ एक कल्पना है, और यह डर लेकर आती है। जब चेतना अपनी ही कल्पना के साथ एक हो जाती है, ज्ञानी लोग उसी को कर्म कहते हैं।

4.21.38

दृष्ट्वा दृश्यैकतानत्वं विद्धि त्वं मोहनं मनः । प्रमार्जयेव तन्मिथ्या महामलिनकर्दमम् ॥ ३८ ॥

dṛṣṭvā dṛśyaikatānatvaṃ viddhi tvaṃ mohanaṃ manaḥ | pramārjayeva tanmithyā mahāmalinakardamam || 38 ||

Once you see how the mind has become completely fused with the visible world, know that it is the mind itself that deludes you. Wipe it away as false, like a great patch of filthy mud.

जब तुम देख लो कि मन इस दिखने वाली दुनिया के साथ पूरी तरह एक हो चुका है, तो जान लो कि यह मन ही भरमाने वाला है। इसे झूठ समझकर मिटा दो, जैसे किसी बड़े गंदे कीचड़ को साफ किया जाता है।

4.21.39

दृश्यतन्मयता यैषा स्वभावस्थानुभूयते । संसारमदिरा सेयमविद्येत्युच्यते बुधैः ॥ ३९ ॥

dṛśyatanmayatā yaiṣā svabhāvasthānubhūyate | saṃsāramadirā seyamavidyetyucyate budhaiḥ || 39 ||

This fusing with the visible world, felt as if it were one's own true nature, is what the wise call the wine of endless rebirth, which is ignorance.

इस दिखने वाली दुनिया के साथ यह जो घुलमिल जाना है, जिसे अपना ही स्वभाव समझ लिया जाता है, इसी को ज्ञानी लोग संसार की शराब कहते हैं, यानी अविद्या।

4.21.40

अनयोपहतो लोकः कल्याणं नाधिगच्छति । भास्वरं तापनालोकं पटलान्धेक्षणो यथा ॥ ४० ॥

anayopahato lokaḥ kalyāṇaṃ nādhigacchati | bhāsvaraṃ tāpanālokaṃ paṭalāndhekṣaṇo yathā || 40 ||

A person overcome by this liquor cannot reach true well-being, just as someone whose eyes are covered by a cataract cannot see the bright light of the sun.

जो इंसान इस शराब की चपेट में आ जाता है, वह असली भलाई तक नहीं पहुँच पाता, ठीक वैसे ही जैसे मोतियाबिंद से अंधी हुई आँखें सूरज की तेज़ रोशनी नहीं देख पातीं।

4.21.41

स्वयमुत्पद्यते सा च संकल्पाद्व्योमवृक्षवत्। असंकल्पनमात्रेण भावनायां महामते ॥ ४१ ॥

svayamutpadyate sā ca saṃkalpādvyomavṛkṣavat | asaṃkalpanamātreṇa bhāvanāyāṃ mahāmate || 41 ||

It arises on its own out of a mere thought, like a tree growing in empty sky. And, O great-minded one, it fades away only through the absence of that thought, in steady, settled contemplation.

यह अपने आप एक साधारण विचार से पैदा हो जाती है, जैसे आकाश में कोई पेड़ उग आए। और हे महामते, यह उसी विचार के न रहने से, गहरे और स्थिर चिंतन में, मिट जाती है।

4.21.42

क्षीणायां स्वरसादेव विमर्शेन विलासिना। असंसङ्गः पदार्थेषु सर्वेषु स्थिरतां गतः ॥ ४२ ॥

kṣīṇāyāṃ svarasādeva vimarśena vilāsinā | asaṃsaṅgaḥ padārtheṣu sarveṣu sthiratāṃ gataḥ || 42 ||

When it has faded away simply through its own natural force, through a graceful act of reflection, a person becomes free from attachment to every single thing and settles into steadiness.

जब यह अपने आप ही, अपनी ताकत से कमज़ोर पड़कर मिट जाती है, तो एक सहज मनन के जरिए इंसान हर एक चीज़ से बिना लगाव के हो जाता है और स्थिरता को पा लेता है।

4.21.43

सत्यदृष्टौ प्रपन्नायामसत्ये क्षयमागते। निर्विकल्पचिदच्छात्मा स आत्मा समवाप्यते ॥ ४३ ॥

satyadṛṣṭau prapannāyāmasatyekṣayamāgate | nirvikalpacidacchātmā sa ātmā samavāpyate || 43 ||

When true seeing has been reached and the unreal has come to its end, then that self, which is pure clear awareness free from all mental constructs, is attained.

जब सच्ची दृष्टि प्राप्त हो जाती है और झूठ का अंत हो जाता है, तब वह आत्मा, जो शुद्ध और निर्मल चेतना है, जो हर तरह के विचार-भेद से मुक्त है, वही आत्मा पाई जाती है।

4.21.44

न सत्ता यस्य नासत्ता न सुखं नापि दुःखिता। केवलं केवलीभावो यस्यान्तरुपलभ्यते ॥ ४४ ॥

na sattā yasya nāsattā na sukhaṃ nāpi duḥkhitā | kevalaṃ kevalībhāvo yasyāntarupalabhyate || 44 ||

That self has neither existence nor non-existence, and neither happiness nor sorrow; inside it is found only its own aloneness, being nothing but itself.

उस आत्मा में न तो होना है, न न-होना; न सुख है, न दुख। उसके भीतर बस वह खुद ही, अकेला अपने आप में, मिलता है।

4.21.45

अभव्यया भावनया न चित्तेन्द्रियदृष्टिभिः। आत्मनोऽनन्यभूताभिरपि यः परिवर्जितः ॥ ४५ ॥

abhavyayā bhāvanayā na cittendriyadṛṣṭibhiḥ | ātmano'nanyabhūtābhirapi yaḥ parivarjitaḥ || 45 ||

That self is missed by any way of imagining that is not fit for it, and it is not caught by the sight of the mind or the senses either, even though the mind, the senses, and sight are not different from the self itself.

इस आत्मा को वह सोच नहीं पकड़ पाती जो इसके लायक ही नहीं है, और न मन, न इंद्रियाँ, न दृष्टि इसे पकड़ पाती हैं, हालांकि मन, इंद्रियाँ और दृष्टि खुद आत्मा से अलग नहीं हैं।

4.21.46

वासनाभिरनन्ताभिर्व्योमेव घनराजिभिः । संदिग्धायां यथा रज्ज्वां सर्पतत्त्वं तथैव हि ॥ ४६ ॥

vāsanābhiranantābhirvyomeva ghanarājibhiḥ | saṃdigdhāyāṃ yathā rajjvāṃ sarpatattvaṃ tathaiva hi || 46 ||

Endless mental impressions seem to cover it, the way rows of thick clouds cover the sky; it is just like the snake that appears in a rope when one is not sure what the rope is.

अनगिनत वासनाएँ इसे ऐसे ढक लेती हैं जैसे घने बादलों की कतारें आकाश को ढक देती हैं; बिलकुल वैसे ही जैसे किसी रस्सी के बारे में शक होने पर उसमें साँप दिखने लगता है।

4.21.47

चिदाकाशात्मना बन्धस्त्वबन्धेनैव कल्पितः । कल्पितं कल्पितं वस्तु प्रतिकल्पनयान्यथा ॥ ४७ ॥

cidākāśātmanā bandhas tv abandhenaiva kalpitaḥ | kalpitaṃ kalpitaṃ vastu pratikalpanayānyathā || 47 ||

Since its true nature is the space of consciousness, bondage is only imagined onto what is actually free of bondage; one imagined thing turns into another simply through a further act of imagining.

क्योंकि इसका असली रूप चेतना का आकाश है, इसलिए बंधन सिर्फ कल्पना है, जो असल में बंधा ही नहीं है, उसी पर बंधन की कल्पना कर ली जाती है; एक कल्पित चीज़ दूसरी नई कल्पना से बदलकर कुछ और बन जाती है।

4.21.48

तदेवान्यत्वमादत्ते खमहोरात्रयोरिव । यदतुच्छमनायासमनुपाधि गतभ्रमम् ॥ ४८ ॥

tadevānyatvamādatte khamahorātrayoriva | yadatucchamanāyāsam anupādhi gatabhramam || 48 ||

That same space takes on an appearance of difference, the way the sky itself seems different by day and by night; yet it is real, needs no effort, carries no covering, and holds no confusion.

वही चेतना का आकाश अलग-अलग दिखने लगता है, जैसे दिन और रात में आकाश खुद अलग दिखता है; जबकि वह असली है, उसे किसी मेहनत की ज़रूरत नहीं, उस पर कोई ढकाव नहीं, और उसमें कोई भ्रम नहीं।

4.21.49

तत्तत्कल्पनयातीतं तत्सुखायैव कल्पते । शून्य एव कुसूले तु सिंहोऽस्तीति भयं यथा ॥ ४९ ॥

tattatkalpanayātītaṃ tatsukhāyaiva kalpate | śūnya eva kusūle tu siṃho'stīti bhayaṃ yathā || 49 ||

That reality, which lies beyond every such imagining, still gets imagined as this or that only for the imaginer's own pleasure, like the fear that grips someone who thinks there is a lion in a grain bin that is actually empty.

वह सच्चाई, जो हर कल्पना से परे है, फिर भी सिर्फ अपनी ही खुशी के लिए कुछ न कुछ कल्पना कर ली जाती है, जैसे किसी खाली अनाज के कोठे में यह डर बैठ जाना कि इसमें शेर है, जबकि वहाँ कुछ भी नहीं है।

4.21.50

शून्य एव शरीरेऽन्तर्बद्धोऽस्मीति भयं तथा । शून्य एव कुसूले तु प्रेक्ष्य सिंहो न लभ्यते ॥ ५० ॥

śūnya eva śarīre'ntar baddho'smīti bhayaṃ tathā | śūnya eva kusūle tu prekṣya siṃho na labhyate || 50 ||

In the same way, even though the body is empty inside, the fear arises that I am tied up inside it, just as, though the grain bin is empty, when you actually look, no lion is found there.

उसी तरह, शरीर के अंदर असल में कुछ नहीं है, फिर भी यह डर उठता है कि मैं इसमें बंधा हूँ, जैसे उस खाली कोठे में गौर से देखने पर भी कोई शेर नहीं मिलता।

4.21.51

तथा संसारबन्धार्थः प्रेक्षितोऽसौ न लभ्यते । इदं जगदयं चाहमिति संभ्रान्तमुत्थितम् ॥ ५१ ॥

tathā saṃsārabandhārthaḥ prekṣito'sau na labhyate | idaṃ jagadayaṃ cāhamiti saṃbhrāntamutthitam || 51 ||

In the same way, when you actually look for the substance behind the bondage of this world, it is not found; the thought that this is the world and this is me has risen only out of confusion.

उसी तरह, जब संसार के इस बंधन को गौर से देखा जाए, तो उसका कोई ठोस आधार नहीं मिलता; यह दुनिया है और यह मैं हूँ, यह विचार सिर्फ भ्रम से उठा है।

4.21.52

बालानां मध्यमे काले छाया वैतालिकी यथा । कल्पनावशतो जन्तोर्भावाभावशुभाशुभाः ॥ ५२ ॥

bālānāṃ madhyame kāle chāyā vaitālikī yathā | kalpanāvaśato jantorbāvābhāvaśubhāśubhāḥ || 52 ||

Just as children, at twilight, take a shadow for a ghost, so too a creature's sense of what exists and what does not, and of what is good and what is bad, comes only from the power of imagination.

जैसे शाम के धुंधलके में बच्चे किसी परछाई को भूत समझ लेते हैं, वैसे ही किसी जीव के लिए यह है, यह नहीं है, यह अच्छा है, यह बुरा है, यह सब सिर्फ कल्पना के ज़ोर से बनता है।

4.21.53

क्षणादसत्तामायान्ति सत्तामपि पुनः क्षणात् । मातैव गृहिणीभावगृहीता कण्ठलम्बिनी ॥ ५३ ॥

kṣaṇādasattāmāyānti sattāmapi punaḥ kṣaṇāt | mātaiva gṛhiṇībhāvagṛhītā kaṇṭhalambinī || 53 ||

In one moment a thing passes into non-existence, and in the very next moment back into existence: the same mother, thought of in the role of a wife, becomes the woman who embraces one's neck.

एक ही पल में कोई चीज़ न होने लगती है, और अगले ही पल फिर से होने लगती है, वही माँ, जब पत्नी के रूप में सोची जाए, तो वह स्त्री बन जाती है जो गले से लिपटती है।

4.21.54

करोति गृहिणीकार्यं सुरतानन्ददा सती । कान्तैव मातृभावेन गृहीता कण्ठलम्बिनी ॥ ५४ ॥

karoti gṛhiṇīkāryaṃ suratānandadā satī | kāntaiva mātṛbhāvena gṛhītā kaṇṭhalambinī || 54 ||

As a devoted wife, she performs a wife's duties and gives the joy of union; yet that very beloved woman, thought of in the role of a mother, is just the woman who embraces one's neck.

पत्नीव्रता स्त्री के रूप में वह पत्नी के सारे काम करती है और मिलन का सुख देती है; लेकिन वही प्रिया, जब माँ के रूप में सोची जाए, तो बस वह स्त्री रह जाती है जो गले से लिपटती है।

4.21.55

नूनं विस्मारयत्येव मन्मथं मातृभावनात् । भावानुसारिफलदं पदार्थौघमवेक्ष्य च ॥ ५५ ॥

nūnaṃ vismārayatyeva manmathaṃ mātṛbhāvanāt | bhāvānusāriphaladaṃ padārthaughamavekṣya ca || 55 ||

Indeed, simply by thinking of her as a mother, desire is certainly forgotten; and this is seen with the whole range of things too, each one's result follows how it is imagined.

सच तो यह है कि उसे माँ मान लेने भर से वासना भूल जाती है; और यह बात हर चीज़ पर लागू होती है, हर वस्तु का नतीजा इस पर निर्भर करता है कि उसे किस तरह सोचा जाता है।

4.21.56

न ज्ञेनेह पदार्थेषु रूपमेकमुदीर्यते । दृढभावनया चेतो यद्यथा भावयत्यलम् ॥ ५६ ॥

na jñeneha padārtheṣu rūpamekamudīryate | dṛḍhabhāvanayā ceto yadyathā bhāvayatyalam || 56 ||

No one who truly knows says that things have one single, fixed form here; whatever way the mind pictures something, with firm conviction, that is exactly, fully, how it appears.

जो सच में जानता है, वह यह नहीं कहता कि यहाँ चीज़ों का कोई एक तय रूप होता है; मन जिस चीज़ को जिस तरह पूरे यकीन से सोच लेता है, वह पूरी तरह वैसी ही बन जाती है।

4.21.57

तत्तत्फलं तदाकारं तावत्कालं प्रपश्यति न तदस्ति न यत्सत्यं न तदस्ति न यन्मृषा ॥ ५७ ॥

tattatphalaṃ tadākāraṃ tāvatkālaṃ prapaśyati na tadasti na yatsatyam na tadasti na yanmṛṣā || 57 ||

For exactly as long as that thought lasts, one keeps seeing that particular result in that particular shape; and it is neither purely real nor purely unreal.

जितनी देर तक वह खयाल टिका रहता है, उतनी देर तक वह उस ख़ास नतीजे को उसी ख़ास रूप में देखता रहता है; और वह न पूरी तरह सच है, न पूरी तरह झूठ।

4.21.58

यद्यथा येन निर्णीतं तत्तथा तेन लक्ष्यते भावितेाकाशमातङ्गं व्योमहस्तितया मनः ॥ ५८ ॥

yadyathā yena nirṇītaṃ tattathā tena lakṣyate bhāvitākāśamātaṅgaṃ vyomahastitayā manaḥ || 58 ||

Whatever anyone settles on, and in whatever way, is exactly how they then see it, like an elephant pictured in the sky, the mind itself creates this very idea of a sky elephant.

जो भी व्यक्ति जिस चीज़ को जिस तरह मान लेता है, उसे वह ठीक वैसी ही दिखने लगती है, जैसे आकाश में कल्पना किया गया हाथी, मन ही आकाश-हाथी का यह खयाल गढ़ लेता है।

4.21.59

व्योमकाननमातङ्गीं व्योमस्थामनुधावति तस्मात्संकल्पमेव त्वं सर्वभावमयात्मकम् ॥ ५९ ॥

vyomakānanamātaṅgīṃ vyomasthāmanudhāvati tasmātsaṃkalpameva tvaṃ sarvabhāvamayātmakam || 59 ||

The elephant of the sky runs after a female elephant of that same sky forest, standing there in the sky; so know that everything, every single appearing thing, is nothing but this same act of imagining.

आकाश का वह हाथी आकाश में खड़ी उसी आकाश-जंगल की हथिनी के पीछे दौड़ता है; इसलिए जान लो कि यह सब कुछ, जितनी भी चीज़ें दिखती हैं, केवल कल्पना ही है।

4.21.60

त्यज राम सुषुप्तस्थः स्वात्मनैव भवात्मनः मणिर्हि प्रतिबिम्बानां प्रतिषेधक्रियां प्रति ॥ ६० ॥

tyaja rāma suṣuptasthaḥ svātmanaiva bhavātmanaḥ maṇirhi pratibimbānāṃ pratiṣedhakriyāṃ prati || 60 ||

Rama, give up this self bound up with worldly becoming; stay, through your own true self, as if in deep untouched sleep, for a jewel, after all, has no power to stop the images that appear in it.

हे राम, संसार से बंधे हुए इस मैं को छोड़ दो; अपने असली स्वरूप में वैसे ही टिके रहो जैसे कोई गहरी नींद में हो, जिसे कुछ छूता नहीं, क्योंकि एक मणि में जो प्रतिबिंब पड़ते हैं, उन्हें रोकने की ताकत मणि में खुद नहीं होती।

4.21.61

न शक्तो जडभावेन नतु राम भवादृशः यदात्मनि जगद्राम तवेह प्रतिबिम्बति ॥ ६१ ॥

na śakto jaḍabhāvena natu rāma bhavādṛśaḥ yadātmani jagadrāma taveha pratibimbati || 61 ||

It cannot do this, because it is unconscious matter; but you, Rama, are not like that, for it is within your own self that this world is reflected, Rama.

वह ऐसा नहीं कर सकता, क्योंकि वह निर्जीव पदार्थ है; लेकिन तुम, राम, वैसे नहीं हो, क्योंकि यह पूरी दुनिया तुम्हारे ही भीतर झलकती है, राम।

4.21.62

तदवस्त्विति निर्णीय मा तेनागच्छ रञ्जनम् । तदेव सत्यमिति वाप्यभिन्नं परमात्मनः ॥ ६२ ॥

tadavastviti nirṇīya mā tenāgaccha rañjanam | tadeva satyamiti vāpyabhinnaṃ paramātmanaḥ || 62 ||

Once you have decided that it is not a real thing, do not let yourself be colored by it because of that; or, if you call it real too, know that even then it is nothing other than the supreme self.

जब तुम यह तय कर लो कि यह असली नहीं है, तो इसी वजह से इससे रंगे मत जाओ; या फिर, अगर तुम इसे सच भी मान लो, तो भी यह परमात्मा से अलग नहीं है।

4.21.63

मत्वान्तस्त्वमनाद्यन्तं भावयात्मानमात्मना । चेतसि प्रतिबिम्बन्ति ये भावास्तव राघव । रञ्जयन्त्वन्यसक्तत्वान्मा ते त्वां स्फटिकं यथा ॥ ६३ ॥

matvāntastvamanādyantaṃ bhāvayātmānamātmanā | cetasi pratibimbannti ye bhāvāstava rāghava | rañjayantvanysaktatvānmā te tvāṃ sphaṭikaṃ yathā || 63 ||

Know within yourself that you are without beginning or end, and by your own self dwell on your own self, Raghava. Whatever thoughts appear reflected in your mind, being tied to other things, do not let them color you, just as a crystal is not colored.

अपने भीतर यह जान लो कि तुम्हारा न कोई आरंभ है, न अंत; और अपने ही सहारे अपने आप पर मनन करो, हे राघव। तुम्हारे मन में जो भी विचार झलकते हैं, जो दूसरी चीज़ों से जुड़े होते हैं, उन्हें अपने ऊपर रंग मत चढ़ाने दो, जैसे स्फटिक पर रंग नहीं चढ़ता।

4.21.64

स्फटिकममननं यथा विशन्ति प्रकटतया न च रञ्जना विचित्रा । इह हि विमननं तथा विशन्तु प्रकटतया भुवनैषणा भवन्तम् ॥ ६४ ॥

sphaṭikamamananaṃ yathā viśanti prakaṭatayā na ca rañjanā vicitrā | iha hi vimananaṃ tathā viśantu prakaṭatayā bhuvanaiṣaṇā bhavantam || 64 ||

Just as colors clearly seem to enter a crystal, though it has no mind of its own, without truly staining it, in just the same way, let worldly desires clearly seem to enter you too, without your mind holding on to them, so that you too stay unstained.

जैसे स्फटिक में अलग-अलग रंग साफ़ दिखते हुए घुसते हैं, फिर भी वह असल में रंगा नहीं जाता, क्योंकि उसका अपना कोई मन ही नहीं है, ठीक उसी तरह, संसार की चाहतें भले तुम्हारे भीतर साफ़ दिखती हुई घुसें, पर उन पर मन मत लगाओ, ताकि तुम भी अछूते बने रहो।

Chapter 22

4.22.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जन्तोः कृतविचारस्य विगलद्वृत्तिचेतसः । मननं त्यजतो ज्ञात्वा किंचित्परिणतात्मनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jantoḥ kṛtavicārasya vigaladvṛtticetasaḥ | mananaṃ tyajato jñātvā kiṃcitpariṇatātmanaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: He has looked closely at things. The movements of his mind are melting away. He has given up further thinking. And having understood a little, he has changed within.

श्री वसिष्ठ ने कहा: उसने चीज़ों को गहराई से परखा है। उसके मन की हलचलें पिघल रही हैं। उसने और सोचना छोड़ दिया है। और थोड़ा सा समझकर वह भीतर से बदल गया है।

4.22.2

दृश्यं संत्यजतो हेयमुपादेयमुपेयुषः । द्रष्टारं पश्यतो दृश्यमद्रष्टारमपश्यतः ॥ २ ॥

dṛśyaṃ saṃtyajato heyamupādeyamupeyuṣaḥ | draṣṭāraṃ paśyato dṛśyamadraṣṭāramapaśyataḥ || 2 ||

He lets go of everything he sees. He has gone beyond both what should be rejected and what should be accepted. He sees the seer, and he does not see the seen as something apart from the seer.

वह जो कुछ भी देखता है, उसे छोड़ देता है। वह त्यागने और अपनाने दोनों से आगे निकल चुका है। वह द्रष्टा को देखता है, और जो दिखता है उसे द्रष्टा से अलग करके नहीं देखता।

4.22.3

जागर्तव्ये परे तत्त्वे जागरूकस्य जीवतः । सुप्तस्य घनसंमोहमये संसारवर्त्मनि ॥ ३ ॥

jāgartavye pare tattve jāgarūkasya jīvataḥ | suptasya ghanasaṃmohamaye saṃsāravartmani || 3 ||

He stays awake and alive to the highest truth, the truth he must wake up to. But on the path of worldly life, thick with delusion, he is asleep.

वह उस परम सत्य के प्रति जागा और जीवित रहता है, जिसके प्रति जागना ज़रूरी है। पर संसार के रास्ते पर, जो घने मोह से भरा है, वह सोया हुआ है।

4.22.4

पर्यन्तात्यन्तवैराग्यात्सरसेष्वरसेष्वपि । भोगेष्वाभोगरम्येषु विरक्तस्य निराशिषः ॥ ४ ॥

paryantātyantavairāgyātsaraseṣvaraseṣvapi | bhogeṣvābhogaramyeṣu viraktasya nirāśiṣaḥ || 4 ||

Because all wanting has finally and completely left him, he no longer craves any pleasure, the tasty ones and the tasteless ones alike, even those delights that seem so rich and full.

क्योंकि सारी चाह आखिरकार पूरी तरह उससे छूट चुकी है, अब उसे किसी सुख की चाह नहीं रहती, चाहे वह स्वादिष्ट हो या फीका, यहाँ तक कि वे भोग भी नहीं जो बहुत भरे-पूरे और सुंदर लगते हैं।

4.22.5

व्रजत्यात्माम्भसैकत्वं जीर्णंजाड्ये नभस्यलम्। गलत्यपगतासङ्गे हिमापूर इवातपे ॥ ५ ॥

vrajatyātmāmbhasaikatvaṃ jīrṇaṃjāḍye nabhasyalam | galatyapagatāsaṅge himāpūra ivātape || 5 ||

It flows into oneness with the waters of the self. Its old heaviness melts away completely into empty space. With attachment gone, it dissolves, like a heap of snow in the heat of the sun.

वह आत्मा के जल में एकाकार हो जाता है। उसकी पुरानी जड़ता आकाश में पूरी तरह घुल जाती है। आसक्ति के मिट जाने पर वह पिघल जाता है, जैसे धूप में बर्फ का ढेर पिघलता है।

4.22.6

तरङ्गितासु कल्लोलजललोलान्तरासु च शाम्यन्तीष्वथ तृष्णासु नदीष्विव घनात्यये ॥ ६ ॥

taraṅgitāsu kallolajalalolāntarāsu ca śāmyantīṣvatha tṛṣṇāsu nadīṣviva ghanātyaye || 6 ||

Now his cravings, once turned to waves, churned inside by surging water, grow calm, like rivers when the rain clouds have passed.

अब उसकी तृष्णाएँ, जो कभी लहरों जैसी उठती थीं और भीतर उमड़ते पानी से हिलती रहती थीं, शांत हो जाती हैं, जैसे बरसात के बादल छँटने पर नदियाँ शांत हो जाती हैं।

4.22.7

संसारवासनाजाले खगजाल इवाखुना त्रोटिते हृदयग्रन्थौ श्लथे वैराग्यरंहसा ॥ ७ ॥

saṃsāravāsanājāle khagajāla ivākhunā troṭite hṛdayagranthau ślathe vairāgyaraṃhasā || 7 ||

The net of worldly desire, like a bird-snare gnawed through by a mouse, is torn apart. The knot in his heart loosens fast, now that wanting has left him.

सांसारिक वासनाओं का जाल, जैसे चूहे के कुतरने से पक्षियों का जाल कट जाता है, वैसे ही कट जाता है। उसके हृदय की गाँठ तेज़ी से ढीली पड़ जाती है, क्योंकि अब उसमें कोई चाह नहीं बची।

4.22.8

कातकं फलमासाद्य यथा वारि प्रसीदति तथा विज्ञानवशतः स्वभावः संप्रसीदति ॥ ८ ॥

kātakaṃ phalamāsādya yathā vāri prasīdati tathā vijñānavashataḥ svabhāvaḥ saṃprasīdati || 8 ||

Just as water turns clear when it meets the seed that clears muddy water, so a person's own nature turns clear through the strength of true knowledge.

जैसे मैला पानी साफ करने वाला बीज पानी में मिलते ही पानी को निर्मल कर देता है, वैसे ही सच्चे ज्ञान की ताकत से अपना स्वभाव निर्मल हो जाता है।

4.22.9

नीरागं निरुपासङ्गं निर्द्वन्द्वं निरुपाश्रयम् विनिर्याति मनो मोहाद्विहगः पञ्जरादिव ॥ ९ ॥

nīrāgaṃ nirupāsaṅgaṃ nirdvandvaṃ nirupāśrayam viniryāti mano mohādvihaagaḥ pañjarādiva || 9 ||

Free from attachment, free from clinging, free from opposites, without any support, the mind goes out of delusion, like a bird out of its cage.

आसक्ति से मुक्त, मोह-ममता से मुक्त, द्वंद्वों से मुक्त, बिना किसी सहारे के, मन मोह से बाहर निकल जाता है, जैसे पक्षी पिंजरे से बाहर निकल जाता है।

4.22.10

शान्ते संदेहदौरात्म्ये गतकौतुकविभ्रमम् परिपूर्णान्तरं चेतः पूर्णेन्दुरिव राजते ॥ १० ॥

śānte saṃdehadaurātmye gatakautukavibhramam paripūrṇāntaraṃ cetaḥ pūrṇenduriva rājate || 10 ||

When the evil of doubt has quieted down, the mind, its restlessness and confusion gone, completely full within, shines like the full moon.

जब संदेह की बुराई शांत हो जाती है, तो मन, जिसकी बेचैनी और उलझन खत्म हो चुकी है, भीतर से पूरी तरह भरा हुआ, पूर्णिमा के चाँद जैसा चमकता है।

4.22.11

जनितोत्तमसौन्दर्या दूरादस्तमयोन्नता । समतोदेति सर्वत्र शान्ते वात इवार्णवे ॥ ११ ॥

janitottamasaundaryā dūrādastamayonnatā | samatodeti sarvatra śānte vāta ivārṇave || 11 ||

Then a deep, even calm rises up everywhere, glowing with the highest beauty, standing high, never again to set, like the smooth calm that spreads over the sea when the wind falls quiet.

फिर हर जगह एक गहरी, सम शांति उठती है, जो परम सुंदरता से चमकती है, ऊँची उठी हुई, जो फिर कभी नहीं डूबती, जैसे हवा थमने पर समुद्र पर चिकनी शांति फैल जाती है।

4.22.12

अन्धकारमयी मूका जाड्यजर्जरितान्तरा । तनुत्वमेति संसारवासनेवोदये क्षपा ॥ १२ ॥

andhakāramayī mūkā jāḍyajarjaritāntarā | tanutvameti saṃsāravāsanevodaye kṣapā || 12 ||

The night, full of darkness, silent, its inside worn thin with heaviness, thins away at daybreak, the same way worldly craving thins away.

रात, जो अंधकार से भरी है, चुप है, और भीतर से जड़ता के बोझ से थकी हुई है, सुबह होते ही पतली पड़ जाती है, ठीक वैसे ही जैसे सांसारिक तृष्णा पतली पड़ जाती है।

4.22.13

दृष्टचिद्भास्करा प्रज्ञापद्मिनी पुण्यपल्लवा । विकसत्यमलोद्योता प्रातर्द्यौरिव रूपिणी ॥ १३ ॥

dṛṣṭacidbhāskarā prajñāpadminī puṇyapallavā | vikasatyamalodyotā prātardyauriva rūpiṇī || 13 ||

Wisdom is a pond of lotuses that has seen the sun of consciousness and carries sacred new shoots. It opens out with a pure brightness, like the sky at daybreak taking shape.

बुद्धि एक कमल का तालाब है जिसने चेतना के सूरज को देख लिया है और जिसमें पवित्र नई कोंपलें हैं। वह एक साफ चमक के साथ खिल जाता है, जैसे सुबह होते ही आकाश आकार लेता है।

4.22.14

प्रज्ञा हृदयहारिण्यो भुवनाह्लादनक्षमाः । सत्त्वलब्धाः प्रवर्धन्ते सकलेन्दोरिवांशवः ॥ १४ ॥

prajñā hṛdayahāriṇyo bhuvanāhlādanakṣamāḥ | sattvalabdhāḥ pravardhante sakalendorivāṃśavaḥ || 14 ||

Insights that steal the heart, able to delight the whole world, gained through a clear and calm mind, keep growing greater, like the rays of the full moon.

वे सूझें जो हृदय को मोह लेती हैं, जो पूरी दुनिया को खुश कर सकती हैं, जो एक साफ और शांत मन से मिलती हैं, बढ़ती ही जाती हैं, जैसे पूर्णिमा के चाँद की किरणें बढ़ती जाती हैं।

4.22.15

बहुनात्र किमुक्तेन ज्ञातज्ञेयो महामतिः । नोदेति नैव यात्यस्तमभूताकाशकोशवत् ॥ १५ ॥

bahunātra kimukthena jñātajñeyo mahāmatiḥ | nōdeti naiva yātyastamabhūtākāśakośavat || 15 ||

What more is there to say about this? The truly wise one, who has known everything there is to know, never rises and never sets, like empty space, which was never born in the first place.

इस बारे में और क्या कहा जाए? जो सचमुच बुद्धिमान है, जिसने जानने योग्य सब कुछ जान लिया है, वह न कभी उगता है न कभी डूबता है, जैसे खाली आकाश, जो कभी पैदा ही नहीं हुआ।

4.22.16

विचारणा परिज्ञातस्वभावस्योदितात्मनः । अनुकम्प्या भवन्तीह ब्रह्मविष्ण्विन्द्रशंकराः ॥ १६ ॥

vicāraṇā parijñātasvabhāvasyoditātmanaḥ | anukampyā bhavantīha brahmaviṣṇvindraśaṅkarāḥ || 16 ||

Through this looking closely, once a person has fully known his own nature and his true self has awakened, even the gods Brahma, Vishnu, Indra, and Shiva become beings he feels sorry for.

इस गहरी परख के द्वारा, जब कोई व्यक्ति अपने स्वभाव को पूरी तरह जान लेता है और उसका असली स्वरूप जाग जाता है, तो ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र और शिव जैसे देवता भी उसके लिए तरस खाने लायक बन जाते हैं।

4.22.17

प्रकटाकारमप्यन्तर्निरहंकारचेतसम् । नाप्नुवन्ति विकल्पास्तं मृगतृष्णामिवैणकाः ॥ १७ ॥

prakaṭākāramapyantarnirahaṅkāracetasam | nāpnuvanti vikalpāstaṁ mṛgatṛṣṇāmivaṇakāḥ || 17 ||

Even while carrying a visible body, his mind inside is free of any sense of I. Doubts and wandering thoughts can no longer reach him, just as deer can never reach a mirage.

एक दिखने वाला शरीर रखते हुए भी, उसका मन भीतर से अहंकार से मुक्त है। शंकाएँ और भटकते विचार अब उस तक नहीं पहुँच पाते, जैसे हिरण कभी मृगतृष्णा तक नहीं पहुँच पाते।

4.22.18

तरङ्गवदिमे लोकाः प्रयान्त्यायान्ति चेतसः । क्रोडीकुर्वन्ति चाज्ञं ते न ज्ञं मरणजन्मनी ॥ १८ ॥

taraṅgavadime lokāḥ prayāntyāyānti cetasaḥ | kroḍīkurvanti cājñaṁ te na jñaṁ maraṇajanmanī || 18 ||

These worlds come and go like the waves of the mind. Death and birth take hold of the person who does not know, not of the one who knows.

ये सारे संसार मन की लहरों की तरह आते-जाते रहते हैं। जन्म और मृत्यु उसी को जकड़ते हैं जो नहीं जानता, न कि उसे जो जानता है।

4.22.19

आविर्भावतिरोभावौ संसारो नेतरक्रमः । इति ताभ्यां समालोको रमते स निबध्यते ॥ १९ ॥

āvirbhāvatirōbhāvau saṁsāro netarakramaḥ | iti tābhyāṁ samālōkō ramate sa nibadhyate || 19 ||

Appearing and disappearing, that is the whole of this world; nothing else happens in it. Whoever looks at things only this way, and takes delight in it, stays tied down.

प्रकट होना और लुप्त हो जाना, यही यह पूरा संसार है; इसमें और कुछ नहीं होता। जो कोई चीज़ों को बस इसी तरह देखता है और उसमें खुश होता है, वह बंधा रह जाता है।

4.22.20

न जायते न म्रियते कुम्भे कुम्भनभो यथा। भूषिते दूषिते वापि देहे तद्वदिहात्मवान्॥ २०॥

na jāyate na mriyate kumbhe kumbhanabho yathā | bhūṣite dūṣite vāpi dehe tadvadihātmavān || 20 ||

Just as the space inside a pot is never born and never dies, so it is, here, with the one who knows the self, whether his body is decorated or ruined.

जैसे घड़े के अंदर का आकाश न कभी पैदा होता है न मरता है, वैसे ही यहाँ आत्मा को जानने वाले के साथ होता है, चाहे उसका शरीर सजा हुआ हो या बिगड़ा हुआ हो।

4.22.21

विवेक उदिते शीते मिथ्या भ्रममरूदिता। क्षीयते वासना साग्रे मृगतृष्णा मराविव॥ २१॥

viveka udite śīte mithyā bhramamarūditā | kṣīyate vāsanā sāgre mṛgatṛṣṇā marāviva || 21 ||

Once clear, cool understanding rises, the craving born of a false illusion in the desert shrinks away from the very start, like a mirage in the desert.

जैसे ही साफ, ठंडी समझ उगती है, रेगिस्तान के झूठे भ्रम से जन्मी तृष्णा शुरू से ही सिकुड़ने लगती है, जैसे रेगिस्तान में मृगतृष्णा।

4.22.22

कोऽहं कथमिदं चेति यावन्न प्रविचारितम्। संसाराडम्बरं तावदन्धकारोपमं स्थितम्॥ २२॥

ko'haṃ kathamidaṃ ceti yāvanna pravicāritam | saṃsārāḍambaraṃ tāvadandhakāropamaṃ sthitam || 22 ||

As long as no one asks who am I and what is this world, the whole show of the world stays like a thick darkness.

जब तक कोई यह नहीं पूछता कि मैं कौन हूँ और यह संसार क्या है, तब तक यह सारा सांसारिक तमाशा अंधेरे जैसा बना रहता है।

4.22.23

मिथ्याभ्रमभरोद्भूतं शरीरं पदमापदाम्। आत्मभावनया नेदं यः पश्यति स पश्यति॥ २३॥

mithyābhramabharodbhūtaṃ śarīraṃ padamāpadām | ātmabhāvanayā nedaṃ yaḥ paśyati sa paśyati || 23 ||

The body is born from a heavy false delusion, and it is a home of troubles. The one who, by dwelling in awareness of the self, sees that this body is not real, he alone truly sees.

यह शरीर एक बड़े झूठे भ्रम से पैदा हुआ है, और यह मुसीबतों का घर है। जो व्यक्ति अपने आत्मा में स्थिर होकर यह देखता है कि यह शरीर सच नहीं है, वही सच में देखता है।

4.22.24

देशकालवशोत्थानि न ममेति गतभ्रमम्। शरीरे सुखदुःखानि यः पश्यति स पश्यति॥ २४॥

deśakālavasotthāni na mameti gatabhramam | śarīre sukhaduḥkhāni yaḥ paśyati sa paśyati || 24 ||

Pains and pleasures in the body arise only because of place and time, they are not truly mine. The one who sees this, with all delusion gone, truly sees.

शरीर में जो सुख-दुख होते हैं, वे केवल जगह और समय के कारण आते हैं, वे मेरे नहीं हैं। जो व्यक्ति भ्रम मिटाकर यह देखता है, वही सच में देखता है।

4.22.25

अपारपर्यन्तनभो दिक्कालादिक्रियान्वितम्। अहमेवेति सर्वत्र यः पश्यति स पश्यति ॥ २५ ॥

apāraparyantanabho dikkālādikriyānvitam | aham eveti sarvatra yaḥ paśyati sa paśyati || 25 ||

The one who sees everywhere that I alone am this boundless, endless space, joined with the workings of direction and time and all such things, he truly sees.

जो व्यक्ति हर जगह यह देखता है कि मैं ही वह असीम, अनंत आकाश हूँ, जिसमें दिशा, समय आदि की सारी क्रियाएँ जुड़ी हैं, वही सच में देखता है।

4.22.26

वालाग्रलक्षभागात्तु कोटिशः परिकल्पितात्। अहं सूक्ष्म इति व्यापी यः पश्यति स पश्यति ॥ २६ ॥

vālāgralakṣabhāgāttu koṭiśaḥ parikalpitāt | ahaṃ sūkṣma iti vyāpī yaḥ paśyati sa paśyati || 26 ||

The one who sees that I am tinier than a hair tip split into a hundred thousand parts and split again ten million times over, and yet I fill everything, he truly sees.

जो व्यक्ति यह देखता है कि मैं बाल की नोक के लाखवें हिस्से से भी करोड़ों गुना छोटा हूँ, फिर भी मैं सब जगह फैला हुआ हूँ, वही सच में देखता है।

4.22.27

आत्मानमितरच्चैव दृष्ट्या नित्याविभिन्नया। सर्वं चिज्ज्योतिरेवेति यः पश्यति स पश्यति ॥ २७ ॥

ātmānamitaraccaiava dṛṣṭyā nityāvibhinnayā | sarvaṃ cijjyotireveti yaḥ paśyati sa paśyati || 27 ||

The one who, seeing with a vision that never divides things, sees that the self and everything else are nothing but the light of consciousness, he truly sees.

जो व्यक्ति एक ऐसी दृष्टि से देखता है जो कभी भेद नहीं करती, और जिसे यह दिखता है कि आत्मा और बाकी सब कुछ चेतना की रोशनी ही है, वही सच में देखता है।

4.22.28

सर्वशक्तिरनन्तात्मा सर्वभावान्तरस्थितः। अद्वितीयश्चिदित्यन्तर्यः पश्यति स पश्यति ॥ २८ ॥

sarvaśaktiranantātmā sarvabhāvāntarasthitaḥ | advitīyaścidityantaryaḥ paśyati sa paśyati || 28 ||

The one who sees, deep within, that the self has all power, is endless, lives inside every single thing, and is one consciousness without a second, he truly sees.

जो व्यक्ति अपने भीतर यह देखता है कि आत्मा सर्वशक्तिमान है, अनंत है, हर चीज़ के भीतर मौजूद है, और वह एक ऐसी चेतना है जिसका कोई दूसरा नहीं, वही सच में देखता है।

4.22.29

आधिव्याधिभयोद्विग्नो जरामरणजन्मवान्। देहोऽहमिति यः प्राज्ञो न पश्यति स पश्यति ॥ २९ ॥

ādhiyādhibhayodvigno jarāmaraṇajanmavān | deho'hamiti yaḥ prājño na paśyati sa paśyati || 29 ||

The body is troubled by worry, sickness, and fear, and is bound to old age, death, and birth. The wise one who does not see himself as this body, he truly sees.

यह शरीर चिंता, बीमारी और डर से घिरा रहता है, और बुढ़ापे, मृत्यु और जन्म के अधीन है। जो बुद्धिमान व्यक्ति खुद को यह शरीर नहीं मानता, वही सच में देखता है।

4.22.30

तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्च व्यापको महिमा मम । द्वितीयो न ममास्तीति यः पश्यति स पश्यति ॥ ३० ॥

tiryagūrdhvamadhastācca vyāpako mahimā mama | dvitīyo na mamāstīti yaḥ paśyati sa paśyati || 30 ||

The one who sees that my greatness spreads sideways, upward, and downward, everywhere, and that there is nothing else besides me, he truly sees.

जो व्यक्ति यह देखता है कि मेरी महिमा हर तरफ फैली है, आगे-पीछे, ऊपर-नीचे, और मेरे सिवा कुछ और है ही नहीं, वही सच में देखता है।

4.22.31

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इवचित्तं तु नाहमेवेति यः पश्यति स पश्यति ॥ ३१ ॥

mayi sarvamidaṃ protaṃ sūtre maṇigaṇā ivacittaṃ tu nāhameveti yaḥ paśyati sa paśyati || 31 ||

The one who sees that everything is strung on me like beads on a thread, but that the mind is not who he really is, he truly sees.

जो व्यक्ति यह देखता है कि यह सब कुछ मुझमें उसी तरह पिरोया हुआ है जैसे धागे में मोती पिरोए जाते हैं, लेकिन मन मैं नहीं हूँ, वही सच में देखता है।

4.22.32

नाहं न चान्यदस्तीति ब्रह्मैवास्ति निरामयमित्थं सदसतोर्मध्ये यः पश्यति स पश्यति ॥ ३२ ॥

nāhaṃ na cānyadastīti brahmaivāsti nirāmayamitthaṃ sadasatormadhye yaḥ paśyati sa paśyati || 32 ||

The one who sees that neither he himself nor anything else truly exists on its own, that only one flawless reality exists, and who in this way sees the truth standing between what looks real and what looks unreal, he truly sees.

जो व्यक्ति यह देखता है कि न वह खुद अलग से है, न कुछ और अलग से है, बस एक निर्दोष सच्चाई है, और इसी तरह जो सच और झूठ के बीच का असली रूप देखता है, वही सच में देखता है।

4.22.33

यन्नाम किंचित्त्रैलोक्यं स एवावयवो ममतरङ्गोऽब्धाविवेत्यन्तर्यः पश्यति स पश्यति ॥ ३३ ॥

yannāma kiṃcittrailokyaṃ sa evāvayavo mamataraṅgo'bdhāvivetyantaryaḥ paśyati sa paśyati || 33 ||

The one who sees deep within that this whole world of three realms is just a part of himself, like a wave is part of the ocean, he truly sees.

जो व्यक्ति अपने भीतर यह देखता है कि यह तीनों लोकों वाला संसार मेरा ही एक हिस्सा है, जैसे समुद्र में लहर होती है, वही सच में देखता है।

4.22.34

शोच्या पाल्या मयैवेयं स्वसेयं मे कनीयसीत्रिलोकी पेलवेत्युच्चैर्यः पश्यति स पश्यति ॥ ३४ ॥

śocyā pālyā mayaiveyaṃ svaseyaṃ me kanīyasītrilokī pelavetyuccairyaḥ paśyati sa paśyati || 34 ||

The one who clearly sees that this world deserves his pity, that only he must protect her, that she is his little sister, and that these three worlds are fragile, he truly sees.

जो व्यक्ति पूरी स्पष्टता से यह देखता है कि इस संसार पर दया आती है, इसकी रक्षा उसे ही करनी है, यह उसकी छोटी बहन है, और ये तीनों लोक बहुत नाज़ुक हैं, वही सच में देखता है।

4.22.35

आत्मतापरते त्वत्तामत्ते यस्य महात्मनःभवादुपरते नूनं स पश्यति सुलोचनः ॥ ३५ ॥

ātmatāparate tvattāmatte yasya mahātmanaḥbhavāduparate nūnaṃ sa paśyati sulocanaḥ || 35 ||

Of that great soul who is lost in the truth of the self, absorbed in that very reality, and who has turned away from worldly birth and death, he indeed sees clearly, with true, clear eyes.

जो महान आत्मा अपने सच्चे स्वरूप में लीन है, उसी सच्चाई में डूबा हुआ है, और जन्म-मरण के चक्र से मुड़ चुका है, वह सच में साफ़ देखता है, वही स्पष्ट दृष्टि वाला है।

4.22.36

चेत्यानुपातरहितं चिद्भैरवमयं वपुः आपूरितजगज्जालं यः पश्यति स पश्यति ॥ ३६ ॥

cetyānupātarahitaṃ cidbhairavamayaṃ vapuḥ āpūritajagajjālaṃ yaḥ paśyati sa paśyati || 36 ||

The one who sees that his true form has nothing to do with the objects the mind grasps at, that it is pure, awesome consciousness, and that it fills this whole web of the world, he truly sees.

जो व्यक्ति यह देखता है कि उसका असली रूप मन द्वारा पकड़ी गई चीज़ों पर निर्भर नहीं है, वह शुद्ध और तेजस्वी चेतना है, और वह इस पूरे संसार-जाल में भरा हुआ है, वही सच में देखता है।

4.22.37

सुखं दुःखं भवो भावो विवेककलनाश्च याः अहमेवेति वा नूनं पश्यन्नपि न हीयते ॥ ३७ ॥

sukhaṃ duḥkhaṃ bhavo bhāvo vivekakalanāśca yāḥ ahamavevaiti vā nūnaṃ paśyannapi na hīyate || 37 ||

Pleasure and pain, every state of being, and every fine distinction drawn between them, even while seeing all of this, the one who knows that this is all truly himself never loses anything, never falls.

सुख-दुख, हर तरह का भाव, और उनके बीच के हर सूक्ष्म भेद, इन सबको देखते हुए भी, जो जानता है कि यह सब सच में वही है, वह कभी कुछ नहीं खोता, कभी नहीं गिरता।

4.22.38

स्वात्मसत्तापरापूर्णे जगत्यंशेन वर्तिना किं मे हेयं किमादेयमिति पश्यन्सुदृङ्नरः ॥ ३८ ॥

svātmasattāparāpūrṇe jagatyaṃśena vartinā kiṃ me heyaṃ kimādeyamiti paśyansuddhaṅgaraḥ || 38 ||

Because everything is completely filled with the reality of his own true self, and he himself lives in this world as only a small part of it, he sees that there is nothing left for him to reject and nothing to gain. This is how one of true sight sees.

क्योंकि सब कुछ उसके अपने सच्चे स्वरूप की सत्ता से भरा हुआ है, और वह खुद इस संसार में उसके एक छोटे से हिस्से के रूप में रहता है, इसलिए उसे न कुछ छोड़ने को बचता है, न कुछ पाने को। सच्ची दृष्टि वाला व्यक्ति इसी तरह देखता है।

4.22.39

अप्रतर्क्यमनाभासं सन्मात्रमिदमित्यलम् हेयोपादेयकलना यस्य क्षीणा स वै पुमान् ॥ ३९ ॥

apratarkyamanābhāsaṃ sanmātramidamityalam heyoādādeyakalanā yasya kṣīṇā sa vai pumān || 39 ||

This reality cannot be grasped by reasoning, it does not appear as any object, it is nothing but pure existence, that is all there is to say. The one whose very idea of rejecting this and accepting that has faded away completely, he alone is a true man.

यह सच्चाई तर्क से नहीं समझी जा सकती, यह किसी वस्तु की तरह दिखाई नहीं देती, यह बस शुद्ध अस्तित्व है, बस इतना ही कहना काफ़ी है। जिस व्यक्ति के मन से यह छोड़ो, यह अपनाओ वाला विचार पूरी तरह मिट चुका है, वही सच्चा इंसान है।

4.22.40

य आकाशवदेकात्मा सर्वभावगतोऽपि सन् न भावरञ्जनामेति स महात्मा महेश्वरः ॥ ४० ॥

ya ākāśavadekātmā sarvabhāvagato'pi san na bhāvarañjanāmeti sa mahātmā maheśvaraḥ || 40 ||

The one who, like the sky, is the single self, and even while present inside every single thing is never colored or changed by any of them, he is the great soul, the supreme lord.

जो आकाश की तरह एक ही आत्मा है, और हर चीज़ के भीतर मौजूद होते हुए भी किसी चीज़ का रंग नहीं चढ़ने देता, कभी बदलता नहीं, वही महान आत्मा है, वही परम ईश्वर है।

4.22.41

तमःप्रकाशकलनामुक्तः कालात्मतां गतः । यः सौम्यः सुसमः स्वस्थस्तं नौमि पदमागतम् ॥ ४१ ॥

tamaḥprakāśakalanāmuktaḥ kālātmatāṃ gataḥ | yaḥ saumyaḥ susamaḥ svasthatastam naumi padamāgatam || 41 ||

I bow down to him who is free from any difference between darkness and light, who has passed beyond time itself, who is gentle, always balanced, and rests in his own true self. I bow to him who has reached that final state.

मैं उस व्यक्ति को प्रणाम करता हूँ जो अंधेरे और उजाले के भेद से मुक्त है, जो समय से भी परे जा चुका है, जो शांत है, हमेशा संतुलित है, और अपने ही सच्चे स्वरूप में टिका हुआ है। मैं उसे प्रणाम करता हूँ जो उस परम अवस्था को पा चुका है।

4.22.42

यस्योदयास्तमयसंकलनाकलासु चित्रासु चारुविभवासु जगद्गतासु । वृत्तिः सदैव सकलैकमतेरनन्ता तस्मै नमः परमबोधवते शिवाय ॥ ४२ ॥

yasyodayāstamayasaṃkalanākalāsu citrāsu cāruvibhavāsu jagadgatāsu | vṛttiḥ sadaiva sakalaikamateranantā tasmai namaḥ paramabodhavate śivāya || 42 ||

In the middle of all the wonderful, beautiful changes of this world, its endless rising and setting, his mind stays fixed forever on the one single reality behind everything. I bow to him, who is full of supreme awareness, the auspicious one.

इस संसार के अद्भुत और सुंदर बदलावों के बीच, जो हमेशा उगते और डूबते रहते हैं, जिसका मन हमेशा उस एक अंतिम सच्चाई पर टिका रहता है जो सबके भीतर है। मैं उसे प्रणाम करता हूँ, जो परम ज्ञान से भरा है, जो शुभ है, जो शिव है।

Chapter 23

4.23.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । य उत्तमपदालम्बी चक्रभ्रमवदास्थितः । शरीरनगरीराज्यं कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ya uttamapadālambī cakrabhramavadāsthitaḥ | śarīranagarīrājyaṃ kurvannapi na lipyate || 1 ||

Vasishtha said: one who rests on the highest state keeps on like a wheel that spins by its own leftover momentum; even while ruling the kingdom of the body's city, he is not touched by it.

वसिष्ठ बोले, जो सबसे ऊँची अवस्था को पा चुका है, वह उसी तरह चलता रहता है जैसे पहिया अपनी पुरानी रफ़्तार से घूमता रहता है; वह शरीर रूपी नगर के राज्य को चलाते हुए भी उससे बंधता नहीं है।

4.23.2

तस्येयं भोगमोक्षार्थं तज्ज्ञस्योपवनोपमा । सुखायैव न दुःखाय स्वशरीरमहापुरी ॥ २ ॥

tasyeyaṃ bhogamokṣārthaṃ tajjñasyopavanopamā | sukhāyaiva na duḥkhāya svāśarīramahāpurī || 2 ||

For that knower, this whole city, his own great body, exists only for enjoyment and for liberation; to him it is like a pleasure garden, meant only for happiness, never for suffering.

उस जानकार के लिए यह पूरा नगर, यानी उसका अपना विशाल शरीर, केवल भोग और मुक्ति के लिए है; उसके लिए यह किसी सुंदर बगीचे जैसा है, जो सिर्फ सुख के लिए है, दुख के लिए कभी नहीं।

4.23.3

श्रीराम उवाच । नगरीत्वं शरीरस्य कथं नाम महामुने । एतां चाधिवसन्योगी कथं राजसुखैकभाक् ॥ ३ ॥

śrīrāma uvāca | nagarītvaṃ śarīrasya kathaṃ nāma mahāmune | etāṃ cādhivasanyogī kathaṃ rājasukahekabhāk || 3 ||

Rama said: great sage, how exactly is the body a city? And how does the yogi who lives in it alone enjoy the happiness of a king?

राम बोले, हे महामुनि, शरीर आखिर नगर कैसे है? और इसमें रहने वाला योगी अकेला राजा जैसा सुख कैसे पाता है?

4.23.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । रम्येयं देहनगरी राम सर्वगुणान्विता । ज्ञस्यानन्तविलासाढ्या स्वालोकार्कप्रकाशिता ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ramyeyaṃ dehanagarī rāma sarvaguṇānvitā | jñasyānantavilāsāḍhyā svālokārkaprakāśitā || 4 ||

Vasishtha said: Rama, this city that is the body is beautiful and has every good quality. For the one who knows it, it is rich with endless delight, and it shines with the light of his own inner sun.

वसिष्ठ बोले, हे राम, यह देह रूपी नगर सुंदर है और इसमें सारे अच्छे गुण हैं। जो इसे जानता है, उसके लिए यह अनंत आनंद से भरा है, और यह उसके अपने भीतरी सूरज की रोशनी से जगमगाता है।

4.23.5

नेत्रवातायनोद्द्योतप्रकाशभुवनान्तरा । करप्रतोलीविस्तारप्राप्तपादोपजाङ्गला ॥ ५ ॥

netravātāyanodyotaprakāśabhuvanāntarā | karapratolīvistāraprāptapādopajāṅgalā || 5 ||

Its windows are the eyes, and their glow lights up the rooms inside; its wide streets are the arms, reaching down to the feet, which are the city's outer edge.

इसकी खिड़कियाँ आँखें हैं, जिनकी चमक से भीतर के कमरे रोशन होते हैं; इसकी चौड़ी सड़कें भुजाएँ हैं, जो पैरों तक जाती हैं, और पैर इस नगर का बाहरी छोर हैं।

4.23.6

रोमराजीलतागुल्मा त्वचाजालकमालिता । गुल्फाङ्गुल्यां प्रविश्रान्तजङ्घोरुस्तम्भमण्डला ॥ ६ ॥

romarājīlatāgulmā tvacājālakamālitā | gulphāṅguliyāṃ praviśrāntajaṅghorustambhamaṇḍalā || 6 ||

Lines of body hair are its creepers and bushes, and a net of skin garlands it. It comes to rest at the ankles and toes, and the shins and thighs form its ring of pillars.

शरीर के बालों की रेखाएँ इसकी लताएँ और झाड़ियाँ हैं, और त्वचा का जाल इसे माला की तरह घेरे हुए है। यह टखनों और पैर की उँगलियों पर जाकर टिकता है, और पिंडलियाँ और जाँघें इसके खंभों का घेरा हैं।

4.23.7

रेखाविभक्तपादाग्रशिलाप्रथमनिर्मिता । चर्ममर्मशिरासारसंधिसीमामनोरमा ॥ ७ ॥

rekhāvibhaktapādāgraśilāprathamanirmitā | carmamarmashirāsārasaṃdhisīmāmanoramā || 7 ||

The tips of the feet, marked with lines, are its foundation stone, laid down first. Its edges and joints, made of skin, vital points, and veins, are pleasing to see.

रेखाओं से बने पैरों के अगले हिस्से इसकी नींव का पहला पत्थर हैं। इसके किनारे और जोड़, जो त्वचा, मर्म स्थानों और नसों से बने हैं, देखने में सुंदर लगते हैं।

4.23.8

उरूरुतनुभागाग्रनिर्मितोपस्थनिम्नगा । कचत्केशावलीकाचदलप्रस्थवनावृता ॥ ८ ॥

urūrutanubhāgāgranirmitopasthanimnagā | kacatkeśāvalīkācadalaprasthavanāvṛtā || 8 ||

Where the slender thighs end, a low fold is formed. It is covered by a raised thicket of shining, curling hair, like petals of glass.

जहाँ पतली जाँघें खत्म होती हैं, वहाँ एक नीची तह बनती है, जो काँच की पंखुड़ियों जैसे चमकते, घुँघराले बालों की एक उठी हुई झाड़ी से ढकी है।

4.23.9

भ्रूललाटोष्ठसच्छायवदनोद्यानशोभिता । दृष्टिपातोत्पलाकीर्णकपोलविपुलस्थली ॥ ९ ॥

bhrūlalāṭoṣṭhasacchāyavadanodyānaśobhitā | dṛṣṭipātotpalākīrṇakapolavipulasthalī || 9 ||

The face is a garden, made lovely by the soft shade of eyebrows, forehead, and lips; the wide ground of the cheeks is scattered with lotuses, which are the glances of the eyes.

चेहरा एक बगीचा है, जो भौंहों, माथे और होंठों की कोमल छाया से सुंदर बनता है; गालों की चौड़ी ज़मीन पर कमल के फूल बिखरे हैं, जो असल में आँखों की चितवन हैं।

4.23.10

वक्षःस्थलसरःस्यूतकुचपङ्कजकोरका । घनरोमावलीच्छन्नस्कन्धक्रीडाशिलोच्चया ॥ १० ॥

vakṣaḥsthalasaraḥsyūtakucapaṅkajakorakā | ghanaromāvalīcchannaskandhakrīḍāśilocchayā || 10 ||

The chest is a lake, and the breasts set in it are lotus buds; the shoulders, covered with a thick line of hair, are a raised rock for play.

छाती एक तालाब है, और उसमें बसे स्तन कमल की कलियाँ हैं; कंधे, जो बालों की घनी रेखा से ढके हैं, खेलने के लिए एक ऊँची चट्टान हैं।

4.23.11

उदरश्वभ्रनिक्षिप्तस्वान्नेष्टा भक्ष्यतत्परा दीर्घकण्ठबिलोद्गीर्णवातसंरम्भशब्दिता ॥ ११ ॥

udaraśvabhranikṣiptasvānneṣṭā bhakṣyatatparā dīrghakaṇṭhabilodgīrṇavātasaṃrambhaśabditā || 11 ||

The stomach is a pit into which its favorite food is thrown; it is always eager to eat, and it makes a rushing, angry sound of wind coming up through the long tunnel of the throat.

पेट एक गड्ढा है जिसमें उसका पसंदीदा भोजन डाला जाता है; यह हमेशा खाने के लिए तैयार रहता है, और गले की लंबी सुरंग से हवा ऊपर आने पर यह गुस्से जैसी तेज़ आवाज़ करता है।

4.23.12

हृदयापणनिर्णीतयथाप्राप्तार्थभूषिता अनारतनवद्वारप्रवहत्प्राणनागरा ॥ १२ ॥

hṛdayāpaṇanirṇītayathāprāptārthabhūṣitā anāratanavadvārapravahatprāṇanāgarā || 12 ||

It is decorated with the goods that the heart's marketplace settles on as they come; its citizens are the life-breaths, flowing endlessly in and out through its nine gates.

यह उन चीज़ों से सजा है जिन्हें दिल का बाज़ार जैसे-जैसे वे मिलती हैं, तय करता रहता है; इसके नागरिक प्राण-वायु हैं, जो इसके नौ द्वारों से लगातार अंदर-बाहर बहते रहते हैं।

4.23.13

आस्यस्फारवदादृष्टदन्तास्थिशकलाकुला मुखास्पदाभ्रमज्जिह्वाचण्डीचर्वितभोजना ॥ १३ ॥

āsyasphāravadādṛṣṭadantāsthīśakalākulā mukhāspadābhraṃjjihvācaṇḍīcarvitabhojanā || 13 ||

When the mouth opens wide, it is filled with bits of bone that are the teeth; the fierce, restless tongue that moves about inside the mouth chews the food.

जब मुँह चौड़ा खुलता है, तो उसमें हड्डी के टुकड़ों जैसे दाँत भरे नज़र आते हैं; मुँह के अंदर इधर-उधर घूमने वाली बेचैन, तेज़ जीभ भोजन को चबाती है।

4.23.14

रोमशष्पतरच्छन्ना कर्णकोटरकूपका स्फिक्श्रृंखलास्थितोपान्तपृष्ठविस्तीर्णजङ्गला ॥ १४ ॥

romaśaṣpataracchannā karṇakoṭarakūpakā sphikśr̥ṅkhalāsthitopāntapr̥ṣṭhavistīrṇajaṅgalā || 14 ||

It is covered with a growth of hair like tender grass; the ears are wells with hollow openings; the buttocks form a connected range, and the wide back beside it is the city's open outskirts.

यह मुलायम घास जैसे बालों से ढका है; कान खोखले मुँह वाले कुओं जैसे हैं; कूल्हे एक जुड़ी हुई कतार बनाते हैं, और उसके पास की चौड़ी पीठ इस नगर का खुला बाहरी इलाका है।

4.23.15

गुदोत्थानारघट्टान्तप्रद्रुतानन्तकर्दमा चित्तोद्यानमहीवल्गदात्मचिन्तावराङ्गना ॥ १५ ॥

gudotthānāraghaṭṭāntapradrutānantakardamā cittodyānamahīvalgadātmacintāvarāṅganā || 15 ||

A channel rising up from the anus, like a water-wheel, pours out an endless stream of filth. This city is like a fine lady whose own anxious thoughts run about in the garden-ground of the mind.

गुदा से उठने वाली एक नली, पनचक्की जैसी, गंदगी की एक अनंत धारा बहाती रहती है। यह नगर मानो एक सुंदर स्त्री है, जिसके अपने चिंता भरे विचार मन के बगीचे में इधर-उधर दौड़ते रहते हैं।

4.23.16

धीवरत्रादृढाबद्धचपलेन्द्रियमर्कटा । वदनोद्यानहसनपुष्पोद्गममनोरमा ॥ १६ ॥

dhīvaratrādṛḍhābaddhacapalendriyamarkaṭā | vadanodyānahasanapuṣpodgamamanoramā || 16 ||

Its restless senses are monkeys, tied but only loosely, by the leash of the intellect. It is lovely with smiles blooming like flowers in the garden of its face.

इसकी चंचल इंद्रियाँ बंदरों जैसी हैं, जो बुद्धि की रस्सी से बँधी तो हैं, पर ढीली। यह अपने चेहरे रूपी बगीचे में खिलती मुस्कान के फूलों से सुंदर लगती है।

4.23.17

स्वशरीरमनोज्ञस्य सर्वसौभाग्यसुन्दरी । सुखायैव न दुःखाय परमाय हिताय च ॥ १७ ॥

svaśarīramanojñasya sarvasaubhāgyasundarī | sukhāyaiva na duḥkhāya paramāya hitāya ca || 17 ||

To one who finds his own body pleasing, this lady is beautiful with every good fortune. She exists only for happiness, never for suffering, and for the highest good.

जिसे अपना शरीर अच्छा लगता है, उसके लिए यह स्त्री हर सौभाग्य से सुंदर है। वह केवल सुख के लिए है, दुख के लिए कभी नहीं, और सबसे बड़ी भलाई के लिए भी है।

4.23.18

अज्ञस्येयमनन्तानां दुःखानां कोशमालिका । ज्ञस्य त्वियमनन्तानां सुखानां कोशमालिका ॥ १८ ॥

ajñasyeyamanantānāṃ duḥkhānāṃ kośamālikā | jñasy tv iyamanantānāṃ sukhānāṃ kośamālikā || 18 ||

For the ignorant person, she is a chain of storehouses of endless sorrows. But for the one who knows, this same lady is a chain of storehouses of endless joys.

अज्ञानी के लिए वह अनंत दुखों के भंडारों की एक कड़ी है। पर जानने वाले के लिए यही स्त्री अनंत सुखों के भंडारों की एक कड़ी है।

4.23.19

किंचिदस्यां प्रनष्टायां ज्ञस्य नष्टमरिन्दम । स्थितायां संस्थितं सर्वं तेनेयं ज्ञसुखावहा ॥ १९ ॥

kiṃcidasyāṃ pranaṣṭāyāṃ jñasya naṣṭamariṃdama | sthitāyāṃ saṃsthitaṃ sarvaṃ teneyaṃ jñasukhāvahā || 19 ||

O conqueror of enemies, when this city is destroyed, the knower loses only a little; when it stands, everything stands with it. That is why it brings happiness to the one who knows.

हे शत्रुओं को जीतने वाले, जब यह नगर नष्ट होता है, तो जानने वाले का बस थोड़ा ही कुछ जाता है; जब यह बना रहता है, तो सब कुछ इसके साथ बना रहता है। इसीलिए यह जानने वाले को सुख देता है।

4.23.20

यदेनां ज्ञः समारुह्य संसारे विहरत्यलम्। अशेषभोगमोक्षार्थं तेनेयं ज्ञरथः स्मृतः ॥ २० ॥

yadenāṃ jñaḥ samāruhya saṃsāre viharatyalaṃ | aśeṣabhogamokṣārthaṃ teneyaṃ jñarathaḥ smṛtaḥ || 20 ||

Because the knower mounts this city and moves about freely in the world for the sake of complete enjoyment and liberation, it is called the knower's chariot.

क्योंकि जानने वाला इस नगर पर सवार होकर पूरे भोग और मुक्ति के लिए संसार में खुलकर घूमता है, इसीलिए इसे जानने वाले का रथ कहा जाता है।

4.23.21

शब्दरूपरसस्पर्शगन्धबन्धुश्रियो यतः। अनयैव हि लभ्यन्ते तेनेयं ज्ञस्य लाभदा ॥ २१ ॥

śabdarūparasasparśagandhabandhuśriyo yataḥ | anayaiva hi labhyante teneyaṃ jñasya lābhadā || 21 ||

Sound, sight, taste, touch, smell, family and wealth are all gained only through her. That is why this city is called the giver of gain to the one who knows.

आवाज़, नज़ारा, स्वाद, स्पर्श, खुशबू, अपने रिश्तेदार और धन-दौलत, ये सब सिर्फ़ इसी नगरी के ज़रिए मिलते हैं। इसीलिए यह नगरी जानने वाले को फ़ायदा पहुँचाने वाली कहलाती है।

4.23.22

सुखदुःखक्रियाजालं यदेषोद्वहति स्वयम्। तदेषा राम सर्वज्ञसर्ववस्तुभरक्षमा ॥ २२ ॥

sukhaduḥkhakriyājālaṃ yadeṣodvahati svayam | tadeṣā rāma sarvajñasarvavastubharakṣamā || 22 ||

This city carries the whole tangle of actions that bring pleasure and pain. That is why, Rama, she can bear every burden of everything that belongs to the one who knows.

यह नगरी सुख और दुख देने वाले सारे काम-धंधों का पूरा जाल खुद अपने ऊपर उठाए रहती है। इसीलिए, हे राम, यह जानने वाले की हर चीज़ का पूरा बोझ उठाने में सक्षम है।

4.23.23

तस्यां शरीरपुर्यां हि राज्यं कुर्वन्गतज्वरः। ज्ञस्तिष्ठति गतव्यग्रः स्वपुर्यामिव वासवः ॥ २३ ॥

tasyāṃ śarīrapuryāṃ hi rājyaṃ kurvangatajvaraḥ | jñastiṣṭhati gatavyagraḥ svapuryāmiva vāsavaḥ || 23 ||

In that city which is the body, the one who knows rules like a king. He has no fever, no worry, just as Indra stays calm and at ease in his own city.

शरीर नाम की उस नगरी में जानने वाला राजा की तरह राज करता है। उसे न कोई बुखार है, न कोई चिंता, बिल्कुल वैसे ही जैसे इंद्र अपनी नगरी में शांत और निश्चिंत रहते हैं।

4.23.24

न क्षिपत्यवटाटोपे मनोमत्ततुरङ्गमम्। न लोभदुर्द्रुमादाय प्रज्ञापुत्रीं प्रयच्छति ॥ २४ ॥

na kṣipatyavaṭāṭope manomattaturagamam | na lobhadurdumādāya prajñāputrīṃ prayacchati || 24 ||

He never drives the wild, drunk horse of his mind into the turmoil of a pit. He never clutches the poisonous tree of greed and hands over his own daughter, wisdom.

वह अपने मन के पागल और मस्त घोड़े को कभी किसी गड्ढे की उथल-पुथल में नहीं दौड़ाता। वह लालच के ज़हरीले पेड़ को पकड़कर अपनी बेटी यानी बुद्धि को कभी किसी को नहीं सौंपता।

4.23.25

अज्ञानपरराष्ट्रं च न रन्ध्रं त्वस्य पश्यति । संसारारिभयस्यान्तर्मूलान्येव निकृन्तति ॥ २५ ॥

ajñānapararāṣṭraṃ ca na randhraṃ tvasy paśyati | saṃsārāribhayasyāntarmūlānyeva nikṛntati || 25 ||

Ignorance is like an enemy country, but it can find no weak point in him. From deep within, he cuts out the very roots of the fear that the enemy called the world brings.

अज्ञान एक दुश्मन देश जैसा है, लेकिन उसे इस आदमी में कोई कमज़ोर जगह नहीं मिलती। वह अपने भीतर से ही, संसार नाम के दुश्मन से पैदा होने वाले डर की जड़ें काट देता है।

4.23.26

तृष्णासारपरावर्ते कामसंभोगदुर्ग्रहे । न निमज्जति पर्यस्तः सुखदुःखप्रदेवने ॥ २६ ॥

tṛṣṇāsāraparāvarte kāmasaṃbhogadurgrahe | na nimajjati paryastaḥ sukhaduḥkhapradevane || 26 ||

He is tossed about in the strong whirlpool of craving, in the desires and pleasures that are hard to escape, but he does not drown, not even in the gamble of pleasure and pain.

वह गहरी चाहत के तेज़ भँवर में इधर-उधर घूमता है, उन इच्छाओं और सुखों में फँसता है जिनसे निकलना मुश्किल है, फिर भी वह डूबता नहीं, सुख-दुख के इस जुए में भी नहीं।

4.23.27

करोत्यविरतं स्नानं बहिरन्तरवीक्षणात् । सरित्संगमतीर्थेषु मनोरथगतः क्रमात् ॥ २७ ॥

karotyaviratam snānaṃ bahirantaravīkṣaṇāt | saritsaṃgamatīrtheṣu manorathagataḥ kramāt || 27 ||

He keeps looking, over and over, at what is outside and what is within, and in this way he bathes without stopping. Step by step, in his imagination, he goes to the holy places where rivers meet and bathes there.

वह बार-बार बाहर और भीतर देखता रहता है, और इस तरह लगातार स्नान करता रहता है। धीरे-धीरे, अपनी कल्पना में, वह उन पवित्र जगहों पर जाता है जहाँ नदियाँ मिलती हैं, और वहाँ स्नान करता है।

4.23.28

सकलाक्षजनादृश्यसुखप्रेक्षापराङ्मुखः । ध्याननाम्नि सुखं नित्यं तिष्ठत्यन्तःपुरान्तरे ॥ २८ ॥

sakalākṣajanādṛśyasukhaprekṣāparāṅmukhaḥ | dhyānanāmni sukhaṃ nityaṃ tiṣṭhatyantaḥpurāntare || 28 ||

He turns his face away from the pleasure that ordinary people can see with their senses. Instead, he always stays happily inside the inner chamber, in what is called meditation.

वह उस सुख से मुँह मोड़ लेता है जिसे आम लोग अपनी इंद्रियों से देख सकते हैं। इसकी बजाय, वह हमेशा भीतर के कमरे में खुशी से रहता है, उस चीज़ में जिसे ध्यान कहा जाता है।

4.23.29

सुखावहैषा नगरी नित्यं वै विदितात्मनः । भोगमोक्षप्रदा चैषा शक्रस्येवामरावती ॥ २९ ॥

sukhāvahaiṣā nagarī nityaṃ vai viditātmanaḥ | bhogamokṣapradā caiṣā śakrasyevāmarāvatī || 29 ||

This city always brings happiness to one who has known his true self. It grants both enjoyment and freedom, just as Amaravati, the city of the immortals, does for Indra.

यह नगरी उसे हमेशा सुख देती है जिसने अपने असली स्वरूप को जान लिया है। यह भोग भी देती है और मुक्ति भी, बिल्कुल वैसे ही जैसे देवताओं की नगरी अमरावती इंद्र को देती है।

4.23.30

स्थितया संस्थितं सर्वं किंचिन्नष्टं न नष्टया । यया पुर्या महीयस्या सा कथं न सुखावहा ॥ ३० ॥

sthitayā saṃsthitaṃ sarvaṃ kiñcinnaṣṭaṃ na naṣṭayā | yayā puryā mahīyasyā sā kathaṃ na sukhāvahā || 30 ||

When this city stands, everything stands along with her. When she is destroyed, nothing of the one who knows is lost. She is such a great city, how could she not bring happiness?

जब यह नगरी बनी रहती है, तो सब कुछ इसके साथ बना रहता है। जब यह नष्ट हो जाती है, तो जानने वाले का कुछ भी नहीं खोता। यह इतनी बड़ी नगरी है, यह सुख कैसे न देगी?

4.23.31

विनष्टे देहनगरे ज्ञस्य नष्टं न किंचन । आक्रान्तकुम्भाकाशस्य खस्य कुम्भक्षये यथा ॥ ३१ ॥

vinaṣṭe dehanagare jñasya naṣṭaṃ na kiṃcana | ākrāntakumbhākāśasya khasya kumbhakṣaye yathā || 31 ||

When the body-city is destroyed, nothing of the one who knows is lost at all. It is like the space that was inside a pot: when the pot breaks, nothing happens to that space.

जब शरीर नाम की नगरी नष्ट हो जाती है, तो जानने वाले का कुछ भी नहीं खोता। यह वैसा ही है जैसे घड़े के अंदर की जगह, घड़ा टूट जाए तो भी उस जगह को कुछ नहीं होता।

4.23.32

विद्यमानं घटं वायुः किंचित्स्पृशति नास्थितम् । यथा तथैव देही स्वां शरीरनगरीमिमाम् ॥ ३२ ॥

vidyamānaṃ ghaṭaṃ vāyuḥ kiṃcitspṛśati nāsthitam | yathā tathaiva dehī svāṃ śarīranagarīmimām || 32 ||

The wind touches a pot that is there, but only lightly, it never holds onto it or depends on it. In the same way, the one who lives in the body touches this body-city that belongs to him, without ever holding onto it.

हवा किसी मौजूद घड़े को छूती तो है, पर बहुत हल्के से, वह न तो उसे पकड़ती है, न उस पर टिकती है। ठीक इसी तरह, शरीर में रहने वाला जीव अपनी इस शरीर-नगरी को छूता है, पर उसे कभी पकड़कर नहीं रखता।

4.23.33

अत्रस्थः पुरुषो भोगानात्मा सर्वगतोऽपि सन् । विश्वकल्पकृतान्भुक्त्वा पुंसामधिगतार्थभाक् ॥ ३३ ॥

atrasthaḥ puruṣo bhogānātmā sarvagato'pi san | viśvakalpakṛtānbhuktvā puṃsāmadhigatārthabhāk || 33 ||

The self dwelling here, though it is present everywhere, enjoys the pleasures that make up this whole universe, and so takes its share in the very purpose that other people reach.

यहाँ रहने वाला आत्मा, भले ही वह हर जगह मौजूद है, इस पूरी दुनिया को बनाने वाले सुखों को भोगता है, और इस तरह उसी मकसद में अपना हिस्सा पाता है जिसे बाकी लोग पाते हैं।

4.23.34

कुर्वन्नपि न कुर्वाणः समस्तार्थक्रियोन्मुखः । कदाचित्प्रकृतान्सर्वान्कार्यार्थाननुतिष्ठति ॥ ३४ ॥

kurvannapi na kurvāṇaḥ samastārthakriyonmukhaḥ | kadācitprakṛtānsarvānkāryārthānanutiṣṭhati || 34 ||

Though he acts, he is not really the one acting, yet he stays ready to do whatever needs doing. At times he carries out all the tasks and goals in front of him.

वह काम करते हुए भी असल में करने वाला नहीं होता, फिर भी वह हर ज़रूरी काम के लिए तैयार रहता है। कभी-कभी वह सामने आए सारे काम और मकसद पूरे करता है।

4.23.35

कदाचिल्लीलया लोलं विमानमधिरोहति । अनाहतगतिः कान्तं विहर्तुममलं मनः ॥ ३५ ॥

kadācillīlayā lolam vimānamadhirohati | anāhatagatiḥ kāntam vihartumamalaṃ manaḥ || 35 ||

Sometimes, just for play, the pure mind climbs aboard a moving, sky-going chariot. Nothing can block its path, and it goes there simply to wander about happily.

कभी-कभी, बस खेल-खेल में, यह निर्मल मन आकाश में चलने वाले एक विमान पर सवार हो जाता है। उसकी राह में कोई रुकावट नहीं आती, और वह सिर्फ़ खुशी से घूमने के लिए वहाँ जाता है।

4.23.36

तत्रस्थो लोकसुन्दर्या सततं शीतलाङ्गया । रमते रामया मैत्र्या नित्यं हृदयसंस्थितः ॥ ३६ ॥

tatrastho lokasundaryā satataṃ śītalāṅgayā | ramate rāmayā maitryā nityaṃ hṛdayasaṃsthitaḥ || 36 ||

While there, he always dwells in his own heart, delighting in the beauty of the world, forever cool and calm, and in a warm, loving friendship.

वहाँ रहते हुए, वह हमेशा अपने ही दिल में बसा रहता है, पूरी दुनिया की उस सुंदरता में आनंद लेता है जो हमेशा शीतल और शांत रहती है, और साथ ही एक गर्मजोशी भरी, प्यारी दोस्ती में भी आनंद लेता है।

4.23.37

द्वे कान्ते तिष्ठतः सम्यक् पार्श्वयोः सत्यतैकते । इन्दोरिव विशाखे द्वे समाह्लादितचेतसी ॥ ३७ ॥

dve kānte tiṣṭhataḥ samyak pārśvayoḥ satyataikate | indoriva viśākhe dve samāhlāditacetasī || 37 ||

Two beloved women stand well, one on each side of him. In truth they are one, like the moon's twin stars called Vishakha, both hearts full of joy.

दो प्रिय स्त्रियाँ उसके दोनों तरफ़ अच्छी तरह खड़ी रहती हैं। सच तो यह है कि वे दोनों एक ही हैं, ठीक वैसे जैसे चाँद के विशाखा नाम के जुड़वाँ तारे, और दोनों का मन खुशी से भरा रहता है।

4.23.38

क्षपितानखिलान्लोकान्दुःखक्रकचदारितान् । वल्लीवनस्थान्नभसः पृष्ठादर्क इवेक्षते ॥ ३८ ॥

kṣapitānakhilānlokānduḥkhakrakacadāritān | vallīvanasthānnabhasaḥ pṛṣṭhādarka ivēkṣatē || 38 ||

He looks down at all the worlds. They are worn out and torn apart, as if cut by the saw of suffering, lying tangled together like a forest of vines. He watches them from high in the sky, the way the sun looks down.

वह सारी दुनियाओं को ऊपर से देखता है। वे थकी-हारी हैं, दुख की आरी से मानो काट दी गई हों, और एक-दूसरे में उलझी हुई ऐसी पड़ी हैं जैसे लताओं का जंगल। वह उन्हें आकाश की ऊँचाई से देखता है, ठीक वैसे जैसे सूरज ऊपर से देखता है।

4.23.39

चिरं पूरितसर्वाशः सर्वसंपत्तिसुन्दरः । अपुनःखण्डनायेन्दुः पूर्णाङ्ग इव राजते ॥ ३९ ॥

ciram pūritasarvāśaḥ sarvasaṃpattisundaraḥ | apunaḥkhaṇḍanāyenduḥ pūrṇāṅga iva rājatē || 39 ||

He has long had all his wishes fulfilled and shines beautiful with every kind of good fortune. He shines like a full moon that, once full, never grows any smaller again.

उसकी सारी इच्छाएँ बहुत पहले से पूरी हो चुकी हैं, और वह हर तरह की अच्छी किस्मत से सुंदर दिखता है। वह उस पूर्णिमा के चाँद जैसा चमकता है जो एक बार पूरा होने के बाद फिर कभी छोटा नहीं होता।

4.23.40

सेव्यमानोऽपि भोगौघो न खेदायास्य जायते । कालकूटः किलेशस्य कण्ठे प्रत्युत राजते ॥ ४० ॥

sevyamāno'pi bhogaugho na khedāyāsya jāyatē | kālakūṭaḥ kileśasya kaṇṭhē pratyuta rājatē || 40 ||

Even though he enjoys a great flood of pleasures, it never wears him down or troubles him. It is like the deadly poison Kalakuta sitting in Lord Shiva's throat, instead of harming him, it only makes his throat shine.

भले ही वह सुखों की एक बड़ी बाढ़ का आनंद लेता है, पर इससे उसे न थकान होती है, न कोई तकलीफ़। यह वैसा ही है जैसे कालकूट नाम का जानलेवा ज़हर भगवान शिव के गले में बैठा है, यह उन्हें नुकसान नहीं पहुँचाता, बल्कि उनके गले को और चमका देता है।

4.23.41

परिज्ञातोपभुक्तो हि भोगो भवति तुष्टये । विज्ञाय सेवितो मैत्रीमेति चोरो न शत्रुताम् ॥ ४१ ॥

parijñātopabhukto hi bhogo bhavati tuṣṭaye | vijñāya sevito maitrīmeti coro na śatruatām || 41 ||

Pleasure enjoyed with full understanding truly brings contentment. It is like a thief: once you know him for what he is and deal with him wisely, he becomes a friend instead of staying an enemy.

पूरी समझ के साथ भोगा गया सुख सच में संतोष देता है। यह एक चोर जैसा है, एक बार जब आप उसे पहचान लेते हैं और समझदारी से उससे निपटते हैं, तो वह दुश्मन बने रहने की बजाय दोस्त बन जाता है।

4.23.42

नरनारीनटौघानां विरहे दूरगामिनाम् । ज्ञेन यात्रेव सुभगा भोगश्रीरवलोक्यते ॥ ४२ ॥

naranārīnaṭaughānāṃ virahē dūragāminām | jñēna yātrēva subhagā bhogaśrīravlōkyatē || 42 ||

The wise man looks at the beauty of pleasure the way he looks at a crowd of men, women, and actors going far away, as if in a procession.

ज्ञानी आदमी सुख की सुंदरता को उसी तरह देखता है, जिस तरह वह दूर जाते हुए पुरुषों, औरतों और नटों की भीड़ को किसी जुलूस में देखता है।

4.23.43

अशङ्कितोपसंप्राप्ता ग्रामयात्रा यथाध्वगैः । प्रेक्ष्यन्ते तद्वदेव ज्ञैर्व्यवहारमयाः क्रियाः ॥ ४३ ॥

aśaṅkitōpasanprāptā grāmayātrā yathādhvagaiḥ | prēkṣyantē tadvadēva jñairvyavahāramayāḥ kriyāḥ || 43 ||

The way travelers look at a village fair they come across without any worry, in that same way wise people look at the everyday work of life.

जैसे यात्री बिना किसी चिंता के मिल गए गाँव के मेले को देखते हैं, वैसे ही ज्ञानी लोग रोज़मर्रा के कामकाज को देखते हैं।

4.23.44

अयत्नोपनतेऽप्यक्षि पदार्थेषु यथा पुनः । नीरागमेव पतति तद्वत्कार्येषु धीरधीः ॥ ४४ ॥

ayatnōpanatē'pyakṣi padārthēṣu yathā punaḥ | nīrāgamēva patati tadvatkāryēṣu dhīradhīḥ || 44 ||

Just as the eye may fall on something it did not go looking for, but looks at it without wanting it, in the same way the steady-minded man does his work without wanting anything from it.

जैसे आँख किसी बिना ढूँढ़ी चीज़ पर पड़ जाए, तो भी बिना कोई चाह रखे उसे देखती है, वैसे ही स्थिर मन वाला आदमी अपना काम बिना कोई चाह रखे करता है।

4.23.45

इन्द्रियाणां न हरति प्राप्तमर्थं कदाचन । नाददाति तथाऽप्राप्तं संपूर्णो ज्ञोऽवतिष्ठते ॥ ४५ ॥

indriyāṇāṃ na harati prāptamarthaṃ kadācana | nādadāti tathā'prāptaṃ saṃpūrṇō jñō'vatiṣṭhatē || 45 ||

He never takes away from the senses a thing they have already got, and he never reaches for a thing they have not got. The knower stays complete, just as he is.

वह इंद्रियों से वह चीज़ कभी नहीं छीनता जो उन्हें मिल चुकी है, और जो नहीं मिली उसे भी नहीं पकड़ता। ज्ञानी वैसे ही पूरा बना रहता है।

4.23.46

अप्राप्तचिन्ताः संप्राप्तसमुपेक्षाश्च सन्मतिम् । न कम्पयन्ति तरलाः पिच्छाघाता इवाचलम् ॥ ४६ ॥

aprāptacintāḥ saṃprāptasamupekṣāśca sanmatim | na kampayanti taralāḥ picchāghātā ivācalam || 46 ||

Worrying about what he does not have, and losing interest in what he already has -- these restless thoughts do not shake a good, steady mind, just as taps of a feather cannot shake a mountain.

जो नहीं मिला उसकी चिंता करना, और जो मिल गया उसमें दिलचस्पी खो देना -- ये चंचल विचार किसी अच्छे, स्थिर मन को नहीं हिला पाते, जैसे पंख की चोट किसी पहाड़ को नहीं हिला पाती।

4.23.47

संशान्तसर्वसंदेहो गलिताखिलकौतुकः । संक्षीणकल्पनादेहो ज्ञः सम्राडिव राजते ॥ ४७ ॥

saṃśāntasarvasandeho galitākhilakautukaḥ | saṃkṣīṇakalpanādeho jñaḥ samrāḍiva rājate || 47 ||

The knower, whose every doubt has become quiet, whose every curiosity has melted away, and whose imagined body has worn away, shines like a great king.

ज्ञानी, जिसका हर शक शांत हो चुका है, जिसकी हर उत्सुकता मिट चुकी है, और जिसका मन-गढ़ा शरीर घिस चुका है, एक बड़े राजा जैसा चमकता है।

4.23.48

आत्मन्येव न मात्यन्तः स्वात्मनात्मनि जृम्भते । संपूर्णोऽपारपर्यन्तः क्षीरार्णव इवार्णवे ॥ ४८ ॥

ātmanyeva na mātyantaḥ svātmanātmani jṛmbhate | saṃpūrṇo'pāraparyantaḥ kṣīrārṇava ivārṇave || 48 ||

He does not fit even inside himself; he grows within himself, by himself alone. He is whole, with no far shore, like the Ocean of Milk spreading within the ocean.

वह अपने भीतर भी नहीं समाता; वह अपने भीतर, अपने आप से ही फैलता है। वह पूरा है, उसका कोई किनारा नहीं, जैसे क्षीरसागर समुद्र के भीतर फैलता है।

4.23.49

भोगेच्छाकृपणाञ्जन्तून्दीनान्दीनेन्द्रियाणि च । अनुन्मत्तमनाः शान्तो हसत्युन्मत्तकानिव ॥ ४९ ॥

bhogecchākṛpaṇāñjantūndīnāndīnendriyāṇi ca | anunmattamanāḥ śānto hasatyunmattakāniva || 49 ||

At creatures made pitiful by their craving for pleasure -- pitiful themselves, and pitiful in their senses too -- the peaceful man, whose mind is not mad, laughs, the way one laughs at madmen.

सुख की चाह में बेचारे बने प्राणियों को, जो खुद भी बेचारे हैं और जिनकी इंद्रियाँ भी बेचारी हैं, शांत आदमी, जिसका मन पागल नहीं है, वैसे ही हँसता है जैसे किसी पागल पर हँसा जाता है।

4.23.50

इच्छतोऽन्योज्झितां जायां यथैवान्येन हस्यते। इन्द्रियस्येच्छतो भोगं तद्वज्ज्ञेन विहस्यते॥ ५०॥

icchatonyojjhitāṃ jāyāṃ yathaivānyena hasyate | indriyasyecchato bhogaṃ tadvajjñena vihasyate || 50 ||

Just as a man is laughed at by others when he wants a wife left by another man, in that same way, when the senses want pleasure, the knower laughs at that wanting.

जैसे कोई आदमी किसी दूसरे की छोड़ी हुई पत्नी चाहे, तो लोग उस पर हँसते हैं, वैसे ही जब इंद्रियाँ सुख चाहती हैं, तो ज्ञानी उस चाह पर हँसता है।

4.23.51

त्यजत्स्वात्मसुखं सौम्यं मनो विषयविद्रुतम्। अङ्कुशेनेव नागेन्द्रं विचारेण वशं नयेत्॥ ५१॥

tyajatsvātmasukhaṃ saumyaṃ mano viṣayavidrutam | aṅkuśeneva nāgendraṃ vicāreṇa vaśaṃ nayet || 51 ||

The mind, gentle by nature, gives up the happiness of its own self and runs after sense-pleasures. One should bring it under control by thinking it through, the way a big elephant is brought under control with a goad.

स्वभाव से नरम मन अपना ही सुख छोड़कर भोग-विषयों की ओर भाग जाता है। जैसे अंकुश से बड़े हाथी को वश में किया जाता है, वैसे ही सोच-विचार से मन को वश में करना चाहिए।

4.23.52

भोगेषु प्रसरो यस्या मनोवृत्तेश्च दीयते। साप्यादावेव हन्तव्या विषस्येवाङ्कुरोद्गतिः॥ ५२॥

bhogeṣu prasaro yasyā manovṛtteśca dīyate | sāpyādāveva hantavyā viṣasyevāṅkurodgatiḥ || 52 ||

The mind's rush toward pleasures must be killed right at the start, like the sprout of a poisonous plant must be destroyed as soon as it comes up.

सुखों की ओर दौड़ने की मन की जो आदत है, उसे शुरुआत में ही खत्म कर देना चाहिए, जैसे ज़हरीले पौधे के अंकुर को निकलते ही नष्ट कर दिया जाता है।

4.23.53

ताडितस्य हि यः पश्चात्संमानः सोऽप्यनन्तकः। शालेर्ग्रीष्माभितप्तस्य कुसेकोऽप्यमृतायते॥ ५३॥

tāḍitasyahi yaḥ paścātsaṃmānaḥ so'pyanantakaḥ | śālergrīṣmābhitaptasya kuseko'pyamṛtāyate || 53 ||

For one who has been struck, the honor shown afterward feels endless -- just as even a little sprinkle of water feels like nectar to a rice plant scorched by summer heat.

जिसे पहले चोट लगी हो, उसे बाद में मिला सम्मान बहुत बड़ा लगता है -- जैसे गर्मी से झुलसे धान के पौधे पर पानी की एक बूँद भी अमृत जैसी लगती है।

4.23.54

अनार्तेन हि सन्मानो बहुमानो न बुध्यते। पूर्णानां सरितां प्रावृद्दूरः स्वल्पो न राजते॥ ५४॥

anārthena hi sanmāno bahumāno na budhyate | pūrṇānāṃ saritāṃ prāvṛṭpūraḥ svalpo na rājate || 54 ||

One who has not suffered does not know great honor as great -- just as a small flood added in the rainy season to rivers that are already full does not stand out.

जिसने दुख नहीं झेला, वह बड़े सम्मान को बड़ा सम्मान नहीं समझ पाता -- जैसे पहले से भरी नदियों में बरसात की छोटी बाढ़ अलग से नज़र नहीं आती।

4.23.55

पूर्णस्तु प्राकृतोऽप्यन्यत्पुनरप्यभिवाञ्छते । जगत्पूरणयोग्याम्बुर्गृह्णात्येवार्णवो जलम् ॥ ५५ ॥

pūrṇastu prākṛto'pyanyatpunarapyabhivāñchate | jagatpūraṇayogyāmburgṛhṇātyevārṇavo jalam || 55 ||

But even a full, ordinary man still wants more -- just as the ocean, whose water is already enough to fill the whole world, still keeps taking in more water.

पर एक साधारण आदमी भरा-पूरा होकर भी और चाहता रहता है -- जैसे समुद्र, जिसका पानी पूरी दुनिया भरने के लिए काफी है, फिर भी और पानी लेता रहता है।

4.23.56

मनसोऽभिगृहीतस्य या पश्चाद्भोगमण्डना । तामेवालब्धविस्तारां क्लिष्टत्वाद्बहु मन्यते ॥ ५६ ॥

manaso'bhigṛhītasya yā paścādbhogamaṇḍanā | tāmevālabdhavistārāṃ kliṣṭatvādbahu manyate || 56 ||

Whatever bit of pleasure comes afterward to a mind that has been held back is thought of as something great, even though it is small, only because it was hard to get.

जिस मन को रोककर रखा गया हो, उसे बाद में मिलने वाला थोड़ा-सा सुख भी बहुत बड़ा लगता है, भले ही वह छोटा हो, सिर्फ इसलिए क्योंकि उसे पाना मुश्किल था।

4.23.57

बन्धमुक्तो महीपालो ग्रासमात्रेण तुष्यति । परैरबद्धो नाक्रान्तो न राज्यं बहु मन्यते ॥ ५७ ॥

bandhamukto mahīpālo grāsamātreṇa tuṣyati | parairabaddho nākrānto na rājyaṃ bahu manyate || 57 ||

A king let out of prison is happy with just one mouthful of food; but one who was never tied down by others, never defeated, does not think much of his own kingdom.

कैद से छूटा राजा एक कौर भोजन से ही खुश हो जाता है; पर जो कभी दूसरों से बंधा नहीं, कभी हारा नहीं, वह अपने राज्य को बड़ी चीज़ नहीं मानता।

4.23.58

हस्तं हस्तेन संपीड्य दन्तैर्दन्तान्विचूर्ण्य च । अङ्गान्यङ्गैरिवाक्रम्य जयेश्चेन्द्रियशात्रवान् ॥ ५८ ॥

hastaṃ hastena saṃpīḍya dantairdantān vicūrṇya ca | aṅgānyaṅgair ivākramya jayeś cendriyaśātravān || 58 ||

Pressing hand against hand, grinding tooth against tooth, striking limb against limb as if in a fight -- conquer the senses, your enemies.

हाथ को हाथ से दबाकर, दाँत को दाँत से पीसकर, और अंग को अंग से इस तरह टकराकर मानो लड़ाई हो रही हो -- इंद्रियों को, जो तुम्हारे दुश्मन हैं, जीत लो।

4.23.59

जेतुमन्यं कृतोत्साहैः पुरुषैरिह पण्डितैः । पूर्वं हृदयशत्रुत्वाज्जेतव्यानीन्द्रियाण्यलम् ॥ ५९ ॥

jetumanyaṃ kṛtotsāhaiḥ puruṣairiha paṇḍitaiḥ | pūrvaṃ hṛdayaśatru tvājjjetavyānīndriyāṇyalam || 59 ||

Wise men here who are eager to conquer any other enemy must first conquer the senses, because the senses are the real enemies sitting in one's own heart.

यहाँ जो समझदार लोग किसी और दुश्मन को जीतने के लिए उत्साहित हैं, उन्हें पहले इंद्रियों को जीतना चाहिए, क्योंकि इंद्रियाँ ही अपने दिल में बैठी असली दुश्मन हैं।

4.23.60

एतावति धरणितले सुभगास्ते साधुचेतनाः पुरुषाः । पुरुषकलासु च गण्या न जिता ये चेतसा स्वेन ॥ ६० ॥

etāvati dharaṇitale subhagāste sādhucetanāḥ puruṣāḥ | puruṣakalāsu ca gaṇyā na jitā ye cetasā svena || 60 ||

Lucky are the good-hearted men on this whole earth who have not been beaten by their own mind -- only they deserve to be counted as complete men.

इस पूरी धरती पर वे भले आदमी भाग्यशाली हैं, जो अपने ही मन से नहीं हारे -- पूरे आदमी गिने जाने के लायक बस वही हैं।

4.23.61

हृदयबिले कृतकुण्डल कलनाविवशो मनोमहाभुजगः । यस्योपशान्तिमागतमलमुदितं तं सुनिर्मलं वन्दे ॥ ६१ ॥

hṛdayabile kṛtakuṇḍala kalanāvivaśo manomahābhujagaḥ | yasyopaśāntimāgatamalamuditaṃ taṃ sunirmalaṃ vande || 61 ||

The mind is a big snake, coiled up in the hole of the heart, helpless, always moving. I bow to the completely pure man in whom this snake has come fully to rest, its peace fully risen.

मन एक बड़ा साँप है, जो दिल के बिल में कुंडली मारे बैठा है, बेबस, हमेशा हिलता-डुलता। मैं उस पूरी तरह शुद्ध आदमी को नमन करता हूँ, जिसमें यह साँप पूरी तरह शांत हो चुका है, जिसकी शांति पूरी तरह उदय हो चुकी है।

Chapter 24

4.24.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । महानरकसाम्राज्ये मत्तदुष्कृतवारणाः । आशाशरशलाकाढ्या दुर्जया हीन्द्रियारयः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | mahānarakasāmrājye mattaduṣkṛtavāraṇāḥ | āśāśaraśalākāḍhyā durjayā hīndriyārayaḥ || 1 ||

Vasishtha said: the senses are enemies very hard to defeat; in the vast empire of hell they are like maddened elephants of wrongdoing, loaded with the arrows of desire.

वसिष्ठ बोले, इंद्रियाँ ऐसी दुश्मन हैं जिन्हें हराना बहुत मुश्किल है; नरक के बड़े साम्राज्य में ये मानो मतवाले हाथी हैं, बुरे कामों से भरे, और इच्छा के तीरों से लदे हुए।

4.24.2

स्वाश्रयं प्रथमं देहं कृतघ्ना नाशयन्ति ये । ते कुकार्यमहाकोशा दुर्जयाः स्वेन्द्रियारयः ॥ २ ॥

svāśrayaṃ prathamaṃ dehaṃ kṛtaghnā nāśayanti ye | te kukāryamahākośā durjayāḥ svendriyārayaḥ || 2 ||

The senses are enemies hard to defeat, and they are ungrateful: they destroy the body, which is their own first shelter. They are great storehouses of wrongdoing, enemies that are one's own senses.

इंद्रियाँ ऐसी दुश्मन हैं जिन्हें हराना मुश्किल है, और ये कृतघ्न भी हैं, यानी एहसान न मानने वाली। ये शरीर को ही नष्ट कर देती हैं, जो इनका अपना पहला घर है। ये बुरे कामों के बड़े भंडार हैं, अपनी ही इंद्रियों के रूप में दुश्मन।

4.24.3

कलेवरालयं प्राप्य विषयामिषगृध्नुकाः । अक्षगृध्रा विवल्गन्ति कार्याकार्योग्रपक्षिणः ॥ ३ ॥

kalevarālayaṃ prāpya viṣayāmiṣagṛdhnukaḥ | akṣagṛdhrā vivalganti kāryākāryograpakṣiṇaḥ || 3 ||

Once they reach the body, their home, the senses are like vultures hungry for the flesh of sense objects. They are fierce birds that prowl about, not caring whether an act is right or wrong.

शरीर रूपी अपने घर में पहुँचकर इंद्रियाँ मानो गिद्ध हैं, जो विषयों के मांस के लिए लालची हैं। ये उग्र पक्षियों की तरह मंडराती हैं, बिना यह देखे कि काम सही है या गलत।

4.24.4

विवेकतन्तुजालेन गृहीता येन ते शठाः । तस्याङ्गानि न लुम्पन्ति पाशा नागबलं यथा ॥ ४ ॥

vivekatantujālena gṛhītā yena te śaṭhāḥ | tasyāṅgāni na lumpanti pāśā nāgabalaṃ yathā || 4 ||

The senses are cunning cheats. When someone catches them in the net of discrimination's threads, they no longer harm his body, just as ropes do not destroy an elephant's strength, they only hold it back.

इंद्रियाँ बड़ी चालाक ठग हैं। जो कोई इन्हें विवेक के धागों के जाल में पकड़ लेता है, उसके शरीर को ये फिर नुकसान नहीं पहुँचातीं, ठीक वैसे ही जैसे रस्सियाँ हाथी की ताकत को नष्ट नहीं करतीं, बस उसे बाँध भर देती हैं।

4.24.5

आपातरमणीयेषु रमते विषयेषु यः । विवेकधनवानस्मिन्कुकलेवरपत्तने ॥ ५ ॥

āpātaramaṇīyeṣu ramate viṣayeṣu yaḥ | vivekadhanavānasmin kukalevarapattane || 5 ||

Someone may take delight in sense objects that look pleasant only at first sight; even so, he can hold the wealth of discrimination while living in this poor city that is the body.

कोई व्यक्ति उन विषयों में रम सकता है जो सिर्फ पहली नजर में सुंदर लगते हैं; फिर भी वह इस दीन शरीर रूपी नगर में रहते हुए विवेक का धन अपने पास रख सकता है।

4.24.6

इन्द्रियारिभिरन्तस्थैरवशो नाभिभूयते । न तथा सुखिता भूपा मृन्मयोग्रपुरीजुषः ॥ ६ ॥

indriyāribhirantasthairavaśo nābhibhūyate | na tathā sukhitā bhūpā mṛnmayograpurījuṣaḥ || 6 ||

Such a person is not helplessly overpowered by the enemies within him, the senses. Kings who live in mighty forts of clay are not as happy as he is.

ऐसा व्यक्ति अपने भीतर की दुश्मन इंद्रियों से लाचार होकर हारता नहीं। मिट्टी के मजबूत किलों में रहने वाले राजा भी उतने सुखी नहीं होते जितना यह व्यक्ति है।

4.24.7

यथा स्वाधीनमनसः स्वशरीरपुरीश्वराः । आक्रान्तेन्द्रियभृत्यस्य सुगृहीतमनोरिपोः ॥ ७ ॥

yathā svādhīnamanasaḥ svasharīrapurīśvarāḥ | ākrāntendriyabhṛtyasya sugṛhītamanoripoḥ || 7 ||

When someone's mind is under his own control, he becomes lord of the city that is his own body; he has subdued the senses that are his servants and firmly seized hold of the mind that is his enemy.

जिसका मन अपने वश में होता है, वह अपने शरीर रूपी नगर का स्वामी बन जाता है; उसने अपने सेवक रूपी इंद्रियों को वश में कर लिया है और अपने शत्रु रूपी मन को मजबूती से पकड़ लिया है।

4.24.8

वसन्त इव मञ्जर्यो वर्धन्ते शुद्धबुद्धयः । प्रक्षीणचित्तदर्पस्य निगृहीतेन्द्रियद्विषः ॥ ८ ॥

vasanta iva mañjaryo vardhante śuddhabuddhayaḥ | prakṣīṇacittadarpasya nigṛhītendriyadviṣaḥ || 8 ||

For such a person, whose mind's pride has faded and whose enemies, the senses, are held in check, pure understanding grows, the way clusters of blossoms grow in spring.

ऐसे व्यक्ति के लिए, जिसके मन का घमंड घट गया है और जिसने अपनी दुश्मन इंद्रियों को काबू में कर लिया है, शुद्ध समझ उसी तरह बढ़ती है जैसे बसंत में फूलों के गुच्छे बढ़ते हैं।

4.24.9

पद्मिन्य इव हेमन्ते क्षीयन्ते भोगवासनाः । तावन्निशीथवेताला वल्गन्ति हृदि वासनाः ॥ ९ ॥

padminy iva hemantē kṣīyantē bhōgavāsanāḥ | tāvanniśīthavētālā valganti hṛdi vāsanāḥ || 9 ||

Just as lotus plants wither away in early winter, so desires for enjoyment fade; until then, desires prowl in the heart like ghosts at midnight.

जैसे कमल के पौधे हेमंत ऋतु में मुरझा जाते हैं, वैसे ही भोग की इच्छाएँ धीरे धीरे खत्म होती हैं; जब तक ऐसा नहीं होता, तब तक ये वासनाएँ हृदय में आधी रात के भूतों की तरह उछलती फिरती हैं।

4.24.10

एकतत्त्वदृढाभ्यासाद्यावन्न विजितं मनः । भृत्योऽभिमतकर्तृत्वान्मन्त्री सत्कार्यकारणात् ॥ १० ॥

ēkatattvadṛḍhābhyāsādyāvanna vijitaṃ manaḥ | bhṛtyō'bhimatakartṛtvānmantri sātkāryakāraṇāt || 10 ||

As long as the mind is not conquered through steady practice fixed on the one single truth, it acts like a servant who does only what he pleases; but it can also be like a minister, because it can be the means to a good action.

जब तक एक ही तत्त्व के दृढ़ अभ्यास से मन को जीता नहीं जाता, तब तक यह उस सेवक जैसा है जो अपनी मर्जी से ही काम करता है; पर यह एक मंत्री जैसा भी है, क्योंकि यह अच्छे काम का कारण भी बन सकता है।

4.24.11

सामन्तश्चेन्द्रियाक्रान्तेर्मनो मन्ये विवेकिनः । लालनात्स्निग्धललना पालनात्पावनः पिता ॥ ११ ॥

sāmantaścendriyākrāntermano manye vivekinaḥ | lālanātsnigdhalalanā pālanātpāvanaḥ pitā || 11 ||

In a person of discrimination, I consider the mind to be like a neighboring king under attack, because the senses invade it; I consider it an affectionate wife, because it must be coaxed, and a purifying father, because it protects.

विवेकी व्यक्ति में मैं मन को पड़ोसी राजा जैसा मानता हूँ, जिस पर हमला हो रहा है, क्योंकि इंद्रियाँ उस पर चढ़ाई करती हैं; मैं इसे एक स्नेही पत्नी जैसा भी मानता हूँ, क्योंकि इसे मनाना पड़ता है, और एक पवित्र करने वाले पिता जैसा भी, क्योंकि यह रक्षा करता है।

4.24.12

सुहृदुत्तमविश्वासान्मनो मन्ये मनीषिणाम् । स्वालोकितः शास्त्रदृशा बुद्ध्यान्तः स्वानुभावितः ॥ १२ ॥

suhṛduttamaviśvāsānmano manye manīṣiṇām | svālokitaḥ śāstradṛśā buddhyāntaḥ svānubhāvitaḥ || 12 ||

I consider the mind of wise, thoughtful people to be like a most trusted friend; it is seen clearly through the eye of scripture, and it is directly experienced within, by one's own intellect.

बुद्धिमान लोगों का मन, ऐसा मैं मानता हूँ, एक सबसे भरोसेमंद मित्र जैसा है; इसे शास्त्र की नजर से साफ देखा जाता है, और इसे अपनी ही बुद्धि के भीतर सीधे अनुभव किया जाता है।

4.24.13

प्रयच्छति परां सिद्धिं त्यक्त्वात्मानं मनःपिता । सुदृष्टः सुपरामृष्टः सुदृढः सुप्रबोधितः ॥ १३ ॥

prayacchati parāṃ siddhiṃ tyaktvātmānaṃ manaḥpitā | sudr̥ṣṭaḥ suparāmr̥ṣṭaḥ sudṛḍhaḥ supra bodhitaḥ || 13 ||

The mind, as a father, having given up its own selfhood, grants the highest attainment, once it is well seen, well examined, made firm, and well awakened.

मन ही, एक पिता की तरह, अपनी झूठी पहचान को त्यागकर सबसे बड़ी सिद्धि देता है, जब इसे अच्छी तरह देखा गया हो, अच्छी तरह परखा गया हो, मजबूत किया गया हो, और अच्छी तरह जगाया गया हो।

4.24.14

सुगुणे योजितो भाति हृदि हृद्यो मनोमणिः । जन्मवृक्षकुठाराणि तथोदर्कोदयानि च ॥ १४ ॥

suguṇe yojito bhāti hṛdi hṛdyo manomaṇiḥ | janmavr̥kṣakuṭhārāṇi tathodarkodayāni ca || 14 ||

Fixed on good qualities, the jewel of the mind shines, dear to the heart; good deeds are like axes to the tree of rebirth, and they also bring good results later.

अच्छे गुणों में लगा हुआ मन रूपी रत्न हृदय में सुंदर ढंग से चमकता है; अच्छे काम जन्म रूपी पेड़ के लिए कुल्हाड़ी जैसे हैं, और आगे चलकर अच्छा फल भी देते हैं।

4.24.15

दिशत्येवं मनोमन्त्री कर्माणि शुभकर्मणि । एवं मनोमणिं राम बहुपङ्ककलङ्कितम् ॥ १५ ॥

diśatyevaṃ manomantrī karmāṇi śubhakarmaṇi | evaṃ manomaṇiṃ rāma bahupaṅkakalaṅkitam || 15 ||

In this way the mind, as minister, directs deeds toward good actions; in this way, Rama, the jewel of the mind is also stained with much mud.

इस तरह मन एक मंत्री की तरह अच्छे कार्यों की ओर कामों को निर्देशित करता है; इसी तरह, हे राम, मन रूपी रत्न बहुत सी कीचड़ से मैला भी हो जाता है।

4.24.16

विवेकवारिणा सिद्ध्ये प्रक्षाल्यालोकवान्भव । भवभूमिषु भीमासु विवेकविकलो वसन् ॥ १६ ॥

vivekavāriṇā siddhye prakṣālyālokavānbhava | bhavabhūmiṣu bhīmāsu vivekavikalo vasan || 16 ||

Wash it with the water of discrimination so as to succeed, and become full of light, rather than living without discrimination in the fearsome grounds of worldly existence.

सफलता पाने के लिए इसे विवेक रूपी जल से धो डालो, और प्रकाशवान बनो, न कि संसार की भयानक भूमियों में बिना विवेक के जीते रहो।

4.24.17

मा पतोत्पातपूर्णासु विवशः प्राकृतो यथा । संसारमायामुदितामनर्थशतसंकुलाम् ॥ १७ ॥

mā patotpātapūrṇāsu vivashaḥ prākṛto yathā | saṃsāramāyāmuditāmanarthaśatasaṅkulām || 17 ||

Do not fall helplessly, like an ordinary man, into those grounds full of calamities, into this illusion of the world that has arisen and is crowded with hundreds of misfortunes.

एक साधारण आदमी की तरह लाचार होकर उन आपदाओं से भरी भूमियों में मत गिरो, इस संसार रूपी माया में, जो उठ खड़ी हुई है और सैकड़ों विपत्तियों से भरी है।

4.24.18

मा महामोहमिहिकामिमां त्वमवधीरय । विवेकं परमाश्रित्य बुद्ध्या सत्यमवेक्ष्य च ॥ १८ ॥

mā mahāmohamihikāmimāṃ tvamavadhīraya | vivekaṃ paramāśritya buddhyā satyamavekṣya ca || 18 ||

Do not take lightly this great mist of delusion; instead, rely fully on discrimination and see the truth with your intellect.

इस बड़े मोह रूपी कोहरे को हल्के में मत लो; बल्कि पूरी तरह विवेक का सहारा लो और अपनी बुद्धि से सत्य को देखो।

4.24.19

इन्द्रियारीनलं जित्वा तीर्णो भव भवार्णवात् । असत्येव शरीरेऽस्मिन्सुखदुःखेष्वसत्सु च ॥ १९ ॥

indriyārīnalaṃ jitvā tīrṇo bhava bhavārṇavāt | asatyeva śarīre'smin sukhaduḥkheṣvasatsu ca || 19 ||

Having fully conquered the enemies that are the senses, cross over the ocean of worldly existence, since this very body is unreal, and pleasure and pain are unreal too.

इंद्रियों रूपी शत्रुओं को पूरी तरह जीतकर संसार रूपी समुद्र को पार कर जाओ, क्योंकि यह शरीर भी असत्य है, और सुख-दुःख भी असत्य हैं।

4.24.20

दामव्यालकटन्यायो मा ते भवतु राघव। भीमभासदृढस्थित्या त्वं यास्यसि विशोकताम्॥ २०॥

dāmavyālakaṭanyāyo mā te bhavatu rāghava | bhīmabhāsadṛḍhasthityā tvaṃ yāsyasi viśokatām || 20 ||

Raghava, do not let the story of Dama, Vyala and Kata become your story too; through firm steadiness in the face of fearsome appearances, you will reach the state free of sorrow.

हे राघव, दाम, व्याल और कट की कहानी तुम्हारी भी कहानी न बन जाए; भयानक दिखावों के सामने दृढ़ रहकर तुम शोक रहित अवस्था को पा लोगे।

4.24.21

अयमहमिति निश्चयो वृथा यस्तमलमपास्य महामते स्वबुद्ध्या। यदितरदवलम्ब्य तत्पदं त्वं व्रज पिब भुङ्क्ष्व न बध्यसे मनस्कः॥ २१॥

ayamahamiti niścayo vṛthā yastamalamapāsya mahāmate svabuddhyā | yaditaradavalambya tatpadaṃ tvaṃ vraja piba bhuṅkṣva na badhyase manaskaḥ || 21 ||

The conviction "this is I" is false; wise one, cast it away completely with your own intellect. Then, relying on that other truth, go to that state: eat, drink, act freely, and even while having a mind, you will not be bound.

यह मैं हूँ, ऐसा निश्चय झूठा है; हे बुद्धिमान, इसे अपनी बुद्धि से पूरी तरह छोड़ दो। फिर उस दूसरे सत्य का सहारा लेकर उस अवस्था में जाओ, खाओ, पीओ, भोग करो, और मन होते हुए भी तुम बंधन में नहीं पड़ोगे।

Chapter 25

4.25.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अस्मिन्विहरतो लोके लोकारामस्य धीमतः । श्रेयसे तिष्ठतो यत्नमुत्तमार्थाभिधायिनः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | asminviharato loke lokārāmasya dhīmataḥ | śreyase tiṣṭhato yatnamuttamārthābhidhāyinaḥ || 1 ||

Vasishtha said: you move through this world and give it joy. You are wise, you stand for what is good, and even your effort speaks of the highest truth.

वसिष्ठ ने कहा: तुम इस संसार में घूमते हो और इसे आनंद देते हो। तुम बुद्धिमान हो, भलाई के लिए डटे रहते हो, और तुम्हारा प्रयास भी सबसे बड़े सत्य की बात करता है।

4.25.2

दामव्यालकटन्यायो मा ते भवतु राघव । भीमभासदृढस्थित्या त्वं विशोको भवेति च ॥ २ ॥

dāmavyālakaṭanyāyo mā te bhavatu rāghava | bhīmabhāsadṛḍhasthityā tvaṃ viśoko bhaveti ca || 2 ||

Raghava, do not let the old story of Dama, Vyala and Kata apply to you. Even inside something that looks terrible, stay firm and steady, and be free of sorrow.

हे राघव, दाम, व्याल और कट की वह पुरानी कहानी तुम पर लागू न हो। डरावनी दिखने वाली चीज़ के भीतर भी दृढ़ और स्थिर रहो, और दुख से मुक्त हो जाओ।

4.25.3

श्रीराम उवाच । दामव्यालकटन्यायो मा ते भूदित्युदाहृतम् । ब्रह्मन् किमेतद्भवता भवतापापहारिणा ॥ ३ ॥

śrīrāma uvāca | dāmavyālakaṭanyāyo mā te bhūdityudāhṛtam | brahman kimetadbhavatā bhavatāpāpahāriṇā || 3 ||

Rama said: you told me, do not let the story of Dama, Vyala and Kata apply to you. Brahmin, you who take away the pain of this world, what do you mean by this?

राम ने कहा: आपने कहा था कि दाम, व्याल और कट की कहानी तुम पर लागू न हो। हे ब्राह्मण, आप जो संसार का दुख दूर करने वाले हैं, इसका क्या मतलब है?

4.25.4

भीमभासदृढस्थित्या त्वं विशोको भवेति च । प्रभो किमुक्तं भवता भवतापापहारिणा ॥ ४ ॥

bhīmabhāsadṛḍhasthityā tvaṃ viśoko bhaveti ca | prabho kimuktaṃ bhavatā bhavatāpāpahāriṇā || 4 ||

And you said, stay firm and steady inside something that looks terrible, and be free of sorrow. Lord, you who take away the pain of this world, what have you told me?

और आपने कहा कि डरावनी दिखने वाली चीज़ के भीतर दृढ़ और स्थिर रहो, और दुख से मुक्त हो जाओ। हे प्रभु, आप जो संसार का दुख दूर करने वाले हैं, आपने यह क्या कहा है?

4.25.5

उदारयैतया शुद्धं संप्रबोधय मां गिरा । घनस्तापापहारिण्या प्रावृषीव कलापिनम् ॥ ५ ॥

udārayaitayā śuddhaṃ saṃprabodhaya māṃ girā | ghanastāpāpahāriṇyā prāvṛṣīva kalāpinam || 5 ||

Wake me up clearly with this generous speech of yours, a speech that removes burning heat the way a monsoon cloud does, just as a monsoon cloud wakes up a peacock.

अपने इस उदार वचन से मुझे साफ़-साफ़ जगा दीजिए, यह वचन उस बादल की तरह जलन को दूर कर देता है, जैसे वर्षा का बादल मोर को जगा देता है।

4.25.6

श्रीवसिष्ठ उवाच । दामव्यालकटन्यायं भीमभासदृढस्थितिम् । शृणु राघव तच्छ्रुत्वा यदिष्टं तत्समाचर ॥ ६ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | dāmavyālakaṭanyāyaṃ bhīmabhāsadṛḍhasthitim | śṛṇu rāghava tacchrutvā yadiṣṭaṃ tatsamācara || 6 ||

Vasishtha said: Raghava, listen to the story of Dama, Vyala and Kata, and to what it means to stay firm inside something that looks terrible. After you hear it, do as you think best.

वसिष्ठ ने कहा: हे राघव, दाम, व्याल और कट की कहानी सुनो, और यह भी सुनो कि डरावनी चीज़ के भीतर दृढ़ रहने का क्या मतलब है। इसे सुनने के बाद, जो तुम्हें ठीक लगे वही करना।

4.25.7

आसीत्पातालकुहरे सर्वाश्चर्यमनोरमे । शम्बरो नाम दैत्येन्द्रो मायामणिमहार्णवः ॥ ७ ॥

āsītpātālakuhare sarvāścaryamanorame | śambaro nāma daityendro māyāmaṇimahārṇavaḥ || 7 ||

In a cave in the underworld, delightful with every kind of wonder, there lived a lord of the demons named Shambara, a man who was like a vast ocean of magic and jewels.

पाताल की एक गुफा में, जो हर तरह के अचरज से भरी और मनमोहक थी, शम्बर नाम का एक दैत्यराज रहता था। वह मानो माया और रत्नों का एक विशाल सागर था।

4.25.8

आकाशनगरोद्यानरचितासुरमन्दिरः । कुत्रिमोत्तमचन्द्रार्कभूषितात्मीयमण्डलः ॥ ८ ॥

ākāśanagarodyānaracitāsuramandiraḥ | kutrimottamacandrārkabhūṣitātmīyamaṇḍalaḥ || 8 ||

His demon palace was built like the garden of a city floating in the sky, and his own realm was decorated with fine artificial moons and suns.

उसका दानव-महल आकाश में तैरते किसी नगर के बगीचे जैसा बनाया गया था, और उसका अपना इलाका सुंदर नकली चाँद और सूरजों से सजाया गया था।

4.25.9

शिलाशकलसंभूतपद्माद्यैरमराचलः । अनन्तविभवारम्भपरिपूरितदानवः ॥ ९ ॥

śilāśakalasaṃbhūtapadmādyairamarācalaḥ | anantavibhavārambhaparipūritadānavaḥ || 9 ||

Pieces of rock were carved into lotuses and other flowers, so his home rivaled the mountain of the gods. The demon king was full of endless wealth and endless new projects.

पत्थर के टुकड़ों को तराश कर कमल और दूसरे फूल बनाए गए थे, जिससे उसका घर देवताओं के पर्वत जैसा लगता था। वह दानव-राजा अनगिनत धन और अनगिनत नई योजनाओं से भरा हुआ था।

4.25.10

गृहरत्नाङ्गनागेयजितामरवधूध्वनिः । चन्द्रबिम्बकलापूर्णक्रीडोपवनपादपः ॥ १० ॥

gṛharatnāṅganāgeyajitāmaravadhūdhvaniḥ | candrabimbakalāpūrṇakrīḍopavanapādapaḥ || 10 ||

In his house, the singing of jewel-bright women beat the singing of the wives of the gods. In his pleasure garden, the trees shone as full as the moon in every one of its phases.

उसके घर में रत्नों जैसी चमकीली स्त्रियों का गायन देवताओं की पत्नियों के गायन से भी बढ़कर था। उसके विहार-उद्यान के वृक्ष चाँद की हर कला की तरह पूरी चमक से भरे रहते थे।

4.25.11

फुल्लनीलोत्पलव्यूहकरालरमणालयः । रत्नहंसध्वनाहूतहेमाम्बुरुहसारसः ॥ ११ ॥

phullanīlotpalavyūhakarālarmaṇālayaḥ | ratnahansadhvanāhūtahemāmburuhasārasaḥ || 11 ||

His pleasure ground was thick and striking with masses of blooming blue lotuses. The calls of jewelled swans drew in the cranes that sat among the golden lotuses.

उसका विहार-स्थल खिले हुए नीले कमलों के ढेरों से घना और शानदार था। रत्नों से बने हंसों की आवाज़ सुनहरे कमलों के बीच बैठे सारसों को खींच लाती थी।

4.25.12

हेमपादपशाखाग्रकृताम्भोरुहकुड्मलः । करञ्जजालप्रपतन्मन्दारकुसुमाकरः ॥ १२ ॥

hemāpādapashākhāgrakṛtāmbhoruhakuḍmalaḥ | karañjajālaprapatanmandārakusumākaraḥ || 12 ||

The tips of the golden trees' branches formed buds shaped like lotuses. From the thick tangle of karanja trees fell mandara flowers without end, like an endless spring of blossoms.

सुनहरे वृक्षों की शाखाओं के सिरे कमल की कलियों जैसे बने थे। करंज के पेड़ों के घने जाल से मंदार के फूल लगातार झरते रहते थे, मानो फूलों का कोई खत्म न होने वाला सोता हो।

4.25.13

तर्कुयन्त्रमयानन्तदैत्यनिर्जितवासवः । हिमशीतानलज्वालानिर्मितोद्यानमण्डपः ॥ १३ ॥

tarkuyantramayānantadaityanirjitavāsavaḥ | himaśītānalajvālānirmiudyānamanḍapaḥ || 13 ||

Using spinning machines, he made countless mechanical demons that conquered Indra. His garden pavilions were built from flames of fire that were cold as ice.

घूमने वाले यंत्रों से उसने अनगिनत यांत्रिक दानव बनाए, जिन्होंने इंद्र को भी हरा दिया। उसके बगीचे के मंडप बर्फ जैसी ठंडी आग की लपटों से बनाए गए थे।

4.25.14

सर्वत्र कुसुमोद्यानजितानन्दननन्दनः । मायासर्वहृतव्यालमलयाचलचन्दनः ॥ १४ ॥

sarvatra kusumodyānajitānandananandaḥ | māyāsarvahṛtavyālamalayācalacandanaḥ || 14 ||

Everywhere, his flower gardens gave more delight than Indra's garden, Nandana. By his magic he brought sandalwood from Mount Malaya with every single snake taken out of it.

हर जगह उसके फूलों के बगीचे इंद्र के नंदन वन से भी ज़्यादा आनंद देते थे। अपनी माया से उसने मलय पर्वत का चंदन मंगवाया था, जिसमें से हर साँप निकाल दिया गया था।

4.25.15

हेमश्रीलोकलावण्यनिर्जितान्तःपुराङ्गनः । नानाकुसुमसंभारजानुदघ्नगृहाङ्गणः ॥ १५ ॥

hemaśrīlokalāvaṇyanirjitāntaḥpurāṅganaḥ | nānākusumasambhārajānudaghnaagṛhāṅgaṇaḥ || 15 ||

The women of his inner chambers were more beautiful than the loveliest women of the golden heavens. His courtyards lay knee-deep in heaps of every kind of flower.

उसके अंतःपुर की स्त्रियाँ सुंदरता में स्वर्ण-लोक की सबसे सुंदर स्त्रियों को भी मात देती थीं। उसके आँगन तरह-तरह के फूलों के ढेर से घुटनों तक भरे रहते थे।

4.25.16

क्रीडार्थमृन्मयेशानजितचक्रगदाधरः । अजस्रोड्डीनरत्नौघताराढ्यखपुरान्तरः ॥ १६ ॥

krīḍārthamṛnmayeśānajitacakragadādharaḥ | ajasroḍḍīnaratnaughatārāḍhyakha-purāntaraḥ || 16 ||

For his own amusement he kept clay figures of Shiva that, in play, defeated Vishnu, the god who carries the discus and the mace. Inside his sky palace, jewels flew about without stopping, like stars filling it with light.

अपने मनोरंजन के लिए उसके पास शिव की मिट्टी की मूर्तियाँ थीं, जो खेल-खेल में चक्र और गदा धारण करने वाले विष्णु को भी हरा देती थीं। उसके आकाश-महल के भीतर रत्न बिना रुके तारों की तरह उड़ते रहते थे और उसे रोशन करते रहते थे।

4.25.17

निशीथाखिलपातालशतचन्द्रनभस्तलः । स्वशालभञ्जिकालोकगीतगीतिरणोत्कटः ॥ १७ ॥

niśīthākhilapātālaśatacandranabhastalaḥ | svaśālabhañjikālokagītagītiraṇotkaṭaḥ || 17 ||

At midnight, the whole sky over the underworld shone as if filled with a hundred moons. Loud singing rang out as people looked at his lifelike carved statues.

आधी रात को पाताल के पूरे आकाश में मानो सौ चाँद जैसी चमक भर जाती थी। उसकी जीवंत लगने वाली नक्काशीदार मूर्तियों को देखकर लोग ज़ोर-ज़ोर से गीत गाते थे।

4.25.18

मायैरावणनागेन्द्रविद्रुतामरवारणः । त्रैलोक्यविभवोत्कर्षपूरितान्तःपुरान्तरः ॥ १८ ॥

māyairāvaṇanāgendravidrutāmaravāraṇaḥ | trailokyavibhavotkarṣapūritāntaḥpurāntaraḥ || 18 ||

With a magic elephant made to look like Airavata, the king of elephants, he drove away the elephants of the gods. The inside of his inner chambers was filled with the finest wealth of all three worlds.

उसने ऐरावत जैसा दिखने वाला एक मायावी हाथी बनाकर देवताओं के हाथियों को भगा दिया था। उसके अंतःपुर के भीतरी हिस्से तीनों लोकों के सबसे बढ़िया धन-वैभव से भरे हुए थे।

4.25.19

सर्वसंपत्तिसुभगः सर्वैश्वर्यनमस्कृतः । समस्तदैत्यसामन्तवन्दितोग्रानुशासनः ॥ १९ ॥

sarvasaṃpattisubhagaḥ sarvaiśvaryanamaskṛtaḥ | samastadaityasāmantavanditograānuśāsanaḥ || 19 ||

He was blessed with every kind of wealth, and every kind of power bowed down to him. All the demon chiefs under him praised his harsh rule.

वह हर तरह के धन-वैभव से धन्य था, और हर तरह की शक्ति उसके आगे झुकती थी। उसके अधीन सभी दानव-सरदार उसके कठोर शासन की प्रशंसा करते थे।

4.25.20

महाभुजवनच्छायाविश्रान्तासुरमण्डलः । सर्वबुद्धिगणाधाररत्नमण्डलमण्डितः ॥ २० ॥

mahābhujavanaśchāyāviśrāntāsuramaṇḍalaḥ | sarvabuddhigaṇādhāraratnamaṇḍalamaṇḍitaḥ || 20 ||

His whole army of demons rested under his huge arms as if resting in the shade of a forest. He wore a ring of jewels that people said was the very source of all wisdom.

उसकी विशाल भुजाओं के नीचे उसकी पूरी दानव-सेना ऐसे विश्राम करती थी जैसे किसी जंगल की छाया में। वह रत्नों की एक ऐसी माला पहनता था जिसे लोग समस्त बुद्धि का मूल स्रोत मानते थे।

4.25.21

तस्योत्सादितदेवस्य कठिनोड्डामराकृतेः । बभूव विपुलं सैन्यमासुरं सुरनाशनम् ॥ २१ ॥

tasyotsāditadevasya kaṭhinoḍḍāmarākṛteḥ | babhūva vipulaṃ sainyamāsuraṃ suranāśanam || 21 ||

Shambara had already crushed the gods, and his body was hard and fierce. Now he raised a vast demon army built to destroy the gods.

शम्बर पहले ही देवताओं को कुचल चुका था, और उसका शरीर कठोर और भयंकर था। अब उसने देवताओं को नष्ट करने के लिए एक विशाल दानव-सेना खड़ी कर दी।

4.25.22

तस्मिन्मायाबले सुप्ते देशान्तरगते तथा । तत्सैन्यं तरसा जघ्नुश्छिद्रं प्राप्य किलामराः ॥ २२ ॥

tasminmāyābale supte deśāntaragate tathā | tatsainyaṃ tarasā jaghnuśchidraṃ prāpya kilāmarāḥ || 22 ||

While that magic army was asleep, and part of it had gone off to other lands, the gods found their chance and struck that army down at once.

जब वह मायावी सेना सोई हुई थी, और उसका कुछ हिस्सा दूसरे प्रदेशों में गया हुआ था, तब देवताओं ने मौका पाकर तुरंत उस सेना पर वार कर दिया।

4.25.23

अथ शम्बरदैत्येन मुण्डिक्रोधद्रुमादयः । रक्षार्थमथ सामन्ताः स्वसेनासु नियोजिताः ॥ २३ ॥

atha śambaradaityena muṇḍikrodhadrumādayaḥ | rakṣārthamatha sāmantāḥ svasenāsu niyojitāḥ || 23 ||

Then the demon Shambara put commanders named Mundi, Krodha, Druma, and others in charge, to protect his armies.

फिर असुर शम्बर ने मुंडि, क्रोध, द्रुम और दूसरे सेनापतियों को अपनी सेनाओं की रक्षा के लिए नियुक्त किया।

4.25.24

तानप्यन्तरमासाद्य जघ्नुर्देवा भयानकाः । व्योमान्तरगताः श्येनाः कलविङ्कानिवाकुलान् ॥ २४ ॥

tānapyantaramāsādya jaghnurdevā bhayānakāḥ | vyomāntaragatāḥ śyenāḥ kalaviṅkānivākulān || 24 ||

But the terrifying gods found a gap in them too and struck them down, the way hawks flying high in the sky strike frightened sparrows.

पर डरावने देवताओं ने उनमें भी एक कमज़ोर जगह ढूंढ ली और उन्हें मार गिराया, जैसे आकाश में ऊँचा उड़ते बाज़ डरी हुई गौरैयों को मार डालते हैं।

4.25.25

सेनापतीन्पुनश्चान्यांश्चकारासुरसत्तमः । चपलानुद्भटारावांस्तरङ्गानिव सागरः ॥ २५ ॥

senāpatīnpunaścānyāṃścakārāsurasattamaḥ | capalānudbhataārāvāṃstarangāniva sāgaraḥ || 25 ||

So the great demon made new commanders again, restless and roaring fiercely, the way the ocean keeps making new waves.

तब उस महान असुर ने फिर से नए सेनापति बनाए, जो बेचैन थे और ज़ोर से गरज रहे थे, जैसे समुद्र बार-बार नई लहरें बनाता है।

4.25.26

देवास्तानपु तस्याशु जघ्नुस्तेन स कोपवान् । जगामामरनाशाय परिपूर्णे त्रिविष्टपम् ॥ २६ ॥

devāstānapu tasyāśu jaghnustena sa kopavān| jagāmāmaranāśāya paripūrṇe triviṣṭapam || 26 ||

The gods quickly struck down these new commanders as well. This made Shambara furious, and full of rage he went to heaven, determined to wipe out the gods completely.

देवताओं ने इन नए सेनापतियों को भी जल्दी ही मार गिराया। इससे शम्बर बहुत क्रोधित हो गया, और गुस्से से भरकर वह देवताओं को पूरी तरह मिटाने की ठान कर स्वर्ग की ओर चल पड़ा।

4.25.27

तस्मात्तन्माययाभीताः सुरास्तेऽन्तर्धिमाययुः । मेरुकाननकुञ्जेषु मृगा गौरीहरेरिव ॥ २७ ॥

tasmāttanmāyayābhītāḥ surāste'ntardhimāyayuḥ| merukānanakuñjeṣu mṛgā gaurīhareriva || 27 ||

So the gods, afraid of his magic power, hid themselves completely, the way deer hide in the thickets of Mount Meru's forest from Gauri's lion.

इसलिए देवता उसकी माया से डरकर पूरी तरह छिप गए, जैसे मेरु पर्वत के जंगल की झाड़ियों में हिरण गौरी के शेर से डरकर छिप जाते हैं।

4.25.28

क्रन्दत्क्षुद्रामरगणं वाष्पक्लिन्नाप्सरोमुखम् । शून्यं ददर्श स स्वर्गं कल्पक्षीणजगत्समम् ॥ २८ ॥

krandatkṣudrāmaragaṇaṃ vāṣpaklinnāpsaromukham| śūnyaṃ dadarśa sa svargaṃ kalpakṣīṇajagatsamam || 28 ||

There he saw heaven empty, the lesser gods crying, the faces of the heavenly nymphs wet with tears, like the whole world when it is destroyed at the end of an age.

वहाँ उसने स्वर्ग को खाली देखा, छोटे-मोटे देवता रो रहे थे, अप्सराओं के चेहरे आँसुओं से भीगे थे, जैसे पूरी दुनिया किसी युग के अंत में नष्ट हो जाती है।

4.25.29

विहरन्कुपितस्तत्र लब्धमाहृत्य सुन्दरम् । लोकपालपुरीं दग्ध्वा जगामात्मीयमालयम् ॥ २९ ॥

viharan kupitastatra labdhamāhṛtya sundaram| lokapālapurīṃ dagdhvā jagāmātmīyamālayam || 29 ||

Wandering there in his anger, he grabbed whatever beautiful things he found, burned down the city of the guardians of the world, and went back to his own home.

वहाँ अपने गुस्से में घूमते हुए उसने जो भी सुंदर चीज़ मिली उठा ली, लोकपालों के नगर को जला दिया, और अपने घर लौट गया।

4.25.30

एवं दृढतरीभूते द्वेषे दानवदेवयोः। देवाः स्वर्गं परित्यज्य दिक्षु जग्मुरदर्शनम्॥ ३०॥

evaṃ dṛḍhatarībhūte dveṣe dānavadevayoḥ| devāḥ svargaṃ parityajya dikṣu jagmuradarśanam || 30 ||

So the hatred between the demons and the gods grew even stronger. The gods left heaven and disappeared in every direction.

इस तरह असुरों और देवताओं के बीच की दुश्मनी और गहरी हो गई। देवता स्वर्ग छोड़कर हर दिशा में गायब हो गए।

4.25.31

अथ शम्बरदैत्येन ये ये सेनाधिनायकाः। क्रियन्ते यत्नतस्तांस्तु जघ्नुर्यत्नपराः सुराः॥ ३१॥

atha śambaradaityena ye ye senādhināyakāḥ| kriyante yatnatastāṃstu jaghnuryatnaparāḥ surāḥ || 31 ||

Then, however carefully the demon Shambara appointed new army commanders, the gods worked just as hard and struck them down too.

फिर असुर शम्बर ने चाहे जितनी मेहनत से नए सेनापति बनाए, देवताओं ने भी उतनी ही मेहनत से उन्हें मार गिराया।

4.25.32

यावदुद्वेगमायातः शम्बरः कोपवान्भृशम्। तार्णोऽतिमात्रमनल इव जज्वाल सोच्छ्वसन्॥ ३२॥

yāvadudvegamāyātaḥ śambaraḥ kopavānbhṛśam| tārṇo'timātramanala iva jajvāla socchvasan || 32 ||

As Shambara grew more and more agitated with rage, he blazed up like a fire in dry grass, breathing hard.

शम्बर गुस्से में और बेचैन होता गया, और सूखी घास की आग की तरह भड़क उठा, ज़ोर-ज़ोर से साँस लेते हुए।

4.25.33

त्रैलोक्यमपि चान्विष्यन्न देवाँल्लब्धवानथ। परेणापि प्रयत्नेन निधानमिव दुष्कृती॥ ३३॥

trailokyamapi cānviṣyann na devāllabdhavānatha| pareṇāpi prayatnena nidhānamiva duṣkṛtī || 33 ||

He searched through all three worlds for the gods, but however hard he tried he could not find them, like a wicked man digging for buried treasure and finding nothing.

उसने तीनों लोकों में देवताओं को खोजा, पर पूरी कोशिश के बाद भी वे नहीं मिले, जैसे कोई पापी आदमी गड़ा हुआ खज़ाना खोजता रहे और न पाए।

4.25.34

ससर्ज मायया घोरानसुरांस्त्रीन्महाबलान्। बलरक्षार्थमुदितान्कालान्मूर्तिमिव स्थितान्॥ ३४॥

sasarja māyayā ghorānasurāṃstrīnmahābalān| balarakṣārthamuditānkālānmūrtimiva sthitān || 34 ||

So by his magic power he created three terrible, immensely powerful demons to guard his army, standing there like Death itself given a body.

तब उसने अपनी माया से तीन भयानक और बेहद ताकतवर असुर बनाए, अपनी सेना की रक्षा के लिए, जो साक्षात मृत्यु जैसे खड़े थे।

4.25.35

निर्वृत्ता मायया भीमा बलपादपवाहिनः। उदगुस्ते महामायाः पक्षक्षुब्धा इवाद्रयः॥ ३५॥

nirvṛttā māyayā bhīmā balapādapavāhinaḥ| udaguḥste mahāmāyāḥ pakṣakṣubdhā ivādrayaḥ || 35 ||

Fearsome, born of his magic power, strong, carrying trees as clubs, these mighty demons rose up, like mountains shaking on their wings.

माया से जन्मे ये डरावने और ताकतवर असुर पेड़ों को हथियार की तरह उठाए हुए उठ खड़े हुए, जैसे पहाड़ अपने पंखों से हिल उठें।

4.25.36

दामो व्यालः कटश्चेति नामभिः परिलाञ्छिताः । यथाप्राप्तैककर्तारश्चेतनामात्रधर्मिणः ॥ ३६ ॥

dāmo vyālaḥ kaṭaśceti nāmabhiḥ parilāñchitāḥ | yathāprāptaikakartāraścetanāmātradharminḥ || 36 ||

They were named Dama, Vyala, and Kata. Each of them simply did whatever single task came before him, with nothing but bare awareness as his nature.

उनके नाम दाम, व्याल और कट थे। हर एक बस वही एक काम करता था जो उसके सामने आ जाता, और उसका पूरा स्वभाव बस एक सीधी चेतना भर था।

4.25.37

अभावात्कर्मणां ते च प्राक्तना नच वासनाः । निर्विकल्पकचिन्मात्रपरिस्पन्दैकधर्मकाः ॥ ३७ ॥

abhāvātkarmaṇāṃ te ca prāktanā na ca vāsanāḥ | nirvikalpakacinmātraparispandaiakadharmakāḥ || 37 ||

They had no past deeds behind them, and no old habits or leanings either. The only thing about them was a plain stir of awareness, with no thought added to it.

उनके पीछे न कोई पुराना कर्म था, न कोई पुरानी आदत या इच्छा। उनमें बस चेतना की एक सीधी हलचल भर थी, बिना किसी विचार के।

4.25.38

कर्मजीवकलां तन्वीमसारां च मनोभिदाम् । अपुष्टां कृत्रिमामन्तश्चोदयोदयमागताः ॥ ३८ ॥

karmajīvakalāṃ tanvīmasārāṃ ca manobhidām | apuṣṭāṃ kṛtrimāmantaścodayodayamāgatāḥ || 38 ||

They arose from nothing but a passing inner urge. What made each of them feel like a living person doing something was thin, without substance, undeveloped, and false, just a ripple in the mind, nothing more.

वे बस एक पल के भीतरी आवेग से पैदा हुए थे। उनमें जो 'मैं कुछ कर रहा हूँ' जैसा भाव था, वह पतला, बेदम, अधूरा और नकली था, बस मन की एक हल्की लहर, इससे ज़्यादा कुछ नहीं।

4.25.39

ते ह्यन्धपारम्पर्येण काकतालीयवद्भटाः प्रकृतामनुवर्तन्ते क्रियामुज्झितवासनाः ॥ ३९ ॥

te hyandhapāramparyeṇa kākatālīyavadbhaṭāḥ prakṛtāmanuvartante kriyāmujjhitavāsanāḥ || 39 ||

So these fighters, with no inner habits left in them at all, simply did whatever action came up next, blindly, one thing after another, like a crow landing on a branch at the very moment a palm fruit happens to fall.

इसलिए ये योद्धा, जिनमें कोई पुरानी आदत बची ही नहीं थी, बस अंधाधुंध जो भी काम सामने आता वही करते चले जाते थे, जैसे कौआ किसी डाल पर बैठे और ठीक उसी पल ताड़ का फल गिर पड़े।

4.25.40

अर्धसुप्ता यथा बालाः स्वाङ्गैः रिङ्गन्ति केवलम् । वासनात्माभिमानाभ्यां हीनास्ते तद्वदेव हि ॥ ४० ॥

ardhasuptā yathā bālāḥ svāṅgai riṅganti kevalam | vāsanātmābhimānābhyāṃ hīnāste tadvadeva hi || 40 ||

The way a half-asleep baby simply moves its own arms and legs without knowing it, these demons moved in exactly the same way, with no old habits and no sense of I at all.

जैसे आधा सोया हुआ बच्चा बिना जाने अपने हाथ-पैर यूँ ही हिलाता रहता है, ये असुर भी बिल्कुल वैसे ही चलते-फिरते थे, बिना किसी पुरानी आदत के और बिना यह एहसास हुए कि मैं कुछ हूँ।

4.25.41

नाभिपातं न चापातं न विदुस्ते पलायनम् न जीवितं न मरणं न रणं न जयाजयौ ॥ ४१ ॥

nābhipātaṃ na cāpātaṃ na viduste palāyanam na jīvitaṃ na maraṇaṃ na raṇaṃ na jayājayau || 41 ||

They knew nothing of attacking, nothing of the enemy closing in, nothing of running away, nothing of being alive, nothing of dying, nothing of the fight itself, nothing of winning or losing.

उन्हें न हमला करना आता था, न दुश्मन के पास आने का पता चलता था, न भागना आता था, न जीना, न मरना, न लड़ाई का ही पता था, न हार-जीत का।

4.25.42

केवलं सैनिकानग्रे दृष्टानाहननोद्यतान् अभिजग्मुः परानाजौ प्रहारदलिताद्रयः ॥ ४२ ॥

kevalaṃ sainikānagre dṛṣṭānāhananodyatān abhijagmuḥ parānājau prahāradalitādrayaḥ || 42 ||

They simply went straight at whatever enemy soldiers stood in front of them ready to strike, these were demons strong enough to shatter mountains with a single blow.

वे बस जो भी दुश्मन सैनिक सामने वार करने को तैयार दिखते, सीधे उन पर टूट पड़ते थे, ये असुर एक ही वार में पहाड़ तोड़ सकते थे।

4.25.43

शम्बरश्चिन्तयामास परितुष्टमनाः परम् विजेष्यते हि मे सेना मायासुरसुरक्षिता ॥ ४३ ॥

śambaraścintayāmāsa parituṣṭamanāḥ param vijeṣyate hi me senā māyāsurasurakṣitā || 43 ||

Shambara thought to himself, very pleased: my army is guarded by these magic-born demons, it is sure to win now.

शम्बर बहुत खुश होकर सोचने लगा, मेरी सेना अब इन माया से बने असुरों की रक्षा में है, यह ज़रूर जीतेगी।

4.25.44

अतिबलासुरदोर्द्रुमपालिता मम चमूः स्थिरतामलमेष्यति अमरवारणदन्तविघट्टनेष्वमरपर्वतहेमशिला यथा ॥ ४४ ॥

atibalāsuradorumapālitā mama camūḥ sthiratāmalameṣyati
amaravāraṇadantavighaṭṭaneṣvamaraparvatahemaśilā yathā || 44 ||

My army is protected by the tree-trunk-thick arms of these immensely strong demons. It will stand completely firm against the clashing tusks of the gods' elephants, like a golden rock of the gods' own mountain.

मेरी सेना इन बेहद ताकतवर असुरों की पेड़ जैसी मोटी भुजाओं से सुरक्षित है। यह देवताओं के हाथियों के दाँतों की टक्कर में भी पूरी तरह अडिग रहेगी, जैसे देवताओं के अपने पर्वत की सोने की चट्टान।

Chapter 26

4.26.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति निर्णीय दैत्येन्द्रो दामव्यालकटान्विताम् । सेनां संप्रेषयामास भूतलं देवनाशिनीम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti nirṇīya daityendro dāmavyālakaṭānvitām | senāṃ saṃpreṣayāmāsa bhūtalaṃ devanāśinīm ||1||

Sri Vasishtha said: Having decided this, the king of the daityas sent down to earth an army accompanied by Dama, Vyala and Kata, an army that could destroy the gods.

श्री वसिष्ठ जी बोले, ऐसा तय करके दैत्यों के राजा ने दाम, व्याल और कट के साथ एक सेना धरती पर भेजी, जो देवताओं का नाश करने वाली थी।

4.26.2

दैत्याः सागरकुञ्जेभ्यः कन्दरेभ्यश्च सायुधाः । उदगुर्भीमनिर्ह्लादाः सपक्षगिरिलीलया ॥ २ ॥

daityāḥ sāgarakuñjebhyaḥ kandarebhyaśca sāyudhāḥ | udagurbhīmanirhlādāḥ sapakṣagirilīlayā ||2||

The daityas, armed, rose up out of the ocean's groves and out of mountain caves, giving out terrible roars, moving with the ease of mountains that have wings.

हथियारों से लैस दैत्य समुद्र के कुंजों से और पहाड़ों की गुफाओं से ऊपर उठे, वे भयानक गर्जना कर रहे थे और ऐसे उड़ रहे थे जैसे पंखों वाले पर्वत खेल-खेल में उड़ते हों।

4.26.3

रोदसीकोटरं हस्तप्रहारहतभास्करम् । दानवाः पूरयामासुर्दामव्यालकटैधिताः ॥ ३ ॥

rodasīkoṭaraṃ hastaprahārahata bhāskaram | dānavāḥ pūrayāmāsurdāmavyālakaṭaidhitāḥ ||3||

The danavas, made mightier by Dama, Vyala and Kata, filled the whole space between heaven and earth, blotting out the sun with the blows of their hands.

दाम, व्याल और कट से और भी बलवान हुए दानवों ने आकाश और धरती के बीच का पूरा स्थान भर दिया, और अपने हाथों की चोट से सूरज को ढक दिया।

4.26.4

अथोत्तस्थुर्निकुञ्जेभ्यः कन्दरेभ्यः सुराचलात् । प्रलयान्त इवाक्षुब्धा भीमाः स्वर्वासिनां गणाः ॥ ४ ॥

athottasthur nikuñjebhyaḥ kandarebhyaḥ surācalāt | pralayānta ivākṣubdhā bhīmāḥ svārvāsināṃ gaṇāḥ ||4||

Then, from groves and caves and from the mountain of the gods, the hosts of heaven's dwellers rose up, terrible and undaunted, like the very end of the world.

फिर कुंजों से, गुफाओं से और देवताओं के पर्वत से स्वर्ग में रहने वालों के समूह उठ खड़े हुए, वे निडर और भयानक थे, मानो प्रलय का समय आ गया हो।

4.26.5

देवासुरपताकिन्योस्तद्युद्धमभवत्तयोः । अकालोल्वणकल्पान्तभीषणं भुवनान्तरे ॥ ५ ॥

devāsurapatākinyostadyuddhamabhavattayoḥ | akālolvaṇakalpāntabhīṣaṇaṃ bhuvanāntare || 5 ||

Then, between those two banner-carrying armies of gods and demons, a battle broke out, as terrifying as a great dissolution of the world come before its time, there in the space between the worlds.

तब देवताओं और असुरों की उन दोनों झंडों वाली सेनाओं के बीच युद्ध छिड़ गया, जो असमय आई भीषण प्रलय जैसा भयानक था, और यह लोकों के बीच के स्थान में हुआ।

4.26.6

पेतुः प्रलयपर्यस्तचन्द्रार्का इव दीप्तयः । शिरांसि कुन्डलोहयोततेजःपीततमांस्यथ ॥ ॥ ६ ॥

petuḥ pralayaparyastacandrārkā iva dīptayaḥ | śirāṃsi kuṇḍalohayotatejaḥpītatamāṃsyatha || 6 ||

Heads fell, blazing like the sun and moon flung down at the world's dissolution, their glow bright with the gold of earrings, swallowing up the darkness.

सिर गिर पड़े, वे ऐसे चमक रहे थे जैसे प्रलय के समय गिराए गए सूरज और चांद, उनके कुंडलों के सोने से उनकी चमक और तेज़ हो गई थी, और वह चमक अंधेरे को निगल रही थी।

4.26.7

जुघूर्णुर्भटनिर्मुक्तसिंहनादविरावितः । प्रलयानिलसंपूरैः स्फुटहासा इवाद्रयः ॥ ॥ ७ ॥

jughūrṇurbhaṭanirmuktasiṃhanādavirāvitāḥ | pralayānilasaṃpūraiḥ sphuṭahāsā ivādrayaḥ || 7 ||

They reeled, ringing with the lion-roars the warriors let loose, like mountains cracking open with laughter in the storm-winds of the world's end.

वे डगमगा रहे थे, योद्धाओं की छोड़ी गई सिंह-गर्जना से गूंज रहे थे, मानो प्रलय की आंधी में पहाड़ फट-फटकर हंस रहे हों।

4.26.8

रेणुः शैलशिलातुल्यहेतिघातास्तभित्तयः । कुलाचलतटाभीरुविश्रान्तहरिमण्डलाः ॥ ॥ ८ ॥

reṇuḥ śailaśilātulyahetighātāstabhittayaḥ | kulācalataṭābhīruviśrāntaharimaṇḍalāḥ || 8 ||

Dust rose in walls flung up by blows of weapons as hard as mountain rock, while fearless troops of horses rested on the slopes of the ancient mountains.

पहाड़ों की चट्टानों जैसे कठोर हथियारों की चोट से धूल की दीवारें उठ खड़ी हुईं, और निडर घुड़सवार टुकड़ियां प्राचीन पर्वतों की ढलानों पर टिकी हुई थीं।

4.26.9

चेरुः परस्पराघातहतहेतिसमुत्थिताः । लोलानलकणाःकल्पविशीर्णा इव तारकाः ॥ ॥ ९ ॥

ceruḥ parasparāghātahatahetisamutthitāḥ | lolānalakaṇāḥkalpaviśīrṇā iva tārakāḥ || 9 ||

Sparks flew up from weapons clashing against each other, flickering bits of fire, like stars scattered at the end of a cosmic age.

आपस में टकराते हथियारों से चिंगारियां उठीं और इधर-उधर उड़ीं, वे कांपती हुई आग की चिंगारियां जैसी थीं, मानो प्रलय के समय बिखरे हुए तारे हों।

4.26.10

विलेसू रक्तमांसौघपूर्णैकार्णवतीरगाः । कल्पतालवदुत्ताला वेतालास्तालतालिताः ॥ ॥ १० ॥

vilesū raktamāṃsaughapūrṇaikārṇavatīragāḥ | kalpatālavaduttālā vetālāstālatālitāḥ || 10 ||

Ghouls danced on the banks of that single ocean filled with a flood of blood and flesh, as wild as the deluge at the end of a cosmic age, clapping out a rhythm.

प्रेत खून और मांस की बाढ़ से भरे उस एक समुद्र के किनारे नाच रहे थे, वे प्रलय की बाढ़ जैसे उग्र थे, और ताल बजाकर थाप दे रहे थे।

4.26.11

प्रस्फुरद्रुधिरासारशान्तपांसुपयोधरे । व्योम्नि हेतिहतक्षुण्णा मौलिकुण्डलकोटयः ॥ ११ ॥

prasphuradrudhirāsāraśāntapāṃsupayodhare | vyomni hetihatakṣuṇṇā maulikuṇḍalakoṭayaḥ || 11 ||

In the sky, like a cloud whose dust had been laid by a spurting rain of blood, crowns and earrings by the millions flew, shattered and struck down by weapons.

आकाश में, जैसे किसी बादल की धूल खून की बौछार से बैठ गई हो, वैसे ही हथियारों की मार से टूटे हुए मुकुट और कुंडल असंख्य संख्या में उड़ रहे थे।

4.26.12

बभूवुर्भास्कराकारैः कल्पभूरुहधारिभिः । प्रहारदलिताद्रीन्द्रैर्दैत्यैर्निर्विवरा दिशः ॥ १२ ॥

babhūvurbhāskarākāraiḥ kalpabhūruhadhāribhiḥ | prahāradalitādrīndrairdaitairyirvivarā diśaḥ || 12 ||

The directions became so packed that there was no space left, filled with daityas blazing like the sun, wielding huge trees as clubs, who had smashed even the greatest mountains with their blows.

दिशाएं बिना किसी खाली जगह के दैत्यों से भर गईं, जो सूरज जैसे चमक रहे थे, बड़े-बड़े पेड़ों को हथियार की तरह उठाए हुए थे, और जिन्होंने अपनी चोटों से बड़े-बड़े पर्वतों तक को तोड़ डाला था।

4.26.13

जग्मुर्ज्वलदसिप्रान्तवातपातितभित्तयः । कणप्रकरतां शैलाः कल्पाग्निदलिता इव ॥ १३ ॥

jagmurjvaladasiprāntavātapātitabhittayaḥ | kaṇaprakaratāṃ śailāḥ kalpāgnidalitā iva || 13 ||

Mountains, their flanks brought down by the gusts from blazing swords, crumbled into heaps of dust, as if split apart by the fire that ends the world.

पहाड़, जिनकी दीवारें जलती हुई तलवारों की हवा से गिर गई थीं, चूर-चूर होकर ढेर बन गए, मानो प्रलय की आग ने उन्हें तोड़ डाला हो।

4.26.14

देवास्ते च समाजग्मुरश्वमेधैधिता इव । असुरानस्त्रविभ्रष्टाञ्जलदानिव वायवः ॥ १४ ॥

devāste ca samājagmurśvamedhaiḍhitā iva | asurānastravibhraṣṭāñjaladāniv vāyavaḥ || 14 ||

And the gods advanced together, as vigorous as if strengthened by a horse-sacrifice, driving the asuras, who had been broken loose by their weapons, the way winds scatter clouds.

और देवता एक साथ आगे बढ़े, मानो अश्वमेध यज्ञ से उनकी शक्ति बढ़ गई हो, और उन्होंने हथियारों से तितर-बितर हुए असुरों को ऐसे खदेड़ा जैसे हवाएं बादलों को बिखेर देती हैं।

4.26.15

जगृहुस्तानथाक्रम्य जरठासूनिवौतवः । तेऽपि ताञ्जगृहुर्मत्तानृक्षारूढानिव द्रुमान् ॥ १५ ॥

jagṛhustānathākramya jarathāsūnivautavaḥ | te'pi tāñjagṛhurmattānṛkṣārūḍhāniv drumān || 15 ||

Then, having overpowered them, they seized them, gripping them like old, spent prey; and they too grabbed hold of those maddened creatures, the way one grabs hold of trees that bears have climbed.

फिर उन पर आक्रमण करके उन्होंने उन्हें ऐसे जकड़ लिया जैसे किसी बूढ़े, थके शिकार को जकड़ा जाता है; और उन्होंने भी उन उन्मत्त असुरों को ऐसे पकड़ लिया जैसे भालू के चढ़े हुए पेड़ों को पकड़ा जाता है।

4.26.16

दोर्वृक्षविलसद्धेतिकुसुमाः शस्त्रपल्लवाः । रेजुः सुरासुराः फुल्ला वनलोला इव द्रुमाः ॥ १६ ॥

dorvṛkṣavilasaddhetikusumāḥ śastrapallavāḥ | rejuḥ surāsurāḥ phullā vanalolā iva drumāḥ || 16 ||

The gods and demons, their arms like tree branches with gleaming weapons for flowers and blades for young shoots, shone forth in full bloom, like trees swaying in a forest.

देवता और असुर ऐसे चमक रहे थे मानो उनकी भुजाएं पेड़ों की डालियां हों, चमकते हथियार उन पर खिले फूल हों और तलवारें कोंपलें हों, जैसे वन में लहलहाते खिले हुए पेड़।

4.26.17

अन्योन्यं पूरयामासुः शस्त्रपूरैर्दिशो दश । वनानि कुसुमव्रातैः सुमेराविव मारुतः ॥ १७ ॥

anyonyaṃ pūrayāmāsuḥ śastrapūraiḥrdiśo daśa | vanāni kusumavrātaiḥ sumeāviva mārutaḥ || 17 ||

They filled the ten directions with each other's weapons, the way the wind fills the forests around Mount Meru with drifts of flowers.

उन्होंने दसों दिशाओं को एक-दूसरे पर बरसाए हथियारों से भर दिया, ठीक वैसे ही जैसे मेरु पर्वत के आसपास हवा जंगलों को फूलों के ढेर से भर देती है।

4.26.18

घोरं समभवद्युद्धं देवदानवसेनयोः । रोदोरन्ध्रोदुम्बरान्तर्महामशकसंघयोः ॥ १८ ॥

ghoraṃ samabhavadyuddhaṃ devadānavasenayoḥ | rodorandhrodumbarāntarmahāmaśakasaṃghayoḥ || 18 ||

A terrible battle broke out between the armies of the gods and the danavas, like two great swarms of mosquitoes fighting inside the narrow crack of a doorway.

देवताओं और दानवों की सेनाओं के बीच एक भयंकर युद्ध छिड़ गया, जैसे दरवाज़े की एक संकरी दरार में मच्छरों के दो बड़े झुंड आपस में लड़ रहे हों।

4.26.19

अथोदपतदुत्तालैर्लोकपालेभमण्डलैः । कल्पाभ्रस्फूर्जिताकारो दारुणः समरारवः ॥ १९ ॥

athodapataduttālairlokapālebhamaṇḍalaiḥ | kalpābhraśphūrjitākāro dāruṇaḥ samarāravaḥ || 19 ||

Then, from the towering troops of the world-guardians' elephants, a terrible din of battle rose up, sounding like thunder from the clouds of the world's dissolution.

फिर लोकपालों के हाथियों की ऊंची-ऊंची टुकड़ियों से युद्ध का एक भयंकर शोर उठा, जो प्रलय के बादलों की गरज जैसा लग रहा था।

4.26.20

पिण्डग्रहेण नभसि भूभागमिव कुट्टिमम् । मुष्टिग्राह्यो महामेघमन्थरोदरपीवरः ॥ २० ॥

piṇḍagraheṇa nabhasi bhūbhāgamiva kuṭṭimam | muṣṭigrāhyo mahāmeghamantharodarapīvaraḥ || 20 ||

That din hung condensed in the sky like a solid lump, like a paved floor made from a piece of the earth; it was thick enough to grasp in the fist, as dense as the slow, heavy belly of a great rain cloud.

वह शोर आकाश में एक ठोस पिंड जैसा जमा हुआ था, मानो धरती के किसी टुकड़े से बना फर्श हो; वह इतना घना था कि मुट्ठी में पकड़ा जा सके, जैसे किसी बड़े बादल का भारी और धीमी गति वाला पेट।

4.26.21

रथसंपातसंपिष्टशस्त्रशैलरटन्नटः । त्रुटद्धृदयनिःसत्त्वकर्कशाक्रन्दघर्घरः ॥ २१ ॥

rathasaṃpātasaṃpiṣṭaśastrśailaraṭannaṭaḥ | truṭaddhṛdayaniḥsattvakarkaśākrandaghargharaḥ || 21 ||

That din rang out like some wild performer, rising from weapons and rock-hard missiles smashed in the crash of chariots, and it rasped with the harsh, dying cries of men whose hearts were breaking and whose strength was draining away.

वह शोर किसी उन्मत्त नर्तक की तरह गूंज रहा था, रथों की टक्कर में कुचले गए हथियारों और पत्थर जैसे शस्त्रों से उठ रहा था, और उन लोगों की कर्कश, मरणासन्न चीखों से घरघरा रहा था जिनके दिल टूट रहे थे और शक्ति चुकती जा रही थी।

4.26.22

प्रलयप्रत्ययोल्लासिकल्पान्तारावबृंहणः । द्वादशादित्यसंघट्टद्रवत्काञ्चनपर्वतः ॥ २२ ॥

pralayapratyayollāsikalpāntārāvabṛṃhaṇaḥ | dvādaśādityasaṃghaṭṭadravatkāñcanaparvataḥ || 22 ||

That din swelled like a trumpeting roar, rising with the very conviction of the world's final dissolution, like a mountain of gold melting under the combined blaze of the twelve suns.

वह शोर हाथी की गर्जना की तरह बढ़ता जा रहा था, मानो प्रलय के आने का पक्का यकीन हो, जैसे बारह सूर्यों की मिली-जुली आग से सोने का पहाड़ पिघल रहा हो।

4.26.23

ब्रह्माण्डकुण्डसंघट्टात्परावृत्त्या च निर्गतः । महास्रोतःपयःपूरः सत्त्वाहत इवाकरः ॥ २३ ॥

brahmāṇḍakuṇḍasaṃghaṭṭātparāvṛttyā ca nirgataḥ | mahāsrotaḥpayaḥpūraḥ sattvāhata ivākaraḥ || 23 ||

That roar burst out from the clash within the very vessel of the cosmic egg, echoing back on itself, like the flood of a great torrent, like a mine broken open by force, pouring out its wealth.

वह गर्जना ब्रह्मांड रूपी बर्तन के भीतर हुई टक्कर से फूट पड़ी और गूंजकर लौट आई, जैसे किसी बड़ी नदी की बाढ़ का पानी, जैसे बलपूर्वक खोली गई खान से निकला हुआ खज़ाना।

4.26.24

चञ्चत्सपक्षशैलेन्द्रपक्षपातचलद्ध्वनिः । कठिनापूरणोद्भूतस्फुटच्छैलेन्द्रकन्दरः ॥ २४ ॥

cañcatsapakṣaśailendrapakṣapātacaladdhvaniḥ | kaṭhināpūraṇoddhūtasphuṭacchailendrakandaraḥ || 24 ||

That sound stirred like the noise of winged mountains beating and dropping their wings; it was like mountain caves bursting open, shaken from being packed hard and full.

वह ध्वनि ऐसे हिल रही थी जैसे पंखों वाले पर्वतों के पंख फड़फड़ाकर गिर रहे हों; वह ऐसी थी मानो पहाड़ों की गुफाएं ठोस चीज़ों से ठसाठस भर जाने के कारण हिलकर फट रही हों।

4.26.25

मन्दरोद्धतदुग्धाब्धिसंक्षोभसदृशाङ्गकः । रतिश्रुद्धुंघुमास्फोटघटितद्वीपजन्तुभूः ॥ २५ ॥

mandaroddhata dugdhābdhisankṣobhasadṛśāṅgakaḥ | ratiśruddhuṃghumāsphoṭaghṭitadvīpajantubhūḥ || 25 ||

Its shape was like the ocean of milk thrown into turmoil by Mount Mandara, and its roar reached down to the ground where the creatures of the earth's islands lived.

उसका आकार मंदराचल से मथे गए दूध के सागर की उथल-पुथल जैसा था, और उसकी गूंज द्वीपों में रहने वाले जीवों की धरती तक पहुंच गई।

4.26.26

सेनयोः क्षुब्धयोरासीद्युद्धमुद्धतदानवम् । निष्पिष्टनगरग्रामगिरिकाननमानवम् ॥ २६ ॥

senayoḥ kṣubdhayorāsīdyuddhamuddhatadānavam | niṣpiṣṭanagaragrāmagirikānanamānavam || 26 ||

Between the two seething armies a battle raged, full of furious danavas, in which cities, villages, mountains, forests, and men were all crushed to pieces.

दोनों उफनती हुई सेनाओं के बीच एक युद्ध हुआ, जिसमें उग्र दानव भरे हुए थे, और जिसमें नगर, गांव, पहाड़, जंगल और मनुष्य सब कुचल दिए गए।

4.26.27

महाहेतिशतच्छिन्नदानवाचलपूर्णदिक् । अन्योन्याहतहेत्यादिचूर्णपूर्णाम्बरोदरम् ॥ २७ ॥

mahāhetiśatacchinnadānavācalapūrṇadik | anyonyāhathetyādicūrṇapūrṇāmbarodaram || 27 ||

The directions were filled with mountain-sized danavas cut down by hundreds of powerful weapons, and the sky's whole expanse was filled with the dust of weapons shattered against each other.

दिशाएं सैकड़ों बड़े-बड़े हथियारों से कटे हुए पहाड़ जैसे दानवों से भर गईं, और आकाश का पूरा विस्तार आपस में टकराए हथियारों के चूरे से भर गया।

4.26.28

भुशुण्डीमण्डलास्फोटस्फुटन्मेरुशिरःशतम् । शरमारुतनिर्लूनदैत्यदेवमुखाम्बुजम् ॥ २८ ॥

bhūśuṇḍīmaṇḍalāsphoṭasphuṭanmeruśiraḥśatam | śaramārutanirlūnadaityadevamukhāmbujam || 28 ||

Hundreds of Meru's peaks cracked open from the blows of hurled sling-stones, and the lotus-faces of daityas and gods alike were mown down by the wind of arrows.

गोफन से फेंके गए पत्थरों की मार से मेरु पर्वत की सैकड़ों चोटियां फट गईं, और बाणों की आंधी ने दैत्यों और देवताओं दोनों के कमल जैसे मुखों को काट डाला।

4.26.29

चक्रावर्तशतभ्रान्तदेवदैत्यजरत्तणम् । सेनाप्रहारकल्लोलवलनावलिताम्बरम् ॥ २९ ॥

cakrāvartśatabhrāntadevadaityajaratṭaṇam | senāprahārakallolavalanāvalitāmbaram || 29 ||

Gods and daityas were spun around by hundreds of whirling eddies like bits of withered straw, and the sky itself curved and twisted under the waves stirred up by the armies' blows.

देवता और दैत्य सैकड़ों भंवरों में ऐसे घूम रहे थे जैसे सूखे तिनके घूमते हैं, और सेनाओं की टक्करों से उठी लहरों से आकाश भी मुड़ता-तड़फड़ाता रहा।

4.26.30

हेत्युग्रवातनिष्पिष्टपतद्वैमानिकव्रजम्। अस्त्रोदिताब्धिवार्योघप्लावितव्योमपत्तनम्॥ ३०॥

hetyugravātanispiṣṭapatadvaimānikavrajam | astroditābdhivāryoghaplāvitavyomapattanam || 30 ||

A fierce wind driven by weapons ground down the flying chariots and sent them crashing down in crowds, and weapons threw up such floods of ocean water that they drowned the city in the sky.

हथियारों की तेज़ हवा ने उड़ने वाले रथों को कुचल दिया और वे झुंड के झुंड गिरने लगे, और हथियारों ने समुद्र का पानी इतना उठा दिया कि आसमान का शहर उसी में डूब गया।

4.26.31

वहन्महास्त्रपातासिशूलशक्तिनदीशतम्। शैलपक्षोद्भटास्फोटलुठद्ब्रह्माण्डमण्डपम्॥ ३१॥

vahanmahāstrapātāsiśūlaśaktinadīśatam | śailapakṣodbhaṭāsphoṭaluṭhadbrahmāṇḍamaṇḍapam || 31 ||

Hundreds of rivers ran full of fallen swords, spears, and tridents, along with other great weapons, and the loud crash of winged mountains hurled through the air made the whole dome of the universe shake.

सैकड़ों नदियाँ गिरी हुई तलवारों, भालों, त्रिशूलों और दूसरे बड़े हथियारों से भर गईं, और पंख वाले पहाड़ों की ज़ोरदार टक्कर से पूरा ब्रह्मांड हिल गया।

4.26.32

दैत्यपार्ष्णिप्रहारौघपतल्लोकेशपत्तनम्। नारीहलहलारावरणत्कङ्कणमन्दिरम्॥ ३२॥

daityapārṣṇiprahāraughapatallokeśapattanam | nārīhalahalārāvaraṇatkaṅkaṇamandiram || 32 ||

The demons' rain of kicks brought down the city of the lord of the worlds, and inside the palace, women cried out in distress while their bangles jingled.

राक्षसों की लातों की बौछार से लोकपति के शहर का पतन हो गया, और महल के भीतर औरतें दुख से चिल्ला रही थीं जबकि उनकी चूड़ियाँ खनक रही थीं।

4.26.33

लुठद्दैत्यवलोद्भूतमत्तास्रौघजलान्वितम्। रक्तधौतनरौघोग्रमुक्तनाददद्रवज्जनम्॥ ३३॥

luṭhaddaityavalodbhūtamattāsraughajalānvitam | raktadhautanaraughogramuktanādadravajjanam || 33 ||

Blood gushed in floods from the writhing, fallen bodies of the demon army, and men, drenched in that blood, ran about screaming in terror.

राक्षसों की सेना के गिरे हुए, तड़पते शरीरों से खून की धाराएँ बह निकलीं, और उस खून से भीगे लोग डर के मारे चीखते हुए इधर-उधर भागने लगे।

4.26.34

लोकपानीकपाम्भोजच्छन्नाच्छन्नयमान्वितम्। पुनः सुरासुरैर्घातैर्दृष्टसैन्यकुलाकुलम्॥ ३४॥

lokapānīkapāmbhojacchannācchannayamānvitam | punaḥ surāsurairghātairdṛṣṭasainyakulākulam || 34 ||

The lotus-like faces of the generals serving the world's guardians were covered over again and again as death took them, and once more the armies before their eyes fell into utter confusion from the blows gods and demons traded.

लोकपालों के सेनापतियों के कमल जैसे चेहरे बार-बार ढक गए जब मौत ने उन्हें छू लिया, और देवताओं तथा राक्षसों के बीच लगी चोटों से आँखों के सामने की सेनाएँ फिर से पूरी तरह गड़बड़ा गईं।

4.26.35

सपक्षपर्वताकारदानवाद्रिगमागमैः । वहच्छवशवाशब्दभूरिभाङ्कारभीषणम् ॥ ३५ ॥

sapakṣaparvatākāradānavādrigamāgamaiḥ | vahacchavaśavāśabdabhūribhāṅkārabhīṣaṇam || 35 ||

Huge winged demons, shaped like mountains, moved back and forth, and the place grew terrifying with the loud growling and barking of dogs among the corpses.

पंख वाले, पहाड़ जैसे बड़े राक्षस इधर-उधर घूम रहे थे, और लाशों के बीच कुत्तों के गुर्राने और भौंकने की ज़ोरदार आवाज़ से वह जगह डरावनी हो गई।

4.26.36

आयुधाग्रविभिन्नोग्रदैत्यपर्वतनिर्झरैःरक्तैररुणिताशेषवसुधार्णवपर्वतम् ॥ ३६ ॥

āyudhāgravibhinnogradaityaparvatanirjharaiḥraktairaruṇitāśeṣavasudhārṇavaparvatam || 36 ||

Streams of blood poured like waterfalls from the terrible demon-mountains as weapon-points split them open, and that blood turned the whole earth, the ocean, and the mountains red.

हथियारों की नोकों से चीरे गए भयानक राक्षस-पहाड़ों से खून झरनों की तरह बह निकला, और उस खून से पूरी धरती, समुद्र और पहाड़ लाल हो गए।

4.26.37

उत्सन्नराष्ट्रनगरविपिनग्रामगह्वरम्धृतासंख्यासुरेभाश्वमनुष्यशवपर्वतम् ॥ ३७ ॥

utsannarāṣṭranagaravipinagrāmagahvaramdhṛtāsaṃkhyāsurebhāśvamanuṣyaśavaparvatam || 37 ||

Kingdoms, cities, forests, villages, and mountain-caves lay in ruin, and countless corpses of demons, elephants, horses, and men piled up as high as mountains.

राज्य, शहर, जंगल, गाँव और पहाड़ों की गुफाएँ बरबाद पड़ी थीं, और राक्षसों, हाथियों, घोड़ों और आदमियों की गिनती से बाहर लाशें पहाड़ों जैसी ऊँची ढेर हो गईं।

4.26.38

सुतालोत्तालनाराचराजिरोचितवारणम्मुष्टिप्रहारपिष्टांसमत्तैरावणवारणम् ॥ ३८ ॥

sutālottālanārācarājirocitavāraṇammuṣṭiprahārapiṣṭāṃsamattairāvaṇavāraṇam || 38 ||

A towering elephant gleamed with rows of iron arrows stuck all over it, and fists came down again and again, crushing the shoulders of Airavata, the maddened elephant.

एक ऊँचा हाथी अपने ऊपर चुभे लोहे के तीरों की कतारों से चमक रहा था, और मुक्कों की मार से ऐरावत नाम के मस्त हाथी के कंधे बार-बार कुचले जा रहे थे।

4.26.39

कल्पाभ्रपटलासारधारादलितपर्वतम्महाशनिविनिष्पेषपिष्टोड्डीनकुलाचलम् ॥ ३९ ॥

kalpābhrapaṭalāsāradhārādalitaparvatammahāśanivinipeṣapiṣṭoḍḍīnakulācalam || 39 ||

Torrents of rain from the doomsday clouds split the mountains apart, and mighty thunderbolts ground the flying, winged mountains down to dust.

प्रलय के बादलों की तेज़ बारिश ने पहाड़ों को चीर दिया, और भारी बिजलियों ने उड़ने वाले, पंख लगे पहाड़ों को पीसकर धूल कर दिया।

4.26.40

कुपिताग्निज्वलज्ज्वालाजालज्वलितदानवमेकाञ्जलिपुटानीतसमुद्रोत्सादितानलम् ॥ ४० ॥

kupitāgnijvalajjvālājālajvalitadānavamekāñjaliputānītasamudrotsāditānalam || 40 ||

The raging fire's web of blazing flames burned the demons, until a whole ocean was scooped up in a single cupped hand and poured out to put the fire out.

क्रोध से जलती आग की लपटों के जाल ने राक्षसों को जला डाला, यहाँ तक कि पूरे समुद्र को एक ही अंजुली में उठाकर उस आग को बुझा दिया गया।

4.26.41

चण्डदैत्यातिसंभारशिलीकृतमहाज्वलम् । वनव्यूहेन्धनाग्न्यर्चिर्द्राविताम्बुशिलोच्चयम् ॥ ४१ ॥

caṇḍadaityātisaṃbhāraśilīkṛtamahājvalam | vanavyūhendhanāgnyarcirdrāvitāmbuśiloccayam || 41 ||

The vast mass of fierce demons was turned to stone by that great blaze, and with whole forests as fuel, the fire's flames melted away heaps of ice.

उस बड़ी आग ने भयंकर राक्षसों के बड़े समूह को पत्थर बना दिया, और पूरे जंगलों को ईंधन बनाकर आग की लपटों ने बर्फ के ढेरों को पिघला दिया।

4.26.42

अस्त्रनिर्मितदुर्वारतमःकल्पान्तरात्रिकम् । मायासूर्यगणोद्द्योतैः पीतातनुतमःपटम् ॥ ४२ ॥

astranirmitadurvāratamaḥkalpāntarātrikaṃ | māyāsūryagaṇodyotaiḥ pītātanutamaḥpaṭam || 42 ||

Weapons wove an unstoppable darkness like the night at the end of a cosmic age, and the light of conjured, illusory suns drank up that vast veil of darkness.

हथियारों ने ऐसा घना अंधेरा बना दिया जैसे किसी युग के अंत की रात होती है, और मायावी सूरजों की रोशनी ने उस बड़े अंधेरे के पर्दे को सोख लिया।

4.26.43

मायाग्निवर्षनिष्पीतकलाभ्रघनवर्षणम् । ससीत्कारााग्निवमनशस्त्रसंघट्टवर्षणम् ॥ ४३ ॥

māyāgnivarṣaniṣpītakalābhraghanavarṣaṇam | sasītkārāgnivamanaśastrasaṃghaṭṭavarṣaṇam || 43 ||

A rain of magical fire drank up the downpour from the dense clouds, hissing loudly as fire-spitting weapons clashed together in a storm of blows.

मायावी आग की बारिश ने घने बादलों की बरसात को सोख लिया, और आग उगलने वाले हथियार तेज़ आवाज़ के साथ आपस में टकराते रहे।

4.26.44

वज्रवर्षास्त्रनिर्धूतशैलवर्षास्त्रसंभ्रमम् । निद्राबोधास्त्रयुद्धाढ्यं संघर्षावग्रहाश्रयम् ॥ ४४ ॥

vajravarṣāstranirdhūtaśailavarṣāstrasaṃbhramam | nidrābodhāstrayuddhāḍhyaṃ saṃgharṣāvagrahāśrayam || 44 ||

The Thunderbolt-rain weapon and the Mountain-rain weapon fell in a wild, confused clash, knocking each other aside, and the fighting grew thick with the Sleep-weapon and the Waking-weapon, resting on unending, grinding deadlock.

वज्र-वर्षा वाला हथियार और पहाड़-वर्षा वाला हथियार आपस में उलझकर एक-दूसरे को गिराते रहे, और लड़ाई में नींद लाने वाला हथियार और जगाने वाला हथियार भी खूब चले, जो लगातार खिंचती रस्साकशी पर टिके थे।

4.26.45

वहत्क्रकचवृक्षास्त्रं जलाग्न्यस्मरणान्धितम् । ब्रह्मास्त्रयुद्धविषमं तमस्तेजोस्त्रसारितम् ॥ ४५ ॥

vahatkrakacavṛkṣāstraṃ jalāgnyasmaraṇāndhitam | brahmāstrayuddhaviṣamaṃ tamastejostrasāritam || 45 ||

The Saw-weapon and the Tree-weapon flew out, blinding warriors until they could no longer tell water from fire, and the battle grew fierce with the Brahma-weapon, pushed further by the Darkness-weapon and the Light-weapon.

आरी वाला हथियार और पेड़ वाला हथियार छूटे, जिससे लड़ाके अंधे हो गए और पानी-आग तक पहचानना भूल गए, और ब्रह्मास्त्र से लड़ाई और भयानक हो गई, जिसे अंधेरे वाले हथियार और रोशनी वाले हथियार ने और आगे बढ़ाया।

4.26.46

अस्त्रोद्गीर्णायुधानीकनीरन्ध्रसकलाम्बरम् । शिलावर्षास्त्रदलितं वह्निवर्षास्त्रभासुरम् ॥ ४६ ॥

astroddgīrṇāyudhānīkanīrandhrasakalāmbaram | śilāvarṣāstradalitaṃ vahnivarṣāstrabhāsuram || 46 ||

Weapons spat out whole armies of other weapons until they packed the entire sky without a single gap; the Stone-rain weapon smashed things apart, and the Fire-rain weapon blazed everywhere.

हथियारों ने इतने और हथियार उगले कि पूरा आसमान बिना किसी खाली जगह के भर गया; पत्थर-वर्षा वाले हथियार ने चीज़ों को तोड़ डाला, और आग-वर्षा वाला हथियार हर तरफ धधक उठा।

4.26.47

पताकास्पृष्टशशिकैश्चक्रचीत्कारगर्जितैः । मुहूर्तेन रथैर्लङ्घितोदयास्तमयाचलम् ॥ ४७ ॥

patākāspṛṣṭaśaśikaiścakracītkāragarjitaiḥ | muhūrtena rathairlaṅghitodayāstamayācalam || 47 ||

With their banners brushing the moon and their wheels shrieking and roaring, chariots crossed in a single instant from the mountain where the sun rises to the mountain where it sets.

उनके झंडे चाँद को छू रहे थे और पहियों से चीख जैसी गरज उठ रही थी, और रथ एक ही पल में सूरज उगने वाले पहाड़ से सूरज डूबने वाले पहाड़ तक पहुँच गए।

4.26.48

वज्रप्रहाराविरतम्रियमाणमहासुरम् । शुक्रामरमहाविद्याजीवमानमहासुरम् ॥ ४८ ॥

vajraprahārāviratamriyamāṇamahāsuram | śukrāmaramahāvidyājīvamānamahāsuram || 48 ||

The great demon kept dying under the thunderbolt's ceaseless blows, but Shukra's undying great spell brought him back to life again and again.

वह बड़ा राक्षस वज्र की लगातार मार से बार-बार मरता रहा, पर शुक्र की अमर महाविद्या उसे हर बार फिर से जिला देती थी।

4.26.49

विद्रवद्देवसंघातं जयप्रोड्डामरामरम् । शुभग्रहमहाकेतुमालिकानामितस्ततः ॥ ४९ ॥

vidravadddevasaṃghātaṃ jayaproḍḍāmarāmaram | śubhagrahamahāketumālikānāmitastataḥ || 49 ||

The routed host of gods fled, while one of the immortals ran wild in a frenzy of victory, and garlands of bright planets and great comets hung here and there in the sky.

देवताओं की हारी हुई सेना भाग रही थी, जबकि एक देवता जीत के नशे में बेकाबू होकर उछल रहा था, और तेज चमकते ग्रहों और बड़े धूमकेतुओं की मालाएँ आसमान में इधर-उधर लटकी थीं।

4.26.50

उत्पातमङ्गलौघानां बुद्धेरुद्धरकन्धरम् । साद्रिखोर्वीसमुद्रद्युजगद्रुधिरवारिधि ॥ ५० ॥

utpātamaṅgalaughānāṃ buddheruddhakakandharam | sādrikhorvīsamudradyujagadrudhiravāridhi || 50 ||

Something rose up with its neck lifted high amid the flood of omens, both fair and foul, that confounded every mind, while the mountains, the earth, the ocean, the sky, and the whole world turned into one vast ocean of blood.

उमड़ते हुए शुभ-अशुभ शकुनों के बीच किसी ने अपनी गर्दन ऊँची उठाई, जिससे हर किसी की समझ गड़बड़ा गई, और पहाड़, धरती, समुद्र, आकाश और पूरी दुनिया खून के एक बड़े समुद्र में बदल गई।

4.26.51

फुल्लैककिंशुकवनं कुर्वद्दुर्वारवैरतः । पर्वतप्रतिमासंख्यं शवपूर्णमहार्णवम् ॥ ५१ ॥

phullaikakiṃśukavanaṃ kurvaddurvāravairataḥ | parvatapratimāsaṃkhyaṃ śavapūrṇamahārṇavam || 51 ||

Their unstoppable hatred turned the battlefield into one solid forest of blazing red kimshuka blossoms, and the great ocean filled up with corpses piled as high as countless mountains.

उनकी न रुकने वाली नफरत ने युद्धभूमि को लाल किंशुक फूलों से लदे एक घने जंगल जैसा बना दिया, और बड़ा समुद्र अनगिनत पहाड़ों जितनी ऊँची लाशों से भर गया।

4.26.52

समग्रतरुशाखाग्रलम्बलोलमहाशवम् । दीप्यमानैः स्ववातार्तैः पक्षपुष्पैर्लसत्फलैः ॥ ५२ ॥

samagrataruśākhāgralambalolamahāśavam | dīpyamānaiḥ svavātārtaiḥ pakṣapuṣpairlasatphalaiḥ || 52 ||

Huge corpses hung and swayed from the tips of every tree's branches, like the tree's own shining fruits and blazing flowers trembling in the wind.

हर पेड़ की डालियों की नोक से बड़ी-बड़ी लाशें लटककर झूल रही थीं, मानो वे पेड़ के अपने चमकते फल और हवा में काँपते दहकते फूल हों।

4.26.53

तालोत्तालैः शरव्रातवनैर्व्याप्तनभस्थलम् । पर्वतप्रतिमासंख्यकबन्धशतबाहुभिः ॥ ५३ ॥

tālottālaiḥ śaravrātavanairvyāptanabhasthalam | parvatapratimāsaṃkhyakabandhaśatabāhubhiḥ || 53 ||

The sky filled up with towering forests of arrows, as tall as palm trees, and with headless bodies, countless as mountains, each waving a hundred arms.

आसमान ताड़ के पेड़ जैसे ऊँचे तीरों के जंगल से भर गया, और बिना सिर वाले शरीर, पहाड़ों जितने अनगिनत, अपनी सौ-सौ भुजाएँ हिला रहे थे।

4.26.54

नृत्यद्भिः पातिताम्भोदविमानसुरतारकम् । शरशक्तिगदाप्रासपट्टिशप्रोतपर्वतम् ॥ ५४ ॥

nṛtyadbhiḥ pātitāmbhodavimānasuratārakam | śaraśaktigadāprāsapattiśaprotaparvatam || 54 ||

Those headless bodies danced and knocked down clouds, flying chariots, gods, and even stars, while mountains were pierced through with arrows, javelins, clubs, lances, and spears.

वे बिना सिर वाले शरीर नाचते हुए बादलों, उड़ने वाले रथों, देवताओं और तारों तक को गिरा दे रहे थे, जबकि पहाड़ तीरों, भालों, गदाओं, बरछों और नेज़ों से आर-पार छिद गए थे।

4.26.55

लोकसप्तकविभ्रष्टकुड्यखण्डचिताम्बरम् । अनारतरसन्मत्तकल्पाभ्रदृढदुन्दुभि ॥ ५५ ॥

lokasaptakavibhraṣṭakuḍyakhaṇḍacitāmbaram | anāratarasanmattakalpābhradṛḍhadundubhi || 55 ||

The sky was littered with wall-fragments fallen from the seven worlds, looking like one huge funeral pyre, while the doomsday clouds roared on without end like great, furious war-drums.

आसमान सातों लोकों से गिरी हुई दीवारों के टुकड़ों से अटा पड़ा था और एक बड़ी चिता जैसा लग रहा था, जबकि प्रलय के बादल बिना रुके बड़े, गुस्सैल युद्ध-ढोलों जैसी गरज मचा रहे थे।

4.26.56

एवं शब्दशतोन्नादपातालतलवारणम् । विनायककराकृष्टदीर्घदानवपर्वतम् ॥ ५६ ॥

evaṃ śabdaśatonnādapātālatalavāraṇam | vināyakakarākṛṣṭadīrghadānavaparvatam || 56 ||

The roar of a hundred sounds reached all the way down to the floor of the underworld, as the leader's trunk dragged along a huge, towering demon-mountain.

सौ तरह की आवाज़ों की गूँज पाताल के तल तक पहुँच रही थी, जबकि सरदार की सूँड़ एक बड़े, ऊँचे राक्षस-पहाड़ को घसीट कर ले जा रही थी।

4.26.57

एकदिक्करनिष्पन्दसिद्धसाध्यमरुद्गणम् । पलायमानगन्धर्वकिन्नरामरचारणम् ॥ ५७ ॥

ekadikkaraniṣpandasiddhasādhyamarudgaṇam | palāyamānagandharvakinnarāmaracāraṇam || 57 ||

The hosts of Siddhas, Sadhyas, and Maruts stood frozen, hands still, staring in one direction, while the Gandharvas, Kinnaras, gods, and Charanas fled in terror.

सिद्धों, साध्यों और मरुतों के समूह हाथ रोककर एक ही दिशा में देखते हुए जड़ हो गए थे, जबकि गंधर्व, किन्नर, देवता और चारण डर के मारे भाग रहे थे।

4.26.58

वघुरशनिनिपातखण्डिताङ्गा दलितशिलाशकलाः ककुम्मुखेषु । प्रलयसमयसूचकाः सुराणां सुरतरुघर्घरघस्मराः समीराः ॥ ५८ ॥

vaghuraśaninipātakhaṇḍitāṅgā dalitaśilāśakalāḥ kakummukheṣu | pralayasamayasūcakāḥ surāṇāṃ suratarughargharaghasmarāḥ samīrāḥ || 58 ||

Winds blew whose thunderbolt-strikes had shattered bodies and flung broken rock-splinters toward every quarter of the sky; roaring through the gods' wishing-tree, they were the very signs that the hour of the great dissolution had come.

ऐसी हवाएँ चल रही थीं जिनकी वज्र जैसी बिजली गिरने से शरीर टुकड़े-टुकड़े हो गए थे और चट्टानों के टुकड़े हर दिशा में जा गिरे थे; देवताओं के इच्छा-पूर्ण करने वाले पेड़ में गरजती हुई ये हवाएँ इस बात का संकेत थीं कि प्रलय की घड़ी आ पहुँची है।

Chapter 27

4.27.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । तस्मिंस्तदा वर्तमाने घोरे समरसंभ्रमे । देवासुरशरीरेषु गर्तेष्वभ्रोदरेष्विव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tasmiṃstadā vartamāne ghore samarasaṃbhrae | devāsurasarīreṣu garteṣvabhrodareṣviva || 1 ||

Sri Vasishtha said: While that terrible, confused battle was going on, the bodies of gods and demons lay in pits, like the dark hollows inside clouds.

श्री वशिष्ठ बोले तब वह भयानक और उलझा हुआ युद्ध चल रहा था। देवताओं और असुरों के शरीर गड्ढों में ऐसे पड़े थे जैसे बादलों के भीतर के खाली हिस्सों में पड़े हों।

4.27.2

वहत्स्वसृक्प्रवाहेषु गङ्गापूरेष्विवाम्बरात् । दाम्नि वेष्टितदेवौघकृतक्ष्वेडाघनारवे ॥ २ ॥

vahatsvasṛkpravāheṣu gaṅgāpūreṣvivaṃbarāt | dāmni veṣṭitadevaughakṛtakṣvēḍāghanārave || 2 ||

There were rivers of their own blood flowing, like the flood of the Ganga pouring down from the sky. And there was Dama, coiled around crowds of gods, making one thick hissing roar.

वहाँ उनका अपना खून नदियों की तरह बह रहा था, जैसे आकाश से गंगा की बाढ़ उतर रही हो। और वहाँ था दाम, जो देवताओं की भीड़ के चारों ओर लिपटा हुआ था और ज़ोर से फुफकार रहा था।

4.27.3

व्याले निजकराकृष्टिपिष्टसर्वसुरालये । कटे कठिनसंरम्भसङ्गरक्षपितामरे ॥ ३ ॥

vyāle nijakarākṛṣṭipiṣṭasarvasurālaye | kaṭe kaṭhinasaṃrambhasaṅgarakṣapitāmare || 3 ||

There was Vyala, whose lair ground up all the gods that its own coils had dragged in. There was Kata, in which the immortals were destroyed in hard, fierce close combat.

वहाँ था व्याल, जिसके बिल में उसके अपने फंदों से खींचे गए सारे देवता कुचल दिए जाते थे। और वहाँ था कट, जिसमें अमर देवता कठोर और भयंकर लड़ाई में मार डाले गए।

4.27.4

ऐरावते क्षीणरवे पलायनपरायणे । प्रवृद्धे दानवानीके मध्याह्न इव भास्करे ॥ ४ ॥

airāvate kṣīṇarave palāyanaparāyaṇe | pravṛddhe dānavānīke madhyāhna iva bhāskare || 4 ||

There was Airavata, his trumpeting grown faint, set on running away. And the demon army kept growing, like the sun blazing at midday.

वहाँ था ऐरावत, जिसकी दहाड़ अब धीमी पड़ चुकी थी और जो भागने पर उतारू था। और असुरों की सेना बढ़ती ही जा रही थी, जैसे दोपहर का सूरज तेज़ चमकता है।

4.27.5

पतिताङ्गव्यथार्तानि प्रस्रवद्रुधिराणि च । पयांसीवावसेतूनि देवसैन्यानि दुद्रुवुः ॥ ५ ॥

patitāṅgavyathārtāni prasravadrudhirāṇi ca | payāṃsīvāvasetūni devasainyāni dudruvuḥ || 5 ||

In pain from their fallen, wounded limbs, and streaming with blood, the armies of the gods fled, like water with no dam to hold it.

अपने गिरे और घायल अंगों की पीड़ा से तड़पते हुए और खून बहाते हुए, देवताओं की सेनाएँ भाग खड़ी हुईं, जैसे बिना बाँध के पानी बहता है।

4.27.6

दामव्यालकटास्तानि चिरमन्तर्हितानि च । अनुजग्मुर्लसन्नादसिन्धनानीव पावकाः ॥ ६ ॥

dāmavyālakaṭāstāni ciramantarhitāni ca | anujagmurlasannādasiṃdhanaānīva pāvakāḥ || 6 ||

For a long time the fleeing armies stayed hidden. Then Dama, Vyala and Kata went after them, roaring and blazing, like fires chasing after fuel.

देवताओं की सेनाएँ लंबे समय तक छिपी रहीं। फिर दाम, व्याल और कट उनके पीछे दौड़े, गरजते और जलते हुए, जैसे आग ईंधन के पीछे दौड़ती है।

4.27.7

अन्विष्टानपि यत्नेन नालभन्तासुराः सुरान् । घनजालवनोड्डीनान्सिंहा हरिणकानिव ॥ ७ ॥

anviṣṭānapi yatnena nālabhantāsurāḥ surān | ghanajālavanoḍḍīnānsiṃhā hariṇakāniva || 7 ||

Though the demons searched hard for the gods, they could not catch them, like lions that cannot catch fawns which have run off into a forest thick as a net.

असुरों ने देवताओं को बड़ी मेहनत से ढूँढा, पर वे उन्हें पकड़ नहीं पाए, जैसे शेर उन हिरन के बच्चों को नहीं पकड़ पाते जो जाल जैसे घने जंगल में भाग गए हों।

4.27.8

अलब्धेष्वमरौघेषु दामव्यालकटास्तदा । जग्मुः पातालकोशस्थं प्रभुं प्रमुदिताशयाः ॥ ८ ॥

alabdheṣvamaraurgheṣu dāmavyālakaṭāstadā | jagmuḥ pātālakośasthaṃ prabhuṃ pramuditāśayāḥ || 8 ||

When they could not catch the hosts of gods, Dama, Vyala and Kata went, glad at heart, to their lord, who stayed in his chamber deep in the underworld.

जब वे देवताओं के समूह को पकड़ नहीं पाए, तो दाम, व्याल और कट खुश होकर अपने स्वामी के पास गए, जो पाताल में गहरे अपने कक्ष में रहता था।

4.27.9

अथ देवा विषण्णास्ते क्षणमाश्वास्य वै ययुः । जयोपायाय विजिता ब्रह्माणममितौजसम् ॥ ९ ॥

atha devā viṣaṇṇāste kṣaṇamāśvāsya vai yayuḥ | jayopāyāya vijitā brahmāṇamamitaujasam || 9 ||

Then the gods, sad and defeated, steadied themselves for a moment and went, to find a way to win, to Brahma, whose power has no limit.

तब देवता, उदास और हारे हुए, एक पल के लिए खुद को संभालकर, जीत का रास्ता ढूँढने के लिए ब्रह्मा के पास गए, जिनकी शक्ति की कोई सीमा नहीं है।

4.27.10

तेषामाविरभूद्ब्रह्मा रक्तरक्ताननश्रियाम् । सायं रक्तीकृताम्बूनामब्धीनामिव चन्द्रमाः ॥ १० ॥

teṣāmāvirabhūdbrahmā raktaraktānanaśriyām | sāyaṃ raktīkṛtāmbūnāmabdhīnāmiva candramāḥ || 10 ||

To them, their faces' beauty gone red, Brahma appeared, like the moon appearing over oceans whose waters had turned red in the evening.

उन देवताओं के लिए, जिनके चेहरों की रौनक लाल पड़ चुकी थी, ब्रह्मा वैसे ही प्रकट हुए जैसे शाम को लाल हुए समुद्र के पानी पर चाँद निकलता है।

4.27.11

प्रणम्य ते सुरास्तस्मा अनर्थं शम्बरेहितम्। सम्यक्प्रकथयामासुर्दामव्यालकटक्रमम्॥ ११॥

praṇamya te surāstasmā anarthaṃ śambarehitam | samyakprakathayāmāsurdāmavyālakaṭakramam || 11 ||

Bowing to him, the gods told him fully the disaster Shambara had brought about, the whole course of what Dama, Vyala and Kata had done.

देवताओं ने उन्हें प्रणाम करके, शंबर के लाए हुए संकट के बारे में पूरी बात बताई दाम, व्याल और कट ने जो कुछ किया था, वह सब कुछ।

4.27.12

तदाकर्ण्याखिलं ब्रह्मा विचार्य स विचारवित्। उवाचेदं सुरानीकमाश्वासनकरं वचः॥ १२॥

tadākṛṇyākhilaṃ brahmā vicārya sa vicāravit | uvācedaṃ surānīkamāśvāsanakaraṃ vacaḥ || 12 ||

Having heard all this, Brahma, who was skilled at weighing things, thought it over and spoke these comforting words to the army of gods.

यह सब सुनकर, ब्रह्मा ने, जो हर बात को अच्छी तरह परखना जानते थे, सोच-विचार करके देवताओं की सेना से यह ढाढ़स बंधाने वाली बात कही।

4.27.13

श्रीब्रह्मोवाच। शतवर्षसहस्रान्ते शम्बरेण हरेः करात्। मर्तव्यं समरेशस्य तत्कालं संप्रतीक्षताम्॥ १३॥

śrībrahmovāca | śatavarṣasahasrānte śambareṇa hareḥ karāt | martavyaṃ samareśasya tatkālaṃ saṃpratīkṣatām || 13 ||

Sri Brahma said: At the end of one hundred thousand years, Shambara, that lord of war, is bound to die at Vishnu's hand. Wait for that time.

श्री ब्रह्मा ने कहा एक लाख साल के बाद, वह युद्ध का स्वामी शंबर, विष्णु के हाथों मरेगा। तुम उस समय का इंतज़ार करो।

4.27.14

दामव्यालकटानेतानद्य त्वमरसत्तमाः। योधयन्तः पलायध्वं मायायुद्धेन दानवान्॥ १४॥

dāmavyālakaṭānetānadya tvamarasattamāḥ | yodhayaṃtaḥ palāyadhvaṃ māyāyuddhena dānavān || 14 ||

Today, best of the gods, fight these three, Dama, Vyala and Kata, but keep retreating, and use tricks and illusion against the demons.

हे श्रेष्ठ देवताओ, आज इन तीनों दाम, व्याल और कट से लड़ो, पर पीछे हटते रहो, और असुरों के खिलाफ छल और माया का इस्तेमाल करो।

4.27.15

युद्धाभ्यासवशादेषां मुकुराणामिवाशये। अहंकारचमत्कारः प्रतिबिम्बमुपैष्यति॥ १५॥

yuddhābhyāsavaśādeṣāṃ mukurāṇāmivāśaye | ahaṃkāracamatkāraḥ pratibimbamupaiṣyati || 15 ||

Through the habit of fighting again and again, in the minds of these three, as if on the surface of mirrors, a flash of ego will begin to show itself.

बार-बार लड़ने की आदत से, इन तीनों के मन में, दर्पण की सतह की तरह, अहंकार की चमक झलकने लगेगी।

4.27.16

गृहीतवासनास्त्वेते दामव्यालकटाः सुराः । सुजेया वो भविष्यन्ति लग्नजालाः खगा इव ॥ १६ ॥

gṛhītavāsanāstvete dāmavyālakaṭāḥ surāḥ | sujeyā vo bhaviṣyanti lagnajālāḥ khagā iva || 16 ||

But once these three, Dama, Vyala and Kata, have taken on habits, gods, you will find it easy to defeat them, like birds caught in a net.

पर एक बार जब इन तीनों दाम, व्याल और कट में आदतें बन जाएँगी, तो हे देवताओ, तुम्हारे लिए इन्हें हराना आसान हो जाएगा, जैसे जाल में फँसे पंछी।

4.27.17

अद्य त्ववासना ह्येते सुखदुःखविवर्जिताः । धैर्येणारीन्विनिघ्नन्तो देवा दुर्जयतां गताः ॥ १७ ॥

adya tvavāsanā hyete sukhaduḥkhavivarjitāḥ | dhairyēṇārīnvinighnanto dēvā durjayatāṃ gatāḥ || 17 ||

But today, since these three have no habits yet and feel neither pleasure nor pain, it is the gods who, by striking their enemies down with patience, will become impossible to defeat.

पर आज, चूँकि इन तीनों में अभी कोई आदत नहीं बनी है और इन्हें न सुख महसूस होता है न दुख, इसलिए देवता ही धैर्य से अपने दुश्मनों पर वार करके अजेय बनेंगे।

4.27.18

वासनातन्तुबद्धा ये आशापाशवशीकृताः । वश्यतां यान्ति ते लोके रज्जुबद्धाः खगा इव ॥ १८ ॥

vāsanātantubaddhā yē āśāpāśavaśīkṛtāḥ | vaśyatāṃ yānti tē lōkē rajjubaddhāḥ khagā iva || 18 ||

Those who are tied by the thread of habit, and held captive by the rope of desire, become slaves in this world, like birds tied down by a cord.

जो लोग आदत के धागे से बंधे होते हैं, और इच्छा की रस्सी से जकड़े होते हैं, वे इस दुनिया में गुलाम बन जाते हैं, जैसे डोरी से बंधे पंछी।

4.27.19

ये भिन्नवासना धीराः सर्वत्रासक्तबुद्धयः । न हृष्यन्ति न कुप्यन्ति दुर्जयास्ते महाधियः ॥ १९ ॥

yē bhinnavāsanā dhīrāḥ sarvatrāsaktabuddhayaḥ | na hṛṣyanti na kupyanti durjayāstē mahādhiyaḥ || 19 ||

Those steady ones whose habits are broken, whose minds stay unattached to everything, who neither feel joy nor anger, those great minds cannot be defeated.

जिन धैर्यवान लोगों की आदतें टूट चुकी हैं, जिनका मन हर चीज़ से अनासक्त रहता है, जिन्हें न खुशी होती है न गुस्सा, वे महान मन वाले लोग अजेय होते हैं।

4.27.20

यस्यान्तर्वासनारज्ज्वा ग्रन्थिबन्धः शरीरिणः । महानपि बहुज्ञोऽपि स बालेनापि जीयते ॥ २० ॥

yasya antarvāsanārajjvā granthibandhaḥ śarīriṇaḥ | mahānapi bahujñō'pi sa bālēnāpi jīyatē || 20 ||

Whoever, though in a body, has an inner knot tied by the rope of habit, even if he is great, even if he knows a great deal, he is defeated even by a child.

जो कोई भी, शरीर में रहते हुए, आदत की रस्सी से भीतर की गाँठ बाँधे रहता है, चाहे वह कितना भी महान हो, चाहे उसे कितना भी ज्ञान हो, उसे एक बच्चा भी हरा सकता है।

4.27.21

अयं सोऽहं ममेदं तदित्याकल्पितकल्पनः। आपदां पात्रतामेति पयसामिव सागरः ॥ २१ ॥

ayaṃ so'haṃ mamedaṃ tadityākalpitakalpanaḥ| āpadāṃ pātratāmeti payasāmiva sāgaraḥ || 21 ||

A person who keeps thinking this is him, I am this, this is mine, that is his, becomes a home for troubles, just as the ocean becomes a home for every river's water.

जो आदमी बार-बार यही सोचता है कि यह वह है, मैं यह हूं, यह मेरा है, वह उसका है, वह मुसीबतों का घर बन जाता है, जैसे समुद्र हर नदी के पानी का घर बन जाता है।

4.27.22

इयन्मात्रपरिच्छिन्नो येनात्मा भव्यभावितःस सर्वज्ञोऽपि सर्वत्र परां कृपणतां गतः ॥ २२ ॥

iyanmātraparicchinno yenātmā bhavyabhāvitaḥsa sarvajño'pi sarvatra parāṃ kṛpaṇatāṃ gataḥ || 22 ||

A person who thinks of the self as shut inside this small body alone, even though that self truly knows everything, becomes utterly poor and helpless everywhere.

जो अपनी आत्मा को बस इस छोटे से शरीर तक सीमित मान लेता है, वह आत्मा सब कुछ जानने वाली होते हुए भी हर जगह पूरी तरह बेचारी और दीन बन जाती है।

4.27.23

अनन्तस्याप्रमेयस्य येनेयत्ता प्रकल्पिता। आत्मनस्तस्य तेनात्मा स्वात्मनैवावशीकृतः ॥ २३ ॥

anantasyāprameyasya yeneyattā prakalpitā| ātmanastasya tenātmā svātmanaivāvaśīkṛtaḥ || 23 ||

Whoever sets a limit on the self, which has no end and cannot be measured, ends up enslaving that very self by his own hand.

जो कोई अपनी आत्मा पर, जो असीम और अनमाप है, कोई सीमा बांध देता है, वह उसी आत्मा को अपने ही हाथों गुलाम बना लेता है।

4.27.24

आत्मनो व्यतिरिक्तं यत्किंचिदस्ति जगत्त्रये। यत्रोपादेयभावेन बद्धा भवतु वासना ॥ २४ ॥

ātmano vyatiriktaṃ yatkiñcidasti jagattraye| yatropādeyabhāvena baddhā bhavatu vāsanā || 24 ||

Whatever exists in the three worlds besides the self, let craving attach itself to that, seeing it as something worth having.

आत्मा के अलावा तीनों लोकों में जो कुछ भी है, वासना उसी से बंध जाए, यह सोचकर कि वह चीज़ पाने लायक है।

4.27.25

आस्थामात्रमनन्तानां दुःखानामाकरं विदुः। अनास्थामात्रमभितः सुखानामाकरं विदुः ॥ २५ ॥

āsthāmātramanantānāṃ duḥkhānāmākaraṃ viduḥ| anāsthāmātramabhitaḥ sukhānāmākaraṃ viduḥ || 25 ||

The wise know that simply caring too much about things is the source of endless troubles, and that not caring about anything, in every way, is the source of all happiness.

बुद्धिमान लोग जानते हैं कि चीज़ों की बहुत ज़्यादा परवाह करना ही अनगिनत दुखों की जड़ है, और किसी भी चीज़ की परवाह न करना ही, हर तरह से, सुख की जड़ है।

4.27.26

दामव्यालकटा यावदनास्था भवसंस्थितौ। तावन्न नाम जेयावो मशकानामिवानलाः ॥ २६ ॥

dāmavyālakaṭā yāvadanāsthā bhavasaṃsthitau | tāvann nāma jeyāvo maśakānāmivānalāḥ || 26 ||

As long as Dama, Vyala and Kata have no attachment to this worldly life, they cannot be beaten at all; they are like fire to a mosquito.

जब तक दाम, व्याल और कट सांसारिक जीवन से मोह नहीं रखते, तब तक उन्हें हराया नहीं जा सकता; वे मच्छर के लिए आग जैसे हैं।

4.27.27

अन्तर्वासनया जन्तुर्दीनतामनुयातया। जितो भवत्यन्यथा तु मशकोऽप्यमराचलः ॥ २७ ॥

antarvāsanayā janturdīnatāmanuyātayā | jito bhavatyanyathā tu maśako'pyamarācalaḥ || 27 ||

It is inner craving turned wretched that defeats a creature; without it, even a mosquito is as unshakeable as a mountain of the gods.

जो अंदरूनी वासना दीन-हीन बन जाती है, वही किसी जीव को हरा देती है, वरना उसके बिना तो मच्छर भी देवताओं के पहाड़ जैसा अडिग होता है।

4.27.28

विद्यते वासना यत्र तत्र सा याति पीनताम्। गुणो गुणिनि हि द्वित्वं सतो दृष्टं हि नासतः ॥ २८ ॥

vidyate vāsanā yatra tatra sā yāti pīnatām | guṇo guṇini hi dvitvaṃ sato dṛṣṭaṃ hi nāsataḥ || 28 ||

Wherever craving is allowed to exist, there it grows strong. A quality and its owner form a pair only when the owner truly exists; this pairing is seen only in the real, never in the unreal.

जहां वासना को बने रहने दिया जाता है, वहां वह और मजबूत होती जाती है। कोई गुण और उसका मालिक तभी जोड़ी बनाते हैं जब मालिक सच में मौजूद हो, यह जोड़ी सिर्फ सच्ची चीज़ में दिखती है, झूठी चीज़ में नहीं।

4.27.29

अयं सोऽहं ममेदं चेत्येवमन्तः सवासनम्। यथा दामादयः शक्र भावयन्ति तथा कुरु ॥ २९ ॥

ayaṃ so'haṃ mamedaṃ cetyeavamantaḥ savāsanam | yathā dāmādayaḥ śakra bhāvayanti tathā kuru || 29 ||

Thinking this is him, I am this, this is mine, that, deep inside, is craving. Indra, bring this about in your enemies the same way Dama and the others come to feel it.

यह वह है, मैं यह हूं, यह मेरा है, ऐसा सोचना ही अंदर की वासना है। हे इंद्र, जैसे दाम और बाकी ऐसा महसूस करने लगते हैं, वैसे ही अपने दुश्मनों में भी यह भावना पैदा करो।

4.27.30

या या जनस्य विपदो भावाभावदशाश्च याः। तृष्णाकरञ्जवल्ल्यास्ता मञ्जर्यः कटुकोमलाः ॥ ३० ॥

yā yā janasya vipado bhāvābhāvadaśāśca yāḥ | tṛṣṇākarañjavallyāstā mañjaryaḥ kaṭukomalāḥ || 30 ||

Whatever troubles come to a person, and whatever states of having and not having he passes through, all of these are the flower clusters of the karanja vine of craving, some bitter, some sweet.

इंसान पर जो भी मुसीबतें आती हैं, और पाने-खोने की जो भी हालत उसे झेलनी पड़ती है, ये सब तृष्णा की करंज बेल के फूलों के गुच्छे हैं, कुछ कड़वे, कुछ मीठे।

4.27.31

वासनातन्तुबद्धो यो लोको विपरिवर्तते । सा प्रवृद्धातिदुःखाय सुखायोच्छेदमागता ॥ ३१ ॥

vāsanātantubaddho yo loko viparivartate | sā pravṛddhātiduḥkhāya sukhāyocchedamāgatā || 31 ||

People who turn round and round in this world are tied by the thread of craving. When that thread grows thick, it brings great suffering; happiness comes only when that thread is cut.

इस दुनिया में घूमते फिरते लोग तृष्णा के धागे से बंधे हैं। जब यह धागा मोटा होता जाता है, तो बहुत दुख मिलता है, सुख तभी मिलता है जब यह धागा काट दिया जाए।

4.27.32

धीरोऽप्यतिबहुज्ञोऽपि कुलजोऽपि महानपि । तृष्णया बध्यते जन्तुः सिंहः शृङ्खलया यथा ॥ ३२ ॥

dhīro'pyatibahujño'pi kulajo'pi mahānapi | tṛṣṇayā badhyate jantuḥ siṃhaḥ śṛṅkhalayā yathā || 32 ||

Even a wise person, even a very learned person, even one born in a good family, even a great person, such a being is bound by craving, just as a lion is bound by a chain.

चाहे कोई कितना भी समझदार हो, कितना भी बड़ा विद्वान हो, कितने भी अच्छे खानदान का हो, कितना भी महान हो, तृष्णा उसे उसी तरह बांध लेती है जैसे जंजीर शेर को बांध देती है।

4.27.33

देहपादपसंस्थस्य हृदयालयगामिनः । तृष्णा चित्तखगस्येयं वागुरा परिकल्पिता ॥ ३३ ॥

dehapādapasaṃsthasya hṛdayālayagāminaḥ | tṛṣṇā cittakhagasyeyaṃ vāgurā parikalpitā || 33 ||

The mind is a bird that perches on the tree of the body and nests in the heart, and craving is the snare set to trap that bird.

मन एक पंछी है जो शरीर रूपी पेड़ पर बैठता है और दिल रूपी घोंसले में रहता है, और तृष्णा इसी पंछी को फंसाने के लिए बिछाया गया जाल है।

4.27.34

दीनो वासनया लोकः कृतान्तेनापकृष्यते । रज्ज्वेव बालेन खगो विवशो भृशमुच्छवसन् ॥ ३४ ॥

dīno vāsanayā lokaḥ kṛtāntenāpakṛṣyate | rajjveva bālena khago vivaśo bhṛśamucchavasan || 34 ||

A person made pitiful by craving is dragged off by Death, the way a child drags a bird tied with a string, helpless, gasping for breath.

तृष्णा से दीन-हीन बना इंसान मौत के हाथों घसीटा जाता है, जैसे कोई बच्चा डोरी से बंधी चिड़िया को घसीटता है, बेबस, हांफते हुए।

4.27.35

अलमायुधभारेण संगरभ्रमणेन च । वासनाया विपर्यासं युक्त्या यत्नाद्रिपोः कुरु ॥ ३५ ॥

alamāyudhabhāreṇa saṃgarabhramaṇena ca | vāsanāyā viparyāsaṃ yuktyā yatnādripoḥ kuru || 35 ||

Enough with heavy weapons and wandering around the battlefield. Use skill and effort to turn the enemy's own inner craving against him.

हथियारों के बोझ और युद्ध में इधर-उधर घूमने से क्या फायदा। चतुराई और मेहनत से दुश्मन की अपनी ही अंदरूनी वासना को उसके खिलाफ कर दो।

4.27.36

अन्तरा क्षुभिते धैर्ये रिपोरमरनायक । न शस्त्राणि न चास्त्राणि न शास्त्राणि जयन्ति च ॥ ३६ ॥

antarā kṣubhite dhairyē riporamaranāyaka | na śastrāṇi na cāstrāṇi na śāstrāṇi jayanti ca || 36 ||

Chief of the gods, unless the enemy's inner steadiness is shaken, no weapons, no missiles, and no war manuals can defeat him.

हे देवताओं के प्रमुख, जब तक दुश्मन का अंदरूनी धैर्य नहीं हिलता, तब तक न कोई हथियार, न कोई अस्त्र, न कोई युद्ध शास्त्र उसे हरा सकता है।

4.27.37

दामव्यालकटास्त्वेते युद्धाभ्यासवशेन च । अहंकारमयीं मत्तास्ते ग्रहीष्यन्ति वासनाम् ॥ ३७ ॥

dāmavyālakaṭāstvete yuddhābhyāsavaśena ca | ahaṃkāramayīṃ mattāste grahīṣyanti vāsanām || 37 ||

But these three, Dama, Vyala and Kata, through their repeated practice of battle, will grow intoxicated and take on a craving full of ego.

पर ये दाम, व्याल और कट लड़ाई के अभ्यास से मदमस्त होकर अहंकार से भरी वासना अपना लेंगे।

4.27.38

यदा तेऽत्यज्ञपुरुषाः शम्बरेण विनिर्मिताः । वासनामाश्रयिष्यन्ति तदा यास्यन्ति जेयताम् ॥ ३८ ॥

yadā te'tyajñapuruṣāḥ śambareṇa vinirmitāḥ | vāsanāmāśrayiṣyanti tadā yāsyanti jeyatām || 38 ||

When these utterly unaware beings, fashioned by Shambara, come to rely on inner craving, that is when they will become defeatable.

जब शम्बर द्वारा बनाए गए ये बिल्कुल अनजान प्राणी अंदरूनी वासना का सहारा लेने लगेंगे, तभी वे हराए जा सकेंगे।

4.27.39

तत्तावद्युक्तियुद्धेन तान्प्रबोधयतामराः । यावदभ्यासवशतो भविष्यन्ति सवासनाः ॥ ३९ ॥

tattāvadyuktiyuddhena tānprabodhayatāmarāḥ | yāvadabhyāsavaśato bhaviṣyanti savāsanāḥ || 39 ||

So, gods, keep provoking them with clever tactics rather than force, until, through repeated practice, they come to have this inner craving.

इसलिए हे देवताओ, ताकत की जगह चतुराई से उन्हें तब तक उकसाते रहो, जब तक बार-बार के अभ्यास से उनके अंदर यह वासना पैदा न हो जाए।

4.27.40

ततो वश्या भविष्यन्ति भवतां बद्धवासनाः । तृष्णाऽप्रोताशया लोके न च केचन पेलवाः ॥ ४० ॥

tatovashyā bhaviṣyanti bhavatāṃ baddhavāsanāḥ | tṛṣṇā'protaśayā loke na ca kecana pelavāḥ || 40 ||

Then, once bound by that inner craving, they will come under your control, because in this world, where every mind is strung together by craving, not even the frailest one is spared.

फिर, उस अंदरूनी वासना से बंधकर, वे तुम्हारे काबू में आ जाएंगे, क्योंकि इस दुनिया में, जहां हर मन तृष्णा के धागे से गुंथा हुआ है, कोई भी, चाहे कितना भी कमज़ोर हो, इससे बच नहीं पाता।

4.27.41

समविषममिदं जगत्समग्रं समुपनतं स्थिरतां स्ववासनान्तः। चलचललहरीभरो यथाब्धावत इह सैव चिकित्स्यतां प्रयाता ॥ ४१ ॥

samaviṣamamidaṃ jagatsamagraṃ samupanataṃ sthiratāṃ svavāsanāntaḥ| calacalalaharībharo yathābdhāvata iha saiva cikitsyatāṃ prayātā || 41 ||

This whole world, with all its ups and downs, settles down only when a person's own inner craving comes to an end, the way restless, ever moving waves settle in the ocean. So let this craving itself, now that it has surfaced, be treated right here.

यह पूरी दुनिया, अपने सारे उतार-चढ़ाव के साथ, तभी शांत होती है जब इंसान की अपनी अंदरूनी वासना खत्म हो जाती है, जैसे समुद्र में उठती-गिरती बेचैन लहरें तभी शांत होती हैं। इसलिए यह वासना, जो अब सामने आ चुकी है, यहीं ठीक की जाए।

Chapter 28

4.28.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्युक्त्वा भगवान्देवांस्तत्रैवान्तर्धिमाययौ । वेलावनितटे शब्दं कृत्वेवाम्बुतरङ्गकः ॥ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityuktvā bhagavāndevāṃstatraivāntardhimāyayau | velāvanitaṭe śabdaṃ kṛtvevāmbutaraṅgakaḥ || 1 ||

Vasishtha said: after saying this to the gods, the Lord vanished right there, the way a wave of water makes a sound on the shore of a grove by the sea, and then is gone.

वसिष्ठ जी ने कहा, यह बात देवताओं से कहकर भगवान वहीं गायब हो गए, जैसे समुद्र के किनारे किसी बगीचे में पानी की लहर आवाज़ करके गायब हो जाती है।

4.28.2

सुरास्त्वाकर्ण्य तद्वाक्यं जग्मुः स्वाभिमतां दिशम् । कमलामोदमादाय वनमालामिवानिलाः ॥ ॥ २ ॥

surāstvākarṇya tadvākyaṃ jagmuḥ svābhimatāṃ diśaṃ | kamalāmodamādāya vanamālāmivānilāḥ || 2 ||

Hearing those words, the gods went off, each to the direction he liked, the way winds carry off the fragrance of a lotus, as if carrying a garland of forest flowers.

यह बात सुनकर देवता अपनी-अपनी मनचाही दिशा में चले गए, जैसे हवाएँ कमल की खुशबू को उड़ा ले जाती हैं, मानो वन के फूलों की माला उड़ा रही हों।

4.28.3

दिनानि कतिचित्स्वेषु कान्तेषु स्थिरकान्तिषु । द्विरेफा इव पद्मेषु मन्दिरेषु विशश्रमुः ॥ ॥ ३ ॥

dināni katicitsveṣu kānteṣu sthirakāntiṣu | dvirephā iva padmeṣu mandireṣu viśaśramuḥ || 3 ||

For some days they rested in their own beloved homes, homes whose beauty never faded, the way bees rest inside lotus flowers.

कुछ दिनों तक वे अपने प्रिय घरों में आराम करते रहे, ऐसे घरों में जिनकी सुंदरता कभी कम नहीं होती थी, जैसे भौंरे कमल के फूलों में आराम करते हैं।

4.28.4

कंचित्कालं समासाद्य स्वात्मोदयकरं शुभम् । चक्रुर्दुन्दुभिनिर्घोषं प्रलयाभ्रवोपमम् ॥ ॥ ४ ॥

kaṃcitkālaṃ samāsādya svātmodayakaraṃ śubhaṃ | cakrurdudubhinirghoṣaṃ pralayābhra-ravopamam || 4 ||

When a certain time came, an auspicious time that would make their own side rise again, they sounded their war drums, a roar like the roar of the clouds at the end of the world.

जब एक खास समय आया, एक शुभ समय जो उनके अपने पक्ष को फिर ऊपर उठाने वाला था, तब उन्होंने अपने युद्ध के नगाड़े बजाए, ऐसी गरज जैसी प्रलय के बादलों की गरज होती है।

4.28.5

अथ दैत्यैर्ममाव्योम्नि तैः पातालतले स्थितैः । कालक्षेपकरं घोरं पुनर्युद्धमवर्तत ॥ ॥ ५ ॥

atha daityairmamāvyomni taiḥ pātālatale sthitaiḥ | kālakṣepakaraṃ ghoraṃ punaryuddhamavartata || 5 ||

Then a terrible battle, one that dragged on and on, broke out again between the daityas up in the great sky and those down in Patala, below the earth.

फिर एक भयानक युद्ध, जो देर तक खिंचता रहा, ऊपर बड़े आकाश में मौजूद दैत्यों और नीचे पाताल में मौजूद दैत्यों के बीच फिर से छिड़ गया।

4.28.6

ववुरसिशरशक्तिमुद्गरौघा मुसलगदापरशूग्रचक्रशङ्खाः अशनिगिरिशिलाहुताशवृक्षा अहिगरुडादिमुखानि चायुधानि ॥ ६ ॥

vavurasiśarśaktimudgaraūghā musalagadāparaśūgracakraśaṅkhāḥ aśanigiriśilāhutāśavṛkṣā ahigaruḍādimukhāni cāyudhāni || 6 ||

Swords, arrows, javelins, and clubs flew in torrents. So did maces, cudgels, axes, fierce discuses, and conch shells. So did thunderbolts, mountains, rocks, fire, and trees. So did weapons shaped like serpents, like Garuda the eagle, and other such forms.

तलवारें, तीर, बरछियाँ और मुद्गर धारा की तरह उड़ने लगे। साथ ही मूसल, गदाएँ, कुल्हाड़ियाँ, भयानक चक्र और शंख भी उड़े। साथ ही वज्र, पहाड़, चट्टानें, आग और पेड़ भी उड़े। साथ ही सांप के आकार के, गरुड़ पक्षी के आकार के और ऐसे ही और हथियार भी उड़े।

4.28.7

मायाकृतायुधमहाम्बुघनप्रवाहा क्षिप्रावहा प्रतिदिशं किल निर्जगाम पाषाणपर्वतमहीरुहलक्षवृक्षक्षुब्धाम्बुपूरघनघोषवती नदी द्राक् ॥ ७ ॥

māyākṛtāyudhamahāmbughanapravāhā kṣiprāvahā pratidiśaṃ kila nirjagāma pāṣāṇaparvatamahīruhalakṣavṛkṣakṣubdhāmbupūrghanaghōṣavatī nadī drāk || 7 ||

A great, thick flood of water made of magic-made weapons poured out fast in every direction, a river roaring loudly, its swollen water churned by rocks, mountains, and countless trees.

माया से बनाए हथियारों की एक बड़ी, घनी जल-धारा हर दिशा में तेज़ी से बह निकली, एक ऐसी नदी जो ज़ोर से गरजती थी, जिसका उफनता पानी पत्थरों, पहाड़ों और अनगिनत पेड़ों से मथा जा रहा था।

4.28.8

मध्यप्रवाहवहदुल्मुकशूलशैलप्रासासिकुन्तशरतोमरमुद्गरौघा गङ्गोपमाम्बुवलितामरमन्दिरेण सर्वासु दिक्ष्वशनिवर्षनिकर्षणेन ॥ ८ ॥

madhyapravāhavahadulmukaśūlaśailaprāsāsikuntaśaratomaramudgaraughā gaṅgopamāmbuvalitāmaramandireṇa sarvāsu dikṣvaśanivarṣanikarṣaṇena || 8 ||

In its middle current that river carried burning torches, spikes, mountains, spears, swords, lances, arrows, javelins, and clubs. Its water, like the Ganga's, swirled around the home of the gods, while thunderbolts rained down from every direction and drew everything toward it.

उस नदी की बीच की धारा में जलती मशालें, त्रिशूल, पहाड़, बरछे, तलवारें, बरछियाँ, तीर, भाले और मुद्गर बहते रहे। उसका पानी, गंगा के पानी जैसा, देवताओं के घर के चारों ओर घूमता रहा, जबकि हर दिशा से वज्र बरसते हुए सब कुछ अपनी ओर खींच रहे थे।

4.28.9

पृथ्व्यादिदारुणशरीरमपि प्रहारदानग्रहा गहनराशिशरीरकेव मायोपशाम्यति सुरासुरसिद्धसन्ना मायाकृतिः पुनरुदेति नचैव सैव ॥ ९ ॥

pṛthvyādidaaruṇaśarīramapi prahāradānagrahā gahanarāśiśarīrakeva māyopaśāmyati surāsurasiddhasannā māyākṛtiḥ punarudeti na caiva saiva || 9 ||

Even a fearsome body made of earth and the other elements, quick to strike blows, is only like a huge lump of matter. When the illusion behind it fades, worn out among gods, demons, and siddhas, that illusion-made shape does not rise again as the very same shape.

धरती और बाकी तत्वों से बना एक डरावना शरीर भी, जो वार करने में तेज़ हो, बस पदार्थ के एक बड़े ढेर जैसा ही है। जब उसके पीछे की माया मिट जाती है, देवताओं, दानवों और सिद्धों के बीच थककर, तो माया से बना वह रूप फिर से बिल्कुल वैसा ही बनकर नहीं उठता।

4.28.10

शैलोपमायुधविघट्टितभूधराणि रक्ताम्बुपूरपरिपूर्णमहार्णवानि । दैवासुरेन्द्रशवशैलविरूढकुन्ततालीवनानि ककुभां वदनानि चासन् ॥ १० ॥

śailopamāyudhavighaṭṭitabhūdharāṇi raktāmbupūraparipūrṇamahārṇavāni |
daivāsurendraśavaśailavirūḍhakuntatālīvanāni kakubhāṃ vadanāni cāsan || 10 ||

The four directions wore, as their faces, mountains broken by weapons as huge as mountains, great oceans brimming with floods of blood, and forests of spears grown thick like palm groves on mountains made of the corpses of the great chiefs of gods and demons.

चारों दिशाओं ने, अपने मुख के रूप में, पहाड़ों जैसे भारी हथियारों से टूटे हुए पहाड़, खून की बाढ़ से भरे विशाल समुद्र, और देवताओं तथा दानवों के बड़े सरदारों की लाशों के ढेरों पर खजूर के बाग़ जैसे घने उगे भालों के जंगल धारण किए।

4.28.11

उद्गीर्णकुन्तशरशक्तिगदासिचक्रहेलानिगीर्णसुरदानवमुक्तशैला । काषोल्लसत्क्रकचदन्तनखाग्रमाला जीवान्विता ह्यपतदायससिंहसृष्टिः ॥ ११ ॥

udgīrṇakuntaśaraśaktigadāsicakrahelānigīrṇasuradānavamuktashailā | kāṣollasatkrakacadantanakhāgramālā
jīvānvitā hyapatadāyasasiṃhasṛṣṭiḥ || 11 ||

Then a host of iron lions, as if alive, came crashing down. They spat out lances, arrows, spears, maces, swords, and discuses. They swallowed, without effort, the mountains that gods and demons had hurled at each other. Their teeth were like sharp saws, and rows of claws gleamed at their tips.

फिर लोहे के शेरों का एक झुंड, मानो जीवित हो, नीचे गिर पड़ा। वे भाले, तीर, बरछे, गदाएँ, तलवारें और चक्र उगल रहे थे। वे उन पहाड़ों को भी बिना किसी मेहनत के निगल जाते थे जिन्हें देवताओं और दानवों ने एक-दूसरे पर फेंका था। उनके दांत तेज़ आरी जैसे थे, और उनके पंजों की नोकों पर चमकती धार की कतारें थीं।

4.28.12

उज्ज्वाललोचनविषज्वलनातपौघदिग्दाहदर्शितयुगान्तदिनेशसेना ।
उड्डीयमानपरिदीर्घमहामहीध्रमग्नाब्धिवद्विषधरावलिरुल्ललास ॥ १२ ॥

ujjvālalocanaviṣajvalanātapaughadigdāhadarśitayugāntadineśasenā | uḍḍīyamānaparidīrghamahāmahīdhra
magnābdhivadviṣadharāvalirullalāsa || 12 ||

A mass of serpents rose up. The poison-fire blazing from their eyes scorched every direction with such heat that it looked like the many suns that appear at the end of an age. Long, huge mountains flew up along with them, as if a sunken ocean had risen to the surface.

सांपों का एक झुंड ऊपर उठा। उनकी आंखों से निकलती ज़हरीली आग की गर्मी ने हर दिशा को इतना झुलसा दिया कि लगा मानो युग के अंत में दिखने वाले कई सूरज निकल आए हों। उनके साथ लंबे, विशाल पहाड़ भी उड़ने लगे, मानो कोई डूबा हुआ समुद्र ऊपर आ गया हो।

4.28.13

उन्नादवज्रमकरोत्करकर्कशान्तःक्षुब्धाब्धिवीचिवलयैर्वलिताचलेन्द्रैः । आसीज्जगत्सकलमेव सुसंकटाङ्गमावृत्तिभिर्विविधहेतिनदीप्रवाहैः ॥ १३ ॥

unnādavajramakarotkarakarkaśāntaḥkṣubdhābdhivīcivalayairvalitācalendraiḥ | āsījjagatsakalameva susaṅkaṭāṅgamāvṛttibhirvividhahetinadīpravāhaiḥ || 13 ||

With the roaring, coiling waves of a churned ocean thick with crocodiles as hard as thunderbolts, twisted together with great mountains, and with rivers of every kind of weapon flowing and circling back again and again, the whole world became one tight, crowded space.

वज्र जितने कठोर मगरमच्छों से भरे मथे हुए समुद्र की गरजती, घुमावदार लहरों से, जो बड़े पहाड़ों में उलझी हुई थीं, और हर तरह के हथियारों की नदियों की धाराओं से, जो बार-बार बहकर घूम रही थीं, पूरी दुनिया एक तंग, भीड़ भरी जगह बन गई।

4.28.14

शैलास्त्रशस्त्रगरुडाचलचालितोच्चनागं महासुरगणाङ्गणमन्तरिक्षम् । आसीत्क्षणं जलधिभिः क्षणमग्निपूरैः पूर्णं क्षणं दिनकरैः क्षणमन्धकारैः ॥ १४ ॥

śailāstraśastragaruḍācalacālitoccana nāgaṃ mahāsuragaṇāṅgaṇamantarikṣam | āsītkṣaṇaṃ jaladhibhiḥ kṣaṇamagnipūraiḥ pūrṇaṃ kṣaṇaṃ dinakaraiḥ kṣaṇamandhakāraiḥ || 14 ||

The sky, now the battlefield of the great demon armies, full of tall serpent weapons shaken loose by mountain weapons and eagle weapons, was filled one moment with oceans, the next with floods of fire, the next with suns, and the next with darkness.

आकाश, जो अब दानवों की बड़ी सेनाओं का युद्धक्षेत्र बन गया था, ऊंचे सांप जैसे हथियारों से भरा था जो पहाड़ जैसे हथियारों और गरुड़ जैसे हथियारों से हिल रहे थे, एक पल समुद्रों से भर जाता, अगले पल आग की बाढ़ से, अगले पल सूरजों से, और अगले पल अंधेरे से।

4.28.15

गरुडगुडगुडाकुलान्तरिक्षप्रविसृतहेतिहुताशपर्वतौघैः । जगदभवदसह्यकल्पकाले ज्वलितसुरालयभूतलान्तरालम् ॥ १५ ॥

garuḍaguḍaguḍākulāntarikṣapravisṛtahetihutāśaparvataughaiḥ | jagadabhavadasahyakalpakāle jvalitasurālayabhūtalāntarālam || 15 ||

The sky was in an uproar, filled with the rumbling roar of Garuda weapons, and floods of fiery mountains and other weapons poured through it. The whole space between the homes of the gods and the surface of the earth caught fire and became as unbearable as at the end of an age.

आकाश में हलचल मच गई, वह गरुड़ हथियारों की गूंजती गरज से भर गया, और आग के पहाड़ों तथा अन्य हथियारों की बाढ़ उसमें बहने लगी। देवताओं के घरों और धरती की सतह के बीच का पूरा स्थान आग की लपटों में घिर गया और युग के अंत जैसा असहनीय हो गया।

4.28.16

उदपतन्नसुरावसुधातलाद्गगनमद्रितटादिव पक्षिणः । अतिबलादपतन्विबुधा भुवि प्रलयचालितशैलशिला इव ॥ १६ ॥

udapatannasurāvasudhātalādgaganamadritaṭādiva pakṣiṇaḥ | atibalādapatanvibudhā bhuvi pralayacālitśailaśilā iva || 16 ||

The demons flew up from the surface of the earth into the sky, like birds flying up from a mountain slope. And the gods, driven by great force, fell down to the earth, like rocks of a mountain shaken loose at the end of the world.

दानव धरती की सतह से आकाश की ओर उड़ गए, जैसे पक्षी किसी पहाड़ की ढलान से उड़ते हैं। और देवता, बड़े बल से टकराकर, धरती पर गिर पड़े, जैसे प्रलय के समय पहाड़ों से टूटकर गिरने वाली चट्टानें।

4.28.17

शरीररूढोन्नतहेतिवृक्षवनावलीलग्नमहाग्निदाहाः । सुरासुराः प्रापुरथाम्बरान्तः कल्पानिलान्दोलितशैलशोभाम् ॥ १७ ॥

śarīrarūḍhonnathetivṛkṣavanāvalīlagnamahāgnidāhāḥ | surāsurāḥ prāpurathāmbarāntaḥ kalpānilāndolitaśailaśobhām || 17 ||

Weapons had lodged all over the bodies of the gods and demons like a thick, tall grove of trees, and this grove now caught great fire and burned. Burning like this, gods and demons rose into the sky and looked like mountains swaying in the winds that blow at the end of an age.

देवताओं और दानवों के पूरे शरीर पर हथियार ऐसे धंस गए थे जैसे कोई घना, ऊंचा पेड़ों का जंगल हो, और अब यह जंगल भीषण आग पकड़कर जलने लगा। इस तरह जलते हुए, देवता और दानव आकाश में उठे और ऐसे लगे जैसे प्रलय के समय चलने वाली हवाओं में हिलते हुए पहाड़।

4.28.18

सुरासुराद्रीन्द्रशरीरमुक्तै रक्तप्रवाहैरभितो भ्रमद्भिः । बभार पूर्णं परितोऽम्बरोऽद्रेः संध्याकरौघक्षतमङ्ग गङ्गाम् ॥ १८ ॥

surāsurādrīndraśarīramuktai raktapravāhairabhito bhramadbhiḥ | babhāra pūrṇaṃ parito'mbaro'dreḥ saṃdhyākaraughakṣatamanga gaṅgām || 18 ||

Streams of blood, let loose from the bodies of the mountain-sized chiefs of gods and demons, wandered on every side. The sky, full all around with it, looked like the Ganga stained red by the glow of evening twilight.

देवताओं और दानवों के पहाड़ जैसे विशाल सरदारों के शरीर से निकला खून धाराओं में हर तरफ बहने लगा। आकाश, जो चारों ओर से इससे भर गया था, ऐसा लगा जैसे शाम की लालिमा से रंगी हुई गंगा।

4.28.19

गिरिवर्षणमम्बुवर्षणं विविधोग्रायुधवर्षणं तथा । विषमाशनिवर्षणं च ते सममन्योन्यमथाग्निवर्षणम् ॥ १९ ॥

girivarṣaṇamambuvarṣaṇaṃ vividhogrāyudhavarṣaṇaṃ tathā | viṣamāśanivarṣaṇaṃ ca te samamanyonyamathāgnivarṣaṇam || 19 ||

There was a rain of mountains, a rain of water, and a rain of many fierce weapons besides. There was a rain of terrible thunderbolts. And together, on each other, they rained fire.

पहाड़ों की बारिश हुई, पानी की बारिश हुई, और कई तरह के भयानक हथियारों की भी बारिश हुई। भयानक वज्रों की बारिश हुई। और सब मिलकर, एक-दूसरे पर, आग की बारिश करने लगे।

4.28.20

अनयन्नयमार्गकोविदा दलिताशेषगिरीन्द्रभित्तयः । ससृजुश्च समं समन्ततः करिकुम्भेष्विव पुण्यवर्षणम् ॥ २० ॥

anayannayamārgakovidā dalitāśeṣagirīndrabhittayaḥ | sasṛjuśca samaṃ samantataḥ karikumbheṣviva puṇyavarṣaṇam || 20 ||

Those skilled in the ways of strategy tore down the defenses of every mountain-like chief. Together, on every side, they poured out what looked like a sacred rain falling on the temples of elephants.

युद्ध की चालों में माहिर लोगों ने हर पहाड़ जैसे सरदार की रक्षा-दीवारें तोड़ डालीं। साथ में, हर तरफ, उन्होंने ऐसा बहाया जो हाथियों के मस्तक पर गिरती किसी पवित्र बारिश जैसा लगता था।

4.28.21

देवासुराः समरसंभ्रममाकुलास्ते अन्योन्यमङ्गदलनाकुलहेतिहस्ताः । नागेन्द्रडिम्भपृतनापृथुपीठपेषैः कीर्णश्रियो नभसि बभ्रमुरक्षिपन्तः ॥ २१ ॥

devāsurāḥ samarasaṃbhramamākulāste anyonyamaṅgadalanākulahētihastāḥ | nāgēndraḍimbha pṛtanāpṛthupīṭhapēṣaiḥ kīrṇaśriyo nabhasi babhramurakṣipantaḥ || 21 ||

The gods and demons, thrown into confusion by the whirl of battle, kept their hands busy tearing at each other's limbs with weapons. Their splendor scattered by the crushing weight of the huge armies of elephants, they roamed through the sky, hurling weapons at one another.

देवता और दानव, युद्ध की उथल-पुथल से घबराए हुए, अपने हाथों से हथियारों द्वारा एक-दूसरे के अंग काटने में व्यस्त रहे। हाथियों की विशाल सेनाओं के भारी दबाव से उनकी शोभा बिखर गई, और वे आकाश में एक-दूसरे पर हथियार फेंकते हुए घूमते रहे।

4.28.22

छिन्नैः शिरःकरभुजोरुभरैर्भ्रमद्भिराकाशकाष्ठशलभैरशिवैस्तदानीम् ।

आसीज्जगज्जठरमभ्रभरैरिवोग्रैराभास्करस्थगितदिक्तटशैलजालम् ॥ २२ ॥

chinnaiḥ śiraḥkarabhujorubharairbhramadbhirākāśakāṣṭhaśalabhairaśivais tadānīm |
āsījjagajjaṭharamabhrabharairivōgrairābhāskarasthagitadiktataśailajālam || 22 ||

At that time, cut-off heads, hands, arms, and thighs flew about everywhere, like a swarm of unlucky locusts filling the sky in every direction. The world turned as dark as the inside of a belly, as if covered by fierce, heavy clouds, with masses of mountains blocking out the sun on every side.

उस समय, कटे हुए सिर, हाथ, बाहें और जांघें हर तरफ उड़ने लगीं, जैसे अशुभ टिड्डियों का झुंड हर दिशा में आकाश को भर दे। दुनिया पेट के अंदर जैसी अंधेरी हो गई, मानो भारी, डरावने बादलों से ढकी हो, और पहाड़ों के ढेर हर तरफ सूरज को ढक रहे थे।

4.28.23

रटद्भटास्फोटकटिस्फुटद्भिः समीरितैर्हेतिकलासितौघैः । परस्पराघातहतैः पतद्भिर्जगाम शीर्णा दलशो धरित्री ॥ २३ ॥

raṭadbhāṭāsphoṭakaṭisphuṭadbhiḥ samīritairhētikalāsitaughaiḥ | parasparāghātahataiḥ patadbhiḥ jagāma śīrṇā dalaśo dharitrī || 23 ||

Warriors roared and slapped their arms, and under the blows they burst apart at the waist. Showers of bright, broken weapon pieces filled the air. Bodies fell everywhere, struck down by each other's blows, and the earth itself crumbled to pieces.

योद्धा गरजते और अपनी भुजाएँ थपथपाते, और चोटों से उनकी कमर टूटकर बिखर जाती। चमकते, टूटे हथियारों के टुकड़ों की बौछार हवा में भर गई। शव हर तरफ गिरते रहे, एक-दूसरे की चोटों से मारे गए, और धरती खुद टुकड़ों में बिखर गई।

4.28.24

अन्योन्यमायुधशिलाचलवृक्षवर्षैर्मेरुप्रमाणकठिनाङ्गनिघर्षणैश्च । आसीद्रणं चटचटास्फुटदन्तरिक्षं कल्पक्षयान्तमिव भीमभरोग्रनादैः ॥ २४ ॥

anyonyamāyudhaśilācalavṛkṣavarṣairmerupramāṇakaṭhināṅganigharṣaṇaiśca | āsīdraṇaṃ caṭacaṭāsphuṭadantarikṣaṃ kalpakṣayāntamiva bhīmabharōgranādaiḥ || 24 ||

With mutual showers of weapons, rocks, mountains, and trees, and with bodies as hard and huge as Mount Meru grinding against each other, the battle grew so fierce that the sky cracked with a crackling sound, amid heavy, terrible roars, like the very end of the world's destruction.

हथियारों, चट्टानों, पहाड़ों और पेड़ों की आपसी बौछार से, और मेरु पर्वत जितने कठोर और विशाल शरीरों के आपस में रगड़ खाने से, युद्ध इतना भयंकर हो गया कि आकाश कड़कड़ाहट की आवाज़ के साथ फटने लगा, भारी, डरावनी गर्जनाओं के बीच, मानो सृष्टि के विनाश का अंत हो।

4.28.25

मत्तानिलक्षुब्धजलानलार्कदलद्वयं दीर्घसुरासुरौघम्। ब्रह्माण्डमाखण्डितकुड्यकोणसकालकल्पान्तकरालमासीत्॥ २५॥

mattānilakṣubdhajalānalārkadaladvayaṃ dīrghasurāsuraugham |
brahmāṇḍamākhaṇḍitakuḍyakoṇasakālakalpāntakarālamāsīt || 25 ||

The universe, split into two by water, fire, and sun all whipped up by raging winds, and filled with the long, unending flood of gods and demons, became as terrible, its outer walls still whole, as Time itself at the end of an age.

यह ब्रह्मांड, उग्र हवाओं से उकसाए गए पानी, आग और सूरज से दो हिस्सों में बंट गया, और देवताओं तथा दानवों की लंबी, न खत्म होने वाली बाढ़ से भर गया, और इतना भयानक हो गया, अपनी बाहरी दीवारें अब भी साबुत रहते हुए भी, जितना युग के अंत में स्वयं काल होता है।

4.28.26

भ्रान्तैर्भृशं भरितदिक्तटमद्रिकूटैरात्मप्रमाणघनहेतिहतै रणद्भिः कूजद्भिरार्तिभिरिवोग्रगुहोच्चवातैः क्रन्दद्भिरापतितसिंहरवैरदभ्रैः॥ २६॥

bhrāntairbhṛśaṃ bharitadiktaṭamadrikūṭairātmapramāṇaghanahetihatai raṇadbhiḥ
kūjadbhirārtibhirivograguhoccavātaiḥ krandadbhirāpatitasiṃharavairadabhraiḥ || 26 ||

Mountain peaks, struck down by weapons as huge as themselves, went whirling everywhere, filling the whole horizon on every side. They roared and groaned like cries of pain, like fierce winds howling out of caves, mixed with the many roars of lions falling from the sky, crying out.

पहाड़ों की चोटियाँ, अपने जितने ही विशाल हथियारों से टकराकर, हर तरफ घूमने लगीं और पूरे क्षितिज को भर दिया। वे दर्द भरी चीखों जैसी गरज और कराह करती थीं, जैसे गुफाओं से निकलती तेज़ हवाएँ, और साथ ही आकाश से गिरते शेरों की चीखती दहाड़ें भी गूंजती थीं।

4.28.27

मायानदीजलधियोधघनाग्निदाहैर्वृक्षैः सुरासुरशवैरचलैः शिलोच्चैः। भ्रान्तेः
शरासिशितशक्तिगदास्त्रशस्त्रैर्वातावकीर्णवनपर्णवदन्तरन्तः॥ २७॥

māyānadījaladhiyodhaghanāgnidāhairvṛkṣaiḥ surāsurśavairacalaiḥ śiloccaiḥ | bhrānteḥ
śarāsiśitaśaktigadāstrśastrairvātāvakīrṇavanaparṇavadantarantraḥ || 27 ||

Warriors burned in the fierce fire of that illusion-born river-ocean. Amid trees, the corpses of gods and demons, mountains, and towering rocks, and amid the whirling confusion of arrows, swords, sharp spears, maces, and other weapons, their insides were scattered by the wind like forest leaves.

योद्धा उस माया से बनी नदी-समुद्र की भीषण आग में जलते रहे। पेड़ों, देवताओं और दानवों की लाशों, पहाड़ों और ऊंची चट्टानों के बीच, और तीर, तलवार, तेज़ भाले, गदा तथा अन्य हथियारों की उथल-पुथल भरी अफरा-तफरी के बीच, उनकी अंतड़ियाँ हवा में वन के पत्तों की तरह बिखर गईं।

4.28.28

अद्रीन्द्रपक्षपरिमाणगमाक्षमोक्तदुर्वारहस्तिबलदारुणदेहकैर्द्राक् ।
आसीत्पतद्भटशरीरगिरीन्द्रवातविभ्रष्टदेवपुरपूर्णजलार्णवौघम् ॥ २८ ॥

adrīndrapakṣaparimāṇagamākṣamoktadurvārahastibaladāruṇadehakairdrāk |
āsītpatadbhaṭaśarīragirīndravātavibhraṣṭadevapurapūrṇajalārṇavaugham || 28 ||

Bodies as strong as unstoppable elephants, so huge and heavy that they could barely move, as vast as the wings of the great mountains, fell fast. A great flood of ocean water rose, full of pieces broken loose from the city of the gods, carried on the wind along with the falling bodies of warriors and mountain-sized chiefs.

बेरोकटोक हाथियों जितने ताकतवर शरीर, इतने विशाल और भारी कि मुश्किल से हिल पाते थे, बड़े पहाड़ों के पंखों जितने विशाल, तेज़ी से गिरने लगे। समुद्र के पानी की एक बड़ी बाढ़ उठी, जो देवताओं के नगर से टूटकर गिरे टुकड़ों से भरी थी, और हवा के साथ योद्धाओं तथा पहाड़ जैसे सरदारों के गिरते शरीरों को भी बहा ले जा रही थी।

4.28.29

घनघुंघुमपूरितान्तरिक्षा क्षतजक्षालितभूधरा धरा च । रुधिरह्रदवृत्तिवर्तिनी वा भुवनाभोगगुहा तदाकुलाभूत् ॥ २९ ॥

ghanaghuṃghumapūritāntarikṣā kṣatajakṣālitabhūdharā dharā ca | rudhirahradavṛttivartinī vā
bhuvanābhogaguha tadākulābhūt || 29 ||

The sky filled with a deep, heavy rumbling sound, and the earth, its very mountains washed in blood, turned into something like a lake of blood. The whole wide world was thrown into confusion.

आकाश एक गहरी, भारी गड़गड़ाहट की आवाज़ से भर गया, और धरती, जिसके पहाड़ खून से धुल गए थे, मानो खून की एक झील बन गई। पूरी विशाल दुनिया उथल-पुथल में डूब गई।

4.28.30

अनन्तदृक्प्रसृतविकारकारिणी क्षयोदयोन्मुखसुखदुःखशंसिनी । रणक्रियासुरसुरघट्टसंकटा तदाभवत्खलु सदृशीह संसृतेः ॥ ३० ॥

anantadṛkprasṛtavikārakāriṇī kṣayodayonmukhasukhaduḥkhaśaṃsinī | raṇakriyāsurasuraghaṭṭasaṅkaṭā
tadābhavatkhalu sadṛśīha saṃsṛteḥ || 30 ||

Producing endless changes visible on every side, showing pleasure and pain rising and falling in turn, and made turbulent by the clashing acts of the battle between gods and demons, that scene truly became, right here, just like samsara, the round of worldly life.

हर तरफ दिखने वाले अनगिनत बदलावों को जन्म देते हुए, बारी-बारी से उठते-गिरते सुख और दुख को दिखाते हुए, और देवताओं तथा दानवों के युद्ध की टकराहट भरी हरकतों से उथल-पुथल भरा, वह दृश्य सचमुच यहीं, संसार के इस चक्र जैसा ही बन गया।

Chapter 29

4.29.1

श्रीवसिष्ठ उवाच एवंप्रायाकुलारम्भैरसुरैरसुहारिभिः सहसा हृतसंरब्धैरारब्धः सुमहान् रणः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca evaṃprāyākulārambhairasurairasuhāribhiḥ sahasā hṛtasaṃrabdhairārabdhaḥ sumahān raṇaḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said, the demons were deadly, and they attacked again and again in this same confused way. Suddenly enraged because something had been snatched from them, they started a very great war.

श्री वशिष्ठ ने कहा, असुर बड़े खतरनाक थे, और वे बार-बार इसी उलझी हुई तरह से हमला करते थे। अचानक उनसे कुछ छीन लिया गया, इस बात पर भड़ककर उन्होंने एक बहुत बड़ा युद्ध छेड़ दिया।

4.29.2

मायया॑थ विवादेन सन्धिना विग्रहेण च पलायनेन धैर्येण च्छन्नगोपायनेन च ॥ २ ॥

māyayātha vivādena sandhinā vigraheṇa ca palāyanena dhairyena cchannagopāyena ca || 2 ||

By trickery, then by argument, by treaty, by open battle, by running away, by staying patient, and by hiding to protect themselves,

छल से, फिर बहस से, संधि से, खुले युद्ध से, भाग जाने से, धैर्य धारण करने से, और छिपकर अपनी रक्षा करने से,

4.29.3

कार्पण्येनास्त्रयुद्धेन स्वान्तर्धानैश्च भूरिशः धृतः स संगरो देवैस्त्रिंशद्वर्षाणि पञ्चकम् ॥ ३ ॥

kārpaṇyenāstrayuddhena svāntardhānaiśca bhūriśaḥ dhṛtaḥ sa saṃgaro devaistriṃśadvṛṣāṇi pañcakam || 3 ||

by helpless pleading, by fighting with weapons, and often by making themselves vanish, the gods kept up that war for thirty five years.

दयनीय होकर गिड़गिड़ाने से, हथियारों से लड़कर, और बार-बार खुद को गायब कर लेने से, देवताओं ने उस युद्ध को पैंतीस वर्षों तक चलाए रखा।

4.29.4

वर्षाणि दिवसान्मासान्दशाष्टौ सप्त पञ्च च वर्षाणि पेतुर्वृक्षाग्निहेत्येकाशनिभूभृताम् ॥ ४ ॥

varṣāṇi divasānmāsāndaśāṣṭau sapta pañca ca varṣāṇi peturvṛkṣāgnihetyekāśanibhūbhṛtām || 4 ||

Eighteen, seven, and five, years, months, and days went by like this, vanishing the way a mountain's trees vanish in an instant when a single bolt of lightning sets them on fire.

अठारह, सात और पाँच, वर्ष, महीने और दिन इसी तरह बीत गए, जैसे किसी पहाड़ के पेड़ एक ही बिजली गिरने से लगी आग में पल भर में जलकर खाक हो जाते हैं।

4.29.5

एतावता तु कालेन दृढाभ्यासादहंकृतेः दामादयोऽहमित्यास्थां जगृहुर्ग्रस्तचेतसः ॥ ५ ॥

etāvatā tu kālena dṛḍhābhyāsādahaṃkṛteḥ dāmādayo'hamityāsthāṃ jagṛhurgraśtacetasaḥ || 5 ||

During all that time, by practicing the feeling of I again and again until it became firm, Dama and the others were overtaken in mind and settled into the belief I am.

इतने समय में, बार-बार मैं के भाव का अभ्यास करते करते, जब यह भाव पक्का हो गया, तो दाम और उसके साथियों का मन पूरी तरह उसी में डूब गया और उन्होंने मैं हूँ का दृढ़ विश्वास पकड़ लिया।

4.29.6

नैकट्यातिशयाद्यद्वद्दर्पणं बिम्बवद्भवेत् । अभ्यासातिशयात्तद्वत्ते साहंकारतां गताः ॥ ६ ॥

naikaṭyātiśayādyadvaddarpaṇaṃ bimbavadbhavet | abhyāsātiśayāttadvatte sāhaṃkāratāṃ gatāḥ || 6 ||

In the same way that something very close to a mirror makes the mirror look just like that thing's reflection, so with so much practice, they came to have a real ego.

जैसे कोई वस्तु आईने के बहुत पास होने पर आईना ठीक उसी की परछाईं जैसा दिखने लगता है, वैसे ही अत्यधिक अभ्यास से वे सचमुच अहंकारी हो गए।

4.29.7

यद्वद्दूरगतं वस्तु नादर्शे प्रतिबिम्बति । पदार्थवासना तद्वदनभ्यासान्न जायते ॥ ७ ॥

yadvaddūragataṃ vastu nādarśe pratibimbatī | padārthavāsanā tadvadanabhyāsānna jāyate || 7 ||

In the same way, just as a thing that is far away does not show its reflection in a mirror, a lasting impression about a thing does not form without practice.

उसी तरह, जैसे दूर पड़ी हुई चीज़ आईने में नहीं झलकती, वैसे ही किसी चीज़ का गहरा संस्कार बिना अभ्यास के नहीं बनता।

4.29.8

यदा दामादयो जाता अहंकारात्मवासनाः । तदा मे जीवितं मेऽर्थ इति दैन्यमुपागताः ॥ ८ ॥

yadā dāmādayo jātā ahaṃkārātmavāsanāḥ | tadā me jīvitaṃ me'rtha iti dainyamupāgatāḥ || 8 ||

When Dama and the others came to have this deep set feeling of ego and self, they fell into misery, thinking, this is my life, this is my wealth.

जब दाम और उसके साथियों में अहंकार और मैं का यह गहरा भाव बन गया, तो वे यह सोचकर दुखी हो गए कि यह मेरा जीवन है, यह मेरा धन है।

4.29.9

भववासनया ग्रस्ता मोहवासनया ततः । आशापाशनिबद्धास्ते ततः कृपणतां गताः ॥ ९ ॥

bhavavāsanayā grastā mohavāsanayā tataḥ | āśāpāśanibaddhāste tataḥ kṛpaṇatāṃ gatāḥ || 9 ||

Caught by the deep habit of thinking of worldly existence, and then by the deep habit of delusion, they were tied up in the rope of desire, and so they fell into complete wretchedness.

सांसारिक अस्तित्व की गहरी आदत में फँसकर, और फिर मोह की गहरी आदत में फँसकर, वे आशा की रस्सी से बँध गए, और इस तरह पूरी तरह दयनीय हो गए।

4.29.10

मुग्धेव ह्यनहंकारैर्ममत्वमुपकल्पितम् । रज्ज्वां भुजङ्गत्वमिव दामव्यालकटैस्ततः ॥ १० ॥

mugdheva hyanahaṃkārairmamatvamupakalpitam | rajjvāṃ bhujaṅgatvamiva dāmavyālakaṭaistataḥ || 10 ||

In just this deluded way, like mistaking a rope for a snake, Dama, Vyala, and Kata, who had no true self, built up in themselves a false sense of mine.

ठीक इसी भ्रम में, जैसे रस्सी को साँप समझ लिया जाए, दाम, व्याल और कट ने, जिनमें कोई असली अहंकार नहीं था, अपने भीतर मेरा पन का यह झूठा भाव बना लिया।

4.29.11

आपादमस्तको देहः कथं मे भवतु स्थिरः । ममेति तृष्णाकृपणा दीनतां ते समाययुः ॥ ११ ॥

āpādamastako dehaḥ kathaṃ me bhavatu sthiraḥ | mameti tṛṣṇākṛpaṇā dīnatāṃ te samāyayuḥ || 11 ||

How can this body of mine, from head to foot, stay unchanging forever, wretched with the craving of mine, they fell into deep misery.

यह मेरा शरीर, सिर से पैर तक, हमेशा के लिए स्थिर कैसे बना रहे, मेरा मेरा की इस लालसा में दयनीय होकर वे गहरे दुख में डूब गए।

4.29.12

स्थिरो भवतु मे देहः सुखायास्तु धनं मम । इति बद्धधियां तेषां धैर्यमन्तर्द्धिमाययौ ॥ १२ ॥

sthiro bhavatu me dehaḥ sukhāyāstu dhanaṃ mama | iti baddhadhiyāṃ teṣāṃ dhairyanantarddhimāyayau || 12 ||

Let my body stay unchanging, let my wealth bring me happiness, thinking this way, their minds tied down by such thoughts, their courage disappeared completely.

मेरा शरीर स्थिर बना रहे, मेरा धन मुझे सुख दे, ऐसा सोचते सोचते, उनका मन इसी विचार में बँध गया और उनका साहस पूरी तरह गायब हो गया।

4.29.13

सवासनत्वाद्वपुषामल्पसत्त्वात्सुरद्विषाम् । या तु प्रहारपरता मार्जितेवाशु साभवत् ॥ १३ ॥

savāsanatvādvapuṣāmalpasattvātsuradvīṣām | yā tu prahāraparatā mārjitevāśu sābhavat || 13 ||

Because their bodies had now taken on these deep habits, and because their strength had grown weak, the fierce eagerness these demons once had for striking in battle quickly disappeared, as if wiped clean away.

क्योंकि अब उनके शरीरों में ये गहरी आदतें बस गई थीं, और उनकी शक्ति कमज़ोर पड़ गई थी, इसलिए युद्ध में वार करने की जो तीव्र इच्छा इन असुरों में पहले थी, वह जल्दी ही मानो पूरी तरह मिट गई।

4.29.14

कथं सुरा जगत्यस्मिन्भवाम इति चिन्तया । विवशा दीनतां जग्मुः पद्मा इव निरम्भसः ॥ १४ ॥

kathaṃ surā jagatyasminbhavaām iti cintayā | vivaśā dīnatāṃ jagmuḥ padmā iva nirambhasaḥ || 14 ||

Thinking, how shall we demons go on living in this world, helpless, they fell into misery, the way lotuses become when they have no water.

हम असुर इस संसार में कैसे जीवित रहेंगे, ऐसा सोचकर, वे लाचार होकर वैसे ही दुखी हो गए जैसे बिना पानी के कमल होते हैं।

4.29.15

तेषां योषान्नपानेन स्वाहंकृतिमतां रतिः । बभूव भावभावस्था भीषणा भवभाजिनी ॥ १५ ॥

teṣāṃ yoṣānnapānena svāhaṃkṛtimatāṃ ratiḥ | babhūva bhāvabhāvasthā bhīṣaṇā bhavabhājinī || 15 ||

Now that they had this sense of ego, they took pleasure in women, food, and drink, a pleasure that stayed through every state of mind, a fearful pleasure bound up with the cycle of worldly life.

अब जब उनमें यह अहंकार आ गया था, तो वे स्त्रियों, भोजन और पेय में सुख लेने लगे, एक ऐसा सुख जो हर मनःस्थिति में बना रहा, एक डरावना सुख जो सांसारिक जीवन के चक्र से जुड़ा हुआ था।

4.29.16

अथ तस्मिन्रणे भीत्या सापेक्षत्वमुपाययुः । मत्तेभघनसंरब्धे वने हरिणका इव ॥ १६ ॥

atha tasminraṇe bhītyā sāpekṣatvamupāyayuḥ | mattebhaghanasaṃrabdhe vane hariṇakā iva || 16 ||

Then, in that battle, out of fear, they began to think only of saving themselves, like young deer in a forest crowded and stirred up by rutting elephants.

फिर उस युद्ध में, डर के मारे, वे सिर्फ अपनी जान बचाने की सोचने लगे, जैसे मस्त हाथियों से भरे और उत्तेजित जंगल में हिरन के बच्चे करते हैं।

4.29.17

मरिष्यामो मरिष्याम इति चिन्ताहताशयाः । मन्दं मन्दं किल भ्रेमुः कुपितैरावणे रणे ॥ १७ ॥

mariṣyāmo mariṣyāma iti cintāhatāśayāḥ | mandaṃ mandaṃ kila bhremuḥ kupitairāvaṇe raṇe || 17 ||

Thinking, we shall die, we shall die, their hearts crushed by fear, they moved about slowly, slowly indeed, in that battle where the elephant Airavata raged in fury.

हम मर जाएंगे, हम मर जाएंगे, यही सोचते हुए, डर से कुचले हुए मन के साथ, वे उस युद्ध में धीरे धीरे, सचमुच बहुत धीरे धीरे घूमते रहे, जहाँ हाथी ऐरावत क्रोध में उग्र हो रहा था।

4.29.18

शरीरैकार्थिनां तेषां भीतानां मरणादपि । अल्पसत्त्वतया मूर्ध्नि कृतमेव परैः पदम् ॥ १८ ॥

śarīraikārthināṃ teṣāṃ bhītānāṃ maraṇādapi | alpasattvatayā mūrghni kṛtameva paraiḥ padam || 18 ||

Those demons cared only about saving their own bodies. They were so afraid of dying, and so lacking in courage, that the enemy soldiers actually put a foot on their heads.

उन राक्षसों को बस अपनी जान बचाने की पड़ी थी। वे मरने से इतना डर गए थे और उनमें इतनी कम हिम्मत थी कि दुश्मनों ने सच में उनके सिर पर पैर रख दिया।

4.29.19

अथ प्रम्लानसत्त्वास्ते हन्तुमग्रगतं भटम् । न शेकुरिन्धने क्षीणे हविर्दग्धुमिवाग्नयः ॥ १९ ॥

atha pramlānasattvāste hantumagragataṃ bhaṭam | na śekurindhane kṣīṇe havirdagdhumivāgnayaḥ || 19 ||

Then their courage faded away completely. They could not even kill the one enemy warrior standing right in front of them, like a fire that cannot burn the offering once its fuel has run out.

फिर उनकी सारी हिम्मत खत्म हो गई। वे अपने सामने खड़े दुश्मन के एक अकेले योद्धा को भी नहीं मार पाए, बिलकुल वैसे जैसे आग में लकड़ी खत्म हो जाए तो वह हवन सामग्री को भी नहीं जला पाती।

4.29.20

विबुधानां प्रहरतां मशकत्वमुपागताः । क्षतविक्षतसंघातास्तस्थुः सामान्यसद्भटाः ॥ २० ॥

vibudhānāṃ praharatāṃ maśakatvamupāgatāḥ | kṣatavikṣatasaṃghātāstasthuḥ sāmānyasadbhaṭāḥ || 20 ||

To the gods who were attacking them, these demons seemed no bigger than mosquitoes. Wounded and torn all over their bodies, the ordinary foot soldiers just stood there.

उन पर हमला कर रहे देवताओं के लिए ये राक्षस मच्छर जैसे लग रहे थे। पूरे शरीर पर घाव खाए और फटे हुए, आम सिपाही बस वहीं खड़े रह गए।

4.29.21

बहुनात्र किमुक्तेन मरणाद्भीतचेतसः । दैत्या देवेषु वलगत्सु दुद्रुवुः समराजिरात् ॥ २१ ॥

bahunātra kimuktena maraṇādbhītacetasaḥ | daityā deveṣu valagatsu dudruvuḥ samarājirāt || 21 ||

Why say any more about it? Their minds were full of fear of death. When the gods charged forward, the demons ran away from the battlefield.

इस बारे में ज्यादा क्या कहें। उनके मन में बस मौत का डर भरा था। जब देवता आगे बढ़े, तो राक्षस युद्ध के मैदान से भाग गए।

4.29.22

तेषु द्रवत्सु भीतेषु सर्वतो दानवादिषु । दामव्यालकटाख्येषु विख्यातेषु सुरालये ॥ २२ ॥

teṣu dravatsu bhīteṣu sarvato dānavādiṣu | dāmavyālakaṭākhyeṣu vikhyāteṣu surālaye || 22 ||

On every side, the Danava demons were fleeing in fear, among them the famous ones named Dama, Vyala, and Kata, well known in the home of the gods.

हर तरफ दानव राक्षस डर के मारे भाग रहे थे, उनमें दाम, व्याल और कट नाम के मशहूर राक्षस भी थे, जो देवताओं के घर में जाने-माने थे।

4.29.23

तद्दैत्यसैन्यं न्यपतद्विद्रुतं खादितस्ततः । कल्पान्तपवनोद्भूतं ताराजालमिवाभितः ॥ २३ ॥

taddaityasainyaṃ nyapatadvidrutaṃ khāditastataḥ | kalpāntapavanodbhūtaṃ tārājālamivābhitaḥ || 23 ||

That whole army of demons fell apart, routed and scattered everywhere, like a shower of stars stirred up by the wind at the end of the world.

राक्षसों की वह पूरी सेना हार कर बिखर गई और हर तरफ गिर पड़ी, बिलकुल वैसे जैसे प्रलय की आंधी में तारे बिखर कर गिरते हैं।

4.29.24

अमराचलकुञ्जेषु शिखराणां शिखासु च । तटेषु वारिराशीनां पयोदपटलेषु च ॥ २४ ॥

amarācalakuñjeṣu śikharāṇāṃ śikhāsu ca | taṭeṣu vārirāśīnāṃ payodapaṭaleṣu ca || 24 ||

They fell in the groves of the Mountain of the Gods, on the very tips of mountain peaks, on the shores of the oceans, and among banks of clouds.

वे देवताओं के पर्वत के बागों में, पहाड़ों की चोटियों की नोक पर, समुद्रों के किनारों पर, और बादलों के झुंड में जा गिरे।

4.29.25

सागरावर्तगर्तेषु श्वभ्रेषूद्यत्सरित्सु च । जङ्गलेषु दिगन्तेषु ज्वलत्सु विपिनेषु च ॥ २५ ॥

sāgarāvartagarteṣu śvabhreṣūdyatsaritsu ca | jaṅgaleṣu digānteṣu jvalatsu vipineṣu ca || 25 ||

They fell into the hollows of the ocean's whirlpools, into caves and pits, into rivers that were swelling, into desert lands at the far edges of the world, and into blazing forests.

वे समुद्र के भंवरों के गड्ढों में, गुफाओं और खड्डों में, उफनती नदियों में, दुनिया के छोर के रेगिस्तानों में, और धधकते जंगलों में जा गिरे।

4.29.26

तद्बाणोच्छिन्नदेशेषु ग्रामेषु नगरेषु च । अटवीषूग्रपक्षासु मरुभूमिदवाग्निषु ॥ २६ ॥

tadvāṇocchinnadeśeṣu grāmeṣu nagareṣu ca | aṭavīṣūgrapakṣāsu marubhūmidavāgniṣu || 26 ||

They fell in the lands torn apart by that arrow, in villages and cities, in wild rugged forests, and in the wildfires of the desert.

वे उस बाण से उजड़ी हुई जगहों में, गांवों और शहरों में, घने जंगली इलाकों में, और रेगिस्तान की दावानल में जा गिरे।

4.29.27

लोकालोकाचलान्तेषु पर्वतेषु ह्रदेषु च । आन्ध्रद्रविडकाश्मीरपारसीकपुरेषु च ॥ २७ ॥

lokālokācalānteṣu parvateṣu hradeṣu ca | āndhradraviḍakāśmīrapārasīkapureṣu ca || 27 ||

They fell at the edges of Mount Lokaloka, on mountains and in lakes, and in the cities of Andhra, Dravida, Kashmir, and Persia.

वे लोकालोक पर्वत की सीमाओं पर, पहाड़ों और झीलों में, और आंध्र, द्रविड़, कश्मीर और ईरान के शहरों में जा गिरे।

4.29.28

नानाम्भोधितरङ्गासु गङ्गाजलघटासु च । द्वीपान्तरेषु जालेषु जम्बूखण्डलतासु च ॥ २८ ॥

nānāmbhodhitaraṅgāsu gaṅgājalaghaṭāsu ca | dvīpāntareṣu jāleṣu jambūkhaṇḍalatāsu ca || 28 ||

They fell in the waves of many oceans, in the flooding waters of the Ganga, on distant islands, in tangled thickets, and among the vines of Jambu island.

वे कई समुद्रों की लहरों में, गंगा के उफनते पानी में, दूर के टापुओं पर, घनी झाड़ियों में, और जम्बू द्वीप की बेलों के बीच जा गिरे।

4.29.29

सर्वतः पर्वताकाराः पतितास्ते सुरारयः । विस्फोटिताङ्गचरणा विभिन्नकरबाहवः ॥ २९ ॥

sarvataḥ parvatākārāḥ patitāste surārayaḥ | visphoṭitāṅgacaraṇā vibhinnakarabāhavaḥ || 29 ||

Everywhere those enemies of the gods lay fallen, huge as mountains, their limbs and feet burst open, their hands and arms torn apart.

हर जगह देवताओं के वे दुश्मन गिरे पड़े थे, पहाड़ों जितने विशाल, उनके अंग और पैर फट गए थे, उनके हाथ और भुजाएं टूट कर अलग हो गई थीं।

4.29.30

शाखालग्नान्त्रतन्त्रीका मुक्तरक्तभरच्छटाः । व्यस्तशेखरमूर्धानो निष्क्रान्ताः कुपितेक्षणाः ॥ ३० ॥

śākhālagna antratantrikā muktaraktabharacchatāḥ | vyastashekharamūrdhāno niṣkrāntāḥ kupitekṣaṇāḥ || 30 ||

Their guts hung from tree branches like torn cords, streams of blood poured out of them, the crowns of their heads were knocked crooked. They had breathed their last, yet their eyes still burned with rage.

उनकी अंतड़ियां पेड़ों की डालियों पर टूटी हुई रस्सियों की तरह लटक रही थीं, उनके शरीर से खून की धारें बह रही थीं, उनके सिर के मुकुट टेढ़े हो गए थे। उनकी सांस निकल चुकी थी, फिर भी उनकी आंखों में गुस्सा भरा हुआ था।

4.29.31

सायुधा बलमायेषुच्छिन्नकङ्कटहेतयः । दूरापातविपर्यस्तपतन्नानायुधांशुकाः ॥ ३१ ॥

sāyudhā balamāyeṣucchinnakaṅkaṭahetayaḥ | dūrāpātaviparyastapatannānāyudhāṃśukāḥ || 31 ||

Though they still held their weapons, arrows charged with powerful magic cut through their armor and their weapons; their many weapons and banners, hurled from afar, came crashing down scattered and turned upside down.

हथियार हाथ में होते हुए भी, बड़ी माया से भरे बाणों ने उनके कवच और हथियार काट डाले; दूर से फेंके गए उनके तरह-तरह के हथियार और झंडे बिखर कर उलटे-पुलटे गिर पड़े।

4.29.32

कण्ठलम्बिशिरस्त्राणचटत्कारोग्रभीतयः । शिखाशतशिलाप्रोता देहभागविलम्बिनः ॥ ३२ ॥

kaṇṭhalambiśirastrāṇacaṭatkārograbhītayaḥ | śikhāśataśilāprotā dehabhāgavilambinaḥ || 32 ||

Their helmets hung loose from their necks, clattering with a fierce, dreadful sound. Pierced through by hundreds of jagged rocks, parts of their bodies hung dangling.

उनके हेलमेट गले से लटक कर तेज, डरावनी आवाज़ के साथ खड़खड़ा रहे थे। सैकड़ों नुकीले पत्थरों से शरीर छिदे हुए थे, और उनके शरीर के टुकड़े लटक रहे थे।

4.29.33

शाल्मल्युग्रदृढापातकटत्कण्टकसंकटाः । सुशिलाफलकास्फालशतधाशीर्णमस्तकाः ॥ ३३ ॥

śālmalyugradṛḍhāpātakaṭatkaṇṭakasaṃkaṭāḥ | suśilāphalakāsphālaśatadhāśīrṇamastakāḥ || 33 ||

They were caught among the sharp, unyielding thorns of the shalmali tree as they crashed down heavily, and their heads were smashed into a hundred pieces against hard flat rocks.

भारी होकर गिरते हुए वे शाल्मली पेड़ के तीखे, सख्त कांटों में फंस गए, और उनके सिर सख्त चट्टानों से टकरा कर सौ टुकड़ों में फूट गए।

4.29.34

सर्वं एव सकलायुधशस्त्रपातमात्रसमनन्तरमेव । दिक्षु नाशमगमन्नसुरेन्द्राः पांसवोऽम्बुदनिधौ पयसीव ॥ ३४ ॥

sarvaṃ eva sakalāyudhaśastrapātamātrasamanantaram eva | dikṣu nāśam agamannasurendrāḥ pāṃsavo'mbudanidhau payasīva || 34 ||

The instant every weapon struck home, all the demon chiefs, in every direction, were completely destroyed, like specks of dust vanishing into the waters of massed rain clouds.

जैसे ही सारे हथियारों की मार पड़ी, सभी राक्षस सरदार, हर दिशा में, पूरी तरह नष्ट हो गए, बिलकुल वैसे जैसे धूल के कण घने बादलों के पानी में गुम हो जाते हैं।

Chapter 30

4.30.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इति तुष्टेषु देवेषु दानवेषु हतेषु च । दामव्यालकटा दीना बभूवुर्भयविह्वलाः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | iti tuṣṭeṣu deveṣu dānaveṣu hateṣu ca | dāmavyālakaṭā dīnā babhūvurbhayavihvalāḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said that when the gods were satisfied and the demons had been killed, Dama, Vyala, and Kata were wretched, overcome with fear.

श्री वशिष्ठ ने कहा कि जब देवता खुश हो गए और राक्षस मारे जा चुके थे, तब दाम, व्याल और कट डर के मारे दुखी और बेहाल हो गए।

4.30.2

जज्वाल कुपितः क्वेति कल्पान्ताग्निरिव ज्वलन् । शम्बरः शमितानीको दामव्यालकटान्प्रति ॥ २ ॥

jajvāla kupitaḥ kveti kalpāntāgniriva jvalan | śambaraḥ śamitānīko dāmavyālakaṭānprati || 2 ||

Shambara, his army destroyed, blazed up in fury like the fire that burns at the end of an age, shouting where as he turned on Dama, Vyala, and Kata.

शंबर की सेना खत्म हो चुकी थी, इसलिए वह गुस्से में जल उठा, जैसे प्रलय की आग जलती है, और कहाँ हैं चिल्लाते हुए दाम, व्याल और कट की तरफ मुड़ा।

4.30.3

शम्बरस्य भयाद्गत्वा पातालमथ सप्तमम् । दामव्यालकटास्तस्थुस्त्यक्त्वाथ निजमण्डलम् ॥ ३ ॥

śambarasya bhayādgatvā pātālamatha saptamam | dāmavyālakaṭāstasthustyaktvātha nijamaṇḍalam || 3 ||

Out of fear of Shambara, Dama, Vyala, and Kata left their own domain and went to live in the seventh Patala, the world below the earth.

शंबर के डर से दाम, व्याल और कट अपना इलाका छोड़कर सातवें पाताल में जा बसे।

4.30.4

यमस्य किङ्करा यत्र ये कालत्रासनक्षमाः । कुतूहलेन तिष्ठन्ति नरकार्णवपालकाः ॥ ४ ॥

yamasya kiṅkarā yatra ye kālatrāsanakṣamāḥ | kutūhalena tiṣṭhanti narakārṇavapālakāḥ || 4 ||

There, Yama's servants, fierce enough to frighten Time itself, the keepers of the ocean of hell, stood watching with curiosity.

वहाँ यमराज के सेवक रहते थे, जो इतने भयानक थे कि काल को भी डरा सकते थे, और नरक के सागर की रखवाली करने वाले ये लोग कुतूहल से देखते खड़े थे।

4.30.5

ते तेषामथ यातानां दत्त्वा भयमभीरवः । चिन्ता इव घनाकाराः कुमारीश्च ददुः क्रमात् ॥ ५ ॥

te teṣāmatha yātānāṃ dattvā bhayamabhīravaḥ | cintā iva ghanākārāḥ kumārīśca daduḥ kramāt || 5 ||

Fearless themselves, they struck fear into those who had come, and then, one after another, gave them dark, cloud-formed maidens, like anxieties given a body.

वे खुद निडर थे, पर आने वालों को डरा दिया, और फिर एक के बाद एक उन्हें बादल जैसी घनी, काली लड़कियाँ दे दीं, जैसे मानो चिंता को ही शरीर मिल गया हो।

4.30.6

तैः सार्धं नीतवन्तस्ते तत्र दामादयोऽवधिम् । दशवर्षसहस्रान्तमात्तानन्तकुवासनाः ॥ ६ ॥

taiḥ sārdhaṃ nītavantaste tatra dāmādayo'vadhim | daśavarṣasahasrāntamāttānanantakuvāsanāḥ || 6 ||

With those maidens, Dama and the others spent a span there lasting ten thousand years, taking on endless bad desires.

उन लड़कियों के साथ दाम और उसके साथी वहाँ दस हज़ार साल तक रहे, और इस दौरान उनके मन में बुरी इच्छाएँ बढ़ती ही गईं।

4.30.7

इयं मे कामिनी कन्या ममेयं प्रभुतेति च । दुरूढस्नेहबन्धानां कालस्तेषां व्यवर्तत ॥ ७ ॥

iyaṃ me kāminī kanyā mameyaṃ prabhuteti ca | durūḍhasnehabandhānāṃ kālasteṣāṃ vyavartata || 7 ||

Thinking, this girl is my beloved, this power is mine, their time passed while they were bound by deep, tangled affection.

यह लड़की मेरी प्रिय है, यह अधिकार मेरा है, ऐसा सोचते हुए उनका समय बीत गया, क्योंकि वे गहरे मोह के बंधन में जकड़े हुए थे।

4.30.8

धर्मराजोऽथ तं देशं कदाचित्समुपाययौ । महानरककार्याणां विचारार्थं यदृच्छया ॥ ८ ॥

dharmarājo'tha taṃ deśaṃ kadācit samupāyayau | mahānarakakāryāṇāṃ vicārārthaṃ yadṛcchayā || 8 ||

Then one day Dharmaraja happened to arrive in that region, by chance, to look into the affairs of the great hells.

फिर एक दिन धर्मराज बड़े-बड़े नरकों का हाल देखने के लिए संयोग से उस जगह आ पहुँचे।

4.30.9

अपरिज्ञातमेनं ते धर्मराजं त्रयोऽसुराः । न प्रणेमुर्विनाशाय सामान्यमिव किङ्करम् ॥ ९ ॥

aparijñātamenaṃ te dharmarājaṃ trayo'surāḥ | na praṇemurvināśāya sāmānyamiva kiṅkaram || 9 ||

Not recognizing him, the three demons did not bow to Dharmaraja, treating him like an ordinary servant, and this brought about their ruin.

उन तीनों राक्षसों ने धर्मराज को पहचाना नहीं, और उन्हें एक मामूली सेवक समझकर प्रणाम नहीं किया, और यही उनके विनाश का कारण बन गया।

4.30.10

अथ वैवस्वतेनैते ज्वलितासूग्रभूमिषु । विहितभ्रूपरिस्पन्दमात्रेणैव निवेशिताः ॥ १० ॥

atha vaivasvatenaita jvalitāsūgrabhūmiṣu | vihitabhrūparispandamātreṇaiva niveśitāḥ || 10 ||

Then Vaivasvata, with nothing more than a flick of his eyebrow, threw them into fiercely blazing regions.

तब वैवस्वत ने सिर्फ अपनी भौंह हिलाकर उन्हें भयानक जलते हुए इलाकों में डाल दिया।

4.30.11

तत्र ते करुणाक्रन्दाः ससुहृद्दारबन्धवः । प्रदग्धाः पर्णविटपा वृक्षा इव वनानिलैः ॥ ११ ॥

tatra te karuṇākrandāḥ sasuhṛddārabandhavaḥ | pradagdhāḥ parṇaviṭapā vṛkṣā iva vanānilaiḥ || 11 ||

There they cried out in anguish, together with their friends, wives, and kin, and were burned up, like trees whose leaves and branches are burned by forest-fire winds.

वहाँ वे अपने दोस्तों, पत्नियों और रिश्तेदारों के साथ दुख से चिल्लाते हुए जल गए, जैसे जंगल की आग की हवा से पेड़ अपने पत्तों और डालियों समेत जल जाते हैं।

4.30.12

स्वया वासनया जातास्तयैव क्रूरया पुनः । बन्धकर्मकराकाराः किराता राजकिङ्कराः ॥ १२ ॥

svayā vāsanayā jātāstayaiava krūrayā punaḥ | bandhakarmakarākārāḥ kirātā rājakiṅkarāḥ || 12 ||

From that same cruel desire of their own, they were born again in the form of binding executioners, Kirata hunters, servants of the king.

उनकी अपनी उसी क्रूर इच्छा से वे फिर से जन्मे, इस बार बाँधने वाले जल्लादों के रूप में, यानी किरात शिकारी, जो राजा के सेवक थे।

4.30.13

तज्जन्माथ परित्यज्य जाताः श्वभ्रेषु वायसाः । तदन्ते गृध्रतां यातास्ततोऽपि शुक्लतां गताः ॥ १३ ॥

tajjanmātha parityajya jātāḥ śvabhreṣu vāyasāḥ | tadante gṛdhratāṃ yātāstatopi śuklatāṃ gatāḥ || 13 ||

Leaving that birth behind, they were born as crows in pits; at the end of that life they became vultures, and after that they turned white.

वह जन्म छोड़कर वे गड्ढों में कौवे बनकर जन्मे, उस जीवन के अंत में गिद्ध बने, और उसके बाद सफेद हो गए।

4.30.14

सूकरत्वं त्रिगर्तेषु मेषत्वं पर्वतेषु च । मगधेष्वथ कीटत्वं बभ्रुस्ते च कुबुद्धयः ॥ १४ ॥

sūkaratvaṃ trigarteṣu meṣatvaṃ parvateṣu ca | magadheṣvatha kīṭatvaṃ babhruste ca kubuddhayaḥ || 14 ||

Those of evil understanding then took the form of a boar in Trigarta, a sheep in the mountains, and after that an insect in Magadha.

फिर उन बुरी बुद्धि वालों ने त्रिगर्त में सुअर का, पहाड़ों में भेड़ का, और उसके बाद मगध में कीड़े का रूप धारण किया।

4.30.15

अनुभूयेतरामन्यां चित्रां योनिपरम्पराम् । अद्य मत्स्याः स्थिता राम काश्मीरारण्यपल्वले ॥ १५ ॥

anubhūyetarāmanyāṃ citrāṃ yoniparamparām | adya matsyāḥ sthitā rāma kāśmīrāraṇyapalvale || 15 ||

After passing through yet another strange chain of births, they now live as fish, Rama, in a pond in a forest in Kashmir.

और भी कई अजीब जन्मों से गुज़रने के बाद, हे राम, वे आज कश्मीर के जंगल के एक तालाब में मछली बनकर रह रहे हैं।

4.30.16

दावाग्निक्वथितालपालपपङ्ककल्पाम्बुपायिनः । न म्रियन्ते न जीवन्ति जरज्जम्बालजर्जराः ॥ १६ ॥

dāvāgnikvathitālpālpapaṅkakalpāmbupāyinaḥ | na mriyante na jīvanti jarajjambālajarjarāḥ || 16 ||

Drinking the little muddy water heated by wildfire, worn out by ancient slime, they neither die nor live.

जंगल की आग से गर्म हुआ थोड़ा सा गंदा पानी पीते हुए, पुराने कीचड़ से थके-हारे, वे न मरते हैं न जीते हैं।

4.30.17

विचित्रयोनिसंरम्भमनुभूय पुनःपुनः । भूत्वा भूत्वा पुनर्नष्टास्तरङ्गा जलधाविव ॥ १७ ॥

vichitrayonisaṃrambhamanubhūya punaḥpunaḥ | bhūtvā bhūtvā punarnāṣṭāstarangā jaladhāviva || 17 ||

Having gone through the turmoil of one strange birth after another, arising again and again, they perish again and again, like waves in the sea.

बार-बार अजीब-अजीब जन्मों की उथल-पुथल झेलते हुए, बार-बार जन्म लेकर वे बार-बार नष्ट हो जाते हैं, जैसे समुद्र में लहरें उठती और मिटती हैं।

4.30.18

भवजलधिगतास्ते वासनातन्तुनुन्नास्तृणमिव चिरमूढा देहरूपैस्तरङ्गैः । उपशममुपयाता राम नाद्याप्यनन्तं परिकलय महत्त्वं दारुणं वासनायाः ॥ १८ ॥

bhavajaladhigatāste vāsanātantununnāstṛṇamiva ciramūḍhā deharūpaisstarangaiḥ | upaśamamupayātā rāma nādyāpyanantaṃ parikalaya mahattvaṃ dāruṇaṃ vāsanāyāḥ || 18 ||

Fallen into the ocean of worldly existence, driven like a blade of straw by the thread of desire, carried for ages by wave after wave of bodies, they still have not found peace even today, Rama. Understand from this the boundless, terrible greatness of desire.

वे संसार रूपी सागर में गिर चुके हैं, इच्छा के धागे से ऐसे खींचे जा रहे हैं जैसे तिनका बहता है, और शरीर रूपी लहर-दर-लहर में बरसों से बहते जा रहे हैं, फिर भी हे राम, आज तक उन्हें शांति नहीं मिली। इससे समझ लो कि इच्छा कितनी असीम और भयानक बड़ी चीज़ है।

Chapter 31

4.31.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अतः प्रबोधाय तव वच्मि राम महामते । दामव्यालकटन्यायो मा तेऽस्त्विति तु लीलया ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ataḥ prabodhāya tava vacmi rāma mahāmate | dāmavyālakaṭanyāyo mā te'stviti tu līlayā || 1 ||

Sri Vasishtha said: So now, Rama of great wisdom, to wake you up I will tell you this, simply, so that what happened to Dama, Vyala, and Kata does not happen to you.

श्री वशिष्ठ बोले: इसलिए, हे महाबुद्धिमान राम, तुम्हें जगाने के लिए मैं अब यह बात आसानी से तुमसे कहता हूँ, ताकि दाम, व्याल और कट के साथ जो हुआ, वह तुम्हारे साथ न हो।

4.31.2

अविवेकानुसंधानाच्चित्तमापदमीदृशीम् । अनन्तभवदुःखाय परिगृह्णाति हेलया ॥ २ ॥

avivekānusandhānāccittamāpadamīdṛśīm | anantabhavaduḥkhāya parigṛhṇāti helayā || 2 ||

Because it follows a lack of good sense, the mind carelessly takes on trouble like this, and so brings upon itself endless suffering through birth after birth.

सही-गलत की समझ न रखने के कारण मन असावधानी से ऐसी मुसीबत मोल ले लेता है, और इस तरह वह बार-बार जन्म लेने के अनंत दुख को अपने ऊपर बुला लेता है।

4.31.3

क्व किलामरविध्वंसिशम्बरानीकनाथता । क्व तापतप्तजम्बालजालजर्जरमीनता ॥ ३ ॥

kva kilāmaravidhvaṃsiśambarānīkanāthatā | kva tāpataptajambālajālajarjarameenatā || 3 ||

Where indeed was that lordship over Shambara's army, the destroyer of the gods? And where, now, is this: a broken fish trapped in a mesh of mud scorched by heat.

कहाँ तो देवताओं का नाश करने वाले शम्बर की सेना का स्वामी होना, और कहाँ अब यह: गर्मी से तपे कीचड़ के जाल में टूटी-फूटी मछली बनकर रहना।

4.31.4

क्व धैर्यममरानीकविद्रावणकरं महत् । क्व किरातमहीपालक्षुद्रकिङ्कररूपता ॥ ४ ॥

kva dhairyamamarānīkavidrāvaṇakaraṃ mahat | kva kirātamahīpālakṣudrakiṅkararūpatā || 4 ||

Where was that great courage strong enough to rout the army of the gods? And where, now, is this: the shape of a lowly servant to a hunter-chieftain.

कहाँ तो वह महान साहस, जो देवताओं की सेना को खदेड़ देता था, और कहाँ अब यह: किसी शिकारी सरदार के तुच्छ सेवक का रूप।

4.31.5

क्व नाम निरहङ्कारचित्सत्त्वोदारधीरता । क्व मिथ्यावासनावेशादहङ्कारकुकल्पना ॥ ५ ॥

kva nāma nirahaṅkāracitsattvodāradhīratā | kva mithyāvāsanāveśādahaṅkārakukalpanā || 5 ||

Where indeed was that noble, steady wisdom of a pure mind free of ego? And where is this: the ugly, false idea of 'I,' born from being seized by false impressions.

कहाँ तो वह अहंकार-रहित शुद्ध चेतना की उदार और स्थिर बुद्धि, और कहाँ यह: झूठे संस्कारों की जकड़ में आकर बना 'मैं' का यह भद्दा, झूठा खयाल।

4.31.6

शाखाप्रतानगहना संसारविषमञ्जरी । अहङ्काराङ्कुरा देव समुदेतीयमातता ॥ ६ ॥

śākhāpratānagahanā saṃsāraviṣamañjarī | ahaṅkārāṅkurā deva samudetīyamātatā || 6 ||

This poisonous flower-cluster of worldly life, thick with branches and shoots, growing from the sprout of ego, rises up, O Rama, spreading wide.

अहंकार के अंकुर से फूटा हुआ, शाखाओं और टहनियों से घना यह संसार का विषैला फूलों का गुच्छा, हे राम, फैलता हुआ ऊपर उठता है।

4.31.7

अहङ्कारमतो राम मार्जयान्तः प्रयत्नतः । अहं न किंचिदेवेति भावयित्वा सुखी भव ॥ ७ ॥

ahaṅkāramato rāma mārjayāntaḥ prayatnataḥ | ahaṃ na kiñcideveti bhāvayitvā sukhī bhava || 7 ||

So, Rama, strive hard to wipe out this ego from within. Think, 'I am nothing at all,' and be happy.

इसलिए, हे राम, भीतर से अहंकार को पूरी कोशिश से मिटा दो। यह मानकर कि 'मैं कुछ भी नहीं हूँ', सुखी हो जाओ।

4.31.8

अहङ्काराम्बुदच्छन्नं परमार्थेन्दुमण्डलम् । रसायनमयं शीतमदृश्यत्वमुपागतम् ॥ ८ ॥

ahaṅkārāmbudacchannaṃ paramārthendumaṇḍalam | rasāyanamayaṃ śītamadṛśyatvamupāgatam || 8 ||

The moon-disc of highest truth, cool and full of nectar, has been hidden by the cloud of ego, and so has become invisible.

सबसे ऊँचे सत्य का वह चंद्रमा, जो शीतल है और अमृत से भरा है, अहंकार के बादल से ढक गया है, इसलिए अब दिखाई नहीं देता।

4.31.9

अहङ्कारपिशाचार्ता दामव्यालकटास्त्रयः । गताः सत्तामसन्तोऽपि मायामाहात्म्यदानवाः ॥ ९ ॥

ahaṅkārapiśācārtā dāmavyālakaṭāstrayaḥ | gatāḥ sattāmasanto'pi māyāmāhātmyadānavāḥ || 9 ||

Dama, Vyala, and Kata, these three, were gripped by the ghost of ego. They were not real, yet through the power of illusion they came to exist, as titans.

दाम, व्याल और कट, ये तीनों अहंकार के भूत की चपेट में थे। ये असल में थे ही नहीं, फिर भी माया की ताकत से इन्हें असली जैसा वजूद मिल गया, और ये दानव बन गए।

4.31.10

काश्मीरेषु महारण्यसरसीवनपल्वले । अद्य मत्स्याः स्थिता राम शैवाललवलालसाः ॥ १० ॥

kāśmīreṣu mahāraṇyasarasīvanapalvale | adya matsyāḥ sthitā rāma śaivālalavalālasāḥ || 10 ||

In Kashmir, today, in the marshy ponds of a great forest lake, fish are living, Rama, happy with scraps of moss.

आज कश्मीर में, एक बड़े जंगल की झील के दलदली गड्ढों में मछलियाँ रहती हैं, हे राम, और काई के टुकड़ों में खुश रहती हैं।

4.31.11

श्रीराम उवाच । नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः । ते ह्यसन्तः कथं सत्तां संपन्ना इति मे वद ॥ ११ ॥

śrīrāma uvāca | nāsato vidyate bhāvo nābhāvo vidyate sataḥ | te hyasanthḥ kathaṃ sattāṃ saṃpannā iti me vada || 11 ||

Sri Rama said: The unreal never comes to be, and the real never ceases to be. So tell me, how did Dama, Vyala, and Kata, unreal as they are, come to have real existence?

श्री राम बोले: जो असत् है उसका होना नहीं होता, और जो सत् है उसका न-होना नहीं होता। तो बताइए, दाम, व्याल और कट, जो असत् हैं, वे सत् कैसे बन गए?

4.31.12

श्रीवसिष्ठ उवाचएवमेतन्महाबाहो नासत्सम्भवति क्वचित्कदाचित्किंचिदप्येव बृहत्सम्पद्यते तनु ॥ १२ ॥

śrīvasiṣṭha uvācaevametanmahābāho nāsatsaṃbhavati kvacitkadācitkiṃcidapyeva bṛhatsaṃpadyate tanu || 12 ||

Sri Vasishtha said: It is just so, mighty-armed Rama. The unreal never comes into being, anywhere, at any time. Yet something small can indeed become huge.

श्री वशिष्ठ बोले: हे महाबाहु राम, यह ठीक ऐसा ही है। असत् कभी, कहीं भी अस्तित्व में नहीं आता। फिर भी कोई छोटी-सी बात सचमुच बहुत बड़ी बन जाती है।

4.31.13

किमसत्संस्थितं ब्रूहि किं तत्सद्वाथ संस्थितम्। सम्यङ्निदर्शनेनैव करिष्ये तव बोधनम् ॥ १३ ॥

kimasatsaṃsthitaṃ brūhi kiṃ tatsadvātha saṃsthitam | samyaṅnidarśanenaiva kariṣye tava bodhanam || 13 ||

Tell me, what do you consider fixed and settled as 'the unreal,' and what as 'the real'? I will explain it to you properly, with a fitting example.

बताओ, तुम किसे 'असत्' मानकर पक्का समझ बैठे हो, और किसे 'सत्'? मैं तुम्हें एक सही उदाहरण देकर ठीक से समझाऊँगा।

4.31.14

श्रीराम उवाच। सन्त एव स्थिताः सन्तो ब्रह्मन्वयमिमे किल। दामादयस्त्वसन्तोऽपि वक्षि सन्तः स्थिता इति ॥ १४ ॥

śrīrāma uvāca | santa eva sthitāḥ santo brahmanvayamime kila | dāmādayastvasanto'pi vakṣi santaḥ sthitā iti || 14 ||

Sri Rama said: Real beings, Brahmin, stand as real, we ourselves for instance. But you say that Dama and the rest, though unreal, stood there as if real.

श्री राम बोले: हे ब्राह्मण, जो सत् हैं वे सत् की तरह ही स्थित रहते हैं, जैसे हम स्वयं। पर आप कहते हैं कि दाम आदि, असत् होते हुए भी, सत् की तरह स्थित हो गए।

4.31.15

श्रीवसिष्ठ उवाच। यथा दामादयो राम स्थिता मायामया इति। असत्या एव सत्याभा मृगतृष्णाम्बुपूरवत् ॥ १५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathā dāmādayo rāma sthitā māyāmayā iti | asatyā eva satyābhā mṛgatṛṣṇāmbupūravat || 15 ||

Sri Vasishtha said: Dama and the others, Rama, stood there made of illusion, unreal, yet looking real, like the flood of water in a mirage.

श्री वशिष्ठ बोले: दाम और अन्य लोग, हे राम, माया से बने होकर वहाँ खड़े थे, असत् होते हुए भी सत् जैसे दिखते थे, जैसे मृगतृष्णा में पानी की धार दिखती है।

4.31.16

तथैवेमे वयमपि ससुरासुरदानवाः। असत्या एव वल्गामो याम आयाम एव च ॥ १६ ॥

tathaiveme vayamapi sasurāsuradānavāḥ | asatyā eva valgāmo yāma āyāma eva ca || 16 ||

In the same way, we too are unreal, along with the gods, the demons, and the titans; we move about, we go, we come, though none of it is real.

इसी तरह हम भी असत् ही हैं, देवताओं, असुरों और दानवों के साथ; हम चलते हैं, जाते हैं, आते हैं, फिर भी यह सब असत् है।

4.31.17

अलीकमेव त्वद्भावो मद्भावोऽलीकमेव च। अनुभूतोऽप्यसद्रूपः स्वप्ने स्वमरणं यथा॥ १७॥

alīkameva tvadbhāvo madbhāvo'līkameva ca | anubhūto'pyasadrūpaḥ svapne svamarṇaṃ yathā || 17 ||

Your existence is false, and my existence is equally false. Even though it is experienced, it has no real form, like experiencing one's own death in a dream.

तुम्हारा होना भी झूठ है, और मेरा होना भी झूठ है। अनुभव में आने पर भी इसका कोई सच्चा रूप नहीं है, जैसे सपने में अपनी ही मृत्यु का अनुभव होना।

4.31.18

मृतो बन्धुर्यथा स्वप्नेऽप्यनुभूतोऽप्यसन्मयः। मृतोऽयमिति चेज्ज्ञप्तिर्भवेदेवमिदं जगत्॥ १८॥

mṛto bandhuryathā svapne'pyanubhūto'pyasanmayaḥ | mṛto'yamiti cejjñaptirbhavadevamidaṃ jagat || 18 ||

Just as a relative who has died, though experienced in a dream and felt as real, is still unreal, even when the thought comes, 'he is dead,' so too is this world.

जैसे सपने में मरा हुआ कोई अपना, अनुभव में सच्चा लगने पर भी, असत् ही रहता है, चाहे यह खयाल भी आए कि 'यह मर गया', वैसा ही यह संसार भी है।

4.31.19

एषातिमूढविषय उक्तिरेव न राजते। अभ्यासेन विनोदेति नानुभूतेरपह्नवः॥ १९॥

eṣātimūḍhaviṣaya uktireva na rājate | abhyāsena vinodeti nānubhūterapahnavaḥ || 19 ||

For someone completely confused about this subject, this statement does not seem convincing. Through practice it becomes pleasant, but this does not deny that things are experienced.

जो व्यक्ति इस विषय में पूरी तरह से भ्रमित है, उसे यह बात ठीक नहीं जँचती। अभ्यास से यह सुखद हो जाती है, लेकिन इससे यह इनकार नहीं होता कि अनुभव होता तो है ही।

4.31.20

निश्चयोऽन्तःप्ररूढो यः संपन्नोऽभ्यसनं विना। नाशमायाति लोकेऽस्मिन्न कदाचन कस्यचित्॥ २०॥

niścayo'ntaḥprarūḍho yaḥ saṃpanno'bhyasanaṃ vinā | nāśamāyāti loke'sminna kadācana kasyacit || 20 ||

A firm conviction that has taken deep root within, arising even without practice, once it exists, never perishes for anyone, in this world, at any time.

जो दृढ़ निश्चय भीतर गहरी जड़ जमा चुका हो, और बिना किसी अभ्यास के भी पैदा हुआ हो, वह इस संसार में कभी, किसी का भी नष्ट नहीं होता।

4.31.21

इदं जगदसद्ब्रह्म सत्यमित्येव वक्ति यः। तमुन्मत्तमिवोन्मत्तो विमूढोऽपि हसत्यलम्॥ २१॥

idaṃ jagadasadbrahma satyamityeva vakti yaḥ | tamunmattamivonmatto vimūḍho'pi hasatyalaṃ || 21 ||

Whoever says, 'This world is unreal; Brahman alone is real,' at him, even a madman, however confused himself, laughs loudly, as if he too were mad.

जो कोई कहता है, 'यह जगत असत् है, ब्रह्म ही सत्य है', उस पर एक पागल आदमी भी, भले ही वह खुद कितना उलझा हुआ क्यों न हो, यह सोचकर खूब हँसता है कि यह भी पागल है।

4.31.22

अक्षीबक्षीवयोरैक्यं क्व किलेहाज्ञतज्ज्ञयोः । अन्धप्रकाशयोर्बोधे स्याच्छायातपयोरिव ॥ २२ ॥

akṣībakṣīvayoraiikyaṃ kva kilehājñatajjñayoḥ | andhaprakāśayorbodhe syācchāyātapayoriva || 22 ||

How, indeed, could there be any oneness between the blind and the seeing, between the ignorant and the knowing? In understanding, it would be like equating a blind man with light, or a shadow with sunshine.

अंधे और देखने वाले में, अज्ञानी और ज्ञानी में, भला एकता कैसे हो सकती है? समझ में यह वैसा ही होगा जैसे किसी अंधे को रोशनी के बराबर मान लेना, या छाया को धूप के बराबर मान लेना।

4.31.23

यत्नेनाप्यनुभूतोऽर्थः सत्ये कर्तुमपह्नवम् । अज्ञोऽन्तश्च न शक्नोति शवमाक्रमणं यथा ॥ २३ ॥

yatnenāpyanubhūto'rthaḥ satye kartumapahnavaṃ | ajño'ntaśca na śakroti śavamākramaṇaṃ yathā || 23 ||

Even with great effort, a thing that has already been experienced cannot be turned into a lie. Someone ignorant inside cannot manage this, just as one cannot truly conquer a corpse.

बहुत कोशिश करने पर भी, जो अनुभव हो चुका है उसे झूठा नहीं ठहराया जा सकता। भीतर से अज्ञानी व्यक्ति ऐसा नहीं कर पाता, ठीक जैसे कोई मुर्दे पर सच्ची जीत हासिल नहीं कर सकता।

4.31.24

ब्रह्म सर्वं जगदिति वक्तुं नाज्ञस्य युज्यते । तपोविद्याननुभवे स तदेवानुभूतवान् ॥ २४ ॥

brahma sarvaṃ jagaditi vaktuṃ nājñasya yujyate | tapovidyānanubhave sa tadevānubhūtavān || 24 ||

It is not right for an ignorant person to say, 'Brahman is everything, this world too is Brahman.' Only one who has gained that experience through discipline and knowledge has truly experienced it.

यह कहना कि 'ब्रह्म ही सब कुछ है, यह जगत भी ब्रह्म है', किसी अज्ञानी को शोभा नहीं देता। जिसने तप और ज्ञान से यह अनुभव पाया हो, उसी ने सचमुच इसे अनुभव किया है।

4.31.25

अबुद्धविषये ह्येषा राम वाक्प्रविराजते । बुद्धस्यास्मीति रूपेण किल नास्त्येव किंचन ॥ २५ ॥

abuddhaviṣaye hyeṣā rāma vākpravirājate | buddhasyāsmīti rūpeṇa kila nāstyeva kiṃcana || 25 ||

This talk of "I am" appears only where a person is not awake to the truth, Rama. In the one who is awake, there is truly no "I am" of that kind at all.

यह "मैं हूँ" वाली बात केवल वहीं दिखती है जहाँ इंसान सच्चाई को लेकर जागा नहीं है, हे राम। जो जाग चुका है, उसमें ऐसा कोई "मैं हूँ" सचमुच है ही नहीं।

4.31.26

ब्रह्मेवेदं परं शान्तमित्येवानुभवन्सुधीः । अपह्नवः स्वानुभूतेः कर्तुं तस्य क्व युज्यते ॥ २६ ॥

brahmevedaṃ paraṃ śāntamityevānubhavansudhīḥ | apahnavaḥ svānubhūteḥ kartuṃ tasya kva yujyate || 26 ||

The wise person feels, "This is Brahman itself, the highest, the peaceful one" — so how could it ever be right for him to deny what he himself has felt?

बुद्धिमान इंसान यही महसूस करता है, "यह तो ब्रह्म ही है, सबसे ऊँचा, शांत तत्व" — तो वह अपने इस अनुभव को झुठलाए, यह कैसे ठीक हो सकता है?

4.31.27

परस्माद्व्यतिरेकेण नाहमात्मनि किंचन । हेमनीवोर्मिकादित्वं न मय्यस्ति विशिष्टता ॥ २७ ॥

parasmādvyatirekeṇa nāhamātmani kiṃcana | hemanīvormikāditvaṃ na mayyasti viśiṣṭatā || 27 ||

Take away the highest reality, and there is nothing of "I" left in me at all. It is like gold and a ring made from it: the ring has no identity of its own apart from the gold, and I have no identity of my own apart from that highest reality.

सबसे ऊँचे तत्व को अलग कर दो, तो मुझमें "मैं" जैसा कुछ भी नहीं बचता। यह वैसा ही है जैसे सोना और उससे बनी अंगूठी: अंगूठी की सोने से अलग अपनी कोई पहचान नहीं होती, और मेरी भी उस सबसे ऊँचे तत्व से अलग अपनी कोई पहचान नहीं है।

4.31.28

भूतता व्यतिरेकेण मूढे नात्मनि किंचन । ऊर्म्यादिबुद्धौ हेमेव ज्ञे नास्ति परमार्थता ॥ २८ ॥

bhūtatā vyatirekeṇa mūḍhe nātmani kiṃcana | ūrmyādibuddhau hemeva jñe nāsti paramārthatā || 28 ||

Take away mere existence, and the confused person has nothing of his own left either. It is like gold and a ring made from it: for someone who truly understands, the ring's shape has no truth of its own — only the gold is real.

होने-भर को अलग कर दो, तो भ्रमित इंसान के पास भी अपना कुछ नहीं बचता। यह वैसा ही है जैसे सोना और उससे बनी अंगूठी: जो सच में समझता है उसके लिए अंगूठी के आकार का अपना कोई सच नहीं है — असली तो बस सोना ही है।

4.31.29

मिथ्याहंतामयो मूढः सत्यैकात्ममयः सुधीः । युज्यते न क्वचिन्नाम स्वभावापह्नवोऽनयोः ॥ २९ ॥

mithyāhaṃtāmayo mūḍhaḥ satyaikātmamayaḥ sudhīḥ | yujyate na kvacinnāma svabhāvāpahnavo'nayoḥ || 29 ||

The confused person is made entirely of the false sense of "I." The wise person is made entirely of the one true self. To deny the true nature of either one is never right, in any case.

भ्रमित इंसान पूरी तरह झूठी "मैं" की भावना से बना है। बुद्धिमान इंसान पूरी तरह उस एक सच्चे आत्मा से बना है। इन दोनों में से किसी के भी असली स्वभाव को झुठलाना कभी ठीक नहीं है।

4.31.30

यो यन्मयस्तस्य तस्मिन्युज्यतेऽपह्नवः कथम् । पुरुषस्य घटोऽस्मीति वाक्यमुन्मत्तमेव हि ॥ ३० ॥

yo yanmayastasya tasminyujyate'pahnavaḥ katham | puruṣasya ghaṭo'smīti vākyamunmattameva hi || 30 ||

Whoever is made of a certain thing — how can it be right to deny that thing in him? If a person says, "I am a pot," that is simply the talk of a madman.

जो जिस चीज़ से बना है, उसमें उस चीज़ को झुठलाना कैसे ठीक हो सकता है? अगर कोई कहे, "मैं एक घड़ा हूँ," तो यह बस एक पागल की बात है।

4.31.31

तस्मान्नेमे वयं सत्या नच दामादयः क्वचित् । असत्यास्ते वयं चेमे नास्ति नः खलु संभवः ॥ ३१ ॥

tasmānneme vayaṃ satyā na ca dāmādayaḥ kvacit | asatyāste vayaṃ ceme nāsti naḥ khalu saṃbhavaḥ || 31 ||

So we are not real, and neither are Dama and the others real anywhere. They are unreal, and we are unreal too — we truly have no origin at all.

इसलिए न तो हम असली हैं, और न ही दाम और बाकी कहीं असली हैं। वे भी झूठे हैं, और हम भी झूठे हैं — सच तो यह है कि हमारा कोई जन्म ही नहीं हुआ है।

4.31.32

सत्यं संवेदनं शुद्धं बोधाकाशं निरञ्जनम्। सत्यं सर्वगतं शान्तमस्त्यनस्तमयोदयम्॥ ३२॥

satyam saṃvedanaṃ śuddhaṃ bodhākāśaṃ nirañjanam | satyam sarvagataṃ śāntam astyanastamayodayam || 32 ||

What is real is pure awareness, the stainless space of knowing. What is real reaches everywhere and is at peace — it exists without ever rising or setting.

जो सच है वह शुद्ध चेतना है, जानने का वह निर्मल आकाश। जो सच है वह हर जगह मौजूद है और शांत है — वह बिना कभी उगे या डूबे बना रहता है।

4.31.33

सर्वं शान्तं च निःशून्यं न किंचिदिव संस्थितम्। तत्र व्योम्नि विभान्तीमा निजा भासोऽङ्ग सृष्टयः॥ ३३॥

sarvaṃ śāntaṃ ca niḥśūnyaṃ na kiṃcidiva saṃsthitam | tatra vyomni vibhāntīmā nijā bhāso'ṅga sṛṣṭayaḥ || 33 ||

Everything is at peace, and it is not empty — it stays there as if it were nothing at all. In that space, dear one, these creations shine as its own light.

सब कुछ शांत है, और वह खाली भी नहीं है — वह ऐसे टिका है मानो कुछ भी न हो। उसी आकाश में, हे प्रिय, ये सारी रचनाएँ उसी की अपनी रोशनी बनकर चमकती हैं।

4.31.34

यथा तैमिरिकाक्षस्य सहजा एव दृष्टयः। केशोण्ड्रकादिवद्भान्ति तथेमास्तत्र दृष्टयः॥ ३४॥

yathā taimirikākṣasya sahajā eva dṛṣṭayaḥ | keśoṇḍrakādivadbhānti tathemaḥstatra dṛṣṭayaḥ || 34 ||

Just as, for an eye with an eye-disease, its own natural sight shows things like floating hairs and specks, in the same way, these sights appear there.

जैसे आँख की किसी बीमारी में उस आँख को अपने-आप बाल जैसी लकीरें और धब्बे तैरते दिखते हैं, वैसे ही उस आकाश में ये सब दृश्य दिखते हैं।

4.31.35

स आत्मानं यथा वेत्ति तथानुभवति क्षणात्। चिदाकाशस्ततोऽसत्यमपि सत्यं तदीक्षणात्॥ ३५॥

sa ātmānaṃ yathā vetti tathānubhavati kṣaṇāt | cidākāśastato'satyamapi satyaṃ tadīkṣaṇāt || 35 ||

As the self knows itself, so it experiences things at once. Because the space of consciousness sees in a certain way, even what is unreal becomes real through that seeing.

आत्मा खुद को जैसा जानता है, वह वैसा ही तुरंत अनुभव करता है। चेतना का वह आकाश जिस तरह देखता है, उसी देखने से झूठी चीज़ भी सच बन जाती है।

4.31.36

न सत्यमस्ति नासत्यमिति तस्माज्जगत्त्रये। यद्यथा वेत्ति चिद्रूपं तत्तथोदेत्यसंशयम्॥ ३६॥

na satyamasti nāsatyamiti tasmājjagattraye | yadyathā vetti cidrūpaṃ tattathodetyasaṃśayam || 36 ||

In the three worlds, there is neither "real" nor "unreal" as such — whatever consciousness knows, in whatever way, that arises exactly that way, without doubt.

तीनों लोकों में न तो कुछ "सच" है और न कुछ "झूठ" — चेतना जिसे जिस तरह जानती है, वह ठीक उसी तरह प्रकट हो जाता है, इसमें कोई शक नहीं।

4.31.37

यथा दामादयस्तद्वदेवमभ्युदिता वयम् । सत्यासत्याः किमत्राङ्ग तान्प्रत्यपि विकल्पना ॥ ३७ ॥

yathā dāmādayastadvadevamabhyuditā vayam | satyāsatyāḥ kimatrāṅga tānpratyapi vikalpanā || 37 ||

Just as Dama and the others came to be that way, in the same way we too have come to be. Real or unreal — what does that matter here, dear one? The same uncertainty applies to them as well.

जैसे दाम और बाकी बने, वैसे ही हम भी बने हैं। यहाँ सच या झूठ कहने से क्या फर्क पड़ता है, हे प्रिय? वही उलझन उन पर भी लागू होती है।

4.31.38

अस्यानन्तस्य चिद्व्योम्नः सर्वगस्य निराकृतेः । चिदुदेति यथा यान्तस्तथा सा तत्र भात्यलम् ॥ ३८ ॥

asyānantasya cidvyomnaḥ sarvagasya nirākṛteḥ | cidudeti yathā yāntastathā sā tatra bhātyalam || 38 ||

This space of consciousness is endless, reaches everywhere, and has no shape. However an awareness rises within it and moves on, that is exactly how it shines forth there, fully.

चेतना का यह आकाश अनंत है, हर जगह फैला है, और उसका कोई आकार नहीं है। उसमें जो भी बोध जिस तरह उठता और आगे बढ़ता है, वह वहाँ ठीक उसी तरह पूरी तरह चमक उठता है।

4.31.39

यत्र दामादिरूपेण संवित्प्रकचिता स्वयम् । तथा सा तत्र संपन्ना तथाकारानुभूतितः ॥ ३९ ॥

yatra dāmādirūpeṇa saṃvitprakacitā svayam | tathā sā tatra saṃpannā tathākārānubhūtitaḥ || 39 ||

Where consciousness itself has shone out in the shape of Dama and the others, there it has become exactly that, through experiencing that shape.

जहाँ चेतना खुद दाम और बाकी जैसे किसी रूप में चमक उठती है, वहाँ वह उसी आकार का अनुभव करते हुए ठीक वही बन जाती है।

4.31.40

अस्मदादिस्वरूपेण संविद्यत्रोदिता स्वयम् । तथासौ तत्र संपन्ना तथाकारानुभूतितः ॥ ४० ॥

asmadādisvarūpeṇa saṃvidyatroditā svayam | tathāsau tatra saṃpannā tathākārānubhūtitaḥ || 40 ||

Where consciousness itself has arisen in the shape of "us" and the like, there it has become exactly that, through experiencing that shape.

जहाँ चेतना खुद "हम" जैसे किसी रूप में उठ खड़ी होती है, वहाँ वह उसी आकार का अनुभव करते हुए ठीक वही बन जाती है।

4.31.41

स्वस्वप्नप्रतिभासस्य जगदित्यभिधा कृता । चिद्व्योम्नो व्योमवपुषस्तापस्येव मृगाम्बुता ॥ ४१ ॥

svasvapnapratibhāsasya jagadityabhidhā kṛtā | cidvyomno vyomavapuṣastāpasyeva mṛgāmbutā || 41 ||

The name "world" has been given to the appearance of one's own dream. It belongs to the space of consciousness, whose very body is empty space — just as mirage-water belongs to the heat.

"संसार" नाम अपने ही सपने के दिखावे को दिया गया है। यह चेतना के उस आकाश का है, जिसका अपना शरीर ही खाली आकाश है — ठीक वैसे ही जैसे मृगतृष्णा का पानी गर्मी की वजह से दिखता है।

4.31.42

यत्र प्रबुद्धं चिद्व्योम तत्र दृश्याभिधा कृता । यत्र सुप्तं तु तेनैव तत्र मोक्षाभिधा कृता ॥ ४२ ॥

yatra prabuddhaṃ cidvyoma tatra dṛśyābhidhā kṛtā | yatra suptaṃ tu tenaiva tatra mokṣābhidhā kṛtā || 42 ||

Where the space of consciousness is awake, there it is given the name "the seen world." But where that same space is asleep, there it is given the name "liberation."

जहाँ चेतना का वह आकाश जागा हुआ है, वहाँ उसे "दिखने वाला संसार" नाम दिया जाता है। पर जहाँ वही आकाश सोया हुआ है, वहाँ उसे "मुक्ति" नाम दिया जाता है।

4.31.43

नच तत्क्वचिदासुप्तं न प्रबुद्धं कदाचन । चिद्व्योम केवलं दृश्यं जगदित्यवगम्यताम् ॥ ४३ ॥

naca tatkvacidāsuptaṃ na prabuddhaṃ kadācana | cidvyoma kevalaṃ dṛśyaṃ jagadityavagamyatām || 43 ||

And that space is truly never asleep anywhere, nor is it ever awake. It is simply the space of consciousness — understand that the seen world is just this and nothing else.

और वह आकाश सच में न तो कभी सोता है और न कभी जागता है। वह बस चेतना का आकाश है — समझ लो कि दिखने वाला संसार यही है, इससे अलग कुछ नहीं।

4.31.44

निर्वाणमेव सर्गश्रीः सर्गश्रीरेव निर्वृतिः । नानयोः शब्दयोरर्थभेदः पर्याययोरिव ॥ ४४ ॥

nirvāṇameva sargaśrīḥ sargaśrīreva nirvṛtiḥ | nānayoḥ śabdayorarthabhedaḥ paryāyayoriva || 44 ||

Liberation itself is the glory of creation, and the glory of creation itself is liberation. Between these two words, there is no difference in meaning — they are like two names for the same thing.

मुक्ति ही सृष्टि की शोभा है, और सृष्टि की शोभा ही मुक्ति है। इन दोनों शब्दों के मतलब में कोई फर्क नहीं है — ये तो एक ही चीज़ के दो नाम जैसे हैं।

4.31.45

परमार्थो जगदिति रूपं वेत्ति स्वयं स्वकम् । यथा तैमिरिकं चक्षुः केशोण्ड्रकमिवेक्षते ॥ ४५ ॥

paramārtho jagaditi rūpaṃ vetti svayaṃ svakam | yathā taimirikaṃ cakṣuḥ keśoṇḍrakamivekṣate || 45 ||

The highest reality itself knows its own form as "the world" — just as an eye with an eye-disease sees things like floating hairs and specks.

सबसे ऊँचा सत्य खुद ही अपने रूप को "संसार" के तौर पर जानता है — ठीक वैसे ही जैसे किसी बीमार आँख को बाल जैसी लकीरें और धब्बे दिखते हैं।

4.31.46

न तत्केशोण्ड्रकं किंचित्सा हि दृष्टिस्तथा स्थिता । नेदं दृश्यमिदं किंचिदित्थं चिद्व्योम संस्थितम् ॥ ४६ ॥

na tatkeśoṇḍṛkaṃ kiñcit sā hi dṛṣṭistathā sthitā | nedaṃ dṛśyamidaṃ kiñciditthaṃ cidvyoma saṃsthitam || 46 ||

Those hairs and specks are nothing at all — it is just the eyesight standing that way. In the same way, this seen world is nothing at all — it is just the space of consciousness standing this way.

वे बाल जैसी लकीरें और धब्बे असल में कुछ भी नहीं हैं — बस आँख की नज़र वैसी बनी होती है। उसी तरह, यह दिखने वाला संसार भी कुछ भी नहीं है — बस चेतना का आकाश इस तरह टिका हुआ है।

4.31.47

सर्वत्र सर्वमिदमस्ति यथानुभूतं नो किंचन क्वचिदिहास्ति न चानुभूतम्। शान्तं सदेकमिदमाततमित्थमास्ते संत्यक्तशोकभयमेदमतस्त्वमास्स्व ॥ ४७ ॥

sarvatra sarvamidamasti yathānubhūtaṃ no kiñcana kvacidihāsti na cānubhūtam | śāntaṃ sadekamidamātatamitthaṃmāste saṃtyaktaśokabhayamedamatastvamāssv || 47 ||

Everywhere, all this exists exactly as it is experienced; nothing here exists anywhere that has not been experienced. This one, peaceful, existing reality spreads out and stays just so. So, let go of grief and fear over this, and rest at peace.

हर जगह, यह सब कुछ ठीक वैसे ही मौजूद है जैसा इसे अनुभव किया गया है; यहाँ ऐसा कुछ भी कहीं नहीं है जिसे अनुभव न किया गया हो। यह एक, शांत, मौजूद सच्चाई फैली हुई है और बस ऐसे ही बनी रहती है। इसलिए इसे लेकर शोक और डर छोड़ दो, और शांति से रहो।

4.31.48

शिलोदराकारघनं प्रशान्तं महाचिते रूपमिदं स्वमच्छम्। नैवास्ति नास्तीति दृशौ क्वचित्तु यच्चास्ति तत्साधु तदेव भाति ॥ ४८ ॥

śilodarākāraghanaṃ praśāntaṃ mahācite rūpamidaṃ svamaccham | naivāsti nāstīti dṛśau kvacittu yaccāsti tatsādhu tadeva bhāti || 48 ||

This, its own form — solid like the inside of a rock, utterly calm, belonging to the great consciousness, pure and clear — cannot rightly be called either existing or not existing. But whatever truly is, that alone is real, and that alone shines.

यह अपना रूप — पत्थर के भीतरी हिस्से जैसा ठोस, पूरी तरह शांत, उस महान चेतना का, शुद्ध और साफ — न तो ठीक से "है" कहा जा सकता है और न "नहीं है"। पर जो सच में है, बस वही असली है, और वही चमकता है।

Chapter 32

4.32.1

श्रीराम उवाच । सतामप्यसतामेव बालयक्षपिशाचवत् । दामव्यालकटादीनां दुःखस्यान्तः कथं भवेत् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | satāmapyasatāmeva bālayakṣapiśācavat | dāmavyālakaṭādīnāṃ duḥkhasyāntaḥ kathaṃ bhavet || 1 ||

Rama said: Even real things can seem unreal, the way a child is scared of a yaksha or a ghost. So how can there ever be an end to the suffering of Dama, Vyala, Kata, and the others?

राम बोले, सच्ची चीज़ें भी कभी-कभी झूठी जैसी लग सकती हैं, जैसे कोई बच्चा यक्ष या भूत से डर जाता है। तो फिर दाम, व्याल, कट और बाकी सब का दुख कभी खत्म कैसे होगा?

4.32.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । दामव्यालकुटुम्बैस्तैस्तदैव यमकिङ्करैः । प्रार्थितेन यमेनोक्तमिदं शृणु रघूद्वह ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | dāmavyālakuṭumbais tais tadaiva yamakiṅkaraiḥ | prārthiten yamenoktam idaṃ śṛṇu raghūdvaha || 2 ||

Vasishtha said: The kinsmen of Dama and Vyala had by then become servants of Yama, the god of death. When they begged him, Yama said the following. Listen to it, O best of the Raghus.

वसिष्ठ बोले, दाम और व्याल के रिश्तेदार तब तक यमराज के सेवक बन चुके थे। जब उन्होंने यमराज से विनती की, तो यमराज ने यह बात कही। हे रघुकुल के श्रेष्ठ राम, इसे सुनो।

4.32.3

यदा वियोगमेष्यन्ति श्रोष्यन्ति च निजां कथाम् । दामादयस्तदा मुक्ता भविष्यन्तीत्यसंशयम् ॥ ३ ॥

yadā viyogameṣyanti śroṣyanti ca nijāṃ kathām | dāmādayastadā muktā bhaviṣyantītyasaṃśayam || 3 ||

When Dama and the others die and hear their own story told, they will then be freed. There is no doubt about this.

जब दाम और बाकी लोग मरेंगे और अपनी ही कहानी सुनेंगे, तभी वे मुक्त हो जाएंगे। इसमें कोई शक नहीं है।

4.32.4

श्रीराम उवाच । स्ववृत्तान्तमिमं कुत्र कदा कथयते कथम् । श्रोष्यन्ति भगवंस्ते वा वर्णयेदं यथाक्रमम् ॥ ४ ॥

śrīrāma uvāca | svavṛttāntamimaṃ kutra kadā kathayate katham | śroṣyanti bhagavaṃste vā varṇayedaṃ yathākramam || 4 ||

Rama said: Where, when, and how will this story of theirs be told, and where will they hear it, O Lord? Please tell it to me in order.

राम बोले, हे भगवन, उनकी यह कहानी कहां, कब और कैसे कही जाएगी, और वे इसे कहां सुनेंगे? कृपया मुझे यह सब क्रम से बताइए।

4.32.5

श्रीवसिष्ठ उवाच । काश्मीरेषु महापद्मसरसीतीरपल्वले । भूयोभूयोऽनुभूयैव मत्स्ययोनिपरम्पराम् ॥ ५ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kāśmīreṣu mahāpadmasarasītīrapalvale | bhūyobhūyo'nubhūyaiva matsyayoni paramparām || 5 ||

Vasishtha said: In Kashmir, in a marshy pool on the bank of a great lotus lake, after living again and again as fish,

वसिष्ठ बोले, कश्मीर में, एक बड़ी कमल-झील के किनारे एक दलदली गड्ढे में, बार-बार मछली की जिंदगी जीने के बाद,

4.32.6

आलोलिताशया लोलाः कालेन लयमागताः । तत्रैव पद्मसरसि ते भविष्यन्ति सारसाः ॥ ६ ॥

ālolitāśayā lolāḥ kālena layamāgatāḥ | tatraiva padmasarasi te bhaviṣyanti sārasāḥ || 6 ||

restless, their minds unsettled, when that fish life comes to its end in time, they will become cranes in that very lotus lake.

बेचैन मन लिए, जब समय आने पर उनकी वह मछली की जिंदगी खत्म होगी, तो वे उसी कमल-झील में सारस पक्षी बन जाएंगे।

4.32.7

तत्र कह्लारमालासु सरोजपटलीषु च । शैवालवरवल्लीषु तरङ्गवलनासु च ॥ ७ ॥

tatra kahlāramālāsu sarojapaṭalīṣu ca | śaivālavaravallīṣu taraṅgavalanāsu ca || 7 ||

There, among rows of white water lilies and clusters of lotuses, among fine trailing water weeds, and amid the winding of waves,

वहां, सफेद कुमुदिनी की कतारों और कमलों के झुंडों के बीच, बारीक बहती हुई जलीय बेलों के बीच, और लहरों की हलचल के बीच,

4.32.8

चलत्कुसुमदोलासु नीलोत्पललतासु च । सीकरौघाभ्रलेखासु शीतलावर्तवर्तिषु ॥ ८ ॥

calatkusumadolāsu nīlotpalalatāsu ca | sīkaraughābhralekhāsu śītalāvartavartiṣu || 8 ||

among flowers swaying like swings, among blue lotus vines, among streaks of mist like clouds, staying in cool whirlpools,

झूले की तरह झूलते फूलों के बीच, नीले कमल की बेलों के बीच, बादल जैसी दिखने वाली फुहार की धारियों के बीच, ठंडी भंवरों में रहते हुए,

4.32.9

सारसाः सरसंभोगान्भुक्त्वा भुवनभूषणाः । विहृत्य सुचिरं कालमलमागतशुद्धयः ॥ ९ ॥

sārasāḥ sarasambhogānbhuktvā bhuvanabhūṣaṇāḥ | vihṛtya suciraṃ kālamalamāgataśuddhayaḥ || 9 ||

the cranes, who were like ornaments to the world, having enjoyed the pleasures of the lake, and having played there for a very long time, will become pure enough,

वे सारस पक्षी, जो दुनिया के लिए गहनों जैसे थे, झील के सुखों को भोगकर और बहुत लंबे समय तक वहां खेलकर, इतने शुद्ध हो जाएंगे,

4.32.10

ते वियुक्ता भविष्यन्ति मुक्तये लब्धबुद्धयः । रजःसत्त्वतमांसीव भेदं प्राप्य यदृच्छया ॥ १० ॥

te viyuktā bhaviṣyanti muktaye labdhabuddhayaḥ | rajaḥsattvatamāṃsīva bhedaṃ prāpya yadṛcchayā || 10 ||

that, their understanding gained, they will separate from that body for the sake of freedom, the way rajas, sattva, and tamas separate from each other naturally, on their own.

कि समझ आ जाने पर, वे मुक्ति के लिए उस शरीर से अलग हो जाएंगे, ठीक वैसे ही जैसे रज, सत्व और तम अपने आप, बिना किसी कारण के, एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं।

4.32.11

काश्मीरमण्डलस्यान्तर्नगरं नगशोभितम् । नाम्नाधिष्ठानमित्येव श्रीमत्तस्य भविष्यति ॥ ११ ॥

kāśmīramaṇḍalasyāntarnagaraṃ nagaśobhitam | nāmnādhiṣṭhānamityeva śrīmattasya bhaviṣyati || 11 ||

Inside the region of Kashmir there will be a splendid city, adorned with mountains, known by the name Adhishthana.

कश्मीर के इलाके में एक शानदार शहर होगा, जो पहाड़ों से सजा होगा, जिसका नाम अधिष्ठान होगा।

4.32.12

प्रद्युम्नशिखरं नाम तस्य मध्ये भविष्यति । शृङ्गं लघु सरोजस्य कोशचक्रमिवोदरे ॥ १२ ॥

pradyumnaśikharaṃ nāma tasya madhye bhaviṣyati | śṛṅgaṃ laghu sarojasya kośacakramivodare || 12 ||

In the middle of that city there will be a hill named Pradyumna Peak, a small peak, like the seed pod in the heart of a lotus.

उस शहर के बीचोंबीच प्रद्युम्न शिखर नाम की एक छोटी पहाड़ी होगी, बिल्कुल वैसे जैसे कमल के फूल के बीच में उसका बीज-कोष होता है।

4.32.13

तस्य मूर्ध्नि गिरेर्गेहं कश्चिद्राजा भविष्यति । अभ्रंकषमहाशालं शृङ्गे शृङ्गमिवापरम् ॥ १३ ॥

tasya mūrdhni girergehaṃ kaścidrājā bhaviṣyati | abhraṃkaṣamahāśālaṃ śṛṅge śṛṅgamivāparam || 13 ||

On the top of that hill, some king will have a house, a mansion so tall it scrapes the clouds, like a second peak sitting on the first peak.

उस पहाड़ी की चोटी पर किसी राजा का एक महल होगा, इतना ऊंचा कि बादलों को छू ले, मानो चोटी पर एक और चोटी बैठी हो।

4.32.14

गृहस्येशानकोणेऽस्ति शिरोभित्तिव्रणोदरे । तस्यानिशमविश्रान्तवाताधूततृणान्तिके ॥ १४ ॥

gṛhasyeśānakoṇe'sti śirobhittivraṇodare | tasyāniśamaviśrāntavātādhūtatṛṇāntike || 14 ||

In the northeast corner of that house there is a crack at the top of a wall, near where grass is shaken day and night, without rest, by the wind.

उस घर के उत्तर-पूर्व कोने में, दीवार के ऊपरी हिस्से में एक दरार है, वहीं पास में घास दिन-रात, बिना रुके, हवा से हिलती रहती है।

4.32.15

आलये दानवो व्यालः कलविङ्को भविष्यति । प्रथमाल्पश्रुतशास्त्र इवार्थरहितारवः ॥ १५ ॥

ālaye dānavo vyālaḥ kalaviṅko bhaviṣyati | prathamālpaśrutaśāstra iva'rtharahitāravaḥ || 15 ||

In that nook, the demon Vyala will become a sparrow whose chirping has no meaning, like a beginner who has just started learning scripture and repeats words without understanding them.

उसी जगह पर, राक्षस व्याल एक गौरैया बनेगा, जिसकी चहचहाहट का कोई मतलब नहीं होगा, ठीक वैसे जैसे कोई नया विद्यार्थी शास्त्र पढ़ना शुरू करके बिना समझे शब्द दोहराता है।

4.32.16

तस्मिन्नेव तदा काले तत्र राजा भविष्यति । श्रीयशस्करदेवाख्यः शक्रः स्वर्ग इवापरः ॥ १६ ॥

tasmineva tadā kāle tatra rājā bhaviṣyati | śrīyaśaskaradevākhyḥ śakraḥ svarga ivāparaḥ || 16 ||

At that same time, there will be a king there named Shri Yashaskaradeva, like another Indra in heaven.

उसी समय, वहां श्री यशस्करदेव नाम का एक राजा होगा, मानो स्वर्ग में एक और इंद्र हो।

4.32.17

दानवो दामनामात्र मशकस्तस्य सद्मनि । भविष्यति बृहत्स्तम्भपृष्ठच्छिद्रे मृदुध्वनिः ॥ १७ ॥

dānavo dāmanāmātra maśakastasya sadmani | bhaviṣyati bṛhatstambhapṛṣṭhacchidre mṛdudhvaniḥ || 17 ||

The demon named Dama will become a mosquito in that king's house, living in a hole at the back of a big pillar, with a soft buzzing sound.

दाम नाम का राक्षस उस राजा के घर में मच्छर बनेगा, एक बड़े खंभे के पीछे बने छेद में रहते हुए, धीमी सी भिनभिनाहट करते हुए।

4.32.18

अधिष्ठानाभिधे तस्मिन्नेवान्तर्नगरे तदा । रत्नावलीविहाराख्यो विहारोऽपि भविष्यति ॥ १८ ॥

adhiṣṭhānābhidhe tasminevanantarnagare tadā | ratnāvalīvihārākhyo vihāro'pi bhaviṣyati || 18 ||

In that same inner city called Adhishthana, there will also be a garden named Ratnavali Vihara.

उसी अधिष्ठान नाम के भीतरी शहर में, उस समय रत्नावली विहार नाम का एक बगीचा भी होगा।

4.32.19

तस्मिंस्तद्भूमिपामात्यो नरसिंह इति श्रुतः । करामलकवद्दृष्टबन्धमोक्षो निवत्स्यति ॥ १९ ॥

tasmintadbhūmipāmātyo narasiṃha iti śrutaḥ | karāmalakavaddṛṣṭabandhamokṣo nivatsyati || 19 ||

There will live the king's minister, known by the name Narasimha, who sees bondage and freedom as clearly as a gooseberry held in his own palm.

वहां राजा का मंत्री रहेगा, जिसका नाम नरसिंह होगा, जो बंधन और मुक्ति को उतनी ही साफ तरह देखता है जितना अपनी हथेली पर रखा आंवला।

4.32.20

भविष्यति गृहे तस्य क्रीडनः क्रकरः खगः । कटो मायासुरो नाम कृतराजतपञ्जरः ॥ २० ॥

bhaviṣyati gṛhe tasya krīḍanaḥ krakaraḥ khagaḥ | kaṭo māyāsuro nāma kṛtarājatapañjaraḥ || 20 ||

In his house there will be a pet partridge, kept as a plaything, kept in a silver cage, who was once the demon named Kata, the demon of illusion.

उसके घर में एक पालतू तीतर होगा, जिसे खेल के लिए रखा गया होगा, चांदी के पिंजरे में, जो पहले माया का राक्षस कट हुआ करता था।

4.32.21

स नृसिंहो नृपामात्यश्लोकैर्विरचितामिमाम् । दामव्यालकटादीनां कथयिष्यति सत्कथाम् ॥ २१ ॥

sa nṛsiṃho nṛpāmātyaślokairviracitāmimām | dāmavyālakaṭādīnāṃ kathayiṣyati satkathām || 21 ||

That minister Narasimha will tell, set in verses, the true story of Dama, Vyala, Kata and the others.

वह मंत्री नरसिंह, दाम, व्याल, कट और बाकी सबकी यह सच्ची कहानी कविता के रूप में सुनाएगा।

4.32.22

सकटः क्रकरः श्रुत्वा तत्कथासंस्मृतात्मभूः । शान्तमित्थं महाशान्तं परं निर्वाणमेष्यति ॥ २२ ॥

sakaṭaḥ krakaraḥ śrutvā tatkathāsaṃsmṛtātmabhūḥ | śāntamitthaṃ mahāśāntaṃ paraṃ nirvāṇameṣyati || 22 ||

That Kata, now the partridge, on hearing this story, will remember his true self through it, and so will reach a peaceful, deeply peaceful, supreme freedom.

वह कट, जो अब तीतर है, यह कहानी सुनकर अपने असली स्वरूप को याद कर लेगा, और इस तरह एक शांत, बहुत गहरी शांति वाली, सबसे बड़ी मुक्ति पा लेगा।

4.32.23

प्रद्युम्नशिखरप्रान्तवास्तव्यः कलविङ्ककः । तत्रत्यैश्च कथां श्रुत्वा परं निर्वाणमेष्यति ॥ २३ ॥

pradyumnaśikhara prāntavāstavyaḥ kalaviṅkakaḥ | tatratyaiśca kathāṃ śrutvā paraṃ nirvāṇameṣyati || 23 ||

The little sparrow living at the edge of Pradyumna Peak will also hear this story from the people living there, and will reach supreme freedom.

प्रद्युम्न शिखर के किनारे रहने वाली छोटी गौरैया भी वहां रहने वालों से यह कहानी सुनकर सबसे बड़ी मुक्ति पा लेगी।

4.32.24

राजमन्दिरदार्वन्तर्व्रणवास्तव्यतां गतः । मशकोऽपि प्रसङ्गेन श्रुत्वा शान्तिमुपैष्यति ॥ २४ ॥

rājamandiradārvantarvraṇavāstavyatāṃ gataḥ | maśako'pi prasaṅgena śrutvā śāntimupaiṣyati || 24 ||

The mosquito too, living in the crack in the wood of the royal palace, will hear the story just by chance, and will reach peace.

राजमहल की लकड़ी की दरार में रहने वाला वह मच्छर भी, यह कहानी संयोग से सुनकर शांति पा लेगा।

4.32.25

प्रद्युम्नश्रृङ्गाच्चटको मशको राजमन्दिरात् । विहारात्क्रकरश्चेति मोक्षमेष्यन्ति राघव ॥ २५ ॥

pradyumnaśṛṅgāccaṭako maśako rājamandirāt | vihārātkrakaraśceti mokṣameṣyanti rāghava || 25 ||

So, O Raghava, the sparrow from Pradyumna Peak, the mosquito from the royal palace, and the partridge from the garden, all of them will reach freedom.

इस तरह, हे राघव, प्रद्युम्न शिखर की गौरैया, राजमहल का मच्छर, और बगीचे का तीतर, ये सब मुक्ति पा लेंगे।

4.32.26

एष ते कथितः सर्वो दामव्यालकथाक्रमः । मायैवमेव संसारशून्यैवात्यन्तभासुरा ॥ २६ ॥

eṣa te kathitaḥ sarvo dāmavyālakathākramaḥ| māyaivameva saṃsāraśūnyaivātyantabhāsurā || 26 ||

This whole course of the story of Dama and Vyala has now been told to you. Maya is exactly like this, empty of any real world, and yet extremely dazzling.

दाम और व्याल की यह पूरी कहानी अब तुम्हें बता दी गई है। माया बिल्कुल ऐसी ही होती है, असल में कुछ नहीं होते हुए भी बेहद चमकदार दिखती है।

4.32.27

भ्रमयत्यपरिज्ञानान्मृगतृष्णाम्बुधीरिव । महतोऽपि पदादेवं नानाज्ञानवशादधः ॥ २७ ॥

bhramayatyaparijñānānmṛgatṛṣṇāmbudhīriva| mahato'pi padādevaṃ nānājñānavashādadhaḥ || 27 ||

Through lack of true understanding, it deludes, like the illusory water of a mirage. Because of many kinds of ignorance, it drags beings down like this, even from a high position.

सही समझ न होने के कारण, यह भरमाती है, जैसे मृगतृष्णा का झूठा पानी भरमाता है। कई तरह की अज्ञानता के कारण, यह जीवों को इसी तरह ऊंचे पद से भी नीचे गिरा देती है।

4.32.28

पतन्ति मोहिता मूढा दामव्यालकटा इव । क्व भ्रूक्षेपविनिष्पिष्टमेरुमन्दरसद्मता ॥ २८ ॥

patanti mohitā mūḍhā dāmavyālakaṭā iva| kva bhrūkṣepavinişpiṣṭamerumandarasadmatā || 28 ||

Deluded, foolish beings fall, just like Dama, Vyala, and Kata did. Where now is that state of theirs, when a mere flick of an eyebrow could crush Mount Meru and Mount Mandara?

मोह में पड़े मूर्ख जीव इसी तरह गिरते हैं, जैसे दाम, व्याल और कट गिरे थे। अब कहां है उनकी वह हालत, जब भौंह के एक इशारे से मेरु और मंदार पर्वत कुचले जा सकते थे?

4.32.29

क्व राजगृहदार्वन्तर्व्रणे मशकरूपता । क्व चपेटभुजामात्रपातितार्केन्दुबिम्बता ॥ २९ ॥

kva rājagṛhadārvantarvraṇe maśakarūpatā| kva capēṭabhujāmātrapātitārkendubimbatā || 29 ||

Where now is being a mosquito in a crack in the wood of the royal palace? Where is that former state of knocking down the discs of the sun and the moon with a mere slap of the arm?

अब कहां है राजमहल की लकड़ी की दरार में मच्छर बनकर रहना? और कहां है वह पुरानी ताकत, जब सिर्फ एक हाथ की चपत से सूरज और चांद के गोले तक गिरा दिए जाते थे?

4.32.30

क्व प्रद्युम्नगिरौ गेहे भित्तिव्रणविहङ्गता । क्व पुष्पलीलया लोलकरतोलितमेरुता ॥ ३० ॥

kva pradyumnagirau gehe bhittivraṇavihangatā| kva puṣpalīlayā lolakaratolitamerutā || 30 ||

Where now is being a bird in a crack in the wall, in a house on Mount Pradyumna? Where is that former state of lifting Mount Meru playfully, in a restless hand, as easily as a flower?

अब कहां है प्रद्युम्न पर्वत के घर की दीवार की दरार में पक्षी बनकर रहना? और कहां है वह पुरानी ताकत, जब मेरु पर्वत को एक बेचैन हाथ से फूल जितनी आसानी से खेल-खेल में उठा लिया जाता था?

4.32.31

क्व वा शृङ्गे नृसिंहस्य गृहे क्रकरपोतता । चिदाकाशोऽहमित्येव रजसा रञ्जितप्रभः ॥ ३१ ॥

kva vā śṛṅge nṛsiṃhasya gṛhe krakarapotatā | cidākāśo'hamityeva rajasā rañjitaprabhaḥ || 31 ||

Or where was that being a young partridge on the peak of Nrisimha, or in a house? I am really just the space of awareness, its light merely tinted by dust.

या फिर नृसिंह की चोटी पर, या किसी घर में, बटेर के बच्चे जैसा होना कहाँ था? मैं तो बस चेतना का आकाश हूँ, जिसकी चमक केवल धूल से हल्की मटमैली हुई है।

4.32.32

स्वरूपमत्यजन्नेव विरूपमपि बुध्यते । स्वयैव वासनाभ्रान्त्या सत्ययेवाप्यसत्यया ॥ ३२ ॥

svarūpamatyajannēva virūpamapi budhyatē | svayaiava vāsanābhrāntyā satyayēvāpyasatyayā || 32 ||

Even while never truly leaving its own real nature, it comes to see itself as something twisted out of shape, only because of its own confused inner impressions, impressions that are false yet feel true.

अपने असली स्वरूप को कभी छोड़े बिना भी, यह अपने आप को कुछ बिगड़ा हुआ मान लेता है, बस अपने ही मन के भ्रामक संस्कारों के कारण, जो झूठे होते हुए भी सच जैसे लगते हैं।

4.32.33

मृगतृष्णाम्बुबुद्ध्येव याति जन्तुरिवान्तरम् । तरन्ति ते भवाम्भोधिं स्वप्रवाहधियैव ये ॥ ३३ ॥

mṛgatṛṣṇāmbubuddhyēva yāti janturivāntaram | taranti tē bhavāmbhōdhiṁ svapravāhadhiyaiava yē || 33 ||

Just as a creature wanders off, fooled only by the idea of a mirage's water, those who cross the ocean of worldly life do it by the strength of their own steady effort.

जैसे कोई जानवर मृगतृष्णा के पानी के भ्रम में भटक जाता है, वैसे ही जो लोग संसार-सागर को पार करते हैं, वे अपने ही निरंतर प्रयास के बल पर पार करते हैं।

4.32.34

शास्त्रेणासादितं दृश्यमिति निर्वाणसंस्थिताः । नानादुःखविकाराणि शुष्कतर्कमतानि ये ॥ ३४ ॥

śāstrēṇāsāditaṁ dṛśyamiti nirvāṇasaṁsthitāḥ | nānāduḥkhavikārāṇi śuṣkatarkamatāni yē || 34 ||

Some people believe they have reached freedom simply because scripture has explained the visible world to them, and their thinking is nothing but dry logic, full of every kind of pain and change.

कुछ लोग यह मान लेते हैं कि वे मुक्त हो चुके हैं, बस इसलिए कि शास्त्र ने उन्हें दिखने वाली दुनिया समझा दी है, जबकि उनकी सोच केवल सूखा तर्क है, जो हर तरह के दुख और बदलाव से भरा है।

4.32.35

यान्ति श्वभ्रं जलानीव स्वलाभं नाशयन्ति ते । स्वानुभूतिप्रसिद्धेन मार्गेणागमगामिना ॥ ३५ ॥

yānti śvabhraṁ jalānīva svalābhaṁ nāśayanti tē | svānubhūtiprasiddhena mārgeṇāgamagāminā || 35 ||

Such people sink into a pit, the way water flows downward, and they destroy the true gain they had, instead of walking the path that is proven by one's own experience and confirmed by scripture.

ऐसे लोग गड्ढे में डूब जाते हैं, जैसे पानी नीचे की ओर बहता है, और अपना असली लाभ नष्ट कर लेते हैं, उस रास्ते पर चलने के बजाय जो अपने अनुभव से सिद्ध हो और शास्त्र से भी पुष्ट हो।

4.32.36

न विनाशो भवत्यङ्ग गच्छतां परमां गतिम् । इदं मे स्यादिदं मे स्यादितिबुद्धेर्महामते ॥ ३६ ॥

na vināśo bhavatyanga gacchatāṃ paramāṃ gatim | idaṃ me syādidaṃ me syāditi buddhermahāmate || 36 ||

Dear one, there is no loss for those who walk toward the highest goal. The real loss, wise one, is for the mind that keeps thinking, let this be mine, let this be mine.

हे प्रिय, जो लोग सबसे ऊँचे लक्ष्य की ओर चलते हैं, उनका कुछ नहीं बिगड़ता। असली नुकसान तो, हे बुद्धिमान, उस मन का है जो बार-बार सोचता रहता है, यह मेरा हो जाए, यह मेरा हो जाए।

4.32.37

स्वेन दौर्भाग्यदैन्येन न भस्माप्युपतिष्ठते । वेत्ति नित्यमुदारात्मा त्रैलोक्यमपि यस्तृणम् ॥ ३७ ॥

svena daurbhāgyadainyena na bhasmāpyupatiṣṭhate | vetti nityamudārātmā trailokyamapi yastṛṇam || 37 ||

Even a man whose own bad luck and misery leave him without so much as ash, the noble soul still always knows the three worlds themselves to be nothing more than a blade of grass.

जिस व्यक्ति का अपना दुर्भाग्य और दीनता उसके पास राख तक नहीं छोड़ती, वह उदार आत्मा फिर भी हमेशा तीनों लोकों को एक तिनके के बराबर ही समझता है।

4.32.38

तं त्यजन्त्यापदः सर्वाः सर्पा इव जरत्त्वचम् । परिस्फुरति यस्यान्तर्नित्यं सत्त्वचमत्कृतिः ॥ ३८ ॥

taṃ tyajantyāpadaḥ sarvāḥ sarpā iva jarattvacam | parisphurati yasyāntarnityaṃ sattvacamatkṛtiḥ || 38 ||

All troubles leave him, the way snakes leave behind their old skin, the one within whom the wonder of his true being always keeps shining.

सारी मुसीबतें उसे उसी तरह छोड़ देती हैं जैसे साँप अपनी पुरानी केंचुली छोड़ देते हैं, उस व्यक्ति को जिसके भीतर उसके सच्चे स्वरूप का चमत्कार हमेशा चमकता रहता है।

4.32.39

ब्राह्ममण्डमिवाखण्डं लोकेशाः पालयन्ति तम्। अप्यापदि दुरन्तायां नैव गन्तव्यमक्रमे ॥ ३९ ॥

brāhmamaṇḍamivākhaṇḍaṃ lokeśāḥ pālayanti tam | apyāpadi durantāyāṃ naiva gantavyamakrame || 39 ||

The guardians of the worlds keep him whole, the way the unbroken cosmic egg is kept whole. Even in a disaster that seems to have no end, one must never act in a disorderly way.

लोकपाल उसे उसी तरह पूरी तरह सुरक्षित रखते हैं जैसे अखंड ब्रह्मांड सुरक्षित रहता है। किसी भी ऐसी भारी विपत्ति में भी, जो खत्म होती न दिखे, कभी भी बेतरतीब ढंग से काम नहीं करना चाहिए।

4.32.40

राहुरप्यक्रमेणैवं पिबन्नप्यमृतं मृतः। सच्छास्त्रसाधुसंपर्कमर्कमुग्रप्रकाशदम् ॥ ४० ॥

rāhurapyakrameṇaivaṃ pibannapyamṛtaṃ mṛtaḥ | sacchāstrasādhusaṃparkamarkamugraprakāśadam || 40 ||

In just this way, Rahu died while he was drinking the very nectar of immortality, because he had acted out of turn. The company of true scripture and good people is a sun that gives off fierce light.

इसी तरह राहु अमृत पीते हुए भी मर गया, क्योंकि उसने अपनी बारी से पहले काम किया था। सच्चे शास्त्र और अच्छे लोगों का साथ एक सूरज है, जो तेज प्रकाश देता है।

4.32.41

ये श्रयन्ते न ते यान्ति मोहान्ध्यस्य पुनर्वशम्। अवश्या वश्यतां यान्ति यान्ति सर्वापदः क्षयम् ॥ ४१ ॥

ye śrayante na te yānti mohāndhyasya punarvaśam | avaśyā vaśyatāṃ yānti yānti sarvāpadaḥ kṣayam || 41 ||

Those who take shelter in it never again fall under the grip of blind delusion. What could not be controlled comes under control, and every misfortune comes to an end.

जो लोग उसकी शरण लेते हैं, वे फिर कभी अंधी मोह-माया के वश में नहीं जाते। जो पहले काबू में नहीं आता था, वह भी काबू में आ जाता है, और हर मुसीबत खत्म हो जाती है।

4.32.42

अक्षयं भवति श्रेयः कृतं येन गुणैर्यशः। येषां गुणेष्वसंतोषो रागो येषां श्रुतं प्रति ॥ ४२ ॥

akṣayaṃ bhavati śreyāḥ kṛtaṃ yena guṇairyaśaḥ | yeṣāṃ guṇeṣvasaṃtoṣo rāgo yeṣāṃ śrutaṃ prati || 42 ||

The good a person gains never runs out, when he has built his fame through good qualities, when he is never satisfied with the good qualities he has, and when his love is for learning.

जिसने अच्छे गुणों से अपना यश बनाया हो, जो अपने गुणों से कभी संतुष्ट न हो, और जिसका प्रेम ज्ञान की ओर हो, उसका पाया हुआ भला कभी खत्म नहीं होता।

4.32.43

सत्यव्यसनिनो ये च ते नराः पशवोऽपरे। यशश्चन्द्रिकया येषां भासितं जन्तुहृत्सरः ॥ ४३ ॥

satyavyasanino ye ca te narāḥ paśavo'pare | yaśaścandrikayā yeṣāṃ bhāsitaṃ jantuhṛtsaraḥ || 43 ||

Those who hold only to truth are the true men. All others are just animals. It is the moonlight of their fame that lights up the lake that is the heart of every creature.

जो लोग केवल सच को थामे रहते हैं, वही असली इंसान हैं। बाकी सब सिर्फ पशु हैं। उनके यश की चांदनी ही हर प्राणी के हृदय रूपी सरोवर को रोशन करती है।

4.32.44

तेषां क्षीरसमुद्राणां नूनं मूर्तौ स्थितो हरिः । भुक्तं भोक्तव्यमखिलं दृष्टा द्रष्टव्यदृष्टयः ॥ ४४ ॥

teṣāṃ kṣīrasamudrāṇāṃ nūnaṃ mūrtau sthito hariḥ | bhuktaṃ bhoktavyamakhilaṃ dṛṣṭā draṣṭavyadṛṣṭayaḥ || 44 ||

Surely Hari himself lives in the very body of these men, who are like oceans of milk. They have already enjoyed everything there is to enjoy, and their eyes have already seen everything there is to see.

निश्चित ही स्वयं हरि इन लोगों के शरीर में बसते हैं, जो दूध के सागर जैसे हैं। उन्होंने वह सब भोग लिया है जो भोगा जाना था, और उनकी आँखों ने वह सब देख लिया है जो देखा जाना था।

4.32.45

किमन्यद्भवभङ्गाय भूयो भोगेषु लुब्धता । यथाक्रमं यथाशास्त्रं यथाचारं यथास्थिति ॥ ४५ ॥

kimanyadbhavabhaṅgāya bhūyo bhogeṣu lubdhatā | yathākramam yathāśāstraṃ yathācāraṃ yathāsthiti || 45 ||

What else, other than fresh greed for pleasures, could destroy the good a person has gained? Let everything be done in proper order, according to scripture, according to custom, and according to one's own place in life.

भोगों के लिए नया लालच पैदा होने के अलावा और क्या किसी के पाए हुए भले को नष्ट कर सकता है? हर काम सही क्रम से, शास्त्र के अनुसार, रीति-रिवाज के अनुसार, और अपनी स्थिति के अनुसार करना चाहिए।

4.32.46

स्थीयतां मुच्यतामन्तर्भोगजालमवास्तवम् । संस्तवः क्रियतां कीर्त्या गुणैर्गगनगामिमिः ॥ ४६ ॥

sthīyatāṃ mucyatāmantarbhogajālamavāstavam | saṃstavaḥ kriyatāṃ kīrtyā guṇairgaganagāmimiḥ || 46 ||

Let one stand firm, and let go of the unreal net of enjoyments within. Let one build a close bond with the kind of fame and virtue that rise all the way to the sky.

व्यक्ति को दृढ़ रहना चाहिए, और भीतर के भोगों के झूठे जाल को छोड़ देना चाहिए। उसे ऐसे यश और गुणों से नाता जोड़ना चाहिए जो आकाश तक ऊँचे उठें।

4.32.47

त्रायेते मृत्युतो ह्येते न कदाचन भोगकाः । गायन्ति सिद्धसुन्दर्यो येषामिन्दुसितं यशः ॥ ४७ ॥

trāyete mṛtyuto hyete na kadācana bhogakāḥ | gāyanti siddhasundaryo yeṣāmindusitaṃ yaśaḥ || 47 ||

These two, fame and virtue, save a person from death. Pleasures never do. The Siddha maidens sing about those whose fame is as white and bright as the moon.

यश और गुण, ये दोनों ही व्यक्ति को मृत्यु से बचाते हैं। भोग कभी नहीं बचाते। सिद्ध कन्याएं उनके बारे में गाती हैं जिनका यश चांद जैसा उजला और चमकीला होता है।

4.32.48

गीतिभिर्गगनाभोगैस्ते जीवन्ति मृताः परे । परमं पौरुषं यत्नमास्थायादाय सूद्यमम् ॥ ४८ ॥

gītibhirgaganābhogaisste jīvanti mṛtāḥ pare | paramaṃ pauruṣaṃ yatnamāsthāyādāya sūdyamam || 48 ||

Through songs that fill the whole sky, they go on living, while the rest, once dead, simply stay dead. So take up the highest human effort, and hold fast to the very best striving.

आकाश को भर देने वाले गीतों के सहारे, वे जीते रहते हैं, जबकि बाकी लोग मरने के बाद बस मरे हुए ही रह जाते हैं। इसलिए सबसे बड़ा पुरुषार्थ करो, और सबसे अच्छे प्रयास को मजबूती से थामे रखो।

4.32.49

यथाशास्त्रमनुद्वेगमाचरन्को न सिद्धिभाक् । यथाशास्त्रं विहरता त्वरा कार्या न सिद्धिषु ॥ ४९ ॥

yathāśāstram anudvegamācaran ko na siddhibhāk | yathāśāstraṃ viharatā tvārā kāryā na siddhiṣu || 49 ||

Who does not attain success, acting according to scripture, free from anxiety? One who lives by scripture should never be in a hurry for results.

शास्त्र के अनुसार, बिना किसी घबराहट के काम करने वाला कौन सफल नहीं होता? जो शास्त्र के अनुसार जीता है, उसे सफलता के लिए कभी जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए।

4.32.50

चिरकालपरिपक्वा सिद्धिः पुष्टफला भवेत् । वीतशोकभयायासमगर्वमपयन्त्रणम् ॥ ५० ॥

cirakālaparipakvā siddhiḥ puṣṭaphalā bhavet | vītaśokabhayāyāsamagarvam apayantraṇam || 50 ||

Success that ripens slowly over a long time bears rich, full fruit, free from grief, fear, and strain, without pride, and without any constraint.

जो सफलता लंबे समय में धीरे-धीरे पकती है, वही भरपूर फल देती है, दुख, डर और थकान से मुक्त, बिना घमंड के, और बिना किसी बंधन के।

4.32.51

व्यवहारो यथाशास्त्रं क्रियतां मा विनश्यताम् । जीवो जीर्णान्धकूपेषु भवेष्वन्तमिवागतः ॥ ५१ ॥

vyavahāro yathāśāstraṃ kriyatāṃ mā vinaśyatām | jīvo jīrṇāndhakūpeṣu bhaveṣvantamivāgataḥ || 51 ||

Let one's conduct follow scripture, so that one is not destroyed. The soul has fallen, as if to its death, into the old, blind wells of repeated worldly life.

अपना आचरण शास्त्र के अनुसार रखो, ताकि नाश न हो। यह जीव तो जैसे मृत्यु के मुहाने पर, संसार के पुराने अंधे कुओं में जा गिरा है।

4.32.52

भवतां भूरिसङ्गानामधुनेन्द्रियदामतः । इतःप्रभृति मा भूयो गम्यतामधमादधः ॥ ५२ ॥

bhavatāṃ bhūrisaṅgānāmadhunendriyadāmataḥ | itaḥprabhṛti mā bhūyo gamyatāmadhamādadaḥ || 52 ||

You already carry so many attachments through the leash of the senses. From now on, let there be no more falling lower than low.

इंद्रियों की डोर से बंधे होने के कारण तुम्हारे पास पहले से ही इतने सारे मोह-बंधन हैं। अब से आगे, इससे नीचे और नीचे मत गिरो।

4.32.53

इदं विचार्यतां शास्त्रमस्त्रमापन्निवारणम् । रणे शितशरश्रेणिशतनिर्लूनवारणे ॥ ५३ ॥

idaṃ vicāryatāṃ śāstramastramāpannivāraṇam | raṇe śitaśaraśreṇiśatanirlūnavāraṇe || 53 ||

Let this teaching be thought over carefully, for it is a weapon that wards off disaster, like in a battle where hundreds of rows of sharp arrows have brought down even war elephants.

इस शिक्षा पर ध्यान से विचार करो, क्योंकि यह विपत्ति को रोकने वाला एक हथियार है, जैसे किसी युद्ध में सैकड़ों तेज बाणों की पंक्तियों ने युद्ध के हाथियों तक को गिरा दिया हो।

4.32.54

जीवमुद्रा च किं पङ्के भोगगन्धो निरस्यताम्। किमर्थमात्रया कार्यमार्याः शास्त्रमवेक्ष्यताम्॥ ५४॥

jīvamudrā ca kiṃ paṅke bhogagandho nirasyatām | kimarthamātrayā kāryamāryāḥ śāstramavekṣyatām || 54 ||

And what is the point of this mark of life stuck in the mud? Let go even the faintest scent of pleasure. What use is a mere trace of purpose? Noble ones, look to the scripture.

और कीचड़ में फंसे इस जीवन-चिन्ह का क्या मतलब है? भोग की हल्की सी महक को भी छोड़ दो। थोड़े से मकसद से क्या होगा? हे सज्जनो, शास्त्र की ओर देखो।

4.32.55

इदं बिम्बमिदं बिम्बमिति सत्यं विचार्यताम्। धिया परप्रेरणया यातमापशवो यथा॥ ५५॥

idaṃ bimbamidaṃ bimbamiti satyaṃ vicāryatām | dhiyā parapreranayā yātamāpaśavo yathā || 55 ||

Let it be truly considered again and again, this is just a reflection, this is just a reflection. Otherwise, one keeps moving on, driven by another's will, the way cattle are driven.

बार-बार सच में यही सोचो, यह तो बस एक प्रतिबिंब है, यह तो बस एक प्रतिबिंब है। वरना व्यक्ति दूसरे की इच्छा से हांका जाता रहता है, जैसे मवेशी हांके जाते हैं।

4.32.56

दौर्भाग्यदायिनी दीना शुभहीना विचारणा। घनदीर्घमहानिद्रा त्यज्यतां संप्रबुध्यताम्॥ ५६॥

daurbhāgyadāyinī dīnā śubhahīnā vicāraṇā | ghanadīrghamahānidrā tyajyatāṃ saṃprabudhyatām || 56 ||

Give up that wretched, joyless brooding which only brings misfortune, and give up the long, heavy, deep sleep. Wake up fully.

उस दीन और आनंदहीन उधेड़बुन को छोड़ दो, जो केवल दुर्भाग्य लाती है, और उस लंबी, भारी, गहरी नींद को भी छोड़ दो। पूरी तरह जाग जाओ।

4.32.57

सुप्तं मास्थीयतां वृद्धकच्छपेनेव पल्वले। उत्थानमङ्गीक्रियतां जरामरणशान्तये॥ ५७॥

suptaṃ māsthīyatāṃ vṛddhakacchapeneve palvale | utthānamagīkriyatāṃ jarāmaraṇaśāntaye || 57 ||

Let one not stay asleep, like an old tortoise lying still in a pond. Let one take up rising and waking, so that old age and death may be brought to an end.

किसी बूढ़े कछुए की तरह तालाब में पड़े-पड़े सोए मत रहो। उठना और जागना अपनाओ, ताकि बुढ़ापा और मृत्यु शांत हो सकें।

4.32.58

अनर्थायार्थसंपत्तिर्भोगौघो भवरोगदः। आपदः संपदः सर्वाः सर्वत्रानादरो जयः॥ ५८॥

anarthāyārthasaṃpattirbhogaugho bhavarogadaḥ | āpadaḥ saṃpadaḥ sarvāḥ sarvatrānādaro jayaḥ || 58 ||

Wealth and prosperity only lead to ruin. A flood of pleasures breeds the disease of worldly existence. Toward all calamities and all riches alike, staying indifferent everywhere is victory.

धन और समृद्धि केवल विनाश की ओर ले जाते हैं। भोगों की बाढ़ संसार का रोग पैदा करती है। हर विपत्ति और हर संपत्ति के प्रति, हर जगह बेपरवाह रहना ही जीत है।

4.32.59

लोकतन्त्रानुसारेण विचाराद्व्यवहारिणाम्। शास्त्राचारानुसारेण कर्मणा सत्फलाय च ॥ ५९ ॥

lokatantrānusāreṇa vicārādvyavahāriṇām | śāstrācārānusāreṇa karmaṇā satphalāya ca || 59 ||

One should deal with the world through sound worldly judgment, and act according to the conduct taught by scripture, so that the result may be good.

दुनिया के व्यवहार में सही सांसारिक समझ से काम लेना चाहिए, और शास्त्र में बताए गए आचरण के अनुसार काम करना चाहिए, ताकि परिणाम अच्छा हो।

4.32.60

आचारचारुचरितस्य विविक्तवृत्तेः संसारसौख्यफलदुःखदशास्त्रगृध्नोः। आयुर्यशांसि च गुणाश्च सहैव लक्ष्म्या फुल्लन्ति माधवलता इव सत्फलाय ॥ ६० ॥

ācāracārucaritasya viviktavṛtteḥ saṃsārasaukhyaphaladuḥkhadaśāstragṛdhnoḥ | āyuryaśāṃsi ca guṇāśca sahaiva lakṣmyā phullanti mādhavalatā iva satphalāya || 60 ||

Such a person has beautiful conduct and good behavior, lives a life of clear thinking, and is eager for the scripture that shows how this world gives both pleasure and pain as its fruit. For him, long life, fame, and good qualities, together with good fortune, blossom like flowering vines, and bring a good result.

ऐसे व्यक्ति का आचरण सुंदर होता है, स्वभाव अच्छा होता है, वह साफ सोच के साथ जीता है, और उस शास्त्र को जानने के लिए उत्सुक रहता है जो बताता है कि यह संसार सुख और दुख दोनों फल देता है। उसके लिए लंबी उम्र, यश, और अच्छे गुण, सौभाग्य के साथ, बेल पर खिले फूलों की तरह खिलते हैं, और एक अच्छा परिणाम लाते हैं।

Chapter 33

4.33.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । सर्वातिशयसाफल्यात्सर्वं सर्वत्र सर्वदा । संभवत्येव तस्मात्त्वं शुभोद्योगं न संत्यज ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | sarvātiśayasāphalyātsarvaṃ sarvatra sarvadā | saṃbhavatyeva tasmāttvaṃ śubhodyogaṃ na saṃtyaja || 1 ||

Vasishtha said: since every act of supreme effort truly bears fruit, everything is possible, everywhere, always. So you must not give up good, honest effort.

वशिष्ठ जी ने कहा कि हर बड़े प्रयास का फल ज़रूर मिलता है, इसलिए हर जगह और हर समय सब कुछ संभव है। इसलिए तुम अच्छे और सच्चे प्रयास को मत छोड़ो।

4.33.2

मित्रस्वजनबन्धूनां नन्दिनानन्ददायिना । सरसीशानमासाद्य मृत्युरप्युपनिर्जितः ॥ २ ॥

mitrasvajanabandhūnāṃ nandināṇandadāyinā | sarasīśānamāsādya mṛtyurapyupanirjitaḥ || 2 ||

Even death was conquered by one who delighted his friends, family, and relatives, after he reached Ishana at the lake.

जो व्यक्ति अपने मित्रों, परिवार और रिश्तेदारों को खुशी और आनंद देता था, झील में ईशान के पास पहुँचकर उसने मौत को भी जीत लिया।

4.33.3

सर्वोत्कर्षेण संपन्ना देवा अपि विमर्दिताः । दानवैर्दानवार्थाढ्यैर्गजैः पद्माकरा इव ॥ ३ ॥

sarvotkarṣeṇa saṃpannā devā api vimarditāḥ | dānavairdānavārthāḍhyairgajaiḥ padmākarā iva || 3 ||

Even the gods, who had every kind of excellence, were crushed by the demons rich in demonic power, just as lotus ponds are trampled by elephants.

जिन देवताओं में हर तरह की श्रेष्ठता थी, उन्हें भी राक्षसी ताकत से भरपूर असुरों ने कुचल दिया, जैसे हाथी कमल के तालाबों को रौंद देते हैं।

4.33.4

मरुत्तनृपतेर्यज्ञे संवर्तेन महर्षिणा । ब्रह्मणेवापरः सर्गो भावितः ससुरासुरः ॥ ४ ॥

maruttanṛpateryajñe saṃvartena maharṣiṇā | brahmaṇevāparaḥ sargo bhāvitaḥ sasurāsuraḥ || 4 ||

At King Marutta's sacrifice, the great sage Samvarta, like Brahma himself, brought into being another whole creation, complete with gods and demons.

राजा मरुत्त के यज्ञ में महर्षि संवर्त ने, मानो वे स्वयं ब्रह्मा हों, देवताओं और असुरों सहित एक दूसरी सृष्टि रच दी।

4.33.5

महातिशययुक्तेन विश्वामित्रेण विप्रता । भूयोभूयः प्रयुक्तेन दुष्प्रापा तपसार्जिता ॥ ५ ॥

mahātiśayayuktena viśvāmitreṇa vipratā | bhūyobhūyaḥ prayuktena duṣprāpā tapasārjitā || 5 ||

Vishvamitra, filled with the power of supreme effort, strove again and again, and through his penance he won brahmin-hood, hard as it was to attain.

विश्वामित्र में बहुत बड़ा सामर्थ्य था, उन्होंने बार-बार प्रयास किया और अपनी तपस्या से वह ब्राह्मणपद पा लिया, जो पाना बहुत कठिन था।

4.33.6

पिष्टसेकाम्बु दुष्प्रापं रसायनवदश्नता । दुर्भगेनेदृशेनाप्तः क्षीरोद उपमन्युना ॥ ६ ॥

piṣṭasekāmbu duṣprāpaṃ rasāyanavadaśnatā | durbhagenedṛśenāptaḥ kṣīroda upamanyunā || 6 ||

Upamanyu was unlucky, yet he ate water used to rinse ground flour, hard as even that was to get, as if it were the elixir of life, and so he obtained the ocean of milk.

उपमन्यु बदकिस्मत थे, फिर भी उन्होंने आटा धोने का पानी, जो पाना भी मुश्किल था, ऐसे पिया जैसे वह अमृत हो, और इस तरह उन्हें दूध का सागर मिल गया।

4.33.7

त्रैलोक्यमल्लांस्तृणवदश्नन्विष्वलजादिकान् । भक्त्यातिशयदार्ढ्येन कालः श्वेतेन कालितः ॥ ७ ॥

trailokyamallāṃstṛṇavadaśnanviṣṇvalajādikān | bhaktyātiśayadārḍhyena kālaḥ śvetena kālitaḥ || 7 ||

Kala devours the great champions of the three worlds, Vishnu, Alaja, and the rest, as if they were mere straw, yet through the sheer firmness of his devotion, Shveta overcame Kala.

काल तो तीनों लोकों के बड़े-बड़े योद्धाओं को, विष्णु, अलज आदि को भी, तिनके जैसा खा जाता है, फिर भी श्वेत ने अपनी भक्ति की दृढ़ता से काल को हरा दिया।

4.33.8

प्रणयेन यमं जित्वा कृत्वा वचनसंगमम् । परलोकादुपानीतः सावित्र्या सत्यवान्पतिः ॥ ८ ॥

praṇayena yamaṃ jitvā kṛtvā vacanasaṅgamam | paralokādupānītaḥ sāvitryā satyavānpātiḥ || 8 ||

Through her love, Savitri won over Yama and made him give his word, and so she brought her husband Satyavan back from the world of the dead.

सावित्री ने अपने प्रेम से यमराज को जीत लिया और उनसे वचन ले लिया, और इस तरह वह अपने पति सत्यवान को मृत्यु लोक से वापस ले आई।

4.33.9

न सोऽस्त्यतिशयो लोके यस्यास्ति न फलं स्फुटम् । भवितव्यं विचार्यान्तः सर्वातिशयशालिना ॥ ९ ॥

na so'styatiśayo loke yasyāsti na phalaṃ sphuṭam | bhavitavyaṃ vicāryāntaḥ sarvātiśayaśālinā || 9 ||

In this world, there is no supreme effort that fails to bring a clear result. So a person who has every excellence should think carefully within himself about what he must do.

इस दुनिया में ऐसा कोई बड़ा प्रयास नहीं है जिसका साफ़ फल न मिले। इसलिए जिस व्यक्ति में हर तरह की श्रेष्ठता है, उसे अपने मन में यह सोचना चाहिए कि उसे क्या करना है।

4.33.10

आत्मज्ञानमशेषाणां सुखदुःखदशादृशाम् । मूलकाषकरं तस्माद्भाव्यं तत्रातिशायिना ॥ १० ॥

ātmajñānam aśeṣāṇāṃ sukhaduḥkhadaśādṛśām | mūlakāṣakaraṃ tasmād bhāvyaṃ tatrātiśāyinā || 10 ||

Self-knowledge cuts off, at the very root, all the states of pleasure and pain that we see. So a person who wants to excel must cultivate exactly this.

आत्मज्ञान सुख और दुख की सारी दिखने वाली स्थितियों को जड़ से काट देता है। इसलिए जो व्यक्ति श्रेष्ठ बनना चाहता है, उसे यही आत्मज्ञान पाने का प्रयास करना चाहिए।

4.33.11

नाशायापद्गतार्थिन्या दृष्ट्या दृश्यादिदृष्टयः । दुःखादृते निराबाधं सुखं किं चिदवाप्यते ॥ ११ ॥

nāśāyāpadgatārthinyā dṛṣṭyā dṛśyādidṛṣṭayaḥ | duḥkhādṛte nirābādhaṃ sukhaṃ kiṃ cidavāpyate || 11 ||

Ways of seeing that take the visible world as real go looking only for their own ruin. Apart from sorrow, do they ever bring any real, untroubled happiness?

जो नज़रिया इस दिखने वाली दुनिया को सच मानता है, वह अपने ही विनाश की तलाश में रहता है। दुख के अलावा, क्या ऐसे नज़रिये से कभी सचमुच निश्चिंत सुख मिलता है?

4.33.12

अशमः परमं ब्रह्म शमश्च परमं पदम् । यद्यप्येवं तथाप्येनं प्रथमं विद्धि शंकरम् ॥ १२ ॥

aśamaḥ paramaṃ brahma śamaśca paramaṃ padam | yadyapyevaṃ tathāpyenaṃ prathamaṃ viddhi śaṃkaram || 12 ||

Restlessness, too, is the highest Brahman, and stillness is the highest state to reach. Even so, know stillness first as Shankara, the one who truly gives us good.

बेचैनी भी सबसे बड़ा ब्रह्म है, और शांति सबसे ऊँची अवस्था है। फिर भी, पहले शांति को ही शंकर समझो, यानी वही जो सच्चा भला करता है।

4.33.13

अभिमानं परित्यज्य शममाश्रित्य शाश्वतम् । विचार्य प्रज्ञयार्यत्वं कुर्यात्सज्जनसेवनम् ॥ १३ ॥

abhimānaṃ parityajya śamamāśritya śāśvatam | vicārya prajñayāryatvaṃ kuryātsajjanasevanam || 13 ||

Give up pride, take refuge in lasting stillness, think it through with wisdom about true nobility, and then serve good people.

अभिमान छोड़ दो, सदा रहने वाली शांति की शरण लो, अपनी बुद्धि से सच्ची श्रेष्ठता के बारे में सोचो, और फिर अच्छे लोगों की सेवा करो।

4.33.14

न तपांसि न तीर्थानि न शास्त्राणि जयन्ति च । संसारसागरोत्तारे सज्जनासेवनं विना ॥ १४ ॥

na tapāṃsi na tīrthāni na śāstrāṇi jayanti ca | saṃsārasāgarottāre sajjanāsevanaṃ vinā || 14 ||

Neither penance, nor pilgrimage places, nor scriptures can carry a person across the ocean of this world, without the service of good people.

न तपस्या, न तीर्थ, न शास्त्र किसी को इस संसार रूपी सागर से पार करा सकते हैं, अगर वह अच्छे लोगों की सेवा नहीं करता।

4.33.15

लोभमोहरुषां यस्य तनुतानुदिनं भवेत् । यथाशास्त्रं विहरति स्वस्वकर्मसु सज्जनः ॥ १५ ॥

lobhamoharuṣāṃ yasya tanutānudinaṃ bhavet | yathāśāstraṃ viharati svasvakarmasu sajjanah || 15 ||

A good person is one whose greed, delusion, and anger grow thinner every day, and who lives according to scripture, doing his own proper work.

अच्छा इंसान वही है जिसका लोभ, मोह और गुस्सा हर दिन कम होता जाता है, और जो शास्त्रों के अनुसार अपना उचित काम करता है।

4.33.16

अथात्मविदुषां सङ्गात्तस्य साधोः प्रवर्तते । अत्यन्ताभाव एवास्य यथा दृश्यस्य दृश्यते ॥ १६ ॥

athātmaviduṣāṃ saṅgāttasya sādhoḥ pravartate | atyantābhāva evāsya yathā dṛśyasya dṛśyate || 16 ||

Then, by keeping company with those who know the Self, that good person comes to see that these faults do not exist at all, just as the visible world, too, is seen not to exist at all.

फिर, आत्मज्ञानी लोगों की संगति से, वह अच्छा इंसान देख लेता है कि ये दोष हैं ही नहीं, ठीक वैसे ही जैसे यह दिखने वाली दुनिया भी सिरे से नहीं है, यह देख लिया जाता है।

4.33.17

दृश्यात्यन्ताभावतस्तु परमेवावशिष्यते । अन्याभाववशादाशु जीवस्तत्रैव लीयते ॥ १७ ॥

dṛśyātyantābhāvatastu paramevāvaśiṣyate | anyābhāvavaśādāśu jīvastatraiva līyate || 17 ||

But once the visible world is seen to be utterly nonexistent, only the Supreme remains. Because everything else stops existing, the individual soul quickly dissolves into that very Supreme.

जब यह दिखने वाली दुनिया पूरी तरह से न होने के रूप में देख ली जाती है, तो सिर्फ परम तत्व ही बचता है। बाकी सब कुछ न रहने के कारण, जीव जल्दी ही उसी परम तत्व में लीन हो जाता है।

4.33.18

नचोत्पन्नं नचैवासीदृश्यं नच भविष्यति । वर्तमानेऽपि नैवास्ति परमेवास्त्यवेधितम् ॥ १८ ॥

nacotpannaṃ na caivāsīddṛśyaṃ na ca bhaviṣyati | vartamāne'pi naivāsti paramevāstyavedhitam || 18 ||

The visible world was never created, it never truly existed in the past, and it will not exist in the future. Even now, in the present, it does not truly exist. Only the Supreme exists, untouched and undivided.

यह दिखने वाली दुनिया न कभी बनी, न पहले सचमुच थी, न आगे रहेगी। अभी वर्तमान में भी यह सचमुच नहीं है। सिर्फ परम तत्व ही है, जो अछूता और अखंड है।

4.33.19

एवं युक्तिसहस्रेण दर्शितं दृश्यतेऽपि च । सर्वैरेवानुभूतं च दर्शयिष्यामि चाधुना ॥ १९ ॥

evaṃ yuktisahasreṇa darśitaṃ dṛśyate'pi ca | sarvairevānubhūtaṃ ca darśayiṣyāmi cādhunā || 19 ||

In this way it has been shown through a thousand lines of reasoning, and it is also seen directly. Indeed, everyone experiences it. And now I will show it to you again.

इस तरह यह हज़ार तरह के तर्कों से दिखाया जा चुका है, और यह सीधे भी दिखता है। सच तो यह है कि हर कोई इसे अनुभव करता है। और अब मैं इसे फिर से दिखाऊँगा।

4.33.20

तथेदममलं शान्तं त्रिजगत्संविदम्बरम् । इदं तत्त्वमतत्त्वादि कुतोऽत्र स्यात्कथं च वा ॥ २० ॥

tathedamamalaṃ śāntaṃ trijagatsaṃvidambaram | idaṃ tattvamatattvādi kuto'tra syātkathaṃ ca vā || 20 ||

So this is pure and at peace, the consciousness that is like the very sky holding the three worlds. This alone is the truth. How, or in what way, could unreality exist here?

तो यही निर्मल और शांत है, वह चेतना जो तीनों लोकों को धारण करने वाले आकाश जैसी है। यही सच्चाई है। यहाँ झूठ कैसे और किस तरह हो सकता है?

4.33.21

चिच्चमत्कुरुते चारु चञ्चलाऽचञ्चलात्मनि । यत्तयैव तदेवेदं जगदित्यवबुध्यते ॥ २१ ॥

ciccamatkurute cāru cañcalā'cañcalātmani | yattayaiava tadevedaṃ jagadityavabudhyate || 21 ||

Consciousness, though restless, plays out a beautiful display within what is itself unmoving. And that very play is what is understood as this world.

चेतना, बेचैन होते हुए भी, अपने ही अचल स्वरूप के भीतर एक सुंदर खेल रचती है। और यही खेल इस दुनिया के रूप में समझा जाता है।

4.33.22

त्रैलोक्यभूयोनुभवश्चिदादित्यांशुमण्डलम् । को वा स्वांशुमतोर्भेदो निर्विकल्पःस कथ्यताम् ॥ २२ ॥

trailokyabhūyonubhavaścidādityāṃśumaṇḍalam | ko vā svāṃśumatorbhēdo nirvikalpaḥsa kathyatām || 22 ||

The whole repeated experience of the three worlds is the ring of rays around the sun of consciousness. So what real difference is there between the sun and its own rays? Tell me, there is none, it cannot really be divided.

तीनों लोकों का यह बार-बार होने वाला अनुभव चेतना रूपी सूरज की किरणों का घेरा है। तो सूरज और उसकी अपनी किरणों में सच में क्या फ़र्क़ है? बताओ, ऐसा कोई फ़र्क़ नहीं है, इसे सचमुच बाँटा नहीं जा सकता।

4.33.23

स्वाभावतोऽस्याश्चिद्दृष्टेर्ये उन्मेषनिमेषणे । जगद्रूपानुभूतेस्तावेतावस्तमयोदयौ ॥ २३ ॥

svābhāvato'syāścidṛṣṭerye unmeṣaniṃeṣaṇe | jagadrūpānubhūtestāvetāvastamayodayau || 23 ||

By its own nature, this seeing of consciousness opens and closes, like an eye blinking, and these two, the opening and the closing, are the setting and the rising of what we experience as the world.

अपने स्वभाव से ही, चेतना की यह दृष्टि आँख झपकने की तरह खुलती और बंद होती है, और यही खुलना और बंद होना उस अनुभव का डूबना और उगना है जिसे हम दुनिया कहते हैं।

4.33.24

अहमर्थोऽपरिज्ञातः परमार्थाम्बरे मलम् । परिज्ञातोऽहमर्थस्तु परमात्माम्बरं भवेत् ॥ २४ ॥

ahamartho'parijñātaḥ paramārthāmbare malam | parijñāto'hamarthastu paramātmāmbaraṃ bhavet || 24 ||

The sense of I, when not truly understood, is a stain on the sky of highest truth. But that same sense of I, when truly understood, becomes the very sky of the Supreme Self.

मैं का यह भाव, जब ठीक से समझ में नहीं आता, तो परम सत्य के आकाश पर एक दाग जैसा है। लेकिन वही मैं का भाव, जब पूरी तरह समझ में आ जाए, तो परमात्मा का आकाश ही बन जाता है।

4.33.25

अहंभावः परिज्ञातो नाहंभावो भवत्यलम् । एकतामम्बुनेवाम्बु याति चिन्नभसात्मना ॥ २५ ॥

ahaṃbhāvaḥ parijñāto nāhaṃbhāvo bhavatyalam | ekatāmambunevāmbu yāti cinnabhasātmanā || 25 ||

Once the feeling of 'I' is fully known for what it is, it stops being a feeling of 'I' at all. It becomes one with the sky of awareness, the way water merges into water.

जब 'मैं' के भाव को पूरी तरह पहचान लिया जाता है, तो वह 'मैं' का भाव रह ही नहीं जाता। वह चेतना के आकाश में वैसे ही मिल जाता है जैसे पानी पानी में मिल जाता है।

4.33.26

अहमादिजगद्दृश्यं किल नास्त्येव वस्तुतः । अवश्यमेव तत्तस्माच्छिष्यतेऽहंविचारतः ॥ २६ ॥

ahamādijagaddṛśyaṃ kila nāstyeva vastutaḥ | avaśyameva tattasmācchiṣyate'haṃvicārataḥ || 26 ||

The world we see, starting with the idea of 'I', does not really exist at all. Yet this very fact is bound to become clear once we look closely into 'I'.

'मैं' से शुरू होकर जो यह दिखने वाला संसार है, वह सच में है ही नहीं। पर यह बात 'मैं' की गहरी खोज करने पर ज़रूर सामने आ जाती है।

4.33.27

बाध्यते चामलधियामपिशाचे पिशाचधीःशिशूनां तावदाध्वान्तःकरणानां विचारणा ॥ २७ ॥

bādhyate cāmaladhiyāmapiśāce piśācadhīḥśiśūnāṃ tāvadādhvāntaḥkaraṇānāṃ vicāraṇā || 27 ||

For a clear, pure mind, the false idea of a ghost where there is no ghost simply falls away. For a child whose mind is still clouded and in the dark, that same false idea stays until it is looked into closely.

जिसकी बुद्धि निर्मल है, उसके लिए जहाँ भूत है ही नहीं वहाँ भूत होने का झूठा खयाल अपने आप मिट जाता है। पर जिस बच्चे का मन अभी अंधेरे में है, उसके लिए यह झूठा खयाल तभी मिटता है जब वह उसकी गहराई से जांच करे।

4.33.28

चिज्ज्योत्स्ना यावदेवान्तरहंकारघनावृता । विकासयति नो तावत्परमार्थकुमुद्वतीम् ॥ २८ ॥

cijjyotsnā yāvadevāntarahaṃkāraghanāvṛtā | vikāsayati no tāvatparamārthakumudvatīm || 28 ||

As long as the moonlight of awareness stays hidden behind the cloud of ego inside, it cannot make the pond of true reality bloom, the way moonlight opens the night lilies on a pond.

जब तक भीतर अहंकार का बादल चेतना की चाँदनी को ढके रहता है, तब तक वह सच्चाई रूपी तालाब को उस तरह नहीं खिला पाती जैसे चाँदनी रात में कुमुद के फूल खिलाती है।

4.33.29

प्रमार्जितेऽहमित्यस्मिन्पदे स्वार्थे स्वयं विना । नरकस्वर्गमोक्षादितृष्णायाः कल्पनैव का ॥ २९ ॥

pramārjite'hamityasminpade svārthe svayaṃ vinā | narakasvargamokṣāditṛṣṇāyāḥ kalpanaiava kā || 29 ||

Once this very idea 'I' has been wiped away, and there is no one left to whom anything is 'my own', what craving can there be even to imagine, for hell, for heaven, for freedom, or for anything else?

जब 'मैं' का यह खयाल पूरी तरह मिट जाता है, और कोई ऐसा बचता ही नहीं जिसका कुछ 'अपना' हो, तो नरक, स्वर्ग, मोक्ष या किसी और चीज़ की चाह की कल्पना भी कैसे की जा सकती है?

4.33.30

हृदि यावदहंभावो वारिदः प्रविजृम्भते । तावद्विकासमायाति तृष्णाकुटजमञ्जरी ॥ ३० ॥

hṛdi yāvadahaṃbhāvo vāridaḥ pravijṛmbhate | tāvadvikāsamāyāti tṛṣṇākuṭajamañjarī || 30 ||

As long as the rain cloud of the sense of 'I' keeps swelling in the heart, the kutaj tree of craving keeps bursting into bloom.

जब तक हृदय में 'मैं' के भाव का बादल फैलता रहता है, तब तक तृष्णा रूपी कुटज का पेड़ फूलों से खिलता रहता है।

4.33.31

आक्रम्य चेतनां नित्यमहंकाराम्बुदे स्थिते । जाड्यमेव स्थितिं याति न प्रकाशः कदाचन ॥ ३१ ॥

ākramya cetanāṃ nityamahaṃkārāmbude sthite | jāḍyameva sthitiṃ yāti na prakāśaḥ kadācana || 31 ||

When the cloud of ego takes hold of awareness and settles there for good, only dullness stays fixed in its place. The light of clarity never comes.

जब अहंकार का बादल चेतना पर हमेशा के लिए छा जाता है, तो वहाँ केवल जड़ता ही टिकी रहती है, स्पष्टता का प्रकाश कभी नहीं आता।

4.33.32

असन्नयमहंकारः स्वयं मिथ्या प्रकल्पितः । दुःखायैव न हर्षाय बालसंभ्रमयक्षवत् ॥ ३२ ॥

asannayamahaṃkāraḥ svayaṃ mithyā prakalpitaḥ | duḥkhāyaiva na harṣāya bālasaṃbhramayakṣavat || 32 ||

This sense of 'I' does not really exist. It is a false thing we have made up ourselves. It brings only suffering, never joy, like the made-up spirit a frightened, confused child imagines.

यह 'मैं' का भाव सच में है ही नहीं, यह खुद हमारा गढ़ा हुआ एक झूठ है। यह केवल दुख देता है, कभी सुख नहीं, ठीक वैसे जैसे घबराया हुआ बच्चा अपने मन में एक भूत गढ़ लेता है।

4.33.33

मुधैव कल्पितो मोहमहंभावः प्रयच्छति । अनन्तसंसारकरं दामादिष्विव दुर्मतौ ॥ ३३ ॥

mudhaiva kalpito mohamahaṃbhāvaḥ prayacchati | anantasaṃsārakaraṃ dāmādiṣviva durmatau || 33 ||

This false idea of 'I', invented for nothing, produces delusion, the kind that causes endless rebirth. It did the very same thing to Dama and the others, in their folly.

यह 'मैं' का झूठा खयाल यूँ ही गढ़ा गया है, और यह मोह पैदा करता है, ऐसा मोह जो जन्म-मरण के अंतहीन चक्र का कारण बनता है। इसी ने दाम और उसके साथियों के साथ भी उनकी मूर्खता में यही किया था।

4.33.34

अयं सोऽहमिति स्फारान्मोहादन्यतरत्तमः । अनर्थभूतं संसारे न भूतं न भविष्यति ॥ ३४ ॥

ayaṃ so'hamiti sphārānmohādanyataraṃttamaḥ | anarthabhūtaṃ saṃsāre na bhūtaṃ na bhaviṣyati || 34 ||

'This', 'that', 'I', these ideas, born from a vast delusion, are nothing but a kind of darkness. This darkness causes all the harm in worldly life, though it has never truly existed and never will.

'यह', 'वह', 'मैं', ये सब खयाल एक बड़े मोह से जन्मे हैं और एक तरह का अंधेरा ही हैं। यही अंधेरा संसार के सारे दुख का कारण है, हालाँकि यह न कभी सच में था और न कभी होगा।

4.33.35

यत्किंचिदिदमायाति सुखदुःखमलं भवे । तदहंकारचक्रस्य प्रविकारो विजृम्भते ॥ ३५ ॥

yatkiṃcididamāyāti sukhaduḥkhamalaṃ bhave | tadahaṃkāracakrasya pravikāro vijṛmbhate || 35 ||

Whatever pleasure or pain arises in this life, all of it is simply the wheel of ego churning and spinning further out.

इस जीवन में जो भी सुख या दुख उठता है, वह सब बस अहंकार के पहिये का घूमना और फैलना ही है।

4.33.36

अहंकाराङ्कुरः कृष्टो हृदयेनावरोपितः । सहस्रशाखं दुश्छेदं तस्य संसृतिनाशनम् ॥ ३६ ॥

ahaṃkārāṅkuraḥ kṛṣṭo hṛdayenāvaropitaḥ | sahasraśākhaṃ duścchedaṃ tasya saṃsṛtināśanam || 36 ||

The heart plants the sprout of ego and tends it, and it grows a thousand branches that are hard to cut down. But cutting it down is what destroys the cycle of rebirth.

हृदय अहंकार के अंकुर को बोता और सींचता है, और वह हज़ार शाखाओं में फैल जाता है जिन्हें काटना कठिन है। पर उसे काट देना ही जन्म-मरण के चक्र को नष्ट करता है।

4.33.37

अहंभावोऽङ्कुरो जन्म वृक्षाणामक्षयात्मनाम् । ममेदमिति विस्तीर्णास्तेषां शाखाः सहस्रशः ॥ ३७ ॥

ahaṃbhāvo'ṅkuro janma vṛkṣāṇāmakṣayātmanām | mamedamiti vistīrṇāsteṣāṃ śākhāḥ sahasraśaḥ || 37 ||

The sense of 'I' is the sprout from which endless trees are born, trees that never die. And 'this is mine', that is their thousand spreading branches.

'मैं' का भाव वह अंकुर है जिससे अनगिनत पेड़ जन्म लेते हैं, ऐसे पेड़ जो कभी नहीं मरते। और 'यह मेरा है', यही उनकी हज़ारों फैली हुई शाखाएँ हैं।

4.33.38

करटापातविस्फोटा भान्त्यर्था वासनादयः । विचार्यचारुरववत्तरङ्गवरपङ्क्तिवत् ॥ ३८ ॥

karaṭāpātavisphoṭā bhāntyarthā vāsanādayaḥ | vicāryacāru-ravavat-taraṅgavara-paṅkivat || 38 ||

Sense objects, and the desires behind them, seem to burst out all at once, like the flow that bursts from an elephant's temples. But looked at closely, they are only like a pleasant sound fading away, like a row of waves passing by.

इंद्रियों के विषय और उनके पीछे की वासनाएँ अचानक ऐसे फूट पड़ती लगती हैं जैसे हाथी के कनपटी से मद का बहाव फूटता है। पर गौर से देखने पर ये बस एक मीठी आवाज़ के मिट जाने जैसी, लहरों की एक पंक्ति के गुज़र जाने जैसी हैं।

4.33.39

अहंभावनया भाति त्वमहंभाववर्जितः । संसारचक्रवहनमात्मनः परिरोधया ॥ ३९ ॥

ahaṃbhāvanayā bhāti tvamahaṃbhāvavarjitaḥ | saṃsāracakravahanamātmanaḥ parirodhayā || 39 ||

It is the feeling of 'I' that makes the world appear at all. You yourself are free of that feeling. Hold that feeling back, and the wheel of rebirth stops turning for the self.

'मैं' का भाव ही है जिसके कारण यह संसार दिखाई देता है। तुम खुद इस 'मैं' के भाव से मुक्त हो। इस भाव को रोक दो, और आत्मा के लिए जन्म-मरण का पहिया घूमना बंद हो जाएगा।

4.33.40

अहंभावतमो यावज्जन्मारण्ये विजृम्भते । तावदेता विवल्गन्ति चिन्तामत्ताः पिशाचिकाः ॥ ४० ॥

ahaṃbhāvatamo yāvajjanmāraṇye vijṛmbhate | tāvadetā vivalganti cintāmattāḥ piśācikāḥ || 40 ||

As long as the darkness of the sense of 'I' keeps spreading through the forest of birth after birth, these she-demons, drunk on worry, keep leaping and dancing through it.

जब तक 'मैं' के भाव का अंधेरा जन्म-जन्म के जंगल में फैलता रहता है, तब तक चिंता में डूबी ये डाकिनें उसमें उछलती-कूदती रहती हैं।

4.33.41

अहंकारपिशाचेन गृहीतो यो नराधमः । न शास्त्राणि न मन्त्राश्च तस्याभावस्य सिद्धये ॥ ४१ ॥

ahaṃkārapiśācena gṛhīto yo narādhamaḥ | na śāstrāṇi na mantrāśca tasyābhāvasya siddhaye || 41 ||

When the demon of ego takes hold of the worst kind of man, neither scripture nor chant can free him from it.

जब अहंकार रूपी भूत किसी अधम मनुष्य को जकड़ लेता है, तो न कोई शास्त्र और न कोई मंत्र उसे उससे मुक्त कर पाता है।

4.33.42

श्रीराम उवाच । केनोपायेन भगवन्नहंकारो न वर्धते । तं त्वं कथय मे ब्रह्मन्संसारभयशान्तये ॥ ४२ ॥

śrīrāma uvāca | kenopāyena bhagavannahaṃkāro na vardhate | taṃ tvaṃ kathaya me brahmannsaṃsārabhayaśāntaye || 42 ||

Sri Rama said, Lord, by what method does the sense of 'I' not grow? Tell me that, wise one, so that my fear of this world of birth and death may be calmed.

श्रीराम ने कहा, हे भगवन, किस उपाय से 'मैं' का भाव नहीं बढ़ता? हे ब्रह्मन, वह मुझे बताइए, ताकि संसार का यह भय शांत हो जाए।

4.33.43

श्रीवसिष्ठ उवाच । चिन्मात्रदर्पणाकारे निर्मले स्वात्मनि स्थिते । इति भावानुसंधानादहंकारो न वर्धते ॥ ४३ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | cinmātradarpaṇākāre nirmale svātmani sthite | iti bhāvānusaṃdhānādahaṃkāro na vardhate || 43 ||

Sri Vasishtha said, By steadily holding on to this thought, 'I rest in my own self, spotless, shaped like a mirror of pure awareness alone', the sense of 'I' does not grow.

श्रीवसिष्ठ ने कहा, इस विचार को लगातार थामे रहने से, 'मैं अपने ही स्वरूप में टिका हूँ, जो निर्मल है, केवल शुद्ध चेतना के दर्पण जैसा है', 'मैं' का भाव नहीं बढ़ता।

4.33.44

मिथ्येयमिन्द्रजालश्रीः किं मे स्नेहविरागयोः । इत्यन्तरानुसंधानादहंकारो न जायते ॥ ४४ ॥

mithyeyamindrajālaśrīḥ kiṃ me snehavirāgayoḥ | ityantarānusaṃdhānādahaṃkāro na jāyate || 44 ||

'All this glitter of the world is false, like a magician's illusion. What is it to me, whether I feel love for it or dislike for it?' Holding this thought inside, the sense of 'I' does not arise.

'संसार की यह सारी चमक झूठी है, जैसे जादूगर का खेल हो। मुझे इससे क्या, चाहे मुझे इससे प्रेम हो या घृणा?' यह विचार भीतर थामे रखने से 'मैं' का भाव पैदा नहीं होता।

4.33.45

नाहमात्मनि नो यस्य दृश्यश्रिय इति स्वयम् । शान्तेन व्यवहारेण नाहंकारः प्रवर्धते ॥ ४५ ॥

nāhamātmani no yasya dṛśyaśriya iti svayam | śāntena vyavahāreṇa nāhaṃkāraḥ pravardhate || 45 ||

'I am not this small self bound up in the world I see, and the glitter of the visible world does not belong to the true self either.' Holding this thought, and dealing with life calmly and quietly, the sense of 'I' does not grow.

'मैं इस दिखने वाले संसार में बंधा हुआ छोटा सा 'मैं' नहीं हूँ, और इस दिखने वाली चमक का असली स्वरूप से कोई नाता भी नहीं है।' यह विचार रखते हुए और जीवन में शांति से व्यवहार करते हुए 'मैं' का भाव नहीं बढ़ता।

4.33.46

अहं हि जगदित्यन्तर्हेयादेयदृशोः क्षये । समतायां प्रसन्नायां नाहंभावः प्रवर्धते ॥ ४६ ॥

ahaṃ hi jagadityantarheyādeyadṛśoḥ kṣaye | samatāyāṃ prasannāyāṃ nāhaṃbhāvaḥ pravardhate || 46 ||

'I myself am the world', holding this thought inside, once the very distinction between what to take and what to leave falls away, and a clear, calm evenness settles in, the sense of 'I' does not grow.

'मैं ही संसार हूँ', यह विचार भीतर रखते हुए, जब क्या लेना है और क्या छोड़ना है का यह भेद ही मिट जाता है, और एक साफ, शांत समता बस जाती है, तब 'मैं' का भाव नहीं बढ़ता।

4.33.47

अहं चिज्जगदित्यन्तर्हेयादेयदृशोः क्षये । समतायां प्रसन्नायां नाहंभावः प्रवर्धते ॥ ४७ ॥

ahaṃ cijjagadityantarheyādeyadṛśoḥ kṣaye | samatāyāṃ prasannāyāṃ nāhaṃbhāvaḥ pravardhate || 47 ||

'I am awareness, and I am the world', holding this thought inside, once the very distinction between what to take and what to leave falls away, and a clear, calm evenness settles in, the sense of 'I' does not grow.

'मैं चेतना हूँ, और मैं ही संसार हूँ', यह विचार भीतर रखते हुए, जब क्या लेना है और क्या छोड़ना है का यह भेद ही मिट जाता है, और एक साफ, शांत समता बस जाती है, तब 'मैं' का भाव नहीं बढ़ता।

4.33.48

श्रीराम उवाच । किमाकृतिरहंकारः कथं संत्यज्यते प्रभो । सशरीरोऽशरीरश्च त्यक्ते तस्मिंश्च किं भवेत् ॥ ४८ ॥

śrīrāma uvāca | kimākṛtirahaṃkāraḥ kathaṃ saṃtyajyate prabho | saśarīro'śarīraśca tyakte tasmiṃśca kiṃ bhavet || 48 ||

Sri Rama said: Lord, what does the ego look like, and how is it given up? Does it have a body or does it not, and once it is given up, what happens?

श्री राम ने कहा, हे प्रभु, अहंकार का रूप कैसा होता है, और इसे कैसे छोड़ा जाता है? क्या यह शरीर सहित होता है या शरीर रहित, और जब इसे छोड़ दिया जाए तो क्या होता है?

4.33.49

श्रीवसिष्ठ उवाच । त्रिविधो राघवास्तीह त्वहंकारो जगत्त्रये । द्वौ श्रेष्ठावितरस्त्याज्यः शृणु त्वं कथयामि ते ॥ ४९ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | trividho rāghavāstīha tvahaṃkāro jagattraye | dvau śreṣṭhāvitarastyājyaḥ śṛṇu tvaṃ kathayāmi te || 49 ||

Sri Vasishtha said: Rama, in these three worlds the ego is of three kinds. Two of them are good, and the third should be given up. Listen, I will tell you about them.

श्री वसिष्ठ ने कहा, हे राघव, इन तीनों लोकों में अहंकार तीन प्रकार का होता है। इनमें से दो अच्छे हैं और तीसरा त्यागने योग्य है। सुनो, मैं तुम्हें बताता हूँ।

4.33.50

अहं सर्वमिदं विश्वं परमात्माहमच्युतः । नान्यदस्तीति परमा विज्ञेया सा ह्यहंकृतिः ॥ ५० ॥

ahaṃ sarvamidaṃ viśvaṃ paramātmāhamacyutaḥ | nānyadastīti paramā vijñeyā sā hyahaṃkṛtiḥ || 50 ||

The thought 'I am this whole universe, I am the imperishable supreme self, there is nothing else at all' should be known as the highest kind of I-sense.

यह विचार कि 'मैं ही यह सारा विश्व हूँ, मैं ही अविनाशी परमात्मा हूँ, मेरे सिवा और कुछ है ही नहीं', इसे सबसे ऊँचा अहंकार समझना चाहिए।

4.33.51

मोक्षायैषा न बन्धाय जीवन्मुक्तस्य विद्यते । सर्वस्माद्व्यतिरिक्तोऽहं बालाग्रशतकल्पितः ॥ ५१ ॥

mokṣāyaiṣā na bandhāya jīvanmuktasya vidyate | sarvasmādvyatirikto'haṃ bālāgraśatakalpitaḥ || 51 ||

This sense of 'I' leads to liberation, not to bondage; it belongs to one who is liberated while still alive. The second kind of I-sense is this, 'I am separate from everything, as fine as the hundredth part of a hair's tip.'

यह अहंकार मुक्ति के लिए है, बंधन के लिए नहीं; यह उस व्यक्ति में पाया जाता है जो जीते जी मुक्त हो चुका है। दूसरे प्रकार का अहंकार यह है, 'मैं सबसे अलग हूँ, बाल की नोक के सौवें हिस्से जितना सूक्ष्म हूँ।'

4.33.52

इति या संविदेषासौ द्वितीयाहंकृतिः शुभा । मोक्षायैषा न बन्धाय जीवन्मुक्तस्य विद्यते ॥ ५२ ॥

iti yā saṃvideṣāsau dvitīyāhaṃkṛtiḥ śubhā | mokṣāyaiṣā na bandhāya jīvanmuktasya vidyate || 52 ||

This awareness is the second kind of I-sense, and it is a good one. It too leads to liberation, not to bondage, and it belongs to one who is liberated while still alive.

यह जो चेतना है, यही दूसरा शुभ अहंकार है। यह भी मुक्ति के लिए है, बंधन के लिए नहीं, और यह उसी में होता है जो जीते जी मुक्त हो चुका है।

4.33.53

अहंकाराभिधा या सा कल्प्यते नतु वास्तवी । पाणिपादादिमात्रोऽयमहमित्येष निश्चयः ॥ ५३ ॥

ahaṃkārābhidhā yā sā kalpyate natu vāstavī | pāṇipādādimātro'yamahamityeṣa niścayaḥ || 53 ||

The kind of ego that goes by that name in the ordinary sense is only imagined, not real. It is the fixed idea, 'I am just this, hands, feet, and the rest.'

जिसे आम तौर पर 'अहंकार' कहा जाता है, वह केवल कल्पना है, सच नहीं। यह वही पक्की धारणा है कि 'मैं बस यही हूँ, हाथ, पैर वगैरह।'

4.33.54

अहंकारस्तृतीयोऽसौ लौकिकस्तुच्छ एव सः । वर्ज्य एव दुरात्मासौ शत्रुरेव परः स्मृतः ॥ ५४ ॥

ahaṃkārastṛtīyo'sau laukikastuccha eva saḥ | varjya eva durātmāsau śatrureva paraḥ smṛtaḥ || 54 ||

This third ego is the ordinary, worldly one, and it is a worthless thing. It must be given up; this evil-natured ego is known as the worst enemy.

यह तीसरा अहंकार साधारण लौकिक अहंकार है, और यह बिल्कुल तुच्छ है। इसे जरूर त्यागना चाहिए; यह दुष्ट स्वभाव वाला अहंकार सबसे बड़ा शत्रु माना गया है।

4.33.55

अनेनाभिहतो जन्तुर्न भूयः परिरोहति । रिपुणानेन बलिना विविधाधिप्रदायिना ॥ ५५ ॥

anenābhihatō janturna bhūyaḥ parirōhati | ripuṇānēna balinā vividhādhipradāyinā || 55 ||

Struck down by this powerful enemy, which brings all kinds of suffering, a creature never rises again.

इस शक्तिशाली शत्रु की मार खाकर, जो तरह तरह के दुख देता है, प्राणी फिर कभी उठ नहीं पाता।

4.33.56

कष्टीकृतमतिर्लोकः संकटेष्वेव मज्जति । अनया दुरहंकृत्या भावात्संसक्तया चिरम् ॥ ५६ ॥

kaṣṭīkṛtamatirlokaḥ saṃkaṭeṣveva majjati | anayā durahaṅkṛtyā bhāvātsaṃsaktyā ciram || 56 ||

Because of this evil ego, which clings to the mind for a long time, people's minds fill up with distress, and they keep sinking into one trouble after another.

इस दुष्ट अहंकार के कारण, जो लंबे समय तक मन से चिपका रहता है, लोगों का मन दुखी हो जाता है, और वे बार बार मुसीबतों में डूबते रहते हैं।

4.33.57

शिष्टाहंकारवाञ्जन्तुर्भगवान्याति मुक्तताम् । लोकाहंकारवद्दोषवपुरस्मिन्निरूपणः ॥ ५७ ॥

śiṣṭāhaṅkāravāñjanturbhagavānyāti muktatām | lokāhaṅkāravaddoṣavapurasminnirūpaṇaḥ || 57 ||

A being who holds the good kind of I-sense becomes glorious and reaches liberation. The one who holds the ordinary, worldly I-sense, as described here, has a body that is nothing but a heap of faults.

जिस प्राणी में अच्छे प्रकार का अहंकार होता है, वह तेजस्वी होकर मुक्ति पाता है। जिसमें साधारण लौकिक अहंकार होता है, जैसा यहाँ बताया गया, उसका शरीर मानो दोषों का ढेर ही है।

4.33.58

न देहोऽस्मीति निर्णीय वर्जनं महतां मतम् । प्रथमं द्वावहंकारावङ्गीकृत्यान्त्यलौकिकौ ॥ ५८ ॥

na deho'smīti nirṇīya varjanam mahatāṃ matam | prathamaṃ dvāvahaṅkārāvāṅgīkṛtyāntyalaukikau || 58 ||

The wise hold this view, decide firmly that 'I am not the body,' and give up the worldly ego. Do this by first accepting the other two kinds of I-sense, the highest one and the one that does not belong to the world.

बुद्धिमान लोगों का यही मत है, यह निश्चय कर लो कि 'मैं शरीर नहीं हूँ,' और लौकिक अहंकार को त्याग दो। इसके लिए पहले उन दो अहंकारों को अपनाओ जो सबसे ऊँचे हैं और संसार से परे हैं।

4.33.59

प्रथमं द्वावहंकारावङ्गीकृत्यान्त्यलौकिकौ । तृतीयाहंकृतिस्त्याज्या लौकिकी दुःखदायिनी ॥ ५९ ॥

prathamaṃ dvāvahaṅkārāvāṅgīkṛtyāntyalaukikau | tṛtīyāhaṅkṛtistyājyā laukikī duḥkhadāyinī || 59 ||

First accept those two kinds of I-sense, the highest one and the one apart from the world, and then give up the third, the ordinary worldly I-sense, which brings only suffering.

पहले उन दो अहंकारों को अपनाओ, एक सबसे ऊँचा और दूसरा संसार से परे, और फिर तीसरे साधारण लौकिक अहंकार को त्याग दो, जो केवल दुख ही देता है।

4.33.60

अनया दुरहंकृत्या दामव्यालकटाः किल । तां दशां समनुप्राप्ता या कथास्वपि खेददा ॥ ६० ॥

anayā durahaṅkṛtyā dāmavyālakaṭāḥ kila | tāṃ daśāṃ samanuprāptā yā kathāsvapi khedadā || 60 ||

It was this evil I-sense that brought Dama, Vyala, and Kata to that condition, a state so terrible that even hearing its story brings sorrow.

यही दुष्ट अहंकार था जिसने दाम, व्याल और कट को उस दशा तक पहुँचाया, ऐसी दशा जिसकी कथा सुनकर भी दुख होता है।

4.33.61

श्रीराम उवाच । तृतीयां लौकिकीमेतां त्यक्त्वा चित्तादहंकृतिम् । किंभावः पुरुषो ब्रह्मन्प्राप्नुयादात्मनो हितम् ॥ ६१ ॥

śrīrāma uvāca | tṛtīyāṃ laukikīmetāṃ tyaktvā cittādahaṃkṛtim | kiṃbhāvaḥ puruṣo brahmanprāpnuyādātmano hitam || 61 ||

Sri Rama said: Brahmin, once a person has given up this third, worldly I-sense from the mind, in what state of being does he then attain what is truly good for himself?

श्री राम ने कहा, हे ब्राह्मण, जब मनुष्य मन से इस तीसरे लौकिक अहंकार को त्याग देता है, तो किस मनोदशा में वह अपना सच्चा हित पाता है?

4.33.62

श्रीवसिष्ठ उवाच । एषा तावत्परित्याज्या त्यक्त्वैतां दुःखदायिनीम् । यथा यथा पुमांस्तिष्ठेत्परमेति तथा तथा ॥ ६२ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | eṣā tāvatparityājyā tyaktvaitāṃ duḥkhadāyinīm | yathā yathā pumāṃstiṣṭhetparameiti tathā tathā || 62 ||

Sri Vasishtha said: This ego must be given up first, the one that causes suffering. After giving it up, whatever way a person then lives, in that same way he reaches the highest state.

श्री वसिष्ठ ने कहा, तो पहले इसी दुखदायी अहंकार को त्यागना चाहिए। इसे त्यागने के बाद मनुष्य जिस भी तरह रहे, उसी तरह वह सर्वोच्च अवस्था को पा लेता है।

4.33.63

अहंकारद्दशावेते पूर्वोक्ते भावयन्यदि । तिष्ठेदुपैति परमं तत्पदं पुरुषोऽनघ ॥ ६३ ॥

ahaṃkāradṛśāvete pūrvokte bhāvayanyadi | tiṣṭhedupaiti paramaṃ tatpadaṃ puruṣo'nagha || 63 ||

Sinless one, if a person keeps in mind these two kinds of I-sense spoken of earlier and lives by them, he attains that highest state.

हे निष्पाप, यदि मनुष्य पहले बताए गए इन दो प्रकार के अहंकारों को मन में रखकर जिए, तो वह उस सर्वोच्च अवस्था को पा लेता है।

4.33.64

अथ ते अपि संत्यज्य सर्वाहंकृतिवर्जितः । संतिष्ठेत तथात्युच्चैः पदमेवाधिरोहति ॥ ६४ ॥

atha te api saṃtyajya sarvāhaṃkṛtivarjitaḥ | saṃtiṣṭheta tathātyucchaiḥ padamevādhirohati || 64 ||

But if he gives up even those two and remains completely free of all I-sense, he rises higher still, all the way to that highest state.

परंतु यदि वह उन दोनों को भी त्याग दे, और हर तरह के अहंकार से पूरी तरह मुक्त होकर रहे, तो वह और भी ऊँचा उठकर उसी सर्वोच्च पद तक पहुँच जाता है।

4.33.65

सर्वदा सर्वयत्नेन लौकिकी दुरहंकृतिः । परमानन्दबोधाय वर्जनीयाऽनया धिया ॥ ६५ ॥

sarvadā sarvayatnena laukikī duraḥkṛtiḥ | paramānandabodhāya varjanīyā'nayā dhiyā || 65 ||

So always, with every effort, one should give up the worldly, evil I-sense, keeping this understanding in mind, in order to reach supreme bliss.

इसलिए हमेशा, पूरी कोशिश से, इसी समझ के साथ, सर्वोच्च आनंद पाने के लिए लौकिक दुष्ट अहंकार को त्याग देना चाहिए।

4.33.66

शरीरास्थामयापुण्यदुरहंकारवर्जनम्। अत्यन्तपरमं श्रेय एतदेव परं पदम्॥ ६६॥

śarīrāsthāmayāpuṇyaduraha ṃkāravarjanam | atyantaparama ṃ śreya etadeva para ṃ padam || 66 ||

Giving up the evil ego bound to the body, to its condition, its sickness, its faults, this alone is the highest good; this itself is the supreme state.

शरीर से जुड़े दुष्ट अहंकार को त्याग देना, उसकी दशा, उसकी बीमारी और उसके दोषों से जुड़े अहंकार को छोड़ देना, यही सबसे बड़ा कल्याण है, यही सर्वोच्च अवस्था है।

4.33.67

भावादहंकृतिं त्यक्त्वा स्थूलामेतां हि लौकिकीम्। तिष्ठन्व्यवहरन्वापि न नरः प्रपतत्यधः॥ ६७॥

bhāvādaha ṃkṛti ṃ tyaktvā sthūlāmetā ṃ hi laukikīm | tiṣṭhanvyavaharanvāpi na naraḥ prapatatyadhaḥ || 67 ||

Once a person has truly given up this coarse, worldly I-sense from his heart, he does not fall down, whether he sits quietly or goes about his daily business.

जब मनुष्य इस स्थूल लौकिक अहंकार को अपने मन से सचमुच त्याग देता है, तो चाहे वह चुपचाप बैठा रहे या अपना रोजमर्रा का काम करता रहे, वह कभी नीचे नहीं गिरता।

4.33.68

संशान्ताहंकृतेर्जन्तोर्भोगा रोगा महामते। न स्वदन्ते सुतृप्तस्य यथा प्रतिविषा रसाः॥ ६८॥

sa ṃśāntāha ṃkṛterjantorbho gā rogā mahāmate | na svadante sutṛptasya yathā prativiṣā rasāḥ || 68 ||

Wise one, for a person whose ego has fully quieted down, neither pleasures nor illnesses feel like anything anymore, just as food does not taste good to someone who is already full, as though it were poisoned.

हे बुद्धिमान, जिसका अहंकार पूरी तरह शांत हो चुका है, उसे न तो सुख छूते हैं और न रोग, जैसे पेट भरे व्यक्ति को भोजन का स्वाद फीका लगता है, मानो उसमें जहर मिला हो।

4.33.69

भोगेष्वस्वदमानेषु पुंसः श्रेयः पुरो गतम्। क्षीणेऽन्धकारे किं नाम मनसोऽन्यत्प्रवर्तते॥ ६९॥

bhogeṣvasvadamāneṣu puṃsaḥ śreyaḥ puro gatam | kṣīṇe'ndhakāre kiṃ nāma manaso'nyatpravartate || 69 ||

When pleasures stop tasting sweet to a person, the highest good stands right in front of him, just as, when darkness fades away, the mind has nothing else left to turn to.

जब किसी व्यक्ति को सुख अच्छे नहीं लगते, तो उसका परम कल्याण उसके ठीक सामने आ खड़ा होता है, जैसे जब अंधेरा मिट जाता है तो मन को कहीं और मुड़ने की जरूरत ही नहीं रहती।

4.33.70

अहंकारानुसंधानवर्जनादेव राघव। पौरुषेण प्रयत्नाच्च तीर्यते भवसागरः॥ ७०॥

ahaṃkārānusandhānavarjanādeva rāghava | pauruṣeṇa prayatnācca tīryate bhavasāgaraḥ || 70 ||

Rama, simply by giving up the habit of chasing after the ego, and through one's own effort, one crosses over the ocean of worldly existence.

हे राम, अहंकार का पीछा करना छोड़ देने भर से, और अपनी मेहनत से, यह संसार रूपी सागर पार हो जाता है।

4.33.71

नाहं न तेन मम किंचिदपीति मत्वा सर्वं च मे सकलमप्यहमेव चेति। लब्धास्पदं मनसि संविदमेवमीड्यां नीत्वा स्थितिं परमुपैति पदं महात्मा ॥ ७१ ॥

nāhaṃ na tena mama kiṃcidapīti matvā sarvaṃ ca me sakalamapyahameva ceti | labdhāspadaṃ manasi saṃvidamevamīḍyāṃ nītvā sthitiṃ paramupaiti padaṃ mahātmā || 71 ||

Thinking, 'I do nothing, and nothing at all is mine because of it,' and also thinking, 'Everything, all of it, is truly myself,' holding this worthy understanding firmly settled in the mind, and so growing steady, the great soul reaches the highest state.

यह सोचकर कि 'न मैं कुछ करता हूँ, न इस वजह से कुछ मेरा है,' और यह भी सोचकर कि 'सब कुछ, यह सारा जगत, सचमुच मैं ही हूँ,' इस श्रेष्ठ समझ को मन में पूरी तरह बिठाकर और स्थिर होकर, महात्मा सर्वोच्च अवस्था को पा लेता है।

Chapter 34

4.34.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्र ते शृणु वक्ष्यामि दामादिषु गतेष्वथ । यद्वृत्तं शम्बरस्यैव नगरे नगसंनिभे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atra te śṛṇu vakṣyāmi dāmādiṣu gateṣvatha | yadvṛttaṃ śambarasyeva nagare nagasaṃnibhe || 1 ||

Sri Vasishtha said, now listen, I will tell you what happened after Dama and the others were gone, in the city of Shambara himself, a city as big as a mountain.

श्री वसिष्ठ ने कहा, अब सुनो, मैं तुम्हें बताता हूँ कि दाम और उसके साथियों के चले जाने के बाद, शम्बर के अपने ही नगर में, जो पहाड़ जैसा बड़ा था, क्या हुआ।

4.34.2

तथा गगनविभ्रष्टे समस्ते ध्वस्तसंस्थितौ । विनष्टे शम्बरानीके शरदीवाब्दमण्डले ॥ २ ॥

tathā gaganavibhraṣṭe samaste dhvastasaṃsthitau | vinaṣṭe śambarānīke śaradīvābdamaṇḍale || 2 ||

His whole army had fallen from the sky, its ranks completely shattered, and Shambara's forces were destroyed, just like a mass of clouds scattered in the autumn sky.

उसकी पूरी सेना आकाश से गिर पड़ी थी, उसकी पूरी बनावट टूट चुकी थी, और शम्बर की सेना उसी तरह नष्ट हो गई थी जैसे शरद ऋतु में बादलों का समूह बिखर जाता है।

4.34.3

देवनिर्जितसैन्योऽसौ नीत्वा कतिपयाः समाः । पुनर्देववधोयुक्तश्चिन्तयामास दानवः ॥ ३ ॥

devanirjitasainyo'sau nītvā katipayāḥ samāḥ | punardevavadhoyuktaścintayāmāsa dānavaḥ || 3 ||

That demon, whose army had been defeated by the gods, let a few years go by, and then, once more set on killing the gods, he began to think.

उस राक्षस की सेना देवताओं से हार चुकी थी। कुछ साल बीत जाने के बाद, वह फिर से देवताओं को मारने की सोचने लगा।

4.34.4

दामादयस्तु रचिता ये मया मायया ऽसुराः । मौर्ख्यातैर्भाविता युद्धे मिथ्यैव दुरहंकृतिः ॥ ४ ॥

dāmādayastu racitā ye mayā māyayā'surāḥ | maurkhyātairbhāvitā yuddhe mithyaiva durahaṃkṛtiḥ || 4 ||

He thought, but Dama and the others, the demons I made with my magic power, were filled with foolishness in that fight, their overbearing pride was nothing but false.

उसने सोचा, पर दाम और उसके साथी, जिन राक्षसों को मैंने अपनी माया से बनाया था, वे लड़ाई में मूर्खता से भरे रहे। उनका बड़ा घमंड बस झूठा था।

4.34.5

इदानीं संसृजाम्यन्यान्दानवान्माययोदितान् । तानप्यध्यात्मशास्त्रज्ञान्सविवेकान्करोम्यहम् ॥ ५ ॥

idānīṃ saṃsṛjāmyanyāndānavānmāyayoditān | tānapyadhyātmaśāstrajñānsavivekānkaromyaham || 5 ||

Now I will create other demons, brought forth through my magic power, and this time I will make them knowers of the science of the self too, with the power to tell right from wrong.

अब मैं अपनी माया से और राक्षस बनाऊँगा, और इस बार उन्हें आत्मज्ञान का ज्ञाता भी बनाऊँगा, जिनमें सही और गलत को पहचानने की समझ होगी।

4.34.6

ततस्तत्त्वपरिज्ञानान्मिथ्याभावनयोज्झिताः । नाहंकारं प्रयास्यन्ति विजेष्यन्ति च तान्सुरान् ॥ ६ ॥

tatastattvaparijñānānmithyābhāvanayojjhitāḥ | nāhaṃkāraṃ prayāsyanti vijeṣyanti ca tānsurān || 6 ||

Then, through full knowledge of the truth and freed from false thinking, they will not fall into pride, and they will conquer those gods.

फिर, सच्चे ज्ञान के कारण और झूठी सोच से मुक्त होकर, वे घमंड में नहीं पड़ेंगे, और उन देवताओं को हरा देंगे।

4.34.7

इति संचिन्त्य दैत्येन्द्रस्तादृशान्दानवान्धिया । माययोत्पादयामास बुद्बुदानिव वारिधिः ॥ ७ ॥

iti saṃcintya daityendrastādṛśāndānavāndhiyā | māyayotpādayāmāsa budbudāniva vāridhiḥ || 7 ||

Thinking this, the lord of the demons produced such demons through his magic power, by the force of his mind alone, just as the ocean produces bubbles.

यह सोचकर, राक्षसों के राजा ने अपनी माया से और अपने मन की शक्ति से ऐसे राक्षस बना दिए, जैसे समुद्र बुलबुले बना देता है।

4.34.8

सर्वज्ञा वेद्यवेत्तारो वीतरागा गतैनसः । यथाप्राप्तैककर्तारो भावितात्मान उत्तमाः ॥ ८ ॥

sarvajñā vedyavettāro vītarāgā gataienasaḥ | yathāprāptaikakartāro bhāvitātmāna uttamāḥ || 8 ||

They knew everything, they knew all that could be known. They were free of desire and free of wrongdoing. They did only the one task that came their way, and their minds were fully trained, they were the best of all.

वे सब कुछ जानते थे, वे हर जानने योग्य बात को जानते थे। वे इच्छा से और पाप से मुक्त थे। जो भी काम उनके सामने आता, बस वही करते थे, और उनका मन पूरी तरह से साधा हुआ था, वे सबसे श्रेष्ठ थे।

4.34.9

भीमो भासो दृढ इति नामभिः परिलाञ्छिताः । जगत्तृणमिवाशेषं पश्यन्तः पावनाशयाः ॥ ९ ॥

bhīmo bhāso dṛḍha iti nāmabhiḥ parilāñchitāḥ | jagattṛṇamivāśeṣaṃ paśyantaḥ pāvanāśayāḥ || 9 ||

They were marked out by the names Bhima, Bhasa, and Dridha. They looked at this whole world as if it were nothing more than a blade of grass, and their intentions were pure.

उनके नाम भीम, भास और दृढ़ थे। वे इस पूरी दुनिया को एक तिनके के समान ही देखते थे, और उनकी नीयत साफ थी।

4.34.10

ते दैत्या भुवनं प्राप्य च्छादयामासुरम्बरम् । गर्जन्तो हेतितडितः प्रावृषीव पयोधराः ॥ १० ॥

te daityā bhuvanaṃ prāpya chchādayāmāsuraṃbaram | garjanto hetitāḍitaḥ prāvṛṣīva payodharāḥ || 10 ||

Those demons reached this world and covered the whole sky. They roared, and their weapons flashed like lightning bolts, just like rain clouds in the monsoon.

वे राक्षस इस दुनिया में पहुँचे और पूरे आकाश को ढक दिया। वे गरजते थे, और उनके हथियार बिजली की तरह चमकते थे, ठीक वैसे ही जैसे बरसात में बादल गरजते और चमकते हैं।

4.34.11

अयुध्यन्त समं देवैरपि वर्षगणान्बहून् । विवेकवशतो जग्मुर्नाहंकारं कदाचन ॥ ११ ॥

ayudhyanta samaṃ devairapi varṣagaṇānbahūn | vivekavaśato jagmurnāhaṃkāraṃ kadācana || 11 ||

They fought against the gods for many, many years. But because they had the power to tell right from wrong, they never once fell into pride.

वे कई-कई सालों तक देवताओं से लड़ते रहे। पर सही-गलत पहचानने की समझ होने के कारण, वे कभी घमंड में नहीं पड़े।

4.34.12

तेषां यावदुदेत्यन्तर्ममेदमिति वासना । तावत्कोऽयमहं चेति विचाराद्यात्यसत्यताम् ॥ १२ ॥

teṣāṃ yāvadudetyantarmamedamiti vāsanā | tāvatko'yamahaṃ ceti vicārādyātyasatyatām || 12 ||

Whenever the thought this is mine rose up inside them, right then they asked, who is this I, and through that question, the thought turned out to be unreal.

जब भी उनके भीतर यह विचार उठता कि यह मेरा है, वे उसी पल पूछते, यह मैं कौन हूँ, और इस सवाल से वह विचार झूठा साबित हो जाता।

4.34.13

असच्छरीरं विबुधाः कोऽसावहमिति स्थितिः । विचारादित्थमेतेषां प्रोद्गुर्न भयादयः ॥ १३ ॥

asaccharīraṃ vibudhāḥ ko'sāvahamiti sthitiḥ | vicārādithameteṣāṃ prodagurna bhayādayaḥ || 13 ||

The body is unreal, this was the settled understanding of these wise ones, who is this I. Through this steady questioning, fear and other such troubles never rose up in them.

शरीर सच्चा नहीं है, यही इन बुद्धिमानों की पक्की समझ थी, यह मैं कौन हूँ। इस लगातार सवाल के कारण, उनमें डर या ऐसी कोई और परेशानी कभी नहीं उठी।

4.34.14

असच्छरीरं नास्तीदं चिच्छुद्धैवात्मनि स्थिता । अहं नाम न चान्योऽस्ति निश्चित्यैवासुरा ययुः ॥ १४ ॥

asaccharīraṃ nāstīdaṃ cicchuddhaivātmani sthitā | ahaṃ nāma na cānyo'sti niścityaivāsurā yayuḥ || 14 ||

This body is unreal, it does not exist. Only pure consciousness rests in the self. There is no I by that name, and nothing else exists either. Having settled this with full certainty, the demons went on living by it.

यह शरीर सच्चा नहीं है, यह है ही नहीं। बस शुद्ध चेतना ही स्वयं में टिकी है। इस नाम का कोई मैं नहीं है, और कुछ और भी नहीं है। यह पूरी तरह से तय करके, वे राक्षस इसी समझ के साथ जीते रहे।

4.34.15

ततस्तैर्निरहंकारैर्जरामरणनिर्भयैः । प्राप्तार्थकारिभिर्धीरैर्वर्तमानानुसारिभिः ॥ १५ ॥

tatastairnirahaṃkārairjarāmaraṇanirbhayaiḥ | prāptārthakāribhirdhīrairvartamānānusāribhiḥ || 15 ||

They had no ego. They were unafraid of old age and death. They did only the task that came to hand. They were steady and firm, and they went only by what was actually in front of them.

उनमें कोई अहंकार नहीं था। उन्हें बुढ़ापे और मौत का कोई डर नहीं था। जो काम सामने आता, बस वही करते थे। वे स्थिर और दृढ़ थे, और जो सच में सामने था, बस उसी के अनुसार चलते थे।

4.34.16

असक्तबुद्धिभिर्नित्यं हतान्यैरप्यहन्तृभिः । वासनाजालनिर्मुक्तैः कृतकार्यैरकर्तृभिः ॥ १६ ॥

asaktabuddhibhirnityaṃ hatānyairapyahantṛbhiḥ | vāsanājālanirmuktaiḥ kṛtakāryairakartṛbhiḥ || 16 ||

Their minds were never attached. Even when they killed others, they did not feel I killed. They were free from the whole net of desires. Their work was done, yet they did not think I am the one doing it.

उनका मन कभी किसी से जुड़ा नहीं रहता था। दूसरों को मारते हुए भी, उन्हें यह नहीं लगता था कि मैंने मारा। वे इच्छाओं के पूरे जाल से मुक्त थे। उनका काम पूरा होता, फिर भी वे यह नहीं सोचते थे कि मैं ही यह कर रहा हूँ।

4.34.17

प्रभोः कार्यमिदं कार्यमिति संगरतत्परैः । वीतरागैर्गतद्वेषैः सर्वदा समदृष्टिभिः ॥ १७ ॥

prabhoḥ kāryamidaṃ kāryamiti saṃgaratatparaiḥ | vītarāgairgatadveṣaiḥ sarvadā samadṛṣṭibhiḥ || 17 ||

They fought with this one thought, this is our master's task, and it must be done. They were free of desire and free of hatred, and at all times they looked at everyone with the same eye.

वे बस इसी एक विचार से लड़ते थे, यह हमारे स्वामी का काम है, और इसे करना ही है। वे इच्छा से और द्वेष से मुक्त थे, और हर समय सबको एक ही नज़र से देखते थे।

4.34.18

सा दैवी दानवैः सेना भीमभासदृढादिभिः । हता भुक्ता हृता पुष्टा स्वान्नश्रीरिव भोक्तृभिः ॥ १८ ॥

sā daivī dānavaiḥ senā bhīmabhāsadṛḍhādibhiḥ | hatā bhukta hṛtā puṣṭā svānnaśrīriva bhoktṛbhiḥ || 18 ||

So the gods' army was struck down, devoured, carried off, and used to nourish these demons, Bhima, Bhasa, Dridha and the rest, just as people feast on their own fine food and grow strong on it.

इस तरह देवताओं की सेना को इन राक्षसों, भीम, भास, दृढ़ और उनके साथियों ने मार डाला, खा लिया, छीन लिया, और उससे खुद को मजबूत किया, ठीक वैसे ही जैसे लोग अपने बढ़िया भोजन को खाकर उससे ताकत पाते हैं।

4.34.19

भीमभासदृढक्षुण्णा जाता गीर्वाणवाहिनी । परिदुद्राव वेगेन गङ्गेव हिमवच्च्युता ॥ १९ ॥

bhīmabhāsadṛḍhakṣuṇṇā jātā gīrvāṇavāhinī | paridudrāva vegena gaṅgeva himavaccayutā || 19 ||

Crushed by Bhima, Bhasa and Dridha, the army of the gods broke and fled at great speed, like the Ganga rushing down from the Himalaya mountain.

भीम, भास और दृढ़ से कुचली जाकर देवताओं की सेना टूट गई और बड़ी तेज़ी से भाग खड़ी हुई, जैसे गंगा हिमालय पर्वत से वेग से नीचे गिरती है।

4.34.20

सा सुरानीकिनी देवं क्षीरोदार्णवशायिनम् । जगाम शरणं शैलं वातार्तेवाब्दमालिका ॥ २० ॥

sā surānīkinī devaṃ kṣīrodārṇavaśāyinam | jagāma śaraṇaṃ śailaṃ vātārtevābdamālikā || 20 ||

That army of the gods ran for shelter to Vishnu, who lies on the ocean of milk, the way a line of clouds pushed by the wind rushes to a mountain.

देवताओं की वह सेना विष्णु की शरण में भागी, जो क्षीरसागर में लेटे रहते हैं, जैसे हवा से उड़ती बादलों की कतार किसी पहाड़ की शरण में भाग जाती है।

4.34.21

हरिराश्वासयामास तां भीतां देववाहिनीम्। भुजङ्गाभिवृतामेकां रमणीमिव नायकः ॥ २१ ॥

harirāśvāsayāmāsa tāṃ bhītāṃ devavāhinīm | bhujaṅgābhivṛtāmekāṃ ramaṇīmiva nāyakaḥ || 21 ||

Vishnu comforted that frightened army of the gods, the way a lover comforts a lone woman surrounded by a snake.

विष्णु ने देवताओं की उस डरी हुई सेना को धीरज बँधाया, जैसे कोई प्रेमी किसी अकेली स्त्री को, जो साँप से घिरी हो, ढाढ़स देता है।

4.34.22

अथ क्षीरोदकुहरे तावत्सा सुरवाहिनी। उवास यावद्भगवांस्तन्निरासार्थमुद्ययौ ॥ २२ ॥

atha kṣīrodakuhare tāvatsā suravāhinī | uvāsa yāvadbhagavāṃstannirāsārthamudyayau || 22 ||

Then the army of the gods stayed hidden in a cave of the ocean of milk, until the Lord set out to drive off that enemy.

फिर देवताओं की सेना क्षीरसागर की एक गुफा में तब तक छिपी रही, जब तक भगवान उस शत्रु को भगाने के लिए नहीं निकल पड़े।

4.34.23

बभूव दारुणं युद्धं शौरिशम्बरयोस्ततः। अकाल इव कल्पान्ते समुड्डीनकुलाचलम् ॥ २३ ॥

babhūva dāruṇaṃ yuddhaṃ śauriśambarayostataḥ | akāla iva kalpānte samuḍḍīnakulācalam || 23 ||

Then a terrible battle broke out between Vishnu and Shambara - as if, before its time, whole mountain ranges were flying up into the sky, the way they do when an age of the world ends.

फिर विष्णु और शम्बर के बीच एक भयंकर युद्ध छिड़ गया, मानो समय से पहले ही, प्रलय के समय जैसे पहाड़ों की पूरी शृंखलाएँ आकाश में उड़ने लगी हों।

4.34.24

शशाम समरे तस्मिन्दैत्यः सबलवाहनः। नारायणहतो यातः शम्बरो वैष्णवीं पुरीम् ॥ २४ ॥

śaśāma samare tasmin daityaḥ sabalavāhanaḥ | nārāyaṇahato yātaḥ śambaro vaiṣṇavīṃ purīm || 24 ||

In that battle, the demon Shambara, together with his army and his mount, was stopped. Struck down by Vishnu, Shambara went to Vishnu's own city.

उस युद्ध में शम्बर नामक असुर अपनी सेना और सवारी सहित रुक गया। विष्णु के प्रहार से मारा जाकर शम्बर विष्णु के अपने नगर को चला गया।

4.34.25

भीमभासदृढास्ते तु तस्मिन्विषमसंगरे। विष्णुनैव शमं नीताः पवनेनेव दीपिकाः ॥ २५ ॥

bhīmabhāsadṛḍhāste tu tasminviṣamasamgare | viṣṇunaiva śamaṃ nītāḥ pavaneneva dīpikāḥ || 25 ||

But Bhima, Bhasa and Dridha, in that fierce battle, were stilled by Vishnu himself, like little lamps put out by the wind.

पर भीम, भास और दृढ़ को उस भीषण युद्ध में स्वयं विष्णु ने शांत कर दिया, जैसे हवा से छोटे दीये बुझ जाते हैं।

4.34.26

ते हि निर्वासना एव यदा शान्तिमुपागताः। न तदैषां गतिर्ज्ञाता दीपानामिव शाम्यताम् ॥ २६ ॥

te hi nirvāsanā eva yadā śāntimupāgatāḥ | na tadaiṣāṃ gatirjñātā dīpānāmiva śāmyatām || 26 ||

Since they had no desire left in them at all, when they came to their end, no one could tell where they had gone - just as no one can tell where the flame of a dying lamp has gone.

चूँकि उनमें कोई इच्छा बची ही नहीं थी, इसलिए जब उनका अंत हुआ, तो कोई नहीं जान सका कि वे कहाँ गए, जैसे बुझते हुए दीये की लौ कहाँ गई, यह कोई नहीं जान पाता।

4.34.27

तस्माद्वासनया बद्धं मुक्तं निर्वासनं मनः । राम निर्वासनीभावमाहरस्व विवेकतः ॥ २७ ॥

tasmādvāsanayā baddhaṃ muktaṃ nirvāsanaṃ manaḥ | rāma nirvāsanībhāvamāharasva vivekataḥ || 27 ||

So a mind full of desire is a bound mind, and a mind free of desire is a free mind. Rama, use your good sense and become free of desire.

इसलिए जिस मन में इच्छा है, वह बँधा हुआ मन है, और जिस मन में इच्छा नहीं है, वह मुक्त मन है। हे राम, अपनी समझ का सहारा लेकर इच्छा-रहित बन जा।

4.34.28

सम्यगालोकनात्सत्याद्वासना प्रविलीयते । वासनाविलये चेतः शममायाति दीपवत् ॥ २८ ॥

samyagālokanātsatyādvāsanā pravilīyate | vāsanāvilaye cetaḥ śamamāyāti dīpavat || 28 ||

When you see the truth clearly, desire melts away. And when desire melts away, the mind grows still, like a lamp going out.

जब सच्चाई को साफ़-साफ़ देख लिया जाता है, तो इच्छा घुल जाती है। और इच्छा के घुलते ही मन शांत हो जाता है, जैसे दीया बुझ जाता है।

4.34.29

न सत्यं किंचिदेवेह सद्भावो भावयत्यलम् । नास्त्येव भावना तस्मादित्येतत्सम्यगीक्षणम् ॥ २९ ॥

na satyaṃ kiṃcideveha sadbhāvo bhāvayaty alam | nāstyeva bhāvanā tasmādityetatsamyagīkṣaṇam || 29 ||

Nothing here is truly real. Only true being itself fully exists. So the very idea that separate things are being created does not exist at all - this is what it means to see rightly.

यहाँ कुछ भी सचमुच सच नहीं है। बस सच्चा अस्तित्व ही पूरी तरह से है। इसलिए यह विचार कि अलग-अलग चीज़ें बन रही हैं, बिलकुल झूठा है, सही ढंग से देखना यही है।

4.34.30

आत्मैवेदं जगत्सर्वं कः किं भावयतु क्व वा । भावना नाम नास्त्वेव तदेतत्सम्यगीक्षणम् ॥ ३० ॥

ātmaivedaṃ jagatsarvaṃ kaḥ kiṃ bhāvayatu kva vā | bhāvanā nāma nāstveva tadetatsamyagīkṣaṇam || 30 ||

This whole world is nothing but the Self. So who could imagine what, or where? There is no such thing as imagining at all - this is what it means to see rightly.

यह पूरा संसार आत्मा के सिवा कुछ नहीं है। तो कौन, क्या और कहाँ कल्पना करे? कल्पना करना नाम की कोई चीज़ है ही नहीं, सही ढंग से देखना यही है।

4.34.31

वासनाचित्तनामानौ शब्दावर्थसमन्वितौ । सत्यावलोकनाद्यत्र विलीनौ तत्परं पदम् ॥ ३१ ॥

vāsanācittanāmānau śabdāvarthasamanvitau | satyāvalokanādyatra vilīnau tatparaṃ padam || 31 ||

Desire and mind are two words, and both carry a real meaning. But where, through seeing the truth, these two dissolve away - that is the highest state.

इच्छा और मन, ये दो शब्द हैं, और दोनों का कुछ अर्थ भी है। पर जहाँ सच्चाई को देखने से ये दोनों घुलकर मिट जाते हैं, वही सबसे ऊँची अवस्था है।

4.34.32

वासनावलितं चित्तमिह स्थितिमुपागतम्। तदेव तद्विनिर्मुक्तं विमुक्तमिति कथ्यते ॥ ३२ ॥

vāsanāvalitaṃ cittamih sthitimupāgatam | tadeva tadvinirmuktaṃ vimuktamiti kathyate || 32 ||

A mind tangled up with desire is what we call being bound, here in this world. That very same mind, once free of desire, is what we call being liberated.

जो मन इच्छा में उलझा हुआ है, वही इस संसार में बंधन कहलाता है। वही मन, इच्छा से मुक्त होकर, मुक्ति कहलाता है।

4.34.33

नानाघटपटाकारैश्चेतःस्थितिमुपागतम्। तदेवाशु शमं नेयं मिथ्यायक्ष इवोत्थितः ॥ ३३ ॥

nānāghaṭapaṭākāraiścetaḥsthitimupāgatam | tadevāśu śamaṃ neyaṃ mithyāyakṣa ivotthitaḥ || 33 ||

The mind takes on many shapes, like a pot, like cloth, and so many other things. That very mind should quickly be brought to rest, like a false ghost that only seemed to rise up.

मन कई रूप ले लेता है, जैसे घड़ा, जैसे कपड़ा, और ऐसी और भी कई चीज़ें। उसी मन को जल्दी शांत कर देना चाहिए, जैसे कोई झूठा भूत जो उठता हुआ दिखे, पर हो ही नहीं।

4.34.34

दामव्यालकटाकारैश्चेतः परिणतं यथा। भीमभासदृढन्यायो राघवास्त्वचलस्तव ॥ ३४ ॥

dāmavyālakaṭākāraiścetaḥ pariṇataṃ yathā | bhīmabhāsadṛḍhanyāyo rāghavāstvacalastava || 34 ||

Just as the mind can turn into the shapes of Dama, Vyala and Kata, Raghava, let the case of Bhima, Bhasa and Dridha instead stand unshaken in you.

जैसे मन दाम, व्याल और कट के रूप में बदल जाता है, हे राघव, वैसे ही भीम, भास और दृढ़ वाली बात तुझमें अटल बनी रहे।

4.34.35

दामव्यालकटन्यायो मा ते भवतु राघव। एतद्राम पुरा प्रोक्तं पित्रा कमलजेन मे ॥ ३५ ॥

dāmavyālakaṭanyāyo mā te bhavatu rāghava | etadrāma purā proktaṃ pitrā kamalajena me || 35 ||

Raghava, may the case of Dama, Vyala and Kata never be yours. Rama, this is what my father Brahma, who was born from the lotus, told me long ago.

हे राघव, दाम, व्याल और कट वाली बात तुझ पर कभी लागू न हो। हे राम, यह बात मुझसे बहुत पहले मेरे पिता ब्रह्मा ने कही थी, जो कमल से जन्मे थे।

4.34.36

भवते यन्मया प्रोक्तं शिष्यायात्यन्तधीमते। दामव्यालकटन्यायस्तस्मान्मा तेऽस्तु राघव। भीमभासदृढन्यायो नित्यमस्तु तवानघ ॥ ३६ ॥

bhavate yanmayā proktaṃ śiṣyāyātyantadhīmate | dāmavyālakaṭanyāyastasmānmā te'stu rāghava | bhīmabhāsadṛḍhanyāyo nityamastu tavānagha || 36 ||

This is what I have told you, my very wise student. So, Raghava, may the case of Dama, Vyala and Kata never be yours; may the case of Bhima, Bhasa and Dridha always be yours, faultless one.

यह मैंने तुझसे कहा है, मेरे अत्यंत बुद्धिमान शिष्य। इसलिए, हे राघव, दाम, व्याल और कट वाली बात तुझ पर कभी न आए; हे निष्पाप, भीम, भास और दृढ़ वाली बात सदा तुझ पर बनी रहे।

4.34.37

अविरलसुखदुःखसंकटेयं भवपदवी भवतापनोपयाता । व्यवहरणवतो विभूतियातौ सततमसक्ततयैव नश्यतीति ॥ ३७ ॥

aviralasukhaduḥkhasaṅkaṭeyaṃ bhavapadavī bhavatāpanopayātā | vyavaharaṇavato vibhūtiyātau satatamasaktatayaiva naśyatīti || 37 ||

This road of worldly life is packed with endless pleasure and pain, and it burns those on it with the pain of existence. For someone who deals in the world, as fortune comes and as it goes, this road is destroyed only by staying always unattached - so it is said.

सुख-दुख से भरा यह संसार का रास्ता कभी नहीं थमता, और यह इस पर चलने वालों को जीवन की जलन में जलाता रहता है। जो व्यक्ति संसार में काम-काज करता है, जिसके पास कभी वैभव आता है और कभी चला जाता है, उसके लिए यह रास्ता सिर्फ़ हमेशा किसी चीज़ से लगाव न रखने पर ही मिटता है, ऐसा कहा गया है।

Chapter 35

4.35.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जयन्ति ते महाशूराः साधवो यैर्विनिर्जितम् । अविद्यामेदुरोल्लासैः स्वमनो विषयोन्मुखम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jayanti te mahāśūrāḥ sādhavo yairvinirjitam | avidyāmedurollāsaiḥ svamano viṣayonmukham || 1 ||

Sri Vasishtha said: Those great heroes, the good and wise, have won. They have beaten their own mind, which runs after the things of the senses, pushed on by urges full of ignorance.

श्री वसिष्ठ ने कहा, वे महान शूरवीर, वे साधु पुरुष विजयी हैं। उन्होंने अपने मन को जीत लिया है, जो अज्ञान से भरे उभारों के कारण विषयों की तरफ भागता है।

4.35.2

संसारस्यास्य दुःखस्य सर्वोपद्रवदायिनः । उपाय एक एवास्ति मनसः स्वस्य निग्रहः ॥ २ ॥

saṃsārasyāsya duḥkhasya sarvopadravadāyinaḥ | upāya eka evāsti manasaḥ svasya nigrahaḥ || 2 ||

For this world of suffering, which brings every kind of trouble, there is only one remedy, controlling your own mind.

इस दुःखभरे संसार का, जो हर तरह की मुसीबत देता है, एक ही उपाय है, अपने मन को वश में करना।

4.35.3

श्रूयतां ज्ञानसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम् । भोगेच्छामात्रको बन्धस्तत्त्यागो मोक्ष उच्यते ॥ ३ ॥

śrūyatāṃ jñānasarvasvaṃ śrutvā caivāvadhāryatām | bhogecchāmātrako bandhaḥstattāgo mokṣa ucyate || 3 ||

Listen to the whole essence of true knowledge, and once you have heard it, hold it firmly in mind. Bondage is nothing but the wish to enjoy things, and giving up that wish is called freedom.

ज्ञान का पूरा सार सुनो, और सुनकर उसे अच्छी तरह समझ लो। भोग की इच्छा मात्र ही बंधन है, और उस इच्छा को छोड़ देना ही मोक्ष कहलाता है।

4.35.4

किमन्यैः शास्त्रसंदर्भैः क्रियतामिदमेव तु । यद्यत्स्वाद्विह तत्सर्वं दृश्यतां विषवह्निवत् ॥ ४ ॥

kimanyaiḥ śāstrasaṃdarbhaiḥ kriyatāmidameva tu | yadyatsvādviha tatsarvaṃ dṛśyatāṃ viṣavahṇivat || 4 ||

What is the use of other scriptures and long discussions? Do just this one thing, see everything here, whatever it is, as if it were poison, as if it were fire.

और शास्त्रों की बातों से क्या फ़ायदा? बस यही करो, यहाँ जो कुछ भी है, उस सबको ज़हर और आग जैसा समझो।

4.35.5

विषमा विषयाभोगाः प्रविचार्य पुनःपुनः । उपरिष्टात्परित्यज्य सेव्यमानाः सुखावहाः ॥ ५ ॥

viṣamā viṣayābhogāḥ pravicārya punaḥpunaḥ | upariṣṭātparityajya sevyamānāḥ sukhāvahāḥ || 5 ||

Pleasures of the senses are treacherous. Think them through again and again, and let go of them completely. After that, even when they come your way, they bring only happiness.

इंद्रियों के भोग खतरनाक हैं। इन पर बार बार गहराई से सोचो, और इन्हें पूरी तरह छोड़ दो। उसके बाद, अगर ये सामने भी आएँ, तो सुख ही देंगे।

4.35.6

दोषान्प्रसवति स्फारान्वासनावलिता मतिः । कीर्णकण्टकबीजा भूः कण्टकप्रसरं यथा ॥ ६ ॥

doṣānprasavati sphārānvāsanāvalitā matiḥ | kīrṇakaṇṭakabījā bhūḥ kaṇṭakaprasaraṃ yathā || 6 ||

A mind wrapped up in old desires gives birth to many faults, the way ground planted with thorn seeds grows into a spread of thorns.

पुरानी वासनाओं में लिपटा मन बहुत सारे दोष पैदा करता है, जैसे कांटों के बीज बोई गई ज़मीन से कांटों का जाल उग आता है।

4.35.7

अलग्नवासनाजाला मतिः प्रसरवर्जिता । अदृष्टरागद्वेषा या शममेति शनैः परम् ॥ ७ ॥

alagnavāsanājālā matiḥ prasaravarjitā | adṛṣṭarāgadvēṣā yā śamameti śanaiḥ param || 7 ||

But a mind that is not caught in the net of old desires, that does not let them spread, that shows no liking or disliking, that mind slowly reaches the highest peace.

पर जो मन वासनाओं के जाल में नहीं फँसता, जो उन्हें फैलने नहीं देता, जिसमें न राग दिखता है न द्वेष, वह मन धीरे धीरे परम शांति को पा लेता है।

4.35.8

शुभाशुभानसद्भानीन्प्रसूते सुगुणान्सदा । फलदानङ्कुरान्काले श्रेष्ठबीजवतीव भूः ॥ ८ ॥

śubhāśubhānasadglānīnprasūte sugūṇānsadā | phaladānaṅkurānkāle śreṣṭhabījavatīva bhūḥ || 8 ||

That peaceful mind ends false, restless states that seem good or bad, and it always grows good qualities, like sprouts that will bear fruit in season, the way soil planted with the very best seed does.

वह शांत मन झूठी बेचैनियों को खत्म कर देता है, चाहे वे अच्छी लगें या बुरी, और यह हमेशा अच्छे गुण उगाता है, जैसे अच्छे बीज वाली मिट्टी में समय पर फल देने वाले अंकुर उगते हैं।

4.35.9

शुभभावानुसंधानातप्रसन्ने मनसि स्थिते । शनैः शनैः प्रशान्ते च मिथ्याज्ञानघनाम्बुदे ॥ ९ ॥

śubhabhāvānusandhānātaprasanne manasi sthitē | śanaiḥ śanaiḥ praśānte ca mithyājñānaghanāmbudē || 9 ||

When the mind holds on to good thoughts and becomes clear and settled, and the thick cloud of wrong knowledge slowly, slowly grows calm,

जब मन अच्छे विचारों को थामे रखने से साफ़ और स्थिर हो जाता है, और गलत ज्ञान का घना बादल धीरे धीरे शांत होकर छँट जाता है,

4.35.10

वृद्धिं याते च सौजन्ये यक्षे शुक्ल इवोडुपे । विवेके प्रसृते पुण्ये नभसीवार्कतेजसि ॥ १० ॥

vṛddhiṃ yāte ca saujanye yakṣe śukla ivōḍupē | viveke prasṛte puṇyē nabhasīvārkatejasi || 10 ||

and when kindness grows in it, the way the moon grows bigger in its bright half, and when clear understanding spreads out, the way sunlight fills the whole sky,

और जब उसमें भलाई बढ़ती है, जैसे चाँद अपने उजले पखवाड़े में बड़ा होता जाता है, और जब साफ़ समझ फैलती है, जैसे सूरज की रोशनी पूरे आकाश में फैल जाती है,

4.35.11

धृतावन्तर्विवृद्धायां मुक्तायामिव कीचके । स्थितावन्तः कृतार्थायां मधाविव निशाकरे ॥ ११ ॥

dhṛtāvantarvivṛddhāyāṃ muktāyāmiva kīcake | sthitāvantaḥ kṛtārthāyāṃ madhāviva niśākare || 11 ||

when inner strength grows within, like a pearl growing inside a bamboo stem, and when that strength, now complete, settles inside, like nectar inside the moon,

जब भीतर मन की दृढ़ता बढ़ती है, जैसे बांस के भीतर मोती बढ़ता है, और जब वह पूरी हो चुकी दृढ़ता भीतर टिक जाती है, जैसे चाँद के भीतर अमृत टिका रहता है,

4.35.12

फलिते शीतलच्छाये सत्सङ्गसफलद्रुमे । स्रवत्यानन्दसुरस समाधिसरलद्रुमे ॥ १२ ॥

phalite śītalacchāye satsaṅgasaphaladrumē | sravatyānandasurasa samādhisaraladrumē || 12 ||

when the tree of good company bears fruit and gives cool shade, and this pine tree of deep meditation drips the sweet sap of joy,

जब अच्छे साथ का पेड़ फल देता है और ठंडी छाया देता है, और समाधि का यह चीड़ जैसा पेड़ आनंद का मीठा रस टपकाता है,

4.35.13

मनो भवति निर्द्वन्द्वं निष्कामं निरुपद्रवम् । प्रशान्तचापलानर्थशोकमोहभयामयम् ॥ १३ ॥

mano bhavati nirdvandvaṃ niṣkāmaṃ nirupadravam | praśāntacāpalānarthaśokamohabhayāmāyam || 13 ||

then the mind becomes free of all opposites, free of wanting, free of trouble, its restlessness, misfortune, grief, confusion, fear, and sickness all calmed.

तब मन हर द्वंद्व से मुक्त हो जाता है, इच्छा रहित हो जाता है, परेशानी से मुक्त हो जाता है, और इसकी बेचैनी, दुर्भाग्य, दुःख, मोह, डर और बीमारी सब शांत हो जाते हैं।

4.35.14

क्षीणशास्त्रार्थसंदेहं विगताशेषकौतुकम् । निरस्तकल्पनाजालं मोहमुक्तमलेपकम् ॥ १४ ॥

kṣīṇaśāstrārthasaṃdehaṃ vigatāśeṣakautukam | nirastakalpanājālaṃ mohamuktamalepakam || 14 ||

Its doubts about what the scriptures mean are gone. All its idle curiosity is gone. It throws off the whole web of fancy and imagination. It is free of confusion and stays unstained.

शास्त्रों के अर्थ को लेकर इसके सारे संदेह मिट जाते हैं। इसकी सारी बेकार जिज्ञासा खत्म हो जाती है। यह कल्पनाओं के पूरे जाल को झटक देता है। यह मोह से मुक्त हो जाता है और निर्मल बना रहता है।

4.35.15

निरीहं निरुपाक्रोशं निरपेक्षं निराधिकम् । संशान्तशोकनीहारमसक्तं ग्रन्थिवर्जितम् ॥ १५ ॥

nirīhaṃ nirupākrośaṃ nirapekṣaṃ nirādhikam | saṃśāntaśokanīhāramasaktaṃ granthivarjitam || 15 ||

It wants nothing, blames no one, depends on nothing, carries no extra burden. The fog of its grief has completely cleared. It holds on to nothing, and it has no knots left inside.

इसे कुछ नहीं चाहिए, यह किसी को दोष नहीं देता, यह किसी पर निर्भर नहीं रहता, इस पर कोई अतिरिक्त बोझ नहीं रहता। इसके दुःख का कोहरा पूरी तरह छँट जाता है। यह किसी चीज़ से चिपकता नहीं, और इसके भीतर कोई गाँठ नहीं बचती।

4.35.16

संदेहोग्रसुतं साग्रं सतृष्णादारपञ्जरम्। नाशयित्वा स्वमात्मानं साधयत्यर्थमैश्वरम्॥ १६॥

sandehograsutaṃ sāgraṃ satṛṣṇādārapañjaram | nāśayitvā svamātmānaṃ sādhayatyarthamaiśvaram || 16 ||

It destroys its old self, which was the harsh child of doubt, full of excess, and shut inside the cage of craving and family ties. In this way it wins the greatest prize, mastery over itself.

यह अपने पुराने रूप को मिटा देता है, जो संदेह की कठोर संतान था, हद से ज़्यादा था, और तृष्णा तथा घर परिवार के पिंजरे में बंद था। इस तरह यह सबसे बड़ी उपलब्धि पा लेता है, यानी खुद पर पूरा अधिकार।

4.35.17

आत्मपीवरताहेतून्विकल्पांश्चायमुज्झति। संस्मृत्य प्रभुतामेषु जहाति तृणवत्तनुम्॥ १७॥

ātmapīvaratāhetūnvikalpāṃścāyamujjhati | saṃsmṛtya prabhutāmeṣu jahāti tṛṇavattanum || 17 ||

It gives up all the thoughts that puff up the sense of self. Remembering that it is master over these thoughts, it drops the body the way one drops a blade of grass.

यह उन सब विचारों को छोड़ देता है जो अहंकार को फुलाते हैं। यह याद रखते हुए कि यह इन विचारों का मालिक है, यह शरीर को ऐसे छोड़ देता है जैसे तिनका छोड़ दिया जाता है।

4.35.18

मनसोऽभ्युदयो नाशो मनोनाशो महोदयः। ज्ञमनो नाशमभ्येति मनोऽज्ञस्य विवर्धते॥ १८॥

manaso'bhyudayo nāśo manonāśo mahodayaḥ | jñamano nāśamabhyeti mano'jñasya vivardhate || 18 ||

When the mind rises up and grows strong, that is really its ruin. When the mind is destroyed, that is its true rise. In someone who knows the truth, the mind fades away. In someone who does not know it, the mind keeps growing.

जब मन उभरकर बढ़ता है, वही असल में उसका नाश है। जब मन मिट जाता है, वही उसका असली उभार है। जो सच जानता है, उसका मन घटता जाता है। जो नहीं जानता, उसका मन बढ़ता जाता है।

4.35.19

मनोमात्रं जगच्चक्रं मनः पर्वतमण्डलम्। मनो व्योम मनो देवो मनो मित्रं मनो रिपुः॥ १९॥

manomātraṃ jagaccakraṃ manaḥ parvatamaṇḍalam | mano vyoma mano devo mano mitraṃ mano ripuḥ || 19 ||

This whole turning world is nothing but mind. The circle of mountains is mind. The sky is mind. A god is mind. A friend is mind. An enemy is mind.

यह पूरा घूमता संसार सिर्फ़ मन है। पहाड़ों का यह घेरा मन है। आकाश मन है। देवता मन है। मित्र मन है। शत्रु मन है।

4.35.20

विकल्पकलुषा या स्याच्चित्तत्त्वस्यात्मविस्मृतिः। मन इत्युच्यते सेयं वासना भवभागिनी॥ २०॥

vikalpakaluṣā yā syāccittatattvasyātmavismṛtiḥ | mana ityucyate seyaṃ vāsanā bhavabhāginī || 20 ||

When the true nature of awareness forgets itself, clouded over by thought after thought, that is what is called mind. This is the old impression that keeps a person tied to the round of birth and rebirth.

जब चेतना का असली स्वरूप बार बार उठते विचारों से धुंधला होकर खुद को भूल जाता है, उसी को मन कहते हैं। यही वह पुरानी वासना है जो जन्म मरण के चक्र से बाँधे रखती है।

4.35.21

चेत्यानुपातकलितचिन्मात्रे तिष्ठताभिधम्। मनाग्विवकल्पकलुषं चित्तत्त्वं जीव उच्यते ॥ २१ ॥

cetyānupātakalitacinmātre tiṣṭhatābhidham | manāgvivakalpakaluṣaṃ cittattvaṃ jīva ucyate || 21 ||

That same pure awareness, when it stays as pure awareness but touches, just a little, the things it can know, and gets a bit clouded with thought, that is what is called the living being.

वही शुद्ध चेतना, जब वह शुद्ध चेतना बनी रहती है पर जानी जाने वाली चीज़ों को थोड़ा सा छू लेती है, और विचार से थोड़ी धुंधली हो जाती है, उसी को जीव कहा जाता है।

4.35.22

चेत्यप्रपतितं रूढसंज्ञमज्ञत्वमागतम्। तदेवाधिकनिःसारं कल्प्यतेऽन्तर्मनस्तया ॥ २२ ॥

cetyaprapatitaṃ rūḍhasaṃjñamajñatvamāgatam | tadevādhikanisāraṃ kalpyate'ntarmanastayā || 22 ||

That same awareness, once it falls into the world of things to be known, gets a fixed label, and turns into a kind of not knowing, that very thing, empty and worthless as it is, is what gets imagined as an inner mind.

वही चेतना जब जानी जाने वाली चीज़ों में गिर जाती है, उसे एक पक्का नाम मिल जाता है, और वह एक तरह की अनजानता बन जाती है, वही खाली और बेकार चीज़ भीतरी मन के नाम से कल्पित कर ली जाती है।

4.35.23

नात्मा संसारिपुरुषो न शरीरं न शोणितम्। जडं सर्वं शरीरादि देही स्ववदलेपकः ॥ २३ ॥

nātmā saṃsāripuruṣo na śarīraṃ na śoṇitam | jaḍaṃ sarvaṃ śarīrādi dehī svavadalepakaḥ || 23 ||

The true self is not the person caught up in the world. It is not the body, and not the blood. The body and everything like it is lifeless matter. The one who lives in the body stays untouched, the way its own true nature always is.

असली आत्मा वह सांसारिक व्यक्ति नहीं है। यह शरीर नहीं है, यह खून नहीं है। शरीर और उस जैसी हर चीज़ निर्जीव है। जो शरीर में रहता है, वह अपने असली स्वभाव की तरह सदा निर्लिप्त, अछूता रहता है।

4.35.24

शरीरे कणशः कृत्ते नास्त्यन्यद्रुधिरादिकात्। निर्भिन्ने कदलीस्तम्भे नास्त्यन्यत्पल्लवादृते ॥ २४ ॥

śarīre kaṇaśaḥ kṛtte nāstyanyadrudhirādikāt | nirbhinne kadalīstambhe nāstyanyatpallavādṛte || 24 ||

When the body is cut apart bit by bit, there is nothing in it but blood and the rest. When a banana tree trunk is split open, there is nothing in it but layer after layer of leaf sheath.

जब शरीर को टुकड़े टुकड़े करके काटा जाए, तो उसमें खून वगैरह के सिवा कुछ नहीं मिलता। जैसे केले के तने को चीरने पर उसमें पत्तों की परत दर परत के सिवा कुछ नहीं मिलता।

4.35.25

मनो जीवो नरं विद्धि तदेवाकारमागतम्। आत्मनात्मानमादत्ते स्वविकल्पात्मकल्पितम्॥ २५ ॥

mano jīvo naraṃ viddhi tadevākāramāgatam | ātmanātmānamādatte svavikalpātmakalpitam || 25 ||

Know that the man is nothing but the mind, the living self. It is this same mind that has come to take this shape. Through itself it takes hold of itself, made into itself by its own imagining.

जान लो कि यह आदमी और कुछ नहीं, मन ही है, जीव ही है। यही मन इस रूप में आ गया है। यह खुद अपने ही द्वारा खुद को पकड़ लेता है, अपनी ही कल्पना से खुद को गढ़कर।

4.35.26

स्वविकल्पान्नरस्तत्र प्रसार्य रचयत्यलम्। जालमात्मनिबन्धाय कोशकारकृमिर्यथा ॥ २६ ॥

svavikalpānnarastatra prasārya racayaty alam | jālamātmanibandhāya kośakārakṛmiryathā || 26 ||

Out of his own thoughts, the man spreads them out and weaves himself a whole net there, to tie himself up in it, just like the worm that spins its own cocoon.

यह आदमी अपने ही खयालों से एक बड़ा जाल फैलाकर बुन लेता है, ताकि खुद को उसी में बाँध ले, ठीक उस कीड़े की तरह जो अपना कोश खुद बुनता है।

4.35.27

इमं देहभ्रमं त्यक्त्वा देशकालान्तरे पुनः। शरीरत्वमथादत्ते पल्लवत्वमिवाङ्कुरः ॥ २७ ॥

imaṃ dehabhramaṃ tyaktvā deśakālāntare punaḥ | śarīratvamathādatte pallavatvamivāṅkuraḥ || 27 ||

Giving up this false idea of being this body, it takes on a body again in another place and time, the way a sprout grows on into a new shoot.

इस शरीर वाले भ्रम को छोड़कर, यह किसी और जगह और समय में फिर से एक शरीर धारण कर लेता है, जैसे कोई अंकुर बढ़कर नयी कोंपल बन जाता है।

4.35.28

यादृग्वासनमेतत्स्यात्तमनस्तादृक्प्रजायते। जातं स्वपिति यच्चित्तं तत्स्वप्ने निशि तिष्ठति ॥ २८ ॥

yādṛgvāsanametatsyāttamanastādṛkprajāyate | jātaṃ svapiti yaccittaṃ tatsvapne niśi tiṣṭhati || 28 ||

Whatever kind of impression this is, the mind that grows from it becomes just that kind. The mind that forms and then falls asleep carries that same nature into the dream at night.

जैसा भी यह संस्कार होता है, उससे बना मन भी वैसा ही बन जाता है। जो मन बनकर सो जाता है, वही रात को सपने में वैसा ही बना रहता है।

4.35.29

अम्लं मधुरसासिक्तं मधुरं मधुरञ्जितम्। बीजं प्रतिविषाकल्कसिक्तं च कटु जायते ॥ २९ ॥

amlaṃ madhurasāsiktaṃ madhuraṃ madhurañjitam | bījaṃ prativiṣākalpasiktaṃ ca kaṭu jāyate || 29 ||

A sour fruit soaked in sweet juice becomes sweet, coloured through with sweetness. A seed soaked with a paste of poison turns bitter.

जैसे कोई खट्टा फल मीठे रस में भिगोया जाए तो मीठा हो जाता है, मिठास से रच जाता है, वैसे ही कोई बीज ज़हर के लेप में भिगोया जाए तो कड़वा हो जाता है।

4.35.30

शुभवासनया चेतो महत्या जायते महत्। भवतीन्द्रमनोराज्य इन्द्रता स्वप्नभाङ्गरः ॥ ३० ॥

śubhavāsanayā cetomahatyā jāyate mahat | bhavatīndramanorājya indratā svapnabhāṅgaraḥ || 30 ||

With a good impression, the mind becomes great through that same greatness. It comes to feel, in its own thought, like the kingdom of Indra. But being Indra is as fragile as a dream.

अच्छे संस्कार से मन बड़प्पन के भाव से बड़ा हो जाता है, वह मन ही मन इंद्र के राज्य जैसा महसूस करने लगता है। पर इंद्र होना भी सपने जैसा ही टूट जाने वाला है।

4.35.31

क्षुद्रवासनया चेतःक्षुद्रतामपि पेलवाम् । पिशाचविभ्रमात्स्वप्ने पिशाचान्निशि पश्यति ॥ ३१ ॥

kṣudravāsanayā cetaḥkṣudratāmapi pelavām | piśācavibhramātsvapne piśācānniśi paśyati || 31 ||

With a mean, petty impression, the mind sinks into a weak and petty state. Out of a delusion about ghosts, it sees ghosts at night in its dreams.

तुच्छ संस्कार से मन तुच्छ और कमज़ोर हो जाता है। भूत-प्रेत के भ्रम से वह रात को सपने में भूत-प्रेत ही देखने लगता है।

4.35.32

सरसि स्फारनैर्मल्ये कालुष्यं याति न स्थितिम् । तथैव स्फारकालुष्ये प्रसादो याति न स्थितिम् ॥ ३२ ॥

sarasi sphāranairmalye kāluṣyaṃ yāti na sthitim | tathaiva sphārakāluṣye prasādo yāti na sthitim || 32 ||

In a lake, when the water is very clear, mud cannot settle and stay in it. In the same way, when the water is very muddy, clearness cannot settle and stay in it.

झील में जब पानी बहुत साफ हो, तो उसमें कीचड़ टिक नहीं पाता। वैसे ही जब पानी बहुत गंदा हो, तो उसमें साफपन टिक नहीं पाता।

4.35.33

मनसि स्फारकालुष्ये तद्रूपं जायते फलम् । तथैव स्फारनैर्मल्ये तद्रूपं जायते फलम् ॥ ३३ ॥

manasi sphārakāluṣye tadrūpaṃ jāyate phalam | tathaiva sphāranairmalye tadrūpaṃ jāyate phalam || 33 ||

When the mind is very murky, what comes from it is murky too. In the same way, when the mind is very clear, what comes from it is clear too.

जब मन बहुत मैला होता है, तो उसका नतीजा भी वैसा ही मैला निकलता है। वैसे ही जब मन बहुत साफ होता है, तो उसका नतीजा भी वैसा ही साफ निकलता है।

4.35.34

त्यजत्युदारां न गतिं क्षीणोऽप्यनिशमुत्तमः । उद्योगवानविरतं पूरणाशामिवोडुपः ॥ ३४ ॥

tyajatyudārāṃ na gatiṃ kṣīṇo'pyaniśamuttamaḥ | udyogavānaviratam pūraṇāśāmivouḍupaḥ || 34 ||

Even when it has waned, the best does not give up its high course. It keeps striving without pause, holding to the hope of becoming full again, like the moon.

घट जाने पर भी, जो सबसे अच्छा है वह अपना ऊँचा रास्ता नहीं छोड़ता। वह लगातार कोशिश करता रहता है, फिर से पूरा भरने की उम्मीद में, जैसे चाँद घटकर भी फिर से पूरा होने की राह पर बना रहता है।

4.35.35

नेह बन्धो न मोक्षोऽस्ति नाबन्धोऽस्ति न बन्धता । मिथ्योत्थितैव मायेयमिन्द्रजाललता यथा ॥ ३५ ॥

neha bandho na mokṣo'sti nābandho'sti na bandhatā | mithyotthitaiva māyeyamindrajālalatā yathā || 35 ||

Here there is no bondage and no freedom, no state free of bondage and no state of being bound. This is only an illusion that has arisen falsely, like a magician's illusion show.

यहाँ न कोई बंधन है, न कोई मुक्ति है, न बंधन से आज़ादी है, न बंधे होने की कोई हालत है। यह सब सिर्फ झूठा उठा हुआ माया जाल है, जैसे जादूगर का तमाशा।

4.35.36

गन्धर्वनगराकारा मृगतृष्णा इवोत्थिता । द्विचन्द्रविभ्रमाभासा द्वैतैकत्वविवर्जिता ॥ ३६ ॥

gandharvanagarākārā mṛgatṛṣṇā ivotthitā | dvicandravibhramābhāsā dvaitaikatvavivarjitā || 36 ||

It looks like a city in the sky, risen up like a mirage. It appears like the illusion of seeing two moons, and it is free of both twoness and oneness.

यह आकाश में बने किसी शहर जैसी है, मृगतृष्णा की तरह उठी हुई। यह दो चाँद दिखने के भ्रम जैसी लगती है, और यह न दो होने में है, न एक होने में।

4.35.37

सर्वैव ब्रह्मसत्तेयमित्येषा परमार्थता । परिस्फुरति निःसारः संसारोऽयमसन्मयः ॥ ३७ ॥

sarvaiva brahmasatteyamityeṣā paramārthatā | parisphurati niḥsāraḥ saṃsāro'yamasanmayaḥ || 37 ||

All this is nothing but the being of brahman, that is the highest truth. This world we see has no real substance in it, it is made of what is not real.

यह सब कुछ केवल ब्रह्म का ही अस्तित्व है, यही सबसे बड़ा सत्य है। यह जो संसार दिखाई देता है, उसमें कोई सार नहीं है, यह उस चीज़ से बना है जो सच में है ही नहीं।

4.35.38

नानन्तोऽहं वराकोऽहमिति दुर्निश्चयोदितः । अनन्तोऽस्मीश्वरोऽस्मीति निश्चयेन विलीयते ॥ ३८ ॥

nānantohaṃ varāko'hamiti durniścayoditaḥ | ananto'smīśvaro'smīti niścayena vilīyate || 38 ||

The false belief "I am not infinite, I am a poor, small thing" is what creates bondage, and it dissolves through the sure knowledge "I am infinite, I am the Lord."

यह सोच कि "मैं असीम नहीं हूँ, मैं तो एक बेचारा तुच्छ जीव हूँ", गलत है और यही बंधन पैदा करती है। यह इस पक्के ज्ञान से मिट जाती है कि "मैं असीम हूँ, मैं ही ईश्वर हूँ।"

4.35.39

सर्वगे स्वात्मनि स्वच्छे एषोऽहमिति भावना । एतत्तद्बन्धनं लोके स्वविकल्पोपकल्पितम् ॥ ३९ ॥

sarvage svātmani svacche eṣo'hamiti bhāvanā | etattadbandhanaṃ loke svavikalpopakalpitam || 39 ||

The self is present everywhere and is pure and clear, but the thought "this is me" fixes itself onto it. That is what bondage in this world really is, made up entirely by one's own imagining.

आत्मा तो हर जगह मौजूद है और एकदम साफ-निर्मल है, पर उस पर यह खयाल चिपक जाता है कि "यह मैं हूँ।" दुनिया में बंधन असल में यही है, जो पूरी तरह अपनी ही कल्पना से बना है।

4.35.40

बन्धमोक्षदशाहीना द्वित्वैकत्वविवर्जिता । सर्वैव ब्रह्मसत्तेयमित्येषा परमार्थता ॥ ४० ॥

bandhamokṣadaśāhīnā dvitvaikatvavivarjitā | sarvaiva brahmasatteyamityeṣā paramārthatā || 40 ||

It has no state of bondage and no state of freedom, it is free of both twoness and oneness. All this is nothing but the being of brahman, that is the highest truth.

इसमें न बंधन की हालत है, न मुक्ति की, यह न दो होने में है, न एक होने में। यह सब कुछ केवल ब्रह्म का ही अस्तित्व है, यही सबसे बड़ा सत्य है।

4.35.41

नैर्मल्यप्राप्तमरणमसक्तं सर्वदृष्टिषु । अमनस्त्वमिहापन्नं ब्रह्म पश्यति नान्यथा ॥ ४१ ॥

nairmalyaprāptamarṇamasaktaṃ sarvadṛṣṭiṣu| amanastvamihāpannaṃ brahma paśyati nānyathā || 41 ||

When the mind becomes so pure that it dies to itself, untouched by any view whatsoever, and reaches this state where mind itself is gone, only then does it see brahman, never otherwise.

जब मन इतना निर्मल हो जाए कि वह खुद ही मिट जाए, किसी भी नज़रिए से बँधे नहीं, और मन के न रहने की उस हालत को पा ले, तभी वह ब्रह्म को देखता है, वरना नहीं।

4.35.42

मनो निर्मलतां यातं शुभसंतानवारिभिः । ब्राह्मीं दृष्टिमुपादत्ते रागं शुक्लपटो यथा ॥ ४२ ॥

mano nirmalatāṃ yātaṃ śubhasaṃtānavāribhiḥ| brāhmīṃ dṛṣṭimupādatte rāgaṃ śuklapato yathā || 42 ||

When the mind becomes pure through a steady stream of good thoughts, it takes on the vision of brahman, the way a white cloth takes on colour.

जब मन अच्छे विचारों की लगातार धारा से साफ-निर्मल हो जाता है, तो वह ब्रह्म को देखने वाली नज़र पा लेता है, जैसे सफेद कपड़ा रंग को पकड़ लेता है।

4.35.43

सर्वमेव ममात्मेति सर्वभावनयानघ । हेयादेयबले क्षीणे बन्धमोक्षो विमुच्यताम् ॥ ४३ ॥

sarvameva mamātmeti sarvabhāvanayānagha| heyādeyabale kṣīṇe bandhamokṣo vimucyatām || 43 ||

Feeling in every way that all this is indeed my own self, o sinless one, when the strength of choosing "this to throw away, that to keep" has worn out, let go even of bondage and freedom.

हे निष्पाप, जब हर तरह से यह भाव आ जाए कि यह सब कुछ मेरी ही आत्मा है, और जब यह चुनना कि यह छोड़ना है, यह रखना है, कमज़ोर पड़ जाए, तो बंधन और मुक्ति दोनों को भी छोड़ दो।

4.35.44

शुद्धस्य मनसः कायशास्त्रवैराग्यबुद्धिभिः । अभिजातोपलस्येव जगत्तस्येति विद्युतिः ॥ ४४ ॥

śuddhasya manasaḥ kāyaśāstravairāgyabuddhibhiḥ| abhijātopalasyeva jagattasyeti vidyutiḥ || 44 ||

Through bodily discipline, the scriptures, dispassion, and understanding, the mind becomes pure, and then the world is seen as nothing but its own glow, the way the light glinting off a fine gem is not separate from the gem.

शरीर के अनुशासन, शास्त्र के ज्ञान, वैराग्य और समझ से मन शुद्ध हो जाता है, और फिर यह जगत उसी शुद्ध मन की चमक भर रह जाता है, जैसे किसी बढ़िया रत्न से निकलने वाली चमक रत्न से अलग नहीं होती।

4.35.45

पदार्थैनैकतामेत्य मनसो नैकतानता । असत्यज्ञानदृष्टिं तां विद्धि क्षणविनाशिनीम् ॥ ४५ ॥

padārtheneikatāmetya manaso naikatānatā| asatyajñānadṛṣṭiṃ tāṃ viddhi kṣaṇavināśinīm || 45 ||

When the mind becomes one with some object, that is not real one-pointed absorption. Know it instead as a false view born of ignorance, one that falls apart in a moment.

जब मन किसी चीज़ के साथ एक हो जाता है, तो यह सच्ची एकाग्रता नहीं है। इसे अज्ञान से बना झूठा नज़रिया समझो, जो एक पल में ही टूट जाता है।

4.35.46

सबाह्याभ्यन्तरं त्यक्त्वा सर्वां दृश्यदृशं यदा । मनस्तिष्ठति तल्लीनं संप्राप्तं तत्पदं तदा ॥ ४६ ॥

sabāhyābhyantaraṃ tyaktvā sarvāṃ dṛśyadṛśaṃ yadā| manastiṣṭhati tallīnaṃ saṃprāptaṃ tatpadaṃ tadā || 46 ||

When the mind gives up completely, both outside and inside, all this seeing of things as separate objects, and comes to rest merged in that, then that highest state is reached.

जब मन बाहर और भीतर, दोनों तरफ से, चीज़ों को अलग अलग देखने का यह सारा नज़रिया पूरी तरह छोड़ देता है, और उसी में लीन होकर टिक जाता है, तभी वह सबसे ऊँची अवस्था पाई जाती है।

4.35.47

दृश्यदृष्टिः स्फुटा येयं सा ह्यवश्यमसन्मयी । तन्मयत्वं च मनसः स्वरूपं विद्धि नेतरत् ॥ ४७ ॥

dṛśyadṛṣṭiḥ sphuṭā yeyaṃ sā hyavaśyamasanmayī| tanmayatvaṃ ca manasaḥ svarūpaṃ viddhi netarat || 47 ||

This vivid vision of the world we see is bound to be unreal. Know that the mind's own nature is to be made of that same unreal stuff, and nothing else.

संसार को देखने वाली यह जो साफ़-साफ़ दिखने वाली नज़र है, वह असल में झूठी ही होती है। जान लो कि मन का असली रूप भी यही झूठ है, और कुछ नहीं।

4.35.48

आद्यन्तयोर्विनाशित्वान्मध्येऽपि तदसन्मयम् । अज्ञातमनसस्तेन दुःखिता हस्तसंस्थिता ॥ ४८ ॥

ādyantayorvināśitvānmadhye'pi tadasanmayam| ajñātamanasastena duḥkhitā hastasaṃsthitā || 48 ||

Since it dies out at both its start and its end, it must be unreal in the middle too. Because the mind does not know this, it stays sorrowful, even though the answer is right there in its own hand.

जो चीज़ शुरू में भी मिट जाती है और अंत में भी मिट जाती है, वह बीच में भी झूठी ही है। मन को यह बात पता नहीं होती, इसलिए वह दुखी रहता है, जबकि यह बात उसके अपने हाथ में ही है।

4.35.49

आत्मैवेदं जगदिति विना भावेन दुःखदा । दृश्यश्रीरन्यथा त्वेषा भोगमोक्षप्रदायिनी ॥ ४९ ॥

ātmaivedaṃ jagaditi vinā bhāvena duḥkhadā| dṛśyaśrīranyathā tveṣā bhogamokṣapradāyinī || 49 ||

Without the thought that this whole world is nothing but the self, this vision brings only sorrow. But with that thought, this same beauty of the visible world gives both enjoyment and freedom.

अगर यह ख़याल न हो कि यह पूरी दुनिया मेरी अपनी आत्मा ही है, तो यही नज़ारा सिर्फ़ दुख देता है। पर यही ख़याल आ जाए, तो यही दुनिया की सुंदरता सुख भी देती है और मुक्ति भी।

4.35.50

जलमन्यत्तरङ्गोऽन्य इति नानातयाऽज्ञता । जलमेव तरङ्गोऽयमित्येकत्वात्किल ज्ञता ॥ ५० ॥

jalamanyattaraṅgo'nya iti nānātayā'jñatā| jalameva taraṅgo'yamityekatvātkila jñatā || 50 ||

To think water is one thing and the wave is another, seeing them as separate, is not knowing. To know that this wave is nothing but water, seeing them as one, is real knowing.

यह सोचना कि पानी अलग है, लहर अलग है, और दोनों को अलग-अलग देखना, यही अज्ञान है। यह जान लेना कि लहर पानी के सिवा कुछ नहीं है, दोनों को एक ही देखना, यही असली ज्ञान है।

4.35.51

दुःखमायात्यसदिति हेयोपादेयरूपि यत्। तदभावेन तु ज्ञानादानन्त्यमवशिष्यते ॥ ५१ ॥

duḥkhamāyātyasaditi heyopādeyarūpi yat | tadabhāvena tu jñānādānantyamavaśiṣyate || 51 ||

Sorrow comes from what is unreal, from the habit of splitting everything into this must be rejected and this must be taken. When knowledge removes that habit, what remains is the endless, the infinite.

दुख उसी झूठी चीज़ से आता है, जो हर चीज़ को यह छोड़ने लायक़ है और यह लेने लायक़ है, इन दो हिस्सों में बाँट देती है। जब ज्ञान से यह आदत मिट जाती है, तो जो बचता है वह अनंत है, जिसका कोई अंत नहीं।

4.35.52

संकल्पकल्पितत्वाच्च मनोरूपमसन्मयम्। असन्मयविनाशे तु कः शोको वद राघव ॥ ५२ ॥

saṃkalpakalpitavācca manorūpamasanmayam | asanmayavināśetu kaḥ śoko vada rāghava || 52 ||

Because it is shaped only by the mind's own imagining, the mind's form is made of the unreal. So tell me, Rama, when something unreal is destroyed, what is there to grieve about?

मन का रूप सिर्फ़ मन की अपनी कल्पना से बना है, इसलिए वह झूठा ही है। तो बताओ, राम, जो चीज़ झूठी है, अगर वह मिट जाए, तो उसका दुख किस बात का?

4.35.53

अवत्सलो यथा बन्धुररागद्वेषया धिया। दृश्यते पश्य तद्वत्त्वं तत्त्वं पञ्जरमात्मनः ॥ ५३ ॥

avatsalo yathā bandhurarāgadveṣayā dhiyā | dṛśyate paśya tadvattvaṃ tattvaṃ pañjaramātmanaḥ || 53 ||

See this: just as one looks at an unloving relative with a mind free of love and hate, look at yourself in that same way. The truth is, you are nothing but a cage holding the self.

यह देखो, जैसे कोई प्यार न करने वाले रिश्तेदार को बिना प्यार और बिना नफ़रत के भाव से देखता है, वैसे ही ख़ुद को देखो। सच यह है कि तुम आत्मा को क़ैद करने वाला एक पिंजरा भर हो।

4.35.54

अवत्सलाद्यथा बन्धोः सुखदुःखैर्न लिप्यते। तत्त्वेन संपरिज्ञानात्तथा तत्त्वचयात्मनः ॥ ५४ ॥

avatsalādyathā bandhoḥ sukhaduḥkhairna lipyate | tattvena saṃparijñānāttathā tattvacayātmanaḥ || 54 ||

Just as one is not touched by the joy or sorrow that comes through an unloving relative, so too, once the truth is fully known, one's real self is not touched by joy or sorrow.

जैसे किसी प्यार न करने वाले रिश्तेदार से मिलने वाले सुख-दुख का हम पर कोई असर नहीं पड़ता, वैसे ही सच्चाई को पूरी तरह जान लेने के बाद असली आत्मा पर सुख-दुख का कोई असर नहीं पड़ता।

4.35.55

तदनादि शिवं ज्ञानं यन्मध्यं द्रष्टृदृश्ययोः। तस्मिन्सत्ये मनः शान्तं पांसुर्वायुक्षये यथा ॥ ५५ ॥

tadanādi śivaṃ jñānaṃ yanmadhyaṃ draṣṭṛdṛśyayoḥ | tasmin satye manaḥ śāntaṃ pāṃsurvāyukṣaye yathā || 55 ||

That knowledge, without beginning and pure, is what lies between the one who sees and the thing seen. Resting in that truth, the mind grows still, like dust when the wind dies down.

वह ज्ञान, जिसका कोई आरंभ नहीं और जो पूरी तरह शुद्ध है, देखने वाले और दिखने वाली चीज़ के बीच में ही है। उसी सच्चाई में टिककर मन शांत हो जाता है, जैसे हवा थम जाने पर धूल शांत हो जाती है।

4.35.56

उपशान्ते मनोवायौ देहपांसुः प्रशाम्यति । पुनः संसारनगरे न नीहारः प्रवर्तते ॥ ५६ ॥

upaśānte manovāyau dehapāṃsuḥ praśāmyati | punaḥ saṃsāranagare na nīhāraḥ pravartate || 56 ||

When the wind of the mind grows still, the dust of the body settles too. Then, in this city called worldly life, no fog rises up again.

जब मन की हवा शांत हो जाती है, तो शरीर की धूल भी बैठ जाती है। फिर इस संसार-रूपी शहर में दोबारा कोहरा नहीं उठता।

4.35.57

वासनाप्रावृषि क्षीणे संस्थितौ राममागते । जाड्ये जनितहृत्कम्पे पङ्के शोषमुपागते ॥ ५७ ॥

vāsanāprāvṛṣi kṣīṇe saṃsthitau rāmamāgate | jāḍye janitahṛtkampe paṅke śoṣamupāgate || 57 ||

When the rainy season of desire has dried up, when steadiness has settled into Rama, when the numbness that once made the heart shake is gone, when the mud has fully dried away,

जब इच्छाओं की बरसात सूख जाती है, जब राम के मन में स्थिरता बैठ जाती है, जब वह सुन्नपन जो दिल को कँपाता था मिट जाता है, जब कीचड़ पूरी तरह सूख जाता है,

4.35.58

शुष्के तृष्णावटे शान्ते मन्दे हृदयकानने । क्षीणेष्वक्षकदम्बेषु मिथ्याज्ञानघने क्षते ॥ ५८ ॥

śuṣke tṛṣṇāvaṭe śānte mandē hṛdayakānanē | kṣīṇēṣvakṣakadambēṣu mithyājñānaghane kṣatē || 58 ||

When the banyan tree of craving has dried up and gone still, when the forest of the heart has grown quiet, when the crowd of the senses has thinned out, when the thick cloud of false knowledge has been torn open,

जब तृष्णा का बरगद सूखकर शांत हो जाता है, जब दिल का जंगल शांत हो जाता है, जब इंद्रियों की भीड़ कम हो जाती है, जब झूठे ज्ञान का घना बादल फट जाता है,

4.35.59

क्षीयते मोहमिहिका प्रभात इव शर्वरी । क्वापि गच्छति तज्जाड्यं विषं मन्त्रहतं यथा ॥ ५९ ॥

kṣīyatē mōhamihikā prabhāta iva śarvarī | kvāpi gacchati tajjāḍyaṃ viṣaṃ mantrahataṃ yathā || 59 ||

then the mist of delusion melts away, just as night fades at dawn. That numbness disappears somewhere, like poison destroyed by a spell.

तब मोह का कोहरा उसी तरह पिघल जाता है जैसे सुबह होते ही रात मिट जाती है। वह सुन्नपन कहीं ग़ायब हो जाता है, जैसे मंत्र से मारा गया ज़हर ग़ायब हो जाता है।

4.35.60

देहाद्रौ न भयक्षुद्राः सरितः प्रसरन्त्यलम् । नोल्लसन्ति लसत्पक्षाः संकल्पोग्रकलापिनः ॥ ६० ॥

dēhādrau na bhayakṣudrāḥ saritaḥ prasarantyalam | nōllasanti lasatpakṣāḥ saṃkalpōgrakalāpiṇaḥ || 60 ||

On the mountain of the body, the small streams of fear no longer flow. The fierce peacocks of imagination, with their shining tails, no longer dance.

शरीर रूपी पहाड़ पर डर की छोटी-छोटी नदियाँ अब नहीं बहतीं। कल्पना के वे उग्र मोर, अपने चमकते पंखों के साथ, अब नाचते नहीं।

4.35.61

परां निर्मलतामेति संविदाकाशगोचरः । राजतेऽतितरामच्छो जीवादित्यो महोदयः ॥ ६१ ॥

parāṃ nirmalatāmeti saṃvidākāśagocaraḥ | rājate'titaraṃaccho jīvādityo mahodayaḥ || 61 ||

This sun of the living self, moving through the open sky of pure awareness, reaches the highest, spotless clarity, and shines out utterly clear, like a great and glorious rising.

जीव-रूपी यह सूरज, शुद्ध चेतना के खुले आकाश में विचरते हुए, सबसे ऊँची और बेदाग़ साफ़-सफ़ाई तक पहुँचता है, और बिल्कुल साफ़ चमकता है, मानो कोई महान और शानदार सूर्योदय हो।

4.35.62

घनमोहभरोन्मुक्ता विविक्तत्वं परं गताः । समये ह्यतिशोभन्ते धौता आशा महादिशः ॥ ६२ ॥

ghanamohabharonmuktā viviktatvaṃ paraṃ gatāḥ | samaye hyatiśobhante dhautā āśā mahādiśaḥ || 62 ||

Freed from the heavy weight of thick delusion, and reaching the highest clarity, the great directions of the sky shine at their brightest in due season, washed clean.

घने मोह के भारी बोझ से मुक्त होकर और पूरी तरह साफ़ होकर, आकाश की वे बड़ी-बड़ी दिशाएँ अपने समय पर धुली हुई होकर सबसे ज़्यादा चमकती हैं।

4.35.63

भृशमाभाति विमला मुदिताकाशमञ्जरी । शीतलीकृतदिक्चक्रा शरद्व्योम्नीव चन्द्रिका ॥ ६३ ॥

bhṛśamābhāti vimalā muditākāśamañjarī | śītalīkṛtadikvakrā śaradvyomnīva candrikā || 63 ||

A spotless blossom of the joyful sky shines out brilliantly, cooling the whole curve of every direction, like moonlight in the autumn sky.

आनंदित आकाश का वह बेदाग़ फूल बहुत तेज़ चमकता है, हर दिशा को ठंडा कर देता है, जैसे शरद ऋतु के आकाश में चाँदनी करती है।

4.35.64

सर्वसंपत्प्रकाशेन परमानन्ददायिना । भृशं सफलतामेति सुविविक्ता विवेकभूः ॥ ६४ ॥

sarvasaṃpatprakāśena paramānandadāyinā | bhṛśaṃ saphalatāmeti suviviktā vivekabhūḥ || 64 ||

Shining with a light that holds every kind of wealth and gives the highest joy, the ground of true understanding, now fully clear and distinct, comes to full, rich fruit.

ऐसी रोशनी से चमककर, जो हर तरह की दौलत जैसी है और सबसे बड़ा आनंद देती है, सच्ची समझ की वह ज़मीन, जो अब पूरी तरह साफ़ और अलग हो चुकी है, भरपूर फल देती है।

4.35.65

सपर्वतवनाभोगं परमालोकसुन्दरम् । अच्छाच्छं शीतलच्छायं जायते भुवनान्तरम् ॥ ६५ ॥

saparvatavanābhogaṃ paramālokasundaram | acchāccchaṃ śītalacchāyaṃ jāyate bhuvanāntaram || 65 ||

A new world is born, one with its own mountains and forests, beautiful with the highest light, utterly clear, and cool with shade.

एक नई दुनिया जन्म लेती है, अपने पहाड़ों और जंगलों के साथ, सबसे तेज़ रोशनी से सुंदर, पूरी तरह साफ़, और ठंडी छाया वाली।

4.35.66

विस्तारितं सुसुमतां स्फारितं स्फटिकाकृतिम्। उपैति हृत्सरः स्वच्छं नीरजोम्बुजकोशकम्॥ ६६॥

vistāritaṃ susumatāṃ sphāritaṃ sphaṭikākṛtim | upaiti hṛtsaraḥ svacchaṃ nīrajoṃbujakośakam || 66 ||

The lake of the heart grows wide and bright, spreads out clear as crystal, like a lotus bud born of water.

दिल की वह झील चौड़ी और चमकदार हो जाती है, क्रिस्टल जैसी साफ़ फैल जाती है, जैसे पानी में खिलती कमल की कली।

4.35.67

हृत्पद्मकोशान्मलिनः स्वाहंकारमधुव्रतः। अपुनर्दर्शनायैव चञ्चलः क्वापि गच्छति॥ ६७॥

hṛtpadmakośānmali naḥ svāhaṃkāramadhuvrataḥ | apunardarśanāyaiva cañcalaḥ kvāpi gacchati || 67 ||

The bee that is one's own ego, soiled, flies out of the lotus bud of the heart. Restless, it goes off somewhere, never to be seen again.

अहंकार रूपी वह गंदा भँवरा दिल के कमल की कली से बाहर निकल जाता है। बेचैन होकर वह कहीं ऐसी जगह चला जाता है कि फिर कभी नहीं दिखता।

4.35.68

भवत्यपगताक्षेपः सर्वगः सर्वनायकः। निर्वासनः शान्तमनाः स्वदेहनगरेश्वरः॥ ६८॥

bhavatyapagatākṣepaḥ sarvagaḥ sarvanāyakaḥ | nirvāsanaḥ śāntamanāḥ svadehanagareśvaraḥ || 68 ||

He becomes free of all disturbance, present everywhere, the lord of all, free of every hidden desire, and at peace in mind. He becomes the ruler of the city that is his own body.

वह हर उथल-पुथल से मुक्त हो जाता है, हर जगह मौजूद रहता है, सबका स्वामी बन जाता है, हर छिपी हुई इच्छा से मुक्त होकर मन से शांत हो जाता है। वह अपने ही शरीर-रूपी शहर का राजा बन जाता है।

4.35.69

विचारणासमधिगतात्मदीपको मनस्यलं परिगलितेव धीरधीः। विलोकयन्क्षयभवनीरसा गतीर्गतज्वरो विलसति देहपत्तने॥ ६९॥

vicāraṇāsamadhigatātmadīpako manasyalaṃ parigaliteva dhīradhīḥ | vilokayan kṣayabhavanīrasā gatīr gatajvaro vilasati dehapattanē || 69 ||

Through inquiry, he has fully lit the lamp of the self within. His once restless, firm intellect has, as it were, melted away completely into the mind. Watching the tasteless, decaying comings and goings of worldly life, free of all fever, he shines in joy in the city of the body.

विचार करते-करते उसने अपने भीतर आत्मा का दीपक पूरी तरह जला लिया है। उसकी वह दृढ़ बुद्धि मानो पूरी तरह मन में ही घुल-मिल गई है। सांसारिक जीवन के फीके, नाशवान आने-जाने को देखते हुए, हर बेचैनी से मुक्त होकर, वह शरीर-रूपी शहर में आनंद से चमकता है।

Chapter 36

4.36.1

श्रीराम उवाच । यथेदृशं स्थितं विश्वं विश्वातीते चिदात्मनि । तन्मे कथय हे ब्रह्मन् पुनर्बोधविवृद्धये ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | yathedṛśaṃ sthitaṃ viśvaṃ viśvātīte cidātmani | tanme kathaya he brahman punarbodhavivṛddhaye || 1 ||

Sri Rama said: Tell me, O Brahmin, how this world, being just as it looks, stands within the conscious self that is beyond the world, so that my understanding may grow again.

श्री राम ने कहा - हे ब्राह्मण, मुझे यह बताइए कि जैसा यह संसार दिखता है, वैसा यह संसार से परे उस चेतन आत्मा के भीतर कैसे टिका है, ताकि मेरी समझ और बढ़े।

4.36.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथोर्मयोऽनभिव्यक्ता भाविनः पयसि स्थिताः । न स्थिताश्चात्मनोऽन्यत्वाच्चित्तत्वे सृष्टयस्तथा ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathormayo'nabhivyaktā bhāvinaḥ payasi sthitāḥ | na sthitāścātmano'nyatvāccittatve sṛṣṭayastathā || 2 ||

Sri Vasishtha said: Just as waves that have not yet shown themselves are already resting in the water, and are nothing other than the water, so this whole creation rests within the mind, and is nothing other than the mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जैसे लहरें, जो अभी दिखी नहीं हैं, पहले से पानी में ही होती हैं, और पानी से अलग कुछ नहीं होतीं, वैसे ही यह पूरी सृष्टि मन के भीतर होती है, और मन से अलग कुछ नहीं है।

4.36.3

यथा सर्वगतः सौक्ष्म्यादाकाशो नोपलक्ष्यते । तथा निरंशश्चिद्भावः सर्वगोऽपि न लक्ष्यते ॥ ३ ॥

yathā sarvagataḥ saukṣmyādākāśo nopalakṣyate | tathā niraṃśaścidbhāvaḥ sarvago'pi na lakṣyate || 3 ||

Just as space goes everywhere but is not seen, because it is so fine, so consciousness, which has no parts, is not seen either, even though it too goes everywhere.

जैसे आकाश हर जगह होते हुए भी बहुत सूक्ष्म होने की वजह से दिखता नहीं, वैसे ही चेतना, जिसका कोई हिस्सा नहीं है, हर जगह होते हुए भी दिखती नहीं।

4.36.4

सुस्थितेवास्थितेवान्तः प्रतिभास्ति मणौ यथा । न सत्यभूता नासत्या तथेयं सृष्टिरात्मनि ॥ ४ ॥

susthithevāsthithevāntaḥ pratibhāsti maṇau yathā | na satyabhūtā nāsatyā tatheyaṃ sṛṣṭirātmani || 4 ||

Just as something inside a gem can look as if it is firmly there and as if it is not there at all, neither fully real nor fully unreal, so this creation, within the self, is neither fully real nor fully unreal.

जैसे किसी रत्न के अंदर कोई चीज़ ऐसी दिखे मानो पक्की तरह वहाँ हो और मानो वहाँ हो ही नहीं, न पूरी तरह सच न पूरी तरह झूठ, वैसे ही यह सृष्टि आत्मा में न पूरी तरह सच है न पूरी तरह झूठ।

4.36.5

स्वाधारैरम्बुदैः स्वस्थैर्न स्पृष्टं गगनं यथा । चित्स्थैः सर्गैश्चिदाधारैर्न स्पृष्टा चित्परा तथा ॥ ५ ॥

svādhārairambudaiḥ svasthairna spṛṣṭaṃ gaganaṃ yathā | cittasthaiḥ sargaiścidādhārairna spṛṣṭā citparā tathā || 5 ||

Just as clouds rest in the sky and stand on their own, yet never touch the sky, so this creation rests in consciousness and stands on consciousness, yet never touches the highest consciousness.

जैसे बादल आकाश में ही टिकते हैं, अपने आप में रहते हैं, फिर भी आकाश को छूते नहीं, वैसे ही यह सृष्टि चेतना में टिकी है, चेतना के सहारे है, फिर भी सबसे ऊँची चेतना को छूती नहीं।

4.36.6

जलधिष्ठिततत्तेजो यथाङ्ग प्रतिबिम्बति । तथा पुर्यष्टकेष्वेव चिद्धि देहेषु लक्ष्यते ॥ ६ ॥

jaladhiṣṭhitattejo yathāṅga pratibimbiti | tathā puryaṣṭakeṣveva ciddhi deheṣu lakṣyate || 6 ||

Just as light resting on water is seen reflected in that water, dear one, so consciousness, within bodies, is seen only in the subtle body made of eight parts.

जैसे पानी पर पड़ा हुआ प्रकाश उसी पानी में झलकता दिखता है, हे प्रिय, वैसे ही चेतना शरीरों के भीतर सिर्फ़ उस आठ हिस्सों वाले सूक्ष्म शरीर में ही दिखती है।

4.36.7

सर्वसंकल्परहिता सर्वसंज्ञाविवर्जिता । सैषा चिदविनाशात्मा तच्चेत्यादिकृताभिधा ॥ ७ ॥

sarvasaṅkalparahitā sarvasaṃjñāvivarjitā | saiṣā cidavināśātmā taccetyādikṛtābhidhā || 7 ||

This consciousness has no thought in it at all and no name in it at all, and it never comes to an end. Yet it is given names such as "that" and "the known," and others like these.

यह चेतना किसी विचार से बँधी नहीं है, किसी नाम से बँधी नहीं है, और यह कभी खत्म नहीं होती। फिर भी इसे "वह", "जाना हुआ" जैसे नाम दे दिए जाते हैं।

4.36.8

आकाशशतभागाच्छा ज्ञेषु निष्कलरूपिणी । सकलाकलसंसारस्वरूपैकात्म्यदर्शिनी ॥ ८ ॥

ākāśaśatabhāgācchā jñeṣu niṣkalarūpiṇī | sakalākalasaṃsārasvarūpaikātmyadarśinī || 8 ||

This consciousness is clearer than even a hundredth part of the sky. To those who truly know it, it looks like one whole thing, without parts. It sees that the world, whether it looks broken into many parts or looks like one whole, has one and the same nature.

यह चेतना आकाश के सौवें हिस्से से भी ज़्यादा साफ़ है। जो लोग इसे सचमुच जानते हैं, उन्हें यह बिना किसी हिस्से के, एक पूरी चीज़ की तरह दिखती है। यह देखती है कि संसार चाहे कई टुकड़ों में बँटा दिखे या एक पूरी चीज़ जैसा दिखे, उसका स्वभाव एक ही है।

4.36.9

तरङ्गादिमयी स्फारा नानाता सलिलार्णवे । तस्मान्न व्यतिरेकेण यथा भावविकारिणी ॥ ९ ॥

taraṅgādimayī sphārā nānātā salilārṇave | tasmānna vyatirekeṇa yathā bhāvavikāriṇī || 9 ||

In the ocean of water, the great variety made of waves and the rest is never separate from the water, even though it looks as if it keeps changing.

पानी के सागर में लहरों वगैरह से बनी यह बड़ी विविधता, पानी से कभी अलग नहीं होती, भले ही वह रूप बदलती दिखे।

4.36.10

त्वत्तामत्तामयी स्फारा नानातेयं चिदर्णवे । चिन्मात्रव्यतिरेकेण तथा नैव प्रकाशते ॥ १० ॥

tvattāmattāmayī sphārā nānāteyaṃ cidarṇave | cinmātravyatirekeṇa tathā naiva prakāśate || 10 ||

In the same way, in the ocean of consciousness, this variety made of "you" and "I" never shows itself as separate from consciousness alone.

उसी तरह, चेतना के सागर में, "तू" और "मैं" से बनी यह विविधता, चेतना से अलग होकर कभी नहीं दिखती।

4.36.11

चिच्चिनोति चितं चेत्यं तेनेदं स्थितमात्मनि । अज्ञेऽज्ञे त्वन्यदायातमन्यदस्तीति कल्पना ॥ ११ ॥

ciccinoti citaṃ cetyaṃ tenedaṃ sthitamātmani | ajñe'jñe tvanyadāyātamanyadastīti kalpanā || 11 ||

Consciousness knows whatever it knows as consciousness itself, so this world rests within the self alone. Only in someone who does not understand this does the wrong idea arise: "something else has come, something else exists."

चेतना जिस भी चीज़ को जानती है, उसे चेतना के रूप में ही जानती है, इसलिए यह संसार आत्मा के भीतर ही टिका है। जो यह बात नहीं समझता, उसी के मन में यह ग़लत खयाल आता है कि "कुछ और आ गया है, कुछ और भी है।"

4.36.12

अज्ञेष्वसत्स्वभावोग्रसंसारगणगर्भिणी । ज्ञेषु प्रकाशरूपैव सकलैकात्मिका सती ॥ १२ ॥

ajñeṣvasatsvabhāvograsaṃsāragaṇagarbhiṇī | jñeṣu prakāśarūpaiva sakalaikātmikā satī || 12 ||

To those who do not understand, this consciousness looks as if it is carrying the whole harsh, unreal world inside itself. To those who understand, it is nothing but pure light, the one self within everything.

जो नहीं समझते, उनके लिए यह चेतना मानो पूरे कठोर, झूठे संसार को अपने भीतर लिए हुए दिखती है। जो समझते हैं, उनके लिए यह सिर्फ़ शुद्ध रोशनी है, हर चीज़ के भीतर बसी एक ही आत्मा।

4.36.13

अनुभूतिवशान्नित्यमर्कादीनां प्रकाशिनी । स्वादिनी सर्वभूतानां भाविनी भवभोगिनाम् ॥ १३ ॥

anubhūtivaśānnityamarkādīnāṃ prakāśinī | svādinī sarvabhūtānāṃ bhāvinī bhavabhoginām || 13 ||

Through its own power to experience, it always lights up the sun and everything else like it. It is the one who tastes life in every creature, and it is the one who becomes the world for those who live out worldly life.

अपनी अनुभव करने की ताक़त से, यह हमेशा सूरज को और उस जैसी बाकी चीज़ों को रोशन करती है। यह हर जीव में स्वाद लेने वाली है, और सांसारिक जीवन भोगने वालों के लिए यही संसार बनकर सामने आती है।

4.36.14

नास्तमेति न चोदेति नोत्तिष्ठति न तिष्ठति । न चायाति न वा याति न चेह नच नेह चित् ॥ १४ ॥

nāstameti na codeti nottiṣṭhati na tiṣṭhati | na cāyāti na vā yāti na ceha naca neha cit || 14 ||

Consciousness never sets and never rises. It never gets up and it never stays still. It never comes and it never goes. It is not confined here, and it is not missing from here either.

चेतना न कभी डूबती है, न कभी उगती है। न वह कभी उठती है, न कभी टिकी रहती है। न वह कभी आती है, न कभी जाती है। न वह सिर्फ़ यहीं है, और न यहाँ से गायब है।

4.36.15

सैषा चिदमलाकारा स्वयमात्मनि संस्थिता । राघवेत्थं प्रपञ्चेन जगन्नाम्ना विजृम्भते ॥ १५ ॥

saiṣā cidamalākārā svayamātmani saṃsthitā | rāghavetthaṃ prapañcena jagannāmnā vijṛmbhate || 15 ||

This same consciousness, completely free of any stain, rests all by itself within the self. In this way, Raghava, through this spreading-out, it unfolds itself under the name "world."

यही चेतना, जो पूरी तरह निर्मल है, अपने आप आत्मा के भीतर टिकी रहती है। हे राघव, इसी तरह यह अपने फैलाव से "संसार" के नाम से फैल जाती है।

4.36.16

तेजःपुञ्जैर्यथा तेजः पयःपूरैर्यथा पयः । परिस्फुरति संस्पन्दैस्तथा चित्सर्गविभ्रमैः ॥ १६ ॥

tejaḥpuñjairyathā tejaḥ payaḥpūrairyathā payaḥ | parisphurati saṃspandaitstathā citsargavibhramaiḥ || 16 ||

Just as light only shines as clusters of its own light, and water only flows as floods of its own water, so consciousness only stirs into motion through the illusion of the world it creates.

जैसे प्रकाश सिर्फ़ अपने ही ढेरों के रूप में चमकता है, और पानी सिर्फ़ अपनी ही बाढ़ों के रूप में बहता है, वैसे ही चेतना सिर्फ़ अपनी बनाई हुई सृष्टि के भ्रम से हलचल दिखाती है।

4.36.17

तत्स्वभावेन चिन्नाम्ना सर्वगेनोदितात्मना । प्रकाशेनाप्रकाशेन निरंशेनांशधारिणा ॥ १७ ॥

tatsvabhāvena cinnāmnā sarvagenoditātmanā | prakāśenāprakāśena niraṃśenāṃśadhāriṇā || 17 ||

This same awareness is known by its own nature: it is called consciousness, present everywhere, its true self now arisen. It is known through what shows itself and through what does not show itself. It has no parts, yet it holds parts.

यही चेतना अपने ही स्वभाव से जानी जाती है: इसे चेतना कहते हैं, यह हर जगह मौजूद है, इसका असली रूप अभी प्रकट हुआ है। यह उससे भी जानी जाती है जो दिखता है और उससे भी जो नहीं दिखता। इसके कोई हिस्से नहीं हैं, फिर भी यह हिस्सों को धारण करती है।

4.36.18

स्वयं स्वकलनाभोगादनन्तं पदमुज्झता । अहमस्मीति भावेन गच्छता ज्ञपदं शनैः ॥ १८ ॥

svayaṃ svakalanābhogādanantaṃ padamujjhatā | ahamasmīti bhāvena gacchatā jñapadaṃ śanaiḥ || 18 ||

By itself, out of enjoying its own imagining, it gives up its infinite state, and with the feeling I am, it slowly moves toward the state of a knower.

यह अपने आप, अपनी ही कल्पना का आनंद लेते हुए, अपनी असीम अवस्था को छोड़ देती है, और मैं हूँ के भाव के साथ धीरे-धीरे जानने वाले की अवस्था की ओर बढ़ती है।

4.36.19

नानातायां प्ररूढायामस्यां संसृतिपूर्वकम् । भावाभावग्रहोत्सर्गपदे स्थितिमुपागते ॥ १९ ॥

nānātāyāṃ prarūḍhāyāmasyāṃ saṃsṛtipūrvakam | bhāvābhāvagrahotśargapade sthitimupāgate || 19 ||

When this state of many-ness has grown, following the course of worldly wandering, it comes to rest at the point where being and non-being are taken up and let go.

जब यह अनेकता की स्थिति बढ़ जाती है, संसार में भटकने के क्रम के साथ, यह उस बिंदु पर टिक जाती है जहाँ होना और न होना, दोनों को पकड़ा और छोड़ा जाता है।

4.36.20

पुर्यष्टकस्पन्दशतैःकरोति न करोति च । उत्सेधमेति भूकोशकोटरस्थोऽङ्कुरोत्करः ॥ २० ॥

puryaṣṭakaspandaśataiḥkaroti na karoti ca | utsedhameti bhūkośakoṭarastho'ṅkurotkaraḥ || 20 ||

Through hundreds of throbs of the subtle body, it acts and it does not act. A mass of sprouts, sitting hidden in the hollow of the earth's crust, rises upward.

सूक्ष्म शरीर के सैकड़ों स्पंदनों से यह करता भी है और नहीं भी करता। धरती की परत के भीतर छिपा हुआ अंकुरों का समूह ऊपर की ओर उठता है।

4.36.21

व्योम सौषिर्यमादत्ते सर्वमूर्त्यविरोधि यत् । स्पन्दैकधर्मवान्वातो रसरूपतया जलम् ॥ २१ ॥

vyoma sauriryamādatte sarvamūrtyavirodhi yat | spandaikadharmavānvāto rasarūpatayā jalam || 21 ||

Space takes on hollowness, the very thing that never blocks any form. Wind's one quality is vibration. Water exists as fluid.

आकाश खोखलापन धारण करता है, जो किसी भी आकार को कभी नहीं रोकता। हवा का एक ही गुण है कंपन। जल तरल रूप में रहता है।

4.36.22

दृढोर्वी प्रकटं तेजः स्थितिमन्ति जगन्ति च । प्रतिबन्धाभ्यनुज्ञासु कालः कलनया स्थितः ॥ २२ ॥

dṛḍhorvī prakaṭaṃ tejaḥ sthitimanti jaganti ca | pratibandhābhyanujñāsu kālaḥ kalanayā sthitaḥ || 22 ||

The earth becomes solid, fire becomes visible, and the worlds gain steadiness. In stopping things and allowing things, time exists through its work of measuring.

धरती ठोस हो जाती है, आग दिखने लगती है, और लोक स्थिरता पाते हैं। चीज़ों को रोकने और अनुमति देने में, समय अपने नापने के काम के ज़रिए बना रहता है।

4.36.23

पुष्पेषु गन्धतां याति शनैः संचितकेसरम्मृत्कोटररसोल्लासः स्थाणुतामेति भूतले ॥ २३ ॥

puṣpeṣu gandhatāṃ yāti śanaiḥ saṃcitakesarammṛtkoṭararasollāsaḥ sthāṇutāmeti bhūtale || 23 ||

In flowers, the gathered pollen slowly turns into fragrance. The rising sap inside the hollow of the earth hardens into a fixed trunk on the ground.

फूलों में इकट्ठा हुआ पराग धीरे-धीरे सुगंध बन जाता है। धरती की खोह के भीतर उठा हुआ रस ज़मीन पर एक स्थिर तने में बदल जाता है।

4.36.24

मूलस्थाः फलमायान्ति पेलवा रसलेशकाः । संनिवेशं व्रजन्त्येता रेखाः पल्लवपालिषु ॥ २४ ॥

mūlasthāḥ phalamāyānti pelavā rasaleśakāḥ | saṃniveśaṃ vrajantyetā rekhāḥ pallavapāliṣu || 24 ||

The soft drops of sap sitting at the root turn into fruit. These fine lines arrange themselves along the rows of young leaves.

जड़ में बैठी रस की मुलायम बूँदें फल बन जाती हैं। ये बारीक रेखाएँ नई पत्तियों की कतारों में अपनी जगह बना लेती हैं।

4.36.25

नवतामनुगृह्णाति शक्रबाणासनेन च । यो यो भवत्यविरतं संस्थानेन वनेन च ॥ २५ ॥

navatāmanugṛhṇāti śakrabāṇāsanena ca | yo yo bhavatyavirataṃ saṃsthānena vanena ca || 25 ||

Together with the rainbow, freshness comes. Whatever is always coming into being does so in its own shape, in the forest too.

इंद्रधनुष के साथ ताज़गी आती है। जो कुछ हमेशा उत्पन्न होता रहता है, वह अपने ही रूप में होता है, जंगल में भी।

4.36.26

वसन्तमुपतिष्ठन्ति पुष्पपल्लवराशयः। निदाघविधिमायान्ति दैवदाहविभूतयः ॥ २६ ॥

vasantamupatiṣṭhanti puṣpapallavarāśayaḥ| nidāghavidhimāyānti daivadāhavibhūtayaḥ || 26 ||

Heaps of flowers and young leaves come forward to greet spring. Glowing bursts of heat from the sky arrive to bring on the summer season.

फूलों और नई पत्तियों के ढेर वसंत का स्वागत करने आते हैं। आकाश की चमकती गर्मी की लहरें गर्मी के मौसम को लाने आती हैं।

4.36.27

प्रावृट्समयमीहन्ते नीला जलदराशयः। शरदं चानुधावन्ति समग्राः फलराशयः ॥ २७ ॥

prāvṛṭsamayamīhante nīlā jaladarāśayaḥ| śaradaṃ cānudhāvanti samagrāḥ phalarāśayaḥ || 27 ||

Masses of dark clouds long for the rainy season. Full clusters of fruit rush after autumn.

काले बादलों के समूह बरसात के मौसम की चाह रखते हैं। फलों के भरे-पूरे गुच्छे शरद ऋतु के पीछे दौड़ते हैं।

4.36.28

हेमन्ते हिमहासिन्यो भवन्ति ककुभो दश। नयन्त्युपलतामम्बु शिशिरे शीतलानिलाः ॥ २८ ॥

hemanthe himahāsinyo bhavanti kakubho daśa| nayantyupalatāmambu śiśire śītalānilāḥ || 28 ||

In early winter, the ten directions seem to smile with frost. In deep winter, the cold winds turn water into ice.

आरंभिक जाड़े में, दसों दिशाएँ मानो पाले से मुस्कुराती हैं। कड़ाके की ठंड में, ठंडी हवाएँ पानी को बर्फ में बदल देती हैं।

4.36.29

न जहाति स्वमर्यादां कालो युगमयीमिमाम्। तरङ्गिणीतरङ्गौघलीलया यान्ति सृष्टयः ॥ २९ ॥

na jahāti svamaryādāṃ kālo yugamayīmimām| taraṅgiṇītaraṅgaughalīlayā yānti sṛṣṭayaḥ || 29 ||

Time never leaves this its own boundary, made of the ages. Creations pass on like the play of a river's rushing waves.

समय अपनी इस सीमा को कभी नहीं छोड़ता, जो युगों से बनी है। सृष्टियाँ नदी की उमड़ती लहरों के खेल की तरह बीत जाती हैं।

4.36.30

नियतिः स्थितिमायाति स्थैर्यचातुर्यकारिणी। तिष्ठत्याप्रलयं धीरा धराधरणधर्मिणी ॥ ३० ॥

niyatiḥ sthitimāyāti sthairyacāturyakāriṇī| tiṣṭhatyāpralayaṃ dhīrā dharādharaṇadharminī || 30 ||

Destiny, who makes things firm and exact, settles into a fixed state. Firm and unshaken, holding up the earth as her nature, she stands until the final dissolution.

नियति, जो चीज़ों को मज़बूत और ठीक-ठीक बनाती है, एक पक्की अवस्था में बस जाती है। वह दृढ़ और अडिग है, धरती को थामे रखना उसका स्वभाव है, और वह अंतिम प्रलय तक टिकी रहती है।

4.36.31

चतुर्दशविधानीह भूतानि भुवनान्तरे। नानाचारविहाराणि नानाविरचनानि च ॥ ३१ ॥

caturdaśavidhānīha bhūtāni bhuvanāntare | nānācāravihārāṇi nānāviracanāni ca || 31 ||

Here, within the worlds, there are creatures of fourteen kinds. Each one lives and moves in its own different way, and each is made up differently.

यहाँ, लोकों के भीतर, चौदह प्रकार के प्राणी हैं। हर एक अपने अलग ढंग से जीता और घूमता है, और हर एक अलग तरह से बना है।

4.36.32

पुनःपुनर्विलीयन्ते जायन्ते च पुनःपुनः । धारापरम्परा याति विना वारीव बुद्बुदाः ॥ ३२ ॥

punarpunarvilīyante jāyante ca punarpunaḥ | dhārāparamparā yāti vinā vārīva budbudāḥ || 32 ||

Again and again they melt away, and again and again they are born, and the flow goes on and on, like bubbles that cannot be without water.

वे बार-बार घुल जाते हैं, और बार-बार जन्म लेते हैं, और यह बहाव चलता ही रहता है, जैसे बुलबुले पानी के बिना नहीं हो सकते।

4.36.33

आयाति याति परितिष्ठति लीलयाऽतिस्वार्थानुपार्जयति धावति जन्मनाशैः । उन्मत्तवद्विहितभावनमाहितेहा मुग्धा कृतान्तविवशा जनता वराकी ॥ ३३ ॥

āyāti yāti paritiṣṭhati līlayā'tisvārthānupārjayati dhāvati janmanāśaiḥ | unmattovadvihtabhāvanamāhithehā mugdhā kṛtāntavivaśā janatā varākī || 33 ||

This crowd of people comes, goes, and lingers a while, just out of mere play. It grabs too much for its own gain, and runs about through birth after birth and death after death. Making up its own ideas like a madman, driven by its own urges, this deluded, wretched crowd is helpless before death.

यह जनसमूह केवल खेल-खेल में आता है, जाता है, और कुछ समय ठहरता है। यह अपने ही स्वार्थ के लिए बहुत ज़्यादा बटोरता है, और जन्म-दर-जन्म, मृत्यु-दर-मृत्यु दौड़ता रहता है। पागल की तरह अपनी ही कल्पनाएँ गढ़ते हुए, अपनी ही इच्छाओं से प्रेरित होकर, यह भ्रमित, बेचारा जनसमूह मृत्यु के आगे लाचार है।

Chapter 37

4.37.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्थं स्थिरतराकाराः संसारावलयोऽभितः । स्वभावाद्ब्रह्मणः सर्वाः पुनरायान्ति यान्ति च ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | itthaṃ sthiratarākārāḥ saṃsārāvalayo'bhitaḥ | svabhāvādbrahmaṇaḥ sarvāḥ punarāyānti yānti ca || 1 ||

Vasishtha said: These cycles of the world, though they look very fixed and solid all around, arise again and pass away again and again, simply from the nature of Brahman.

वशिष्ठ जी ने कहा, संसार के ये सारे चक्र चाहे चारों तरफ बहुत पक्के और ठोस दिखते हों, फिर भी ब्रह्म के अपने स्वभाव से ही बार बार बनते हैं और मिट जाते हैं।

4.37.2

स्वतः सर्वमिदं जातमन्योन्यं हेतुतां गतम् । अन्योन्यमभिनश्यत्तत्स्वत एव विलीयते ॥ २ ॥

svataḥ sarvamidaṃ jātamanyonyaṃ hetutāṃ gatam | anyonyamabhinaśyattatsvata eva vilīyate || 2 ||

All this is born on its own, each part becoming the seeming cause of another, and as they destroy each other, it dissolves again on its own.

यह सब अपने आप ही पैदा होता है, हर हिस्सा दूसरे का कारण बनता दिखता है, और जब वे एक दूसरे को मिटाते हैं तो यह सब अपने आप ही घुल जाता है।

4.37.3

स्वतोऽस्पन्दोऽपि तु स्पन्दो यथाऽगाधजलोदरे । तथैवेयमसत्सच्च चिदेव परिदृश्यते ॥ ३ ॥

svato'spando'pi tu spando yathā'gādhajalodare | tathaiveyamasatsacca cideva paridṛśyate || 3 ||

Just as deep, unfathomable water is still by itself but shows waves within it, in the same way this world, though not fully real and not fully unreal, is seen, and it is really nothing but consciousness.

जैसे गहरा, अथाह पानी अपने आप में शांत होता है पर उसके अंदर लहरें दिखती हैं, वैसे ही यह संसार, जो न पूरी तरह सच है न पूरी तरह झूठ, दिखता तो है, पर असल में वह सिर्फ चेतना ही है।

4.37.4

व्योमन्येव निराकारे निदाघात्सरितो यथा । लक्ष्यन्ते तद्वदेवेमाश्चित्तत्त्वे सृष्टिदृष्टयः ॥ ४ ॥

vyomanyeva nirākāre nidāghātsarito yathā | lakṣyante tadvadevemāścittattve sṛṣṭidṛṣṭayaḥ || 4 ||

Just as, because of the summer heat, rivers seem to appear in the empty, formless sky, in the same way these visions of creation are seen within the one reality of consciousness.

जैसे गर्मी की तपिश से खाली, बिना आकार वाले आकाश में नदियाँ दिखने लगती हैं, वैसे ही सृष्टि के ये सारे नज़ारे चेतना की उसी एक सच्चाई में दिखते हैं।

4.37.5

यथा मदवशादात्मा सोऽन्यवत्प्रतिभासते । तथैव चित्त्वाच्चिद्धातुः स एवाऽस इव स्थितः ॥ ५ ॥

yathā madavaśādātmā so'nyavatpratibhāsate | tathaiva cittvācciddhātuḥ sa evā'sa iva sthitaḥ || 5 ||

Just as a person, under the effect of intoxication, seems to themselves to be someone else, in the same way, because it is of the nature of consciousness, that same element of consciousness stands as if it were something else.

जैसे नशे के असर में इंसान खुद को कोई और समझने लगता है, वैसे ही चेतना का वह तत्व, अपने चेतन-स्वभाव के कारण, ऐसे खड़ा रहता है जैसे वह कुछ और हो।

4.37.6

न चेदं सदसन्नेदं तत्स्थातत्स्थतया चितःनातिरिक्तातिरिक्ता च कटकादिषु हेमता ॥ ६ ॥

na cedaṃ sadasannedaṃ tatsthātatsthatayā citaḥnātiriktātiriktā ca kaṭakādiṣu hematā || 6 ||

This is neither fully real nor fully unreal, neither wholly this nor wholly not this, because consciousness both stays in it and does not stay in it. It is neither completely separate from it nor completely the same as it, the way goldness is in a bangle and other gold ornaments.

यह न तो पूरी तरह सच है न पूरी तरह झूठ, न पूरी तरह यह है न पूरी तरह यह नहीं है, क्योंकि चेतना इसमें रहती भी है और नहीं भी रहती। यह न तो इससे पूरी तरह अलग है न पूरी तरह एक जैसी, जैसे चूड़ी वगैरह सोने के गहनों में सोनापन होता है।

4.37.7

येन शब्दं रसं रूपं गन्धं जानासि राघवसोऽयमात्मा परं ब्रह्म सर्वमापूर्य संस्थितः ॥ ७ ॥

yena śabdaṃ rasaṃ rūpaṃ gandhaṃ jānāsi rāghavaso'yamātmā paraṃ brahma sarvamāpūrya saṃsthitaḥ || 7 ||

Rama, that by which you know sound, taste, shape and smell, that very self is the highest Brahman, standing there, filling everything completely.

हे राम, जिसकी वजह से तुम आवाज़, स्वाद, रूप और गंध जान पाते हो, वही आत्मा सबसे बड़ा ब्रह्म है, जो सब कुछ पूरी तरह भरकर खड़ा है।

4.37.8

नानैकत्वादतीतात्तु सर्वंगादमलात्मनःद्वितीया कलना नास्ति काचिन्नेतरथा क्वचित् ॥ ८ ॥

nānaikatvādatītāttu sarvaṃgādamalātmanaḥdvitīyā kalanā nāsti kācinnetarathā kvacit || 8 ||

The pure self goes beyond both diversity and oneness, and it pervades everything. Because of that, no second thing exists there at all, anywhere, in any way.

वह निर्मल आत्मा अनेकता और एकता दोनों से परे है, और सब जगह फैली हुई है। इसी वजह से वहाँ कोई दूसरी चीज़ है ही नहीं, न कहीं, न किसी भी तरह से।

4.37.9

राम भावनादन्यस्य भावाभावाः शुभाशुभाःसृष्टयः परिकल्प्यन्तेऽनात्मन्येवाथवात्मनि ॥ ९ ॥

rāma bhāvanādanyasya bhāvābhāvāḥ śubhāśubhāḥsṛṣṭayaḥ parikalpyante'nātmanyevāthavātmani || 9 ||

Rama, it is someone who lacks true understanding who imagines all this: creations good and bad, existing and not existing, imagined to be either in what is not the self or in the self.

हे राम, जिसे सही समझ नहीं होती, वही यह सब कल्पना करता है, अच्छी बुरी, होने वाली न होने वाली सृष्टियाँ, जिन्हें वह या तो जो आत्मा नहीं है उसमें मान लेता है या आत्मा में।

4.37.10

यस्मादात्मनो व्यतिरिक्ते वस्तुनि सिद्धे सति तत्रेच्छा प्रवर्ततेयत्र स्वात्मनो व्यतिरिक्तं न किंचिदपि संभवति तत्रात्मा किमिव वाञ्छन्किमनुस्मरन्धावतु किमुपैतु ॥ १० ॥

yasmādātmano vyatirikte vastuni siddhe sati tatrecchā pravartateyatra svātmano vyatiriktaṃ na kiṃcidapi saṃbhavati tatrātmā kimiva vāñchankimanusmarandhāvatu kimupaitu || 10 ||

Desire arises only where something is shown to be separate from oneself. But where nothing at all separate from one's own self is possible, what could the self want, what could it remember, and what could it run toward or move to reach?

इच्छा तभी पैदा होती है जब कोई ऐसी चीज़ साबित हो जो खुद से अलग हो। पर जहाँ अपने आप से अलग कुछ भी हो ही नहीं सकता, वहाँ आत्मा क्या चाहे, क्या याद करे, और किस चीज़ की तरफ दौड़े या पहुँचे?

4.37.11

अत इदमीहितमिदमनीहितमित्यात्मानं न स्पृशन्ति विकल्पाः । अतो निरिच्छतायामात्मा न किंचिदपि करोति कर्तृकरणकर्मणामेकत्वात् न क्वचित्तिष्ठत्याधाराधेययोरेकत्वात् नच निरिच्छस्यात्मनो नैष्कर्म्यमभिमतम् द्वितीयायाः कल्पनाया अभावात् ॥ ११ ॥

ata idamīhitamidamanīhitamityātmānaṃ na spṛśanti vikalpāḥ | ato niricchatāyāmātmā na kiṃcidapi karoti kartṛkaraṇakarmaṇāmekatvāt na kvacittiṣṭhatyādhārādheyayorekatvāt naca niricchasyātmano naiṣkarmyamabhimatam dvitīyāyāḥ kalpanāyā abhāvāt || 11 ||

So ideas like this is wanted and this is not wanted do not touch the self at all. Because of this, when there is no desire, the self does nothing whatsoever, since the doer, the means, and the thing done are all one and the same. It does not stand anywhere either, since the container and the thing held inside are one and the same. And still, one should not think the desireless self is without action, because there is no second thing at all even to imagine.

इसलिए यह चाहिए और यह नहीं चाहिए जैसे खयाल आत्मा को छूते तक नहीं। इसी वजह से, जब कोई इच्छा नहीं होती, तो आत्मा कुछ भी नहीं करती, क्योंकि करने वाला, करने का साधन, और किया गया काम, ये तीनों एक ही हैं। वह कहीं टिकती भी नहीं, क्योंकि जिसमें चीज़ रखी जाती है और जो चीज़ रखी जाती है, ये दोनों एक ही हैं। फिर भी यह नहीं मानना चाहिए कि इच्छा रहित आत्मा कुछ न करने वाली है, क्योंकि वहाँ कोई दूसरी चीज़ सोचने के लिए है ही नहीं।

4.37.12

नेतरा जानासि राम त्वमियं ब्रह्मसंस्थितिः । सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तः कर्ता भव गतज्वरः ॥ १२ ॥

netarā jānāsi rāma tvamayaṃ brahmasaṃsthitiḥ | sarvadvandvavinirmuktaḥ kartā bhava gatajvaraḥ || 12 ||

Rama, you understand nothing other than this: that you yourself are this state of standing fixed in Brahman. So act as the doer, free from every pair of opposites, with your inner fever gone.

हे राम, तुम इसके सिवा कुछ और समझते ही नहीं, कि तुम खुद ही ब्रह्म में टिके रहने की यह स्थिति हो। इसलिए हर तरह के द्वंद्व से मुक्त होकर और अपनी बेचैनी मिटाकर, काम करने वाले बनो।

4.37.13

अन्यच्च राघव पुनः पुनः कृत्वा कृत्वा बहुविधमिदं कर्म तरसा त्वया प्राप्यं किं तद्वद यदुचितं भूतकरणात्। अकर्तृत्वे वास्था भवतु तव चाप्यागमवतो भव स्वस्थः स्वच्छः स्तिमित इव निर्वातजलधिः ॥ १३ ॥

anyacca rāghava punaḥ punaḥ kṛtvā kṛtvā bahuvidhamidaṃ karma tarasā tvayā prāpyaṃ kiṃ tadvada yaducitaṃ bhūtakaraṇāt | akartṛtve vāsthā bhavatu tava cāpyāgamavato bhava svasthaḥ svacchaḥ stimita iva nirvātajaladhiḥ || 13 ||

And another thing, Rama: doing this work of many kinds again and again in haste, what do you actually get from it? Tell me, what is fitting to gain once it is done? Instead, hold firmly to the idea that you are not the doer, and since you have gained this understanding, be settled, be clear, be still, like a windless sea.

और एक बात और, हे राम, बार बार जल्दी जल्दी यह तरह तरह का काम करके तुम्हें क्या मिलना है? बताओ, काम हो जाने के बाद पाने लायक क्या है? इसकी जगह, इस बात पर टिके रहो कि तुम करने वाले नहीं हो, और चूँकि तुम्हें यह समझ मिल चुकी है, शांत रहो, निर्मल रहो, स्थिर रहो, जैसे बिना हवा का समंदर।

4.37.14

गत्वा सुदूरमपि यत्नवता जवेन नासाद्यते तदिह येन सुपूर्णतैति। मत्वेति मा व्रज पदार्थगणान्धिया त्वं न त्वं त्वमेव परमार्थतया चिदात्मा ॥ १४ ॥

gatvā sudūramapi yatnavatā javena nāsādyate tadaha yena supūrṇataiti | matveti mā vraja padārthagaṇāndhiyā tvaṃ na tvaṃ tvameva paramārthatayā cidātmā || 14 ||

Even by going very far, trying hard and moving fast, one cannot reach here the thing by which a person becomes fully complete. Knowing this, do not chase after the heap of objects with your mind. You are not the you that you think you are, in the highest truth you alone are the self that is consciousness.

बहुत दूर जाकर भी, पूरी कोशिश और तेज़ी से भी, यहाँ वह चीज़ नहीं मिलती जिससे इंसान पूरी तरह भरपूर हो जाए। यह जानकर, चीज़ों के ढेर के पीछे अपनी बुद्धि से मत भागो। तुम वह तुम नहीं हो जो तुम सोचते हो, सबसे बड़े सच में तुम खुद ही वह आत्मा हो जो चेतना है।

Chapter 38

4.38.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं स्थिते तु तज्ज्ञानां यदेतत्कर्तृत्वं दृश्यते सुखदुःखादिषु योगादिषु वा तदसन्नतु मूर्खाणाम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ sthite tu tajjñānāṃ yadetatkartṛtvaṃ dṛśyate sukhaduḥkhādiṣu yogādiṣu vā tadasannatu mūrkhāṇām || 1 ||

Sri Vasishtha said: this being so, whatever doership appears in pleasure, pain, and the like, or in practices such as yoga, is unreal for those who know the truth, but not for fools.

श्री वसिष्ठ ने कहा: जब बात ऐसी है, तो सुख-दुख वगैरह में या योग वगैरह में जो कर्तापन दिखता है, वह सच जानने वालों के लिए झूठा है, पर मूर्खों के लिए झूठा नहीं है।

4.38.2

यतः कर्तृत्वं नाम किमुच्यते । यो ह्यन्तस्थाया मनोवृत्तेर्निश्चय उपादेयताप्रत्ययो वासनाभिधानस्तत्कर्तृत्वशब्देनोच्यते ॥ २ ॥

yataḥ kartṛtvaṃ nāma kimucyate | yo hyantasthāyā manovṛtterniścaya upādeyatāpratyayo vāsanābhidhānastatkartṛtvaśabdenocyate || 2 ||

Now, what exactly is this thing called doership? Inside the mind there is a firm feeling, a sense that says, this is worth having, this should be taken. That fixed habit of mind, called vasana, is what the word doership really means.

अब यह कर्तापन कहलाने वाली चीज़ है क्या? मन के अंदर एक पक्का भाव होता है, यह भाव कि यह चीज़ पाने लायक है, इसे ले लेना चाहिए। मन की इसी पक्की आदत को वासना कहते हैं, और कर्तापन शब्द का यही मतलब है।

4.38.3

चेष्टावशात्तादृक्फलभोक्तृत्वं वासनानुरूपं स्पन्दते पुरुषः स्पन्दानुरूपं फलमनुभवति । फलभोक्तृत्वं नाम कर्तृत्वादिति सिद्धान्तः ॥ ३ ॥

ceṣṭāvaśāttādṛkphalabhoktṛtvaṃ vāsanānurūpaṃ spandate puruṣaḥ spandānurūpaṃ phalamanubhavati | phalabhoktṛtvaṃ nāma kartṛtvāditi siddhāntaḥ || 3 ||

Driven by his own effort, a person moves according to the desire fixed in his mind, and he experiences a result that matches that movement. This experiencing of the result happens because of that doership. This is the settled teaching.

अपनी ही मेहनत के दबाव में इंसान अपने मन की वासना के हिसाब से हरकत करता है, और जैसी हरकत होती है वैसा ही फल वह भोगता है। यह फल भोगना उसी कर्तापन की वजह से होता है। यही पक्का सिद्धांत है।

4.38.4

तथाच कुर्वतोऽकुर्वतो वापि स्वर्गेऽपि नरकेऽपि वा । यादृग्वासनमेतत्स्यान्मनस्तदनुभूयते ॥ ४ ॥

tathāca kurvato'kurvato vāpi svarge'pi narake'pi vā | yādṛgvāsanametatsyānmanastadanubhūyate || 4 ||

So whether a person acts or does not act, whether he is in heaven or in hell, whatever desire is fixed in his mind, that alone is what he experiences.

इसलिए चाहे इंसान कुछ करे या न करे, चाहे वह स्वर्ग में हो या नरक में, उसके मन में जैसी वासना होगी, वही वह भोगेगा।

4.38.5

तस्मादज्ञाततत्त्वानां पुंसां कुर्वतामकुर्वतां च कर्तृता नतु ज्ञाततत्त्वानामवासनत्वात् ॥ ५ ॥

tasmādajñātatattvānāṃ puṃsāṃ kurvatāmakurvatāṃ ca kartṛtā natu jñātatattvānāmavāsanatvāt || 5 ||

So for people who have not known the truth, there is doership whether they act or do not act. But this is not so for those who have known the truth, because they are free of desire.

इसलिए जिन लोगों ने सच नहीं जाना है, वे चाहे कुछ करें या न करें, उनमें कर्तापन बना रहता है। पर जिन्होंने सच जान लिया है, उनमें ऐसा नहीं है, क्योंकि उनकी वासना खत्म हो चुकी है।

4.38.6

ज्ञाततत्त्वो हि शिथिलीभूतवासनः कुर्वन्नपि फलं नानुसंदधाति अथच स्पन्दनमात्रं केवलं करोत्यसक्तबुद्धिः संप्राप्तमपि फलमात्मैवेदं सर्वमेव कर्मफलमनुभवत्यकुर्वन्नपि करोति मग्नमनाः ॥ ६ ॥

jñātātattvo hi śithilībhūtavāsanaḥ kurvannapi phalaṃ nānusaṃdadhāti athaca spandanamātraṃ kevalaṃ karotyasaktabuddhiḥ saṃprāptamapi phalamātmaivedaṃ sarvameva karmaphalamanubhavatyakurvannapi karoti magnamanāḥ || 6 ||

One who knows the truth has loosened his desires. Even while acting, he does not run after the fruit of the action. He does only the bare movement needed, his mind unattached. Even when a result comes to him, he takes it all simply as the self, as nothing but the fruit of past action. Even when he does nothing, he is acting, because his mind stays absorbed.

जिसने सच जान लिया है, उसकी वासना ढीली पड़ चुकी होती है। वह काम करते हुए भी उसके फल के पीछे नहीं भागता। वह बस ज़रूरी हरकत भर करता है, उसका मन उससे चिपकता नहीं। फल मिलने पर भी वह इसे बस आत्मा ही मानता है, बीते कर्म का फल भर मानता है। कुछ न करते हुए भी वह करता रहता है, क्योंकि उसका मन कहीं गहरे डूबा रहता है।

4.38.7

मनो यत्करोति तत्कृतं भवति यन्न करोति तन्न कृतं भवति अतो मन एव कर्तृ न देहः ॥ ७ ॥

mano yatkaroti tatkṛtaṃ bhavati yanna karoti tanna kṛtaṃ bhavati ato mana eva kartṛ na dehaḥ || 7 ||

What the mind does, that becomes done. What the mind does not do, that does not become done. So the mind alone is the doer, not the body.

मन जो करता है, वही किया हुआ माना जाता है। मन जो नहीं करता, वह किया हुआ नहीं माना जाता। इसलिए करने वाला मन ही है, शरीर नहीं।

4.38.8

चित्तादेवायं संसार आगतश्चित्तमय एव चित्तमात्रं चित्त एव स्थित इति विज्ञातम् विषयश्चमृगतृसर्वमुपशान्तमभूद्वासनैवेति ज्ञ एवास्तीति ॥ ८ ॥

cittādevāyaṃ saṃsāra āgataścittamaya eva cittamātraṃ citta eva sthita iti vijñātam viṣayaścamṛgatṛsarvamupaśāntamabhūdvāsanāiveti jña evāstīti || 8 ||

This world has come from the mind alone. It is made only of mind. It is mind, and it rests in mind alone. This much is understood. The objects of the senses, like a mirage, have all quieted down. Once one sees, this is only a mental impression, only the knower is left.

यह संसार मन से ही पैदा हुआ है। यह मन का ही बना है। यह सिर्फ मन है, और मन में ही टिका है। यह बात समझ में आ गई है। इंद्रियों के विषय, मृगतृष्णा यानी मरीचिका की तरह, सब शांत हो गए हैं। जब यह समझ आता है कि यह सब बस वासना भर है, तब सिर्फ जानने वाला ही बचता है।

4.38.9

आत्मविदां हि तन्मनः परमुपशममागतं मृगतृष्णाजलमिव वर्षति जलदे हिमकण इव चण्डातपे विलीनं तुर्यदशामुपागतं स्थितम्॥ ९॥

ātmavidāṃ hi tanmanaḥ paramupaśamamāgataṃ mṛgatṛṣṇājalamiva varṣati jalade himakaṇa iva caṇḍātape vilīnaṃ turyadaśāmupāgataṃ sthitam || 9 ||

For those who know the self, the mind has come to complete peace. It is like the water of a mirage when a real cloud pours down rain, or a drop of ice melting in fierce sunlight, it has dissolved, and it rests, having reached the fourth state.

आत्मा को जानने वालों का मन परम शांति को पा चुका है। जैसे बादल से असली बारिश गिरने पर मृगतृष्णा का पानी मिट जाता है, जैसे तेज़ धूप में बर्फ की बूंद पिघल जाती है, वैसे ही वह मन घुल चुका है और चौथी अवस्था को पाकर टिका हुआ है।

4.38.10

नानन्दं न निरानन्दं न चलं नाचलं स्थिरम्। न सन्नासन्न चैतेषां मध्यं ज्ञानिमनो विदुः॥ १०॥

nānandaṃ na nirānandaṃ na calaṃ nācalaṃ sthiram | na sannāsanna caitēṣāṃ madhyaṃ jñānimano viduḥ || 10 ||

It is not joy, and it is not without joy. It is not moving, and it is not still, yet it stays steady. It is not existing, and it is not non-existing, and it is not something between the two. This is how the wise describe the mind of one who has known the truth.

वह न आनंद है, न आनंद-रहित है। वह न हिलता है, न स्थिर है, फिर भी टिका रहता है। वह न है, न नहीं है, और न इन दोनों के बीच की कोई चीज़ है। सच जानने वाले के मन को समझने वाले लोग ऐसा ही बताते हैं।

4.38.11

न वासनामये स्पन्दरसे गज इव पल्वले मज्जति तज्ज्ञो मूर्खमनोभोगभूमिमेव पश्यति न सत्तत्त्वं॥ ११॥

na vāsanāmaye spandarase gaja iva palvale majjati tajjño mūrkhamanobhogabhūmimeva paśyati na sattattvaṃ || 11 ||

One who knows this does not sink, like an elephant in a swamp, into the current of movement made of desire. He only sees it as the fool's field of mental pleasure, he does not see it as the real truth.

जो यह जानता है, वह वासना से बनी हलचल की धारा में हाथी की तरह दलदल में नहीं डूबता। वह इसे बस मूर्ख के मन के मौज-मस्ती का मैदान भर देखता है, इसे सच्चाई मानकर नहीं देखता।

4.38.12

तथाचायमत्रापरो दृष्टान्तः । अकुर्वन्नपि श्वभ्रपतनं श्तयासनगतोऽपि श्वभ्रपातवासनावासिते चेतसि श्वभ्रपतनदुःखमनुभवति । अपरस्तु कुर्वन्नपि श्वभ्रपतनं परममुपशममुपगतवति मनसि शय्यासनसुखमनुभवति । एवमनयोः शय्यासनश्वभ्रपातयोरेकः श्वभ्रपतनस्याकर्तापि कर्ता संपन्नो द्वितीयश्च श्वभ्रपतनस्य कर्ताप्यकर्ता संपन्नश्चित्तवशात्तस्माद्यच्चित्तं तन्मयो भवति पुरुष इति सिद्धान्तः ॥ १२ ॥

tathācāyamatrāparo dṛṣṭāntaḥ | akurvannapi śvabhrpatanaṃ śtayāsanagato'pi śvabhrapātavāsanāvāsite cetasi śvabhrpatanaduḥkhamanubhavati | aparastu kurvannapi śvabhrpatanaṃ paramamupaśamamupagatavati manasi śayyāsanasukhamanubhavati | evamanayoḥ śayyāsanaśvabhrapātayorekaḥ śvabhrpatanasya akartāpi kartā saṃpanno dvitīyaśca śvabhrpatanasya kartāpyakartā saṃpannaścittavaśāttasmādyacittaṃ tanmayo bhavati puruṣa iti siddhāntaḥ || 12 ||

And here is another example on this point. One person, even without falling into a pit, even while lying on a couch, because his mind is soaked in the impression of falling into a pit, feels the pain of falling into a pit. Another person, even while actually falling into a pit, because his mind has reached deep peace, feels the comfort of lying on a couch. So between these two, lying on a couch and falling into a pit, one has become, as it were, the doer of the fall into the pit, though he did not do it, and the second has become a non-doer of the fall into the pit, though he did it. Both happen because of the mind. So whatever the mind is, that is what a person becomes. This is the settled teaching.

और इस बारे में एक और मिसाल है। एक आदमी गड्ढे में गिरा ही नहीं, वह आराम से पलंग पर लेटा है, फिर भी उसका मन गड्ढे में गिरने की वासना से भरा होने के कारण, वह गड्ढे में गिरने का दुख महसूस करता है। दूसरा आदमी सचमुच गड्ढे में गिरता है, पर उसका मन गहरी शांति पा चुका होने के कारण, वह पलंग पर लेटने जैसा सुख महसूस करता है। तो इन दोनों में, पलंग पर लेटने और गड्ढे में गिरने में, एक बिना किए भी गड्ढे में गिरने वाला बन गया, और दूसरा करके भी गड्ढे में न गिरने वाला बन गया। यह सब मन के कारण होता है। इसलिए इंसान वही बन जाता है जो उसका मन होता है। यही पक्का सिद्धांत है।

4.38.13

तेन तत्र कर्तुरकर्तुर्वा नित्यमसंसक्तं भवतु चेतो नहि किंचिदस्त्यात्मतत्त्वव्यतिरिक्तं यत्र संसक्तिर्भाव्यते । यत्किंचिदिदं जगद्गतं तत्सर्वं शुद्धचित्तत्वादाभासमवेहि ॥ १३ ॥

tena tatra karturakarturvā nityamasansaktaṃ bhavatu ceto nahi kiṃcidasti ātmatattvavyatiriktaṃ yatra saṃsaktirbhāvyate | yatkiṃcididaṃ jagadgataṃ tatsarvaṃ śuddhacittatvādābhāsamavehi || 13 ||

So whether one is a doer or not a doer in this, let the mind always stay unattached. There is nothing at all apart from the true self in which attachment could ever form. Know that whatever exists in this world is nothing but appearance, because it is made only of pure mind.

इसलिए इंसान करने वाला हो या न करने वाला, इस बारे में मन को हमेशा बेपरवाह रहने दो। सच्ची आत्मा के अलावा ऐसा कुछ भी नहीं है जिसमें लगाव बन सके। यह जान लो कि इस संसार में जो कुछ भी है, वह सब बस एक झलक है, क्योंकि यह सिर्फ शुद्ध मन से बना है।

4.38.14

एवं चास्य ज्ञातज्ञेयस्य पुंसो नामात्मा सुखदुःखानां न गम्य इति निश्चये जाते नात्मव्यतिरिक्ता आधाराधेयदृष्टयो विद्यन्त इति निश्चये जाते कर्ता भोक्तासर्वपदार्थव्यतिरिक्तोबालाग्रसहस्रभागोऽहमिति निश्चये जाते यत्किंचिदिदं तत्सर्वमहमेवेति वा निश्चये जाते सर्वसत्त्वावभासकः सर्वगस्तिष्ठाम्येवाहमिति निश्चये जाते नाहं सुखदुःखानां गम्य इति विगतज्वरतया चित्तवृत्तिर्लीलयैव तिष्ठते व्यवहारेषु ॥ १४ ॥

evaṃ cāsya jñātajñeyasya puṃso nāmātmā sukhaduḥkhānāṃ na gamya iti niścaye jāte nātmavyatiriktā ādhārādheyadṛṣṭayo vidyanta iti niścaye jāte kartā bhoktāsarvapadārthavyatiriktobālāgrasahasrabhāgo'hamiti niścaye jāte yatkiṃcididaṃ tatsarvamahameveti vā niścaye jāte sarvasattvāvabhāsakaḥ sarvagastiṣṭhāmyevāhamiti niścaye jāte nāhaṃ sukhaduḥkhānāṃ gamya iti vigatajvaratayā cittavṛttirlīlayaiva tiṣṭhate vyavahāreṣu || 14 ||

So for this person who has understood what is to be understood, when it becomes settled certainty that the self is never touched by pleasure or pain, when it becomes settled certainty that no idea of a holder and a thing held stands apart from the self, when it becomes settled certainty, I, the doer and the enjoyer, am different from every single thing, and am as small as a thousandth part of the tip of a hair, or when it becomes settled certainty, whatever this is, all of it is only me, when it becomes settled certainty, I alone remain, present everywhere, lighting up every being, and I am never touched by pleasure or pain, then, his fever gone, the movements of his mind stay in the business of daily life only as play.

इसलिए जिस इंसान ने समझने लायक बात समझ ली है, जब उसे यह पक्का यकीन हो जाता है कि आत्मा सुख-दुख से कभी छूती ही नहीं, जब यह पक्का यकीन हो जाता है कि धारण करने वाला और धारण की गई चीज़, ऐसा कोई अलग नज़रिया आत्मा से बाहर होता ही नहीं, जब यह पक्का यकीन हो जाता है कि मैं ही करने वाला हूं, भोगने वाला हूं, हर चीज़ से अलग हूं, और बाल की नोक के हज़ारवें हिस्से जितना बारीक हूं, या जब यह पक्का यकीन हो जाता है कि यह जो कुछ भी है, सब मैं ही हूं, जब यह पक्का यकीन हो जाता है कि मैं ही हर जगह मौजूद हूं, हर जीव को रोशन करता हूं, और मुझे सुख-दुख कभी छूते ही नहीं, तब उसकी सारी बेचैनी मिट जाती है, और उसके मन की हलचल रोज़मर्रा के व्यवहार में बस खेल की तरह ही चलती रहती है।

4.38.15

तज्ज्ञस्य संकटे च मुदितैव केवलं ज्योत्स्नेव भुवनभावमलंकरोति येन चित्तादृते तु ज्ञः कुर्वन्न प्यकर्ता संपन्नो मनसोऽलेपकत्वान्नासौ पादपा ण्यादिविक्षेपस्य यत्नकृतस्यापि कर्मणः फलमनुभवति ॥ १५ ॥

tajjñasya saṃkaṭe ca muditaiva kevalaṃ jyotsneva bhuvanabhāvamalaṃkaroti yena cittādṛte tu jñaḥ kurvanna pyakartā saṃpanno manaso'lepakatvānnāsau pādapā ṇyādivikṣepasya yatnakṛtasyāpi karmaṇaḥ phalamanubhavati || 15 ||

Even in danger, only joy remains for the one who knows this, like moonlight, it lights up his whole way of being in the world. Apart from the mind there is nothing else, and so this knower, even while acting, has become a non-doer, because the mind does not stain him. He does not feel the result of action, not even of the deliberate movement of his hands and feet.

मुश्किल में भी, जो यह जानता है, उसमें सिर्फ खुशी बनी रहती है, चांदनी की तरह, जो उसके पूरे संसार में रहने के ढंग को सजा देती है। मन के अलावा कुछ और नहीं है, इसलिए यह जानने वाला काम करते हुए भी न करने वाला बन गया है, क्योंकि मन उसे छूता नहीं, दाग नहीं लगाता। वह अपने हाथ-पैर की जान-बूझकर की गई हरकत का भी फल नहीं भोगता।

4.38.16

एवं मनः सर्वकर्मणां सर्वेहितानां सर्वभावानां सर्वलोकानां सर्वगतीनां बीजं तस्मिन्परिहृते सर्वकर्माणि परिहृतानि भवन्ति सर्वदुःखानि क्षीयन्ते सर्वकर्माणि लयमुपयान्ति । मानसेनापि कर्मणायत्कृतेनापि ज्ञो नाक्रम्यते न विवशीक्रियते न रञ्जनामुपैत्यव्यतिरिक्तात् ॥ १६ ॥

evaṃ manaḥ sarvakarmaṇāṃ sarvehitānāṃ sarvabhāvānāṃ sarvalokānāṃ sarvagatīnāṃ bījaṃ tasminparihṛte sarvakarmāṇi parihṛtāni bhavanti sarvaduḥkhāni kṣīyante sarvakarmāṇi layamupayānti | mānasenāpi karmaṇāyatkṛtenāpi jño nākramyate na vivaśīkriyate na rañjanāmupaityavyatiriktāt || 16 ||

So the mind is the seed of all actions, all wishes, all states of being, all worlds, and all paths of life. When the mind is given up, all actions are given up with it. All suffering is destroyed. All actions dissolve away. Even by an action done with the mind, the one who knows the truth is never overpowered, never made helpless, and never stained, because he is never separate from his true self.

इसलिए मन ही सारे कामों का, सारी चाहतों का, सारी अवस्थाओं का, सारे लोकों का, और सारी गतियों का बीज है। जब मन को छोड़ दिया जाता है, तो सारे काम अपने आप छूट जाते हैं। सारा दुख मिट जाता है। सारे काम पिघलकर खत्म हो जाते हैं। मन से किए गए काम से भी सच जानने वाले पर कोई असर नहीं होता, वह बेबस नहीं होता, उस पर कोई दाग नहीं लगता, क्योंकि वह अपने असली स्वरूप से कभी अलग होता ही नहीं।

4.38.17

यथा बालो मनसा नगरस्य निर्माणं निर्मृष्टं च कुर्वन्नगरनिर्माणं मनःकृतमकृतमिव लीलयानुभवति नोपादेयतयासुखदुःखमकृत्रिममिति पश्यति नगरनिर्मथनं च मनःकृतं कृतमिति पश्यतीति दुःखमपि लीलयानुभवन्नपि न दुःखमिति पश्यतिएवमसौपरमार्थतःकुर्वन्नपि न लिप्यत एवेति ॥ १७ ॥

yathā bālo manasā nagarasya nirmāṇaṃ nirmṛṣṭaṃ ca kurvaṃnnagaranirmāṇaṃ manaḥkṛtamakṛtamiva līlayānubhavati nopādeyatayāsukhaduḥkhamakṛtrimamiti paśyati nagaranirmathanaṃ ca manaḥkṛtaṃ kṛtamiti paśyatīti duḥkhamapi līlayānubhavannapi na duḥkhamiti paśyatievamasauparamārthataḥkurvannapi na lipyata eveti || 17 ||

Take a child who builds a city with his mind and then wipes it out again. He experiences the building of that city, though his own mind made it, as if it had never been made, only as play. He does not see its pleasure or pain as something worth holding on to, or as real. He also sees the destroying of the city, though his mind made it, as merely done, nothing more. So even while feeling something like suffering in the game, he sees that it is not really suffering. In the same way, this person, even while truly acting, is never stained by it.

मान लो एक बच्चा अपने मन से एक शहर बनाता है और फिर उसे मिटा भी देता है। उस शहर का बनना, हालांकि उसके अपने मन ने ही उसे बनाया, वह ऐसे महसूस करता है जैसे वह बना ही न हो, बस एक खेल भर है। उसे उसमें जो सुख या दुख मिलता है, उसे वह न पकड़ने लायक मानता है, न सच मानता है। शहर का मिटना भी, हालांकि उसके मन ने ही किया, वह बस इतना मानता है कि हो गया, बस। इसलिए खेल में दुख जैसा कुछ महसूस होने पर भी, वह देखता है कि यह सच में दुख नहीं है। इसी तरह यह इंसान भी, सचमुच काम करते हुए भी, उससे कभी दागदार नहीं होता।

4.38.18

सर्वभावेषु हेयोपादेयताभ्यां जगति किं कारणं दुःखस्य न चोपादेये किंचिदपि संभवति यदविनाशं व्यतिरिक्तं चात्मनस्तस्मादयमात्माऽकर्ताऽभोक्ताऽतत्त्वतो यदेतत्कर्तृत्वं च स्वध्यारोप्यते ॥ १८ ॥

sarvabhāveṣu heyopādeyatābhyāṃ jagati kiṃ kāraṇaṃ duḥkhasya na copādeye kiṃcidapi saṃbhavati yadavināśaṃ vyatiriktaṃ cātmanastasmādayamātmā'kartā'bhoktā'tattvato yadetatkartṛtvaṃ ca svadhyāropyate || 18 ||

In this world, the very cause of suffering is this, dividing all things into what is to be rejected and what is to be accepted. And among the things called acceptable, nothing at all can be found that is imperishable and separate from the self. So this self does not act and does not enjoy. This thing called doership is only something wrongly placed on oneself, it has no reality.

इस संसार में दुख की असली वजह यही है कि सब चीज़ों को ठुकराने लायक और अपनाने लायक में बांट दिया जाता है। और जिन्हें अपनाने लायक कहा जाता है, उनमें ऐसा कुछ भी नहीं मिलता जो अमर हो और आत्मा से अलग हो। इसलिए यह आत्मा न कुछ करती है, न कुछ भोगती है। यह जो कर्तापन कहलाता है, वह बस अपने ऊपर गलती से थोप दिया गया है, इसकी कोई सच्चाई नहीं है।

4.38.19

आवश्यकं तत्सम्यग्दर्शनमोहान्न वस्तुत इति यथाभूतवस्तुविचारणात्कर्तृत्वभोक्तृत्वे न स्तःइन्द्रियेन्द्रियार्थद्वेषाभिलाषादिका दृष्टयस्तदृष्टीनां दृश्यन्ते नातदृष्टीनाम् ॥ १९ ॥

āvaśyakaṃ tatsamyagdarśanamohānna vastuta iti yathābhūtavastuvicāraṇātkartṛtvabhoktṛtve na staḥindriyendriyārthadveṣābhilāṣādikā dṛṣṭayastaddṛṣṭīnāṃ dṛśyante nātaddṛṣṭīnām || 19 ||

This sense of doership seems necessary only because of the delusion of not seeing rightly, not because it is real. When one looks at things exactly as they are, being a doer and being an enjoyer do not exist at all. Feelings such as hatred and craving for the senses and their objects are seen only by those who see things that way. They are not seen by those who do not see things that way.

यह कर्तापन ठीक से न देख पाने की भूल की वजह से ज़रूरी लगता है, असल में यह सच नहीं है। जब चीज़ों को जैसा वे वाकई हैं वैसा देखा जाए, तो करने वाला होना और भोगने वाला होना, दोनों बिलकुल नहीं हैं। इंद्रियों और उनके विषयों से नफरत और चाहत जैसी नज़रें उन्हीं को दिखती हैं जो चीज़ों को उस तरह देखते हैं। जो उस तरह नहीं देखते, उन्हें ये नज़रें दिखती ही नहीं।

4.38.20

मोक्षोऽस्ति न संसारे स्वसंसक्तमनसामिहासंसक्तमनसां त्वेतत्सर्वमेवास्ति ॥ २० ॥

mokṣo'sti na saṃsāre svasaṃsaktamanasāmihāsaṃsaktamanasāṃ tvetatsarvamevāsti || 20 ||

Those whose minds cling to themselves find no freedom in this world. But for those whose minds do not cling, everything we have spoken of truly exists, right here.

जिनका मन खुद से चिपका रहता है, उन्हें इस संसार में कोई मुक्ति नहीं मिलती। पर जिनका मन नहीं चिपकता, उनके लिए यह सब कुछ जो हमने बताया, यहीं सच में मौजूद है।

4.38.21

यथास्थितं ज्ञस्य केवलमात्मतत्वमेवोल्लसति तद्वित्वैकत्ववादिसिद्धे द्वित्वैकत्वे करोति सत्त्वासत्त्वे करोति शक्तिजालादभिन्नां सर्वशक्तितां च दर्शयति तस्य ॥ २१ ॥

yathāsthitaṃ jñasya kevalamātmatatvamevollasati tadvitvaikatvavādisiddhe dvitvaikatve karoti sattvāsattve karoti śaktijālādabhinnāṃ sarvaśaktitāṃ ca darśayati tasya || 21 ||

As things truly stand, for the one who has understood, only the single reality of the self shines out. Out of it comes both the two and the one that different thinkers argue about. Out of it comes both being and not being. And it shows itself as holding every power there is, no different from that whole web of powers.

जैसा असल में है, समझने वाले के लिए बस आत्मा की एक ही सच्चाई चमकती है। उसी से वह दो और वह एक, दोनों निकलते हैं, जिनके बारे में अलग-अलग विचारक बहस करते हैं। उसी से होना और न होना, दोनों निकलते हैं। और वह अपने आप को हर तरह की शक्ति रखने वाला दिखाती है, जो उस पूरे शक्तियों के जाल से अलग नहीं है।

4.38.22

न बन्धोऽस्ति न मोक्षोऽस्ति नाबन्धोस्ति न बन्धनम् । अप्रबोधादिदं दुःखं प्रबोधात्प्रविलीयते ॥ २२ ॥

na bandho'sti na mokṣo'sti nābandho'sti na bandhanam | aprabodhādiduḥkhaṃ prabodhātpravilīyate || 22 ||

There is no bondage, and there is no freedom from it. There is no absence of bondage, and there is no binding either. This suffering exists because of not waking up to the truth. Once one wakes up to it, the suffering melts away completely.

न कोई बंधन है, न उससे कोई छुटकारा है। न बंधन का न होना है, न कोई बांधने वाली चीज़ है। यह दुख सच को न समझ पाने की वजह से है। जैसे ही सच समझ आता है, यह दुख पूरी तरह मिट जाता है।

4.38.23

संकल्पिता जगति मोक्षमतिर्मुधैव संकल्पिता जगति बन्धमतिर्मुधैव । संत्यज्य सर्वमनहंकृतिरात्मनिष्ठो धीरो धिया व्यवहरन्भुवि राम तिष्ठ ॥ २३ ॥

saṃkalpitā jagati mokṣamatirmudhaiva saṃkalpitā jagati bandhamatirmudhaiva | saṃtyajya sarvamanahaṃkṛtirātmaniṣṭho dhīro dhiyā vyavaharanbhuvirāma tiṣṭha || 23 ||

The idea of freedom in this world is only imagined, and useless. The idea of bondage in this world is only imagined, and useless too. So give up everything, let go of any sense of I, stand firm in the self, stay steady, and act with wisdom. Rama, live on this way, here on this earth.

इस संसार में मुक्ति का खयाल बस कल्पना भर है, और बेकार है। इस संसार में बंधन का खयाल भी बस कल्पना भर है, और वह भी बेकार है। इसलिए सब कुछ छोड़ दो, अपने अहंकार को छोड़ दो, आत्मा में टिके रहो, धीर बने रहो, और समझदारी से काम करो। राम, इसी तरह इस धरती पर जीते रहो।

Chapter 39

4.39.1

श्रीराम उवाच । भगवन्नेवं स्थिते परे ब्रह्मण्येव विद्यमाने कुत एवाभित्तिचित्ररूपायाः सृष्टेरागम इति कथय महात्मन् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavannēvaṃ sthitē parē brahmaṇyēva vidyamānē kuta ēvābhitticitrarūpāyāḥ sṛṣṭērāgama iti kathaya mahātman || 1 ||

Sri Rama said: Lord, if only the supreme Brahman truly exists, as you say, then where does creation come from, a painting with no wall to hold it? Tell me this, great one.

श्रीराम ने कहा: भगवन, अगर आपके कहने के मुताबिक सिर्फ परम ब्रह्म ही है, तो फिर यह सृष्टि कहाँ से आई, जो बिना दीवार की तस्वीर जैसी है? हे महात्मा, यह मुझे बताइए।

4.39.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । राजपुत्र ब्रह्मतत्त्वमेवेदमावर्तते यस्मात्सर्वशक्ति तत्तस्मात्सर्वाः शक्तयो ब्रह्मणि दृश्यन्ते ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | rājaputra brahmatattvamēvēdamāvartatē yasmātsarvaśakti tattasmātsarvāḥ śaktayo brahmaṇi dṛśyantē || 2 ||

Sri Vasishtha said: Prince, it is this same reality of Brahman that turns into everything, because it holds all powers. That is why all powers are seen in Brahman.

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राजकुमार, यह ब्रह्म का तत्व ही घूम-घूम कर सब कुछ बन जाता है, क्योंकि इसमें सारी शक्तियाँ हैं। इसीलिए ब्रह्म में सारी शक्तियाँ दिखाई देती हैं।

4.39.3

सत्त्वमसत्त्वं द्वित्वमेकत्वमनेकत्वमाद्यत्वमन्तत्वमिति ॥ ३ ॥

sattvam asattvaṃ dvitvam ekatvam anekatvam ādyatvam antatvam iti || 3 ||

Being and not being, being two, being one, being many, being the beginning, being the end.

होना और न होना, दो होना और एक होना, अनेक होना, शुरुआत होना और अंत होना।

4.39.4

तच्च नान्यत् । यथा जलराशेर्जलाशय उल्लासप्रफुल्लासेन नानाकारतां दर्शयन्प्रकटतांगच्छति ॥ ४ ॥

tacca nānyat | yathā jalarāśerjalāśaya ullāsapraphullāsena nānākāratāṃ darśayanprakaṭatāṃgacchati || 4 ||

And that too is nothing other than Brahman. It is like water. A pool of water rises up with joy, takes many shapes, and shows itself in them.

और वह भी ब्रह्म से अलग नहीं है। यह पानी जैसा है। पानी का एक जलाशय खुशी से उमड़ता है, कई रूप ले लेता है, और उन्हीं में दिखाई देने लगता है।

4.39.5

तथा चिद्घनश्चित्तं चित्त्वाच्च सर्वाः शक्तीः कर्ममयीर्वासनामयीर्मनोमयीश्चिनोति दर्शयति विभर्ति जनयति क्षिपयति चेति ॥ ५ ॥

tathā ciddhanaścittaṃ cittvācca sarvāḥ śaktīḥ karmamayīrvāsanāmayīrmanomayīścinoti darśayati vibharti janayati kṣipayati ceti || 5 ||

In the same way, the mass of pure consciousness becomes the mind, and because it is conscious, it gathers all its powers, the ones made of action, the ones made of past habits, the ones made of thought. It shows them, carries them, creates them, and throws them out again.

उसी तरह, शुद्ध चेतना की राशि मन बन जाती है, और चेतन होने के कारण वह अपनी सारी शक्तियों को इकट्ठा करती है, कर्म से बनी शक्तियाँ, पुरानी आदतों से बनी शक्तियाँ, मन से बनी शक्तियाँ। वह उन्हें दिखाती है, धारण करती है, पैदा करती है, और फिर बाहर फेंक देती है।

4.39.6

सर्वेषामेव जीवानां सर्वासामभितो दृशाम् । समग्राणां पदार्थानामुत्पत्तिर्ब्रह्मणोऽनिशम् ॥ ६ ॥

sarveṣāmeva jīvānāṃ sarvāsāmabhito dṛśām | samagrāṇāṃ padārthānāmutpattirbrahmaṇo'niśam || 6 ||

Every living being, everything seen all around, and every single thing there is, all of it constantly arises from Brahman.

हर जीव, चारों तरफ़ जो कुछ भी दिखता है, और हर एक चीज़, यह सब हमेशा ब्रह्म से ही पैदा होता है।

4.39.7

लोकात्परादुपायान्ति तस्मिञ्चित्त्वाद्विशन्त्यलम् । तन्मया एव सततं तरङ्गा इव सागरे ॥ ७ ॥

lokātparādupāyānti tasmiccittvādvishantyalam | tanmayā eva satataṃ taraṅgā iva sāgare || 7 ||

They rise up from that supreme reality, and because it is conscious, they sink fully back into it. They are always made of nothing but it, just as waves are made of nothing but the ocean.

वे उस परम सत्ता से उठते हैं, और चूँकि वह चेतन है, वे पूरी तरह उसी में समा जाते हैं। वे हमेशा उसी के बने होते हैं, जैसे लहरें समुद्र की ही बनी होती हैं।

4.39.8

श्रीराम उवाच । भगवंस्तवातिगहनेयं वचनव्यक्तिर्न खल्वद्य वाक्यार्थमवगच्छामि ॥ ८ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavaṃstavātigahane yaṃ vacanavyaktirna khalvadya vākyārthamavagacchāmi || 8 ||

Lord, what you have just said is very deep. I truly do not understand the meaning of your words today.

भगवन, आपकी यह बात बहुत गहरी है। सच में आज मुझे आपकी बातों का मतलब समझ नहीं आ रहा।

4.39.9

क्व किलातीतमनःषष्ठेन्द्रियवृत्ति ब्रह्मतत्त्वं क्व भङ्गुरेयं तज्जा पदार्थश्रीरिति वचनरचना । यदि चायमारम्भो ब्रह्मण आपतितस्तदनेन तत्सदृशेनैव भवितव्यम् ॥ ९ ॥

kva kilātītamanaḥṣaṣṭhendriyavṛtti brahmatattvaṃ kva bhaṅgureyaṃ tajjā padārthaśrīriti vacanaracanā | yadi cāyamārambho brahmaṇa āpatitastadanena tatsadṛśenaiva bhavitavyam || 9 ||

Where is the reality of Brahman, which lies beyond the mind and the five senses? And where is this fragile beauty of the world of things, said to be born from it? That is how your words sound to me. And if this world truly arose from Brahman, then it should be just like Brahman.

जहाँ ब्रह्म का वह तत्व है, जो मन और पाँचों इंद्रियों से भी परे है, और जहाँ यह नाशवान संसार है जो उससे पैदा हुआ बताया जाता है, आपकी बातें मुझे ऐसी ही लग रही हैं, दोनों में बहुत फ़र्क़ है। और अगर यह संसार सच में ब्रह्म से ही पैदा हुआ है, तो इसे ब्रह्म जैसा ही होना चाहिए।

4.39.10

यो यस्माज्जायते स तत्सदृश एव भवति ॥ १० ॥

yo yasmājjāyate sa tatsadṛśa eva bhavati || 10 ||

Whatever is born from a thing becomes just like that thing.

जो जिससे पैदा होता है, वह बिलकुल उसी जैसा होता है।

4.39.11

यथादीपाद्दीपःपुरुषात्पुरुषः सस्यात्सस्यम् ॥ ११ ॥

yathādīpāddīpaḥpuruṣātpuruṣaḥ sasyātsasyam || 11 ||

As a flame is lit from a flame, a person is born from a person, a crop grows from a crop.

जैसे एक दीये से दूसरा दीया जलता है, एक इंसान से दूसरा इंसान पैदा होता है, और बीज से फ़सल उगती है।

4.39.12

यतो निर्विकाराद्यदागतं निर्विकारेणैवानेन भवितव्यम् ॥ १२ ॥

yato nirvikārādyadāgataṃ nirvikāreṇaivānena bhavitavyam || 12 ||

So whatever has come from the changeless must itself be changeless.

तो जो कुछ भी उस न बदलने वाले से आया है, वह भी न बदलने वाला ही होना चाहिए।

4.39.13

अथैतद्व्यतिरिक्तं चिदात्मनस्तन्निष्कलङ्कस्य परमेश्वरस्य येयं कलङ्कापत्तिरित्याकर्ण्य भगवान् ब्रह्मर्षिरुवाच ॥ १३ ॥

athaitadvyatiriktaṃ cidātmanastannniṣkalaṅkasyaparameśvarasya yeyaṃ kalaṅkāpattiritiākarṇya bhagavān brahmarṣiruvāca || 13 ||

Having heard this, that a stain seems to appear in the supreme Lord, the spotless self of pure consciousness who is beyond this world, the blessed sage spoke.

यह सुनकर, कि उस परम ईश्वर में, जो शुद्ध चेतना है, निर्मल है और इस संसार से परे है, कोई दाग़ लगता दिख रहा है, वह महान मुनि बोले।

4.39.14

ब्रह्मैवेदं स्थितं नाम मलमस्तीह नानघ तरङ्गौघगणैरम्भः सिन्धौ स्फुरति नो रजः ॥ १४ ॥

brahmaivedaṃ sthitaṃ nāma malamastīha nānagha tarangaughaghanairambhaḥ sindhau sphurati no rajaḥ || 14 ||

This world, just as it stands, is nothing but Brahman. There is truly no stain in it at all, sinless one. In the ocean, the water shows itself as wave after wave, but no dirt appears in it.

यह संसार जैसा भी है, ब्रह्म ही है। हे निष्पाप, इसमें सच में कोई दाग़ नहीं है। समुद्र में पानी लहर-दर-लहर दिखता है, पर उसमें कोई मैल नहीं होता।

4.39.15

द्वितीया कल्पनैवेह न रघूद्वह विद्यते । ब्रह्ममात्रादृते वह्नावौष्ण्यमात्रादृते यथा ॥ १५ ॥

dvitīyā kalpanaiveha na raghūdvaha vidyate | brahmamātrādṛte vahnāvauṣṇyamātrādṛte yathā || 15 ||

Here there is nothing else at all, best of the Raghus, apart from Brahman itself, just as fire has nothing in it apart from heat.

हे रघुकुल के श्रेष्ठ, यहाँ ब्रह्म के अलावा कुछ और है ही नहीं, जैसे आग में गर्मी के अलावा कुछ और नहीं होता।

4.39.16

श्रीराम उवाच । निर्दुःखं ब्रह्म निर्द्वन्द्वं तज्जं दुःखमयं जगत् । अस्पष्टार्थमिदं ब्रह्मन्न वेद्मि वचनं तव ॥ १६ ॥

śrīrāma uvāca | nirdhuḥkhaṃ brahma nirdvandvaṃ tajjaṃ duḥkhmayam jagat | aspṣṭārthamidaṃ brahmanna vedmi vacanaṃ tava || 16 ||

Sri Rama said: Brahman has no suffering and no opposites, yet the world born from it is full of suffering. This is not clear to me, master. I do not understand what you are saying.

श्रीराम ने कहा: ब्रह्म में न दुख है, न कोई विरोधी जोड़ा है, फिर भी उससे पैदा हुआ यह संसार दुखों से भरा है। हे स्वामी, यह बात मुझे साफ़ समझ नहीं आई। मुझे आपकी बात समझ नहीं आई।

4.39.17

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्ते तत्र रामेण चिन्तयामास चेतसा । वसिष्ठो मुनिशार्दूलो राघवस्योपदेशने ॥ १७ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityukte tatra rāmeṇa cintayāmāsa cetasā | vasiṣṭho muniśārdūlo rāghavasyopadeśane || 17 ||

When Rama had said this, Vasishtha, that tiger among sages, thought carefully in his mind about how to teach Raghava.

राम के ऐसा कहने पर, मुनियों में श्रेष्ठ वसिष्ठ मन ही मन सोचने लगे कि राघव को कैसे समझाया जाए।

4.39.18

परं विकासमायाता नास्य तावदियं मतिः । किंचिन्निर्मलतां प्राप्ता प्रोह्यते चेह वस्तुनि ॥ १८ ॥

paraṃ vikāsamāyātā nāsya tāvadiyam matiḥ | kiṃcinnirmalatāṃ prāptā prohyate ceha vastuni || 18 ||

His understanding has not yet fully blossomed. It has gained some clearness, and it is being carried along toward this truth.

इनकी समझ अभी पूरी तरह से नहीं खिली है। इसमें थोड़ी साफ़-सफ़ाई ज़रूर आई है, और यह इस सच्चाई की तरफ़ बढ़ रही है।

4.39.19

यो व्युत्पन्नमनास्तस्य ज्ञातज्ञेयस्य धीमतः । मोक्षोपायगिरां पारं प्रयातस्य विवेकतः ॥ १९ ॥

yo vyutpannamanāstasya jñātajñeyasya dhīmataḥ | mokṣopāyagirāṃ pāraṃ prayātasya vivekataḥ || 19 ||

For someone whose mind is fully trained, who has known all that is to be known, who is wise, and who through his own good judgment has gone all the way to the end of the teachings on the path to freedom.

जिसका मन पूरी तरह से पका हुआ है, जिसने जानने लायक सब कुछ जान लिया है, जो बुद्धिमान है, और जो अपनी समझ से मोक्ष के उपायों की बातों के आख़िरी छोर तक पहुँच चुका है।

4.39.20

न कश्चित्कस्यचिद्दोषो नास्ति विद्यात्मनि ह्यलम् । यावन्नोक्तं न विश्रान्तिं तावदेत्येष राघवः ॥ २० ॥

na kaścitkasyaciddōṣō nāsti vidyātmani hyalam | yāvannoktaṃ na viśrāntiṃ tāvadetyeṣa rāghavaḥ || 20 ||

For such a person, no one is ever at fault for anything. There is truly no fault at all in the self that is pure knowledge. But until this is told to him in words, he finds no rest. This is exactly how far Raghava has come.

ऐसे इंसान के लिए किसी की कोई ग़लती नहीं होती। जो आत्मा शुद्ध ज्ञान है, उसमें सचमुच कोई दोष नहीं होता। पर जब तक यह बात शब्दों में न कही जाए, उसे चैन नहीं मिलता। राघव अभी बस यहीं तक पहुँचे हैं।

4.39.21

अर्धव्युत्पन्नबुद्धेस्तु नैतद्व्यक्तं हि शोभते। दृश्यानया भोगदृशा भावयन्नेव नश्यति ॥ २१ ॥

ardhavyutpannabuddhestu naitadvyaktaṃ hi śobhate | dṛśyānayā bhogadṛśā bhāvayanneva naśyati || 21 ||

But for someone whose understanding is only half grown, it is not right to say this plainly. Such a person still looks at the visible world with an eye bent on pleasure, and if told this, he simply destroys himself.

पर जिसकी समझ अभी आधी ही बनी है, उसे यह बात खुलकर बताना ठीक नहीं है। ऐसा इंसान अभी भी संसार को भोग की नज़र से देखता है, और अगर उसे यह बता दिया जाए तो वह ख़ुद को बर्बाद कर लेता है।

4.39.22

परां दृष्टिं प्रयातस्य भोगेच्छा नाभिजायते। सर्वं ब्रह्मेति सिद्धान्तः काले नामास्य युज्यते ॥ २२ ॥

parāṃ dṛṣṭiṃ prayātasya bhogecchā nābhijāyate | sarvaṃ brahmeti siddhāntaḥ kāle nāmāsya yujyate || 22 ||

For someone who has reached the highest vision, no desire for pleasure arises anymore. Only then, in time, does the teaching that everything is Brahman truly fit him.

जिसने सबसे ऊँची दृष्टि पा ली है, उसमें भोग की इच्छा नहीं उठती। तभी, समय आने पर, यह बात कि सब कुछ ब्रह्म है, उस पर सही बैठती है।

4.39.23

आदौ शमदमप्रायैर्गुणैः शिष्यं विशोधयेत्। पश्चात्सर्वमिदं ब्रह्म शुद्धस्त्वमिति बोधयेत् ॥ २३ ॥

ādau śamadamaprāyairguṇaiḥ śiṣyaṃ viśodhayet | paścātsarvamidaṃ brahma śuddhastvamiti bodhayet || 23 ||

First the student should be made pure through qualities like calmness and self-control. Only afterward should he be taught that all this is Brahman, and that he himself is pure.

पहले शिष्य को शांति और आत्म-संयम जैसे गुणों से शुद्ध करना चाहिए। उसके बाद ही उसे यह सिखाना चाहिए कि यह सब ब्रह्म है, और तुम ख़ुद शुद्ध हो।

4.39.24

अज्ञस्यार्धप्रबुद्धस्य सर्वं ब्रह्मेति यो वदेत्। महानरकजालेषु स तेन विनियोजितः ॥ २४ ॥

ajñasyārdhaprabuddhasya sarvaṃ brahmeti yo vadet | mahānarakajāleṣu sa tena vinayojitaḥ || 24 ||

Whoever tells an ignorant, half-awake person that everything is Brahman throws himself, by that very act, into the great webs of hell.

जो कोई किसी अनजान, आधे-जगे हुए इंसान से कह देता है कि सब कुछ ब्रह्म है, वह इसी बात से ख़ुद नरक के बड़े जाल में जा फँसता है।

4.39.25

प्रबुद्धबुद्धेः प्रक्षीणभोगेच्छस्य निराशिषः। नास्त्यविद्यामलमिति युक्तं वक्तुं महात्मनः ॥ २५ ॥

prabuddhabuddheḥ prakṣīṇabhogecchasya nirāśiṣaḥ| nāstyavidyāmalamiti yuktaṃ vaktuṃ mahātmanaḥ || 25 ||

But for someone whose understanding has fully woken up, whose craving for pleasure has faded away, and who wants nothing more, for such a great soul it is right to say that there is no stain of ignorance at all.

पर जिसकी समझ पूरी तरह जाग चुकी है, जिसकी भोग की इच्छा ख़त्म हो चुकी है, और जिसे किसी चीज़ की चाह नहीं बची, ऐसे महान इंसान से यह कहना ठीक है कि अज्ञान का कोई दाग़ है ही नहीं।

4.39.26

अपरीक्ष्य च यः शिष्यं प्रशास्त्यतिविमूढधीः। स एव नरकं याति यावदाभूतसंप्लवम् ॥ २६ ॥

aparīkṣya ca yaḥ śiṣyaṃ praśāstyatimūḍhadhīḥ| sa eva narakaṃ yāti yāvadābhūtasaṃplavam || 26 ||

And whoever teaches a student without first testing him is himself utterly foolish. He goes to hell, and stays there until the dissolution of the whole universe.

और जो कोई शिष्य को बिना परखे सिखा देता है, वह ख़ुद बहुत मूर्ख है। वह ख़ुद नरक में जाता है, और तब तक वहीं रहता है जब तक पूरी सृष्टि का प्रलय नहीं हो जाता।

4.39.27

इति संचिन्त्य भगवानज्ञानतिमिरापहः। तमुवाच मुनिश्रेष्ठो वसिष्ठो भूमिभास्करः ॥ २७ ॥

iti saṃcintya bhagavānajñānatimirāpahaḥ| tamuvāca muniśreṣṭho vasiṣṭho bhūmibhāskaraḥ || 27 ||

Thinking this, the lord Vasishtha, who clears away the darkness of ignorance, the best of sages, the sun of the earth, spoke to him.

ऐसा सोचकर, अज्ञान के अंधकार को दूर करने वाले भगवान वसिष्ठ, जो मुनियों में सबसे श्रेष्ठ और धरती के सूर्य हैं, उससे बोले।

4.39.28

श्रीवसिष्ठ उवाच। कलङ्ककलना ब्रह्मण्यस्ति नास्तीति वानघ। सिद्धान्तकाले वक्तव्यं स्वयं ज्ञास्यसि राघव ॥ २८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca| kalaṅkakalanā brahmaṇyasti nāstīti vānagha| siddhāntakāle vaktavyaṃ svayaṃ jñāsyasi rāghava || 28 ||

Vasishtha said, O sinless one, whether there is a flaw in Brahman or not is a thing to be spoken of at the time of the final teaching. You will know it yourself, Raghava.

वसिष्ठ ने कहा, हे निष्पाप, ब्रह्म में दोष है या नहीं, यह बात अंतिम सिद्धांत के समय पर बताई जाएगी। हे राघव, तुम खुद ही इसे जान जाओगे।

4.39.29

ब्रह्म सर्वशक्ति सर्वव्यापि सर्वगतं सर्वोहमेवेति ॥ २९ ॥

brahma sarvaśakti sarvavyāpi sarvagataṃ sarvohameveti || 29 ||

Brahman has all power. It is everywhere and present in everything. It alone is everything, and it alone says, I am all.

ब्रह्म में सारी शक्ति है। वह हर जगह है, हर चीज़ में मौजूद है। वही सब कुछ है, और वही कहता है, मैं ही सब कुछ हूँ।

4.39.30

यथेन्द्रजालिनः पश्यसि चित्रा मायया क्रिया जनयन्तः सदसत्तां नयन्त्यसच्च सत्तां नयन्ति तथैवात्मा अमायामयोऽपि मायामय इव परम ऐन्द्रजालिको घटं पटं करोति पटं च घटं करोति उपले लतां जनयति मेरौ कनकतटे नन्दनवनमिव लतायामुपलमुत्पादयति कल्पपादपेषु रत्नस्तबकमिव व्योम्नि काननमध्यारोपयति ॥ ३० ॥

yathendrajālinaḥ paśyasi citrā māyayā kriyā janayantaḥ sadasattāṃ nayantyasacca sattāṃ nayanti tathaivātmā amāyāmayo'pi māyāmaya iva parama aindrajāliko ghaṭaṃ paṭaṃ karoti paṭaṃ ca ghaṭaṃ karoti upale latāṃ janayati merau kanakataṭe nandanavanamiva latāyāmupalamutpādayati kalpapādapeṣu ratnastabakamiva vyomni kānanamadhyāropayati || 30 ||

Just as you see magicians do wonderful, illusory acts, making real things seem unreal and unreal things seem real, in the same way the Self, though it is not made of illusion, appears as if made of illusion, like the greatest of magicians. It turns a pot into cloth and cloth into a pot. It grows a vine on a bare rock, like the Nandana garden appearing on the golden slope of Mount Meru. It grows a rock on a vine, like a cluster of jewels appearing on wish-granting trees. It sets a forest in the empty sky.

जैसे तुम जादूगरों को माया से अनोखे कर्म करते देखते हो, वे सच्ची चीज़ को झूठी बना देते हैं और झूठी चीज़ को सच्ची बना देते हैं, वैसे ही आत्मा, माया से बनी न होते हुए भी, मानो माया से बनी हो, ऐसे सबसे बड़े जादूगर की तरह दिखाई देती है। वह घड़े को कपड़ा बना देती है और कपड़े को घड़ा बना देती है। वह पत्थर पर बेल उगा देती है, जैसे मेरु पर्वत की सोने की ढलान पर नंदन वन उग आया हो। वह बेल पर पत्थर उगा देती है, जैसे कल्पवृक्षों पर रत्नों का गुच्छा लगा हो। वह आकाश में जंगल बसा देती है।

4.39.31

गन्धर्वोद्यानमिव तस्मिन् जगति भविष्यति गगने कल्पनया नगरतां जनयति नष्टच्छायाञ्जनमिव व्योम धरातलं नयतीति ॥ ३१ ॥

gandharvodyānamiva tasmin jagati bhaviṣyati gagane kalpanayā nagaratāṃ janayati naṣṭacchāyāñjanamiva vyoma dharātalaṃ nayatīti || 31 ||

In that same world it will make something like a garden of the Gandharvas appear. Through mere imagination it makes a city appear in the empty sky. It turns the sky into solid ground, the way a magic ointment can make a person's own shadow disappear.

उसी जगत में वह गंधर्वों के बगीचे जैसा कुछ प्रकट कर देगी। केवल कल्पना से आकाश में नगर बना देती है। वह आकाश को ठोस धरती बना देती है, जैसे कोई जादुई अंजन किसी की अपनी परछाई को गायब कर देता है।

4.39.32

गन्धर्वनगरराजगृहे विपुलाङ्गनाजनमिव भूतले व्योम निवेशयति ॥ ३२ ॥

gandharvanagararājagṛhe vipulāṅganājanamiva bhūtale vyoma niveśayati || 32 ||

In the royal palace of that mirage-city of the Gandharvas, it places the sky on the ground, as if it were a huge crowd of women filling the halls.

गंधर्वनगर के उस राजमहल में वह आकाश को धरती पर इस तरह बसा देती है, मानो वह स्त्रियों की एक बड़ी भीड़ हो।

4.39.33

रक्तकुट्टिमेष्वाकाशप्रतिबिम्बमिव किंचिदस्ति जगति भविष्यति वा बभूव ॥ ३३ ॥

raktakuṭṭimeṣvākāśapratibimbamiva kiṃcidasti jagati bhaviṣyati vā babhūva || 33 ||

Whatever exists in the world, or will exist, or has existed, is like the sky's reflection on a red, polished floor.

जगत में जो कुछ भी है, जो होगा, या जो हो चुका है, वह वैसा ही है जैसे लाल चमकीले फर्श पर आकाश का प्रतिबिंब।

4.39.34

यदीश्वरो व्यक्तरूपो विचित्रतामुपेत्य निदर्शयति ॥ ३४ ॥

yadīśvaro vyaktarūpo vicitratāmupetya nidarśayati || 34 ||

This is so only because the Lord, taking on a visible form, having become countless different things, shows it this way.

ऐसा इसलिए है क्योंकि ईश्वर स्वयं दिखने वाला रूप लेकर, अनेक तरह-तरह के रूपों में बदलकर, इसे इस तरह दिखाता है।

4.39.35

सर्वमेव सर्वथा सर्वत्र यथा संभवत्येकमेवेह वस्तु विद्यत इति तस्माद्धर्षामर्षविस्मयानां क्व वाऽवसरो राम ॥ ३५ ॥

sarvameva sarvathā sarvatra yathā saṃbhavatyekameveha vastu vidyat iti tasmāddharṣāmarṣavismayānāṃ kvavāvasaro rāma || 35 ||

Since only one single thing exists here, appearing everywhere, in every way, as everything, where then, Rama, is there room for delight, resentment, or astonishment?

क्योंकि यहाँ केवल एक ही वस्तु है, जो हर जगह, हर तरह से, सब कुछ बनकर प्रकट होती है, तो फिर, हे राम, हर्ष, क्रोध या आश्चर्य के लिए कहाँ जगह बचती है?

4.39.36

समतयैव सततं धृतिमता स्थातव्यम् ॥ ३६ ॥

samatayāiva satataṃ dhṛtimatā sthātavyam || 36 ||

A person of firm patience should always stay steady and even-minded.

जिसके मन में दृढ़ धैर्य है, उसे हमेशा स्थिर और समान भाव से रहना चाहिए।

4.39.37

विस्मयस्मयसंमोहहर्षामर्षविकारिताम् । समतावलितस्तज्ज्ञो न कदाचन गच्छति ॥ ३७ ॥

vismayasmayasaṃmohaharṣāmarṣavikāritām | samatāvalitastajjño na kadācana gacchati || 37 ||

One who knows this truth and rests firmly in evenness of mind never falls into being shaken by astonishment, pride, confusion, delight, or resentment.

जो इस सत्य को जानता है और समान भाव में दृढ़ता से टिका रहता है, वह कभी भी आश्चर्य, अहंकार, मोह, हर्ष या क्रोध से विचलित नहीं होता।

4.39.38

अपर्यवसाने देशकालवति चित्रा हि जगति युक्तयो दृश्यन्ते ॥ ३८ ॥

aparyavasāne deśakālavati citrā hi jagati yuktayo dṛśyante || 38 ||

In this world, which never ends and is filled with space and time, all sorts of strange arguments can indeed be seen.

इस अंतहीन जगत में, जो देश और काल से भरा है, तरह-तरह के अजीब तर्क सचमुच दिखाई देते हैं।

4.39.39

एताश्च युक्तीर्नामासावात्मा यत्नेन रचनां करोति न चोत्पन्नां तिरस्करोति सागर इव वीचीः ॥ ३९ ॥

etāśca yuktīrnāmāsāvātmā yatnena racanāṃ karoti na cotpannāṃ tiraskaroti sāgara iva vīcīḥ || 39 ||

These are indeed just arguments. This Self makes them on purpose, and does not erase what has already come to be, just as the ocean does not hold back the waves it has raised.

ये सब असल में केवल तर्क हैं। यह आत्मा इन्हें जानबूझकर बनाती है, और जो एक बार बन गया उसे मिटाती नहीं, जैसे समुद्र अपनी उठी हुई लहरों को रोकता नहीं।

4.39.40

किं तर्हि क्षीर इव घृतं घट इव मृदि पट इव तन्तुषु वट इव धानायात्मन्येव स्थिताः शक्तयः प्रकटतामागता व्यवह्रियन्तेऽविरचितमेव तरङ्गवत्॥ ४० ॥

kiṃ tarhi kṣīra iva ghṛtaṃ ghaṭa iva mṛdi paṭa iva tantuṣu vaṭa iva dhānāyātmanyeva sthitāḥ śaktayaḥ prakaṭatāmāgatā vyavahriyante'viracitameva taraṅgavat || 40 ||

Then what is it? It is like ghee hidden in milk, a pot hidden in clay, cloth hidden in threads, a banyan tree hidden in a seed. These are powers that rest in the Self alone. When they become visible, we deal with them as if they were real things, even though nothing new has actually been made at all, just like waves.

तो फिर यह क्या है? जैसे दूध में घी छिपा होता है, मिट्टी में घड़ा छिपा होता है, धागों में कपड़ा छिपा होता है, बीज में बरगद का पेड़ छिपा होता है, वैसे ही ये शक्तियाँ केवल आत्मा में टिकी होती हैं। जब वे प्रकट होती हैं, तो हम उनसे असली चीज़ों जैसा व्यवहार करते हैं, हालांकि असल में कुछ भी नया बना ही नहीं है, ठीक लहरों की तरह।

4.39.41

नात्र कश्चित्कर्ता न भोक्ता न विनाशमेति॥ ४१ ॥

nātra kaścitkartā na bhoktā na vināśameti || 41 ||

Here, no one acts, no one enjoys the results, and no one is ever destroyed.

यहाँ न कोई कुछ करता है, न कोई फल भोगता है, और न किसी का नाश होता है।

4.39.42

केवलमात्मतत्त्वे साक्षिणि निरामये समतयात्मनि नित्यमसंक्षुब्धे तिष्ठति सत्येवं संपद्यते॥ ४२ ॥

kevalamātmatattve sākṣiṇi nirāmaye samatayātmani nityamasankṣubdhe tiṣṭhati satyevaṃ saṃpadyate || 42 ||

This only comes about when a person stays, with an even mind, in the true nature of the Self, the witness, free of all flaw, always calm and undisturbed.

यह तभी होता है जब मनुष्य समान भाव से आत्मा के असली स्वरूप में टिका रहता है, जो साक्षी है, हर दोष से मुक्त है, और हमेशा शांत और अविचलित है।

4.39.43

सति दीप इवालोकः सत्यर्क इव वासरः। सति पुष्प इवामोदः स्वतः संपद्यते जगत्॥ ४३ ॥

sati dīpa ivālokaḥ satyarka iva vāsaraḥ | sati puṣpa ivāmodaḥ svataḥ saṃpadyate jagat || 43 ||

As light appears when there is a lamp, as day comes when there is the sun, as fragrance comes when there is a flower, so the world comes into being on its own.

जैसे दीये के होने पर रोशनी होती है, जैसे सूर्य के होने पर दिन होता है, जैसे फूल के होने पर खुशबू होती है, वैसे ही यह जगत अपने आप बन जाता है।

4.39.44

आभासमात्रमेवेदं परिदृश्यत एव च। स्पन्दः समीरणस्येव न सन्नासदवस्थितम्॥ ४४ ॥

ābhāsamātramevedaṃ paridṛśyata eva ca | spandaḥ samīraṇasyeva na sannāsadavasthitam || 44 ||

This world is nothing but an appearance, and yet it is seen. Like the movement of the wind, it is neither fully real nor fully unreal.

यह जगत केवल एक आभास है, फिर भी यह दिखाई देता है। हवा की हलचल की तरह, यह न तो पूरी तरह सच है और न पूरी तरह झूठ।

4.39.45

निर्दोषवदेव जागतीनां दृष्टीनां परमार्थतो भगवान्स्थितो विनष्टानां पुनः कर्ता कृतानां वा नाशयिता स केवलं कदाचित्प्रकटाः कदाचिदल्पप्रकटाः कदाचिदप्रकटास्तारका इव कुसुमराशयः ॥ ४५ ॥

nirdoṣavadeva jāgatīnāṃ dṛṣṭīnāṃ paramārthatō bhagavānsthito vinaṣṭānāṃ punaḥ kartā kṛtānāṃ vā nāśayitā sa kevalaṃ kadācitprakaṭāḥ kadācidalpaprakaṭāḥ kadācidaprakaṭāstārakā iva kusumarāśayaḥ || 45 ||

In truth, the Lord stands completely untouched by flaw amid the sights of this world. He is not one who remakes what is destroyed, or destroys what is made. He alone appears, sometimes clearly, sometimes faintly, sometimes not at all, like stars, like clusters of flowers.

सच में, भगवान संसार के इन दृश्यों के बीच पूरी तरह निर्दोष बने रहते हैं। वे न तो नष्ट हुई चीज़ों को फिर से बनाते हैं, न बनी हुई चीज़ों को नष्ट करते हैं। वे अकेले ही कभी साफ दिखते हैं, कभी हल्का दिखते हैं, कभी बिल्कुल नहीं दिखते, जैसे तारे, जैसे फूलों के गुच्छे।

4.39.46

नश्यतीह हि तद्वस्तु नात्मभूतं यदात्मनः । कथं नश्यति तद्वस्तु स्वात्मभूतं यदात्मनः ॥ ४६ ॥

naśyatīha hi tadvastu nātmabhūtaṃ yadātmanaḥ | kathaṃ naśyati tadvastu svātmabhūtaṃ yadātmanaḥ || 46 ||

Here, only a thing that is not the Self's own nature can perish. How could a thing that is the Self's very own nature ever perish?

यहाँ केवल वही चीज़ नष्ट होती है जो आत्मा का अपना स्वरूप नहीं है। जो चीज़ आत्मा का अपना ही स्वरूप है, वह कैसे नष्ट हो सकती है?

4.39.47

जायते नैव तद्वस्तु नात्मभूतं यदात्मनः । जायते चैव तद्वस्तु स्वात्मभूतं यदात्मनः ॥ ४७ ॥

jāyate naiva tadvastu nātmabhūtaṃ yadātmanaḥ | jāyate caiva tadvastu svātmabhūtaṃ yadātmanaḥ || 47 ||

A thing that is not the Self's own nature is truly never born at all. A thing that is the Self's own very nature, that indeed is what is born.

जो चीज़ आत्मा का अपना स्वरूप नहीं है, वह सच में कभी जन्मती ही नहीं। जो चीज़ आत्मा का अपना ही स्वरूप है, वही सच में जन्मती है।

4.39.48

कथं तज्जायते तस्मात्स्वात्मभूतं यदात्मनः ॥ ४८ ॥

kathaṃ tajjāyate tasmātsvātmabhūtaṃ yadātmanaḥ || 48 ||

So then, how can a thing that is the Self's own very nature ever really be born?

तो फिर, जो चीज़ आत्मा का अपना ही स्वरूप है, वह सचमुच जन्म कैसे ले सकती है?

4.39.49

तस्मात्सम्यग्ज्ञानवशाद्ब्रह्मणः सर्वपदार्थानामागमः ॥ ४९ ॥

tasmātsamyaGjñānavashādbrahmaṇaḥ sarvapadārthānāmāgamaḥ || 49 ||

Therefore, through right knowledge, it is seen that all things come from Brahman alone.

इसलिए, सही ज्ञान के बल पर यह पता चलता है कि सभी वस्तुएं ब्रह्म से ही आती हैं।

4.39.50

अवतीर्णानां च तेषामवतरणसमकालमेवाविद्योदेति तत्त्वज्ञानं दृढतामेति तदनु शतसहस्रस्कन्धो विचित्रशुभाशुभफलभरफलितो भूरिशाखः स्फारतामेति संसारद्रुमः ॥ ५० ॥

avatīrṇānāṃ ca teṣāmavatarṇasamakālamevāvidyodeti tattvajñānaṃ dṛḍhatāmeti tadanu śatasahasraskandho vicitraśubhāśubhaphalabharaphalito bhūriśākhaḥ sphāratāmeti saṃsāradrumaḥ || 50 ||

For those who come down into birth, ignorance arises at the very moment of their coming down, or else true knowledge grows firm. After that, the tree of worldly life spreads out wide, with a hundred thousand branches, heavy with countless good and bad fruits, and covered with branches.

जो लोग जन्म लेकर संसार में उतरते हैं, उनके उतरने के उसी क्षण अज्ञान उठ खड़ा होता है, या फिर सच्चा ज्ञान दृढ़ हो जाता है। उसके बाद संसार का पेड़ फैलता जाता है, लाख शाखाओं वाला, तरह-तरह के अच्छे-बुरे फलों के बोझ से लदा, और असंख्य टहनियों वाला।

4.39.51

आशामञ्जरिताकृतिं विफलितं दुःखादिभिर्दारुणैर्भोगैः पल्लवितं जराकुसुमितं तृष्णालताभासुरम्। संसाराभिधवृक्षमात्मनिगडं छित्त्वा विवेकासिना मुक्तस्त्वं विहरेह वारणपतिः स्तम्भादिवोन्मोचितः ॥ ५१ ॥

āśāmañjaritākṛtiṃ viphalitaṃ duḥkhādibhirdāruṇairbhogaiḥ pallavitaṃ jarākusumitaṃ tṛṣṇālatābhāsuram | saṃsārābhidhavṛkṣamātmanigadaṃ chittvā vivekāsinā muktastvaṃ vihareha vāraṇapatiḥ stambhādivonmocitaḥ || 51 ||

Its shape has bloomed with hopes and desires. It bears the bitter fruit of suffering and other such harsh experiences. It puts out new leaves, and in old age it flowers, and it shines all over with the creeper of craving. Cut down this tree called worldly life, it is a chain around you, with the sword of clear understanding. Then, free, wander about here at ease, like a great elephant let loose from the post it was tied to.

इसका रूप आशाओं और इच्छाओं से खिला हुआ है। यह दुख जैसे कड़वे फलों से लदा है। यह नई पत्तियां निकालता है, और बुढ़ापे में फूलता है, और तृष्णा की बेल से चमकता है। इस संसार नाम के पेड़ को, जो तुम्हारे लिए एक जंजीर है, विवेक की तलवार से काट डालो। फिर, आज़ाद होकर, यहाँ आराम से घूमो, जैसे कोई बड़ा हाथी खंभे से खुलकर।

Chapter 40

4.40.1

श्रीराम उवाच । उत्पत्तिः कथमेतेषां जीवानां ब्रह्मणः पदात् । कियती कीदृशी चेति विस्तरेण वद प्रभो ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | utpattiḥ kathameteṣāṃ jīvānāṃ brahmaṇaḥ padāt | kiyatī kīdṛśī ceti vistareṇa vada prabho || 1 ||

Sri Rama said, lord, how do these living beings arise from the state of Brahman. How great is this arising, and what kind is it. Tell me in full.

श्री राम ने पूछा, हे प्रभु, ये जीव ब्रह्म की अवस्था से कैसे पैदा होते हैं। यह जन्म कितना बड़ा है और कैसा है, यह मुझे विस्तार से बताइए।

4.40.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । उत्पद्यन्ते यथा चित्रा ब्रह्मणो भूतजातयः । यथा नाशं प्रयान्त्येता यथा मुक्ता भवन्ति हि ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | utpadyante yathā citrā brahmaṇo bhūtajātayaḥ | yathā nāśaṃ prayāntyetā yathā mukta bhavanti hi || 2 ||

Sri Vasishtha said, however many kinds of beings arise from Brahman, how they arise, how they go to their end, and how they become free,

श्री वसिष्ठ ने कहा, ब्रह्म से जितने भी तरह के जीव पैदा होते हैं, वे कैसे पैदा होते हैं, कैसे नष्ट होते हैं, और कैसे मुक्त होते हैं,

4.40.3

यथा च परिवर्धन्ते तिष्ठन्त्यन्तर्हिता यथा । संक्षेपेण महाबाहो शृणु वक्ष्यामि तेऽनघ ॥ ३ ॥

yathā ca parivardhante tiṣṭhantyantarhitā yathā | saṃkṣepeṇa mahābāho śṛṇu vakṣyāmi te'nagha || 3 ||

and how they grow, and how they stay hidden, mighty armed one, listen, sinless one, I will tell you all this in brief.

और वे कैसे बढ़ते हैं, और कैसे छिपे हुए रहते हैं, हे महाबाहु, सुनो, हे निष्पाप, मैं तुम्हें यह सब संक्षेप में बताता हूँ।

4.40.4

ब्राह्मी चिच्छक्तिरमला कल्पयन्ती यदृच्छया । सर्वशक्तिः स्वयं चेत्यं भवत्याकलनात्मकम् ॥ ४ ॥

brāhmī cicchaktiramalā kalpayantī yadṛcchayā | sarvaśaktiḥ svayaṃ cetyaṃ bhavatyaākalanātmakam || 4 ||

Brahman's pure power of consciousness is all powerful by itself, and imagining freely of its own will, it turns into a seen thing made only of a thought.

ब्रह्म की शुद्ध चेतन शक्ति खुद ही सब कुछ कर सकती है, और अपनी मर्ज़ी से कल्पना करते हुए, वह एक दिखने वाली चीज़ बन जाती है जो सिर्फ एक विचार से बनी होती है।

4.40.5

कलनाद्धनतामेत्य यत्किंचिदपि सा स्वयम् । संकल्पयति पश्चात्तत्तत्तामेति मनःपदम् ॥ ५ ॥

kalanāddhanatāmetya yatkiṃcidapi sā svayam | saṃkalpayati paścāttattattāmeti manaḥpadam || 5 ||

By this thinking it grows dense, and whatever it then wills for itself later takes its own shape as a state of mind.

इस सोच से वह गाढ़ी हो जाती है, और जो कुछ भी वह खुद चाहती है, वह बाद में एक अलग रूप लेकर मन की एक अवस्था बन जाता है।

4.40.6

मनःसंकल्पमात्रेण गन्धर्वपुरवत्क्षणात्। तनोतीदमसद्दृश्यं ब्राह्मीं स्थितिमिव त्यजत्॥ ६॥

manaḥsaṃkalpamātreṇa gandharvapuravatkṣaṇāt | tanotīdamasaddṛśyaṃ brāhmīṃ sthitimiva tyajat || 6 ||

By mere thought in the mind, in an instant, like a city built in the sky, it spreads out this unreal visible world, as if giving up its own true state as Brahman.

मन के सिर्फ सोचने भर से, एक पल में, आकाश में बने शहर की तरह, वह यह झूठा दिखने वाला संसार फैला देती है, मानो अपने ब्रह्म रूप को छोड़ रही हो।

4.40.7

चित्स्वरूपं परिकचच्छून्यमेवावतिष्ठते। यत्तद्दृश्यं स्थितं तत्स्यादृश्यमाकाशमेव तत्॥ ७॥

citsvarūpaṃ parikacacchūnyamevāvatiṣṭhate | yattaddṛśyaṃ sthitaṃ tatsyāddṛśyamākāśameva tat || 7 ||

The true nature of consciousness, even while it seems to spread out on every side, stays only empty. Whatever visible thing stands there as something seen is nothing but that same empty space.

चेतना का असली रूप, हर तरफ फैला दिखते हुए भी, बस खाली ही रहता है। जो कुछ भी वहाँ दिखने वाली चीज़ के तौर पर टिका है, वह उसी खाली आकाश के सिवा और कुछ नहीं है।

4.40.8

कृत्वा पद्मजसंकल्पं रूपं पश्यति पद्मजम्। ततो जगत्कल्पयति सप्रजापतिपूर्वकम्॥ ८॥

kṛtvā padmajasamkalpaṃ rūpaṃ paśyati padmajam | tato jagatkalpayati saprajāpatipūrvakam || 8 ||

Having formed the thought of Brahma, the lotus born one, it sees the form of Brahma. Then it creates the whole world, together with the Prajapatis, the lords of creatures.

ब्रह्मा का विचार बनाकर, वह ब्रह्मा का रूप देखती है। फिर वह प्रजापतियों समेत पूरी दुनिया बना डालती है।

4.40.9

चतुर्दशविधानन्तभूतजातसघुंघुमा। सृष्टिरेवमियं राम चित्तनिर्मितिमागता॥ ९॥

caturdaśavidhānantabhūtajātasaghuṅghumā | sṛṣṭirevamiyaṃ rāma cittanirmitimāgatā || 9 ||

This creation, Rama, fourteen fold, endless, crowded with swarms of countless beings, is in this way nothing but something made by the mind.

हे राम, चौदह तरह की, अनगिनत, असंख्य जीवों के झुंड से भरी हुई यह सृष्टि, इस तरह बस मन की बनाई हुई चीज़ है।

4.40.10

चित्तमात्रमयी शून्या व्योममात्रशरीरिका। संकल्पमात्रनगरी भ्रान्तिमात्रात्मिका सती॥ १०॥

cittamātramayī śūnyā vyomamātraśarīrikā | saṃkalpamātranagarī bhrāntimātrātmikā satī || 10 ||

This creation is made only of mind. It is empty, its body nothing but sky, a city built only of imagination, and in its own nature nothing but illusion.

यह सृष्टि सिर्फ मन से बनी है। यह खाली है, इसका शरीर बस आकाश है, यह सिर्फ कल्पना से बना एक शहर है, और असल में सिर्फ भ्रम है।

4.40.11

इह काश्चिन्महामोहा भूतानां जातयः स्थिताः । काश्चिदभ्युदितज्ञानाःकाश्चिन्मध्ये स्खलन्ति हि ॥ ११ ॥

iha kāścinmahāmohā bhūtānāṃ jātayaḥ sthitāḥ | kāścidabhyuditajñānāḥkāścinmadhye skhalanti hi || 11 ||

Here some kinds of beings are caught in great delusion, some have knowledge that has risen in them, and some indeed stumble midway.

यहाँ कुछ तरह के जीव बहुत बड़े मोह में पड़े हैं, कुछ में ज्ञान जाग चुका है, और कुछ बीच में ही डगमगा जाते हैं।

4.40.12

भुवि संबध्यमानानां यान्त्येनामुपदेश्यताम् । सर्वासां भूतजातीनां या एता नरजातयः ॥ १२ ॥

bhuvī saṃbadhyamānānāṃ yāntyenāmupadeśyatām | sarvāsāṃ bhūtajātīnāṃ yā etā narajātayaḥ || 12 ||

Among all the kinds of beings, these are the human kind, who, becoming bound to life on earth, reach a state fit for being taught.

सब तरह के जीवों में, ये मनुष्य जाति है, जो धरती पर बंधते हुए, सिखाए जाने लायक अवस्था तक पहुँचती है।

4.40.13

बह्वाधयो दुःरवमया मोहद्वेषभयातुराः । तासां सम्यक्प्रवक्ष्यामि तावद्राजससात्त्विकीः ॥ १३ ॥

bahvādhayo duḥravamayā mohadveṣabhayāturāḥ | tāsāṃ samyakpravakṣyāmi tāvadrājasasāttvikīḥ || 13 ||

This human kind has many mental troubles, is full of suffering, and is tormented by delusion, hatred and fear. Now I will describe it properly, first the passionate and the clear kinds.

इस मनुष्य जाति में बहुत सी मानसिक पीड़ाएँ हैं, यह दुःख से भरी है, और मोह, द्वेष व डर से परेशान है। अब मैं इसके बारे में ठीक से बताऊँगा, पहले राजसिक और सात्त्विक तरह की।

4.40.14

यत्तदप्यमृतं ब्रह्म सर्वव्यापि निरामयम् । चिदाभासमनन्ताख्यमनादि विगतभ्रमम् ॥ १४ ॥

yattadapyamṛtaṃ brahma sarvavyāpi nirāmayam | cidābhāsam anantākhyam anādi vigatabhramam || 14 ||

That same deathless Brahman, spread through everything, free of any flaw, the very shine of consciousness, called the endless, without any beginning, free of delusion,

वही अमर ब्रह्म, जो हर जगह फैला है, जिसमें कोई दोष नहीं, जो चेतना की चमक है, जिसे अनंत कहा जाता है, जिसका कोई आरंभ नहीं, और जो भ्रम से मुक्त है,

4.40.15

निस्पन्दवपुषस्तस्य स्पन्दः सत्तैकदेशतः । घनतामेति सौम्येऽब्धौ चलता चलतामिव ॥ १५ ॥

nispandavapuṣastasya spandaḥ sattaikadeśataḥ | ghanatāmeti saumye'bdhau calatā calatāmiva || 15 ||

that Brahman's form does not move at all, yet from just one part of its being a vibration arises and grows dense, like in a calm sea where a slight stir turns into full waves.

उस ब्रह्म का रूप हिलता डुलता नहीं है, फिर भी उसके अस्तित्व के एक हिस्से से एक हलचल उठती है और गाढ़ी हो जाती है, जैसे शांत समुद्र में हल्की हलचल बढ़कर पूरी लहर बन जाती है।

4.40.16

श्रीराम उवाच । अनन्तस्यात्मतत्त्वस्य एकदेशः क उच्यते । कथं विकारिता वा स्यात्कथं वा द्वयविक्रमः ॥ १६ ॥

śrīrāma uvāca | anantasyātmatattvasya ekadeśaḥ ka ucyate | kathaṃ vikāritā vā syātkathaṃ vā dvayavikramaḥ || 16 ||

Sri Rama said, what is called a part of the endless reality of the Self. How could there be any change in it. Or how could two things be at work in it.

श्री राम ने पूछा, आत्मा के अनंत तत्व का एक हिस्सा किसे कहा जाता है। इसमें कोई बदलाव कैसे आ सकता है, और इसमें दो चीज़ों का काम कैसे हो सकता है।

4.40.17

श्रीवसिष्ठ उवाच । तेन जातं ततोजातमितीयं रचना गिराम् । शास्त्रसंव्यवहारार्थं न राम परमार्थतः ॥ १७ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tena jātaṃ tatojātamitīyaṃ racanā girām | śāstrasaṃvyavahārārthaṃ na rāma paramārthataḥ || 17 ||

Sri Vasishtha said, born from that, born from this, such talk is only a way of speaking, used for the practical business of teaching the scriptures. Rama, this is not so in the highest truth.

श्री वसिष्ठ ने कहा, इससे पैदा हुआ, उससे पैदा हुआ, यह तो बस बोलने का एक तरीका है, जो शास्त्र की बात समझाने और आम व्यवहार के लिए इस्तेमाल होता है। हे राम, असल सच्चाई में ऐसा कुछ नहीं है।

4.40.18

विकारितावयवितादिक्सत्तादेशतादयः । क्रमा न संभवन्तीशे दृश्यमानोदया अपि ॥ १८ ॥

vikāritāvayavitādiksattādeśatādayaḥ | kramā na saṃbhavantīśe dṛśyamānodayā api || 18 ||

Change, having separate parts, direction, having its own existence, being in a place, and such things in sequence are not possible in the Supreme, even though they seem to arise as visible things.

बदलाव, टुकड़ों में बँटना, दिशा, अलग से होना, जगह पर होना, ऐसी सब बातें परमात्मा में हो ही नहीं सकतीं, भले ही वे दिखने में पैदा होती हुई लगें।

4.40.19

तं विना कल्पनैवान्या नास्ति नापि भविष्यति । कुतस्त्यौ क्रमशब्दार्थावुक्तयो व्यवहारजाः ॥ १९ ॥

taṃ vinā kalpanaiavānyā nāsti nāpi bhaviṣyati | kutastyau kramaśabdārthāvuktayo vyavahārajāḥ || 19 ||

Without that Brahman, no other idea exists, nor ever will. So where could the word sequence and its meaning come from. These are only expressions born of everyday practice.

उस ब्रह्म के बिना कोई और कल्पना न है, न कभी होगी। तो फिर क्रम शब्द और उसका मतलब कहाँ से आया। ये तो बस रोज़मर्रा के व्यवहार से बनी बातें हैं।

4.40.20

या येह कलना योऽर्थो यः शब्दो यो गिरां गणः । तज्जत्वात्तन्मयत्वाच्च तत्तत्पदमिवेष्यते ॥ २० ॥

yā yeha kalanā yo'rtho yaḥ śabdo yo girāṃ gaṇaḥ | tajjatvāttanmayatvācca tattatpadamiveṣyate || 20 ||

Whatever idea there is here, whatever meaning, whatever word, whatever whole of speech, since each one is born from that Brahman and made of it, each is held to be that very Brahman.

यहाँ जो भी सोच है, जो भी मतलब है, जो भी शब्द है, जो भी पूरी बोली है, चूँकि यह सब उसी ब्रह्म से पैदा हुआ है और उसी से बना है, इसलिए हर एक को वही ब्रह्म माना जाता है।

4.40.21

तज्जः स एव भवति वह्नेर्वह्निरिवोत्थितः । जन्योऽयं जनकश्चायमित्युक्ता भेदकल्पना ॥ २१ ॥

tajjaḥ sa eva bhavati vahnervahnirivottithaḥ | janyo'yaṃ janakaścāyamityuktā bhedakalpanā || 21 ||

What is born from a thing is that very thing itself, like a flame rising from fire, which is fire itself. Calling one the thing produced and the other the thing that produces is only a made-up idea of difference.

जो किसी चीज़ से पैदा होता है, वह वही चीज़ है, जैसे आग से उठी लौ खुद आग ही है। एक को पैदा हुई चीज़ कहना और दूसरे को पैदा करने वाला कहना, बस भेद की एक बनावटी सोच है।

4.40.22

अयमस्मात्समुत्पन्न इतीयं या जगत्स्थितिः । आधिक्यं तत्क्रियाशक्तौ जन्यं जनकमेव वा ॥ २२ ॥

ayamasmātsamutpanna itīyaṃ yā jagatsthitiḥ | ādhikyaṃ tatkriyāśaktau janyaṃ janakameva vā || 22 ||

The world's way of thinking that this has come out of that exists only because of a difference in the power to act. The thing produced and the thing that produces it are actually the same.

दुनिया का यह सोचना कि यह उससे पैदा हुआ है, सिर्फ काम करने की शक्ति के फ़र्क़ की वजह से है। असल में पैदा हुई चीज़ और पैदा करने वाली चीज़ एक ही हैं।

4.40.23

इदमन्यदिदं चान्यदिति शब्दार्थविक्लवः । उक्तावेव न देवेऽस्ति प्रमितौ भिन्नता यतः ॥ २३ ॥

idamanyadidaṃ cānyaditi śabdārthaviklavaḥ | uktāveva na deve'sti pramitau bhinnatā yataḥ || 23 ||

Saying this is one thing and that is another is only a mix-up caused by words. It is not true in reality, because there is no difference in what is truly known.

यह अलग है और वह अलग है, यह सिर्फ शब्दों की गड़बड़ी है। असलियत में ऐसा नहीं है, क्योंकि जो सच में जाना जाता है उसमें कोई फ़र्क़ नहीं है।

4.40.24

तज्जयैव मनःशक्त्या स्वतः संज्ञा प्रवर्तते । दृढभावनया तस्मादिष्टोऽर्थः प्रतिपद्यते ॥ २४ ॥

tajjayeva manaḥśaktyā svataḥ saṃjñā pravartate | dṛḍhabhāvanayā tasmādiṣṭo'rthaḥ pratipadyate || 24 ||

This power of the mind, born from that one reality, makes names arise by itself. So when the mind holds something firmly, it comes to experience just what it wants.

उसी असली तत्व से पैदा हुई मन की शक्ति से नाम अपने आप बन जाते हैं। इसलिए मन जब किसी बात को मज़बूती से मान लेता है, तो उसे वैसा ही अनुभव हो जाता है जैसा वह चाहता है।

4.40.25

अग्नेः शिखाया एकस्या द्वितीया जनकेति या । उक्तिवैचित्र्यमेवैतन्नोक्त्यर्थेऽत्रास्ति सत्यता ॥ २५ ॥

agneḥ śikhāyā ekasyā dvitīyā janaketi yā | uktivaiśitryamevaitannoktyarthe'trāsti satyatā || 25 ||

When we say that a second flame gives birth to the first flame, that is only an odd trick of speech. The sentence has no real truth in it.

जब हम कहते हैं कि आग की दूसरी लौ पहली लौ को जन्म देती है, तो यह बस बोलने का एक अजीब ढंग है। इस बात में कोई सच्चाई नहीं है।

4.40.26

न जन्यजनकाद्यास्ताः संभवन्त्युक्तयः परे । एकमेव ह्यनन्तत्वात्किं कथं जनयिष्यति ॥ २६ ॥

na janyajanakādyāstāḥ saṃbhavantyuktayaḥ pare| ekameva hyanantatvātkim kathaṃ janayiṣyati || 26 ||

In the highest reality, words like the thing made and the maker do not truly apply. Since it is only one, without end, what could it produce, and how?

सबसे ऊँची सच्चाई में बनी हुई चीज़ और बनाने वाला जैसे शब्द सच में लागू नहीं होते। क्योंकि वह एक ही है और उसका कोई अंत नहीं, तो वह किसे और कैसे पैदा करेगा?

4.40.27

उक्तेरेव स्वभावोऽयमुक्तेरुक्तिरनन्तरम् । प्रतियोगिव्यवच्छेदसंख्याद्यर्थे न युज्यते ॥ २७ ॥

uktireva svabhāvo'yamuktiruktiranantaram| pratiyogivyavacchedasaṃkhyādyarthe na yujyate || 27 ||

This is just how speech works. One sentence simply follows another. It does not fit real distinctions, real separations, or real counting.

यह तो बस बोलने का तरीका है। एक बात के बाद दूसरी बात आ जाती है। इसका असली फ़र्क़, अलगाव या गिनती से कोई लेना-देना नहीं है।

4.40.28

ऊर्मिजालमिवाम्भोधौ परे यः परिदृश्यते । शब्दोऽर्थकलनाकारस्तद्ब्रह्मैव विदुर्बुधाः ॥ २८ ॥

ūrmijālamivāmbhodhau pare yaḥ paridṛśyate| śabdo'rthakalanākārastadbrahmaiva vidurbudhāḥ || 28 ||

Like a mass of waves seen on the ocean, which is the highest reality, the wise know that words and the meanings we make from them are nothing but Brahman itself.

जैसे समंदर में लहरों का जाल दिखता है, जो असल में समंदर ही है, वैसे ही समझदार लोग जानते हैं कि शब्द और उनसे बना अर्थ, दोनों ब्रह्म ही हैं।

4.40.29

ब्रह्म चिद्ब्रह्म च मनो ब्रह्म विज्ञानवस्तु च । ब्रह्मार्थो ब्रह्म शब्दश्च ब्रह्म चिद्ब्रह्म धातवः ॥ २९ ॥

brahma cidbrahma ca mano brahma vijñānavastu ca| brahmārtho brahma śabdaśca brahma cidbrahma dhātavaḥ || 29 ||

Brahman is awareness, Brahman is the mind, Brahman is the thing known. Brahman is the meaning, Brahman is the word, Brahman is awareness, Brahman is the elements.

ब्रह्म ही चेतना है, ब्रह्म ही मन है, ब्रह्म ही जानी जाने वाली चीज़ है। ब्रह्म ही अर्थ है, ब्रह्म ही शब्द है, ब्रह्म ही चेतना है, ब्रह्म ही तत्व हैं।

4.40.30

ब्रह्म सर्वमिदं विश्वं विश्वातीतं च तत्पदम् । वस्तुतस्तु जगन्नास्ति सर्वं ब्रह्मैव केवलम् ॥ ३० ॥

brahma sarvamidaṃ viśvaṃ viśvātītaṃ ca tatpadam| vastutastu jagannāsti sarvaṃ brahmaiva kevalam || 30 ||

Brahman is this whole world, and that highest state is also beyond the world. In truth, the world does not exist. Everything is Brahman alone.

ब्रह्म ही यह पूरी दुनिया है, और वह सबसे ऊँची अवस्था दुनिया से भी परे है। सच तो यह है कि दुनिया है ही नहीं, बस ब्रह्म ही सब कुछ है।

4.40.31

अयमन्योऽयमन्योऽयं भाग इत्यम्बरात्मनि । मिथ्याज्ञानविकल्पोक्तिर्वाचि सत्यार्थतात्र का ॥ ३१ ॥

ayamanyo'yamanyo'yaṃ bhāga ityambarātmani | mithyājñānavikalpoktirvāci satyārthatātra kā || 31 ||

To say this bit of sky is different, that bit is different, this is a piece of it, about the sky itself, is just a wrong idea born from a mistake. What truth can such talk have?

आकाश के बारे में यह कहना कि यह हिस्सा अलग है, वह हिस्सा अलग है, यह एक टुकड़ा है, यह सिर्फ गलत समझ से बनी एक झूठी बात है। ऐसी बातों में क्या सच्चाई हो सकती है?

4.40.32

वह्नेः शिखेव जातेयं शिखेति मनसोऽभिधा । चापलोत्थविकल्पश्रीर्वस्तुतः स्यान्न सिद्ध्यति ॥ ३२ ॥

vahneḥ śikheva jāteyaṃ śikheti manaso'bhidhā | cāpalotthavikalpaśrīrvastutaḥ syānna siddhyati || 32 ||

This thing that is said to be born like a flame from fire is what we call the mind. This fine appearance is only a restless imagination. It does not actually hold up as real.

जिस चीज़ को आग से पैदा हुई लौ जैसा कहा जाता है, उसी को हम मन कहते हैं। यह सुंदर सा दिखावा बस एक बेचैन कल्पना है, असल में यह सच साबित नहीं होता।

4.40.33

असत्यैव विकल्पोक्तिः सत्यभावो विकल्पते । तमोपहतदृष्टित्वाद्द्विचन्द्रज्ञानदोषवत् ॥ ३३ ॥

asatyeva vikalpoktiḥ satyabhāvo vikalpate | tamopahatadṛṣṭitvāddvicandrajñānadoṣavat || 33 ||

This talk of things being different is simply false, but it seems true, the way clouded eyes see two moons instead of one, because of a fault in sight.

अलग-अलग होने की यह बात झूठी है, फिर भी यह सच जैसी लगती है, जैसे धुंधली आँखों को एक की जगह दो चाँद दिखते हैं, आँख की खराबी की वजह से।

4.40.34

सर्वस्मात्सर्वगात्तस्मादनन्ताद्ब्रह्मणः पदात् । नान्यत्किंचित्संभवति तदुत्थं यत्तदेव तत् ॥ ३४ ॥

sarvasmātsarvagāttasmādanantādbrahmaṇaḥ padāt | nānyatkiñcitsaṃbhavati tadutthaṃ yattadeva tat || 34 ||

From Brahman, which is everything, which is everywhere, without limit, nothing else at all can ever come into being. Whatever arises from it is that same Brahman itself.

ब्रह्म से, जो सब कुछ है, जो हर जगह है, जिसकी कोई सीमा नहीं, कुछ और पैदा हो ही नहीं सकता। जो कुछ भी उससे उठता है, वह वही ब्रह्म है।

4.40.35

ब्रह्मतत्त्वं विना नेह किंचिदेवोपपद्यते । खर्वं च खल्विदं ब्रह्मेत्येषैव परमार्थता ॥ ३५ ॥

brahmatattvaṃ vinā neha kiñcidevopapadyate | kharvaṃ ca khalvidamaṃ brahmetyaiṣaiva paramārthatā || 35 ||

Without the reality of Brahman, nothing here could exist at all. This small, limited world too is nothing but Brahman. This alone is the highest truth.

ब्रह्म की सच्चाई के बिना यहाँ कुछ भी नहीं हो सकता। यह छोटी और सीमित दिखने वाली दुनिया भी असल में ब्रह्म ही है। यही सबसे बड़ा सच है।

4.40.36

एवंप्रायश्च हे प्राज्ञ सिद्धान्तस्ते भविष्यति । तत्रैवोदाहरिष्यामः सिद्धान्तार्थोक्तिपञ्जरम् ॥ ३६ ॥

evaṃprāyaśca he prājña siddhāntaste bhaviṣyati | tatraivodāhariṣyāmaḥ siddhāntārthoktipañjaram || 36 ||

In this way, wise one, this will be your final teaching. There, we will show you the whole set of words that explains this teaching.

हे बुद्धिमान, इस तरह यही तुम्हारा अंतिम सिद्धांत होगा। वहाँ हम इस सिद्धांत को समझाने वाले सारे शब्द तुम्हें दिखाएँगे।

4.40.37

इहाविद्यादिकाः केचिद्विद्यन्ते नेतरक्रमाः । ज्ञास्यस्यलमशेषार्थांस्तत्तदज्ञानसंक्षये ॥ ३७ ॥

ihāvidyādikāḥ kecidvidyante netarakramāḥ | jñāsyasyaalamaśeṣārthāṃstattadajñānasankṣaye || 37 ||

Here, only a few things exist, starting with not-knowing. Nothing more than that. You will fully understand everything, once each piece of not-knowing is destroyed.

यहाँ बस कुछ चीज़ें हैं, जिनकी शुरुआत न जानने से होती है। इसके अलावा और कुछ नहीं है। जैसे-जैसे यह न-जानना मिटता जाएगा, तुम सब कुछ पूरी तरह जान जाओगे।

4.40.38

अवस्तुसंक्षये वस्तु यथावस्तु प्रसीदति । यथा च दृश्यते दृश्यं जगन्नैशतमःक्षये ॥ ३८ ॥

avastusaṃkṣaye vastu yathāvastu prasīdati | yathā ca dṛśyate dṛśyaṃ jagannaiśatamaḥkṣaye || 38 ||

When the unreal is gone, the real becomes clear exactly as it is, just as the world we see becomes clear once the darkness of night ends.

जब झूठी चीज़ मिट जाती है, तो असली चीज़ अपने असली रूप में साफ़ दिखने लगती है, बिलकुल वैसे ही जैसे रात का अंधेरा खत्म होने पर दुनिया साफ़ दिखने लगती है।

4.40.39

यदिदमखिलमाततं कुदृष्ट्या तदुपशमे तव राम निर्मलामे । अवितथपदनिर्मले भविष्यत्यवितथमेव न संशयोऽत्र कश्चित् ॥ ३९ ॥

yadidamakhilamātataṃ kudṛṣṭyā tadupaśame tava rāma nirmalāme | avitathapadanirmale bhaviṣyatyavitathameva na saṃśayo'tra kaścit || 39 ||

Rama, this entire world you see stretched out before you exists only because of a faulty way of seeing. When that fault comes to rest and your sight becomes stainless, this same world will become nothing but the pure state of truth. It will be simply true. There is no doubt about this at all.

हे राम, यह जो पूरी दुनिया तुम्हें फैली हुई दिखती है, वह सिर्फ गलत तरीके से देखने की वजह से है। जब यह गलत देखना खत्म हो जाएगा और तुम्हारी नज़र निर्मल हो जाएगी, तो यही दुनिया बिलकुल सच्चे और शुद्ध रूप में दिखेगी। यह पूरी तरह सच होगी। इसमें कोई शक नहीं है।

Chapter 41

4.41.1

श्रीराम उवाच । क्षीरोदकुक्षितुल्याभिः शीतलामलदीप्तिभिः । तवोक्तिभिर्विचित्राभिर्गम्भीराभिरिवाभितः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | kṣīrodakukṣitulyābhiḥ śītalāmaladīptibhiḥ | tavoktibhirvicitrābhirgambhīrābhirivābhitaḥ || 1 ||

Rama said, your words are like the middle of the ocean of milk. They are cool and perfectly clear in their brightness. They are wonderful, and on every side they seem very deep.

राम ने कहा, तुम्हारी बातें दूध के समुद्र के बीच जैसी हैं। वे ठंडी हैं और उनकी चमक बिल्कुल साफ है। वे अनोखी हैं, और हर तरफ से बहुत गहरी लगती हैं।

4.41.2

क्षणमान्ध्यमिवाप्नोमि क्षणं यामि प्रकाशताम् । शान्तातपलवः प्रावृड्लोलाभ्र इव वासरः ॥ २ ॥

kṣaṇamāndhyamivāpnomi kṣaṇaṃ yāmi prakāśatām | śāntātapalavaḥ prāvṛḍlolābhra iva vāsaraḥ || 2 ||

Because of them, for a moment I feel as if I have gone blind, and the next moment I become clear and bright again, like a day in the rainy season, where the sunshine turns soft and calm, and the clouds keep moving and changing.

उनकी वजह से कभी मुझे लगता है जैसे मैं अंधा हो गया हूँ, और अगले ही पल मैं फिर से साफ और उजला महसूस करता हूँ, जैसे बरसात के दिन होता है, जहाँ धूप हल्की और शांत हो जाती है, और बादल लगातार हिलते डुलते और बदलते रहते हैं।

4.41.3

अनन्तस्याप्रमेयस्य सर्वस्यैकस्य भास्वतः । अनस्तमितसारस्य कलना कथमागता ॥ ३ ॥

anantasyāprameyasya sarvasyaikasya bhāsvataḥ | anastamitasārasya kalanā kathamāgatā || 3 ||

That one is endless, beyond measure, everything there is, one alone, shining, and its greatness never fades. How, then, has this sense of division come into it.

वह एक अनंत है, नापा नहीं जा सकता, वही सब कुछ है, वह अकेला एक है, चमकता है, और उसकी महानता कभी कम नहीं होती। फिर उसमें यह बंटवारे जैसा भाव कहाँ से आ गया।

4.41.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । यथाभूतार्थवाक्यार्थाः सर्वा एव ममोक्तयः । नासमर्था विरूपार्थाः पूर्वापरविरोधदाः ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | yathābhūtārthavākyārthāḥ sarvā eva mamoktayaḥ | nāsamarthā virūpārthāḥ pūrvāparavirodhadāḥ || 4 ||

Vasishtha said, everything I have told you says exactly what is true. None of it is weak, none of it twists the meaning, and none of it goes against what I said before or what I will say after.

वसिष्ठ ने कहा, मैंने तुमसे जो भी कहा है, वह ठीक वही कहता है जो सच है। उसमें से कुछ भी कमज़ोर नहीं है, कुछ भी अर्थ को मरोड़ता नहीं है, और कुछ भी मेरी पहले या बाद की बातों के विरुद्ध नहीं जाता।

4.41.5

ज्ञानदृष्टौ प्रसन्नायां प्रबोधे विततोदये । यथावज्ज्ञास्यसि स्वस्थो मद्वाग्दृष्टिबलाबलम् ॥ ५ ॥

jñānadṛṣṭau prasannāyāṃ prabodhe vitatodaye | yathāvajjñāsyasi svastho madvāgadṛṣṭibalābalam || 5 ||

When your eye of knowledge becomes clear, and your awakening has fully opened up, then, being at peace in yourself, you will rightly understand what is strong and what is weak in how I speak and see.

जब तुम्हारी ज्ञान की नज़र साफ हो जाएगी, और तुम्हारा जागना पूरी तरह खुल जाएगा, तब अपने भीतर शांत रहते हुए तुम ठीक ठीक समझ जाओगे कि मेरे कहने और देखने के तरीके में क्या मज़बूत है और क्या कमज़ोर।

4.41.6

उपदेश्योपदेशार्थं शास्त्रार्थप्रतिपत्तये । शब्दार्थवाक्यरचनाभ्रमो मा तन्मयो भव ॥ ६ ॥

upadeśyopadeśārthaṃ śāstrārthapratipattaye | śabdārthavākyaracanābhrmo mā tanmayo bhava || 6 ||

All this, the words, their meanings, and the way sentences are built, is arranged only so that the pupil can be taught and can grasp the meaning of the scripture. It may look confusing, but do not lose yourself in that confusion.

यह सब, शब्द, उनके अर्थ, और वाक्यों को बनाने का तरीका, केवल इसलिए बनाया गया है ताकि शिष्य को सिखाया जा सके और वह शास्त्र का अर्थ समझ सके। यह उलझन जैसा लग सकता है, पर इस उलझन में खुद को मत खो देना।

4.41.7

यदा पुरा ज्ञास्यसि तत्सत्यमत्यन्तनिर्मलम् । वाच्यवाचकशब्दार्थभेदं त्यक्ष्यसि वै तदा ॥ ७ ॥

yadā purā jñāsyasi tatsatyamatyantanirmalam | vācyavācakaśabdārthabhedaṃ tyakṣyasi vai tadā || 7 ||

Once you come to know that truth, which is completely pure, you will stop seeing any difference between a word and the thing it names.

जब तुम उस सच को जान लोगे, जो पूरी तरह शुद्ध है, तब तुम शब्द और जिस चीज़ का वह नाम है, उसके बीच कोई फ़र्क़ नहीं देखोगे।

4.41.8

भेदकृद्वाक्प्रपञ्चोऽयमुपदेश्येषु कल्पितः । उपदेश्योपदेशार्थं शास्त्रार्थप्रतिपत्तये ॥ ८ ॥

bhedakṛdvākprapañco'yamupadeśyeṣu kalpitaḥ | upadeśyopadeśārthaṃ śāstrārthapratipattaye || 8 ||

This spreading out of words, which seems to create divisions, is set up only for the sake of those being taught, so that the pupil gets the teaching and grasps the meaning of the scripture.

शब्दों का यह फैलाव, जो बंटवारा बनाता हुआ लगता है, केवल उन लोगों के लिए बनाया गया है जिन्हें सिखाया जा रहा है, ताकि शिष्य को शिक्षा मिले और वह शास्त्र का अर्थ समझ सके।

4.41.9

शब्दार्थवाक्प्रपञ्चोऽयमुपदेशेषु कल्पितः । सदाऽज्ञेषु न तज्ज्ञेषु विद्यते पारमार्थिकः ॥ ९ ॥

śabdārthavākprapañco'yamupadeśeṣu kalpitaḥ | sadā'jñeṣu na tajjñeṣu vidyate pāramārthikaḥ || 9 ||

This whole spread of words and their meanings is made up only for teaching, and only for those who do not yet know. For those who already know that truth, it isn't real at the deepest level.

शब्दों और उनके अर्थों का यह पूरा फैलाव केवल सिखाने के लिए बनाया गया है, और केवल उन लोगों के लिए जो अभी नहीं जानते। जो लोग उस सच को पहले से जानते हैं, उनके लिए यह सबसे गहरे स्तर पर असली नहीं है।

4.41.10

कलनामलमोहादि किंचिन्नात्मनि विद्यते । नीरागं ब्रह्म परमं तदेवेदं जगत्स्थितम् ॥ १० ॥

kalanāmalamohādi kiñcinna'tmani vidyate | nīrāgaṃ brahma paramaṃ tadevedaṃ jagatsthitam || 10 ||

In the self there is nothing at all, no sense of division, no impurity, no delusion, nothing of that kind. The highest Brahman has no taint of desire in it, and that same Brahman is this world standing before us.

आत्मा में कुछ भी नहीं है, न बंटवारे का भाव, न मैल, न भ्रम, ऐसा कुछ भी नहीं। सबसे ऊँचा ब्रह्म किसी इच्छा के दाग़ से रहित है, और वही ब्रह्म यह संसार है जो हमारे सामने खड़ा है।

4.41.11

एतद्विचित्ररूपाभिर्युक्तिभिर्बहुशः पुनः । विस्तरेणैव वक्तव्यं सिद्धान्तावसरेऽनघ ॥ ११ ॥

etadvicitrarūpābhiryuktibhirbahuśaḥ punaḥ | vistareṇaiva vaktavyaṃ siddhāntāvasare'nagha || 11 ||

This same truth, sinless Rama, must be told again and again, using many different kinds of reasoning, in full detail, whenever the time comes to state the final conclusion.

यही सच, हे निष्पाप राम, बार बार कहा जाना चाहिए, कई तरह के तर्कों के साथ, पूरे विस्तार से, जब भी अंतिम निष्कर्ष बताने का समय आए।

4.41.12

वाक्प्रपञ्चं विना त्वेतदज्ञानमतुलं तमः । भेत्तुमन्योन्यमुदितं यत्नं कर्तुं न शक्यते ॥ १२ ॥

vākprapañcaṃ vinā tvetadajñānamatulaṃ tamaḥ | bhettumanyonyamuditaṃ yatnaṃ kartuṃ na śakyate || 12 ||

But without words to teach it, we cannot even join together to make the effort needed to break this ignorance, this darkness beyond compare.

पर बिना सिखाने वाले शब्दों के, हम मिलकर भी वह कोशिश नहीं कर सकते जो इस अज्ञान को तोड़ने के लिए चाहिए, यह अज्ञान जो एक बेमिसाल अंधेरा है।

4.41.13

अविद्ययैवोत्तमया स्वात्मनाशोद्यमेच्छया । विद्या सा प्रार्थ्यते राम सर्वदोषापहारिणी ॥ १३ ॥

avidyayaiovottamayā svātmanāśodyamecchayā | vidyā sā prārthyate rāma sarvadoṣāpahāriṇī || 13 ||

It is by ignorance itself, but ignorance at its best, ignorance that wants to work toward ending itself, that we long for that knowledge, Rama, which takes away every fault.

यह अज्ञान के ज़रिए ही होता है, पर उस अज्ञान के जो सबसे अच्छा है, जो खुद को ही मिटाने की कोशिश करना चाहता है, कि हम उस ज्ञान को चाहते हैं, राम, जो हर दोष को दूर कर देता है।

4.41.14

शाम्यति ह्यस्त्रमस्त्रेण मलेन क्षाल्यते मलः । शमं विषं विषेणैति रिपुणा हन्यते रिपुः ॥ १४ ॥

śāmyati hyastramastreṇa malena kṣālyate malaḥ | śamaṃ viṣaṃ viṣeṇaiti ripuṇā hanyate ripuḥ || 14 ||

One weapon is stopped by another weapon. Dirt is washed away using dirt. One poison is calmed by another poison. One enemy is killed by another enemy.

एक हथियार को दूसरे हथियार से रोका जाता है। मैल को मैल से धोया जाता है। एक ज़हर को दूसरे ज़हर से शांत किया जाता है। एक दुश्मन को दूसरे दुश्मन से मारा जाता है।

4.41.15

ईदृशी राम मायेयं यां स्वनाशेन हर्षदा । न लक्ष्यते स्वभावोऽस्याः प्रेक्ष्यमाणैव नश्यति ॥ १५ ॥

īdṛśī rāma māyeyaṃ yāṃ svanāśena harṣadā | na lakṣyate svabhāvo'syāḥ prekṣyamāṇaiva naśyati || 15 ||

This is what this illusion, Rama, is like, it brings joy through its own destruction. You cannot pin down its nature. The moment you look closely at it, it disappears.

राम, यह माया कुछ ऐसी ही है, यह अपने ही नाश से खुशी देती है। इसका असली रूप पकड़ में नहीं आता। जैसे ही तुम इसे ध्यान से देखते हो, यह गायब हो जाती है।

4.41.16

विवेकमाच्छादयति जगन्ति जनयत्यलम् । नच विज्ञायते कैषा पश्याश्चर्यमिदं जगत् ॥ १६ ॥

vivekamācchādayati jaganti janayaty alam| naca vijñāyate kaiṣā paśyāścaryamidaṃ jagat || 16 ||

It covers over clear understanding, and it creates whole worlds. Yet no one can say exactly what this illusion is. Look, this world is such a wonder.

यह साफ समझ को ढक देती है, और पूरी दुनियाएँ बना देती है। फिर भी कोई नहीं बता सकता कि यह माया आख़िर है क्या। देखो, यह संसार कितना अचरज भरा है।

4.41.17

अप्रेक्ष्यमाणा स्फुरति प्रेक्षिता सु विनश्यति । मायेयमपरिज्ञायमानरूपैव वल्गति ॥ १७ ॥

aprekṣyamāṇā sphurati prekṣitā su vinaśyati| māyeyamaparijñāyamānarūpaiva valgati || 17 ||

When you do not look closely at it, it shines and seems real. When you do look closely, it disappears completely. This illusion only plays about as long as its true nature stays unknown.

जब तुम इसे ध्यान से नहीं देखते, यह चमकती है और असली लगती है। जब तुम ध्यान से देखते हो, यह पूरी तरह गायब हो जाती है। यह माया तभी तक अपना खेल दिखाती है जब तक इसका असली रूप पता न चले।

4.41.18

अहो नु खलु चित्रेयं माया संसारबन्धनी । असत्येवातिसत्येव स्वज्ञानं विहितं तया ॥ १८ ॥

aho nu khalu citreyam māyā saṃsārabandhanī| asatyevātisatyeva svajñānaṃ vihitaṃ tayā || 18 ||

How strange this illusion really is, Rama, the very thing that ties us to the cycle of birth and death. It is unreal, yet it seems completely real, and it makes itself known to us in that same unreal yet completely real way.

राम, यह माया सच में कितनी अजीब है, यही तो हमें जन्म मौत के चक्र में बाँधे रखती है। यह असली नहीं है, फिर भी बिल्कुल असली जैसी लगती है, और यह अपने बारे में हमें ठीक इसी असली नकली अंदाज़ में जनाती है।

4.41.19

अत्यभिन्नपदे तस्मिंस्तन्वाना भेदमाततम् । संसारमाया येनासौ तेनासौ पुरुषोत्तमः ॥ १९ ॥

atyabhinnapade tasmins tanvānā bhedamātatam| saṃsāramāyā yenāsau tenāsau puruṣottamaḥ || 19 ||

Within that one reality, which has no divisions in it at all, this illusion of the world stretches out what looks like endless division. And it is exactly because of this that he is called the highest of all, the Supreme Person.

उस एक सच्चाई के भीतर, जिसमें बिल्कुल भी बंटवारा नहीं है, यह संसार की माया एक ऐसा बंटवारा फैला देती है जो कभी खत्म न होने वाला लगता है। और ठीक इसी वजह से उसे सबसे ऊँचा, परम पुरुष कहा जाता है।

4.41.20

नास्त्येषा परमार्थे न त्वेवं भावनयेद्धया । ज्ञो भूत्वा ज्ञेयसंप्राप्तो ज्ञास्यस्यस्यास्त्वमाशयम् ॥ २० ॥

nāsty eṣā paramārthe na tvevaṃ bhāvanayeddhayā| jño bhūtvā jñeyasamprāpto jñāsyasyasyāstvamāśayam || 20 ||

In the deepest truth, this illusion does not exist at all. But you will not see this simply by holding tightly to that thought in your mind. Only when you become the knower and directly reach what is to be known will you truly understand what this illusion means.

सबसे गहरे सच में, यह माया बिल्कुल नहीं है। पर तुम यह बात सिर्फ़ मन में इस विचार को कसकर पकड़े रहने से नहीं समझोगे। जब तुम खुद जानने वाले बन जाओगे और जो जानने लायक़ है उस तक सीधे पहुँच जाओगे, तभी तुम सच में समझ पाओगे कि इस माया का मतलब क्या है।

4.41.21

यावत्तु न प्रबुद्धस्त्वं तावन्मद्वचसैव ते । निश्चयो भवतूद्दामो नास्त्यविद्येति निश्चलः ॥ २१ ॥

yāvattu na prabuddhastvaṃ tāvanmadvacasaiva te | niścayo bhavatūddāmo nāstyavidyeti niścalaḥ || 21 ||

Until you wake up to the truth, hold on to just this. Let it be firm and unshaken, resting only on my words: there is no ignorance.

जब तक तुम्हें सच का बोध नहीं होता, बस इतना पकड़े रहो। सिर्फ मेरे कहने पर भरोसा करके यह विश्वास पक्का और अटल रहने दो कि अज्ञान है ही नहीं।

4.41.22

यदिदं दृश्यतां यातं मानसं मननं महत् । असन्मात्रमिदं यस्मान्मनोमात्रविजृम्भितम् ॥ २२ ॥

yadidaṃ dṛśyatāṃ yātaṃ mānasaṃ mananaṃ mahat | asanmātramidaṃ yasmānmanomātravijṛmbhitam || 22 ||

This great thinking of the mind turns into the world we see. But it is nothing but unreal, because it is only the mind spreading itself out.

मन का यह बड़ा विचार ही बदलकर वह दुनिया बन जाता है जो हमें दिखती है। पर यह झूठा ही है, क्योंकि यह सिर्फ मन का फैलाव है।

4.41.23

सत्तद्ब्रह्मेति यस्यान्तर्निश्चयः सोऽपि मोक्षभाक् । चलाचलाकृतिर्या या दृष्टिरावद्धभावना ॥ २३ ॥

sattadbrahmeti yasyāntarniścayaḥ so'pi mokṣabhāk | calācalākṛtiryā yā dṛṣṭirāvaddhabhāvanā || 23 ||

Whoever holds this conviction deep inside, that this is real, that it is Brahman, that person too has a share in freedom. But there is also the view that keeps taking this world of moving and unmoving things as real, holding fast to that belief.

जिसके मन में यह पक्का विश्वास बैठा है कि यही सच है, यही ब्रह्म है, वह भी मुक्ति का हकदार है। पर एक और नज़र भी है, जो इस चलती-अचलती दुनिया को सच मानकर उसी विश्वास पर अड़ी रहती है।

4.41.24

सा समग्रजगद्भूतखगबन्धनवागुरा । यः स्वप्नभूमिवद्भ्रान्तमसत्सद्ह्येकनिश्चयः ॥ २४ ॥

sā samagrajagadbhūtakhagabandhanavāgurā | yaḥ svapnabhūmivadbhrāntamasatsadhyekaniścayaḥ || 24 ||

That view is the trap that catches every creature in the whole world. Now think of one whose single, firm conviction is this: this wandering world is like a dream, it seems real but it is not.

वही नज़र पूरी दुनिया के हर जीव को फंसाने वाला जाल है। अब उस इंसान को देखो जिसका बस एक ही पक्का विश्वास है, यह भटकती हुई दुनिया सपने जैसी है, यह सच लगती है पर सच नहीं है।

4.41.25

जगत्पश्यत्यसक्तात्मा न स दुःखे निमज्जति । यस्यैतास्वस्वरूपासु भावना स्वात्मभावना ॥ २५ ॥

jagatpaśyatyaśaktātmā na sa duḥkhe nimajjati | yasyaitāsvasvarūpāsu bhāvanā svātmabhāvanā || 25 ||

He looks at the world with a self that clings to nothing. So he does not sink into sorrow. His conviction about these unreal things is really nothing but the conviction of knowing his own self.

वह इस दुनिया को देखता तो है, पर उसकी आत्मा किसी चीज़ से चिपकती नहीं। इसलिए वह दुख में नहीं डूबता। इन झूठी चीज़ों के बारे में उसका विश्वास असल में अपनी आत्मा को जानने का ही विश्वास है।

4.41.26

अस्वरूपस्य तस्यापि सा ह्यविद्यैव विद्यते विकारितादयो दोषा न केचन महात्मनि ॥ २६ ॥

asvarūpasya tasyāpi sā hyavidyaiava vidyate vikāritādayo doṣā na kecana mahātmani || 26 ||

Even so, holding on to this unreal world as true is nothing but ignorance itself. No fault at all, not even being changed or affected, exists in the great self.

फिर भी, इस झूठी दुनिया को सच मानते रहना सिर्फ अज्ञान है। महान आत्मा में बदलने या असर पड़ने जैसा कोई भी दोष नहीं है।

4.41.27

परमात्मनि विद्यन्ते पयसीवेह पांसवः भावनाशब्दशब्दार्थरञ्जनेयं जगद्गता ॥ २७ ॥

paramātmani vidyante payasīveha pāṃsavaḥ bhāvanāśabdaśabdārtharañjane yaṃ jagadgatā || 27 ||

These faults seem to be in the supreme self only the way dust seems to be in water. This tainting is made of thought, of words, and of the meaning of words, and it belongs only to the world.

ये दोष परमात्मा में ऐसे ही दिखते हैं जैसे पानी में धूल के कण दिखते हैं। यह रंगत विचार, शब्द और शब्दों के अर्थ से बनती है, और यह सिर्फ इस दुनिया की है।

4.41.28

व्यवहारार्थमुत्पन्ना व्यतिरिक्ता च नात्मनः अनेन व्यवहारेण विनैताः शास्त्रदृष्टयः ॥ २८ ॥

vyavahārārthamutpannā vyatiriktā ca nātmanaḥ anena vyavahāreṇa vinaitāḥ śāstradṛṣṭayaḥ || 28 ||

Thought, word, and meaning arose only for everyday practical use. They are not truly separate from the self. Take away this everyday use, and these teachings of the scriptures would have no purpose.

विचार, शब्द और अर्थ रोज़मर्रा के काम-काज के लिए ही पैदा हुए हैं। असल में ये आत्मा से अलग नहीं हैं। अगर यह रोज़मर्रा का इस्तेमाल न हो, तो शास्त्रों की ये बातें बेमतलब हो जाएंगी।

4.41.29

संस्थितिं नाधिगच्छन्ति पटा इव वितन्तवः उह्यमानो ह्यविद्यायामात्मा नेहोपलक्ष्यते ॥ २९ ॥

saṃsthitiṃ nādhigacchanti paṭā iva vitantavaḥ uhyamāno hyavidyāyāmātmā nehopalakṣyate || 29 ||

Threads woven into a cloth are no longer seen as separate threads. In the same way, the self, carried along by ignorance, is not recognized here for what it truly is.

जैसे कपड़े में बुने हुए धागे अलग धागों की तरह नहीं दिखते, वैसे ही अज्ञान में बहती हुई आत्मा यहां अपने असली रूप में नहीं पहचानी जाती।

4.41.30

आत्मज्ञानादृते तच्च शास्त्रार्थात्समवाप्यते अविद्यासरितः पारमात्मलाभादृते किल ॥ ३० ॥

ātmajñānādṛte tacca śāstrārthātsamavāpyate avidyāsaritaḥ pāramātmalābhādṛte kila || 30 ||

The true meaning of the scriptures is reached only by knowing the self. And the far shore of this river of ignorance is never reached except by attaining the supreme self.

शास्त्रों का असली मतलब सिर्फ आत्मा को जानने से मिलता है। और अज्ञान की इस नदी का दूसरा किनारा परमात्मा को पाए बिना कभी नहीं मिलता।

4.41.31

राम नासाद्यते तद्धि पदमक्षयमुच्यते । यतःकुतश्चिज्जातेयमविद्या मलदायिनी ॥ ३१ ॥

rāma nāsādyate taddhi padamakṣayamucyate | yataḥkutaścijjāteyamavidyā maladāyinī || 31 ||

Rama, that imperishable state is not reached, because this ignorance, which breeds impurity, has arisen from some cause or other.

राम, वह अविनाशी अवस्था तब तक नहीं मिलती, जब तक यह मैल फैलाने वाला अज्ञान किसी न किसी वजह से बना रहता है।

4.41.32

नूनं स्थितिमुपायाता समासाद्य पदं स्थिता । कुतो जातेयमिति ते राम मास्तु विचारणा ॥ ३२ ॥

nūnaṃ sthitimupāyātā samāsādya padaṃ sthitā | kuto jāteyamiti te rāma māstu vicāraṇā || 32 ||

It has surely settled into being. It has found its own place and stands there fixed. So, Rama, do not let this question rise in your mind: where has this been born from?

यह तो बस बनकर टिक गया है। इसे अपनी एक जगह मिल गई है और यह वहीं स्थिर हो गया है। इसलिए राम, तुम्हारे मन में यह सवाल न उठे कि यह कहां से पैदा हुआ।

4.41.33

इमां कथमहं हन्मीत्येषा तेऽस्तु विचारणा । अस्तं गतायां क्षीणायामस्यां ज्ञास्यसि राघव ॥ ३३ ॥

imāṃ kathamahaṃ hanmītyeṣā te'stu vicāraṇā |astaṃ gatāyāṃ kṣīṇāyāmasyāṃ jñāsyasi rāghava || 33 ||

Let your only question be this: how do I destroy it? Once it sets like the sun and fades away, then, Raghava, you will truly know.

तुम्हारा सवाल बस यही हो, मैं इसे कैसे नष्ट करूं। जब यह सूरज की तरह डूबकर मिट जाएगा, तभी राघव, तुम्हें असली ज्ञान होगा।

4.41.34

यत एषा यथा चैषा यथा नष्टेत्यखण्डितम् । वस्तुतः किल नास्त्येषा विभात्येषा न वेक्षिता ॥ ३४ ॥

yata eṣā yathā caiṣā yathā naṣṭetyakhṇḍitam | vastutaḥ kila nāsty eṣā vibhāty eṣā na vekṣitā || 34 ||

Where it comes from, what it is, how it is destroyed, all these questions come to nothing. Because in truth, this ignorance does not exist at all. It only seems to shine, but look closely, and it is not found.

यह कहां से आया, यह क्या है, यह कैसे मिटेगा, ये सारे सवाल बेकार हैं। क्योंकि असल में यह अज्ञान है ही नहीं। यह बस चमकता हुआ दिखता है, पर ध्यान से देखने पर मिलता ही नहीं।

4.41.35

असतो भ्रान्तता सत्यरूपां जानातु कः कुतः । जातेयं प्रौढिमापन्ना दोषायैवाततताकृतिः ॥ ३५ ॥

asato bhrāntatā satyarūpāṃ jānātu kaḥ kutaḥ | jāteyaṃ prauḍhimāpannā doṣāyaivātatākṛtiḥ || 35 ||

Who can ever know how something unreal comes to seem real? This ignorance, once born, has grown to its full strength. Its vast form exists only to cause harm.

यह कोई कैसे जान सकता है कि जो असली नहीं है वह सच कैसे लगने लगता है? यह अज्ञान पैदा होकर पूरी ताकत पकड़ चुका है। इसका यह बड़ा रूप सिर्फ नुकसान पहुंचाने के लिए है।

4.41.36

बलात्प्रणाशय त्वेनां परिज्ञास्यसि वै ततः । अपि शूरा अतिप्राज्ञास्ते न सन्ति जगत्त्रये ॥ ३६ ॥

balāt praṇāśaya tvenāṃ parijñāsyasi vai tataḥ | api śūrā atiprajñāste na santi jagattraye || 36 ||

So destroy it by force. Only then will you truly know it. Not even the brave, not even the very wise, are to be found anywhere in the three worlds.

इसलिए इसे ज़ोर लगाकर नष्ट कर दो। तभी तुम इसे पूरी तरह जान पाओगे। तीनों लोकों में ऐसे शूरवीर और परम बुद्धिमान लोग कहीं नहीं मिलते।

4.41.37

अविद्यया ये पुरुषा न नाम विवशीकृताः । तदस्या रोगशीलाया यत्नं कुरु विनाशने ॥ ३७ ॥

avidyayā ye puruṣā na nāma vivashīkṛtāḥ | tadasyā rogaśīlāyā yatnaṃ kuru vināśane || 37 ||

There is no man at all whom this ignorance has not overpowered. So put in every effort to destroy it. Its very nature is a disease.

ऐसा कोई भी इंसान नहीं है जिसे इस अज्ञान ने बेबस न किया हो। इसलिए इसे नष्ट करने की पूरी कोशिश करो। इसका स्वभाव ही एक बीमारी जैसा है।

4.41.38

यथैषा जन्मदुःखेषु न भूयस्त्वां नियोक्ष्यति । सर्वापदामेकसखीमज्ञानतरुमञ्जरीम् ॥ अनर्थसार्थजननीमविद्यामलमुद्धर ॥ ३८ ॥

yathaiṣā janmaduḥkheṣu na bhūyastvāṃ niyokṣyati | sarvāpadāmekasakhīmajñānatarumañjarīm | anarthasārthajananīmavidyāmalamuddhara || 38 ||

Do this so that it never again binds you to the sufferings of birth. Root out this ignorance, this stain. It is the one true friend of every calamity, the flower of the tree of unwisdom, the mother of a whole host of misfortunes.

यह इसलिए करो ताकि यह तुम्हें फिर कभी जन्म के दुखों में न बांधे। इस अज्ञान को, इस मैल को जड़ से उखाड़ फेंको। यह हर मुसीबत का इकलौता साथी है, अज्ञान के पेड़ का फूल है, और अनगिनत दुर्भाग्यों की मां है।

4.41.39

भयविषाददुराधिविपत्प्रदां हृदयमोहमहापटलांकुराम् । भृशमपास्य कुदृष्टिमिमां बलाद्भव भवार्णवपारमुपागतः ॥ ३९ ॥

bhayaviṣādadurādhivipatpradāṃ hṛdayamohamahāpaṭalāṃkurām | bhṛśamapāsya kudṛṣṭimimāṃ balādbhava bhavārṇavapāramupāgataḥ || 39 ||

Cast away this false way of seeing completely and by force. It brings fear, despair, deep anguish, and disaster. It grows the great covering of delusion over the heart. Cross over and reach the far shore of the ocean of rebirth.

इस झूठी नज़र को पूरी ताकत से पूरी तरह छोड़ दो। यह डर, निराशा, गहरी बेचैनी और विपत्ति लाती है। यह दिल पर छाए मोह के बड़े पर्दे को उगाती है। इसे पार करके जन्म-मरण के सागर के दूसरे किनारे पर पहुंच जाओ।

Chapter 42

4.42.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । कुपितस्यासतोऽप्यस्य प्रेक्षामात्रविनाशिनः । अविद्याविततव्याधेरौषधं शृणु राघव ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kupitasyāsato'pyasya prekṣāmātravināśinaḥ | avidyāvitatavyādherauṣadhaṃ śṛṇu rāghava || 1 ||

Sri Vasishtha said: Rama, listen to the medicine for the disease that ignorance has spread far and wide. It rages fiercely, but it is not real, and it is destroyed simply by seeing it clearly.

श्री वसिष्ठ बोले, हे राघव, उस रोग की दवा सुनो जिसे अज्ञान ने फैलाया है। यह रोग गुस्से में भड़कता है, पर यह असली नहीं है, और सिर्फ इसे ठीक से देख लेने भर से यह मिट जाता है।

4.42.2

यां तां कथयितुं जातिं राम राजससात्त्विकीम् । मनोवीर्यविचारार्थं प्रस्तुतोऽस्मीह तां शृणु ॥ २ ॥

yāṃ tāṃ kathayituṃ jātiṃ rāma rājasasāttvikīm | manovīryavicārārthaṃ prastuto'smīha tāṃ śṛṇu || 2 ||

Rama, to help us examine the power of the mind, I am now going to tell you about that origin, the one shaped by rajas and sattva. Listen to it.

राम, मन की शक्ति को समझने के लिए, अब मैं तुम्हें उस उत्पत्ति के बारे में बताता हूँ जो रजस और सत्त्व से बनी है। उसे सुनो।

4.42.3

यत्तदप्यमृतं ब्रह्म सर्वव्यापि निरामयम् । चिदाभासमनन्ताख्यमनादि विगतभ्रमम् ॥ ३ ॥

yattadapyamṛtaṃ brahma sarvavyāpi nirāmayam | cidābhāsam anantākhyam anādi vigatabhramam || 3 ||

That same thing is also Brahman, the deathless, all pervading, flawless. It shines as pure consciousness, is called endless, has no beginning, and is completely free of confusion.

वही ब्रह्म भी है, अमर, सब जगह फैला हुआ, और दोषरहित। वह चेतना के प्रकाश के रूप में चमकता है, उसे अनंत कहा जाता है, उसका कोई आरंभ नहीं है, और वह भ्रम से पूरी तरह मुक्त है।

4.42.4

चित्स्पन्दवपुषस्तस्य स्पन्दस्तस्माच्चिदेव हि । प्रदेशाद्धनतामेति सौम्योऽब्धिश्चलनादिव ॥ ४ ॥

citsvandavapuṣastasya spandastasmāccideva hi | pradeśāddhanatāmeti saumyo'bdhiścalanādiva || 4 ||

That Brahman's very body is a stir within consciousness, and the stir is nothing but consciousness itself. When it settles into one place, it grows thick and dense, the way a calm sea grows rough through its own motion.

उस ब्रह्म का शरीर ही चेतना की एक हलचल है, और वह हलचल स्वयं चेतना ही है। जब यह किसी एक जगह टिकती है, तब यह गाढ़ी हो जाती है, जैसे शांत समुद्र अपनी हलचल से लहरदार हो जाता है।

4.42.5

अन्तरब्धेर्जलं यद्वत्स्पन्दास्पन्दवदीहते । सर्वशक्तिस्तथैकत्र गच्छति स्पन्दशक्तिताम् ॥ ५ ॥

antarabdherjalaṃ yadvatspandāspandavadīhate | sarvaśaktistathaikatra gacchati spandaśaktitām || 5 ||

Just as the water inside the ocean sometimes stirs and sometimes lies still, in the same way the power that holds every power turns, in one spot, into the power to vibrate.

जैसे समुद्र के भीतर का पानी कभी हिलता है और कभी शांत रहता है, वैसे ही वह शक्ति जिसमें सारी शक्तियाँ समाई हैं, एक जगह पर हलचल की शक्ति बन जाती है।

4.42.6

आत्मन्येवात्मना व्योम्नि यथा सरति मारुतः । तथेहात्मात्मशक्त्यैव स्वात्मन्येवैति लोलताम् ॥ ६ ॥

ātmanyevātmanā vyomni yathā sarati mārutaḥ | tathehātmātmaśaktyaiva svātmanyevaiti lolatām || 6 ||

Just as wind moves through the sky by its own power, with nothing outside itself, so too the Self, by its own power alone, starts to quiver within itself.

जैसे हवा आकाश में अपनी ही शक्ति से चलती है, किसी बाहरी सहारे के बिना, वैसे ही आत्मा अपनी ही शक्ति से अपने भीतर कंपन करने लगती है।

4.42.7

स्वशिखास्पन्दशक्त्यैव दीपः सौम्यो यथोन्नतम् । एति तद्वदसावात्मा तत्स्वे वपुषि वल्गति ॥ ७ ॥

svaśikhāspandaśaktyaiva dīpaḥ saumyo yathonnatam | eti tadvadasāvātmā tatsve vapuṣi valgati || 7 ||

Just as a still lamp's flame climbs upward through the stir at its own tip, so this Self trembles within its own form.

जैसे शांत दीये की लौ अपनी ही नोक की हलचल से ऊपर उठती है, वैसे ही यह आत्मा अपने ही रूप में कंपन करती है।

4.42.8

जलान्तरेऽम्बुधिर्यद्वल्लसद्वारीव चञ्चलः । सर्वशक्तिर्वपुष्येव तथा स्पन्दविलासवान् ॥ ८ ॥

jalāntare'mbudhiryadvalllasadvārīva cañcalaḥ | sarvaśaktirvapuṣyeva tathā spandavilāsavān || 8 ||

Just as the ocean is restless with its own shimmering water, so the power that holds every power is, within its own form, full of the play of vibration.

जैसे समुद्र अपने ही चमकते जल से बेचैन और चंचल रहता है, वैसे ही वह शक्ति जिसमें सारी शक्तियाँ समाई हैं, अपने ही रूप में हलचल के खेल से भरी रहती है।

4.42.9

यथोल्लसति भाश्चक्रैः कचन्कनकसागरः । तथात्मनि परिस्पन्दैः स्फुरत्यक्षैश्चिदर्णवः ॥ ९ ॥

yathollasati bhāścakraiḥ kacankanakasāgaraḥ | tathātmani parispandaiḥ sphuratyakṣaiścidarṇavaḥ || 9 ||

Just as a golden sea sparkles with rings of light, so the ocean of consciousness, within the Self, quivers and shimmers with its own ripples and points of light.

जैसे सुनहरा समुद्र प्रकाश के चक्रों से चमकता है, वैसे ही आत्मा के भीतर चेतना का समुद्र अपनी ही तरंगों और चमकते बिंदुओं से हिलता और चमकता है।

4.42.10

लक्ष्यते मौक्तिकस्पन्दो यथा व्योम्नि दृशोऽदृशि । तथा भाति लसद्रूपा चिच्छक्तिश्चिन्महाम्बरे ॥ १० ॥

lakṣyate mauktikaspando yathā vyomni dṛśo'dṛśi | tathā bhāti lasadrūpā cicchaktiścinmahāmbare || 10 ||

Just as someone with a flaw in the eye sees a spot like a pearl shimmering in empty sky where nothing is really there, so the power of consciousness shines out, glowing, within the vast space of consciousness itself.

जैसे किसी की आँख की खराबी से खाली आकाश में मोती जैसी एक चमक दिखती है, जहाँ असल में कुछ नहीं होता, वैसे ही चेतना की शक्ति चमकते हुए रूप में चेतना के विशाल आकाश में चमकती है।

4.42.11

किंचित्क्षुभितरूपा सा चिच्छक्तिश्चिन्महार्णवे । तन्मयी चित्स्फुरत्यच्छा तत्रैवोर्मिरिवार्णवे ॥ ११ ॥

kiṃcitkṣubhitarūpā sā cicchaktiścinmahārṇave| tanmayī citsphuratyacchā tatraivormirivārṇave || 11 ||

Within the great ocean of consciousness, that power of consciousness, stirred just a little, quivers there clear and pure, made of nothing but consciousness itself, just like a wave in the ocean.

चेतना के उस विशाल समुद्र में, चेतना की वह शक्ति थोड़ी हलचल में आकर वहीं साफ और शुद्ध रूप में कंपन करती है, वह पूरी तरह चेतना से ही बनी होती है, बिल्कुल जैसे समुद्र में एक लहर।

4.42.12

आत्मनोऽव्यतिरिक्तैव व्यतिरिक्तेव तिष्ठति । आलोकश्रीरिवालोककोटरे यत्ततां गता ॥ १२ ॥

ātmano'vyatiriktaiva vyatirikteva tiṣṭhati| ālokaśrīrivālokakoṭare yattatāṃ gatā || 12 ||

Though it is not really different from the Self, it appears as if it were different, like the glow of light sitting inside a hollow made of light itself, and so it takes on this separate identity.

यह आत्मा से असल में अलग नहीं है, फिर भी यह अलग जैसा दिखने लगता है, जैसे प्रकाश की चमक प्रकाश से बने एक खोखले हिस्से के भीतर बैठी हो, और इस तरह यह एक अलग पहचान पा लेता है।

4.42.13

क्षणं स्फुरति सा देवी सर्वशक्तितया तया । चेतति स्वां स्वयं शक्तिं कलेन्दोः शीततामिव ॥ १३ ॥

kṣaṇaṃ sphurati sā devī sarvaśaktitayā tayā| cetati svāṃ svayaṃ śaktiṃ kalendoḥ śītatāmiva || 13 ||

For a moment, that goddess flashes forth as the power holding every power, and becomes aware of her own power, just as one feels, directly, the coolness of a moonbeam.

एक क्षण के लिए वह देवी सारी शक्तियों को समेटे हुए चमक उठती है, और वह अपनी ही शक्ति को उसी तरह महसूस करती है जैसे चाँदनी की एक किरण की ठंडक सीधे महसूस होती है।

4.42.14

उदितैषा प्रकाशाख्या चिच्छक्तिः परमात्मनः । देशकालक्रियाशक्तीर्वयस्याः संप्रकर्षति ॥ १४ ॥

uditaiṣā prakāśākhyā cicchaktiḥ paramātmanaḥ| deśakālakriyāśaktīrvayasyāḥ saṃprakarṣati || 14 ||

This power of the Supreme Self's consciousness, known as light, rises up, and along with it come its companions, the power of place, the power of time, and the power of action.

परम आत्मा की चेतना की यह शक्ति, जिसे प्रकाश कहा जाता है, उठती है, और उसके साथ उसकी साथी शक्तियाँ भी आती हैं, जगह की शक्ति, समय की शक्ति, और क्रिया की शक्ति।

4.42.15

स्वस्वभावं विदित्वैवमनाद्यन्तपदे स्थिता । रूपं परिमितेवासौ भावयत्यविभाविता ॥ १५ ॥

svasvabhāvaṃ viditvainamādyantapade sthitā| rūpaṃ parimitāvāsau bhāvayatyavibhāvitā || 15 ||

Knowing its own nature this way, resting in a state that has no beginning and no end, it imagines a form as if it were limited, though it is not really made limited at all.

अपने इस स्वभाव को जानते हुए, जिसका न कोई आरंभ है न अंत, यह शक्ति एक ऐसा रूप कल्पना करती है जो सीमित जैसा लगता है, जबकि यह असल में सीमित नहीं होती।

4.42.16

यदैवंभावितं रूपं तया परमसत्तया । तदैवैनामनुगता नामसंख्यादिका दृशः ॥ १६ ॥

yadaivaṃbhāvitaṃ rūpaṃ tayā paramasattayā | tadaivaināmanugatā nāmasaṃkhyādikā dṛśaḥ || 16 ||

The moment that supreme reality imagines a form like this, name and number and all such things, the marks of everything we see, follow right behind it.

जैसे ही वह परम सत्ता इस तरह एक रूप की कल्पना करती है, वैसे ही नाम, संख्या और ऐसी बाकी सब चीज़ें, जो हर दिखने वाली वस्तु की पहचान होती हैं, उसके पीछे पीछे आ जाती हैं।

4.42.17

चिदेवैतदवस्त्वेव व्यतिरिक्ता तथात्मनः । अनन्ता तद्गतैवाशु लहरीव महार्णवात् ॥ १७ ॥

cideva itadavastveva vyatiriktā tathātmanaḥ | anantā tadgataivāśu laharīva mahārṇavāt || 17 ||

This is nothing but consciousness itself, not a separate thing at all, though it looks different from the Self. It springs up endlessly and instantly out of that Self, just as a wave rises from the great ocean.

यह वास्तव में चेतना ही है, कोई अलग चीज़ नहीं, फिर भी यह आत्मा से अलग दिखाई देती है। यह उसी आत्मा से तुरंत और लगातार उठती रहती है, ठीक वैसे ही जैसे विशाल समुद्र से एक लहर उठती है।

4.42.18

यथा कटककेयूरैर्भेदो हेम्नो विलक्षणः । तथात्मनश्चितो रूपं भावयन्त्याः स्वमांशिकम् ॥ १८ ॥

yathā kaṭakakeyūrairbhedo hemnovilakṣaṇaḥ | tathātmanaścito rūpaṃ bhāvayantyāḥ svamāṃśikam || 18 ||

Just as gold looks different once it is shaped into a bangle or an armlet, though it is still only gold, so the shape that the Self's own consciousness imagines is really just a part of itself.

जैसे सोना कंगन या बाजूबंद बनने पर अलग दिखने लगता है, पर होता वह सोना ही है, वैसे ही आत्मा की चेतना जो रूप कल्पना करती है, वह असल में उसी का एक हिस्सा भर होता है।

4.42.19

यथा दीपेन दीपानां जातानामात्मनां तथा । देशकालकलामात्रभेदः स्वाभाविकश्चितेः ॥ १९ ॥

yathā dīpena dīpānāṃ jātānāmātmanāṃ tathā | deśakālakalāmātrabhedaḥ svābhāvikaściteḥ || 19 ||

Just as one lamp can light other lamps, and each flame then seems separate, so it is with the many selves born from consciousness, they differ only in place, time, and degree. That is simply consciousness's own nature.

जैसे एक दीये से दूसरे दीये जलाए जाते हैं, और फिर हर लौ अलग जैसी लगती है, वैसे ही चेतना से पैदा हुए अलग अलग जीव भी होते हैं, इनमें फर्क सिर्फ जगह, समय और मात्रा का होता है। यह चेतना का अपना स्वाभाविक ढंग है।

4.42.20

देशकालपरिस्पन्दशक्तिसन्दीपिताथ चित् । संकल्पमनुधावन्ती प्रयाति कलनापदम् ॥ २० ॥

deśakālaparispandaśaktisandīpitātha cit | saṃkalpamanudhāvantī prayāti kalanāpadam || 20 ||

Then consciousness, stirred up by the power of vibration moving through place and time, starts chasing after its own intentions and thoughts, and so reaches the state of seeing things as separate objects.

फिर चेतना, जगह और समय में चलने वाली हलचल की शक्ति से जगकर, अपने ही संकल्पों और विचारों के पीछे दौड़ने लगती है, और इस तरह चीज़ों को अलग अलग वस्तुओं की तरह देखने की अवस्था में पहुँच जाती है।

4.42.21

विकल्पकलिताकारं देशकालक्रियास्पदम्। चितो रूपं महाबाहो क्षेत्रज्ञ इति कथ्यते ॥ २१ ॥

vikalpakalitākāraṃ deśakālakriyāspadam | cito rūpaṃ mahābāho kṣetrajña iti kathyate || 21 ||

This form of consciousness, shaped by imagination and serving as the base for place, time, and action, is called, mighty armed Rama, the knower of the field.

हे महाबाहो, चेतना का यह रूप, जो कल्पना से बना है और जगह, समय तथा क्रिया का आधार है, उसे क्षेत्रज्ञ यानी क्षेत्र को जानने वाला कहा जाता है।

4.42.22

क्षेत्रं शरीरमित्याहुस्तदसौ वेत्त्यखण्डितम्। सबाह्याभ्यन्तरं तेन क्षेत्रज्ञ इति कथ्यते ॥ २२ ॥

kṣetraṃ śarīramityāhustadasau vetyakhṇḍitam | sabāhyābhyantaraṃ tena kṣetrajña iti kathyate || 22 ||

The body is called the field. This knower knows it completely, both inside and outside. That is why it is called the knower of the field.

शरीर को क्षेत्र कहा जाता है। यह जानने वाला उसे पूरी तरह जानता है, अंदर और बाहर दोनों तरफ से। इसीलिए इसे क्षेत्रज्ञ यानी क्षेत्र को जानने वाला कहा जाता है।

4.42.23

वासनां कलयन्सोऽपि यात्यहंकारतां पुनः। अहंकारोऽपि निर्णेता कलङ्की बुद्धिरुच्यते ॥ २३ ॥

vāsanāṃ kalayanso'pi yātyahaṃkāratāṃ punaḥ | ahaṃkāro'pi nirṇetā kalaṅkī buddhirucyate || 23 ||

That knower, picking up impressions of old desires, next turns into the ego. And the ego, once it starts to judge and decide, now carrying a stain, is called the intellect.

वह जानने वाला, पुरानी इच्छाओं के संस्कार लेकर, फिर अहंकार बन जाता है। और अहंकार, जब वह तय करने और फैसला लेने लगता है, तब दाग लगा हुआ यह अहंकार बुद्धि कहलाता है।

4.42.24

बुद्धिः संकल्पकलिता प्रयाति मनसः पदम्। मनो घनविकल्पं तु गच्छतीन्द्रियतां शनैः ॥ २४ ॥

buddhiḥ saṃkalpakalitā prayāti manasaḥ padam | mano ghanavikalpaṃ tu gacchatīndriyatāṃ śanaiḥ || 24 ||

The intellect, once it starts forming intentions, turns into the mind. And the mind, becoming thick with imagining, slowly turns into the senses.

बुद्धि, जब वह इरादे और संकल्प बनाने लगती है, तब मन बन जाती है। और मन, कल्पनाओं से घना होकर, धीरे धीरे इंद्रियों में बदल जाता है।

4.42.25

पाणिपादमयं देहमिन्द्रियाणि विदुर्बुधाः। दहोऽसौ ज्ञायते लोके सूयतेऽपि च जीवति ॥ २५ ॥

pāṇipādamayaṃ dehamindriyāṇi vidurbudhāḥ | daho'sau jñāyate loke sūyate'pi ca jīvati || 25 ||

Wise people recognize this body, made of hands and feet, together with the senses. In the world this body is recognized, it is born, and it lives.

बुद्धिमान लोग हाथ पैर से बने इस शरीर को इंद्रियों के साथ पहचानते हैं। दुनिया में यही शरीर पहचाना जाता है, यही जन्म लेता है, और यही जीता है।

4.42.26

एवं जीवो हि संकल्पवासनारज्जुवेष्टितः । दुःखजालपरीतात्मा क्रमादायाति चित्तताम् ॥ २६ ॥

evaṃ jīvo hi saṃkalpavāsanārajjuveṣṭitaḥ | duḥkhajālaparītātmā kramādāyāti cittatām || 26 ||

In this way the individual soul, tied up by the rope of its own wishes and old desires, its whole being caught in a net of suffering, slowly turns into what is called the personal mind.

इस तरह जीव, अपनी ही इच्छाओं और पुरानी वासनाओं की रस्सी से बंधा हुआ, दुख के जाल में पूरी तरह फँसा हुआ, धीरे धीरे उस अवस्था में पहुँच जाता है जिसे चित्त यानी व्यक्तिगत मन कहा जाता है।

4.42.27

क्रमेण पाकवशतः फलमेति यथान्यताम् । अवस्थयैव नाकृत्या जीवो मलवशात्तथा ॥ २७ ॥

krameṇa pākavaśataḥ phalameti yathānyatām | avasthayaiva nākṛtyā jīvo malavaśāttathā || 27 ||

Just as a fruit, ripening bit by bit, slowly turns into something else, only its condition changes, never its shape, so too the soul changes under the pull of its own impurity.

जैसे कोई फल धीरे-धीरे पकते-पकते बदल जाता है, बस उसकी हालत बदलती है, उसका आकार नहीं, वैसे ही जीव भी अपनी मैल के कारण बदलता रहता है।

4.42.28

जीवोऽहंकारतां प्राप्तस्त्वहंकारश्च बुद्धिताम् । संकल्पजालकलितां मनस्तां बुद्धिरागता ॥ २८ ॥

jīvo'haṃkāratāṃ prāptastvahaṃkāraśca buddhitām | saṃkalpajālakalitāṃ manastāṃ buddhirāgatā || 28 ||

The soul turned into the ego, and the ego turned into the intellect; the intellect then turned into the mind, caught up in a net of thoughts.

जीव अहंकार बन गया, और अहंकार बुद्धि बन गई; फिर बुद्धि मन बन गई, जो विचारों के जाल में उलझा हुआ है।

4.42.29

मनो हि संकल्पमयं संस्थाग्रहणतत्परम् । प्रतियोगिव्यवच्छिन्नप्राप्तिसत्यैरपीहितैः ॥ २९ ॥

mano hi saṃkalpamayaṃ saṃsthāgrahaṇatatparam | pratiyogivyavacchinnaprāptisatyairapīhitaiḥ || 29 ||

This mind is made of thought. It is set on holding fast to fixed ideas, drawn on by real gains that stand out only against their opposites, and pulled by its own wants.

यह मन विचारों से बना है। यह पक्की धारणाओं को पकड़े रहना चाहता है, उन असली फ़ायदों की ओर खिंचता है जो सिर्फ अपने उलटे के मुक़ाबले में पहचाने जाते हैं, और अपनी ही चाहों से खिंचता है।

4.42.30

इच्छाद्याः शक्तयश्चेतो गावो वृषमिवोन्मदम् । अनुधावन्ति दोषाय सरितः सागरं यथा ॥ ३० ॥

icchādyāḥ śaktayaśceto gāvo vṛṣamivonmadam | anudhāvanti doṣāya saritaḥ sāgaraṃ yathā || 30 ||

Desire and the other such urges chase after this mind, the way cows chase a mad bull, running to their own harm, the way rivers run down to the sea.

इच्छा और उस जैसी दूसरी शक्तियाँ इस मन के पीछे दौड़ती हैं, जैसे गायें किसी पागल बैल के पीछे दौड़ती हैं, अपने ही नुक़सान की ओर, जैसे नदियाँ समुद्र की ओर बहती हैं।

4.42.31

इति शक्तिमयं चेतो घनाहंकारतां गतम् । कोशकारक्रिमिरिव स्वेच्छया याति बन्धनम् ॥ ३१ ॥

iti śaktimayaṃ ceto ghanāhaṃkāratāṃ gatam| kośakārakrimiriva svecchayā yāti bandhanam || 31 ||

This mind, made up of such urges, thickened into a solid sense of I, and then it went into its own bondage by its own will, like a silkworm shutting itself inside its cocoon.

ऐसी शक्तियों से बना यह मन घना अहंकार बन गया, और फिर अपनी ही मर्ज़ी से बंधन में चला गया, जैसे रेशम का कीड़ा खुद अपने कोए में बंद हो जाता है।

4.42.32

स्वसंकल्पानुसंधानात्पाशैरिव नयन्वपुः । कष्टमस्मिन्स्वयं बन्धमेत्यात्मा परितप्यते ॥ ३२ ॥

svasaṃkalpānusaṃdhānātpāśairiva nayanvapuḥ| kaṣṭamasmin svayaṃ bandhame tyātmā paritapyate || 32 ||

By following the thread of its own thoughts, as if pulling its own body along with ropes, it walks into this painful bondage all by itself, and the self suffers for it.

अपने ही विचारों के धागे को पकड़कर, जैसे रस्सियों से अपने शरीर को खींचते हुए, यह खुद ही इस दुखभरे बंधन में चला जाता है, और आत्मा इसी वजह से तड़पती है।

4.42.33

बद्धमस्मीति कलयद्विद्यातत्त्वं जहच्छनैः । अविद्यां जनयत्यन्तर्जगज्जङ्गलराक्षसीम् ॥ ३३ ॥

baddhamasmīti kalayadvidyātattvaṃ jahacchanaiḥ| avidyāṃ janayatyantarjagajjaṅgalarākṣasīm || 33 ||

Thinking, I am bound, it slowly lets go of the truth it once knew, and inside itself it breeds ignorance, a wild demoness loose in the world.

यह सोचकर कि मैं बंधा हुआ हूँ, यह धीरे-धीरे अपनी जानी हुई सच्चाई को छोड़ देता है, और अपने अंदर अज्ञान को जन्म देता है, जो दुनिया में घूमती किसी जंगली राक्षसी जैसा है।

4.42.34

स्वसंकल्पिततन्मात्रज्वालाभ्यन्तरवर्ति च । परां विवशतामेति शृङ्खलाबद्धसिंहवत् ॥ ३४ ॥

svasaṃkalpitatanmātrajvālābhyantaravarti ca| parāṃ vivaśatāmeti śṛṅkhalābaddhasiṃhavat || 34 ||

Living inside the flames of the subtle elements it has itself imagined, it becomes utterly helpless, like a lion bound in chains.

अपने ही कल्पना किए हुए सूक्ष्म तत्वों की आग के भीतर रहते हुए, यह बिल्कुल बेबस हो जाता है, जैसे कोई सिंह ज़ंजीरों में जकड़ा हुआ हो।

4.42.35

विचित्रकार्यकर्तृत्वमाहरद्वासनावशात् । स्वेच्छामात्रानुरचिता दशाश्चानुपतत्तथा ॥ ३५ ॥

vicitrakāryakartṛtvaṃ āharadvāsanāvaśāt| svecchāmātrānuracitā daśāścānupatattathā || 35 ||

Under the pull of old habits, it took on the doing of all kinds of strange deeds, and so, one after another, it fell into states shaped by nothing but its own whims.

पुरानी आदतों के असर में, इसने तरह-तरह के अजीब काम करने शुरू कर दिए, और इस तरह, एक के बाद एक, यह अपनी ही सनक से बनी हालतों में गिरता चला गया।

4.42.36

क्वचिन्मनः क्वचिद्बुद्धिः क्वचिज्ज्ञानं क्वचित्क्रियाः । क्वचिदेतदहंकारः क्वचित्पुर्यष्टकं स्मृतम् ॥ ३६ ॥

kvacinmanaḥ kvacidruddhiḥ kvacijjñānaṃ kvacitkriyāḥ | kvacidetadahaṃkāraḥ kvacitpuryaṣṭakaṃ smṛtam || 36 ||

Sometimes it is called the mind, sometimes the intellect, sometimes knowledge, sometimes actions; sometimes this same thing is called the ego, and sometimes it is known as the body of eight subtle parts.

कभी इसे मन कहा जाता है, कभी बुद्धि, कभी ज्ञान, कभी कर्म; कभी इसी को अहंकार कहा जाता है, और कभी इसे आठ सूक्ष्म अंगों वाला शरीर कहा जाता है।

4.42.37

क्वचित्प्रकृतिरित्युक्तं क्वचिन्मायेति कल्पितम् । क्वचिन्मलमितिप्रोक्तं क्वचित्कर्मेतिसंस्थितम् ॥ ३७ ॥

kvacitprakṛtirityuktam kvacinmāyeti kalpitam | kvacinmalamitiproktaṃ kvacitkarmetisamsthitam || 37 ||

Sometimes it is called raw nature, sometimes it is pictured as illusion; sometimes it is spoken of as impurity, and sometimes it stands as karma.

कभी इसे मूल प्रकृति कहा जाता है, कभी इसे माया के रूप में देखा जाता है; कभी इसे मैल कहा जाता है, और कभी यह कर्म के रूप में खड़ा होता है।

4.42.38

क्वचिद्बन्धमिति ख्यातं क्वचिच्चित्तमिति स्फुटम् । प्रोक्तं क्वचिदविद्येतिक्वचिदिच्छेति संस्थितम् ॥ ३८ ॥

kvacidbandhamiti khyātaṃ kvaciccittamiti sphuṭam | proktaṃ kvacidavidyeti kvacidiccheti samsthitam || 38 ||

Sometimes it is known as bondage, and sometimes it is clearly called awareness; sometimes it is spoken of as ignorance, and sometimes it stands simply as desire.

कभी इसे बंधन कहा जाता है, और कभी इसे साफ़ तौर पर चेतना कहा जाता है; कभी इसे अज्ञान कहा जाता है, और कभी यह सिर्फ इच्छा के रूप में खड़ा होता है।

4.42.39

तदेतदाबद्धमिह चित्तं राघव दुःखितम् । तृष्णाशोकसमाविष्टं रागायतनमाततम् ॥ ३९ ॥

tadetadābaddhamiha cittaṃ rāghava duḥkhitam | tṛṣṇāśokasamāviṣṭaṃ rāgāyatanamātatam || 39 ||

This same mind, Rama, bound here, is suffering; it is filled with craving and grief, and stretched out wide as the home of attachment.

यही मन, हे राम, यहाँ बंधा हुआ, दुखी है; यह तृष्णा और शोक से भरा हुआ है, और आसक्ति के घर के रूप में दूर तक फैला हुआ है।

4.42.40

जरामरणमोहान्तर्भवभावनयाहतम् । ईहितानीहितैर्ग्रस्तमविद्यारागरञ्जितम् ॥ ४० ॥

jarāmaraṇamohāntarbhavabhāvanayāhatam | īhitānīhitairgrastamavidyārāgaraṅjitam || 40 ||

It is struck by the thought of a self caught up in old age, death, and confusion; it is seized by everything it wants and does not want; and it is dyed through with ignorance and attachment.

यह बुढ़ापे, मृत्यु और मोह में फँसे किसी अस्तित्व के विचार से चोटिल है; यह हर उस चीज़ से जकड़ा हुआ है जो यह चाहता है और जो नहीं चाहता; और यह अज्ञान और आसक्ति में पूरी तरह रंगा हुआ है।

4.42.41

इच्छासंक्षुभिताकारं कर्मवृक्षवनाङ्कुरम् । सुविस्मृतोत्पत्तिपदं कल्पितानर्थकल्पितम् ॥ ४१ ॥

icchāsaṃkṣubhitākāraṃ karmavṛkṣavanāṅkuram | suvismṛtotpattipadaṃ kalpitānarthakalpitam || 41 ||

Its shape stirred up by desire, it is the sprout from which the whole forest of the trees of karma grows; it has quite forgotten the place it came from, and out of its own fancy it keeps inventing new troubles for itself.

इच्छा से हिला हुआ इसका रूप, यह वह अंकुर है जिससे कर्म के पेड़ों का पूरा जंगल उगता है; यह अपने जन्मस्थान को बिल्कुल भूल चुका है, और अपनी ही कल्पना से यह अपने लिए नई-नई मुसीबतें गढ़ता रहता है।

4.42.42

कोशकारवदाबद्धं शोकाकारपदं गतम् । तन्मात्रवृन्दावयवमनन्तनरकातपम् ॥ ४२ ॥

kośakāravadābaddhaṃ śokākārapadaṃ gatam | tanmātravṛndāvayavamanantanarakātapam || 42 ||

Shut in like a silkworm in its cocoon, it has settled into the shape of sorrow; its limbs are made from a mass of the subtle elements, and it carries the endless burning heat of hell.

रेशम के कीड़े की तरह अपने ही घेरे में बंद, यह दुख के रूप में जा टिका है; इसके अंग सूक्ष्म तत्वों के ढेर से बने हैं, और यह नरक की अंतहीन जलन को ढोता है।

4.42.43

स्वदृश्यमपि शैलेन्द्रसमभारभयावहम् । जरामरणशाखाढ्यं संसारविषदुर्द्रुमम् ॥ ४३ ॥

svadṛśyamapi śailendrasamabhārabhayāvaham | jarāmaraṇaśākhāḍhyaṃ saṃsāraviṣadurdrumam || 43 ||

Even though it is only something it sees within itself, it brings a fear as crushing as the weight of the greatest mountain. Loaded with the branches of old age and death, it is the poisonous, evil tree of this world of birth and death.

यह अपने ही भीतर देखी जाने वाली चीज़ भर है, फिर भी यह सबसे बड़े पहाड़ जैसा भारी डर ले आता है। बुढ़ापे और मृत्यु की शाखाओं से लदा हुआ, यह संसार का ज़हरीला, बुरा पेड़ है।

4.42.44

इमं संसारमखिलमाशापाशविधायकम् । दधदन्तः फलैर्हीनं वटधाना वटं यथा ॥ ४४ ॥

imaṃ saṃsāramakhilamāśāpāśavidhāyakam | dadhadantaḥ phalairhīnaṃ vaṭadhānā vaṭaṃ yathā || 44 ||

It carries within itself this whole world of birth and death, which weaves the ropes of hope, though it shows no fruit of its own, just as a tiny banyan seed holds a whole banyan tree inside it, with no fruit to show.

यह अपने भीतर इस पूरे जन्म-मरण के संसार को ढोता है, जो आशा की रस्सियाँ बुनता है, फिर भी इसका अपना कोई फल नहीं दिखता, जैसे बरगद का एक छोटा-सा बीज अपने भीतर पूरा बरगद का पेड़ छुपाए रहता है, पर फल कोई नहीं दिखता।

4.42.45

चिन्तानलशिखादग्धं कोपाजगरचर्वितम् । कामाब्धिकल्लोलहतं विस्मृतात्मपितामहम् ॥ ४५ ॥

cintānalaśikhādagdhaṃ kopājagaracarvitam | kāmābdhikallolahataṃ vismṛtātmapitāmaham || 45 ||

Burnt by the tongues of flame of anxious worry, chewed up by the python of anger, battered by the waves of the ocean of lust, it has forgotten its own first source.

चिंता की आग की लपटों से जला हुआ, क्रोध के अजगर से चबाया हुआ, वासना के समुद्र की लहरों से पिटा हुआ, यह अपने ही मूल स्रोत को भूल चुका है।

4.42.46

मृगं यूथादिव भ्रष्टं शोकोपहतचेतनम् । पतङ्गकमिव ज्वालादग्धं विषयपावके ॥ ४६ ॥

mṛgaṃ yūthādiva bhraṣṭaṃ śokopahatacetanam | pataṅgakamiva jvālādagdhaṃ viṣayapāvake || 46 ||

Like a deer strayed from its herd, its awareness beaten down by grief; like a moth burnt in the flame, it is consumed in the fire of the senses.

अपने झुंड से भटके हुए हिरण की तरह, इसकी चेतना शोक से कुचली हुई है; आग में जले हुए पतंगे की तरह, यह इंद्रियों की आग में जल रहा है।

4.42.47

छिन्नमूलमिवाम्भोजं परमां म्लानिमागतम् । छिन्नाङ्गमात्मनः स्थानाद्विशेषासङ्गदुःस्थितम् ॥ ४७ ॥

chinnamūlamivāmbhojaṃ paramāṃ mlānimāgatam | chinnāṅgamātmanaḥ sthānādviśeṣāsaṅgaduḥsthitam || 47 ||

Like a lotus with its stem cut, it has withered away completely; torn from its own proper place, it stands unsteady and in distress because of the particular things it clings to.

जड़ से कटे हुए कमल की तरह, यह पूरी तरह मुरझा चुका है; अपनी ही जगह से उखड़ा हुआ, यह अपनी चिपकी हुई चीज़ों की वजह से डगमगाता और परेशान खड़ा है।

4.42.48

विषयादिषु मध्यस्थं चित्ररूपेषु शत्रुषु । दशास्वेतास्वनन्तासु लुठितं संकटास्विति ॥ ४८ ॥

viṣayādiṣu madhyasthaṃ citrarūpeṣu śatruṣu | daśāsvetāsvanantāsu luṭhitaṃ saṅkaṭāsviti || 48 ||

Caught in the middle of the senses and their objects, enemies wearing countless different forms, it tumbles about in these endless, cramped, and painful states.

इंद्रियों और उनके विषयों के बीच में फँसा हुआ, जो अनगिनत रंग-बिरंगे रूपों में दुश्मन हैं, यह इन अंतहीन, तंग और दुखभरी हालतों में लुढ़कता रहता है।

4.42.49

दुःखे निपतितं घोरे विहङ्गः सागरे यथा । स्वबन्धास्थं जगज्जाले शून्ये गन्धर्वपत्तने ॥ ४९ ॥

duḥkhe nipatitaṃ ghore vihaṅgaḥ sāgare yathā | svabandhāsthaṃ jagajjāle śūnye gandharvapattane || 49 ||

It has fallen into terrible suffering, like a bird dropped into the ocean; it sits held by its own bonds in the net of this world, a world as empty as a city in the sky.

यह भयानक दुख में गिरा हुआ है, जैसे कोई पंछी समुद्र में गिर पड़े; यह इस दुनिया के जाल में अपने ही बंधनों से बंधा बैठा है, एक ऐसी दुनिया जो आकाश के किसी शहर जितनी खाली है।

4.42.50

उह्यमानमनास्थाब्धौ मनो विषयविद्रुतम् । उद्धरामरसंकाश मातङ्गमिव कर्दमात् ॥ ५० ॥

uhyamānamanāsthābdhau mano viṣayavidrutam | uddharāmarasaṃkāśa mātaṅgamiva kardamāt || 50 ||

Rescue this mind, you who shine like the gods, it is being swept along in the ocean of unrest, melted away into the objects of the senses, like an elephant stuck in the mud.

इस मन को बचा लो, हे देवताओं जैसे तेजस्वी, यह बेचैनी के समुद्र में बहा जा रहा है, इंद्रियों के विषयों में घुल चुका है, जैसे कोई हाथी दलदल में फँसा हो।

4.42.51

बलीवर्दवदामग्नं मनो मदनपल्वले । आलूनशीर्णावयवं बलाद्राम समुद्धर ॥ ५१ ॥

balīvardavadāmagnaṃ mano madanapalvale | ālūnaśīrṇāvayaṃ balādrāma samuddhara || 51 ||

Its limbs torn and crushed, the mind lies sunk like a bullock in the swamp of lust. Rama, pull it out by force.

इसके अंग फटे और कुचले हुए हैं, यह मन किसी बैल की तरह वासना के दलदल में धँसा पड़ा है। राम, इसे ज़ोर लगाकर बाहर निकालो।

4.42.52

शुभाशुभप्रसरपराहताकृतौ ज्वलज्जरामरणविषादमूर्च्छिते । व्यथेह यस्य मनसि भो न जायते नराकृतिर्जगति स राम राक्षसः ॥ ५२ ॥

śubhāśubhaprasaraparāhatākṛtau jvalajjarāmaraṇaviṣādamūrcchite | vyatheha yasya manasi bho na jāyate narākṛtirjagati sa rāma rākṣasaḥ || 52 ||

Whoever's mind, though battered by the flow of good and bad, and though it faints in the blazing anguish of old age and death, feels no pain from this, that being, Rama, though shaped like a man, is truly a demon in this world.

जिस किसी का मन अच्छे-बुरे के इस बहाव से पिटकर भी, और बुढ़ापे तथा मृत्यु की जलती हुई पीड़ा में बेहोश होकर भी, इससे कोई दुख महसूस नहीं करता, वह इंसान, राम, दिखने में भले आदमी जैसा हो, असल में इस दुनिया में राक्षस है।

Chapter 43

4.43.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । एवं जीवाश्चितो भावा भवभावनयोहिताः । ब्रह्मणः कल्पिताकाराल्लक्षशोऽप्यथ कोटिशः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | evaṃ jīvāścito bhāvā bhavabhāvanayohitāḥ | brahmaṇaḥ kalpitākārāllakṣaśo'pyatha koṭiśaḥ ||1||

Vasishtha said, in this way living beings are just heaps of imagining, held in place by the idea of a separate existence. They rise up out of the imagined shape of Brahman, in hundreds of thousands, even in millions.

वसिष्ठ बोले, इस तरह जीव बस जमा हुई कल्पनाएँ हैं, जो अलग अस्तित्व के खयाल से टिकी हैं। वे ब्रह्म के कल्पित रूप से लाखों में उठते हैं, यहाँ तक कि करोड़ों में भी।

4.43.2

असंख्याताः पुरा जाता जायन्ते चापि वाद्य भोः । उत्पतिष्यन्ति चैवाम्बुकणौघा इव निर्झरात् ॥ २ ॥

asaṃkhyātāḥ purā jātā jāyante cāpi vādya bhoḥ | utpatiṣyanti caivāmbukaṇaughā iva nirjharāt ||2||

Countless beings were born before, are being born now, and go on being born even now, and they will keep springing up too, like drops of water flying up from a waterfall.

अनगिनत जीव पहले भी पैदा हुए, अभी भी पैदा हो रहे हैं, और अभी भी पैदा होते हैं, और आगे भी पैदा होते रहेंगे, जैसे झरने से पानी की बूँदें उछलती रहती हैं।

4.43.3

स्ववासनादशावेशादाशाविवशतां गता । दशास्वतिविचित्रासु स्वयं निगडिताशयाः ॥ ३ ॥

svavāsanādaśāveśādāśāvivśatāṃ gatā | daśāsvativicitrāsu svayaṃ nigaḍitāśayāḥ ||3||

Caught up in their own inner habits, they fall helpless under their own desires. In these many different conditions, they end up putting the chains on their own minds themselves.

अपनी ही पुरानी आदतों में फँसकर, वे अपनी ही इच्छाओं के आगे बेबस हो जाते हैं। इन तरह-तरह की हालतों में, वे खुद ही अपने मन में बेड़ियाँ डाल लेते हैं।

4.43.4

अनारतं प्रतिदिशं देशे देशे जले स्थले । जायन्ते वा म्रियन्ते वा बुद्बुदा इव वारिणि ॥ ४ ॥

anārataṃ pratidiśaṃ deśe deśe jale sthale | jāyante vā mriyante vā budbudā iva vāriṇi ||4||

Without stopping, in every direction, place after place, on water and on land, they are born or they die, like bubbles forming in water.

बिना रुके, हर दिशा में, जगह-जगह, पानी में और ज़मीन पर, वे पैदा होते हैं या मरते हैं, जैसे पानी में बुलबुले बनते हैं।

4.43.5

केचित्प्रथमजन्मानः केचिज्जन्मशताधिकाः । केचिद्वाऽजन्मसंख्याकाः केचिद्धित्रिभवान्तराः ॥ ५ ॥

kecitprathamajanmānaḥ kecicjanmaśatādhikāḥ | kecidvā'janmasaṃkhyākāḥ keciddhitribhavāntarāḥ ||5||

Some are in their very first birth. Some have already had more than a hundred births. Some have had countless births. And some have passed through two or three lives.

कुछ अपने पहले ही जन्म में हैं। कुछ सौ से ज़्यादा जन्म ले चुके हैं। कुछ के जन्मों की गिनती ही नहीं है। और कुछ दो-तीन जन्मों से गुज़र चुके हैं।

4.43.6

भविष्यज्जातयः केचित्केचिद्भूतभवोद्भवाः। वर्तमानभवाः केचित्केचित्त्वभवता गताः ॥ ६ ॥

bhaviṣyajjātayaḥ kecitkecidbhūtabhavodbhavāḥ| vartamānabhavāḥ kecitkecittvabhavatā gatāḥ || 6 ||

Some have a birth still to come. Some arose out of a past life. Some exist right now. But some have gone into non-existence altogether.

कुछ का जन्म अभी आना बाकी है। कुछ पिछले जन्म से आए हैं। कुछ अभी मौजूद हैं। लेकिन कुछ का तो अस्तित्व ही मिट चुका है।

4.43.7

केचित्कल्पसहस्राणि जायमानाः पुनः पुनः। एकामेवास्थिता योनिं केचिद्योन्यन्तरं श्रिताः ॥ ७ ॥

kecitkalpasahasrāṇi jāyamānāḥ punaḥ punaḥ| ekāmevāsthitā yoniṃ kecidyonyantaraṃ śritāḥ || 7 ||

Some are born again and again for thousands of world ages, staying each time in the same kind of womb. Others take on a different kind of birth each time.

कुछ हज़ारों युगों तक बार-बार जन्म लेते हैं, हर बार एक ही तरह की कोख में। कुछ हर बार दूसरी तरह का जन्म लेते हैं।

4.43.8

केचिन्महादुःखसहाः केचिदल्पोदयाः स्थिताः। केचिदत्यन्तमुदिताः केचिदर्कादिवोदिताः ॥ ८ ॥

kecinmahāduḥkhasahāḥ kecidalpodayāḥ sthitāḥ| kecidatyantamuditāḥ kecidarkādivoditāḥ || 8 ||

Some bear great suffering. Some remain of little standing. Some rise to the very highest position. And some shine like the rising sun.

कुछ बड़ा दुख झेलते हैं। कुछ की हैसियत छोटी ही रहती है। कुछ सबसे ऊँचे पद तक पहुँच जाते हैं। और कुछ उगते सूरज की तरह चमकते हैं।

4.43.9

केचित्किंनरगन्धर्वविद्याधरमहोरगाः। केचिदर्केन्द्रवरुणास्त्र्यक्षाधोक्षजपद्मजाः ॥ ९ ॥

kecitkiṃnaragandharvavidyādharmahoragāḥ| kecidarkendravaruṇāstryakṣādhokṣajapadmajāḥ || 9 ||

Some are kinnaras, gandharvas, vidyadharas, or great serpents. Some are the Sun, Indra, Varuna, the three eyed Shiva, Vishnu who is beyond the senses, or Brahma born from the lotus.

कुछ किन्नर, गंधर्व, विद्याधर या बड़े नाग हैं। कुछ सूर्य, इंद्र, वरुण, तीन आँखों वाले शिव, इंद्रियों से परे विष्णु, या कमल से जन्मे ब्रह्मा हैं।

4.43.10

केचित्कूश्माण्डवेतालयक्षरक्षःपिशाचकाः। केचिद्ब्राह्मणभूपाला वैश्यशूद्रगणाः स्थिताः ॥ १० ॥

kecitkūśmāṇḍavetālayakṣarakṣaḥpiśācakāḥ| kecidbrāhmaṇabhūpālā vaiśyaśūdragṇāḥ sthitāḥ || 10 ||

Some are kushmanda goblins, vetala spirits, yakshas, rakshasa demons, or flesh eating pishachas. Some remain brahmins, kings, or groups of vaishyas and shudras.

कुछ कूष्माण्ड भूत, बेताल, यक्ष, राक्षस या पिशाच हैं। कुछ ब्राह्मण, राजा, या वैश्य-शूद्र समूहों के रूप में रहते हैं।

4.43.11

केचिच्छ्रपचचाण्डालकिरातावेशपुष्कसाः। केचित्तृणौषधी केचित्फलमूलपतङ्गकाः ॥ ११ ॥

kecicchrapacacāṇḍālakirātāveśapuṣkasāḥ| kecittṛṇauṣadhī kecitphalamūlapataṅgakāḥ || 11 ||

Some are from low outcaste groups, dog cookers, chandalas, kiratas, and pukkasas. Some are grass and medicinal plants. Some are fruits, roots, or insects.

कुछ नीची जातियों के हैं, जैसे कुत्ता पकाने वाले, चांडाल, किरात, पुक्कस। कुछ घास और औषधीय पौधे हैं। कुछ फल, जड़ें, या कीड़े हैं।

4.43.12

केचित्त्विचत्रलतागुल्मतृणोपलदृशोऽभितः। केचित्कदम्बजम्बीरशालतालतमालकाः ॥ १२ ॥

keciccitralatāgulmatṛṇopaladṛśo'bhitaḥ| kecikadambajambīraśālatālatamālakāḥ || 12 ||

Some appear everywhere as colorful vines, shrubs, grass, or stones. Some are kadamba trees, citron trees, sal trees, palm trees, or tamala trees.

कुछ हर तरफ रंग-बिरंगी बेलों, झाड़ियों, घास, या पत्थरों के रूप में दिखते हैं। कुछ कदंब, नींबू जैसे पेड़, साल, ताड़, या तमाल के पेड़ हैं।

4.43.13

केचिद्विभवसंसारमन्त्रिसामन्तभूमिपाः। केचिच्चीराम्बराच्छन्ना मुनिमौनमुपस्थिताः ॥ १३ ॥

kecadvibhavasaṃsāramantrisāmantabhūmipāḥ| keciccīrāmbarācchannā munimaunamupasthitāḥ || 13 ||

Some, surrounded by worldly wealth, are ministers, feudal lords, or kings. Some, wrapped in bark garments, have taken up the silent life of a sage.

कुछ सांसारिक धन-दौलत के बीच मंत्री, सामंत, या राजा हैं। कुछ पेड़ की छाल के कपड़े पहनकर मुनि की तरह मौन जीवन जीते हैं।

4.43.14

केचिद्भुजङ्गगोनासकृमिकीटपिपीलिकाः। केचिन्मृगेन्द्रमहिषमृगाजचमरैणकाः ॥ १४ ॥

kecibhujangagonāsakṛmikīṭapipīlikāḥ| kecinmṛgendramahiṣamṛgājacamaraiṇakāḥ || 14 ||

Some are snakes, serpents, worms, insects, or ants. Some are lions, buffaloes, deer, goats, yaks, or antelopes.

कुछ साँप, सर्प, कीड़े, कीट, या चींटियाँ हैं। कुछ शेर, भैंस, हिरण, बकरे, याक, या मृग हैं।

4.43.15

केचित्सारसचक्राह्वबलाकाबककोकिलाः। केचित्कमलकह्लारकुमुदोत्पलतां गताः ॥ १५ ॥

kecitsārasacakrāhvabalākābakakokilāḥ| kecikamalakahvārakumudotpalatāṃ gatāḥ || 15 ||

Some are sarus cranes, ruddy geese, herons, storks, or cuckoos. Some have become lotuses, the day lotus, the white water lily, the night lotus, or the blue lotus.

कुछ सारस, चकवा पक्षी, बगुले, या कोयल हैं। कुछ कमल बन गए हैं, जैसे दिन का कमल, सफेद कुमुदिनी, रात का कमल, या नीला कमल।

4.43.16

केचित्कलभमातङ्गवराहवृषगर्दभाः। केचिद्विरेफमशकाः पुत्तिकादंशवंशजाः ॥ १६ ॥

kecitkala bhamātaṅgavarāhavṛṣagardabhāḥ| kecidvirephamaśakāḥ puttikādaṃśavaṃśajāḥ || 16 ||

Some are baby elephants, grown elephants, boars, bulls, or donkeys. Some are born as bees, mosquitoes, termites, or biting flies.

कुछ हाथी के बच्चे, बड़े हाथी, सूअर, बैल, या गधे हैं। कुछ मधुमक्खी, मच्छर, दीमक, या डांस मक्खी बनकर जन्म लेते हैं।

4.43.17

केचिदापद्वलाक्रान्ताः केचित्संपदमागताः। केचित्स्थिताः स्वर्गपुरे केचिन्नरकमास्थिताः ॥ १७ ॥

kecidāpadvalākrāntāḥ kecitsaṃpadamāgatāḥ| kecitsthitāḥ svargapure kecinnarakamāsthitāḥ || 17 ||

Some have been overpowered by disaster. Some have come into great wealth. Some remain in the city of heaven. And some remain in hell.

कुछ पर आपदा हावी हो गई है। कुछ बड़ी दौलत पा गए हैं। कुछ स्वर्ग की नगरी में रहते हैं। और कुछ नरक में हैं।

4.43.18

ऋक्षचक्रगताः केचिद्दृक्षरन्ध्रगताः परे । वातभूताः स्थिताः केचित्केचिद्व्योमपदेस्थिताः ॥ १८ ॥

ṛkṣacakragatāḥ kecidṛkṣarandhragatāḥ pare| vātabhūtāḥ sthitāḥ kecitkecadvyomapadesthitāḥ || 18 ||

Some have become part of the wheel of stars in the sky. Others have gone somewhere among them. Some remain as the wind, and some remain fixed in the open sky.

कुछ आकाश के तारों के चक्र का हिस्सा बन गए हैं। बाकी उन्हीं के बीच कहीं गए हैं। कुछ हवा बनकर रहते हैं, और कुछ खुले आकाश में टिके रहते हैं।

4.43.19

सूर्यांशुषु स्थिताः केचित्केचिदिन्द्वंशुषु स्थिताः । केचित्तृणलतागुल्मरसस्वादुष्ववस्थिताः ॥ १९ ॥

sūryāṃśuṣu sthitāḥ kecitkecidindvaṃśuṣu sthitāḥ| kecittṛṇalatāgulmarasasvāduṣvavasthitāḥ || 19 ||

Some remain in the rays of the sun. Some remain in the rays of the moon. And some live in the sweet sap of grasses, vines, and shrubs.

कुछ सूरज की किरणों में रहते हैं। कुछ चाँद की किरणों में रहते हैं। और कुछ घास, बेलों, और झाड़ियों के मीठे रस में रहते हैं।

4.43.20

जीवन्मुक्ता भ्रमन्तीह केचित्कल्याणभाजनाः । चिरमुक्ताः स्थिताः केचिन्नूनं परिणताः परे ॥ २० ॥

jīvanmuktā bhramantīha kecitskalyāṇabhājanāḥ| ciramuktāḥ sthitāḥ kecinnūnaṃ pariṇatāḥ pare || 20 ||

Some, freed while still alive, wander here in the world as truly blessed people. Some have already been free for a long time. And others, surely, have fully ripened into freedom.

कुछ जीते-जी मुक्त होकर इस दुनिया में सच में धन्य लोगों की तरह घूमते हैं। कुछ बहुत पहले से मुक्त हैं। और कुछ, सच में, मुक्ति की आखिरी पक्की अवस्था तक पहुँच चुके हैं।

4.43.21

केचिच्चिरेण कालेन भविष्यन्मुक्तयः शिवाः । केचिद्विषन्ति चिद्भावाः केवलीभावमात्मनः ॥ २१ ॥

kecicchireṇa kālena bhaviṣyanmuktayaḥ śivāḥ | kecidviṣanti cidbhāvāḥ kevalībhāvamātmanaḥ || 21 ||

Some will become free and blessed only after a long time. And some, even though they are consciousness itself, hate the idea of standing alone as pure self.

कुछ बहुत लंबे समय बाद ही मुक्त और शुभ होंगे। और कुछ, चेतना-स्वरूप होते हुए भी, खुद अकेले शुद्ध आत्मा बनकर रहने के खयाल से नफरत करते हैं।

4.43.22

केचिद्विशालाः ककुभः केचिन्नद्यो महारयाः । केचित्स्त्रियः कान्तदृशः केचित्पण्डनपुंसकाः ॥ २२ ॥

kecidviśālāḥ kakubhaḥ kecinnadyo mahārayāḥ | kecitsstriyaḥ kāntadṛśaḥ kecitpaṇḍanapuṃsakāḥ || 22 ||

Some are the vast directions of space. Some are rivers rushing with great force. Some are women with lovely eyes. And some are eunuchs, neither man nor woman.

कुछ आकाश की विशाल दिशाएँ हैं। कुछ तेज़ बहने वाली नदियाँ हैं। कुछ सुंदर आँखों वाली स्त्रियाँ हैं। और कुछ नपुंसक हैं, न पूरी तरह पुरुष न स्त्री।

4.43.23

केचित्प्रबुद्धमतयः केचिज्जडतराशयाः । केचिज्ज्ञानोपदेष्टारः केचिदात्तसमाधयः ॥ २३ ॥

kecitprabuddhamatayaḥ kecijjaḍatarāśayāḥ | kecijjñānopadeṣṭāraḥ kecidāttasamādhayaḥ || 23 ||

Some have awakened minds, some have very dull, heavy minds. Some teach knowledge to others, and some have reached deep meditation.

किसी की बुद्धि जाग गई है, तो किसी की बुद्धि बहुत भारी और सुस्त है। कोई ज्ञान की शिक्षा देते हैं, तो किसी ने गहरी समाधि पा ली है।

4.43.24

जीवाः स्ववासनावेशविवशाशयतां गताः । एतास्वेतास्ववस्थासु संस्थिता बद्धभावनाः ॥ २४ ॥

jīvāḥ svavāsanāveśavivaśāśayatāṃ gatāḥ | etāsvetāsvavasthāsu saṃsthitā baddhabhāvanāḥ || 24 ||

Souls, overpowered by the grip of their own desires, become helpless in mind. Fixed in these many different states, their thinking stays bound.

जीव अपनी ही वासनाओं की पकड़ में इतने बेबस हो जाते हैं कि उनका मन उनके वश में नहीं रहता। इन अलग-अलग अवस्थाओं में टिके रहकर उनके विचार बंधे रहते हैं।

4.43.25

विहरन्ति जगत्केचिन्निपतन्त्युत्पतन्ति च । कन्दुका इव हस्तेन मृत्युनाऽविरतं हताः ॥ २५ ॥

viharanti jagatkecin nipatantyutpatanti ca | kandukā iva hastena mṛtyunā'viratam hatāḥ || 25 ||

Some wander through the world, falling down and rising up, struck without pause by death, like balls struck again and again by a hand.

कोई-कोई संसार में घूमते रहते हैं, कभी गिरते हैं कभी उठते हैं, और मौत उन्हें लगातार मारती रहती है, जैसे हाथ गेंद को बार-बार मारता है।

4.43.26

आशापाशशताबद्धा वासनाभावधारिणः । कायात्कायमुपायान्ति वृक्षात्वृक्षमिवाण्डजाः ॥ २६ ॥

āśāpāśaśatābaddhā vāsanābhāvadhāriṇaḥ | kāyātkāyamupāyānti vṛkṣātvṛkṣamivāṇḍajāḥ || 26 ||

Bound by hundreds of ropes of desire, carrying their inner tendencies with them, they move from one body to another body, like birds moving from one tree to another tree.

इच्छाओं की सैकड़ों रस्सियों में बंधे हुए, अपने भीतर की वासनाओं को साथ लिए हुए, वे एक शरीर से दूसरे शरीर में जाते हैं, जैसे पक्षी एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर जाते हैं।

4.43.27

अनन्तानन्तसंकल्पकल्पनोत्पादमायया । इन्द्रजालं वितन्वाना जगन्मयमिदं महत् ॥ २७ ॥

anantānantasaṅkalpakalpanotpādamāyayā | indrajālaṃ vitanvānā jagannmayamidaṃ mahat || 27 ||

Through the illusion that keeps producing endless, endless thoughts and imaginings, this whole great world, spread out like a magic show, comes into being.

अनगिनत विचारों और कल्पनाओं को लगातार पैदा करने वाली माया के कारण ही यह पूरा बड़ा जगत, एक जादू के खेल की तरह फैला हुआ, बना रहता है।

4.43.28

तावद्भ्रमन्ति संसारे वारिण्यावर्तराशयः । यावन्मूढा न पश्यन्ति स्वमात्मानमनिन्दितम् ॥ २८ ॥

tāvadbhramanti saṃsāre vāriṇyāvartarāśayaḥ | yāvanmūḍhā na paśyanti svamātmānamaninditam || 28 ||

Just as masses of whirlpools keep turning in water, so the deluded keep wandering in this world of birth and death, for as long as they do not see their own faultless self.

जैसे पानी में भँवरों के समूह घूमते रहते हैं, वैसे ही मूर्ख लोग इस संसार में तब तक भटकते रहते हैं जब तक वे अपने निर्दोष आत्मा को नहीं देख लेते।

4.43.29

दृष्ट्वात्मानमसत्त्यक्त्वा सत्यामासाद्य संविदम् । कालेन पदमागत्य जायन्ते नेह ते पुनः ॥ २९ ॥

dṛṣṭvātmānamasattyaktvā satyāmāsādya saṃvidam | kālena padamāgatya jāyante neha te punaḥ || 29 ||

Having seen the self, having let go of the unreal, having reached true awareness, and in time having arrived at that state, they are not born here again.

आत्मा को देखकर, झूठ को छोड़कर, सच्ची चेतना को पाकर, और समय के साथ उस अवस्था तक पहुँचकर, वे फिर इस संसार में जन्म नहीं लेते।

4.43.30

भुक्त्वा जन्मसहस्राणि भूयः संसारसंकटे । पतन्ति केचिदबुधाः संप्राप्यापि विवेकिताम् ॥ ३० ॥

bhuktvā janmasahasrāṇi bhūyaḥ saṃsārasaṅkaṭe | patanti kecidabudhāḥ saṃprāpyāpi vivekitām || 30 ||

Having lived through thousands of births, some who are unwise fall back again into the trouble of this world, even after gaining the wisdom to tell the real from the unreal.

हजारों जन्म भोगने के बाद भी, कुछ नासमझ लोग सच और झूठ में फ़र्क़ जानने की समझ पाकर भी, फिर से इस संसार की मुसीबत में गिर जाते हैं।

4.43.31

केचिच्छक्तत्वमप्युच्चैः प्राप्य तुच्छतया धिया । पुनस्तिर्यक्त्वमायान्ति तिर्यक्त्वान्नरकानपि ॥ ३१ ॥

kecicchaktatvamapyuccaiḥ prāpya tucchatayā dhiyā punastiryaktvamāyānti tiryaktvānnarakānapi || 31 ||

Some rise to a position of great power, but because their thinking stays petty, they fall back into the state of an animal, and from being an animal even into hell.

कोई-कोई बहुत बड़ी ताकत तक पहुँच जाते हैं, पर उनकी सोच छोटी और तुच्छ रहने के कारण वे फिर पशु बन जाते हैं, और पशु से गिरकर नरक तक भी चले जाते हैं।

4.43.32

केचिन्महाधियः सन्त उत्पद्य ब्रह्मणः पदात् । तदैव जन्मनैकेन तत्रैवाशु विशन्त्यलम् ॥ ३२ ॥

kecinmahādhiyaḥ santa utpadya brahmaṇaḥ padāt | tadaiva janmanaikena tatraivāśu viśantyalam || 32 ||

Some, being of great intelligence, arise from Brahman, and in that same single birth, quickly and fully enter back into it.

कुछ बहुत बुद्धिमान लोग ब्रह्म से उत्पन्न होकर, उसी एक जन्म में जल्दी ही फिर से पूरी तरह ब्रह्म में समा जाते हैं।

4.43.33

ब्रह्माण्डेष्वितरेष्वन्ये तेष्वन्ये जीवराशयः । प्रयान्तिपद्मोद्भवतामन्ये च हरतामपि ॥ ३३ ॥

brahmāṇḍeṣvitareṣvanye teṣvanye jīvarāśayaḥ | prayāntipadmodbhavatāmanye ca haratāmapi || 33 ||

In other universes, there are yet other multitudes of souls. Among them, some become Brahma, the lotus-born creator, and others even become Shiva.

दूसरे ब्रह्मांडों में भी और जीवों के समूह हैं। उनमें से कोई कमल से जन्मे ब्रह्मा बन जाता है, तो कोई शिव तक बन जाता है।

4.43.34

अन्ये प्रयान्ति तिर्यक्त्वमन्ये च सुरतामपि । अन्येऽपि नागतां राम यथैवेह तथैव हि ॥ ३४ ॥

anye prayānti tiryaktvamanye ca suratāmapi | anye'pi nāgatāṃ rāma yathaiveha tathaiva hi || 34 ||

Others become animals, others even become gods, and others, Rama, become serpents, just as it happens here, so it happens there too.

कोई पशु बन जाता है, कोई देवता तक बन जाता है, और हे राम, कोई नाग बन जाता है, जैसे यहाँ होता है वैसे ही वहाँ भी होता है।

4.43.35

यथेयं हि जगत्सारं तथान्यानि जगन्त्यपि । विद्यन्ते समतीतानि भविष्यन्ति च भूरिशः ॥ ३५ ॥

yatheyaṃ hi jagatsāraṃ tathānyāni jagantyapi | vidyante samatītāni bhaviṣyanti ca bhūriśaḥ || 35 ||

Just as this world truly exists, other worlds also exist in the same way. Many have existed in the past, and many more will come to exist.

जैसे यह जगत सचमुच है, वैसे ही दूसरे जगत भी हैं। पहले भी बहुत जगत हो चुके हैं, और आगे भी बहुत होंगे।

4.43.36

अन्येनान्येन चित्रेण क्रमेणान्येन हेतुना । विचित्राः सृष्टयस्तेषामापतन्ति पतन्ति च ॥ ३६ ॥

anyenānyena citreṇa krameṇānyena hetunā | vicitrāḥ sṛṣṭayasteṣāmāpatanti patanti ca || 36 ||

By one strange sequence of events, and by one different cause, their many varied creations arise and fall.

किसी अनोखे क्रम से और किसी अलग कारण से, उनकी तरह-तरह की सृष्टियाँ बनती हैं और मिट जाती हैं।

4.43.37

कश्चिद्गन्धर्वतां याति कश्चिद्गच्छति यक्षताम् । कश्चित्प्रयाति सुरतां कश्चिदायाति दैत्यताम् ॥ ३७ ॥

kaścidgandharvatāṃ yāti kaścigacchati yakṣatām | kaścitprayāti suratāṃ kaścidāyāti daityatām || 37 ||

One becomes a gandharva, one becomes a yaksha, one becomes a god, one becomes a daitya demon.

कोई गंधर्व बन जाता है, कोई यक्ष बन जाता है, कोई देवता बन जाता है, कोई दैत्य बन जाता है।

4.43.38

येनैव व्यवहारेण ब्रह्माण्डेऽस्मिन्जनाः स्थिताः । तेनैवान्येषु तिष्ठन्ति सन्निवेशविलक्षणाः ॥ ३८ ॥

yenaiva vyavahāreṇa brahmāṇḍe'sminjanāḥ sthitāḥ | tenaivānyeṣu tiṣṭhanti sanniveśavilakṣaṇāḥ || 38 ||

By the very same way of living that people follow in this universe, they live in other universes too, differing only in their setting.

जिस तरह से लोग इस ब्रह्मांड में जीते हैं, उसी तरह वे दूसरे ब्रह्मांडों में भी जीते हैं, बस उनकी जगह और बनावट अलग होती है।

4.43.39

स्वस्वभाववशावेशादन्योन्यपरिघट्टनैः । सृष्टयः परिवर्तन्ते तरङ्गिण्या इवोर्मयः ॥ ३९ ॥

svasvabhāvavaśāveśādanyonyaparighaṭṭanaiḥ | sṛṣṭayaḥ parivartante taraṅgiṇyā ivormayaḥ || 39 ||

Carried away by their own nature, and through their friction with one another, creations keep changing, like waves in a river.

अपने ही स्वभाव के बहाव में बहकर और आपस में एक-दूसरे से टकराकर, सृष्टियाँ बदलती रहती हैं, जैसे नदी में लहरें बदलती रहती हैं।

4.43.40

आविर्भावतिरोभावैरुन्मज्जननिमज्जनैः । सृष्टयः परिवर्तन्ते तरङ्गिण्या इवोर्मयः ॥ ४० ॥

āvirbhāvatirobhāvairunmajjannimajjanaiḥ | sṛṣṭayaḥ parivartante taraṅgiṇyā ivormayaḥ || 40 ||

Through appearing and disappearing, through rising up and sinking down, creations keep changing, like waves in a river.

प्रकट होने और छिप जाने से, उठने और डूबने से, सृष्टियाँ बदलती रहती हैं, जैसे नदी में लहरें बदलती रहती हैं।

4.43.41

निर्यान्त्यविरतं तस्मात्परस्माज्जीवराशयः अनिर्देश्याः स्वसंवेद्यास्तत्रैवाशु स्फुरन्ति च ॥ ४१ ॥

niryāntyavirataṃ tasmātparasmājjīvarāśayaḥ anirdeśyāḥ svasaṃvedyāstatraivāśu sphuranti ca || 41 ||

Multitudes of souls come out endlessly from that Supreme reality. They cannot be described, they are known only to themselves, and they quickly flash forth right there again.

उस परम सत्य से जीवों के समूह लगातार निकलते रहते हैं। उन्हें शब्दों में नहीं बताया जा सकता, वे बस खुद को ही मालूम होते हैं, और वे वहीं फिर से जल्दी प्रकट हो जाते हैं।

4.43.42

दीपादिवालोकदृशः सूर्यादिव मरीचयः कणास्तप्तायस इव स्फुलिङ्गा इव पावकात् ॥ ४२ ॥

dīpādivālokadṛśaḥ sūryādiva marīcayaḥ kaṇāstaptāyasa iva sphuliṅgā iva pāvakāt || 42 ||

Like the glow of light from a lamp, like rays from the sun, like sparks from red-hot iron, like sparks from a flame.

जैसे दीये से रोशनी की चमक निकलती है, जैसे सूरज से किरणें निकलती हैं, जैसे तपे हुए लोहे से चिंगारियाँ निकलती हैं, जैसे आग से चिंगारियाँ निकलती हैं।

4.43.43

कालादिवर्तवश्चित्रा आमोदाः कुसुमादिव शीतला इव वर्षाणुपूरादब्धेरिवोर्मयः ॥ ४३ ॥

kālādivartavaścitrā āmodāḥ kusumādiva śītalā iva varṣāṇupūrādabdheriva ūrmayaḥ || 43 ||

Like the changing seasons that come from time, like fragrance that comes from a flower, like the coolness that comes from a stream of rain, like waves that rise from the sea.

जैसे समय से बदलते हुए मौसम आते हैं, जैसे फूल से खुशबू आती है, जैसे बारिश की धार से ठंडक आती है, जैसे समुद्र से लहरें उठती हैं।

4.43.44

उत्पत्त्योत्पत्त्य कालेन भुक्त्वा देहपरम्पराम् स्वत एव पदे यान्ति निलयं जीवराशयः ॥ ४४ ॥

utpattyoutpattya kālena bhuktvā dehaparamparām svata eva pade yānti nilayaṃ jīvarāśayaḥ || 44 ||

Being born again and again, and in time living through one body after another, the multitudes of souls at last go back, on their own, to their own resting place.

बार-बार जन्म लेकर और समय के साथ एक के बाद एक शरीर भोगकर, जीवों के समूह अंत में अपने आप अपने असली ठिकाने में लौट जाते हैं।

4.43.45

अविरतमियमातता तथोच्चैर्भवति विनश्यति वर्धते मुधैव त्रिभुवनरचनादिमोहमाया परमपदे लहरीव वारिराशौ ॥ ४५ ॥

aviratamiyamātatā tathoccairbhavati vinśyati vardhate mudhaiva tribhuvanaracanādimohamāyā paramapade laharīva vārirāśau || 45 ||

This vast, deluding illusion, which builds the three worlds and everything else, endlessly rises so high, perishes, and grows, all for nothing, within the Supreme itself, like a wave in the mass of the sea's water.

यह फैली हुई, भरमाने वाली माया, जो तीनों लोकों जैसी रचनाएँ बनाती है, बिना रुके ऊँची उठती है, मिट जाती है, और बढ़ती है, और यह सब बेकार ही है, परम तत्व के भीतर, जैसे समुद्र के पानी में एक लहर।

Chapter 44

4.44.1

श्रीराम उवाच । क्रमेणानेन येनाप्ता जीवेन स्थितिरात्मनः । स कथं भगवन्देहं समाधत्तेऽस्थिपञ्जरम् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | krameṇānena yenāptā jīvena sthitirātmanaḥ | sa kathaṃ bhagavandehaṃ samādhatte'sthipañjaram || 1 ||

Sri Rama said: through the process by which a soul settles into being an individual self, how, lord, does it then take on a body, a cage of bones?

श्री राम ने कहा: जिस प्रक्रिया से जीव अपने अलग अस्तित्व में बस जाता है, हे भगवन, उसी से वह हड्डियों के पिंजरे जैसा शरीर कैसे धारण कर लेता है?

4.44.2

श्रीवसिष्ठ उवाच । पूर्वमेव मया प्रोक्तं राम किं नावबुध्यसे । पूर्वापरविचारार्हा शेमुषी क्व गता तव ॥ २ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | pūrvameva mayā proktaṃ rāma kiṃ nāvabudhyase | pūrvāparavicārārhā śemuṣī kva gatā tava || 2 ||

Sri Vasishtha said: I have already told you this before, Rama. Why do you not understand it? Where has your good sense gone, the sense that can weigh what comes before and after?

श्री वसिष्ठ ने कहा: हे राम, यह बात मैं तुम्हें पहले ही बता चुका हूँ। तुम समझते क्यों नहीं? आगे-पीछे की बात सोचने वाली तुम्हारी वह समझ कहाँ चली गई?

4.44.3

यदिदं हि शरीरादि जगत्स्थावरजङ्गमम् । आभासमात्रमेवेतदसत्स्वप्नमिवोत्थितम् ॥ ३ ॥

yadidaṃ hi śarīrādi jagatsthāvarajaṅgamam | ābhāsamātramevetad asatsvapnamivotthitam || 3 ||

This whole world, starting with the body and covering everything still or moving, is only an appearance. It is unreal, risen up like a dream.

यह जो शरीर से लेकर पूरा जगत है, जो कुछ भी स्थिर है और जो कुछ चलता-फिरता है, यह सब केवल एक दिखावा है। यह असत्य है, यह सपने की तरह उठ खड़ा हुआ है।

4.44.4

दीर्घस्वप्नो ह्ययं राम मिथ्यैवानघ दृश्यते । द्विचन्द्रविभ्रमाकारं भ्रमान्तर्भ्रान्तशैलवत् ॥ ४ ॥

dīrghasvapno hyayaṃ rāma mithyai (vānagha dṛśyate | dvicandravibhramākāraṃ bhramāntarbhraṃtaśailavat || 4 ||

This long dream, Rama, sinless one, is seen only as false. It has the shape of the illusion of two moons, like a mountain that seems to whirl because of a dizziness inside the one who watches it.

हे निष्पाप राम, यह लंबा सपना केवल झूठा ही दिखाई देता है। यह वैसा ही है जैसे एक चाँद की जगह दो चाँद दिखने का भ्रम होता है, या जैसे भीतर के चक्कर के कारण पहाड़ घूमता हुआ दिखाई देता है।

4.44.5

प्रशान्ताज्ञाननिद्रस्तु नूनं गलितभावनः । प्रबुद्धचेताः संसारस्वप्नं पश्यन्न पश्यति ॥ ५ ॥

praśāntājñānanidras tu nūnaṃ galitabhāvanaḥ | prabuddhacetāḥ saṃsārasvapnaṃ paśyann na paśyati || 5 ||

But one whose sleep of ignorance has truly ended, whose false imagining has melted away, whose mind has woken up, sees the dream of this world and yet does not take it as real.

परन्तु जिसकी अज्ञान की नींद पूरी तरह टूट चुकी है, जिसका झूठा भाव गल चुका है, जिसका मन जाग चुका है, वह संसार के इस सपने को देखते हुए भी उसे सच नहीं मानता।

4.44.6

स्वभावकल्पितो राम जीवानां सर्वदैव हि । आमोक्षपदसंप्राप्ति संसारोऽस्त्यात्मनोऽन्तरे ॥ ६ ॥

svabhāvakalpito rāma jīvānāṃ sarvadaiva hi | āmokṣapadasaṃprāpti saṃsāro'styātmano'ntare || 6 ||

Rama, this cycle of birth and death is always something made up by each soul's own nature. It exists within the self only until the state of liberation is reached.

हे राम, यह संसार हमेशा से हर जीव के अपने स्वभाव की रची हुई चीज़ है। यह आत्मा के भीतर तभी तक रहता है जब तक मोक्ष की स्थिति नहीं मिल जाती।

4.44.7

जीवस्य तरलः काय आवर्तः पयसो यथा । यथा बीजेऽङ्कुरः स्फारः पल्लवः स्वाङ्कुरे यथा ॥ ७ ॥

jīvasya taralaḥ kāya āvartaḥ payaso yathā | yathā bīje'ṅkuraḥ sphāraḥ pallavaḥ svāṅkure yathā || 7 ||

The body of the soul is unsteady, like a whirl in water. It is the way a sprout comes from a seed, the way a leaf spreads out from its own sprout.

जीव का शरीर उतना ही अस्थिर है जितना पानी में उठने वाला भँवर। यह वैसे ही है जैसे बीज से अंकुर फूटता है, और जैसे अपने ही अंकुर से पत्ता फैलता है।

4.44.8

पल्लवे च यथा पुष्पं पुष्पकोशे फलं यथा । यतः स कल्पनारूपो देहोऽस्ति मनसोऽन्तरे ॥ ८ ॥

pallave ca yathā puṣpaṃ puṣpakośe phalaṃ yathā | yataḥ sa kalpanārūpo deho'sti manaso'ntare || 8 ||

The way a flower comes from a shoot, the way a fruit comes from the flower's bud, in the same way this body is only a thought, existing inside the mind.

जैसे पत्ते से फूल निकलता है, और जैसे फूल की कली से फल निकलता है, वैसे ही यह शरीर केवल एक विचार है, जो मन के भीतर मौजूद है।

4.44.9

बहुरूपतया राम यतोऽस्त्येकतमः स्फुटः । स एव प्रतिभासोऽस्य मनसः किल जायते ॥ ९ ॥

bahurūpatayā rāma yato'styekatamaḥ sphuṭaḥ | sa eva pratibhāso'sya manasaḥ kila jāyate || 9 ||

Rama, because the one single thing becomes clearly visible in many forms, that very thing becomes what appears to us as this mind.

हे राम, क्योंकि वह एक ही तत्व अनेक रूपों में स्पष्ट रूप से प्रकट होता है, इसलिए वही तत्व इस मन के रूप में दिखाई देने लगता है।

4.44.10

स एवाशु भवत्येतन्मृत्पिण्डो घटकोपमः । आदिसर्गे पुरा कायः प्रतिभासोऽस्य चोत्तमः ॥ १० ॥

sa evāśu bhavatyetanmṛtpiṇḍo ghaṭakopamaḥ | ādisarge purā kāyaḥ pratibhāso'sya cottamaḥ || 10 ||

That same mind soon turns into this body, a lump of clay shaped like a pot. Long ago, at the very start of creation, the body was its finest appearance.

वही मन शीघ्र ही मिट्टी के उस पिंडे जैसा बन जाता है जैसा घड़ा बनता है। सृष्टि के आरंभ में, बहुत पहले, यह शरीर उसका सबसे उत्तम रूप था।

4.44.11

यस्मादेष विभुर्ब्रह्मा पद्मकोशगृहस्थितः । तत्संकल्पक्रमेणैव ततः स्थितिमुपागता ॥ ११ ॥

yasmādeṣa vibhurbrahmā padmakośagṛhasthitaḥ | tatsaṅkalpakrameṇaiva tataḥ sthitimupāgatā || 11 ||

Because this all-pervading Brahma sits inside the house of the lotus bud, it was through the sequence of his own intention that it then came to be established.

क्योंकि यह सर्वव्यापी ब्रह्मा कमल की कली रूपी घर में बैठा है, इसी से उसके संकल्प के क्रम से यह सब स्थिर होकर बन गया।

4.44.12

इयं सृष्टिरपर्यन्ता मायेव घनमायया । श्रीराम उवाच । जीवो मनःपदं प्राप्य वैरिञ्चं पदमागतः ॥ १२ ॥

iyam sṛṣṭiraparyantā māyeva ghanamāyayā | śrīrāma uvāca | jīvo manaḥpadaṃ prāpya vairiñcaṃ padamāgataḥ || 12 ||

This whole endless creation is like a magic show, made from a thick illusion. Sri Rama said: the soul, on reaching the level of mind, comes to the level of Brahma.

यह पूरी अनंत सृष्टि एक जादू के खेल जैसी है, जो घने माया-भ्रम से बनी है। श्री राम ने कहा: जीव मन के स्तर तक पहुँचकर ब्रह्मा के स्तर तक जा पहुँचता है।

4.44.13

यथा ब्रह्मंस्तथा सर्वं विस्तरेण वदाशु मे । श्रीवसिष्ठ उवाच । ब्राह्मे शृणु महाबाहो शरीरग्रहणे क्रमम् ॥ १३ ॥

yathā brahmaṃstathā sarvaṃ vistareṇa vadāśu me | śrīvasiṣṭha uvāca | brāhme śṛṇu mahābāho śarīragrahaṇe kramam || 13 ||

Since that is so, tell me the whole of it in detail, quickly. Sri Vasishtha said: listen, mighty-armed one, to the process by which a body was taken on, in the case of Brahma.

चूँकि ऐसा है, तो मुझे यह सब विस्तार से शीघ्र बताइए। श्री वसिष्ठ ने कहा: हे महाबाहु, सुनो, ब्रह्मा के मामले में शरीर धारण करने की प्रक्रिया क्या है।

4.44.14

निदर्शनेन तेनैव जागतीं ज्ञास्यसि स्थितिम् । दिक्कालाद्यनवच्छिन्नमात्मतत्त्वं स्वशक्तितः ॥ १४ ॥

nidarśanena tenaiva jāgatīṃ jñāsyasi sthitim | dikkālādyanavacchinnamātmatattvaṃ svaśaktitaḥ || 14 ||

By that same example you will come to know how the world stands, how the true nature of the self, unbound by direction or time, exists through its own power.

इसी एक उदाहरण से तुम जान जाओगे कि यह जगत कैसे टिका हुआ है, और कैसे आत्मा का असली स्वरूप, जो दिशा और काल से बंधा नहीं है, अपनी ही शक्ति से बना रहता है।

4.44.15

लीलयैव यदादत्ते दिक्कालकलितं वपुः । तदैव जीवपर्यायं वासनावेशतत्परम् ॥ १५ ॥

līlayaiva yadādatte dikkālakalitaṃ vapuḥ | tadaiva jīvaparyāyaṃ vāsanāveśatatparam || 15 ||

The very moment it takes on, just as a kind of play, a body bound by place and time, that same moment it becomes an individual soul, caught up in the pull of its own desires and habits.

जिस क्षण वह केवल खेल-खेल में देश और काल से बंधा हुआ शरीर धारण करता है, उसी क्षण वह एक जीव बन जाता है, जो अपनी वासनाओं और आदतों में उलझा रहता है।

4.44.16

मनः संपद्यते लोलं कलनाकलनोन्मुखम् । कलयन्ती मनःशक्तिरादौ भावयति क्षणात् ॥ १६ ॥

manaḥ saṃpadyate lolaṃ kalanākalanonmukham | kalayantī manaḥśaktirādau bhāvayati kṣaṇāt || 16 ||

The mind turns restless, ready both to seize hold of things and to let them slip. This power of the mind, always busy shaping, first pictures something in a single instant.

मन चंचल हो उठता है, वह किसी चीज़ को पकड़ने और छोड़ने दोनों के लिए तैयार रहता है। यही मन की शक्ति, जो सदा कुछ न कुछ गढ़ती रहती है, सबसे पहले एक ही क्षण में कोई चीज़ गढ़ लेती है।

4.44.17

आकाशभावनामच्छां शब्दबीजरसोन्मुखीम् । ततस्तां घनतां यातं घनस्पन्दक्रमान्मनः ॥ १७ ॥

ākāśabhāvanāmaccchāṃ śabdabījarasonmukhīm | tatastāṃ ghanatāṃ yātaṃ ghanaspandakramānmanaḥ || 17 ||

It first imagines a clear, empty space, leaning toward the seed of sound. Then, through a sequence of thickening vibrations, the mind makes that space grow dense.

वह पहले एक साफ़, खाली आकाश जैसी कल्पना करता है, जो ध्वनि के बीज की ओर झुकी होती है। फिर मन, गाढ़े कंपनों की एक क्रमिक शृंखला से, उस आकाश को घना बना देता है।

4.44.18

भावयत्यनिलस्पन्दं स्पर्शबीजरसोन्मुखम् । ताभ्यामाकाशवाताभ्यामदृष्टाभ्यां मनोदृशा ॥ १८ ॥

bhāvayatyani laspandaṃ sparśabījarasonmukham | tābhyāmākāśavātābhyāmadṛṣṭābhyāṃ manodṛśā || 18 ||

It then imagines the movement of wind, leaning toward the seed of touch. Ether and wind are both unseen by the eye; they exist only as seen by the mind.

फिर वह हवा की हलचल की कल्पना करता है, जो स्पर्श के बीज की ओर झुकी होती है। आकाश और हवा, ये दोनों आँखों से नहीं दिखते; ये केवल मन की दृष्टि से ही दिखाई देते हैं।

4.44.19

शब्दस्पर्शस्वरूपाभ्यां संघाताज्जन्यतेऽनलः । मनस्तद्धनतां प्राप्य ततो भावयति क्षणात् ॥ १९ ॥

śabdasparśasvarūpābhyāṃ saṃghātājjanyate'nalaḥ | manastaddhanatāṃ prāpya tato bhāvayati kṣaṇāt || 19 ||

From the meeting of these two, one whose nature is sound and one whose nature is touch, fire is born. The mind, having reached that dense form of fire, then imagines something further, in an instant.

ध्वनि-स्वरूप और स्पर्श-स्वरूप, इन दोनों के मेल से आग उत्पन्न होती है। मन, आग के इस घने रूप तक पहुँचकर, फिर एक ही क्षण में आगे की कल्पना करता है।

4.44.20

प्राकाश्यममलालोकमालोकस्तेन वर्धते । मनस्तावद्गुणगतं रसतन्मात्रवेदनम् ॥ २० ॥

prākāśyamamalālokamālokastena vardhate | manastāvadguṇagataṃ rasatanmātravedanam || 20 ||

Fire brings brightness, a clear, spotless light, and by that light shines even more. The mind then moves on to another quality, sensing the subtle trace of taste.

आग से चमक और एक निर्मल, साफ़ रोशनी आती है, और उस रोशनी से प्रकाश और बढ़ जाता है। इसके बाद मन एक और गुण की ओर बढ़ता है और स्वाद के सूक्ष्म भाव को महसूस करता है।

4.44.21

क्षणार्धेन त्वपां शैत्यं जलसंवित्ततो भवेत्ततस्तादृग्गुणगतं मनो भावयति क्षणात् ॥ २१ ॥

kṣaṇārdhena tvapāṃ śaityaṃ jalasaṃvittato bhavettatastādṛgguṇagataṃ mano bhāvayati kṣaṇāt || 21 ||

In half an instant, the coolness of water appears, and from this comes the sense of water. The mind, moving into that same kind of quality, then imagines further, in an instant.

आधे क्षण में पानी की ठंडक प्रकट होती है, और इससे पानी का एहसास पैदा होता है। मन उसी तरह के गुण में जाकर, फिर एक ही क्षण में आगे की कल्पना करता है।

4.44.22

स्वरूपं गन्धवत्स्थूलं येनोदेष्यति मेदिनीअथेत्थंभूततन्मात्रवेष्टितं तनुतां जहत् ॥ २२ ॥

svarūpaṃ gandhavatsthūlaṃ yenodeṣyati medinīathetthaṃbhūtatanmātraveṣṭitaṃ tanutāṃ jahat || 22 ||

It then imagines a solid form with smell, and from this the earth will arise. Wrapped in this subtle trace, that form gives up its fineness and starts to thicken.

फिर वह गंध वाला एक ठोस रूप कल्पना करता है, जिससे धरती उत्पन्न होगी। इस सूक्ष्म अंश में लिपटकर, वह रूप अपनी सूक्ष्मता छोड़कर स्थूल होने लगता है।

4.44.23

वपुर्वह्निकणाकारं स्फुरितं व्योम्नि पश्यतिअहंकारकलायुक्तं बुद्धिबीजसमन्वितम् ॥ २३ ॥

vapurvahnikaṇākāraṃ sphuritaṃ vyomni paśyatiahaṃkārakalāyuktaṃ buddhibījasamanvitam || 23 ||

It sees a body like a spark of fire, flickering in the open sky, joined with a trace of ego, and carrying within it the seed of intellect.

वह एक ऐसा शरीर देखता है जो आग की एक चिंगारी जैसा है, जो खुले आकाश में टिमटिमा रहा है, जिसमें अहंकार का एक अंश जुड़ा है, और जिसमें बुद्धि का बीज भी मौजूद है।

4.44.24

तत्पुर्यष्टकमित्युक्तं भूतहृत्पद्मषट्पदम्तस्मिंस्तु तीव्रसंवेगाद्भावयद्भास्वरं वपुः ॥ २४ ॥

tatpuryaṣṭakamityuktaṃ bhūtahṛtpadmaṣaṭpadamtasmiṃstu tīvrasaṃvegādbhāvayadbhāsvaraṃ vapuḥ || 24 ||

That is called the subtle body of eight, resting like a bee on the lotus of every creature's heart. Within it, then, driven by a strong urge, the mind pictures a shining body.

इसे पुर्यष्टक कहा जाता है, यानी आठ तत्वों से बना सूक्ष्म शरीर, जो हर प्राणी के हृदय-कमल पर भँवरे की तरह बैठा रहता है। इसी के भीतर, एक तीव्र इच्छा के वेग से, मन एक चमकीले शरीर की कल्पना करता है।

4.44.25

स्थूलतामेति पाकेन मनो बिल्वफलं यथामूषास्थद्रुतहेमाभं स्फुरितं विमलाम्बरे ॥ २५ ॥

sthūlatāmeti pākena mano bilvaphalaṃ yathāmūṣāsthadrutahemābhaṃ sphuritaṃ vimalāmbare || 25 ||

Through this ripening, the mind becomes thick and solid, the way a bilva fruit ripens. It shines like gold melted in a mould, glinting in the clear sky.

इस पकने की प्रक्रिया से मन मोटा और ठोस हो जाता है, जैसे बेल का फल पकते पकते मोटा होता है। वह साफ आकाश में पिघले सोने जैसा चमकता है।

4.44.26

सन्निवेशमुपादत्ते तत्तेजः स्वस्वभावतः । तस्मिन्स्वसन्निवेशे च तेजःपुञ्जमये पुनः ॥ २६ ॥

sanniveśamupādatte tattejaḥ svasvabhāvataḥ | tasminsvasanniveśe ca tejaḥpuñjamaye punaḥ || 26 ||

That light takes on a shape by its own nature. And again, within that very shape it has made for itself, formed out of a mass of light,

वह तेज अपने ही स्वभाव से एक आकार ले लेता है। और फिर उसी आकार में, जो प्रकाश के ढेर से बना है,

4.44.27

भजते भावनां स्फारां निश्चितामाततताम्बराम् । ऊर्ध्वं शिरःपीठमयीमधःपादमयीं तथा ॥ २७ ॥

bhajate bhāvanāṃ sphārāṃ niścitāmātatatāmbarām | ūrdhvaṃ śiraḥpīṭhamayīmadhaḥpādamayīṃ tathā || 27 ||

it takes on a wide and clear form spread through the sky, above the seat of a head, and below, in the same way, feet,

वह आकाश में फैला हुआ एक विशाल और स्पष्ट रूप ले लेता है, ऊपर सिर की जगह, और नीचे उसी तरह पैर,

4.44.28

पार्श्वयोर्हस्तसंस्थानां मध्ये चोदरधर्मिणीम् । प्रकटावयवो बालो ज्वालामालामलाकृतिः ॥ २८ ॥

pārśvayorhastasaṃsthānāṃ madhye codaradharmiṇīm | prakaṭāvayavo bālo jvālāmālāmalākṛtiḥ || 28 ||

on the two sides hands, and in the middle a belly. With its limbs now formed, it becomes a child, spotless in shape, like a garland of flame.

दोनों ओर हाथ, और बीच में पेट। इस तरह अंग बन जाने पर वह एक बालक बन जाता है, जिसका रूप निर्मल है, मानो लपटों की माला हो।

4.44.29

मनोरथवशोपात्तवपुस्तिष्ठत्यसावथ । एवं स्ववासनावेशात्कलिताङ्गो मनोमुनिः ॥ २९ ॥

manorathavaśopāttavapustiṣṭhatyasāvatha | evaṃ svavāsanāveśātkalitāṅgo manomuniḥ || 29 ||

That one then stands there, having taken on a body through the force of its own wishing. In this way, through the entry of its own old habits, the mind, quiet as a sage, comes to have a formed body.

वह तब वहां खड़ा हो जाता है, अपनी ही इच्छा के बल से एक शरीर धारण करके। इस तरह अपने पुराने संस्कारों के प्रवेश से, मन एक शांत साधु की तरह एक बना हुआ शरीर पा लेता है।

4.44.30

नयत्युपचयं देहं स्वस्वभावमृतुर्यथा । कालेन स्फुटतामेति भवत्यमलविग्रहः ॥ ३० ॥

nayatyupacayaṃ dehaṃ svasvabhāvamṛturyathā | kālena sphuṭatāmeti bhavatyamalavigrahaḥ || 30 ||

It carries the body toward growth by its own nature, the way a season ripens fruit. In time it becomes fully formed, and becomes a spotless body.

वह अपने स्वभाव से शरीर को बढ़ाता है, जैसे कोई ऋतु फल को पकाती है। समय के साथ वह पूरी तरह बन जाता है और एक निर्मल शरीर बन जाता है।

4.44.31

बुद्धिसत्त्वबलोत्साहविज्ञानैश्वर्यसंस्थितः । स एव भगवान्ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः ॥ ३१ ॥

buddhisattvabalotsāhavijñānaiśvaryasaṃsthitaḥ | sa eva bhagavānbrahmā sarvalokapitāmahaḥ || 31 ||

Full of intelligence, goodness, strength, energy, knowledge and lordship, he is the Lord Brahma himself, the grandfather of all the worlds.

बुद्धि, सात्विकता, बल, उत्साह, ज्ञान और ऐश्वर्य से भरपूर, वही भगवान ब्रह्मा हैं, सारे लोकों के पितामह।

4.44.32

द्रवत्कनकसंकाशः परमाकाशसंभवः । यथासौ परमाकाशे तिष्ठत्यपररूपवान् ॥ ३२ ॥

dravatkanakasaṃkāśaḥ paramākāśasaṃbhavaḥ | yathāsau paramākāśe tiṣṭhatyapararūpavān || 32 ||

Shining like molten gold, born out of the highest space, he stays in that same highest space, now wearing this further form.

पिघले सोने जैसा चमकता हुआ, परम आकाश से पैदा हुआ, वह उसी परम आकाश में रहता है, अब यह नया रूप धारण किए हुए।

4.44.33

जनयत्यात्मनो मोहमात्मस्थं चित्तलीलया । कदाचित्केवलं व्योम परमं पारवर्जितम् ॥ ३३ ॥

janayatyātmano mohamātmasthaṃ cittalīlayā | kadācitkevalaṃ vyoma paramaṃ pāravarjitam || 33 ||

Through the play of the mind, he creates within himself a delusion that belongs to himself alone. At times he is plain empty space, supreme, with no far shore at all.

मन के खेल से वह अपने भीतर ही एक भ्रम पैदा करता है जो उसी का है। कभी वह केवल खाली आकाश होता है, सबसे ऊंचा, जिसका कोई किनारा नहीं।

4.44.34

अनादिमध्यपर्यन्तं कदाचिदमलं पयः । कदाचित्कल्पकालाग्निज्वालाभास्वरमण्डकम् ॥ ३४ ॥

anādimadhyaparyantaṃ kadācidamalaṃ payaḥ | kadācitkalpakālāgnijvālābhāsvaramaṇḍakam || 34 ||

With no beginning, middle or end, at times he is pure water. At times he is a glowing ball ablaze with the flames of the fire that ends an age.

जिसका न आरंभ है, न मध्य, न अंत, कभी वह निर्मल जल होता है। कभी वह एक चमकता हुआ गोला होता है, जो प्रलय की अग्नि की लपटों से जल रहा होता है।

4.44.35

कदाचित्काननं काष्ण्यं कालं कमलकुड्मलम्। अन्यान्यन्यान्यनेकानि प्रतिजन्मावधिः प्रभुः ॥ ३५ ॥

kadācitkānanaṃ kārṣṇyaṃ kālaṃ kamalakuḍmalam | anyānyanyānyanekāni pratijanmāvadhiḥ prabhuḥ || 35 ||

Sometimes a forest, sometimes darkness, sometimes time itself, sometimes a lotus bud. Birth after birth, the lord becomes many other different things.

कभी वन, कभी अंधेरा, कभी काल स्वयं, कभी कमल की कली। जन्म दर जन्म वह प्रभु और भी कई अलग अलग रूप बन जाता है।

4.44.36

कल्पयन्पालयत्येष नानारूपाणि हेलया। तत्रेदंप्रथमत्वेन यदैष ब्रह्मणः पदात् ॥ ३६ ॥

kalpayanpālayatyēṣa nānārūpāṇi hēlayā | tatrēdamprathamatvēna yadaiṣa brahmaṇaḥ padāt || 36 ||

He creates and looks after many forms with ease. This first happened when he, out of the very state of Brahman,

वह सहजता से अनेक रूपों की रचना करता है और उनकी देखभाल करता है। यह पहली बार तब हुआ जब वह, ब्रह्म की उसी अवस्था से,

4.44.37

अवतीर्णस्तदाऽज्ञानात्तथैव सुखमस्मृतम्। गर्भनिद्राव्यपगमे वपुः पश्यति भास्वरम् ॥ ३७ ॥

avatīrṇastadā'jñānāttathaiva sukhamasmṛtam | garbhanidrāvyapagame vapuḥ paśyati bhāsvaram || 37 ||

having then come down, and out of ignorance, he likewise simply felt an ease he had no memory of. When the sleep of the womb passed, he saw a shining body.

तब नीचे उतरकर, अज्ञान के कारण, उसी तरह उसे बिना याद किए एक सहज सुख का एहसास हुआ। जब गर्भ की नींद खत्म हुई, तो उसने एक चमकता हुआ शरीर देखा।

4.44.38

प्राणापानप्रवाहाढ्यं द्रव्यैरिव विनिर्मितम्। रोमकोटिभिराकीर्णं द्वात्रिंशद्दशनान्वितम् ॥ ३८ ॥

prāṇāpānapravāhāḍhyaṃ dravyairiva vinirmitam | romakoṭibhirākīrṇaṃ dvātriṃśaddaśanānvitam || 38 ||

A body full of the flow of the in breath and the out breath, as if built out of many materials, covered with millions of hairs, fitted with thirty two teeth.

वह शरीर प्राण और अपान की धारा से भरपूर था, मानो अनेक द्रव्यों से बनाया गया हो, करोड़ों रोमों से ढका हुआ, बत्तीस दांतों वाला।

4.44.39

त्रिस्थूणं पञ्चदैवत्यमधश्चरणलाञ्छितम्। पञ्चभागं नवद्वारं त्वग्लेपमसृणाङ्गकम् ॥ ३९ ॥

tristhūṇaṃ pañcadaivatyamadhaścaraṇalāñchitam | pañcabhāgaṃ navadvāraṃ tvaglepamasṛṇāṅgakam || 39 ||

Standing on three supports, ruled over by five gods, marked below by feet, made of five parts, having nine doors, coated with skin, its limbs smooth.

तीन आधारों पर टिका हुआ, पांच देवताओं द्वारा शासित, नीचे पैरों से चिह्नित, पांच भागों में बंटा, नौ द्वारों वाला, त्वचा से ढका हुआ, चिकने अंगों वाला।

4.44.40

युक्तमङ्गुलिविंशत्या नखविंशतिलाञ्छितम्। द्विबाहुं द्विस्तनं द्व्यक्षं बह्वक्षिभुजमेव च ॥ ४० ॥

yuktamaṅguliviṃśatyā nakhaviṃśatilāñchitam | dvibāhuṃ dvistanam dvyakṣaṃ bahvakṣibhujameva ca || 40 ||

Fitted with twenty fingers and toes, marked with twenty nails, two armed, two chested, two eyed, and yet at the same time having countless eyes and arms too.

बीस उंगलियों और पंजों से युक्त, बीस नाखूनों से चिह्नित, दो भुजाओं वाला, दो वक्षों वाला, दो आंखों वाला, और साथ ही अनगिनत आंखों और भुजाओं वाला भी।

4.44.41

नीडं चित्तविहङ्गस्य नीडं मन्मथभोगिनः। तृष्णापिशाच्या निलयं जीवकेसरिकन्दरम् ॥ ४१ ॥

nīḍaṃ cittavihangasya nīḍaṃ manmathabhoginaḥ | tṛṣṇāpiśācyā nilayaṃ jīvakesarikandaram || 41 ||

A nest for the bird that is the mind, a nest for the serpent that is desire, a home for the she demon Craving, a cave for the lion that is life.

मन रूपी पक्षी का घोंसला, काम रूपी सांप का घोंसला, तृष्णा रूपी राक्षसी का घर, जीवन रूपी सिंह की गुफा।

4.44.42

अभिमानगजालानं मानसाम्भोजशोभितम्। अथालोच्य वपुर्ब्रह्मा कान्तमात्मीयमुत्तमम् ॥ ४२ ॥

abhimānagajālānaṃ mānasāmbhojaśobhitam | athālocya vapurbrahmā kāntamātmīyamuttamam || 42 ||

A post for tying up the elephant that is pride, adorned with the lotus of the mind. Then, having looked at this body, lovely, his own, and supreme,

अभिमान रूपी हाथी को बांधने का खूंटा, मन रूपी कमल से सुशोभित। फिर इस शरीर को देखकर, जो सुंदर, अपना और सबसे उत्तम था,

4.44.43

चिन्तयामास भगवांस्त्रिकालामलदर्शनः। अस्मिन्नाकाशकुहरे तते मधुपलाञ्छिते ॥ ४३ ॥

cintayāmāsa bhagavāṃstrikālāmaladarśanaḥ | asminnākāśakuhaare tate madhupalāñchite || 43 ||

the Lord, whose sight is clear across past, present and future, thought about this: in this hollow of space, spread out wide and dotted with bees,

भगवान, जिनकी दृष्टि तीनों कालों में निर्मल है, यह सोचने लगे कि इस फैले हुए आकाश की गुहा में, जो भौंरों से भरी है,

4.44.44

अदृष्टपारपर्यन्ते प्रथमं किमभूदिति। इतिचिन्तितवान्ब्रह्मासद्योजातोऽमलात्मदृक् ॥ ४४ ॥

adṛṣṭapāraparyante prathamaṃ kimabhūditi | iticintitavānbrahmāsadyojāto'malātmadṛk || 44 ||

whose far edge can never be seen, what had existed here first. Thinking this, Brahma, only just born, his own sight pure, wondered so.

जिसका दूर का किनारा कभी दिखाई नहीं देता, यहां सबसे पहले क्या था। यही सोचते हुए, अभी अभी जन्मे ब्रह्मा, जिनकी अपनी दृष्टि निर्मल थी, ऐसा विचार करने लगे।

4.44.45

अपश्यत्सर्गवृन्दानि समतीतान्यनेकशः। अथ सस्मार सकलान्सर्वान्धर्मगणान्क्रमात् ॥ ४५ ॥

apaśyatsargavṛndāni samatītānyanekaśaḥ | atha sasmāra sakalānsarvāndharmagaṇānkramāt || 45 ||

He saw the many multitudes of past creations, gone by again and again. Then he called to mind, one after another, every single group of duties.

उसने बीती हुई अनेक सृष्टियों के समूहों को देखा, जो बार बार बीत चुकी थीं। फिर उसने क्रम से सभी धर्मों के समूहों को याद किया।

4.44.46

वसन्तः कुसुमानीव वेदानादाय संस्तुतान्। लीलया कल्पयामास चित्रसंकल्पजाः प्रजाः ॥ ४६ ॥

vasantaḥ kusumānīva vedānādāya saṃstutān | līlayā kalpayāmāsa citrasaṃkalpajāḥ prajāḥ || 46 ||

Like spring bringing out flowers, taking up the well praised Vedas, he shaped, with ease, creatures born out of his own varied wishes.

जैसे वसंत फूल खिलाता है, वैसे ही सराही हुई वेदों को अपनाकर, उसने सहजता से अपनी अलग अलग इच्छाओं से जन्मे जीवों की रचना की।

4.44.47

नानाचारसमाचारं गन्धर्वनगरे यथा। तासां स्वर्गापवर्गार्थं धर्मकामार्थसिद्धये ॥ ४७ ॥

nānācārasamācāraṃ gandharvanagare yathā | tāsāṃ svargāpavargārthaṃ dharmakāmārthasiddhaye || 47 ||

with all kinds of customs and conduct, like a city in the sky. For their sake, so that they might reach heaven and freedom, and gain duty, desire and wealth,

तरह तरह के रीति रिवाजों और आचरण के साथ, जैसे आकाश में बना कोई नगर। उनके लिए, ताकि वे स्वर्ग और मुक्ति पा सकें, और धर्म, काम व अर्थ प्राप्त कर सकें,

4.44.48

अनन्तानि विचित्राणि शास्त्राणि समकल्पयत्। दृष्टिरेवमियं राम सर्गेऽस्मिन्स्थितिमागता ॥ ४८ ॥

anantāni vicitrāṇi śāstrāṇi samakalpayat | dṛṣṭirevamiyaṃ rāma sarge'sminsthitimāgatā || 48 ||

he devised endless and varied scriptures. This is how, Rama, this way of seeing came to settle in this creation.

उसने अनगिनत और विविध शास्त्र रचे। हे राम, इस तरह यह दृष्टि इस सृष्टि में स्थिर हो गई।

4.44.49

विविधविरचनैः क्रियाविलासैः कमलजरूपधरेण चेतसैव। रघुसुत परिकल्पनेन नीता स्थितिमतुलां जगतीह सर्गलक्ष्मीः ॥ ४९ ॥

vividhaviracanaiḥ kriyāvilāsaiḥ kamalajarūpadhreṇa cetasaiva | raghusuta parikalpanena nītā sthitimatulāṃ jagatīha sargalakṣmīḥ || 49 ||

Son of Raghu, through many kinds of working and playful acts, the mind alone, wearing the form of the lotus born Brahma, has through this act of imagining brought the glory of creation here in the world to a state that has no equal.

हे रघुनंदन, अनेक प्रकार की रचनाओं और खेल जैसी क्रियाओं से, केवल मन ने, कमल से जन्मे ब्रह्मा का रूप धारण करके, इसी कल्पना से सृष्टि की शोभा को इस जगत में एक अतुलनीय स्थिति में ला दिया है।

Chapter 45

4.45.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । जगत्संपन्नमेवेदं संपन्नं किंचिदेव न । शून्यमेव च भामात्रं मनोविलसितं स्थितम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jagatsaṃpannamevedaṃ saṃpannaṃ kiṃcideva na | śūnyameva ca bhāmātraṃ manovilasitaṃ sthitam || 1 ||

Vasishtha said: this world seems to have come into being, but really nothing has come into being at all. It is empty, just a flicker of light, nothing but a play of the mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा: यह जगत ऐसा लगता है जैसे बना हो, लेकिन असल में कुछ भी नहीं बना है। यह खाली है, बस एक हल्की सी चमक है, सिर्फ मन का एक खेल है।

4.45.2

न देशकालावेतेन ब्रह्माण्डेनावृतौ स्थितौ । मनागपि महारूपवताप्याकाशरूपिणा ॥ २ ॥

na deśakālāvetena brahmāṇḍenāvṛtau sthitau | manāgapi mahārūpavatāpyākāśarūpiṇā || 2 ||

Space and time are not covered over even slightly by this universe, though the universe has a huge form and is itself made of space.

देश और काल इस ब्रह्मांड से रत्ती भर भी ढके नहीं हैं, हालांकि यह ब्रह्मांड देखने में बहुत बड़ा है और खुद आकाश जैसा ही बना है।

4.45.3

एतत्संकल्पमात्रात्म स्वप्नदृष्टपुरोपमम् । यत्रैव तत्र तच्छून्यं केवलं व्योम संस्थितम् ॥ ३ ॥

etatsaṃkalpamātrātma svapnadṛṣṭapuropamam | yatraiva tatra tacchūnyaṃ kevalaṃ vyoma saṃsthitam || 3 ||

This world is made only of thought, like a city seen in a dream. Right where it appears, it is actually empty, nothing but space.

यह जगत सिर्फ विचार से बना है, जैसे सपने में दिखने वाला कोई शहर। जहां यह दिखता है, वहीं असल में यह खाली है, सिर्फ आकाश है।

4.45.4

अभित्तिरागरचनमपि दृष्टमसन्मयम् । अकृतं कृतमेवैतद्व्योम्नि चित्रं विचित्रकम् ॥ ४ ॥

abhittirāgaracanamapi dṛṣṭamasanmayam | akṛtaṃ kṛtamevaitadvyomni citraṃ vicitrakam || 4 ||

It is like a painting without a wall to hold it, seen, yet made of nothing real. Though never made, this world appears as if made, a strange picture painted on empty space.

यह ऐसा है जैसे बिना दीवार के बनी कोई पेंटिंग, दिखती तो है, पर असल में कुछ भी नहीं है। यह जगत कभी बना ही नहीं, फिर भी ऐसा लगता है जैसे बना हो, आकाश पर बनी एक अजीब सी तस्वीर।

4.45.5

मनसा कल्पितं सर्वं देहादिभुवनत्रयम् । संस्मृतौ कारणं चैतच्चक्षुरालोकने यथा ॥ ५ ॥

manasā kalpitaṃ sarvaṃ dehādibhuvanatrayam | saṃsmṛtau kāraṇaṃ caitaccakṣurālokane yathā || 5 ||

Everything, the body and the three worlds, is imagined by the mind alone. The mind is the cause of memory, just as the eye is the cause of seeing.

सब कुछ, यह शरीर और तीनों लोक, सिर्फ मन ने कल्पना करके बनाया है। मन ही याद आने का कारण है, ठीक जैसे आंख देखने का कारण है।

4.45.6

आभासमात्रं हि जगद्घटावटपटभ्रमैः । आवर्तते न सद्रूपात्पृथक्कुड्यादयः स्थिताः ॥ ६ ॥

ābhāsamātraṃ hi jagaddhaṭāvaṭapaṭabhramaiḥ | āvartate na sadrūpātpṛthakkuḍyādayaḥ sthitāḥ || 6 ||

The world is merely an appearance, like the illusion of a pot, a pit, or a cloth. It does not exist apart from the one true reality, just as a wall and other things like it do not exist apart from clay.

यह जगत सिर्फ एक झलक है, जैसे घड़े, गड्ढे या कपड़े का भ्रम। यह उस एक सच्चाई से अलग नहीं है, ठीक जैसे दीवार और ऐसी ही चीज़ें मिट्टी से अलग नहीं होतीं।

4.45.7

मनसेदं शरीरं हि वासनार्थं प्रकल्पितम् । कृमिकोशप्रकारेण स्वात्मकोश इव स्वयम् ॥ ७ ॥

manasedaṃ śarīraṃ hi vāsanārthaṃ prakalpitam | kṛmikośaprakāreṇa svātmakośa iva svayam || 7 ||

This body is made by the mind alone, for the sake of its own desires, just like a silkworm spins its own cocoon around itself and gets trapped in it.

यह शरीर सिर्फ मन ने अपनी ही इच्छाओं के लिए बनाया है, बिल्कुल जैसे रेशम का कीड़ा अपने चारों ओर खुद अपना कोया बुन लेता है और उसी में फंस जाता है।

4.45.8

न तदस्ति च यन्नाम चेतःसंकल्पमम्बरम् । न करोति न चाप्नोतिदुर्गमप्यतिदुष्करम् ॥ ८ ॥

na tadasti ca yannāma cetḥsaṃkalpamambaram | na karoti na cāpnotidurgamapyatiduṣkaram || 8 ||

There is nothing that the mind's intention fails to do or fails to reach, not the sky itself, not the hardest place, not the most difficult thing.

मन का इरादा ऐसा कुछ नहीं जो वह कर न सके या पा न सके, न आकाश उससे परे है, न कोई बहुत कठिन जगह, न कोई सबसे मुश्किल काम।

4.45.9

सर्वशक्तिधरे देवे का नाम ननु शक्तयः । न संभवन्त्याश्रियन्ते याभिरन्तर्मनोगुहाः ॥ ९ ॥

sarvaśaktidhare deve kā nāma nanu śaktayaḥ | na saṃbhavantyāśriyante yābhirantarmanoguhāḥ || 9 ||

God holds every power there is, so what power could possibly be missing in him? These are the very powers that dwell even in the hidden depths inside the mind.

ईश्वर के पास हर शक्ति है, तो भला कौन सी शक्ति उसमें नहीं होगी? यही शक्तियां मन के भीतर छिपी गहराइयों में भी बसी हुई हैं।

4.45.10

सत्तासत्ते पदार्थानां सर्वेषां सर्वदैव हि । महाबाहो संभवतः सर्वशक्तौ विभौ सति ॥ १० ॥

sattāsatte padārthānāṃ sarveṣāṃ sarvadaiva hi | mahābāho saṃbhavataḥ sarvaśaktau vibhau sati || 10 ||

O mighty-armed one, since the all-powerful, all-pervading one exists, both the existence and the non-existence of all things are always possible.

हे महाबाहु, चूंकि वह सर्वशक्तिमान, सब जगह व्याप्त सत्ता है, इसलिए हर चीज़ का होना और न होना, दोनों हमेशा संभव हैं।

4.45.11

पश्य भावनया प्राप्तं मनसैवात्मजं वपुः । तस्मात्तत्कलनां राम सर्वशक्तियुतां विदुः ॥ ११ ॥

paśya bhāvanayā prāptaṃ manasaivātmajaṃ vapuḥ | tasmāttatkalanāṃ rāma sarvaśaktiyutāṃ viduḥ || 11 ||

Look, Rama, the body is a child born of the mind alone, produced through imagination. That is why the wise call the mind's power one that holds every power there is.

देखो राम, यह शरीर सिर्फ मन से पैदा हुई एक संतान है, कल्पना से बनी है। इसीलिए ज्ञानी लोग मन की इस शक्ति को हर शक्ति से भरपूर मानते हैं।

4.45.12

स्वसंकल्पकृताः सर्वे देवासुरनरादयः । स्वसंकल्पोपशमने शाम्यन्त्यस्नेहदीपवत् ॥ १२ ॥

svasaṃkalpakṛtāḥ sarve devāsuranarādayaḥ | svasaṃkalpopaśamane śāmyantyasnehadīpavat || 12 ||

Gods, demons, humans, and all the rest are made only by their own minds' imagining. When that imagining dies down, they too die out, like a lamp going out for lack of oil.

देवता, राक्षस, मनुष्य और बाकी सब अपने ही मन की कल्पना से बने हैं। जब वह कल्पना शांत हो जाती है, तो वे भी वैसे ही बुझ जाते हैं जैसे तेल न होने पर दीया बुझ जाता है।

4.45.13

आकाशसदृशं सर्वं कलनामात्रजृम्भितम् जगत्पश्य महाबुद्धे सुदीर्घं स्वप्नमुत्थितम् ॥ १३ ॥

ākāśasadṛśaṃ sarvaṃ kalanāmātrajṛmbhitam jagatpaśya mahābuddhe sudīrghaṃ svapnamutthitam || 13 ||

See, wise one, everything is like empty space, spread out by mere mental activity. This world has risen up like one very long dream.

देखो, हे बुद्धिमान, सब कुछ आकाश जैसा है, जो सिर्फ मन की हलचल से फैला है। यह जगत एक बहुत लंबे सपने की तरह उठ खड़ा हुआ है।

4.45.14

न जायते न म्रियते इह किंचित्कदाचन । परमार्थेन सुमते मिथ्या सर्वं तु विद्यते ॥ १४ ॥

na jāyate na mriyate iha kiṃcitkadācana | paramārtheṇa sumate mithyā sarvaṃ tu vidyate || 14 ||

Here, nothing at all is ever born, and nothing ever dies. In ultimate truth, wise one, everything that exists is simply false.

यहां न तो कुछ कभी पैदा होता है, न कुछ कभी मरता है। परम सत्य में, हे सुबुद्धि, जो कुछ भी है, वह सब झूठा ही है।

4.45.15

न वृद्धिमेति नो ह्रासं यन्न किंचित्कदाचन । किं वा तनु भवेत्तत्र कस्य का नाम खण्डना ॥ १५ ॥

na vṛddhimeti no hrāsaṃ yannakiṃcitkadācana | kiṃ vā tanu bhavettatra kasya kā nāma khaṇḍanā || 15 ||

Something that never grows and never lessens, how could it ever shrink? Whose loss would that be? What would breaking it even mean?

जो चीज़ न कभी बढ़ती है, न कभी घटती है, वह भला पतली कैसे हो सकती है? यह किसका नुकसान होगा? इसे तोड़ने का मतलब ही क्या होगा?

4.45.16

भूमभूतं स्वकायोत्थमपश्यन्निपुणं दृशा । राघवाऽमहता स्वान्तः किमज्ञ इव मुह्यसि ॥ १६ ॥

bhūmabhūtaṃ svakāyotthamapaśyannipuṇaṃ dṛśā | rāghavā'mahatā svāntaḥ kimajña iva muhyasi || 16 ||

Raghava, you fail to see clearly, with a sharp eye, that this vast world has risen out of your own body. Why does your small mind get so confused, like someone who knows nothing?

राघव, तुम तेज नज़र से यह साफ नहीं देख पाते कि यह विशाल जगत तुम्हारे अपने ही शरीर से उठा है। तुम्हारा छोटा मन ऐसे क्यों उलझ जाता है, जैसे किसी अनजान व्यक्ति का?

4.45.17

मृगतृष्णा यथा तापान्मनसो निश्चयात्तथा । असन्त इव दृश्यन्ते सर्वे ब्रह्मादयोऽप्यमी ॥ १७ ॥

mṛgatṛṣṇā yathā tāpānmanaso niścayāttathā | asanta iva dṛśyante sarve brahmādayo'pyamī || 17 ||

Just as heat produces the illusion of a mirage, so the mind's own conviction produces all this. All of these, even Brahma and the other gods, appear, in truth, not to exist at all.

जैसे गर्मी से मृगतृष्णा का भ्रम बनता है, वैसे ही मन के अपने पक्के विश्वास से यह सब बनता है। ये सब, यहां तक कि ब्रह्मा और बाकी देवता भी, सच में देखा जाए तो हैं ही नहीं।

4.45.18

द्विचन्द्रविभ्रमप्रख्या मनोरथवदुत्थिताः । मिथ्याज्ञानघनाः सर्वे जगत्याकारराशयः ॥ १८ ॥

dvicandravibhramaprakhyā manorathavadutthitāḥ | mithyājñānaghanāḥ sarve jagatyākārarāśayaḥ || 18 ||

All the countless forms in this world are like seeing two moons where there is only one, they rise up like idle daydreams, made solid only by false knowledge.

इस जगत के सारे अनगिनत रूप वैसे ही हैं जैसे एक चांद को दो चांद देख लेना, ये खाली दिवास्वप्नों की तरह उठते हैं, और सिर्फ गलत समझ से ठोस दिखते हैं।

4.45.19

यथा नौयायिनो मिथ्या स्थाणुस्पन्दमतिस्तथा । असत्यैवोत्थिता नित्यमाकाराणां परम्परा ॥ १९ ॥

yathā nauyāyino mithyā sthāṇuspandamatistathā | asatyai votthitā nityamākārāṇāṃ paramparā || 19 ||

Just as someone riding in a boat wrongly feels that the fixed posts on the shore are moving, in the same way, this endless chain of forms has always risen up as something unreal.

जैसे नाव में बैठा आदमी गलती से समझता है कि किनारे के खंभे हिल रहे हैं, वैसे ही रूपों की यह अंतहीन कड़ी हमेशा से एक झूठी चीज़ के रूप में उठती रही है।

4.45.20

इन्द्रजालमिदं विद्धि मायारचितपञ्जरम् । मनोमननिर्माणं न सन्नासदिव स्थितम् ॥ २० ॥

indrajālamidaṃ viddhi māyāracitapañjaram | manomananirmāṇaṃ na sannāsadiva sthitam || 20 ||

Know this world to be a magic trick, a cage built by illusion, made by the mind's own thinking. It exists as neither fully real nor fully unreal.

इस जगत को एक जादू का खेल समझो, माया से बना एक पिंजरा, जो मन की अपनी सोच से बना है। यह न पूरी तरह सच है, न पूरी तरह झूठ।

4.45.21

ब्रह्मैवेदं जगत्सर्वमन्यतायास्ततः कुतः । प्रसङ्गः कीदृशः कोऽसौ क्व वा सापरितिष्ठति ॥ २१ ॥

brahmaivedaṃ jagatsarvamanyatāyāstatastataḥ kutaḥ | prasaṅgaḥ kīdṛśaḥ ko'sau kva vā sāparitiṣṭhati || 21 ||

This whole world is nothing but Brahman itself. Then where could any otherness come from? What kind of thing would that even be? What would it be, and where would it even exist?

यह पूरा जगत ब्रह्म के सिवा कुछ भी नहीं है। फिर कोई अलगपन कहां से आएगा? वह होगा किस तरह का? वह क्या होगा, और कहां टिकेगा?

4.45.22

अयं गिरिरयं स्थाणुरित्याडम्बरविभ्रमः । मनसो भावनादार्ढ्यादसन्सन्निव लक्ष्यते ॥ २२ ॥

ayaṃ girirayaṃ sthāṇurityāḍambaravibhramaḥ | manaso bhāvanādārḍhyādasansanniva lakṣyate || 22 ||

This is a mountain, this is a post, such grand illusions appear only because the mind's imagining is so firm. What is unreal is seen as if it were real.

यह पहाड़ है, यह खंभा है, ऐसे बड़े बड़े भ्रम सिर्फ इसलिए दिखते हैं क्योंकि मन की कल्पना बहुत पक्की हो जाती है। जो असल में झूठ है, वह सच जैसा दिखने लगता है।

4.45.23

प्रपञ्चपतनारम्भं प्रमत्तस्य इदं जगत् । सकामतृष्णामननं त्यक्त्वान्यद्राम भावय ॥ २३ ॥

prapañcapatanārambhaṃ pramattasya idaṃ jagat | sakāmatṛṣṇāmananaṃ tyaktvānyadrāma bhāvaya || 23 ||

For a careless person, this world is just the start of a fall into endless multiplicity. Give up thinking driven by desire and craving, Rama, and turn your attention to something else.

जो लापरवाह है, उसके लिए यह जगत अनगिनत चीज़ों में गिरने की बस शुरुआत है। हे राम, इच्छा और लालसा से भरी सोच छोड़ दो, और अपना ध्यान कहीं और लगाओ।

4.45.24

यथा स्वप्नो महारम्भो भ्रान्तिरेव न वस्तुतः । दीर्घस्वप्नं तथैवेदं विद्धि चित्तोपपादितम् ॥ २४ ॥

yathā svapno mahārambho bhrāntireva na vastutaḥ | dīrghasvapnaṃ tathaivedaṃ viddhi cittopapāditam || 24 ||

Just as a dream, however grand its events, is only an illusion and nothing real, know that this world too is just like that, one long dream, produced by the mind.

जैसे सपना, चाहे उसमें कितनी भी बड़ी घटनाएं हों, सिर्फ एक भ्रम है, असल में कुछ नहीं, वैसे ही इस जगत को भी वैसा ही समझो, मन का बनाया एक लंबा सपना।

4.45.25

दृश्यमानमहाभोगं गृह्यमाणमवस्तुकम् । कोशमाशाभुजङ्गानां संसाराडम्बरं त्यज ॥ २५ ॥

dṛśyamānamahābhogaṃ gṛhyamāṇamavastukam | kośamāśābhujagānāṃ saṃsārāḍambaraṃ tyaja || 25 ||

It looks like it offers great enjoyment, but when you grasp it, there is no real substance there, it is only a basket holding snakes of desire and hope. Give up this whole showy pretense of worldly life.

यह देखने में बड़े सुख जैसा लगता है, पर जब हाथ में लो तो उसमें कुछ ठोस नहीं है, यह तो बस इच्छा और आशा के सांपों की एक टोकरी है। सांसारिक जीवन का यह सारा दिखावा छोड़ दो।

4.45.26

असदेतदिति ज्ञात्वा माऽत्र भावं निवेशय। अनुधावति न प्राज्ञो विज्ञाय मृगतृष्णिकाम्॥ २६॥

asadetaditi jñātvā mā'tra bhāvaṃ niveśaya | anudhāvati na prājño vijñāya mṛgatṛṣṇikām || 26 ||

Knowing that all this is unreal, do not put your heart into it. A wise person, once he recognizes a mirage for what it is, does not go chasing after it.

यह जानकर कि यह सब झूठा है, इसमें अपना दिल मत लगाओ। समझदार आदमी मृगतृष्णा को पहचान लेने के बाद उसके पीछे नहीं भागता।

4.45.27

स्वसंकल्पात्स्वरूपाढ्यां मनोरथमयीं श्रियम्। योऽनुगच्छति मूढात्मा दुःखस्यैव स भाजनम्॥ २७॥

svasaṃkalpātsvarūpāḍhyāṃ manorathamayīṃ śriyam | yo'nugacchati mūḍhātmā duḥkhasyaiva sa bhājanam || 27 ||

That wealth is only a wish, shaped by a person's own imagination and rich only in appearance. The fool who runs after it becomes nothing but a vessel of sorrow.

वह वैभव सिर्फ मन की कल्पना से बना है, दिखने में भरा-पूरा लगता है पर असल में सिर्फ चाहत है। जो मूर्ख इसके पीछे भागता है, वह सिर्फ दुख का पात्र बन जाता है।

4.45.28

वस्तुन्यसति लोकोऽयं यातु काममवस्तुनि। यस्तु वस्तु परित्यज्य यात्यवस्तु स नश्यति॥ २८॥

vastunyasati loko'yaṃ yātu kāmamavastuni | yastu vastu parityajya yātyavastu sa naśyati || 28 ||

Let this world wander as it pleases among things that do not really exist, even while the real remains unseen. But the man who turns away from the real and goes after the unreal is ruined.

यह जगत् चाहे असत् चीज़ों के पीछे जैसे मर्ज़ी भटकता रहे, भले असली तत्व दिखाई न दे। पर जो व्यक्ति सच्चाई को छोड़कर झूठी चीज़ों के पीछे जाता है, वह बर्बाद हो जाता है।

4.45.29

मनोव्यामोह एवेदं रज्ज्वामहिभयं यथा। भावनामात्रवैचित्र्याच्चिरमावर्तते जगत्॥ २९॥

manovyāmoha evedam rajjvāmahibhayaṃ yathā | bhāvanāmātravaicitryāccciramāvartate jagat || 29 ||

This is nothing but a confusion of the mind, like mistaking a rope for a snake and being afraid. Only because imagination takes so many different forms, the world keeps turning around, again and again, for a long time.

यह सब मन का भ्रम मात्र है, जैसे रस्सी को साँप समझकर डर जाना। सिर्फ कल्पना की तरह-तरह की उलझनों की वजह से यह संसार बार-बार, लंबे समय तक घूमता रहता है।

4.45.30

असदभ्युदितैर्भावैर्जलान्तश्चन्द्रवच्चलैः। वञ्च्यते बाल एवेह न तत्त्वज्ञो भवादृशः॥ ३०॥

asadabhyuditairbhāvairjalāntaścandravaccalaiḥ | vañcyate bāla eva eha na tattvajño bhavādṛśaḥ || 30 ||

Only a child, only a fool, is fooled by things that never really arose, things that flicker like the moon's reflection in water. Someone who knows the truth, a person like you, is not fooled by them.

जो चीज़ें असल में पैदा ही नहीं हुईं, जो पानी में चाँद के प्रतिबिंब की तरह काँपती रहती हैं, उनसे सिर्फ बच्चा या मूर्ख धोखा खाता है। सच जानने वाला, आप जैसा व्यक्ति, इनसे धोखा नहीं खाता।

4.45.31

य इमं गुणसंघातं भावयन्सुखमीहते । प्रमार्ष्टि स जडो जाड्यं वह्निभावनया स्वया ॥ ३१ ॥

ya imaṃ guṇasaṃghātaṃ bhāvayansukhamīhate | pramārṣṭi sa jaḍo jāḍyaṃ vahnibhāvanayā svayā || 31 ||

The dull man who broods over this bundle of qualities and looks for happiness in it is trying to burn away his own dullness merely by picturing a fire in his mind, not by lighting a real one.

जो मूर्ख इस गुणों के समूह यानी संसार पर मनन करके उसमें सुख ढूँढता है, वह ऐसे ही अपनी जड़ता मिटाने की कोशिश कर रहा है जैसे कोई सिर्फ आग की कल्पना करके ठंड दूर करना चाहे, असली आग जलाए बिना।

4.45.32

असदेवेदमाभोगि दृश्यते जलपञ्जरम् । मनोमननिर्माणहृदये नगरं यथा ॥ ३२ ॥

asadevedamābhogi dṛśyate jalapañjaram | manomananirmāṇahṛdaye nagaraṃ yathā || 32 ||

Though this world does not truly exist, it looks vast and full, the way water can form shapes that look like a woven cage, and the way a city seems to stand inside the heart simply because the mind pictures it there.

यह जगत् असल में है ही नहीं, फिर भी भरा-पूरा और विशाल दिखता है, जैसे पानी की कोई बुनी हुई जाली जैसी शक्ल बन जाती है, या जैसे मन सिर्फ सोचकर हृदय में एक नगर बसा लेता है।

4.45.33

इदं चित्तेच्छयोदेति लीयते तदनिच्छया । मिथ्यैवं दृश्यते स्फीतं गन्धर्वनगरं यथा ॥ ३३ ॥

idaṃ cittecchayodeti līyate tadanicchayā | mithyaivaṃ dṛśyate sphītaṃ gandharvanagaraṃ yathā || 33 ||

This world rises when the mind wants it to, and it dissolves when the mind stops wanting it. So it appears grand and full, though falsely, just like a city of the Gandharvas seen in the sky.

यह संसार तब उठता है जब मन चाहता है, और तब मिट जाता है जब मन चाहना छोड़ देता है। इसी तरह यह झूठ-मूठ बड़ा और भरा-पूरा दिखता है, जैसे आकाश में गंधर्वों का नगर दिखता है।

4.45.34

राम नष्टे जगत्यस्मिन्न किंचिदपि नश्यति । युक्तेऽपि च जगत्यस्मिन्न किंचिदपि युज्यते ॥ ३४ ॥

rāma naṣṭe jagatyasminna kiṃcidapi naśyati | yukte'pi ca jagatyasminna kiṃcidapi yujyate || 34 ||

Rama, when this world is destroyed, nothing is really destroyed. And when this world comes into being, nothing is really formed.

हे राम, जब यह जगत् नष्ट होता है, तब असल में कुछ भी नष्ट नहीं होता। और जब यह जगत् बनता है, तब भी असल में कुछ भी नहीं बनता।

4.45.35

मनःप्रकल्पिते भग्ने हृदि विस्तीर्णपत्तने । वृद्धिं चोपगते ब्रूहि किं वृद्धं कस्य किं क्षतम् ॥ ३५ ॥

manaḥprakalpite bhagne hṛdi vistīrṇapattane | vṛddhiṃ copagate brūhi kiṃ vṛddhaṃ kasya kiṃ kṣatam || 35 ||

When a vast city, imagined by the mind in the heart, is destroyed, or when it grows bigger, tell me, what has really grown, whose is it, and what has really been damaged?

जब मन ने हृदय में कल्पना करके एक विशाल नगर बसाया हो, और वह टूट जाए या बढ़ जाए, तो बताओ, असल में क्या बढ़ा, किसका बढ़ा, और क्या नुकसान हुआ?

4.45.36

क्रीडार्थेन यथोदेति बालानां हृदि वर्तनम् । मनसा तद्वदेवेदमुदेत्यविरतं जगत् ॥ ३६ ॥

krīḍārtheṇa yathodeti bālānāṃ hṛdi vartanam | manasā tadvadevedamudetyavirataṃ jagat || 36 ||

Just as children, for the sake of play, dream up a whole make-believe scene in their hearts, in the very same way this world keeps arising, endlessly, out of the mind.

जैसे बच्चे खेलने के लिए अपने मन में एक बनावटी दुनिया गढ़ लेते हैं, ठीक वैसे ही यह जगत् भी मन से लगातार बनता रहता है।

4.45.37

न किंचित्कस्यचिन्नष्टमिन्द्रजालजले यथा । भ्रष्टे नष्टे तथैवास्मिन्संसारे वितथोत्थिते ॥ ३७ ॥

na kiṃcitkasyacinnaṣṭamindrajālajale yathā | bhraṣṭe naṣṭe tathaivāsminsaṃsāre vitathotthite || 37 ||

Just as, when a magician's water-illusion collapses and vanishes, nothing of anyone's is truly lost, in the very same way, when this world, which arose falsely, is destroyed, nothing of anyone's is truly lost.

जैसे जादूगर के पानी के तमाशे के मिट जाने पर किसी का कुछ भी असल में नहीं खोता, ठीक वैसे ही यह जगत् जो झूठ से पैदा हुआ है, उसके नष्ट होने पर भी किसी का कुछ नहीं खोता।

4.45.38

यदसत्तदसत्स्याच्चेन्न किं कस्य किल क्षतम् । ततो हर्षविषादानां संसारे नाम नास्पदम् ॥ ३८ ॥

yadasattadasatsyāccenna kiṃ kasyakilakṣatam | tato harṣaviṣādānāṃ saṃsāre nāma nāspadam || 38 ||

If what is unreal simply turns out to be unreal, then what, indeed, is lost, and to whom? So in this world there is truly no ground at all for joy or for sorrow.

अगर जो असत् है वह असत् ही सिद्ध हो, तो सच में किसका क्या नुकसान हुआ? इसलिए इस संसार में सुख और दुख के लिए कोई असली आधार है ही नहीं।

4.45.39

असदेव यदत्यन्तं तस्मात्किं नाम नश्यति । नाशाभावे हि दुःखस्य कः प्रसङ्गो महामते ॥ ३९ ॥

asadeva yadatyantaṃ tasmātkiṃ nāma naśyati | nāśābhāve hi duḥkhasya kaḥ prasaṅgo mahāmate || 39 ||

What is completely unreal to begin with, what, indeed, is destroyed of it? And when there is no real destruction, wise one, what room is there for any sorrow?

जो चीज़ शुरू से ही पूरी तरह असत् है, उसका आखिर नष्ट क्या होगा? और जब असल में कोई नाश हुआ ही नहीं, तो हे बुद्धिमान, दुख की गुंजाइश ही कहाँ है?

4.45.40

सदेव वा यदत्यन्तं तस्य किं नाम नश्यति । ब्रह्मैवेदं जगत्सर्वं सुखदुःखे किमुत्थिते ॥ ४० ॥

sadeva vā yadatyantaṃ tasya kiṃ nāma naśyati | brahmaivedaṃ jagatsarvaṃ sukhaduḥkhe kimutthite || 40 ||

Or take what is completely real, what, indeed, of it is ever destroyed? This entire world is nothing but Brahman itself, so how could pleasure or pain even arise?

या फिर जो चीज़ पूरी तरह सत् यानी सच है, उसका भी आखिर नष्ट क्या होगा? यह पूरा जगत् ब्रह्म ही है, तो फिर सुख या दुख कैसे पैदा हो सकता है?

4.45.41

असद्वापि यदत्यन्तं वृद्धिः स्यात्तस्य कीदृशी । वृद्धेरभावे हर्षस्य कः प्रसङ्गो महामते ॥ ४१ ॥

asadvāpi yadatyantaṃ vṛddhiḥ syāttasya kīdṛśī | vṛddherabhāve harṣasya kaḥ prasaṅgo mahāmate || 41 ||

Or again, take what is completely unreal, what kind of growth could it ever have? And when there is no real growth, wise one, what room is there for joy?

या जो चीज़ पूरी तरह असत् है, उसकी वृद्धि भला कैसी होगी? और जब असल में कोई वृद्धि हुई ही नहीं, तो हे बुद्धिमान, खुशी की गुंजाइश ही कहाँ है?

4.45.42

सर्वत्रासत्यभूतेऽस्मिन्प्रपञ्चैकान्तकारिणि । संसारे किमुपादेयं प्राज्ञो यदभिवाञ्छतु ॥ ४२ ॥

sarvatrāsatyabhūte'sminprapañcaikāntakāriṇi | saṃsāre kimupādeyaṃ prājño yadabhivāñchatu || 42 ||

In this world, which is false everywhere, which is made entirely of this false multiplicity, what is there worth wanting, that a wise person should desire it?

इस जगत् में, जो हर तरफ से झूठा है, जो पूरी तरह इसी झूठे फैलाव से बना है, ऐसा क्या है जो लेने लायक हो, जिसे कोई समझदार व्यक्ति चाहे?

4.45.43

सर्वत्र सत्यभूतेऽस्मिन्ब्रह्मतत्त्वमयेऽपि च । किं स्यात्त्रिभुवने हेयं प्राज्ञाः परिहरन्तु यत् ॥ ४३ ॥

sarvatra satyabhūte'sminbrahmatattvamaye'pi ca | kiṃ syāttribhuvane heyam prājñāḥ pariharantu yat || 43 ||

And in this world, which is everywhere real, being made entirely of the true nature of Brahman, what is there in the three worlds worth rejecting, that the wise should avoid?

और इस जगत् में, जो हर तरफ से सच है, जो ब्रह्म के ही सच्चे स्वरूप से बना है, तीनों लोकों में ऐसा क्या है जिसे त्यागने लायक समझकर बुद्धिमान लोग छोड़ें?

4.45.44

असत्सद्वा जगद्यस्य तेनासौ सुखदुःखयोः । अगम्य एव मूर्खस्तु तद्विनाशेन दुःखितः ॥ ४४ ॥

asatsadvā jagadyasya tenāsau sukhaduḥkhayoḥ | agamya eva mūrkhas tu tadvināśena duḥkhitaḥ || 44 ||

Whoever truly grasps the world as unreal, or as real, is, because of that understanding, beyond the reach of both pleasure and pain. But the fool is pained by the world's destruction.

जो व्यक्ति जगत् को सचमुच असत् या सत् समझ लेता है, वह इस समझ की वजह से सुख-दुख दोनों की पहुँच से बाहर हो जाता है। पर मूर्ख व्यक्ति जगत् के नाश से दुखी हो जाता है।

4.45.45

आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत्तथा । योऽभिवाञ्छत्यसद्राम तस्यासत्तैव दृश्यते ॥ ४५ ॥

ādāvante ca yannāsti vartamāne'pi tattathā | yo'bhivāñchatyasadrāma tasyāsattaiva dṛśyate || 45 ||

Rama, whatever does not exist at the start and does not exist at the end does not really exist now, in the present, either. The person who longs for that unreal thing shows nothing but his own unreality.

हे राम, जो चीज़ शुरू में भी नहीं थी और अंत में भी नहीं रहेगी, वह अभी वर्तमान में भी असल में नहीं है। जो व्यक्ति उस असत् चीज़ की चाह करता है, वह बस अपनी ही असत्यता दिखाता है।

4.45.46

आदावन्ते च यत्सत्यं वर्तमाने सदेव तत् । यस्य सर्वं सदेव स्यात्तस्य सत्तैव दृश्यते ॥ ॥ ४६ ॥

ādāvante ca yatsatyaṃ vartamāne sadeva tat | yasya sarvaṃ sadeva syāttasya sattaiva dṛśyate || 46 ||

What is true at the beginning and at the end is indeed true now, in the present, as well. For the person for whom everything is real, only his own reality is seen.

जो चीज़ शुरू में भी सच थी और अंत में भी सच रहेगी, वह अभी वर्तमान में भी सच ही है। जिस व्यक्ति के लिए सब कुछ सच ही है, उसकी अपनी सच्चाई ही दिखाई देती है।

4.45.47

असत्यभूतं तोयान्तश्चन्द्रव्योमतलादिकम् । बाला एवाभिवाञ्छन्ति मनोमोहाय नोत्तमाः ॥ ॥ ४७ ॥

asatyabhūtaṃ toyāntaścandravyomatalādikam | bālā evābhivāñchanti manomohāya nottamāḥ || 47 ||

Things that are not real, like the moon reflected in water, or the surface of the sky, only children long for these, and it only confuses the mind. Wise, excellent people do not long for them.

जो चीज़ें असल में झूठी हैं, जैसे पानी में चाँद का प्रतिबिंब या आकाश का दिखने वाला तल, इन्हें सिर्फ बच्चे या मूर्ख ही चाहते हैं, और यह सिर्फ मन को भ्रमित करता है। समझदार और श्रेष्ठ लोग इन्हें नहीं चाहते।

4.45.48

बालो हि विततताकारैर्वस्तुरिक्तैः प्रयोजनैः । संतोषमेत्यनन्ताय दुःखाय न सुखाय तु ॥ ॥ ४८ ॥

bālo hi vitatākārairvasturiktaiḥ prayojanaiḥ | saṃtoṣametyanantāya duḥkhāya na sukhāya tu || 48 ||

The fool indeed finds satisfaction in pursuits that look big and spread out but are empty of any real substance, and this satisfaction leads only to endless sorrow, never to happiness.

मूर्ख व्यक्ति ऐसी चीज़ों में संतोष पाता है जो देखने में बड़ी और फैली हुई लगती हैं पर असल में खोखली होती हैं, और इससे उसे सिर्फ अंतहीन दुख मिलता है, सुख कभी नहीं मिलता।

4.45.49

तस्मान्मा त्वं भवो बालो राम राजीवलोचन । अविनाशमिहालोक्य नित्यमाश्रय सुस्थिरम् ॥ ॥ ४९ ॥

tasmānmā tvaṃ bhavo bālo rāma rājīvalocana | avināśamihālokya nityamāśraya susthiram || 49 ||

So, Rama, lotus-eyed one, do not be a fool. Recognize here what can never be destroyed, and take refuge in that eternal, completely steady reality.

इसलिए, हे राम, हे कमल-नयन, तुम मूर्ख मत बनो। यहाँ उस अविनाशी सत्य को पहचानो, और उस नित्य, पूरी तरह स्थिर तत्व की शरण लो।

4.45.50

असदिदमखिलं मया समेतं त्विति विगणय्य विषादितास्तु मा ते । सदिह हि सकलं मया समेतं त्विति च विलोक्य विषादितास्तु मा ते ॥ ॥ ५० ॥

asadidamakhilaṃ mayā sametaṃ tviti vigṇayya viṣāditāstu mā te | sadiha hi sakalaṃ mayā sametaṃ tviti ca vilokya viṣāditāstu mā te || 50 ||

Think it over. All this is unreal, though it exists joined with me, and do not let that make you sorrowful. Or look at it this way. All this is indeed real, joined with me, and do not let that make you sorrowful either.

यह सोचकर कि यह सब असत् है, फिर भी मुझसे जुड़ा हुआ है, इससे तुम दुखी मत होना। और यह देखकर कि यह सब असल में सत् है, और मुझसे जुड़ा हुआ है, इससे भी तुम दुखी मत होना।

4.45.51

श्रीवाल्मीकिरुवाच । इत्युक्तवत्यथ मुनौ दिवसो जगाम सायंतनाय विधयेऽस्तमिनो जगाम । स्नातुं सभा कृतनमस्करणा जगाम श्यामाक्षये रविकरैश्च सहाजगाम ॥ ५१ ॥

śrīvālmīkiruvāca | ityuktavatya tha munau divaso jagāma sāyaṃtanāya vidhaye'stamino jagāma | snātuṃ sabhā kṛtanamaskarṇā jagāma śyāmākṣaye ravikaraiśca sahājagāma || 51 ||

Sri Valmiki said, when the sage had finished speaking, the day came to an end and gave way to the evening rites, and the sun went down. The assembly bowed to him and went off to bathe. And along with the fading rays of the sun, the darkness of dusk came on.

श्री वाल्मीकि ने कहा, जब मुनि वशिष्ठ यह कहकर रुके, तो दिन ढल गया और शाम की पूजा का समय आ गया, और सूरज डूब गया। सभा में बैठे लोग प्रणाम करके स्नान करने चले गए। और सूरज की किरणों के धुँधलाने के साथ ही शाम का अँधेरा छा गया।

Chapter 46

4.46.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । रम्ये धनेषु दारादौ शोकस्यावसरो हि कः । इन्द्रजालेक्षणादृष्टे नष्टे का परिदेवना ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ramye dhaneṣu dārādau śokasyāvasaro hi kaḥ | indrajālekṣaṇāddṛṣṭe naṣṭe kā paridevanā || 1 ||

Vasishtha said: when wealth, a wife, and things like that seem pleasant, why should there be any grief? When something seen in a magic show is lost, what is there to cry about?

वसिष्ठ बोले: जब धन, पत्नी और ऐसी ही चीज़ें अच्छी लगती हैं, तो दुख का मौका ही कहाँ है? जादू के खेल में जो चीज़ देखी जाती है, वह खो जाए तो उसके लिए रोना कैसा?

4.46.2

गन्धर्वनगरस्यार्थे दूषिते भूषिते तथा । अविद्यांशे सुतादौ वा कः क्रमः सुखदुःखयोः ॥ २ ॥

gandharvanagarasyārthe dūṣite bhūṣite tathā | avidyāṃśe sutādau vā kaḥ kramaḥ sukhaduḥkhayoḥ || 2 ||

A castle built in the sky may fall apart or may be decorated, what does that matter? A son and things like him are only a piece of not knowing the truth, so what real link do they have with pleasure and pain?

आकाश में बना एक महल चाहे टूट जाए चाहे सजा हो, इससे क्या फर्क पड़ता है? बेटे जैसी चीज़ें बस अज्ञान का एक हिस्सा हैं, फिर सुख और दुख से उनका सच में क्या नाता?

4.46.3

रम्ये धनेऽथ दारादौ हर्षस्यावसरो हि कः । वृद्धायां मृगतृष्णायां किमानन्दो जलार्थिनाम् ॥ ३ ॥

ramye dhane'tha dārādau harṣasyāvasaro hi kaḥ | vṛddhāyāṃ mṛgatṛṣṇāyāṃ kimānando jalārthinām || 3 ||

When wealth, a wife, and things like that seem pleasant, why should there be any joy? When a mirage grows bigger, what joy is there for someone looking for water in it?

जब धन, पत्नी और ऐसी चीज़ें अच्छी लगती हैं, तो खुशी का मौका ही कहाँ है? मृगतृष्णा और बड़ी हो जाए, तो पानी ढूँढने वालों को उससे क्या आनंद?

4.46.4

धनदारेषु वृद्धेषु दुःखं युक्तं न तुष्टयः । वृद्धायां मोहमायायां कः समाश्वासवानिह ॥ ४ ॥

dhanadāreṣu vṛddheṣu duḥkhaṃ yuktaṃ na tuṣṭayaḥ | vṛddhāyāṃ mohamāyāyāṃ kaḥ samāśvāsavān iha || 4 ||

When wealth and a wife grow larger, sorrow would fit better than any satisfaction. When the illusion of delusion grows bigger, who here can feel at ease?

जब धन और पत्नी और बढ़ जाएँ, तो खुशी नहीं, दुख होना ज़्यादा ठीक है। जब मोह की माया और बढ़ जाए, तो यहाँ किसे चैन मिल सकता है?

4.46.5

यैरेव जायते रागो मूर्खस्याधिकतागतैः । तैरेव भोगैः प्राज्ञस्य विराग उपजायते ॥ ५ ॥

yaireva jāyate rāgo mūrkhasyādhikatāgataiḥ | taireva bhogaiḥ prājñasya virāga upajāyate || 5 ||

The very same pleasures that make a fool's desire grow when they pile up are the ones through which a wise man's desire fades away.

जो सुख-भोग किसी मूर्ख की चाहत बढ़ा देते हैं जब वे ज़्यादा मिल जाएँ, वही सुख-भोग किसी समझदार व्यक्ति की चाहत को खत्म कर देते हैं।

4.46.6

नष्टे धनेऽथ दारादौ हर्षस्यावसरो हि कः । पारावलोकिनस्त्वेतैर्विरागं यान्ति साधवः ॥ ६ ॥

naṣṭe dhane'tha dārādau harṣasyāvasaro hi kaḥ | pārāvalokinastvetairvirāgaṃ yānti sādhavaḥ || 6 ||

When wealth, a wife, or things like that are lost, why should there be joy either? But it is through these same losses that the wise, who keep their eyes on the far shore, come to freedom from desire.

जब धन, पत्नी जैसी चीज़ें खो जाएँ, तो खुशी का मौका भी कहाँ है? पर आगे की तरफ नज़र रखने वाले साधु-संत इन्हीं खोने की घटनाओं से चाहत से मुक्ति पा लेते हैं।

4.46.7

अतो राघव तत्त्वज्ञो व्यवहारेषु संसृतेः । नष्टं नष्टमुपेक्षस्व प्राप्तं प्राप्तमुपाहर ॥ ७ ॥

ato rāghava tattvajño vyavahāreṣu saṃsṛteḥ | naṣṭaṃ naṣṭamupekṣasva prāptaṃ prāptamupāhara || 7 ||

So, Rama, understand the truth in the everyday dealings of this world: let go of whatever is lost, and accept whatever comes to you.

इसलिए हे राम, संसार के व्यवहार में सच्चाई को समझो: जो खो जाए, उसे जाने दो; जो मिल जाए, उसे अपना लो।

4.46.8

अनागतानां भोगानामवाञ्छनमकृत्रिमम् । आगतानां च संभोग इति पण्डितलक्षणम् ॥ ८ ॥

anāgatānāṃ bhogānāmavāñchanamakṛtrimam | āgatānāṃ ca saṃbho ga iti paṇḍitalakṣaṇam || 8 ||

Truly not wishing for pleasures that have not yet come, not just pretending, and simply enjoying whatever pleasures do come, this is the mark of a wise person.

जो सुख अभी नहीं मिले, उनकी सच में इच्छा न रखना, दिखावे के लिए नहीं, और जो सुख मिल जाएँ, बस उन्हें भोगना, यही समझदार इंसान की पहचान है।

4.46.9

संसारसंभ्रमे ह्यस्मिंश्छन्नात्मन्यातितायिनि । तथा विहर संबुद्धो यथा नायासि मूढताम् ॥ ९ ॥

saṃsārasaṃbhrame hyasmiṃśchannātmanyātatāyini | tathā vihara saṃbuddho yathā nāyāsi mūḍhatām || 9 ||

This whirl and confusion of worldly life hides your real self, and it acts like a hidden killer. Stay wide awake in it, and live in such a way that you never fall into foolishness.

यह सांसारिक जीवन की उथल-पुथल तुम्हारी असली आत्मा को छुपाए रखती है, और यह एक छिपे हुए हत्यारे जैसी है। इसमें पूरी तरह जागते हुए ऐसे जियो कि तुम कभी मूर्खता में न पड़ो।

4.46.10

संसाराडम्बरस्यास्य प्रपञ्चरहिते क्रमे । सम्यग्ज्ञा नानुपश्यन्ति ये हतास्ते कुबुद्धयः ॥ १० ॥

saṃsārāḍambarasyāsya prapañcarahite krame | samyagjñā nānupaśyanti ye hatāste kubuddhayaḥ || 10 ||

People who think of themselves as knowing the truth, yet do not see that this whole grand show of worldly life truly holds no real variety in it, they are the ruined ones, the dull-witted.

जो लोग खुद को सच्चा ज्ञानी समझते हैं, फिर भी यह नहीं देख पाते कि सांसारिक जीवन का यह सारा दिखावा असल में किसी सच्ची विविधता से खाली है, वही बर्बाद हैं, वही बुद्धिहीन हैं।

4.46.11

यया कयाचिद्युक्त्यैव दृश्याद्यस्य गता रतिःपरिमज्जति तस्यास्था न क्वचिद्विमला मतिः ॥ ११ ॥

yayā kayācidyuktyaiva dṛśyādyasya gatā ratiḥparimajjati tasyāsthā na kvacidvimalā matiḥ || 11 ||

Whoever's delight turns toward the visible world, by whatever reasoning at all, sinks down. Such a person's mind and conviction are never clear anywhere.

जिस किसी का भी मन किसी न किसी तर्क से दिखने वाली दुनिया की तरफ खिंच जाता है, वह डूब जाता है; उसका मन और उसका भरोसा कभी कहीं साफ नहीं होता।

4.46.12

यस्यासदिदमित्यास्था निवृत्ता सर्ववस्तुषुक्रोडीकरोति सर्वज्ञं नाविद्या तमवास्तवी ॥ १२ ॥

yasyāsadidamityāsthā nivṛttā sarvavastuṣukroḍīkaroti sarvajñaṃ nāvidyā tamavāstavī || 12 ||

For someone who, about every single thing, has even let go of the very idea that it is unreal, he holds on to the all-knowing self, and false, unreal ignorance cannot touch him.

जो व्यक्ति हर एक चीज़ के बारे में यह खयाल भी छोड़ चुका है कि 'यह झूठ है', वह सब कुछ जानने वाली आत्मा को थामे रहता है, और झूठी, बनावटी अज्ञानता उसे छू नहीं पाती।

4.46.13

अहं जगच्चैकमिदं सर्वमेवेति यस्य धीःआस्थानास्थे परित्यज्य संस्थिता स न मज्जति ॥ १३ ॥

ahaṃ jagaccaikamidaṃ sarvameveti yasya dhīḥāsthānāsthe parityajya saṃsthitā sa na majjati || 13 ||

Whoever's mind, having given up both believing and disbelieving, stays settled in the thought that I and this whole world are one, that all this is just one thing, that person does not drown.

जिसका मन, मानने और न मानने दोनों को छोड़कर, इस विचार में टिका रहता है कि मैं और यह पूरी दुनिया एक हैं, यह सब बस एक ही चीज़ है, वह डूबता नहीं।

4.46.14

शुद्धं सदसतोर्मध्यं पदं बुद्ध्यावलम्ब्य चसबाह्याभ्यन्तरं दृश्यं मा गृहाण विमुञ्च मा ॥ १४ ॥

śuddhaṃ sadasatormadhyaṃ padaṃ buddhyā'valambya casabāhyābhyantaraṃ dṛśyaṃ mā gṛhāṇa vimuñca mā || 14 ||

Hold on, with your mind, to the pure state that lies between being and not being. Do not grab the visible world, outer or inner, and do not throw it away either.

अपनी बुद्धि से उस शुद्ध अवस्था को थाम लो जो होने और न होने के बीच में है। दिखने वाली दुनिया को, चाहे बाहर की हो चाहे भीतर की, न तो पकड़ो, न ही छोड़ो।

4.46.15

अत्यन्तविरतः स्वस्थः सर्ववासविवर्जितःव्योमवत्तिष्ठ नीरागो राम कार्यपरोऽपि सन् ॥ १५ ॥

atyantavirataḥ svasthaḥ sarvavāsavivarjitaḥvyomavattiṣṭha nīrāgo rāma kāryaparo'pi san || 15 ||

Stay completely detached, at ease within yourself, free of every desire, remain like the sky, without any craving, Rama, even while you go on doing your work.

पूरी तरह अलग रहो, अपने भीतर सहज रहो, हर इच्छा से मुक्त रहो, आकाश की तरह बने रहो, बिना किसी चाहत के, हे राम, भले ही तुम अपना काम करते रहो।

4.46.16

यस्य नेच्छा न वानिच्छा ज्ञस्य कर्मणि तिष्ठतः। न तस्य लिप्यते प्रज्ञा पद्मपत्रमिवाम्बुभिः ॥ १६ ॥

yasya necchā na vānicchā jñasya karmaṇi tiṣṭhataḥ| na tasya lipyate prajñā padmapatramivāmbubhiḥ || 16 ||

The wise person who has neither desire nor its absence while still carrying out actions, his understanding never gets stained, just as a lotus leaf is never wetted by water.

जो समझदार व्यक्ति काम करते हुए भी न तो इच्छा रखता है, न ही इच्छा की कमी, उसकी समझ कभी दागदार नहीं होती, जैसे कमल का पत्ता पानी से गीला नहीं होता।

4.46.17

दर्शनस्पर्शनादीनि मा करोतु करोतु च। तवेन्द्रियमनो गौणं त्वमनिच्छो भवात्मवान्॥ १७ ॥

darśanaspṛśanādīni mā karotu karotu ca| tavendriyamano gauṇaṃ tvamaniccho bhavātmavān || 17 ||

Let your eyes and hands do their seeing and touching, or not do them, either way. Your senses and mind are a small matter. Rama, be free of wanting, and stay steady in yourself.

तुम्हारी आँखें और हाथ देखने-छूने का काम करें या न करें, कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। इंद्रियाँ और मन तो छोटी बात हैं। राम, इच्छा से मुक्त हो जाओ, और अपने आप में स्थिर रहो।

4.46.18

ममेदमित्यसद्भूतमिन्द्रियार्थे भवन्मनः। मा निमज्जत्वमग्नः सन्मा करोतु करोतु वा ॥ १८ ॥

mamedamityasadbhūtamindriyārthe bhavanmanaḥ| mā nimajjatvamagnaḥ sanmā karotu karotu vā || 18 ||

The thought this is mine about the things the senses meet is false. Don't let your mind sink into it, stay untouched by it. Let it act or not act, either way.

इंद्रियों को जो चीज़ें मिलती हैं, उनके बारे में यह सोचना कि यह मेरा है, यह सोच झूठी है। अपने मन को इसमें डूबने मत दो, इससे अछूते रहो। वह करे या न करे, कोई फ़र्क़ नहीं।

4.46.19

यदा ते नेन्द्रियार्थश्रीः स्वदते हृदि राघव। तदा विज्ञातविज्ञानः समुत्तीर्णभवार्णवः ॥ १९ ॥

yadā te nendriyārthaśrīḥ svadate hṛdi rāghava| tadā vijñātavijñānaḥ samuttīrṇabhavārṇavaḥ || 19 ||

Raghava, when the pleasure of what the senses meet no longer tastes sweet to your heart, then you have known what is to be known, and you have crossed the ocean of becoming.

राघव, जब इंद्रियों को मिलने वाली चीज़ों का सुख तुम्हारे दिल को मीठा नहीं लगता, तब तुमने वह जान लिया है जो जानना था, और तुम संसार सागर को पार कर चुके हो।

4.46.20

आस्वादितेन्द्रियार्थस्य सतनोरतनोरपि। अनिच्छतोऽपि संपन्ना मुक्तिरर्थवशात्तव ॥ २० ॥

āsvāditendriyārthasya satanoratanorapi| anicchato'pi saṃpannā muktirarthavaśāttava || 20 ||

For you, having tasted what the senses meet, whether you still have a body or not, freedom comes about on its own, even without your wanting it, simply because that is how the truth works.

तुमने इंद्रियों को मिलने वाली चीज़ों का स्वाद चख लिया है, चाहे शरीर में रहो या न रहो, मुक्ति अपने आप मिल जाती है, तुम्हारी इच्छा के बिना भी, बस इसलिए कि सच्चाई का यही नियम है।

4.46.21

उच्चैःपदाय परया प्रज्ञया वासनागणात् पुष्पाद्गन्धमिवोदारं चेतो राम पृथक्कुरु ॥ २१ ॥

uccaiḥpadāya parayā prajñayā vāsanāgaṇāt puṣpādgandhamivodāraṃ ceto rāma pṛthakkuru || 21 ||

Rama, to reach the highest state, use your highest wisdom to separate your noble mind from the mass of your inner impressions, the way you separate scent from a flower. Separate it.

राम, सबसे ऊँची अवस्था पाने के लिए, अपनी सबसे बड़ी बुद्धि से अपने भले मन को अपनी वासनाओं के ढेर से अलग करो, जैसे फूल से खुशबू अलग करते हैं। उसे अलग करो।

4.46.22

संसाराम्बुनिधावस्मिन्वासनाम्बुपरिप्लुते ये प्रज्ञा नावमारूढास्ते तीर्णा वुडिताः परे ॥ २२ ॥

saṃsārāmbunidhāvasminvāsanāmbupariplute ye prajñā nāvamārūḍhāste tīrṇā vuḍitāḥ pare || 22 ||

In this ocean of rebirth, flooded with the water of desires, those who have climbed into the boat of wisdom have crossed it. The rest have drowned.

इस जन्म मरण के सागर में, जो इच्छाओं के पानी से भरा है, जो लोग बुद्धि की नाव पर चढ़ गए वे पार हो गए। बाकी लोग डूब गए।

4.46.23

क्षुरधाराप्रमितया धिया परमधीरया प्रविचार्यात्मनस्तत्त्वं ततः स्वपदमाविश ॥ २३ ॥

kṣuradhārāpramitayā dhiyā paramadhīrayā pravicāryātmanastattvaṃ tataḥ svapadamāviśa || 23 ||

With a mind as sharp and fine as a razor's edge, and utterly steady, examine the truth of your own self. Then enter your true place.

उस्तरे की धार जैसी बारीक और तेज़ बुद्धि से, पूरी तरह स्थिर होकर, अपने असली स्वरूप की जांच करो। फिर अपने असली ठिकाने में प्रवेश करो।

4.46.24

यथा तत्त्वविदः प्राज्ञा ज्ञानबृंहितचेतसः विहरन्ति तथा राम विहर्तव्यं न मूढवत् ॥ २४ ॥

yathā tattvavidaḥ prājñā jñānabṛṃhitacetasaḥ viharanti tathā rāma vihartavyaṃ na mūḍhavat || 24 ||

Rama, live the way the wise who know the truth live, those whose minds have grown large with knowledge, not like a fool.

राम, वैसे जियो जैसे सच जानने वाले बुद्धिमान लोग जीते हैं, जिनका मन ज्ञान से बड़ा हो गया है, मूर्ख की तरह मत जियो।

4.46.25

जीवन्मुक्ता महात्मानो नित्यतृप्ता महाधियः आचारैरनुगन्तव्या न भोगकृपणाः शठाः ॥ २५ ॥

jīvanmuktā mahātmāno nityatṛptā mahādhiyaḥ ācārairanugantavyā na bhogakṛpaṇāḥ śaṭhāḥ || 25 ||

Follow the ways of those who are free while still alive, great souls, always content, of great wisdom, not the ways of the greedy and deceitful, who are stingy about their own pleasures.

उनके तौर तरीक़ों का पालन करो जो जीते जी मुक्त हैं, महान आत्माएं, हमेशा संतुष्ट, बड़ी बुद्धि वाले, न कि उन लालची और धोखेबाज़ लोगों के, जो अपने सुख के लिए कंजूस हैं।

4.46.26

न त्यजन्ति न वाञ्छन्ति व्यवहारं जगद्गतम् । सर्वमेवानुवर्तन्ते पारावारविदो जनाः ॥ २६ ॥

na tyajanti na vāñchanti vyavahāraṃ jagadgatam | sarvamevānuvartante pārāvāravido janāḥ || 26 ||

Those who know both sides of things, the world and what is beyond it, neither give up worldly life nor crave it. They simply go along with all of it, as it comes.

जो लोग दोनों बातें जानते हैं, संसार को भी और उससे परे को भी, वे न तो सांसारिक जीवन को छोड़ते हैं, न उसकी चाह रखते हैं। वे बस जो भी सामने आता है, उसके साथ चलते हैं।

4.46.27

प्रभावस्याभिमानस्य गुणानां यशसः श्रियः । न क्वचित्कृपणा लोके महान्तस्तत्त्वदर्शिनः ॥ २७ ॥

prabhāvasyābhimānasya guṇānāṃ yaśasaḥ śriyaḥ | na kvacitkṛpaṇā loke mahāntastattvadarśinaḥ || 27 ||

The great ones who see the truth are never, anywhere in the world, greedy for power, pride, good qualities, fame or wealth.

सच को देखने वाले महान लोग दुनिया में कहीं भी, कभी भी, ताक़त, घमंड, गुणों, नाम या दौलत के लालची नहीं होते।

4.46.28

सुशून्येऽपि न खिद्यन्ते देवोद्याने नसङ्गिनः । नियतिं च न मुञ्चन्ति महान्तो भास्करा इव ॥ २८ ॥

suśūnye'pi na khidyante devodyāne nasaṅginaḥ | niyatiṃ ca na muñcanti mahānto bhāskarā iva || 28 ||

Whether in a completely empty place or in a garden fit for the gods, they do not suffer, because they are not attached to either. And like the sun, these great ones never leave their fixed course.

चाहे बिलकुल सूनी जगह में हों या देवताओं के बाग़ में, वे दुखी नहीं होते, क्योंकि वे किसी से भी बंधे नहीं हैं। और सूरज की तरह, ये महान लोग अपना तय रास्ता कभी नहीं छोड़ते।

4.46.29

विगतेच्छा यथाप्राप्तव्यवहारानुवर्तिनः । विचरन्ति समुन्नद्धाः स्वस्था देहरथे स्थिताः ॥ २९ ॥

vigatecchā yathāprāptavyavahārānuvartinaḥ | vicaranti samunnaddhāḥ svasthā deharathe sthitāḥ || 29 ||

Free of wanting, going along with whatever comes their way, they move through the world, steady and at ease, seated in the chariot of the body.

इच्छा से मुक्त, जो भी सामने आए उसके साथ चलते हुए, वे दुनिया में घूमते हैं, स्थिर और सहज, शरीर के रथ में बैठे हुए।

4.46.30

त्वमपि प्राप्तवान् राम विवेकमिममाततम् । प्रज्ञाबलेन चानेन ज्ञाने स्वस्थोऽसि सुन्दर ॥ ३० ॥

tvamapi prāptavān rāma vivekamimamātatam | prajñābalena cānena jñāne svastho'si sundara || 30 ||

You too, Rama, have reached this wide discernment. And through the strength of this wisdom, you are now settled and at peace in true knowledge, handsome one.

राम, तुमने भी यह गहरी समझ पा ली है। और इसी बुद्धि की ताक़त से, तुम अब सच्चे ज्ञान में शांत और स्थिर हो, हे सुंदर।

4.46.31

स्पष्टां दृष्टिमवष्टभ्य निर्मानो गतमत्सरः । विहरास्मिन्भुवः पीठे परां सिद्धिमवाप्स्यसि ॥ ३१ ॥

spaṣṭāṃ dṛṣṭimavaṣṭabhya nirmāno gatamatsaraḥ| viharāsminbhavaḥ pīṭhe parāṃ siddhimavāpsyasi || 31 ||

Hold on to this clear seeing, be free of pride, let envy go, and live in this world. You will reach the highest fulfillment.

इस साफ़ नज़र को थामे रखो, घमंड से मुक्त रहो, ईर्ष्या को छोड़ दो, और इस दुनिया में जियो। तुम्हें सबसे बड़ी सिद्धि मिलेगी।

4.46.32

स्वस्थः सर्वेहितत्यागी दूरालोकनवाञ्छनः। परां शीतलतामन्तरादाय विहरानघ ॥ ३२ ॥

svasthaḥ sarvehitatyāgī dūrālokanavāñchanaḥ| parāṃ śītalatāmantarādāya viharānagha || 32 ||

Settled in yourself, having given up all your wants, wishing only to watch things from a distance, take the highest coolness into yourself, and move through the world, faultless one.

अपने आप में स्थिर होकर, सारी इच्छाएं छोड़कर, बस दूर से देखने की चाह रखते हुए, सबसे बड़ी शीतलता को अपने भीतर ले लो, और दुनिया में विचरो, हे निष्पाप।

4.46.33

श्रीवाल्मीकिरुवाच। इत्थं गिरा विमलया विमलाशयस्य रामो मुनेः सपदि मृष्ट इवाबभासे। ज्ञानामृतेन मधुरेण विराजितान्तः पूर्णः शशाङ्क इव शीतलतां जगाम ॥ ३३ ॥

śrīvālmīkiruvāca| itthaṃ girā vimalayā vimalāśayasya rāmo muneḥ sapadi mṛṣṭa ivābabhāse| jñānāmṛtena madhureṇa virājitāntaḥ pūrṇaḥ śaśāṅka iva śītalatāṃ jagāma || 33 ||

Sri Valmiki said, with these pure words from the sage whose mind was spotless, Rama at once shone as if freshly cleaned. Lit up within by the sweet nectar of knowledge, he became cool, like a full moon.

श्री वाल्मीकि ने कहा, इस साफ़ मन वाले मुनि के इन निर्मल शब्दों से, राम तुरंत ऐसे चमक उठे जैसे अभी अभी साफ़ किए गए हों। ज्ञान के मीठे अमृत से भीतर से रोशन होकर, वे पूर्ण चाँद की तरह शीतल हो गए।

Chapter 47

4.47.1

श्रीराम उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ सर्ववेदाङ्गपारग । आश्वस्त इव तिष्ठामि शुद्धाभिर्भवदुक्तिभिः ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | bhagavansarvadharmajña sarvavedāṅgapāraga | āśvasta iva tiṣṭhāmi śuddhābhirbhava duktibhiḥ || 1 ||

Rama said, lord, you know all dharma, and you have mastered all the Vedas and their branches. Your pure words comfort me, and I feel at ease.

राम ने कहा, हे भगवन, आप सारे धर्म को जानते हैं और सारे वेदों तथा वेदांगों में पारंगत हैं। आपके शुद्ध वचनों से मुझे सुकून मिलता है और मैं शांत महसूस करता हूँ।

4.47.2

उदाराणि विविक्तानि पेशलान्युदितानि च । श्रोतुं तृप्तिं न गच्छामि वचांसि वदतस्तव ॥ २ ॥

udārāṇi viviktāni peśalānyuditāni ca | śrotuṃ tṛpti na gacchāmi vacāṃsi vadatastava || 2 ||

Your words are noble, clear and beautiful. However much I listen to you speak, I am never satisfied, I want to hear more.

आपके शब्द उदार, स्पष्ट और सुंदर हैं। आपको बोलते हुए सुनकर मेरा मन कभी नहीं भरता, मैं और सुनना चाहता हूँ।

4.47.3

जात्या राजससात्त्विक्याः कथनावसरान्तरे । उत्पत्तिर्भवता प्रोक्ता शास्त्रैः कमलजन्मनः ॥ ३ ॥

jātyā rājasasāttvikyāḥ kathanāvasarāntare | utpattirbhavatā proktā śāstraiḥ kamalajanmanaḥ || 3 ||

While you were speaking earlier, you told me, from the scriptures, how Brahma, the lotus born one, came into being, a birth that by its own nature belongs to the qualities called rajas and sattva.

पहले बोलते हुए आपने शास्त्रों के अनुसार बताया था कि कमल से जन्मे ब्रह्मा किस तरह उत्पन्न हुए, यह जन्म अपने स्वभाव से ही रजस और सत्त्व नाम के गुणों से जुड़ा हुआ है।

4.47.4

श्रीवसिष्ठ उवाच । बहूनि ब्रह्मलक्षाणि शंकरेन्द्रशतानि च । नारायणसहस्राणि समतीतानि राघव ॥ ४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | bahūni brahmalakṣāṇi śaṅkarendraśatāni ca | nārāyaṇasahasrāṇi samatītāni rāghava || 4 ||

Vasishtha said, Rama, many hundreds of thousands of Brahmas have come and gone, hundreds of Shivas and Indras, and thousands of Vishnus.

वसिष्ठ ने कहा, हे राम, अब तक लाखों ब्रह्मा, सैकड़ों शिव और इंद्र, और हज़ारों विष्णु आ चुके हैं और जा चुके हैं।

4.47.5

अन्येषु च विचित्रेषु ब्रह्माण्डेषु च भूरिशः । नानाचारविहाराणि विहरन्ति सहस्रशः ॥ ५ ॥

anyeṣu ca vicitreṣu brahmāṇḍeṣu ca bhūriśaḥ | nānācāravihārāṇi viharanti sahasraśaḥ || 5 ||

In countless other universes as well, thousands of them live in various different ways, each with its own customs and habits.

और भी अनगिनत दूसरे ब्रह्मांडों में हज़ारों की संख्या में वे अपने अपने रीति रिवाज़ों और जीने के तरीकों से रहते हैं।

4.47.6

तुल्यकालमनन्तेषु कालान्तरभवेषु च । जगत्सु प्रोद्भविष्यन्ति बहून्यन्यानि भूरिशः ॥ ६ ॥

tulyakālamananteṣu kālāntarabhaveṣu ca | jagatsu prodhaviṣyanti bahūnyanyāni bhūriśaḥ || 6 ||

Many other worlds will spring up too, some at this very time in the endless universes, others later, in ages that are yet to come.

और भी बहुत सारे संसार उत्पन्न होंगे, कुछ अभी इसी समय अनगिनत ब्रह्मांडों में, और कुछ आने वाले समय में, बाद के युगों में।

4.47.7

तेषामब्जोद्भवादीनां ब्रह्माण्डेषु दिवौकसाम् । उत्पत्तयो महाबाहो विचित्राभ्युत्थिता इव ॥ ७ ॥

teṣāmabjodbhavādīnāṃ brahmāṇḍeṣu divaukasām | utpattayo mahābāho vicitrābhyutthitā iva || 7 ||

Mighty armed Rama, the births of these gods, Brahma and the rest, the dwellers of heaven, arise in wonderfully different ways in each universe.

हे महाबाहु राम, ब्रह्मा और बाकी देवताओं का जन्म हर ब्रह्मांड में अलग अलग और अद्भुत तरीके से होता है।

4.47.8

कदाचित्सृष्टयः शार्व्यः कदाचित्पद्मजोद्भवाः । कदाचिदपि वैष्णव्यः कदाचिन्मुनिनिर्मिताः ॥ ८ ॥

kadācit sṛṣṭayaḥ śārvyaḥ kadācit padmajodbhavāḥ | kadācidapi vaiṣṇavyaḥ kadācin muninirmitāḥ || 8 ||

Sometimes creation comes from Shiva, sometimes it springs from Brahma, the lotus born one, sometimes it comes from Vishnu, and sometimes sages themselves create it.

कभी सृष्टि शिव से होती है, कभी कमल से जन्मे ब्रह्मा से, कभी विष्णु से, और कभी मुनि स्वयं उसे रचते हैं।

4.47.9

कदाचित्पद्मजो ब्रह्मा कदाचित्सलिलोद्भवः । अण्डोद्भवः कदाचित्तु कदाचिज्जायतेऽम्बरात् ॥ ९ ॥

kadācit padmajo brahmā kadācit salilodbhavāḥ | aṇḍodbhavāḥ kadācittu kadācic jāyate'mbarāt || 9 ||

Sometimes Brahma is born from a lotus, sometimes he arises from water, sometimes he is born from an egg, and sometimes he is born out of empty space.

कभी ब्रह्मा कमल से जन्म लेते हैं, कभी जल से उत्पन्न होते हैं, कभी अंडे से जन्म लेते हैं, और कभी आकाश से प्रकट होते हैं।

4.47.10

कस्मिंश्चिदण्डे त्र्यक्षोऽर्कः कस्मिंश्चिदपि वासवः । कस्मिंश्चित्पुण्डरीकाक्षः कस्मिंश्चित्त्र्यक्ष एव हि ॥ १० ॥

kasmiṃścid aṇḍe tryakṣo'arkaḥ kasmiṃścidapi vāsavaḥ | kasmiṃścit puṇḍarīkākṣaḥ kasmiṃścic tryakṣa eva hi || 10 ||

In one universe the sun has three eyes, in another it is Indra, in another it is Vishnu, the lotus eyed one, and in another it is truly the three eyed one himself.

किसी ब्रह्मांड में सूर्य की तीन आँखें होती हैं, किसी में इंद्र होते हैं, किसी में कमल नयन विष्णु होते हैं, और किसी में सचमुच त्रिनेत्रधारी स्वयं होते हैं।

4.47.11

कस्यांचिद्भूरभूत्सृष्टौ नीरन्ध्रतरुसंकटा । कस्यांचिन्नरनीरन्ध्रा कस्यांचिद्भूधरावृता ॥ ११ ॥

kasyāṃcidbhūrabhūtsṛṣṭau nīrandhratarusaṃkaṭā | kasyāṃcinnaranīrandhrā kasyāṃcidbhūdharāvṛtā || 11 ||

In one creation the earth was so packed with trees that there was no space left between them. In another it was so crowded with people that there was no gap at all. In another it was covered entirely with mountains.

किसी सृष्टि में पृथ्वी इतने घने पेड़ों से भरी थी कि उनके बीच कोई जगह नहीं बची थी। किसी में वह लोगों से इतनी भरी थी कि कोई खाली जगह ही नहीं थी। किसी में वह पूरी तरह पहाड़ों से ढकी थी।

4.47.12

भूरभून्मृन्मयी काचित्काचिदासीदृषन्मयी । आसीद्धेममयी काचित्काचित्ताम्रमयी तथा ॥ १२ ॥

bhūrabhūnmṛnmayī kācitkācidāsīddṛṣanmayī | āsīddhemamayī kācitkācittāmramayī tathā || 12 ||

One earth was made of clay, another was made of stone. One was made of gold, and another, in the same way, was made of copper.

कोई पृथ्वी मिट्टी की बनी थी, कोई पत्थर की। कोई सोने की बनी थी, और कोई इसी तरह तांबे की।

4.47.13

इहैव कानि चित्राणि जगन्त्यन्यान्यथान्यथा । अन्यान्येकैकलोकानि निर्महांस्यपि कानिचित् ॥ १३ ॥

ihaiva kāni citrāṇi jagantyanyānyathānyathā | anyānyekaikalokāni nirmahāṃsyapi kānicit || 13 ||

Right here too there are so many strange worlds, each one different from the next. Some have only a single realm, and some have no grandeur in them at all.

यहीं इसी ब्रह्मांड में भी कितने ही विचित्र संसार हैं, हर एक दूसरे से अलग। किसी में सिर्फ एक ही लोक है, और किसी में कोई भव्यता ही नहीं है।

4.47.14

अनन्तानि जगन्त्यस्मिन्ब्रह्मतत्त्वमहाम्बरे । अम्भोधिवीचिजलवन्निमज्जन्त्युद्भवन्ति च ॥ १४ ॥

anantāni jagantyasminbrahmatattvamahāmbare | ambhodhivīcijalavannimajjantyudbhavanti ca || 14 ||

Endless worlds rise and sink in this great sky of the reality of Brahman, just as the water of waves rises and sinks in the ocean.

ब्रह्म तत्त्व के इस विशाल आकाश में अनगिनत संसार उठते और डूबते हैं, ठीक वैसे ही जैसे समुद्र में लहरों का पानी उठता और डूबता है।

4.47.15

यथा तरङ्गा जलधौ मृगतृष्णा मरौ यथा । कुसुमानि यथा चूते तथा विश्वश्रियः परे ॥ १५ ॥

yathā taraṅgā jaladhau mṛgatṛṣṇā marau yathā | kusumāni yathā cūte tathā viśvaśriyaḥ pare || 15 ||

Like waves in the ocean, like a mirage in the desert, like blossoms on a mango tree, that is how the glories of these worlds appear.

जैसे समुद्र में लहरें उठती हैं, जैसे रेगिस्तान में मृगतृष्णा दिखती है, जैसे आम के पेड़ पर फूल खिलते हैं, वैसे ही इन संसारों की शोभा दिखाई देती है।

4.47.16

भानोर्गणयितुं शक्या रश्मिषु त्रसरेणवः। आलोलवपुषो ब्रह्म तत्त्वेन जगतां गणाः ॥ १६ ॥

bhānorgaṇayituṃ śakyā raśmiṣu trasareṇavaḥ| ālolavapuṣo brahma tattvena jagatāṃ gaṇāḥ || 16 ||

One might count the specks of dust dancing in a ray of sunlight, but not the endless worlds, ever restless in form, within the reality of Brahman.

सूरज की किरण में उड़ते धूल के कणों को तो गिना जा सकता है, पर ब्रह्म तत्त्व में लगातार हिलते डुलते इन असंख्य संसारों को नहीं गिना जा सकता।

4.47.17

यथा मशकजालानि वर्षादिष्वाकुलानि तु। उत्पत्त्योत्पत्त्य नश्यन्ति तथेमा लोकसृष्टयः ॥ १७ ॥

yathā maśakajālāni varṣādiṣvākulāni tu| utpattyotpattya naśyanti tathema lokasṛṣṭayaḥ || 17 ||

Just as swarms of mosquitoes teem up in the rainy season and die off again and again as they arise, so do these creations of worlds appear and vanish, again and again.

जैसे बरसात के मौसम में मच्छरों के झुंड बार बार पैदा होकर मर जाते हैं, वैसे ही ये संसार भी बार बार उत्पन्न होकर नष्ट हो जाते हैं।

4.47.18

न च विज्ञायते कस्मात्कालात्प्रभृति चागताः। नित्यागमापायपरा एताः सर्गपरम्पराः ॥ १८ ॥

na ca vijñāyate kasmātkālātprabhṛti cāgatāḥ| nityāgamāpāyaparā etāḥ sargaparamparāḥ || 18 ||

No one knows from what time onward these have been coming into being. These successive creations are forever coming and going.

यह कोई नहीं जानता कि ये कब से शुरू हुए हैं। एक के बाद एक होने वाली ये सृष्टियाँ हमेशा से आती और जाती रही हैं।

4.47.19

अनादिमत्योऽविरतं प्रस्फुरन्ति तरङ्गवत्। पूर्वात्पूर्वं किलाभूवंस्ततः पूर्वतरं यथा ॥ १९ ॥

anādimatyo'viratam prasphuranti taraṅgavat| pūrvātpūrvaṃ kilābhūvaṃstatataḥ pūrvataraṃ yathā || 19 ||

Without a beginning, they flash into being without pause, like waves. Each one arose from one before it, and that one from one still earlier.

बिना किसी शुरुआत के, ये लहरों की तरह लगातार उठती रहती हैं। हर एक अपने से पहले वाली से उत्पन्न हुई, और वह उससे भी पहले वाली से।

4.47.20

भूत्वा भूत्वा प्रलीयन्ते ससुरासुरमानवाः। सरित्तङ्गभङ्ग्यैव समस्ता भूतजातयः ॥ २० ॥

bhūtvā bhūtvā pralīyante sasurāsuramānavāḥ| sarittāṅgabhaṅgyaiva samastā bhūtajātayaḥ || 20 ||

All classes of beings, gods, demons and humans alike, come into being again and again and then dissolve, exactly like the breaking waves of a river.

देवता, असुर और मनुष्य, सभी तरह के जीव बार बार जन्म लेकर फिर लीन हो जाते हैं, ठीक वैसे ही जैसे नदी की लहरें उठकर टूट जाती हैं।

4.47.21

यथेदमण्डं वैरिञ्चं तथा ब्रह्माण्डपङ्क्तयः। याः सहस्राः परिक्षीणा नाडिका वत्सरेष्विव ॥ २१ ॥

yathedamaṇḍaṃ vairiñcaṃ tathā brahmāṇḍapaṅktayaḥ | yāḥ sahasrāḥ parikṣīṇā nāḍikā vatsareṣviva || 21 ||

As this universe of Brahma is, so are the countless other universes in their long rows. Thousands of them have already passed away, the way many small units of time pass within a single year.

जैसे यह ब्रह्मा का ब्रह्मांड है, वैसे ही और भी अनगिनत ब्रह्मांडों की कतारें हैं। उनमें से हज़ारों बीत चुके हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक साल में समय के छोटे छोटे हिस्से बीत जाते हैं।

4.47.22

अन्याः संप्रति विद्यन्ते वर्तमानशरीरकाः । प्रान्ते ब्रह्मपुरस्यास्य विततते ब्रह्मणः पदे ॥ २२ ॥

anyāḥ saṃprati vidyante vartamānaśarīrakāḥ | prānte brahmapurasyāsya vitate brahmaṇaḥ pade || 22 ||

Others exist right now, with their forms still present, at the edge of this city of Brahma, within the vast abode of Brahman.

कुछ और संसार अभी इसी समय मौजूद हैं, अपने रूप में बने हुए, इस ब्रह्मा की नगरी के किनारे पर, ब्रह्म के विशाल धाम में।

4.47.23

ब्रह्मण्यन्या भविष्यन्ति ब्राह्म्यो ब्रह्मपुरश्रियः । पुनस्ताश्च विनङ्क्ष्यन्ति भूत्वा भूत्वा यथा गिरः ॥ २३ ॥

brahmaṇyanyā bhaviṣyanti brāhmyo brahmapuraśriyaḥ | punastāśca vinaṅkṣyanti bhūtvā bhūtvā yathā giraḥ || 23 ||

Within Brahman, other splendid cities of Brahma will come into being, and they too will perish again, appearing and disappearing over and over, just like spoken words.

ब्रह्म के भीतर और भी शानदार ब्रह्मा की नगरियाँ बनेंगी, और वे भी बार बार बनकर मिट जाएँगी, ठीक वैसे ही जैसे बोले गए शब्द बनते और मिट जाते हैं।

4.47.24

ब्रह्मण्यन्या भविष्यन्त्यः स्थिताः सर्गपरम्पराः । घटा इव मृदो राशावङ्कुरे पल्लवा इव ॥ २४ ॥

brahmaṇyanyā bhaviṣyantyaḥ sthitāḥ sargaparamparāḥ | ghaṭā iva mṛdo rāśāvaṅkure pallavā iva || 24 ||

Within Brahman, still more chains of creation exist and will come to be, like pots made from a heap of clay, or like new leaves sprouting from a young shoot.

ब्रह्म के भीतर सृष्टि की और भी शृंखलाएँ हैं और आगे भी बनेंगी, जैसे मिट्टी के ढेर से बर्तन बनते हैं, या जैसे एक अंकुर से नए पत्ते फूटते हैं।

4.47.25

यावद्ब्रह्म चिदाकाशे तथा त्रिभुवनश्रियः । स्फाराकारविकाराढ्याः प्रेक्ष्यमाणा न किंचन ॥ २५ ॥

yāvadbrahma cidākāśe tathā tribhuvanaśriyaḥ | sphārākāravikārāḍhyāḥ prekṣyamāṇā na kiñcana || 25 ||

As far as Brahman extends in the space of consciousness, so far extend the glories of the three worlds, rich with vast forms and endless changes, yet looked at closely they are nothing at all.

जहाँ तक चेतना के आकाश में ब्रह्म फैला है, वहाँ तक तीनों लोकों की यह शोभा भी फैली है, जो बड़े बड़े रूपों और बदलावों से भरी दिखती है, पर गौर से देखने पर यह कुछ भी नहीं है।

4.47.26

उन्मज्जन्त्यो निमज्जन्त्यो न सत्या नाप्यसच्छ्रियः । जडारम्भा वितन्वन्त्यस्ता एव खलता इव ॥ २६ ॥

unmajjantyo nimajjantyo na satyā nāpyasacchriyaḥ | jaḍārambhā vitanvantyastā eva khalatā iva || 26 ||

Rising up and sinking down, these glories are neither wholly real nor wholly unreal. They spread out their lifeless doings, just like sheer deception.

उठते और डूबते हुए, ये न तो पूरी तरह सच हैं और न पूरी तरह झूठ। ये अपने निर्जीव कामों को इस तरह फैलाते हैं, जैसे कोई शुद्ध धोखा हो।

4.47.27

तरङ्गसमधर्मिण्यो दृष्टनष्टशरीरकाः । सर्वासां सृष्टिराशीनां चित्राकारविचेष्टिताः ॥ २७ ॥

taraṅgasamadharmiṇyo dṛṣṭanaṣṭaśarīrakāḥ | sarvāsāṃ sṛṣṭirāśīnāṃ citrākāraviceṣṭitāḥ || 27 ||

They behave just like waves, their shapes are seen for a moment and then lost. Among all the countless heaps of creation, they move about taking wonderful, changing forms.

वे लहरों जैसा ही स्वभाव रखते हैं, उनका रूप कुछ पल के लिए दिखता है, फिर मिट जाता है। सभी अनगिनत सृष्टियों के बीच वे तरह तरह के अद्भुत रूप लेकर चलते फिरते हैं।

4.47.28

चित्राकारविकाराश्च चित्ररूपा हि सृष्टयः । व्यतिरिक्ता न सर्वेषां समस्ताः सृष्टिदृष्टयः ॥ २८ ॥

citrākāravikārāśca citrarūpā hi sṛṣṭayaḥ | vyatiriktā na sarveṣāṃ samastāḥ sṛṣṭidṛṣṭayaḥ || 28 ||

These creations take on wondrous forms and go through wondrous changes, for the shapes of creation are always strange and varied. Yet none of these countless appearances of creation is truly different from the rest.

ये सृष्टियाँ तरह तरह के रूप लेती हैं और तरह तरह से बदलती हैं, क्योंकि सृष्टि के रूप हमेशा विचित्र और भिन्न भिन्न होते हैं। फिर भी सृष्टि के ये सारे अनगिनत रूप असल में एक दूसरे से अलग नहीं हैं।

4.47.29

तत्त्वज्ञविषये राम सलिलादिव वृष्टयः । आयान्ति सृष्टयो देवाज्जलदादिव वृष्टयः ॥ २९ ॥

tattvajñaviṿṣaye rāma salilādiva vṛṣṭayaḥ | āyānti sṛṣṭayo devājjaladādiva vṛṣṭayaḥ || 29 ||

Rama, in the eyes of one who has known the truth, creations arise the way rain comes from water, the way rain falls from a cloud in the sky.

हे राम, जिसने सत्य को जान लिया है, उसकी नज़र में ये सृष्टियाँ ऐसे ही उत्पन्न होती हैं जैसे पानी से बारिश होती है, जैसे आकाश के बादल से बारिश गिरती है।

4.47.30

व्यतिरिक्ता न सर्वेषां समस्ताः सृष्टिदृष्टयः । व्यतिरिक्ता द्रवाम्भोधिस्वाष्ठीलाः शाल्मलेरिव ॥ ३० ॥

vyatiriktā na sarveṣāṃ samastāḥ sṛṣṭidṛṣṭayaḥ | vyatiriktā dravāmbhodhisvāṣṭhīlāḥ śālmaleriva || 30 ||

All these views of creation are not really separate from each other, just as the sea of liquid and the solid land within it are not separate, both belonging to the land of Shalmali.

सृष्टि के ये सारे रूप एक दूसरे से अलग नहीं हैं, ठीक वैसे ही जैसे शाल्मलि द्वीप का बहता हुआ सागर और उसकी ठोस ज़मीन एक दूसरे से अलग नहीं हैं, दोनों उसी एक द्वीप के हैं।

4.47.31

इह सृष्टिषु पुष्टासु निकृष्टासु च राघव । परमान्नभसो जातास्तन्मात्रमलमालिका ॥ ३१ ॥

iha sṛṣṭiṣu puṣṭāsu nikṛṣṭāsu ca rāghava | paramānnabhaso jātāstanmātramalamālikā || 31 ||

Here in this world, Raghava, among all these creations, whether great or lowly, all are born from empty space alone, they are nothing but a string of the tiniest specks of matter.

हे राघव, इस दुनिया में जितनी भी सृष्टियाँ हैं, चाहे बड़ी हों या छोटी, ये सब सिर्फ आकाश से पैदा हुई हैं। ये कुछ नहीं बल्कि सबसे छोटे छोटे कणों की एक लड़ी हैं।

4.47.32

कदाचित्प्रथमं व्योम प्रतिष्ठामधिगच्छति । ततः प्रजायते ब्रह्मा व्योमजोऽसौ प्रजापतिः ॥ ३२ ॥

kadācitprathamaṃ vyoma pratiṣṭhāmadhigacchati | tataḥ prajāyate brahmā vyomajo'sau prajāpatiḥ || 32 ||

Sometimes space is the first to become firm and settled, then Brahma is born from it, he, born of space, is called Prajapati, the lord of creatures.

कभी कभी सबसे पहले आकाश स्थिर होता है, फिर उससे ब्रह्मा जन्म लेते हैं। आकाश से जन्मे वही ब्रह्मा प्रजापति यानी सृष्टि के स्वामी कहलाते हैं।

4.47.33

कदाचित्प्रथमं वायुः प्रतिष्ठामधिगच्छति । ततः प्रजायते ब्रह्मा वायुजोऽसौ प्रजापतिः ॥ ३३ ॥

kadācitprathamaṃ vāyuḥ pratiṣṭhāmadhigacchati | tataḥ prajāyate brahmā vāyujo'sau prajāpatiḥ || 33 ||

Sometimes air is the first to become firm and settled, then Brahma is born from it, he, born of air, is called Prajapati, the lord of creatures.

कभी कभी सबसे पहले हवा स्थिर होती है, फिर उससे ब्रह्मा जन्म लेते हैं। हवा से जन्मे वही ब्रह्मा प्रजापति कहलाते हैं।

4.47.34

कदाचित्प्रथमं तेजः प्रतिष्ठामधिगच्छति । ततः प्रजायते कर्ता तेजसोऽसौ प्रजापतिः ॥ ३४ ॥

kadācitprathamaṃ tejaḥ pratiṣṭhāmadhigacchati | tataḥ prajāyate kartā tejaso'sau prajāpatiḥ || 34 ||

Sometimes fire is the first to become firm and settled, then the maker is born from it, he, born of fire, is called Prajapati, the lord of creatures.

कभी कभी सबसे पहले आग स्थिर होती है, फिर उससे रचने वाला जन्म लेता है। आग से जन्मा वही प्रजापति कहलाता है।

4.47.35

कदाचित्प्रथमं वारि प्रतिष्ठामधिगच्छति । ततः प्रजायते ब्रह्मा वारिजोऽसौ प्रजापतिः ॥ ३५ ॥

kadācitprathamaṃ vāri pratiṣṭhāmadhigacchati | tataḥ prajāyate brahmā vārijo'sau prajāpatiḥ || 35 ||

Sometimes water is the first to become firm and settled, then Brahma is born from it, he, born of water, is called Prajapati, the lord of creatures.

कभी कभी सबसे पहले पानी स्थिर होता है, फिर उससे ब्रह्मा जन्म लेते हैं। पानी से जन्मे वही ब्रह्मा प्रजापति कहलाते हैं।

4.47.36

कदाचित्प्रथमं पृथ्वी स्फारतामधिगच्छति । ततः प्रजायते ब्रह्मा पार्थिवोऽसौ प्रजापतिः ॥ ३६ ॥

kadācitprathamaṃ pṛthvī sphāratāmadhigacchati | tataḥ prajāyate brahmā pārthivo'sau prajāpatiḥ || 36 ||

Sometimes earth is the first to grow full and wide, then Brahma is born from it, he, made of earth, is called Prajapati, the lord of creatures.

कभी कभी सबसे पहले पृथ्वी फैलकर विशाल होती है, फिर उससे ब्रह्मा जन्म लेते हैं। पृथ्वी से बने वही ब्रह्मा प्रजापति कहलाते हैं।

4.47.37

इदं चत्वारि संपीड्य पञ्चमं वर्धते यदा । तदा तज्जात एवैष कुरुते जागतीं क्रियाम् ॥ ३७ ॥

idaṃ caturāri saṃpīḍya pañcamaṃ vardhate yadā | tadā tajjāta evaiṣa kurute jāgatīṃ kriyām || 37 ||

When these four elements press together and a fifth grows out of them, then, born from that, this one carries out the work of the world.

जब ये चार तत्व आपस में दब कर मिल जाते हैं और उनसे पाँचवाँ तत्व बढ़ता है, तो उससे जन्मा हुआ यही जगत का सारा काम करता है।

4.47.38

कदाचिदप्सु वायौ वा सुस्फारे वापि तेजसि । स्वयं संपद्यतेऽकस्मात्पुमान्प्रकृतिभावितः ॥ ३८ ॥

kadācidapsu vāyau vā susphāre vāpi tejasi | svayaṃ saṃpadyate'kasmātpumānprakṛtibhāvitaḥ || 38 ||

Sometimes, in water, or in air, or in fire grown vast, a person shaped by nature suddenly comes into being all by himself.

कभी कभी पानी में, या हवा में, या फैली हुई आग में, प्रकृति से बना एक पुरुष अचानक अपने आप प्रकट हो जाता है।

4.47.39

तस्याथ शब्दो वदनात्कदाचिज्जायते पदात् । कदाचिदंशात्पृष्ठाद्वा कदाचिल्लोचनात्करात् ॥ ३९ ॥

tasyātha śabdo vadanātkadācijjāyate padāt | kadācidamśātpṛṣṭhādvā kadācillocanātkarāt || 39 ||

Then a sound arises from him, sometimes from his mouth, sometimes from his foot, sometimes from his shoulder or his back, sometimes from his eye or his hand.

फिर उससे एक आवाज़ उठती है, कभी उसके मुँह से, कभी पैर से, कभी कंधे या पीठ से, कभी आँख या हाथ से।

4.47.40

कदाचित्पुरुषस्यास्य नाभौ पद्मं प्रजायते । तस्मिन्संवधते ब्रह्मा पद्मजोऽसौ प्रकीर्तितः ॥ ४० ॥

kadācitpuruṣasyāsya nābhau padmaṃ prajāyate | tasmin saṃvadhate brahmā padmajo'sau prakīrtitaḥ || 40 ||

Sometimes, in the navel of this person, a lotus is born, in it Brahma grows, and he is known as the lotus-born one.

कभी कभी इस पुरुष की नाभि में एक कमल जन्म लेता है, उसी में ब्रह्मा बढ़ते हैं, और वे कमल से जन्मे कहलाते हैं।

4.47.41

मायेयं स्वप्नवद्भ्रान्तिर्मिथ्यारचितचक्रिका । मनोराज्यमिवालोलसलिलावर्तसुन्दरी ॥ ४१ ॥

māyeyaṃ svapnavadbhrāntirmithyāracitacakrikā | manorājyamivālolasalilāvartasundarī || 41 ||

This is illusion, a confusion like a dream, a wheel built on falsehood, beautiful like the swirl of restless water, just like a daydream.

यह माया है, सपने जैसा एक भ्रम, झूठ से बना एक चक्र, बेचैन पानी की भँवर जैसा सुंदर, ठीक एक दिवास्वप्न की तरह।

4.47.42

किमिवास्यां वद ज्ञप्तौ कथं संभवतीह ते । क्वचिद्बालमनोराज्यमिदं पर्यनुयुज्यते ॥ ४२ ॥

kimivāsyāṃ vada jñaptau kathaṃ saṃbhavatīha te | kvacidbālamanorājyamidaṃ paryanuyujyate || 42 ||

Tell me, what is this like within awareness. How does it arise here for you. Sometimes this is questioned, the way one questions a child's daydream.

बताओ, यह चेतना में कैसा है। यह तुम्हारे भीतर कैसे उठता है। कभी कभी इसे वैसे ही पूछा जाता है जैसे किसी बच्चे के दिवास्वप्न के बारे में पूछा जाता है।

4.47.43

कदाचिदम्बरे शुद्धे मनस्तत्त्वानुरञ्जनात् । सौवर्णं ब्रह्मगर्भं च स्वयमण्डं प्रवर्तते ॥ ४३ ॥

kadācidambare śuddhe manastattvānurañjanāt | sauvarṇaṃ brahmagarbhaṃ ca svayamaṇḍaṃ pravartate || 43 ||

Sometimes, in the pure sky, from the mind's own quality tingeing it, a golden egg carrying Brahma within it arises on its own.

कभी कभी शुद्ध आकाश में, मन के गुण का रंग चढ़ने से, ब्रह्मा को अपने भीतर लिए एक सुनहरा अंडा अपने आप बन जाता है।

4.47.44

कदाचिदेव पुरुषो वीर्यं सृजति वारिणि । तस्मात्प्रजायते पद्मं ब्रह्माण्डमथवा महत् ॥ ४४ ॥

kadācideva puruṣo vīryaṃ sṛjati vāriṇi | tasmātprajāyate padmaṃ brahmāṇḍamathavā mahat || 44 ||

Sometimes a person releases his seed into water, from that a lotus is born, or the vast cosmic egg.

कभी कभी एक पुरुष पानी में अपना वीर्य छोड़ता है, उससे एक कमल जन्म लेता है, या फिर विशाल ब्रह्मांड अंडा।

4.47.45

तस्मात्प्रजायते ब्रह्मा कदाचिद्भास्करोऽप्यसौ । कदाचिद्वरुणो ब्रह्मा कदाचिद्वायुरण्डजः ॥ ४५ ॥

tasmātprajāyate brahmā kadācidbhāskaro'pyasau | kadācidvaruṇo brahmā kadācidvāyuraṇḍajaḥ || 45 ||

From that Brahma is born, sometimes he is the sun itself, sometimes Brahma is Varuna, sometimes the one born from the egg is Vayu, the wind.

उससे ब्रह्मा जन्म लेते हैं, कभी वे खुद सूरज होते हैं, कभी ब्रह्मा वरुण होते हैं, कभी अंडे से जन्मा वही वायु होता है।

4.47.46

एवमन्तर्विहीनासु विचित्रास्विह सृष्टिषु । विचित्रोत्पत्तयो राम ब्रह्मणो विविधा गताः ॥ ४६ ॥

evamantarvihīnāsu vicitrāsvih sṛṣṭiṣu | vicitrotpattayo rāma brahmaṇo vividhā gatāḥ || 46 ||

So, Rama, among these many varied creations that have no fixed core, the births of Brahma have happened in all kinds of different ways.

इस तरह, हे राम, इन तरह तरह की सृष्टियों में, जिनका कोई स्थिर मूल नहीं है, ब्रह्मा का जन्म तरह तरह से हुआ है।

4.47.47

निदर्शनार्थं सृष्टेस्तु मयैकस्य प्रजापतेः । भवते कथितोत्पत्तिर्न तत्र नियमः क्वचित् ॥ ४७ ॥

nidarśanārthaṃ sṛṣṭestu mayaikasya prajāpateḥ | bhavate kathitotpattirna tatra niyamaḥ kvacit || 47 ||

Just as an example, I have told you the origin of one single creation, of one Prajapati, there is no fixed rule about this anywhere.

बस एक उदाहरण के लिए मैंने तुम्हें एक ही सृष्टि का, एक ही प्रजापति का जन्म बताया है, इसमें कहीं भी कोई तय नियम नहीं है।

4.47.48

मनोविजृम्भणमिदं संसार इति संमतम् । संबोधनाय भवतः सृष्टिक्रम उदाहृतः ॥ ४८ ॥

manovijṛmbhaṇamidaṃ saṃsāra iti sammatam | sambodhanāya bhavataḥ sṛṣṭikrama udāhṛtaḥ || 48 ||

It is agreed that this is nothing but the mind spreading itself out, this is what is called the world. To help you understand, the order of creation has been described this way.

यह माना जाता है कि यह सब मन के फैलाव के सिवा कुछ नहीं है, इसी को संसार कहते हैं। तुम्हें समझाने के लिए ही सृष्टि का यह क्रम बताया गया है।

4.47.49

सात्त्विकीप्रभृतयो याश्च जातयश्चेत्थमागताः । इति ते कथनायैष सृष्टिक्रम उदाहृतः ॥ ४९ ॥

sāttvikīprabhṛtayo yāśca jātayaścetthamāgatāḥ | iti te kathanāya eṣa sṛṣṭikrama udāhṛtaḥ || 49 ||

The sattvic births and the other kinds that have come about in this way, to tell you about these, this order of creation has been shown as an example.

सात्त्विक और दूसरी तरह की जितनी भी उत्पत्तियाँ इस तरह हुई हैं, उन्हें बताने के लिए ही सृष्टि का यह क्रम उदाहरण के रूप में दिया गया है।

4.47.50

पुनः सृष्टिः पुनर्नाशः पुनर्दुःखं पुनः सुखम्। पुनरज्ञः पुनस्तज्ज्ञो बन्धमोक्षदृशः पुनः ॥ ५० ॥

punaḥ sṛṣṭiḥ punarnāśaḥ punarduḥkhaṃ punaḥ sukham | punarajñaḥ punastajjño bandhamokṣadṛśaḥ punaḥ || 50 ||

Again creation, again destruction, again sorrow, again happiness, again the ignorant one, again the one who knows, again the views of bondage and freedom.

फिर सृष्टि, फिर नाश, फिर दुख, फिर सुख, फिर अनजान आदमी, फिर जानने वाला, फिर बंधन और मुक्ति की सोच।

4.47.51

पुनः सृष्टिकराऽवीतवीतस्नेहदृशः पुनः। दीपा इव कृतालोकाः प्रशाम्यन्त्युद्भवन्ति च ॥ ५१ ॥

punaḥ sṛṣṭikarā'vītavītasnehadṛśaḥ punaḥ | dīpā iva kṛtālokāḥ praśāmyantyudbhavanti ca || 51 ||

Again the makers of creation appear, again their love comes and goes, like lamps that have given light, they go out, and they flare up again.

फिर सृष्टि बनाने वाले आते हैं, फिर उनका प्रेम कभी रहता है कभी चला जाता है, ठीक उन दीयों की तरह जो जल चुके हैं, वे बुझ जाते हैं, और फिर जल उठते हैं।

4.47.52

देहोत्पत्तौ विनाशे च दीपानां ब्रह्मणामपि। कालेनाधिकतां त्यक्त्वा नाशे भेदो न कश्चन ॥ ५२ ॥

dehotpattau vināśe ca dīpānāṃ brahmaṇāmapi | kālenādhikatāṃ tyaktvā nāśe bhedo na kaścana || 52 ||

In the birth and death of bodies, of lamps, and even of the Brahmas, apart from a difference in how long each one lasts, there is no difference at all in their dying.

शरीरों के, दीयों के, और यहाँ तक कि ब्रह्माओं के जन्म और मरने में भी, समय की लंबाई के फर्क के अलावा, उनके मरने में कोई फर्क नहीं है।

4.47.53

पुनः कृतं पुनस्त्रेता पुनः स द्वापरः कलिः। पुनरावर्तते सर्वं चक्रावर्ततया जगत् ॥ ५३ ॥

punaḥ kṛtaṃ punastretā punaḥ sa dvāparaḥ kaliḥ | punarāvartate sarvaṃ cakrāvartatayā jagat || 53 ||

Again the Krita age, again the Treta, again that Dvapara and Kali, everything comes back again, the world turns around like a wheel.

फिर कृतयुग, फिर त्रेता, फिर वही द्वापर और कलियुग, सब कुछ फिर लौट आता है, यह दुनिया पहिए की तरह घूमती रहती है।

4.47.54

पुनर्मन्वन्तरारम्भाः पुनः कल्पपरम्पराः। पुनः पुनः कार्यदशाः प्रातः प्रातरहो यथा ॥ ५४ ॥

punarmanvantarārambhāḥ punaḥ kalpaparamparāḥ | punaḥ punaḥ kāryadaśāḥ prātaḥ prātaraho yathā || 54 ||

Again the ages of Manu begin, again the cosmic cycles follow one after another, again and again the stages of work happen, just as morning comes after morning.

फिर मनु के युग शुरू होते हैं, फिर सृष्टि के महाचक्र एक के बाद एक आते हैं, बार बार काम की वही अवस्थाएँ आती हैं, ठीक जैसे रोज सुबह के बाद सुबह आती है।

4.47.55

लोकालोककलाकालकलनाकलितान्तरम् । पुनःपुनरिदं सर्वं न किंचन पुनःपुनः ॥ ५५ ॥

lokālokakalākālakalanākalitāntaram | punaḥpunaridaṃ sarvaṃ na kiṃcana punaḥpunaḥ || 55 ||

Time and its passing moments mark out the gap between this seen world and what lies beyond it. All this happens again and again, yet, again and again, it is nothing at all.

समय और उसके बीतते पलों से इस दिखने वाली दुनिया और उससे परे की दूरी नापी जाती है। यह सब बार बार होता है, फिर भी, बार बार, यह कुछ भी नहीं है।

4.47.56

अनाहते प्रतप्तेऽयःपिण्डेऽनलकणा इव । इमे भावाः स्थिता नित्यं चिदाकाशे स्वभावतः ॥ ५६ ॥

anāhate pratapte'yaḥpiṇḍe'nalakaṇā iva | ime bhāvāḥ sthitā nityaṃ cidākāśe svabhāvataḥ || 56 ||

Like sparks of fire inside a lump of iron that glows hot though never struck, these things stand forever, by their own nature, in the space of pure awareness.

जैसे बिना ठोकी हुई तपी हुई लोहे की डली में चिंगारियाँ होती हैं, वैसे ही ये सारी चीज़ें हमेशा, अपने आप, चेतना के आकाश में टिकी रहती हैं।

4.47.57

कदाचिदनभिव्यक्तं कदाचिद्व्यक्तिमागतम् । इदमस्ति परे तत्त्वे सर्वं वृक्ष इवार्तवम् ॥ ५७ ॥

kadācidanabhivyaktaṃ kadācidvyaktimāgatam | idamasti pare tattve sarvaṃ vṛkṣa ivārtavam || 57 ||

Sometimes unseen, sometimes come into view, all this exists within the highest reality, like the flowers and fruit that come to a tree only in their season.

कभी छिपा हुआ, कभी दिखाई देता हुआ, यह सब उस परम तत्व में मौजूद है, ठीक वैसे ही जैसे पेड़ में मौसम पर आने वाले फूल फल होते हैं।

4.47.58

चित्स्पन्द एव सर्वात्मा सर्वदैवेदृशाकृतिः । यदस्माज्जायते सर्गो द्वीन्दुत्वमिव लोचनात् ॥ ५८ ॥

citspanda eva sarvātmā sarvadaivedṛśākṛtiḥ | yadasmājjāyate sargo dvīndutvamiva locanāt || 58 ||

The pulse of pure awareness alone is the self of everything, always looking just the same, creation is born from it the way the sight of two moons is born from a fault in the eye.

चेतना की धड़कन ही सबकी आत्मा है, जो हमेशा एक जैसी दिखती है, उसी से सृष्टि जन्म लेती है, ठीक जैसे आँख के दोष से दो चाँद दिखाई देने लगते हैं।

4.47.59

चितः सर्वाः समायान्ति संतताः सृष्टिदृष्टयः । तत्स्था एवाप्यतत्स्थाभाश्चन्द्रादिव मरीचयः ॥ ५९ ॥

citaḥ sarvāḥ samāyānti saṃtatāḥ sṛṣṭidṛṣṭayaḥ | tatsthā evāpyatatsthābhāścandrādiva marīcayaḥ || 59 ||

From awareness alone come all these unbroken appearances of creation, resting in it alone, yet looking as if they do not rest in it, like rays of light coming from the moon.

चेतना से ही सृष्टि के ये सारे लगातार दिखने वाले रूप आते हैं, वे चेतना में ही टिके होते हैं, पर ऐसे दिखते हैं मानो उसमें टिके ही न हों, ठीक जैसे चाँद से निकलने वाली किरणें।

4.47.60

न कदाचन संसारः किलायं राम सत्सदा । सर्वशक्तावसंसारशक्तिता विद्यते यतः ॥ ६० ॥

na kadācana saṃsāraḥ kilāyaṃ rāma satsadā | sarvaśaktāvasaṃsāraśaktitā vidyate yataḥ || 60 ||

This world, Rama, is never truly real at all times, because the all-powerful one also has the power of there being no world at all.

हे राम, यह संसार कभी भी हमेशा के लिए सच्चा नहीं है, क्योंकि जो सब कुछ करने में समर्थ है उसमें संसार के न होने की शक्ति भी मौजूद है।

4.47.62

न चैवेदं कदाचित्तु साधो जगदनीदृशम् । सर्वशक्तौ हि संसारशक्तिता विद्यते यतः ॥ ६२ ॥

na caivedaṃ kadācittu sādho jagadanīdṛśam | sarvaśaktau hi saṃsāraśaktitā vidyate yataḥ || 62 ||

And also, good sir, this world is never at any time other than how it appears, because the all-powerful one also has the power of being this world.

और हे साधु, यह जगत कभी भी अपने इस रूप से अलग नहीं होता, क्योंकि जो सब कुछ करने में समर्थ है उसमें संसार बनने की शक्ति भी है।

4.47.63

ज्ञदृष्ट्या सर्वमेवेदं ब्रह्मैवेति महामते । नास्ति संसार इत्येतदुपपद्यत एव च ॥ ६३ ॥

jñadṛṣṭyā sarvamevedaṃ brahmaiveti mahāmate | nāsti saṃsāra ityetadupapadyata eva ca || 63 ||

Seen through the eyes of one who knows, great-minded Rama, all this is nothing but Brahman, and so it is entirely right to say that there is no world at all.

हे महाबुद्धिमान राम, जो जानता है उसकी दृष्टि से यह सब कुछ ब्रह्म ही है, इसलिए यह कहना पूरी तरह ठीक है कि कोई संसार है ही नहीं।

4.47.64

अज्ञदृष्ट्या त्वविच्छिन्नसंसारत्वादनारतम् । नित्या संसारमायेयं मिथ्यापीहोपपद्यते ॥ ६४ ॥

ajñadṛṣṭyā tvavicchinnasaṃsāratvādanāratam | nityā saṃsāramāyeyaṃ mithyāpīhopapadyate || 64 ||

But to the eyes of one who does not know, since the world never stops appearing, this illusion of the world proves to be constant here, even though it is false.

पर जो नहीं जानता उसकी दृष्टि से, चूंकि संसार का दिखना कभी रुकता ही नहीं, इसलिए संसार का यह भ्रम झूठा होते हुए भी यहां हमेशा बना रहता हुआ सिद्ध होता है।

4.47.66

अनारतपतद्रूपा दिशो दृष्टा विनश्वराः । विनाशीदं जगत्सर्वमिति किं नोपपद्यते ॥ ६६ ॥

anāratapatadrūpā diśo dṛṣṭā vinaśvarāḥ | vināśīdaṃ jagatsarvamiti kiṃ nopapadyate || 66 ||

In every direction things are seen constantly falling and dying away, so why should it not follow that this whole world too is something that perishes?

हर दिशा में चीज़ें लगातार गिरती और नष्ट होती दिखाई देती हैं, तो फिर यह क्यों न माना जाए कि यह पूरा जगत भी नष्ट होने वाला है?

4.47.67

सर्वत्रोदितचन्द्रार्का दिशो दृष्टाः स्थिराचलाः । अविनाशि जगत्सर्वमित्यप्यवितथोपमम् ॥ ६७ ॥

sarvatroditacandrārkā diśo dṛṣṭāḥ sthirācalāḥ | avināśi jagatsarvamityapyavitathopamam || 67 ||

Everywhere the sun and the moon rise, and the directions look fixed and unmoving, so it is just as fair to say that this whole world never perishes.

हर जगह सूरज और चांद उगते हैं, और दिशाएं स्थिर और अटल दिखाई देती हैं, इसलिए यह कहना भी उतना ही सही है कि यह पूरा जगत कभी नष्ट नहीं होता।

4.47.68

न तदस्ति न यत्तस्मिन्नेकस्मिन्विततात्मनि । संकल्पकलनाजालमनाख्ये नोपपद्यते ॥ ६८ ॥

na tadasti na yattasminnekaśminvitatātmani | saṃkalpakalanājālamanākhye nopapadyate || 68 ||

There is nothing that stands outside that one being who fills and pervades everything, and even the web spun by the mind's imagining has its place within that nameless one.

ऐसा कुछ भी नहीं है जो उस एक सब-व्यापी सत्ता से बाहर हो, और मन की कल्पना से बुना गया जाल भी उसी नाम-रहित सत्ता के भीतर ही है।

4.47.69

पुनःपुनरिदं सर्वं पुनर्मरणजन्मनी । पुनः सुखं पुनर्दुःखं पुनः करणकर्मणी ॥ ६९ ॥

punaḥpunaridaṃ sarvaṃ punarmaraṇajanmanī | punaḥ sukhaṃ punarduḥkhaṃ punaḥ karaṇakarmaṇī || 69 ||

Again and again all this happens: again death, again birth, again pleasure, again pain, again the organs of the body, again their actions.

बार-बार यह सब होता है: फिर मृत्यु, फिर जन्म, फिर सुख, फिर दुख, फिर इंद्रियां, फिर उनके काम।

4.47.70

पुनराशाः पुनर्व्योम पुनरम्भोधयोऽद्रयः । अभ्युदेति पुनः सृष्टिः खवदर्कप्रभा यथा ॥ ७० ॥

punarāśāḥ punarvyoma punarambhodhayo'drayaḥ | abhyudeti punaḥ sṛṣṭiḥ khavadarkaprabhā yathā || 70 ||

Again the directions, again the sky, again the oceans and the mountains, creation rises up again, the way sunlight rises again in the sky.

फिर दिशाएं, फिर आकाश, फिर समुद्र और पहाड़, सृष्टि फिर से उठ खड़ी होती है, जैसे आकाश में सूरज की रोशनी फिर से उठती है।

4.47.71

पुनर्दैत्याः पुनर्देवाः पुनर्लोकान्तरक्रमाः । पुनः स्वर्गापवर्गेहाः पुनरिन्द्रः पुनः शशी ॥ ७१ ॥

punardaitayāḥ punardevāḥ punarlokāntarakramāḥ | punaḥ svargāpavargehāḥ punarindraḥ punaḥ śaśī || 71 ||

Again the demons, again the gods, again the passages to other worlds, again the striving for heaven and for freedom, again an Indra, again a moon.

फिर दैत्य, फिर देवता, फिर दूसरे लोकों में जाने के क्रम, फिर स्वर्ग और मुक्ति पाने की कोशिशें, फिर कोई इंद्र, फिर कोई चांद।

4.47.72

पुनर्नारायणो देवः पुनर्दनुसुतादयः । पुनराशाचलच्चारुचन्द्रार्कवरुणानिलाः ॥ ७२ ॥

punarnārāyaṇo devaḥ punardanusutādayaḥ | punarāśācalaccārucandrārkavaruṇānilāḥ || 72 ||

Again the god Narayana, again the sons of Danu and the rest, again the directions, the mountains, and the lovely moon, sun, Varuna, and winds.

फिर भगवान नारायण, फिर दनु के पुत्र और बाकी सब, फिर दिशाएं, पहाड़, और सुंदर चांद, सूरज, वरुण और हवाएं।

4.47.73

सुमेरुकर्णिकाकान्ता सह्यकेसरशालिनी । पूर्णा स्फीतोदरोदेति रोदसी नलिनी पुनः ॥ ७३ ॥

sumerukarṇikākāntā sahyakesaraśālinī | pūrṇā sphītodarodeti rodasī nalinī punaḥ || 73 ||

Again the lotus that is heaven and earth rises up, lovely with Mount Meru as its centre, rich with the Sahya mountains as its filaments, full and swollen.

फिर स्वर्ग और धरती रूपी कमल खिल उठता है, जिसके बीच में मेरु पर्वत सुंदर लगता है, सह्य पर्वत जिसके रेशों जैसे शोभा देते हैं, वह पूरा भरा और फूला हुआ है।

4.47.74

व्योमकाननमाक्रम्य वल्गत्यंशुनखोत्करैः । तमःकरिघटा भेत्तुं पुनर्भास्करकेसरी ॥ ७४ ॥

vyomakānanamākramya valgatyaṃśunakhōtkaraiḥ | tamaḥkarighaṭā bhettuṃ punarbhāskarakesarī || 74 ||

Again the sun, like a lion, leaps into the forest of the sky, its rays like claws, springing to tear apart the herd of elephants that is the darkness.

फिर सूरज, शेर की तरह, आकाश रूपी जंगल में कूद पड़ता है, उसकी किरणें पंजों जैसी हैं, वह अंधेरे रूपी हाथियों के झुंड को चीरने के लिए झपटता है।

4.47.75

पुनरिन्दुश्चलत्स्वच्छमञ्जरीसुन्दरैः करैः । करोत्यमृतमाह्लादि दिग्वधूमुखमण्डनम् ॥ ७५ ॥

punarinduścalatsvacchamañjarīsundaraiḥ karaiḥ | karotyamṛtamāhlādi digvadhūmukhamaṇḍanam || 75 ||

Again the moon, its rays as lovely as fresh, clear sprays of blossom, makes a cool, delightful ornament for the faces of the maidens of the directions.

फिर चांद, जिसकी किरणें ताज़े और साफ फूलों के गुच्छों जैसी सुंदर हैं, दिशाओं की सुंदरियों के चेहरे के लिए एक ठंडा, सुखद गहना बना देता है।

4.47.76

पुनः स्वर्गतरोः पुण्यक्षयवातसमीरिताः । पतन्तीह विनुन्नाङ्गाः पुण्यकृत्पुष्पराशयः ॥ ७६ ॥

punaḥ svargataroḥ puṇyakṣayavātasamīritāḥ | patantīha vinunnāṅgāḥ puṇyakṛtpusparāśayaḥ || 76 ||

Again, good people are like flowers on the wish tree of heaven; when the wind of their used-up merit blows, their bodies are shaken loose and they fall back down here.

फिर, अच्छे कर्म करने वाले लोग स्वर्ग के कल्पवृक्ष के फूलों जैसे हैं; जब उनके पुण्य के खत्म होने की हवा चलती है, तो उनके शरीर झड़ जाते हैं और वे फिर यहां गिर पड़ते हैं।

4.47.77

पुनः कार्यक्रियापक्षैः संसारारम्भनामकम् । किंचित्पटपटं कृत्वा याति कालकपिञ्जलः ॥ ७७ ॥

punaḥ kāryakriyāpakṣaiḥ saṃsārārambhanāmakam | kiṃcitpaṭapaṭaṃ kṛtvā yāti kālakapiñjalaḥ || 77 ||

Again time, like a partridge bird, flaps wings that are the deeds still to be done, makes a small rustling sound called the start of a new world, and flies off.

फिर समय, तीतर पक्षी की तरह, अभी होने वाले कामों रूपी अपने पंख फड़फड़ाता है, थोड़ी सी सरसराहट करता है जिसे नई सृष्टि की शुरुआत कहा जाता है, और उड़ जाता है।

4.47.78

पुनरिन्द्रादिके याते सज्जमास्थाय केवलम् । आयात्यपरदेवेन्द्रषट्पदः स्वर्गपङ्कजम् ॥ ७८ ॥

punarindrādike yāte sajjamāsthāya kevalam | āyātyaparadevendraṣaṭpadaḥ svargapaṅkajam || 78 ||

Again, when one Indra has gone and only the readiness for the next one remains, another Indra comes, like a bee, to the lotus flower of heaven.

फिर, जब एक इंद्र चला जाता है और सिर्फ अगले के लिए तैयारी बाकी रहती है, तो दूसरा इंद्र भौंरे की तरह स्वर्ग रूपी कमल पर आ जाता है।

4.47.79

पुनः कालं कृतापूतं कलुषीकुरुते कलिः । सचक्रिणमिवाम्भोधिं प्रवृद्धोऽवकरानिलः ॥ ७९ ॥

punaḥ kālaṃ kṛtāpūtaṃ kaluṣīkurute kaliḥ | sacakriṇamivāmbhodhiṃ pravṛddho'vakarānilaḥ || 79 ||

Again Kali makes time, already impure, still filthier, the way a strong foul wind stirs up dirt in the ocean where Vishnu, the wheel-bearer, lies.

फिर कलि पहले से ही अशुद्ध समय को और गंदा कर देता है, जैसे एक तेज़ बदबूदार हवा उस समुद्र में गंदगी फैला देती है जिसमें चक्रधारी विष्णु लेटे हैं।

4.47.80

पुन कालकुलालेन कृतभूतशरावकम् । चक्रमावर्त्यते वेगादजस्रं कल्पनामकम् ॥ ८० ॥

puna kālakulālena kṛtabhūtaśarāvakam | cakramāvartyate vegādajasraṃ kalpanāmakam || 80 ||

Again Time the potter spins his wheel fast and without stop, a wheel made only of imagination, shaping on it the pots that are living beings.

फिर समय रूपी कुम्हार अपना चाक तेज़ी से और लगातार घुमाता है, यह चाक सिर्फ कल्पना से बना है, और उस पर जीवों रूपी बर्तन गढ़ता है।

4.47.81

पुनर्नीरसतामेति जगदस्तशुभस्थिति । अभ्यासीभूतसंकल्पं संशुष्कमिव काननम् ॥ ८१ ॥

punarnīrasatāmeti jagadastśubhasthiti | abhyāsībhūtasaṅkalpaṃ saṃśuṣkamiva kānanam || 81 ||

Again the world turns dry and lifeless, its goodness gone, its thinking worn into a fixed habit, like a forest that has withered.

फिर जगत सूखा और निर्जीव हो जाता है, उसकी भलाई खत्म हो जाती है, उसकी सोच एक रटी-रटाई आदत बन जाती है, जैसे कोई जंगल सूख गया हो।

4.47.82

पुनरर्कगणेष्वग्निदग्धानन्तकलेवरम् । सर्वभूतास्थिसंपूर्णं जगदेति श्मशानताम् ॥ ८२ ॥

punararkagaṇeṣvagnidagdhānantakalevaram | sarvabhūtāsthisaṃpūrṇaṃ jagadeti śmaśānatām || 82 ||

Again, when the many suns have burned countless bodies to nothing, the world, full of the bones of every creature, becomes one great cremation ground.

फिर, जब बहुत सारे सूरज असंख्य शरीरों को जलाकर राख कर देते हैं, तो जगत, जो हर जीव की हड्डियों से भरा होता है, एक बड़ा श्मशान बन जाता है।

4.47.83

पुनः कुलाचलाकारपुष्करावर्तवर्षणैः । नृत्यद्भवबृहत्फेनां यात्येकार्णवतां जगत् ॥ ८३ ॥

punaḥ kulācalākārapuṣkarāvartavarṣaṇaiḥ | nṛtyadbhavabṛhatphenāṃ yātyekārṇavatāṃ jagat || 83 ||

Again the great Pushkaravarta clouds, shaped like mountain ranges, pour down rain, and the world, its huge foam dancing, turns into a single ocean.

फिर पर्वतों जैसे विशाल पुष्करावर्त बादल बरसते हैं, और जगत, जिसका बड़ा झाग नाचता रहता है, एक ही समुद्र बन जाता है।

4.47.84

पुनः संशान्तवाय्वम्बुरिक्तं सकलवस्तुभिः । तदपूर्वमिवाकाशं जगदायाति शून्यताम् ॥ ८४ ॥

punaḥ saṃśāntavāyvamburiktaṃ sakalavastubhiḥ | tadapūrvamivākāśaṃ jagadāyāti śūnyatām || 84 ||

Again, when wind and water grow still and everything else is gone, the world becomes empty, like a sky that never held anything at all.

फिर, जब हवा और पानी शांत हो जाते हैं और बाकी सब कुछ मिट जाता है, तो जगत खाली हो जाता है, जैसे कोई ऐसा आकाश जिसमें कभी कुछ था ही नहीं।

4.47.85

पुनः कतिपया भुक्त्वा समाः समरसाशयः । जीवितं जीर्णया तन्वा पुनः स्वात्मनि लीयते ॥ ८५ ॥

punaḥ katipayā bhuktvā samāḥ samarasāśayaḥ | jīvitaṃ jīrṇayā tanvā punaḥ svātmani līyate || 85 ||

Again, after living through a few years with a calm and even mind, life, now in a worn-out body, dissolves once more into one's own self.

फिर, कुछ वर्षों तक शांत और सम मन से जीने के बाद, जीवन, अब घिसे-पिटे शरीर में, फिर से अपने ही आत्मा में विलीन हो जाता है।

4.47.86

पुनरन्येन कालेन तथैव जगतां गणान् । मनस्तनोति वै शून्ये गन्धर्वनगरं यथा ॥ ८६ ॥

punaranyena kālena tathaiva jagatāṃ gaṇān | manastanoti vai śūnye gandharvanagaraṃ yathā || 86 ||

Again, at another time, in just the same way, the mind spreads out whole worlds in empty space, the way a city in the sky appears.

फिर, किसी और समय पर, ठीक उसी तरह, मन खाली जगह में पूरे-पूरे जगत फैला देता है, जैसे आकाश में एक शहर दिखाई देता है।

4.47.87

पुरः सर्गसमारम्भः प्रलये सर्वसंभवः । सर्वं पुनरिदं राम चक्रवत्परिवर्तते ॥ ८७ ॥

puraḥ sargasamārambhaḥ pralaye sarvasaṃbhavaḥ | sarvaṃ punaridaṃ rāma cakravatparivartate || 87 ||

First creation begins, then at the time of dissolution everything arises again, all this, Rama, keeps turning around and around like a wheel.

पहले सृष्टि शुरू होती है, फिर प्रलय के समय सब कुछ फिर से उठ खड़ा होता है, हे राम, यह सब पहिये की तरह घूमता ही रहता है।

4.47.88

किमेतस्मिन्महामायाडम्बरे दीर्घशम्बरे । राम सत्यमसत्यं वा निर्णेयं यदिहोच्यते ॥ ॥ ८८ ॥

kimetasminmahāmāyāḍambare dīrghaśambare | rāma satyam asatyam vā nirṇeyam yadihocyate || 88 ||

In this whole long, grand show of great illusion, as vast as the magic of the demon Shambara, Rama, what here should we decide is real, and what is unreal?

इस लंबे और भव्य महामाया के तमाशे में, जो राक्षस शंबर के जादू जितना बड़ा है, हे राम, यहां क्या सच माना जाए और क्या झूठ, यह कैसे तय करें?

4.47.89

दाशूराख्यायिकेवेयं राम संसारचक्रिका । कल्पनारचिताकारा वस्तुशून्या न वस्तुतः ॥ ॥ ८९ ॥

dāśūrākhyāyikeveyam rāma saṃsāracakrikā | kalpanāracitākārā vastuśūnyā na vastutaḥ || 89 ||

This wheel of the world, Rama, is like the story of Dashura, its shape made only by imagination, empty of any real substance, not real at all.

हे राम, यह संसार रूपी पहिया दाशूर की कहानी जैसा है, जिसका रूप सिर्फ कल्पना से बना है, उसमें कोई असली चीज़ नहीं है, यह बिल्कुल सच नहीं है।

4.47.90

अविरलमिदमाततं विकल्पैरसदुदितैरपि तैर्द्विचन्द्रकल्पैः । विरचितमसतानुपन्नसत्यं जगदिह तेन विमूढता किमुत्था ॥ ॥ ९० ॥

aviralamidamātataṃ vikalpairasaduditairapi tairdvicandrakalpaiḥ | viracitamasatānupannasatyaṃ jagadiha tena vimūḍhatā kimutthā || 90 ||

This world spreads out everywhere without a break, made entirely from false ideas that arose out of nothing, like seeing two moons instead of one. It is built out of what is unreal, and its truth was never established. So why should anyone be confused by it?

यह जगत हर जगह बिना रुके फैला हुआ है, यह पूरी तरह उन झूठे खयालों से बना है जो कहीं से भी पैदा हुए, जैसे एक की जगह दो चांद दिखना। यह उस चीज़ से बना है जो असली नहीं है, और इसकी सच्चाई कभी साबित नहीं हुई। तो फिर इसे लेकर कोई भ्रम में क्यों पड़े?

Chapter 48

4.48.1

आधिव्याधिपरीताय प्रातर्वाद्य विनाशिने । प्रयतन्ते शरीराय हितमज्ञास्तु नात्मने ॥ १ ॥

ādhi-vyādhi-parītāya prātar-vādya vināśine | prayatante śarīrāya hitam-ajñāstu nātmane || 1 ||

The body is surrounded by mental pain and disease, and it is going to die anyway, maybe this very morning, maybe today. Foolish people work hard for the comfort of this body, but not for their own true self.

यह शरीर मानसिक कष्टों और बीमारियों से घिरा है, और यह मरने ही वाला है, शायद आज सुबह ही, शायद आज ही। मूर्ख लोग इस शरीर के सुख के लिए मेहनत करते हैं, पर अपनी असली आत्मा के लिए नहीं करते।

4.48.2

ये तु पारं गता बुद्धेरिन्द्रियैर्न वशीकृताः । त एनां जागतीं मायां पश्यन्ति करबिल्ववत् ॥ २ ॥

ye tu pāraṃ gatā buddher-indriyair-na vaśīkṛtāḥ | ta enāṃ jāgatīṃ māyāṃ paśyanti karabilvavat || 2 ||

But those who have gone beyond the intellect, whose senses do not control them, see this illusion of the waking world as clearly as a bel fruit held in the hand.

पर जिन्होंने बुद्धि को पार कर लिया है, जिन्हें इंद्रियां अपने वश में नहीं कर पातीं, वे इस जागती हुई दुनिया की माया को उतनी ही साफ़ देखते हैं जितना हाथ में रखा बेल का फल दिखता है।

4.48.3

तुच्छां तां जागतीं मायां दृष्ट्वा जीवो विचारवान् । अहंकारमयीं मायां त्यजत्यहिरिव त्वचम् ॥ ३ ॥

tucchāṃ tāṃ jāgatīṃ māyāṃ dṛṣṭvā jīvo vicāravān | ahaṃkāramayīṃ māyāṃ tyajaty-ahir-iva tvacam || 3 ||

Seeing that this illusion of the waking world is worthless, a person who reflects deeply drops this illusion made of ego, just as a snake sheds its skin.

इस जागती हुई दुनिया की माया को तुच्छ जानकर, गहराई से सोचने वाला व्यक्ति अहंकार से बनी इस माया को वैसे ही छोड़ देता है जैसे सांप अपनी केंचुली छोड़ देता है।

4.48.4

असक्ततां ततोऽभ्येत्य पुना राम न जायते । क्षेत्रेष्वपि चिरं तिष्ठन्बीजं दग्धमिवाग्निना ॥ ४ ॥

asaktatāṃ tato'bhyetya punā rāma na jāyate | kṣetreṣv-api ciraṃ tiṣṭhan-bījaṃ dagdham-ivāgninā || 4 ||

Having become free of attachment in this way, Rama, a person is not born again, like a seed burnt by fire, which even after lying a long time in the field never sprouts.

इस तरह आसक्ति से मुक्त होकर, हे राम, वह व्यक्ति फिर जन्म नहीं लेता, जैसे आग से जला हुआ बीज खेत में बहुत समय तक पड़े रहने पर भी नहीं उगता।

4.48.6

त्वमप्यज्ञवदज्ञस्य शरीरस्य समीहितम् । मा संपादय दुःखाय भवात्मैकपरायणः ॥ ६ ॥

tvam-apy-ajñavad-ajñasya śarīrasya samīhitam | mā saṃpādaya duḥkhāya bhavātmaikaparāyaṇaḥ || 6 ||

You too, do not be foolish and satisfy the wishes of this foolish body, that only brings suffering. Stay devoted only to your true self.

तुम भी मूर्खों की तरह इस मूर्ख शरीर की इच्छाएं पूरी मत करो, इससे केवल दुःख मिलता है। तुम केवल अपनी असली आत्मा में ही लगे रहो।

4.48.7

श्रीराम उवाच । दाशूराख्यायिकेवेयं सुखसंसारचक्रिका । कल्पनारचिताकारा वस्तुशून्येति किं प्रभो ॥ ७ ॥

śrīrāma uvāca | dāśūrākhyāyikeveyam sukhasaṃsāracakrikā | kalpanāracitākārā vastuśūnyeti kiṃ prabho || 7 ||

Sri Rama said, my lord, is this wheel of pleasant worldly life, like the story of Dashura, only a shape built by the imagination, with nothing real in it? Is that so?

श्री राम बोले, हे प्रभु, क्या यह सुखी सांसारिक जीवन का चक्र, दाशूर की कथा की तरह, केवल कल्पना से बनाया हुआ एक रूप है, जिसमें कुछ भी असली नहीं है? क्या ऐसा ही है?

4.48.8

श्रीवसिष्ठ उवाच । जगन्मायास्वरूपस्य वर्णनाव्यपदेशतः । दाशूराख्यायिका राम वर्ण्यमानां मया शृणु ॥ ८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | jagannmāyāsvarūpasya varṇanāvyapadeśataḥ | dāśūrākhyāyikā rāma varṇyamānāṃ mayā śṛṇu || 8 ||

Sri Vasishtha said, Rama, to show you the true nature of this world's illusion, listen now to the story of Dashura, which I am about to tell you.

श्री वसिष्ठ बोले, हे राम, इस जगत की माया का असली रूप दिखाने के लिए, अब मैं तुम्हें दाशूर की कथा सुनाता हूं, उसे ध्यान से सुनो।

4.48.9

अस्त्यस्मिन्वसुधापीठे विचित्रकुसुमद्रुमः । मागधो नाम विख्यातः श्रीमाञ्जनपदो महान् ॥ ९ ॥

astyasminvasudhāpīṭhe vicitrakusumadrumaḥ | māgadho nāma vikhyātaḥ śrīmāñjanapado mahān || 9 ||

On this earth there is a great and famous land called Magadha. It is rich, and full of wonderful flowering trees.

इस धरती पर मगध नाम का एक महान और प्रसिद्ध देश है। वह समृद्ध है और तरह-तरह के फूलों वाले सुंदर पेड़ों से भरा हुआ है।

4.48.10

कदम्बवनविस्तारलीलावलितजङ्गलः । विचित्रविहगव्यूहसर्वाश्चर्यमनोहरः ॥ १० ॥

kadambavanavistāralīlāvalitajaṅgalaḥ | vicitravihagavyūhasarvāścaryamanoharaḥ || 10 ||

Its forests were beautifully covered with wide groves of kadamba trees, and it was utterly charming with its many kinds of colourful birds.

उसके जंगल कदंब के पेड़ों के बड़े-बड़े झुरमुटों से खूबसूरती से घिरे हुए थे, और वह तरह-तरह के रंग-बिरंगे पक्षियों के कारण बेहद मनमोहक था।

4.48.11

सस्यसंकटसीमान्तः पुरोपवनमण्डितः । कमलोत्पलकह्लारपूर्णसर्वसरित्तटः ॥ ११ ॥

sasyasaṃkaṭasīmāntaḥ purōpavanamaṇḍitaḥ | kamalōtpalakahlārapūrṇasarvasarittataḥ || 11 ||

Its borders were thick with grain fields, its towns were decorated with gardens, and the banks of all its rivers were full of lotuses, blue water lilies, and white water lilies.

उसकी सीमाएं अनाज के खेतों से भरी हुई थीं, उसके नगर बगीचों से सजे हुए थे, और उसकी सभी नदियों के किनारे कमल, नीले कमल और सफेद कुमुद फूलों से भरे हुए थे।

4.48.12

उद्यानदोलाविलसल्ललनागेयघुंघुमः । निशोपभुक्तकुसुमनीरन्ध्रविशिखावनिः ॥ १२ ॥

udyānadolāvilasallalanāgeyaghuṃghumaḥ | niśopabhukta kusumanīrandhraviśikhāvaniḥ || 12 ||

The land echoed with the sweet songs of women swinging happily on swings in gardens, and its streets lay thick with flowers left over from the night before.

वहां बगीचों के झूलों पर झूलती हुई स्त्रियों के मीठे गीतों की गूंज सुनाई देती थी, और उसकी गलियां पिछली रात के इस्तेमाल किए हुए फूलों से घनी भरी रहती थीं।

4.48.13

तत्रैकस्मिन्गिरितटे कर्णिकारसमाकुले । कदलीखण्डनीरन्ध्रनीपगुल्मविराजिते ॥ १३ ॥

tatraikasmingiritaṭe karnikārasamākule | kadalīkhaṇḍanīrandhranīpagulmavirājite || 13 ||

There was a mountain slope crowded with karnikara trees, and beautiful with thick clusters of banana groves and nipa shrubs.

वहां एक पर्वत की ढलान थी, जो कर्णिकार के पेड़ों से भरी हुई थी, और जो केले के घने झुरमुटों और नीप की झाड़ियों से सुंदर लगती थी।

4.48.14

पुष्पौघस्फूर्जदनिले केसरारुणधूलिनि । कारण्डवकृतारावे रसत्सरससारसे ॥ १४ ॥

puṣpaughasphūrjadanile kesarāruṇadhūlini | kāraṇḍavakṛtārāve rasatsarasasārase || 14 ||

There the breeze was heavy with clouds of flowers, the dust was reddened by flower pollen, ducks were calling, and cranes cried sweetly by the lake.

वहां हवा फूलों की भरमार से भारी रहती थी, धूल फूलों के पराग से लाल हो जाती थी, बत्तखें बोलती रहती थीं, और सरोवर पर सारस पक्षी मीठी आवाज़ में बोलते थे।

4.48.15

दाशूरनामा महता तपोयोगेन संयुतः । कदम्बपृष्ठवास्तव्यो वीतरागो महामतिः ॥ १५ ॥

dāśūranāmā mahatā tapoyogena saṃyutaḥ | kadambapṛṣṭhavāstavyo vītarāgo mahāmatiḥ || 15 ||

On that slope lived a man named Dashura. He was full of great austerity and yogic practice, he made his home at the top of a great kadamba tree, he was free of all desire, and he was very wise.

उस ढलान पर दाशूर नाम का एक व्यक्ति रहता था। वह बड़ी तपस्या और योग-साधना से भरा हुआ था, वह एक विशाल कदंब के पेड़ के ऊपर अपना घर बनाकर रहता था, वह हर तरह की इच्छा से मुक्त था, और वह बहुत बुद्धिमान था।

4.48.17

श्रीराम उवाच । असौ तपस्वी भगवन्विपिने केन हेतुना । कथं चाप्यवसत्पृष्ठे कदम्बस्य महातरोः ॥ १७ ॥

śrīrāma uvāca | asau tapasvī bhagavanvipine kena hetunā | kathaṃ cāpyavasatpṛṣṭhe kadambasya mahātaroḥ || 17 ||

Sri Rama said, my lord, why did this ascetic live in the forest, and how did he come to live at the top of the great kadamba tree?

श्री राम बोले, हे भगवन, यह तपस्वी जंगल में किस वजह से रहता था, और वह विशाल कदंब के पेड़ के ऊपर रहने कैसे लगा?

4.48.18

श्रीवसिष्ठ उवाच । शरलोमेति विख्यातः पिता तस्य बभूव ह । रामाऽपर इव ब्रह्मा तस्मिन्नेवावसद्गिरौ ॥ १८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | śaralometi vikhyātaḥ pitā tasya babhūva ha | rāmā'para iva brahmā tasminnevāvasadgirau || 18 ||

Sri Vasishtha said, Rama, his father was known by the name Sharaloma. Like a second Brahma, he too lived on that same mountain.

श्री वसिष्ठ बोले, हे राम, उसके पिता का नाम शरलोमा था। वे मानो दूसरे ब्रह्मा की तरह उसी पर्वत पर रहते थे।

4.48.20

अथासौ शरलोमात्र भुक्त्वा युगगणं ययौ । त्यक्तदेहः सुरागारं मुक्तनीडः खगो यथा ॥ २० ॥

athāsau śaralomātra bhuktvā yugagaṇaṃ yayau | tyaktadehaḥ surāgāraṃ muktanīḍaḥ khago yathā || 20 ||

Then Sharaloma, after living here for age after age, gave up his body and went to the world of the gods, like a bird set free from its nest.

फिर शरलोमा, यहां युगों-युगों तक जीवन बिताकर, अपना शरीर त्यागकर देवताओं के लोक चले गए, जैसे कोई पक्षी अपने घोंसले से मुक्त होकर उड़ जाता है।

4.48.21

एक एव वने तस्मिन्दाशूरः प्ररुरोद ह । दशापनीतपितृकः करुणं कुररो यथा ॥ २१ ॥

eka eva vane tasmin dāśūraḥ praruroda ha | daśāpanītapitṛkaḥ karuṇaṃ kuraro yathā || 21 ||

Alone in that forest, Dashura wept, because fate had snatched his father away from him. He cried piteously, like a kurara bird.

उस जंगल में अकेला दाशूर रोने लगा, क्योंकि किस्मत ने उसके पिता को उससे छीन लिया था। वह उसी तरह करुण स्वर में रोता था जैसे कोई कुरर पक्षी रोता है।

4.48.22

मातापितृवियोगेन शोकसंतापिताशयः । म्लानिमभ्याययौ नूनं हेमन्त इव पङ्कजम् ॥ २२ ॥

mātāpitṛviyogena śokasaṃtāpitāśayaḥ | mlānimabhyāyayau nūnaṃ hemantha iva paṅkajam || 22 ||

His heart was burning with grief at losing both his mother and his father, and he withered away, just as a lotus withers in the cold season.

अपनी माता और पिता दोनों को खोने के शोक से उसका मन जल रहा था, और वह वैसे ही मुरझा गया जैसे जाड़े के मौसम में कमल मुरझा जाता है।

4.48.23

बालोऽसावतिदीनात्मा वनदेवतया वने । इत्थमाश्वासितो राम तदाऽदृश्यशरीरया ॥ २३ ॥

bālo'sāvatidīnātmā vanadevatayā vane | itthamāśvāsito rāma tadā'dṛśyaśarīrayā || 23 ||

That child, utterly heartbroken, was then comforted in the forest, Rama, by a forest goddess whose body could not be seen.

वह बालक, जो बहुत दुखी था, तब जंगल में एक वनदेवी ने उसे इस तरह सांत्वना दी, हे राम, जिसका शरीर दिखाई नहीं देता था।

4.48.24

ऋषिपुत्र महाप्राज्ञ किमज्ञ इव रोदिषि । संसारस्य न कस्मात्त्वं स्वरूपं वेत्सि चञ्चलम् ॥ २४ ॥

ṛṣiputra mahāprājña kimajña iva rodīṣi | saṃsārasya na kasmāttvaṃ svarūpaṃ vetsi cañcalam || 24 ||

Son of a sage, you are very wise. Why then are you crying like someone who knows nothing? Why do you not understand that the true nature of this world is restless, always changing?

हे ऋषिपुत्र, तुम तो बहुत बुद्धिमान हो। फिर एक अनजान इंसान की तरह क्यों रो रहे हो? तुम यह क्यों नहीं समझते कि इस संसार का असली रूप ही चंचल है, हमेशा बदलता रहता है?

4.48.25

सर्वदैवेदृशी साधो संसारे संसृतिश्चला । जायते जीव्यते पश्चादवश्यं च विनश्यति ॥ २५ ॥

sarvadaivedṛśī sādho saṃsāre saṃsṛtiścalā | jāyate jīvyate paścādavaśyaṃ ca vinaśyati || 25 ||

Good soul, in this world it is always this way. The round of birth and life is restless. One is born, then one lives, and afterward one must certainly die.

हे साधु, इस संसार में हमेशा से ऐसा ही होता आया है। जीवन का यह चक्र चंचल है। जन्म होता है, फिर जीवन चलता है, और बाद में अवश्य ही मृत्यु आ जाती है।

4.48.26

यद्यत्किंचिद्दृश्यदृशि ब्रह्मादिकमिदं मुने । गन्तव्यस्तेन सर्वेण विनाशो नात्र संशयः ॥ २६ ॥

yadyatkiñcid dṛśyadṛśi brahmādikamidaṃ mune | gantavyastena sarveṇa vināśo nātra saṃśayaḥ || 26 ||

Whatever can be seen, sage, everything starting from Brahma himself, all of it has to pass away. There is no doubt about this.

हे मुनि, जो कुछ भी दिखाई देता है, ब्रह्मा से लेकर सब कुछ, वह सब एक दिन नष्ट होने वाला है। इसमें कोई शक नहीं है।

4.48.27

तदर्थं मा कृथा व्यर्थं विषादं मरणे पितुः । अवश्यभाव्यस्तमयो जातस्याहर्षतेरिव ॥ २७ ॥

tadarthaṃ mā kṛthā vyarthaṃ viṣādaṃ maraṇe pituḥ | avaśyabhāvyastamayo jātasyāharṣateriva || 27 ||

So do not grieve uselessly over your father's death. For one who is born, an end is bound to come, just as sunset is certain for the sun that has risen.

इसलिए अपने पिता की मृत्यु पर व्यर्थ शोक मत करो। जो जन्म लेता है, उसका अंत भी तय है, जैसे उगे हुए सूरज का डूबना तय है।

4.48.28

अशरीरामिति श्रुत्वा गिरमारक्तलोचनः । धैर्यमासादयामास शिखण्डी स्तनितादिव ॥ २८ ॥

aśarīrāmiti śrutvā giramāraktalocanaḥ | dhairyamāsādayāmāsa śikhaṇḍī stanitādiva || 28 ||

Hearing that voice which had no body, the boy, his eyes red with tears, took heart, the way a peacock takes heart at the sound of thunder.

उस बिना शरीर वाली आवाज़ को सुनकर, आँसुओं से लाल आँखों वाले उस बालक को हिम्मत मिली, जैसे मोर बादल की गरज सुनकर हिम्मत पा लेता है।

4.48.29

उत्थायावश्यकं कृत्वा पाश्चात्यं पितुरादरात्। चकार तपसे बुद्धिं दृढामुत्तमसिद्धये ॥ २९ ॥

utthāyāvaśyakaṃ kṛtvā pāścātyaṃ piturādarāt | cakāra tapase buddhiṃ dṛḍhāmuttamasiddhaye || 29 ||

He got up and, out of respect for his father, performed the last rites that were needed. Then he made a firm decision to practice austerity, so as to reach the highest attainment.

वह उठा और पिता के प्रति आदर से उसके अंतिम संस्कार पूरे किए। फिर उसने तपस्या करने का पक्का फैसला किया, ताकि वह सबसे ऊँची सिद्धि पा सके।

4.48.30

ब्राह्मेण कर्मणा तस्य विपिने चरतस्तपः। अनन्तसंकल्पमयं श्रोत्रियत्वं बभूव ह ॥ ३० ॥

brāhmeṇa karmaṇā tasya vipine caratastapaḥ | anantasaṃkalpamayaṃ śrotriyatvaṃ babhūva ha || 30 ||

Carrying out the duties of a Brahmin, practicing austerity in the forest, he became learned in the Veda, and this whole learning was built out of his own endless imagining.

ब्राह्मण के कर्तव्यों का पालन करते हुए, जंगल में तपस्या करते हुए, वह वेद का ज्ञाता बन गया, और यह सारा ज्ञान उसकी अपनी अनंत कल्पना से बना था।

4.48.31

अज्ञातज्ञेयबुद्धेस्तु श्रोत्रियस्य तया तया। न विशश्राम चेतोऽस्य पवित्रेऽपि धरातले ॥ ३१ ॥

ajñātajñeyabuddhestu śrotriyasya tayā tayā | na viśaśrāma ceto'sya pavitre'pi dharātale || 31 ||

But that learned man had still not truly grasped what was to be known. Try as he might in one way and another, his mind found no rest, even on that pure ground.

फिर भी उस विद्वान ने अभी तक वह असली ज्ञान नहीं पाया था जो पाने लायक था। तरह-तरह से कोशिश करने पर भी, उस पवित्र भूमि पर भी उसके मन को चैन नहीं मिला।

4.48.32

केवलं सर्वमेवेदमपि शुद्धं धरातलम्। अशुद्धमिव पश्यन्स न रेमे क्वचिदेव हि ॥ ३२ ॥

kevalaṃ sarvamevedamapi śuddhaṃ dharātalam | aśuddhamiva paśyansa na reme kvacideva hi || 32 ||

He saw this whole earth, pure as it was, as if it were impure, and so he found joy nowhere at all.

यह सारी धरती शुद्ध होते हुए भी उसे अशुद्ध जैसी दिखती थी, इसलिए उसे कहीं भी सुख नहीं मिलता था।

4.48.33

अथ संकल्पयामास स्वसंकल्पनयैव सः। वृक्षाग्रमेव संशुद्धं स्थितिस्तत्रोचिता मम ॥ ३३ ॥

atha saṃkalpayāmāsa svasaṃkalpanayaiva saḥ | vṛkṣāgram eva saṃśuddhaṃ sthitistatrocitā mama || 33 ||

Then, thinking it over in his own mind, he decided: only the top of a tree is pure, staying there would suit me.

तब उसने अपने मन में सोचकर तय किया कि सिर्फ पेड़ की चोटी ही शुद्ध है, वहीं रहना मेरे लिए ठीक रहेगा।

4.48.34

तदिदानीं तपस्तप्स्ये तपसा येन शाखिषु। खगवत्स्थितिमाप्नोमि शाखासु च दलेषु च ॥ ३४ ॥

tadidānīṃ tapastapsye tapasā yena śākhiṣu | khagavatsthitimāpnomi śākhāsu ca daleṣu ca || 34 ||

Now I will practice such austerity that I gain a life like a bird among the trees, living on the branches and among the leaves.

अब मैं ऐसी तपस्या करूँगा कि मुझे पेड़ों के बीच पक्षी जैसा जीवन मिल जाए, टहनियों और पत्तों के बीच रहने वाला जीवन।

4.48.35

इति संचिन्त्य संज्वाल्य हुताशमतिभास्वरम्। जुहाव तस्मिन्प्रोत्कृत्त्य मांसं स्वस्कन्धभित्तितः ॥ ३५ ॥

iti saṃcintya saṃjvālya hutāśamatibhāsvaram | juhāva tasminprotkṛttya māṃsaṃ svaskandhabhittitaḥ || 35 ||

Thinking this, he lit a very bright fire, cut flesh from his own shoulder, and offered it into that fire.

यह सोचकर उसने एक बहुत तेज आग जलाई, अपने कंधे से मांस काटा, और उसे उस आग में अर्पित कर दिया।

4.48.36

अथ गीर्वाणवृन्दस्य समग्रा गलभित्तयः। मन्मुखत्वेन मा यान्तु विप्रमांसेन भस्मताम् ॥ ३६ ॥

atha gīrvāṇavṛndasya samagrā galabhittayaḥ | manmukhatvena mā yāntu vipramāṃsena bhasmatām || 36 ||

Then he thought, because I am the one making this offering, may the throats of the whole host of gods not be burned to ash from eating a Brahmin's flesh.

फिर उसने सोचा, चूँकि यह भेंट मैं दे रहा हूँ, कहीं ऐसा न हो कि एक ब्राह्मण का मांस खाने से सभी देवताओं के गले जलकर राख हो जाएँ।

4.48.37

इति संचिन्त्य भगवान्सप्तार्चिस्तस्य देवता। पुरो बभूव दीप्तांशुर्दीप्तांशुर्वाक्पतेरिव ॥ ३७ ॥

iti saṃcintya bhagavānsaptārciḥtasya devatā | purō babhūva dīptāṃśurdīptāṃśurvākpateriva || 37 ||

Thinking this, the lord Agni, the seven-flamed one, who was this boy's own deity, appeared before him, blazing with light, as radiant as the lord of speech.

यह सोचते ही उस बालक के आराध्य देव, सात लपटों वाले अग्नि भगवान, उसके सामने प्रकट हो गए, तेज से चमकते हुए, वाणी के स्वामी जितने तेजस्वी।

4.48.38

उवाच वचनं धीरं कुमाराभिमतं वरम्। गृहाण स्थापितं साधो कोशाकाशान्मणिं यथा ॥ ३८ ॥

uvāca vacanaṃ dhīraṃ kumārābhimataṃ varaṃ | gṛhāṇa sthāpitaṃ sādho kośākāśānmaṇiṃ yathā || 38 ||

He spoke a calm, steady word, granting the boy the boon he wished for. Take what has been given to you, good one, the way a jewel is taken out of an open case.

उन्होंने शांत, दृढ़ स्वर में कहा, और बालक की मनचाही वर माँग पूरी करते हुए बोले, हे साधु, इसे ले लो, जैसे किसी खुले डिब्बे से रत्न निकाला जाता है।

4.48.39

इत्युक्तवन्तमनलमर्घपुष्पेण शोभिना। संपूज्य स्तुतिवादेन प्राह विप्रकुमारकः ॥ ३९ ॥

ityuktavantamanalam arghapuṣpeṇa śobhinā| saṃpūjya stutivādena prāha viprakumārakaḥ || 39 ||

The young Brahmin boy worshipped Agni, who had spoken these words, with a beautiful offering of flowers and with words of praise, and then he said.

उस ब्राह्मण बालक ने ऐसा कहने वाले अग्नि की सुंदर फूलों से और स्तुति के शब्दों से पूजा की, और फिर कहा।

4.48.40

भगवन् भूतपूर्णाया भुवः पावनमण्डलम्। नाप्नोमि तेन वृक्षाणामुपरि स्थितिरस्तु मे ॥ ४० ॥

bhagavan bhūtapūrṇāyā bhuvaḥ pāvanamaṇḍalam| nāpnomi tena vṛkṣāṇāmupari sthitirastu me || 40 ||

Lord, I cannot find a pure spot on this whole earth, since it is full of living beings. So let my place be up on the trees instead.

हे भगवन, यह पूरी धरती जीवों से भरी हुई है, इसलिए मुझे इस पर कोई शुद्ध जगह नहीं मिलती। इसलिए मुझे पेड़ों के ऊपर ही रहने दीजिए।

4.48.41

इत्युक्ते मुनिपुत्रेण सर्वदेवमुखं शिखी । एवमस्तु तवेत्युक्त्वा जगामान्तर्द्धिमीश्वरः ॥ ४१ ॥

ityukte muniputreṇa sarvadevamukhaṃ śikhī| evamastu tavityuktvā jagāmāntarddhiṃmīśvaraḥ || 41 ||

When the sage's son had said this, Agni, who is the mouth of all the gods, said, let it be so for you, and then the lord vanished from sight.

मुनि के बेटे के ऐसा कहने पर, अग्नि, जो सभी देवताओं का मुख हैं, बोले, तुम्हारे लिए ऐसा ही हो, और फिर वह देव अदृश्य हो गए।

4.48.42

तस्मिन्नन्तर्हिते देवे क्षणात्सान्ध्य इवाम्बुजे । पूर्णकामः कुमारोऽसौ पूर्णेन्दुरिव चाबभौ ॥ ४२ ॥

tasminnantarhite deve kṣaṇātsāndhya ivāmbuje| pūrṇakāmaḥ kumāro'sau pūrṇenduriva cābabhau || 42 ||

The moment that god vanished, the way a lotus closes up at evening, the boy, his wish now fulfilled, shone like a full moon.

जिस क्षण वह देव अदृश्य हुए, जैसे शाम को कमल का फूल बंद हो जाता है, उसी क्षण वह बालक, जिसकी इच्छा पूरी हो चुकी थी, पूर्णिमा के चाँद जैसा चमकने लगा।

4.48.43

अधिगताभिमताननमण्डलद्युतिभरेण जहास स तुष्टिमान् । शशिनमाप्तकलाकुलमम्बुजं विकसितं च सितस्मितशोभिना ॥ ४३ ॥

adhigatābhimatānanamaṇḍaladyutibhareṇa jahāsa sa tuṣṭimān| śaśinamāptakalākulamambujaṃ vikasitaṃ ca sitasmitaśobhinā || 43 ||

He was so pleased that the glow on his happy, satisfied face was full and bright, and with his gleaming white smile he seemed to outshine both the full moon with all its parts and the lotus in full bloom.

वह इतना प्रसन्न था कि उसके सुखी, संतुष्ट चेहरे की चमक भरपूर और तेज थी, और अपनी चमकती सफेद मुस्कान से वह मानो पूरे चाँद और पूरी तरह खिले कमल दोनों को मात दे रहा था।

Chapter 49

4.49.1

अथ काननमध्यस्थं चुम्बिताम्बुदमण्डलम् । मध्याह्नखिन्नसूर्याश्वसेवितस्कन्धमण्डलम् ॥ १ ॥

atha kānanamadhyasthaṃ cumbitāmbudamaṇḍalam | madhyāhnakhinna sūryāśvasevitaskandhamaṇḍalam || 1 ||

It stood in the middle of the forest, kissing the ring of clouds, and on its wide crown of branches the sun's tired horses rested at midday.

वह जंगल के बीचोंबीच खड़ा था, बादलों के घेरे को चूमता हुआ, और उसकी चौड़ी शाखाओं पर दोपहर की गरमी से थके सूरज के घोड़े आराम करते थे।

4.49.2

वितानमिव दिक्कुक्षिदीर्घं विटपबाहुभिः । आलोकयन्तं ककुभो विकासिकुसुमेक्षणैः ॥ २ ॥

vitānamiva dikkuksidīrghaṃ viṭapabāhubhiḥ | ālokayantaṃ kakubho vikāsikusumekṣaṇaiḥ || 2 ||

Like an awning it spread its branch arms as wide as the horizon in every direction, and with eyes of blooming flowers it looked out at all the directions.

वह एक शामियाने की तरह अपनी डाल रूपी भुजाओं को हर दिशा में क्षितिज तक फैलाए हुए था, और खिले हुए फूलों जैसी आँखों से चारों दिशाओं को देख रहा था।

4.49.3

वातावधूलितानल्पभ्रमद्भ्रमरकुन्तलम् । प्रमार्जयन्तमाशानां मुखं पल्लवपाणिभिः ॥ ३ ॥

vātāvadhūlitānalpabhramadbhrmarakuntalam | pramārjayantamāśānāṃ mukhaṃ pallavapāṇibhiḥ || 3 ||

Its hair was countless bees, humming and stirred by the wind, and with its young shoots as hands it wiped the face of the directions.

उसके बाल मानो हवा से हिलती और गुनगुनाती अनगिनत मधुमक्खियाँ थीं, और वह अपने कोमल अंकुरों रूपी हाथों से दिशाओं का मुँह पोंछ रहा था।

4.49.4

कच्छैरुरुगुड्डुच्छाच्छमञ्जरीपुञ्जकञ्जरैः । आस्यैरिव सताम्बूलैर्हसन्तं वनमालिकाः ॥ ४ ॥

kacchai ruruguḍḍacchācchamañjarīpuñjakañjaraiḥ | āsyairiva satāmbūlairhasantaṃ vanamālikāḥ || 4 ||

With bunches of large, bright flower clusters it seemed to laugh at the flowering vines of the forest, its mouths red as though stained with betel.

फूलों के बड़े, चमकीले गुच्छों के साथ वह मानो जंगल की फूलों भरी लताओं पर हँस रहा था, उसके मुँह पान से लाल हुए जैसे लग रहे थे।

4.49.5

लताविलसितोल्लासैः पुष्पकेसरधूलिभिः । आबद्धमण्डलाभोगं पूर्णेन्दुमिव दीप्तिभिः ॥ ५ ॥

latāvilasitollāsaiḥ puṣpakesaradhūlibhiḥ | ābaddhamaṇḍalābhogaṃ pūrṇendumiva dīptibhiḥ || 5 ||

With the playful glow of its vines and the pollen dust of its flower filaments it formed a ring of light all around, like a full moon with its rays.

अपनी लताओं की चमकती रौनक और फूलों के केसर की धूल से उसने चारों ओर रोशनी का एक घेरा बना लिया था, जैसे पूर्णिमा का चाँद अपनी किरणों से घिरा हो।

4.49.6

संकटं विटपावल्या कुञ्जकूजच्चकोरया । छन्नया सिद्धवीथ्येव जगदुच्चतया श्रितम् ॥ ६ ॥

saṅkaṭaṃ viṭapāvalyā kuñjakūjaccakorayā | channayā siddhavīthyeva jagaduccatayā śritam || 6 ||

Thick with rows of branches, hidden under bowers where the cakora bird cooed, it rose higher than the whole world, like the hidden path where perfected sages walk in the sky.

वह घनी शाखाओं से भरा था, ऐसी झाड़ियों से ढका जिनमें चकोर पक्षी बोलता रहता था, और सारी दुनिया से ऊँचा उठा हुआ था, मानो आकाश में सिद्ध पुरुषों के चलने का छिपा हुआ रास्ता हो।

4.49.7

स्कन्धपीठोपविष्टानां लम्बमानैः कलापिनाम् । कलापैः शोभितं व्योम सेन्द्रचापैरिवाम्बुदैः ॥ ७ ॥

skandhapīṭhopaviṣṭānāṃ lambamānaiḥ kalāpinām | kalāpaiḥ śobhitaṃ vyoma sendracāpairivāmbudaiḥ || 7 ||

Its heights were made beautiful by the hanging tails of peacocks perched on its shoulder-like branches, the way clouds are made beautiful by rainbows.

उसकी ऊँचाई मोरों की लटकती हुई पूँछों से सुंदर लगती थी, जो उसकी कंधे जैसी शाखाओं पर बैठे थे, ठीक वैसे ही जैसे बादल इंद्रधनुष से सुंदर लगते हैं।

4.49.8

मग्नोन्मग्नैः प्रतिस्कन्धमाश्रितैश्चमरैः सितैः । पूर्णं मुहुर्दृष्टनष्टैः संवत्सरमिवेन्दुभिः ॥ ८ ॥

magnonmagnaiḥ pratiskandhamāśritaiścamaraiḥ sitaiḥ | pūrṇaṃ muhurdṛṣṭanaṣṭaiḥ saṃvatsaramivendubhiḥ || 8 ||

On every branch white whisks bobbed in and out of sight, again and again seen and then gone, like a year full of moons that appear and disappear over and over.

हर शाखा पर सफेद चँवर दिखते और छिपते रहते थे, बार-बार नजर आते और फिर गायब हो जाते, जैसे किसी साल में चाँद बार-बार दिखे और छिप जाए।

4.49.9

कपिञ्जलकुलालापैः कलकोकिलकूजितैः । जीवंजीवविरावैश्च प्रगायन्तमिवोच्छ्रितैः ॥ ९ ॥

kapiñjalakulālāpaiḥ kalakokilakūjitaiḥ | jīvaṃjīvavirāvaiśca pragāyantamivocchritaiḥ || 9 ||

With the chatter of flocks of kapinjala partridges, the sweet cooing of cuckoos, and the rising calls of jivanjiva birds, it seemed to sing out loud.

कपिंजल पक्षियों के झुंड की बोली से, कोयल की मीठी कूक से, और जीवंजीव पक्षी की उठती हुई पुकार से, वह मानो ऊँचे स्वर में गा रहा था।

4.49.10

कादम्बककदम्बैश्च कुलायकृतकेलिभिः । स्वर्गकोटरविश्रान्तैः सिद्धैर्जगदिवावृतम् ॥ १० ॥

kādambakakadambaiśca kulāyakṛtakelibhiḥ | svargakoṭaraviśrāntaiḥ siddhairjagadivāvṛtam || 10 ||

With flocks of wild geese playing in their nests, resting as if in a corner of heaven, it was covered over like a world covered with perfected sages.

अपने घोंसलों में अठखेलियाँ करते जंगली हंसों के झुंडों के साथ, जो मानो स्वर्ग के किसी कोने में विश्राम कर रहे हों, वह ऐसे ढका हुआ था जैसे कोई लोक सिद्ध पुरुषों से भरा हो।

4.49.11

प्रवालचलहस्ताभिरलिनेत्राभिराश्रितम्। अप्सरोभिरिव स्वर्गं मञ्जरीभिरितस्ततः ॥ ११ ॥

pravālacalahastābhiralinetrābhirāśritam | apsarobhiriva svargaṃ mañjarībhiritastataḥ || 11 ||

Here and there it was full of flower clusters whose hands were moving young shoots and whose eyes were bees, like heaven full of its nymphs.

जगह-जगह वह फूलों के गुच्छों से भरा था, जिनके हाथ मानो हिलते हुए कोमल अंकुर थे और आँखें भौंरे, जैसे स्वर्ग अपनी अप्सराओं से भरा हो।

4.49.12

सेन्द्रचापविलासेन कुमुदोत्कररेणुना। मञ्जरीपिञ्जराश्यामं विद्युत्वन्तमिवाम्बुदम् ॥ १२ ॥

sendracāpavilāsena kumudotkararеṇunā | mañjarīpiñjarāśyāmaṃ vidyutvantamivāmbudam || 12 ||

With the play of a rainbow and the pollen of heaps of white lotuses, dark and golden brown with its flower clusters, it looked like a cloud carrying lightning.

इंद्रधनुष की छटा और सफेद कुमुद फूलों के पराग से, अपने फूलों के गुच्छों के कारण साँवला और पीलापन लिए हुए, वह बिजली लिए बादल जैसा लगता था।

4.49.13

सहस्रभुजशाखाख्यं पूरिताकाशकोटरम्। विश्वरूपमिवोन्नृत्तं चन्द्रार्ककृतकुण्डलम् ॥ १३ ॥

sahasrabhujashākhākhyaṃ pūritākāśakoṭaram | viśvarūpamivonnṛttaṃ candrārkakṛtakuṇḍalam || 13 ||

Called the thousand armed one for its branches, it filled the whole hollow of the sky, and seemed to dance like the form that holds the whole universe, wearing the sun and the moon as its two earrings.

अपनी शाखाओं के कारण हज़ार भुजाओं वाला कहलाता हुआ, वह आकाश के पूरे खोखलेपन को भर देता था, और मानो उस रूप की तरह नाच रहा था जिसमें पूरा विश्व समाया हो, सूरज और चाँद को अपने दो कुंडल बनाए हुए।

4.49.14

तले निषण्णनागेन्द्रं व्योम्नि तारागणाकुलम्। लतापुष्पमयं मध्ये खमण्डलमिवापरम् ॥ १४ ॥

tale niṣaṇṇanāgendraṃ vyomni tārāgaṇākulam | latāpuṣpamayaṃ madhye khamaṇḍalamivāparam || 14 ||

At its foot the king of serpents lay coiled, in its sky-like top a mass of stars was crowded together, and in the middle it was made of vines and flowers, like a second sky.

उसकी जड़ में साँपों का राजा कुंडली मारे बैठा था, उसके आकाश जैसे शीर्ष में तारों का समूह भरा हुआ था, और बीच में वह लताओं और फूलों से बना था, मानो एक दूसरा आकाश हो।

4.49.15

पितामहमिवाशेषशैलकाननशालिनम्। फलपल्लवपुष्पाणां कोशमेकमिवावनौ ॥ १५ ॥

pitāmahamivāśeṣaśailakānanaśālinam | phalapallavapuṣpāṇāṃ kośamekamivāvanau || 15 ||

Like Grandfather Brahma, who graces every mountain and forest without exception, it was like a single storehouse of fruits, shoots, and flowers set upon the earth.

जैसे ब्रह्मा जी हर पर्वत और जंगल को बिना किसी अपवाद के सुशोभित करते हैं, वैसे ही वह धरती पर फलों, कोमल पत्तों और फूलों का मानो एक ही भंडार था।

4.49.16

दधानं कलिकाजालं स्थगितं पुष्पधूलिभिः । कच्छेष्वर्ककरच्छन्नताराजालमिवाम्बरम् ॥ १६ ॥

dadhānaṃ kalikājālaṃ sthagitaṃ puṣpadhūlibhiḥ | kaccheṣvarkakaracchannatārājālamivāmbaram || 16 ||

Bearing a mass of buds covered over with flower pollen, at its edges it looked like the sky whose net of stars is hidden by the rays of the sun.

वह कलियों के ऐसे समूह से लदा था जो फूलों के पराग से ढकी थीं, और अपने किनारों पर वह ऐसा लगता था जैसे आकाश हो जिसमें तारों का जाल सूरज की किरणों से छिप गया हो।

4.49.17

विलोलविहगैः स्कन्धैः कुलायकुलसंकुलैः । वलितं भूतलं लोके पूर्णैर्जनपदैरिव ॥ १७ ॥

vilolavihagaiḥ skandhaiḥ kulāyakulasankulaiḥ | valitaṃ bhūtalaṃ loke pūrṇairjanapadairiva || 17 ||

With its branches restless with birds and crowded with clusters of nests, it lay spread out like the surface of the earth crowded with full villages.

उसकी शाखाएँ पक्षियों से चंचल थीं और घोंसलों के झुंडों से भरी थीं, और वह ऐसे फैला हुआ था जैसे धरती की सतह बसी हुई बस्तियों से भरी हो।

4.49.18

मञ्जरीसुपताकाढ्यं लतामण्डलमण्डितम् । पुष्पमङ्कोलधवलं पुष्पप्रकरपूरितम् ॥ १८ ॥

mañjarīsupatākāḍhyaṃ latāmaṇḍalamaṇḍitam | puṣpamaṅkoladhavalaṃ puṣpaprakarapūritam || 18 ||

It was rich with clusters of blossoms like banners, decorated with rings of creepers, white with ankol flowers, and filled with heaps of flowers.

वह कलियों के गुच्छों से भरा हुआ था जो झंडों जैसे लगते थे, लताओं के घेरों से सजा हुआ था, अंकोल के फूलों जितना सफेद था, और फूलों के ढेरों से भरा हुआ था।

4.49.19

कूजच्चकोरभ्रमरशुककोकिलसारिकम् । घनस्तबकसंछन्नकुहरोग्रगवाक्षकम् ॥ १९ ॥

kūjaccakorabhramarśukakokilasārikam | ghanastabakasaṃchannakuharogragavākṣakam || 19 ||

It was full of the calls of partridges, bees, parrots, cuckoos and mynas, and thick clusters of flowers hid its big hollows that looked like windows.

उसमें चकोर, भँवरे, तोते, कोयल और मैना बोल रहे थे, और फूलों के घने गुच्छे उसकी बड़ी खोहों को ढक रहे थे जो खिड़कियों जैसी दिखती थीं।

4.49.20

संचरत्पक्षिबहुलं जनमन्थरकोटरम् । सर्वासां वनदेवीनामन्तःपुरमिवोत्तमम् ॥ २० ॥

saṃcaratpakṣibahulaṃ janamantharakoṭaram | sarvāsāṃ vanadevīnāmantaḥpuramivottamam || 20 ||

It was full of birds moving about, its hollows crowded with creatures that moved slowly, like the finest inner chambers of all the forest goddesses.

उसमें बहुत से पंछी घूम रहे थे, और उसकी खोहों में धीरे धीरे चलने वाले जीव भरे थे, मानो सब वनदेवियों के सबसे अच्छे महल हों।

4.49.21

कूजद्भृङ्गतरङ्गौघैः पुष्पकेसरराजिभिः । राजमानं पतन्तीभिः सरिद्भिरिव पर्वतम् ॥ २१ ॥

kūjadbhṛṅgataraṅgaugheḥ puṣpakesararājibhiḥ | rājamānaṃ patantībhiḥ saridbhiriva parvatam || 21 ||

With floods of humming bees and streaks of flower filaments, it shone like a mountain covered with falling rivers.

गुनगुनाते भँवरों की बाढ़ और फूलों के केसर की धारियों से वह चमक रहा था, मानो कोई पहाड़ हो जिस पर झरने बह रहे हों।

4.49.22

भ्रमद्भिः पुष्पपत्रौघैर्मन्दवातविलासिभिः । वर्धमानैर्वृतस्कन्धं शुभ्राभ्रैरिव भूधरम् ॥ २२ ॥

bhramadbhiḥ puṣpapatraughehrmandavātavilāsibhiḥ | vardhamānairvṛtaskandhaṃ śubhrābhrairiva bhūdharam || 22 ||

Its boughs were wrapped in swirling masses of flowers and leaves that swayed in the gentle wind and kept growing thicker, like a mountain wrapped in white clouds.

उसकी शाखाएँ फूलों और पत्तों के घूमते हुए ढेरों से लिपटी थीं, जो हल्की हवा में हिलते और बढ़ते जाते थे, मानो कोई पहाड़ सफेद बादलों से लिपटा हो।

4.49.23

मातङ्गकटघृष्टेन जानुस्तब्धेन पीठिना । आभोगिना बद्धपदं तरुणेव महाचलम् ॥ २३ ॥

mātaṅgakaṭaghṛṣṭena jānustabdhena pīṭhinā | ābhoginā baddhapadaṃ taruṇeva mahācalam || 23 ||

It was like a great mountain with a tree firmly rooted at its foot, while a huge elephant, stiff kneed and heavy bodied, rubbed its broad temple against the mountain's side.

वह एक बड़े पहाड़ जैसा था जिसकी जड़ में एक पेड़ मजबूती से जमा हो, और एक विशाल हाथी, जिसके घुटने अकड़े हुए थे और जिसका शरीर भारी था, अपना चौड़ा कनपटा उस पहाड़ से रगड़ रहा हो।

4.49.24

विचित्रवर्णपक्षाणां स्कन्धकोटरचारिणाम् । वृतं खगानां वृन्देन भूतानामिव शार्ङ्गिणम् ॥ २४ ॥

vicitravarṇapakṣāṇāṃ skandhakoṭaracāriṇām | vṛtaṃ khagānāṃ vṛndena bhūtānāmiva śārṅgiṇam || 24 ||

It was surrounded by flocks of birds with wings of many colors, living in the hollows of its branches, like the god Vishnu, who carries the bow Sharnga, surrounded by every being.

वह अपनी शाखाओं की खोहों में रहने वाले, कई रंगों के पंखों वाले पंछियों के झुंडों से घिरा था, मानो भगवान विष्णु हों, जो शार्ङ्ग नाम का धनुष धारण करते हैं और हर प्राणी से घिरे रहते हैं।

4.49.25

स्तबकाङ्गुलिजालेन लोलेनाभिनयक्रियाम् । दिशन्तमिव वल्लीनां प्रवृत्तानां वनानिलैः ॥ २५ ॥

stabakāṅgulijālena lolenābhinayakriyām | diśantamiva vallīnāṃ pravṛttānāṃ vanānilaiḥ || 25 ||

Its clusters of flowers trembled like a web of fingers, as if it were making the hand gestures of a dance, like creepers set moving by the forest wind.

उसके फूलों के गुच्छे उँगलियों के जाल की तरह काँप रहे थे, मानो वह नृत्य की मुद्राएँ दिखा रहा हो, जैसे लताएँ जंगल की हवा से हिलती हैं।

4.49.26

कश्चिदेव निवासो मे नार्थिनामिति तुष्टितः । नृत्यन्तमिव बह्वाढ्यलतावलयवल्गनैः ॥ २६ ॥

kaścideva nivāso me nārthināmiti tuṣṭitaḥ | nṛtyantamiva bahvāḍhyalatāvalayavalganaiḥ || 26 ||

As if content, thinking this home is mine alone, not for beggars, it seemed to dance with the swaying of its many rich, bangle like rings of creepers.

मानो संतुष्ट होकर यह सोचकर कि यह घर केवल मेरा है, माँगने वालों के लिए नहीं, वह अपनी लताओं के कंगन जैसे कई सुंदर घेरों के हिलने डुलने से नाचता हुआ सा लग रहा था।

4.49.27

लताकान्तैककान्तत्वाच्छृङ्गाररसनिर्भरम् । काकल्येव प्रगायन्तं मत्तालिनिजनिःस्वनैः ॥ २७ ॥

latākāntaikakāntatvācchṛṅgārarasanirbharam | kākalyeva pragāyantaṃ mattālinijaniḥsvanaiḥ || 27 ||

Being the one true beloved of the creepers, full of romantic feeling, it seemed to sing sweetly with the humming of drunken bees.

लताओं का इकलौता प्रिय होने के कारण, प्रेम भाव से भरा हुआ, वह मतवाले भँवरों की गुनगुनाहट से मीठा गा रहा सा लग रहा था।

4.49.28

आदरोन्मुक्तकुसुमं सिद्धानां व्योमचारिणाम् । स्वागतानीव कुर्वाणं कोकिलालिकुलारवैः ॥ २८ ॥

ādaroonmuktakusumaṃ siddhānāṃ vyomacāriṇām | svāgatānīva kurvāṇaṃ kokilālikulāravaiḥ || 28 ||

Dropping its flowers with care, it seemed to welcome the Siddhas who move through the sky, with the calls of flocks of cuckoos and bees.

अपने फूलों को आदर के साथ गिराते हुए, वह आकाश में चलने वाले सिद्धों का स्वागत कर रहा सा लग रहा था, कोयलों और भँवरों के झुंडों की आवाज़ों के साथ।

4.49.29

लतापुष्पफलोल्लासं प्रान्तपञ्चमहीरुहाम् । विहसन्तमिवाच्छाभिः पुष्पकुड्मलदीप्तिभिः ॥ २९ ॥

latāpuṣpaphalollāsaṃ prāntapañcamahīruhām | vihasantamivācchābhiḥ puṣpakuḍmaladīptibhiḥ || 29 ||

Delighting in its creepers, flowers and fruit, it seemed to laugh, with the clear brightness of its flower buds, at the five great trees on the horizon.

अपनी लताओं, फूलों और फलों में मगन, वह अपनी फूल की कलियों की उजली चमक से मानो हँस रहा था, क्षितिज के उन पाँच बड़े दिव्य पेड़ों पर।

4.49.30

पारिजातमिवाजेतुमूर्ध्वगैः खगमण्डलैः । व्योमान्तराभिधावन्तमलमुद्धतकन्धरम् ॥ ३० ॥

pārijātamivājetumūrdhvagaiḥ khagamaṇḍalaiḥ | vyomāntarābhidhāvantamalamuddhatakandharam || 30 ||

As if to conquer the Parijata tree, with flocks of birds flying upward, it rushed into the middle of the sky, its crest held high.

मानो पारिजात वृक्ष को हरा देने के लिए, ऊपर उड़ते पंछियों के झुंडों के साथ, वह आकाश के बीचोंबीच दौड़ पड़ा हो, अपनी चोटी को ऊँचा उठाए हुए।

4.49.31

मध्यभागस्फुरत्तुङ्गैः स्तबकैर्घनपङ्क्तिभिः । सहस्राक्षत्वमतुलैर्जेतुमिन्द्रमिवोद्यतम् ॥ ३१ ॥

madhyabhāgasphurattuṅgaiḥ stabakairghanapaṅktibhiḥ | sahasrākṣatvamatulairjetumindramivodyatam || 31 ||

With tall clusters shining bright in its middle, set in dense rows, matching Indra's thousand eyes with its own countless flower eyes, it seemed ready to conquer Indra.

अपने बीच में चमकते ऊँचे गुच्छों से, घनी पंक्तियों में सजे, इंद्र की हज़ार आँखों की बराबरी अपनी अनगिनत फूल रूपी आँखों से करते हुए, वह मानो इंद्र को हराने के लिए तैयार खड़ा था।

4.49.32

क्वचित्कुसुमगुच्छाच्छफणामणिगणावृतम् । पातालादुत्थितं शेषमिव व्योमदिदृक्षया ॥ ३२ ॥

kvacitkusumaguccācchaphaṇāmaṇigaṇāvṛtam | pātālādutthitaṃ śeṣamiva vyomadidṛkṣayā || 32 ||

In places it was covered with clusters of flowers that looked like the bright jewels on a serpent's hood, like Shesha risen up from the underworld wanting to see the sky.

कहीं कहीं वह फूलों के ऐसे गुच्छों से ढका था जो साँप के फन पर लगे चमकीले मणियों जैसे लगते थे, मानो शेषनाग पाताल से आकाश देखने की इच्छा से ऊपर उठे हों।

4.49.33

रजसोद्भूलिताकारं द्वितीयमिव शंकरम् । छायया फलशालिन्या समस्तजनशंकरम् ॥ ३३ ॥

rajasodbhūlitākāraṃ dvitīyamiva śaṅkaram | chāyayā phalaśālinyā samastajanaśaṅkaram || 33 ||

With its form dusted with pollen, it looked like a second Shiva, and with its shade full of fruit, it brought good fortune to everyone, just as Shiva does.

फूलों के पराग से ढके अपने रूप के साथ, वह एक दूसरे शिव जैसा दिखता था, और फलों से भरी अपनी छाया से वह सबका भला करता था, जैसे शिव करते हैं।

4.49.34

निबिडदलनिवाहभिन्नकोशैः कुसुमलतानवमण्डपैरुपेतम् । पुरमिव गगने कदम्बवृक्षं खगकुलनागरसंकुलं ददर्श ॥ ३४ ॥

nibiḍadalanivāhabhinnakośaiḥ kusumalatānavamaṇḍapairupetam | puramiva gagane kadambavṛkṣaṃ khagakulanāgarasaṃkulam dadarśa || 34 ||

He saw the kadamba tree, its buds burst open by thick masses of petals, furnished with fresh pavilions of flowering creepers, crowded with flocks of birds like its citizens, like a city in the sky.

उसने कदंब के पेड़ को देखा, जिसकी कलियाँ पंखुड़ियों के घने ढेरों से फट गई थीं, जो फूलती हुई लताओं के ताज़ा मंडपों से सजा था, और पंछियों के झुंडों से भरा था मानो वे उसके नागरिक हों, बिल्कुल आकाश में बसे किसी नगर जैसा।

Chapter 50

4.50.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । तमथासौ तथा बुद्धिफलपल्लवशालिनम् । आनन्दमन्थरमनाः षुष्परूपाचलोपमम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | tamathāsau tathā buddhiphalapallavaśālinam | ānandamantharamanāḥ ṣuṣparūpācalopamam || 1 ||

Sri Vasishtha said: then, with his mind grown slow and full with joy, he climbed that tree, which was thick with new shoots like the very fruit of wisdom, and looked like a whole mountain of flowers.

श्री वशिष्ठ बोले, तब उसका मन आनंद से भरकर शांत हो गया, और वह उस पेड़ पर चढ़ गया, जो नई कोंपलों से भरा था मानो वे समझ के फल हों, और जो फूलों के पूरे पहाड़ जैसा दिखता था।

4.50.2

कदम्बं रोदसीस्तम्भमारुरोह वनस्थितम् । एकार्णवगतं शौरिर्वटवृक्षमिवोन्नतम् ॥ २ ॥

kadambaṃ rodasīstambhamārurōha vanasthitam | ekārṇavagaṃ śaurirvaṭavṛkṣamivonnatam || 2 ||

It was the kadamba tree standing in the forest, like a pillar joining earth and sky. Shauri climbed it, and it towered as high as the banyan tree that once stood in that one endless ocean.

यह कदंब का पेड़ था, जो जंगल में खड़ा था, धरती और आकाश को जोड़ने वाले खंभे जैसा। शौरि उस पर चढ़ गया, और वह उतना ऊँचा उठा जितना वह बरगद का पेड़ जो कभी उस एक अनंत समुद्र में खड़ा था।

4.50.3

तत्रासौ व्योमलग्नायाः शाखायाः प्रान्तपल्लवे । विवेश विगताशङ्कमेकाग्रं तप आस्थितः ॥ ३ ॥

tatrāsau vyomalagnāyāḥ śākhāyāḥ prāntapallave | viveśa vigatāśaṅkamekāgraṃ tapa āsthitaḥ || 3 ||

There, on the very tip of a branch that touched the sky, he sat down without fear, and gave his whole mind, one-pointed, to hard inner discipline.

वहाँ, आकाश को छूती हुई एक डाल की सबसे ऊपरी पत्तियों पर, वह बिना किसी डर के बैठ गया, और अपना पूरा मन एक ही जगह टिकाकर कठिन तप में लगा दिया।

4.50.4

अथोपविश्य मृदुनि नवपल्लवविष्टरे । क्षणमालोकितास्तेन दिशः कौतुकचञ्चलम् ॥ ४ ॥

athopaviśya mṛduni navapallavaviṣṭare | kṣaṇamālokitāsten diśaḥ kautukacañcalam || 4 ||

Then, having sat down on the soft seat of fresh new shoots, for a moment he looked at the directions, his eyes restless with curiosity.

फिर, नई मुलायम कोंपलों के आसन पर बैठकर, उसने एक पल के लिए दिशाओं की ओर देखा, उसकी आँखें उत्सुकता से चंचल थीं।

4.50.5

सरिदेकावलीरम्याः शैलेन्द्रस्तनकुड्मलाः । निर्मलाकाशकबरा लोलनीलाम्बुदालकाः ॥ ५ ॥

saridekāvalīramyāḥ śailendrastanakuḍmalāḥ | nirmalākāśakabarā lolanīlāmbudālakāḥ || 5 ||

The directions were lovely: rivers were their single-string necklaces, great mountains were the round buds of their breasts, the clear sky was their braided hair, and restless dark clouds were their curling locks.

दिशाएँ बहुत सुंदर थीं, नदियाँ मानो उनके गले की एक लड़ी वाली माला थीं, बड़े-बड़े पहाड़ मानो उनके स्तनों की गोल कलियाँ थे, साफ आकाश मानो उनके गुँथे हुए बाल थे, और बेचैन काले बादल मानो उनकी घुँघराली लटें थीं।

4.50.6

नीलपल्लववसनाः पुष्पपूरावतंसिकाःगृहीतसागरापूर्णकलशाः पुरुभूषणाः ॥ ६ ॥

nīlapallavavasanāḥ puṣpapūrāvataṃsikāḥgṛhītasāgarāpūrṇakalaśāḥ purubhūṣaṇāḥ || 6 ||

Fresh dark leaves were their clothes, and flowers were their earrings. They held pots full of ocean water in their hands, and wore many ornaments.

हरी-नई पत्तियाँ मानो उनके कपड़े थीं, और फूल मानो उनकी बालियाँ। वे हाथों में समुद्र के पानी से भरे घड़े लिए थीं, और ढेर सारे गहने पहने थीं।

4.50.7

धृतप्रफुल्लपद्मिन्यः सुगन्धिमुखमारुताःनीलघुंघुमकाकल्यो निर्झरारावनूपुराः ॥ ७ ॥

dhṛtapraphullapadminyaḥ sugandhimukhamārutāḥnīlaghuṃghumakākalyo nirjharārāvanūpurāḥ || 7 ||

Ponds full of blooming lotuses were what they held, and their breath was a fragrant breeze. There was the soft, low hum of dark bees, and the sound of waterfalls was the anklets on their feet.

खिले हुए कमलों से भरे तालाब मानो उनके हाथों में थे, और उनकी साँस महकती हुई हवा जैसी थी। काले भँवरों की धीमी गुनगुनाहट थी, और झरनों की आवाज़ मानो उनके पैरों की पायल थी।

4.50.8

द्युमूर्धानो महीपादा वनालीरोमराजयःजङ्घलोरुनितम्बिन्यश्चन्द्रार्ककृतकुण्डलाः ॥ ८ ॥

dyumūrdhāno mahīpādā vanālīromarājayaḥjaṅgalorunitambinyaścandrārkakṛtakuṇḍalāḥ || 8 ||

The sky was their head and the earth was their feet. Rows of forests were the fine hair on their bodies, and wild stretches of land were their broad hips. The moon and the sun were the earrings they wore.

आकाश मानो उनका सिर था और धरती उनके पैर। जंगलों की कतारें मानो उनके शरीर के महीन रोएँ थीं, और बंजर-जंगली ज़मीन के फैलाव मानो उनके चौड़े नितंब थे। चाँद और सूरज मानो उनके कानों की बालियाँ थे।

4.50.9

शालिसंसारकेदाराश्चन्दनस्थालिकान्विताःशिखरोरसिजालग्नहिमशुभ्राम्बुदांशुकाः ॥ ९ ॥

śālisaṃsārakedārāścandanasthālikānvitāḥśikharorasijālagnahimaśubhrāmbudāṃśukāḥ || 9 ||

Rice fields were their farmland, and trays of sandalwood paste were with them. The snow-white clouds clinging to the peaks of their mountain-breasts were the wrap they wore.

धान के खेत मानो उनकी ज़मीन थे, और चंदन के लेप की थालियाँ उनके पास थीं। उनके पहाड़-जैसे स्तनों की चोटियों से चिपके बर्फ़-से सफ़ेद बादल मानो उनकी ओढ़नी थे।

4.50.10

महार्णवपयःपूरनवमण्डनदर्पणाःऋक्षौघघर्मपुलका भुवनान्तःपुरान्तराः ॥ १० ॥

mahārṇavapayaḥpūranavamaṇḍanadarpaṇāḥṛkṣaughagharmapulakā bhuvanāntaḥpurāntarāḥ || 10 ||

The water of the great ocean was the ever-fresh mirror they used to adorn themselves. The many stars were the goosebumps rising on their warm skin. And the very heart of the world was their own inner chambers.

बड़े समुद्र का पानी मानो उनका हमेशा नया शीशा था जिससे वे खुद को सजाती थीं। असंख्य तारे मानो उनकी गर्म त्वचा पर उठे रोंगटे थे। और संसार का भीतरी हिस्सा ही मानो उनके अपने महल के भीतरी कमरे थे।

4.50.11

आर्तवस्तनधारिण्यो लग्नसूर्यांशुकुङ्कुमाः । विचित्रकुसुमोपेताश्चन्द्रांशुसितचन्दनाः ॥ ११ ॥

ārtavastanadhāriṇyo lagnasūryāṃśukuṅkumāḥ | vicitra kusumopetāścandrāṃśusitacandanāḥ || 11 ||

Their breasts changed with the seasons. The clinging rays of the sun were the red powder on them. They were decked with many-colored flowers, and the rays of the moon were the white sandalwood paste on them.

उनके स्तन हर ऋतु के साथ बदल जाते थे। सूरज की चिपकी हुई किरणें मानो उनके ऊपर लगा लाल कुमकुम थीं। वे रंग-बिरंगे फूलों से सजी थीं, और चाँद की किरणें मानो उनके ऊपर लगा सफ़ेद चंदन था।

4.50.12

गगनगतलतादलोपविष्टः प्रसृतवनावनिवारिवाहवेषाः । त्रिभुवनवनिता ददर्श हृष्टः कुसुमनिरन्तरमण्डिता दशाशाः ॥ १२ ॥

gaganagatalatādalopaviṣṭaḥ prasṛtavanāvanivārivāhavēṣāḥ | tribhuvanavanitā dadarśa hṛṣṭaḥ kusumanirantaramaṇḍitā daśāśāḥ || 12 ||

Sitting on a vine-leaf that reached up into the sky, he looked on, delighted, at the ten directions, the women of the three worlds, dressed like clouds spread over forest and land, and decked all over, without a gap, in flowers.

आकाश तक पहुँची हुई एक लता के पत्ते पर बैठा हुआ, उसने खुश होकर दसों दिशाओं को देखा, तीनों लोकों की ये स्त्रियाँ, जंगल और धरती पर फैले बादलों जैसी सजी थीं, और बिना किसी जगह खाली छोड़े, पूरी तरह फूलों से सजी थीं।

Chapter 51

4.51.1

श्रीवसिष्ठ उवाच ततःप्रभृति तत्रासौ प्रसिद्धस्तापसाश्रमे कदम्बदाशूर इति शूरस्तपसि दारुणे ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca tataḥprabhṛti tatrāsau prasiddhastāpasāśrame kadambadāśūra iti śūrastapasi dāruṇe || 1 ||

Sage Vasishtha said: From that day on, he became famous there in the hermitage of ascetics as Kadamba-Dashura, a hero in harsh penance.

वसिष्ठ मुनि बोले: उस दिन से वह वहाँ तपस्वियों के आश्रम में कदंब-दाशूर के नाम से जाना जाने लगा, जो कठोर तप में एक वीर था।

4.51.2

तस्मिँल्लतादले स्थित्वा विलोक्य ककुभः क्षणात् दृढपद्मासनं बद्धा दिग्भ्यः प्रत्याहृतात्मना ॥ २ ॥

tasmiñllatādale sthitvā vilokya kakubhaḥ kṣaṇāt dṛḍhapadmāsanaṃ baddhvā digbhyaḥ pratyāhṛtātmanā || 2 ||

He sat there on a bed of vine leaves. He looked around at all directions for a moment, then sat firmly in the lotus pose and pulled his mind back from everywhere.

वह वहाँ लताओं की पत्तियों की सेज पर बैठा। उसने एक पल के लिए चारों दिशाओं में देखा, फिर मज़बूती से पद्मासन लगाया और अपने मन को हर तरफ से समेट लिया।

4.51.3

अज्ञातपरमार्थेन क्रियामात्रे च तिष्ठता फलकार्पण्ययुक्तेन मनसा सोऽकरोन्मखम् ॥ ३ ॥

ajñātaparamārthena kriyāmātre ca tiṣṭhatā phalakārpaṇyayuktena manasā so'karomnakham || 3 ||

He did not know the highest truth. He stayed caught up only in ritual action, his mind full of greed for reward, and so he performed the sacrifice.

उसे परम सत्य का पता नहीं था। वह केवल कर्मकांड में उलझा रहा, उसका मन फल पाने के लोभ से भरा था, और इसी तरह उसने यज्ञ किया।

4.51.4

नभोगतलतापत्रसंस्थितेनान्तरात्मना सर्वाः स्वमनसा तेन कृता यज्ञक्रियाः क्रमात् ॥ ४ ॥

nabhogatalatāpatrasaṃsthitenaāntarātmanā sarvāḥ svamanasā tena kṛtā yajñakriyāḥ kramāt || 4 ||

His inner mind stayed still, as if it rested on a vine leaf that reached up into the sky. In this way, using only his mind, he carried out all the acts of the sacrifice, one after another.

उसका भीतरी मन स्थिर रहा, मानो वह आकाश तक पहुँची हुई लता की एक पत्ती पर टिका हो। इस तरह उसने केवल अपने मन से, एक के बाद एक, यज्ञ के सारे काम पूरे किए।

4.51.5

तत्रासौ दश वर्षाणि मनसैवायजत्सुरान् गवाश्वनरमेधाद्यैर्यज्ञैर्विपुलदक्षिणैः ॥ ५ ॥

tatrāsau daśa varṣāṇi manasaivāyajatsurān gavāśvanaramedhādyairyajñairvipuladakṣiṇaiḥ || 5 ||

There, for ten years, he worshipped the gods using only his mind, through sacrifices like the cow-sacrifice, the horse-sacrifice, and the man-sacrifice, and each time he gave rich gifts.

वहाँ, दस साल तक, उसने केवल अपने मन से देवताओं की पूजा की, गौ-यज्ञ, अश्व-यज्ञ और नर-यज्ञ जैसे यज्ञों के ज़रिए, और हर बार भरपूर दक्षिणा दी।

4.51.6

कालेनामलतां याते विततते तस्य चेतसिबलादवततारान्तर्ज्ञानमात्मप्रसादजम् ॥ ६ ॥

kālenāmalatāṃ yāte vitate tasya cetasibalādavatatārāntarjñānamātmaprasādajam || 6 ||

In time, his wide mind became pure, and deep inner knowledge came down into it with great force, knowledge born from the clearness of his own self.

समय के साथ उसका फैला हुआ मन निर्मल हो गया, और उसके भीतर गहरा ज्ञान बड़े बल से उतर आया, वह ज्ञान जो उसकी अपनी आत्मा की स्वच्छता से जन्मा था।

4.51.7

ततो विशीर्णावरणो विगलद्वासनामलःस ददर्शैकदा तस्यां लतायामग्रतः स्थिताम् ॥ ७ ॥

tato viśīrṇāvaraṇo vigaladvāsanāmalaḥsa dadarśaikadā tasyāṃ latāyāmagrataḥ sthitām || 7 ||

Then the covering over him broke apart, and the dirt of his old desires melted away. Once, he saw someone standing before him on that vine.

फिर उसे ढके हुए पर्दे टूट गए, और उसकी पुरानी वासनाओं की मैल पिघल गई। एक बार उसने उस लता पर अपने सामने किसी को खड़ा देखा।

4.51.8

वनदेवीं विशालाक्षीमालोककुसुमाम्बराम्कामिनीं कान्तवदनां मदघूर्णितलोचनाम् ॥ ८ ॥

vanadevīṃ viśālākṣīmālokakusumāmbarāmkāminīṃ kāntavadanāṃ madaghūrṇitalocanām || 8 ||

It was a forest goddess with large eyes, dressed in bright flowers, a lovely woman with a beautiful face, her eyes rolling with passion.

वह एक वनदेवी थी, बड़ी-बड़ी आँखों वाली, चमकीले फूलों से सजी हुई, सुंदर मुख वाली एक मोहक स्त्री, जिसकी आँखें नशे में घूम रही थीं।

4.51.9

नीलोत्पलामोदवतीमतीव सुमनोहराम्तामुवाचानवद्याङ्गीं स मुनिर्विनताननाम् ॥ ९ ॥

nīlotpalāmodavatīmatīva sumanoharāmtāmuvācānavadyāṅgīṃ sa munirvinatānanām || 9 ||

She smelled like the blue lotus, was very beautiful, had a flawless body and a bowed face. The sage spoke to her.

उसमें नीले कमल जैसी खुशबू थी, वह बहुत सुंदर थी, उसका शरीर निर्दोष था और मुख झुका हुआ था। मुनि ने उससे कहा।

4.51.10

कोकिलाकुसुमापूरणतां वनलतामिवका त्वमुत्पलपत्राक्षि कान्तिविक्षोभितस्मरा ॥ १० ॥

kokilākusumāpūranatāṃ vanalatāmivakā tvamutpalapatrākṣi kāntivikṣobhitasmarā || 10 ||

Who are you, like a forest vine full of flowers and cuckoos, with eyes like lotus petals, whose beauty has stirred up desire?

तुम कौन हो, फूलों और कोयलों से भरी वन-लता जैसी, कमल की पंखुड़ी जैसी आँखों वाली, जिसकी सुंदरता ने वासना जगा दी है?

4.51.11

वयस्यामिव पुष्पाढ्यां लतां किमिव तिष्ठसि । इत्युक्ते मृगशावाक्षी गौरपीनपयोधरा ॥ ११ ॥

vayasyāmiva puṣpāḍhyāṃ latāṃ kimiva tiṣṭhasi | ityukte mṛgaśāvākṣī gaurapīnapayodharā || 11 ||

Why do you stand here so still, like a vine full of flowers, like a dear friend? When he said this, she of the fawn-like eyes, fair-skinned and full-breasted,

तुम यहाँ फूलों से भरी लता की तरह, मानो कोई प्रिय सखी हो, इतनी चुपचाप क्यों खड़ी हो? यह सुनकर, हिरणी जैसी आँखों वाली, गोरी और भरे स्तनों वाली वह स्त्री,

4.51.12

मुनिमाह मनोहारि मुग्धाक्षरमिदं वचः । यानि यानि दुरापानि वाञ्छितानि महीतले ॥ १२ ॥

munimāha manohāri mugdhākṣaramidaṃ vacaḥ | yāni yāni durāpāni vāñchitāni mahītale || 12 ||

She said to the sage this charming, innocent speech: Whatever things are hard to get in this world,

उसने मुनि से यह मोहक, भोली-सी बात कही: इस धरती पर जो भी चीज़ें पाना मुश्किल है,

4.51.13

प्राप्यन्ते तानि तान्याशु महतामेव याच्ञया । अहमस्मिँल्लताकीर्णे त्वत्कदम्बाभ्यलंकृते ॥ १३ ॥

prāpyante tāni tānyāśu mahatāmeva yācñayā | ahamasmiñllatākīrṇe tvatkadambābhyalaṅkṛte || 13 ||

those very things are quickly gotten just by asking great souls. I am here in this place full of vines, made beautiful by your kadamba tree,

वे चीज़ें भी बड़े और महान लोगों से माँगने भर से जल्दी मिल जाती हैं। मैं यहाँ, इस लताओं से भरे और तुम्हारे कदंब के पेड़ से सजे हुए स्थान में,

4.51.14

लतालीलालया ब्रह्मन्विपिने वनदेवता । यश्चैत्रसितपक्षस्य त्रयोदश्यां स्मरोत्सवे ॥ १४ ॥

latālīlālayā brahmanvipine vanadevatā | yaścaitrasitapakṣasya trayodaśyāṃ smarotsave || 14 ||

whose playful home is among these vines, O brahmin. I am the forest goddess of this wild grove. On the thirteenth day of the bright half of Chaitra, at the festival of Kama, the god of love,

जिसका खेलने का घर इन्हीं लताओं में है, हे ब्राह्मण। मैं इस जंगल की वनदेवी हूँ। चैत्र महीने के शुक्ल पक्ष की तेरहवीं तिथि को, कामदेव के उत्सव में,

4.51.15

बभूव वनदेवीनां समाजो नन्दने वने । तत्राहमगमं नाथ त्रैलोक्यललनासदः ॥ १५ ॥

babhūva vanadevīnāṃ samājo nandane vane | tatrāhamagamaṃ nātha trailokyalalanāsadaḥ || 15 ||

there was a gathering of forest goddesses in the Nandana garden. I went there too, my lord, to that meeting place of the women of the three worlds.

नंदन वन में वनदेवियों की एक सभा हुई थी। मैं भी वहाँ गई, हे स्वामी, तीनों लोकों की स्त्रियों की उस सभा में।

4.51.16

तत्र दृष्टा मया सर्वा वयस्या मदनोत्सवे । अपुत्रया पुत्रयुतास्तेनाहं दुःखिता भृशम् ॥ १६ ॥

tatra dṛṣṭā mayā sarvā vayasyā madanotsave | aputrayā putrayutāstenāhaṃ duḥkhitā bhṛśam || 16 ||

There, at that festival of love, I saw all my friends. I had no children, but they all had sons, and because of that I was very sad.

वहाँ, प्रेम के उस उत्सव में, मैंने अपनी सब सखियों को देखा। मेरे कोई संतान नहीं थी, पर उन सबके बेटे थे, और इस वजह से मैं बहुत दुखी थी।

4.51.17

त्वयि सर्वार्थसार्थस्य बृहत्कल्पतरौ स्थिते । अनाथेव कथं नाथ किल शोचाम्यपुत्रिका ॥ १७ ॥

tvayi sarvārthasārthasya bṛhatkalpatarau sthite | anātheva kathaṃ nātha kila śocāmyaputrikā || 17 ||

My lord, you are like a great wish-granting tree that gives every good thing anyone could want. Since you are here, why should I grieve like someone with no protector, just because I have no son?

हे स्वामी, आप तो एक बड़े कल्पवृक्ष जैसे हैं, जो हर अच्छी चीज़ दे सकते हैं जो कोई चाहे। आपके होते हुए, मुझे बेटा न होने की वजह से किसी अनाथ की तरह दुखी क्यों होना चाहिए?

4.51.18

देहि मे भगवन्पुत्र नो चेद्देहमिहाग्नये । प्रकरोम्याहुतिं पुत्र दुःखदाहोपशान्तये ॥ १८ ॥

dehi me bhagavanputra no ceddehamihāgnaye | prakaromyāhutiṃ putra duḥkhadāhopaśāntaye || 18 ||

Give me a son, my lord. If you do not, I will put my own body into the fire right here, to end this burning grief of having no son.

हे स्वामी, मुझे एक बेटा दे दीजिए। अगर नहीं दिया, तो मैं यहीं अपने शरीर को आग में डाल दूंगी, ताकि बेटा न होने का यह जलता हुआ दुख खत्म हो जाए।

4.51.19

तामित्युक्तवतीं तन्वीं विहस्य मुनिपुङ्गवः । आह हस्तगतं पुष्पं तस्यै दत्त्वा दयान्वितः ॥ १९ ॥

tāmityuktavatīṃ tanvīṃ vihasya munipuṅgavaḥ | āha hastagataṃ puṣpaṃ tasyai dattvā dayānvitaḥ || 19 ||

The great sage smiled at the slender woman who had said this. Filled with kindness, he gave her the flower he was holding in his hand, and spoke.

यह सुनकर उस दुबली स्त्री की बात पर वह महान मुनि मुस्कुराए। दया से भरकर उन्होंने अपने हाथ का फूल उसे दे दिया और बोले।

4.51.20

गच्छ तन्वङ्गि मासेन पूजार्हमलिलोचनम् । प्रसोष्यसे सुतं कान्तं प्रसूनमिव सल्लता ॥ २० ॥

gaccha tanvaṅgi māsena pūjārhamalilocanam | prasoṣyase sutaṃ kāntaṃ prasūnamiva sallatā || 20 ||

Go now, slender one. Within a month you will give birth to a lovely son, one worthy of honor, with dark eyes like a bee, just as a healthy creeper puts forth a flower.

अब जाओ, दुबली स्त्री। एक महीने के अंदर तुम एक सुंदर बेटे को जन्म दोगी, जो आदर के लायक होगा, जिसकी आंखें भौंरे जैसी काली होंगी, ठीक वैसे जैसे एक स्वस्थ बेल फूल खिलाती है।

4.51.21

किंत्वसौ मरणावेशयायिन्या नस्त्वया सुतः । याचितः कृच्छ्रं संप्राप्य ज्ञाता तेन भविष्यति ॥ २१ ॥

kintvasau maraṇāveśayāyinyā nastvayā sutaḥ | yācitaḥ kṛcchraṃ saṃprāpya jñātā tena bhaviṣyati || 21 ||

But you begged this son from me while you were ready to end your life. After you go through such hardship, you will become known through him.

पर जान देने को तैयार होकर तुमने मुझसे यह बेटा मांगा है। इतनी कठिनाई सहने के बाद, तुम इसी बेटे की वजह से जानी जाओगी।

4.51.22

इत्युक्त्वा स मुनिस्तन्वीं प्रसन्नमुखमण्डलाम् । परिचर्यां करोमीति प्रार्थनोत्कां व्यसर्जयत् ॥ २२ ॥

ityuktvā sa munistvanvīṃ prasannamukhamaṇḍalām | paricaryāṃ karomīti prārthanotkāṃ vyasarjayat || 22 ||

Having said this, the sage sent the slender woman away, her face now joyful, even as she kept begging, "Let me serve you."

यह कहकर मुनि ने उस दुबली स्त्री को विदा कर दिया, जिसका चेहरा अब खुशी से भर गया था, जबकि वह बार-बार कह रही थी, मुझे आपकी सेवा करने दीजिए।

4.51.23

अयं स भगवन्भव्यः कुमारः पुत्र आवयोःकृतो मया समग्राणां कलानां किल कोविदः ॥ २३ ॥

ayaṃ sa bhagavanbhavyaḥ kumāraḥ putra āvayoḥkṛto mayā samagrāṇāṃ kalānāṃ kila kovidaḥ || 23 ||

Lord, here is that fine boy, our son, whom I have raised. He is truly skilled in every art.

हे स्वामी, यह रहा वह सुंदर लड़का, हम दोनों का बेटा, जिसे मैंने पाला है। यह सचमुच हर कला में निपुण है।

4.51.24

अथ दीर्घेण कालेन सैवोत्पलविलोचना । द्वादशाब्दमुपादाय सुतं मुनिमुपाययौ ॥ २४ ॥

atha dīrgheṇa kālena saivoutpalavilocanā | dvādaśābdamupādāya sutaṃ munimupāyayau || 24 ||

Then, after a long time, that same lotus-eyed woman came to the sage, bringing her twelve-year-old son.

फिर बहुत समय बाद, वही कमल जैसी आंखों वाली स्त्री अपने बारह साल के बेटे को लेकर उस मुनि के पास आई।

4.51.25

सा प्रणम्योपविश्याग्रे मुनिमिन्दुसमाननम् । उवाच कलया वाचा चूतद्रुमभिवालिनी ॥ २५ ॥

sā praṇamyopaviśyāgre munimindusamānanam | uvāca kalayā vācā cūtadrumabhivālinī || 25 ||

She bowed, sat down in front of the sage whose face was like the moon, and spoke in a soft voice, sweet as a cuckoo in a mango tree.

उसने प्रणाम किया, चांद जैसे मुखवाले मुनि के सामने बैठ गई, और आम के पेड़ पर बैठी कोयल जैसी मीठी, धीमी आवाज़ में बोली।

4.51.27

प्रभो केवलमेतेन ज्ञानं नाधिगतं शुभम् । येन संसारचक्रेऽस्मिन्न पुनः परिपीड्यते ॥ २७ ॥

prabho kevalametena jñānaṃ nādhigataṃ śubham| yena saṃsāracakre'sminna punaḥ paripīḍyate|| 27 ||

Lord, by this alone he has not gained the good knowledge by which a person is never tormented again in this wheel of rebirth.

हे स्वामी, इतने भर से इसे वह अच्छा ज्ञान नहीं मिला, जिससे यह इस जन्म-मरण के चक्र में फिर कभी दुख न पाए।

4.51.28

ज्ञानं त्वमेवास्य विभो कृपयोपदिशाधुना । को हि नाम कुले जातं पुत्रं मौर्ख्येण योजयेत् ॥ २८ ॥

jñānaṃ tvamevāsya vibho kṛpayopadiśādhunā| ko hi nāma kule jātaṃ putraṃ maurkhyeṇa yojayet|| 28 ||

You alone, lord, can give him that knowledge. Please teach him now, out of kindness. For who would leave a son born into a good family sitting in ignorance?

हे स्वामी, वह ज्ञान केवल आप ही इसे दे सकते हैं। कृपा करके अभी इसे सिखाइए। भला अच्छे कुल में जन्मे बेटे को कौन मूर्खता में यूं ही छोड़ेगा?

4.51.29

एवं वदन्तीं स मुनिः सच्छिष्यमबले सुतम् । इहैव स्थापयैनं त्वमित्युक्त्वा तां व्यसर्जयत् ॥ २९ ॥

evaṃ vadantīṃ sa muniḥ saccchiṣyamabale sutam| ihaiava sthāpayainaṃ tvamityuktvā tāṃ vyasarjayat|| 29 ||

To her, speaking like this, the sage said, "Weak woman, leave your son here with me as a good disciple." And having said this, he sent her away.

ऐसा कहती हुई उस स्त्री से मुनि ने कहा, हे दुर्बल स्त्री, अपने बेटे को यहीं मेरे पास एक अच्छे शिष्य के रूप में छोड़ जाओ। यह कहकर उन्होंने उसे विदा कर दिया।

4.51.30

तस्यां गतायां स पितुरन्तेवासितया तया । अतिष्ठत्संयतो धीमानर्कस्येवारुणः पुरः ॥ ३० ॥

tasyāṃ gatāyāṃ sa piturantevāsitayā tayā| atiṣṭhatsaṃyato dhīmānarkasyevaaruṇaḥ puraḥ|| 30 ||

When she had left, the boy stayed there as a pupil with his father, disciplined and wise, standing before him like the dawn before the sun.

उसके जाने के बाद, वह लड़का वहीं अपने पिता के पास शिष्य बनकर रहा, संयमी और बुद्धिमान, ठीक वैसे जैसे सूरज के आगे उषा खड़ी रहती है।

4.51.31

कदर्थः प्राप्य विज्ञानं ततश्चित्राभिरुक्तिभिः । चिरकालमसौ तत्र मुनिः पुत्रमबोधयत् ॥ ३१ ॥

kadarthaḥ prāpya vijñānaṃ tataścitrābhiruktibhiḥ| cirakālamasau tatra muniḥ putramabodhayat|| 31 ||

So that he would truly succeed by gaining real understanding, the sage taught his son there for a long time, using many wonderful words.

ताकि वह सच्चा ज्ञान पाकर सचमुच सफल हो सके, मुनि ने वहां अपने बेटे को लंबे समय तक कई अद्भुत बातों से सिखाया।

4.51.32

आख्यायिकाख्यानशतैर्दृष्टान्तैर्दृष्टिकल्पितैः । तथेतिहासवृत्तान्तैर्वेदवेदान्तनिश्चयैः ॥ ३२ ॥

ākhyāyikākhyānaśatairdṛṣṭāntairdṛṣṭikalpitaiḥ | tathaitihāsavṛttāntairvedavedāntaniścayaiḥ || 32 ||

He taught him with hundreds of stories and tales, with examples drawn from experience and insight, with accounts from history and old legends, and with the settled truths of the Veda and the Vedanta.

उसने उसे सैकड़ों कहानियों और किस्सों से, अनुभव और सूझबूझ से गढ़े उदाहरणों से, इतिहास और पुरानी कथाओं के ब्योरों से, तथा वेद-वेदांत के पक्के सत्यों से सिखाया।

4.51.33

अनुद्वेगितया नित्यं विस्तरेण कथाक्रमैः । अनुभूतिमुपारूढै रूढिमेति यथा मयि ॥ ३३ ॥

anudvegatayā nityaṃ vistareṇa kathākramaiḥ | anubhūtimupārūḍhai rūḍhimeti yathā mayi || 33 ||

He taught calmly, always, and at length, through story after story grounded in real experience, so it would take firm root in his son, just as it had taken root in me.

उसने हमेशा शांत भाव से, विस्तार से, एक के बाद एक अनुभव पर आधारित कहानियों के ज़रिए सिखाया, ताकि यह उसके बेटे में वैसे ही जड़ जमा ले, जैसे मुझमें जमा था।

4.51.34

अनुभववशतो रसातिरिक्तैरलमुचितार्थवचोगणैर्महात्मा । जलद इव शिखण्डिनं पुरःस्थं तनयमबोधयदम्बरे महर्षिः ॥ ३४ ॥

anubhavavaśato rasātiriktairalamucitārthavacogaiḥ mahātmā | jalada iva śikhaṇḍinaṃ purasthaṃ tanayamabodhayadambare maharṣiḥ || 34 ||

Through the strength of his own experience, with an abundance of fitting, meaningful words full of feeling, the great sage, a truly noble soul, taught the son standing before him, the way a cloud in the sky stirs a peacock to dance.

अपने अनुभव के बल पर, भाव से भरे और सही मौके पर बैठने वाले शब्दों की भरमार से, उस महान मुनि ने, जो सच में एक महान आत्मा था, अपने सामने खड़े बेटे को सिखाया, ठीक वैसे जैसे आकाश में बादल मोर को नचाने पर उकसाता है।

Chapter 52

4.52.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । कदाचिदथ मार्गेण तेन कैलासवासिनीम् । अहं स्नातुमदृश्यात्मा व्योमवीथीगतोऽगमम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | kadācidatha mārgeṇa tena kailāsavāsinīm | ahaṃ snātumadṛśyātmā vyomavīthīgato'gamam || 1 ||

Sri Vasishtha said: Once, going by that same path, unseen in form, moving along the path of the sky, I went to bathe in the river that dwells at Kailasa.

श्री वसिष्ठ बोले, एक बार मैं उसी रास्ते से, अदृश्य होकर, आकाश के रास्ते चलते हुए, कैलाश में रहने वाली नदी में नहाने गया।

4.52.2

निर्गत्य नभसः सप्तमुनिमण्डलकोटरात् । रात्रौ प्राप्तोऽस्मि सुमते दाशूरतरुमुन्नतम् ॥ २ ॥

nirgatya nabhasaḥ saptamunimaṇḍalakoṭarāt | rātrau prāpto'smi sumate dāśūratarumunnatam || 2 ||

Coming out from the hollow of the circle of the Seven Sages in the sky, at night, O wise one, I reached the tall tree of Dashura.

आकाश में सप्तर्षियों के मंडल की गुफा से निकलकर, हे समझदार, मैं रात में दाशूर के ऊँचे पेड़ के पास पहुँचा।

4.52.3

यावच्छृणोमि विटपकुहरात्कानने वचः । कुड्मलाम्भोजलग्नस्य षट्पदस्येव निःस्वनम् ॥ ३ ॥

yāvacchṛṇomi viṭapakuharātkānane vacaḥ | kuḍmalāmbhojalagnasya ṣaṭpadasyeva niḥsvanam || 3 ||

As I stood there, I heard, from a hollow in a branch in the forest, words like the hum of a bee clinging to a lotus bud.

जब मैं वहाँ था, तो मैंने जंगल में एक डाल के खोखले हिस्से से आवाज़ सुनी, जैसे कमल की कली से चिपके भौंरे की गुनगुनाहट हो।

4.52.4

शृणु पुत्र महाबुद्धे वस्तुतोऽस्य समामिमाम् । वर्णयामि महाश्चर्यामेकामाख्यायिकां तव ॥ ४ ॥

śṛṇu putra mahābuddhe vastuto'sya samāmimām | varṇayāmi mahāścaryāmekāmākhyāyikāṃ tava || 4 ||

Listen, my son of great wisdom. I will tell you, just as it happened, one very astonishing story about him.

हे बुद्धिमान बेटे, सुनो। मैं तुम्हें उसके बारे में, जैसा सचमुच हुआ था, वैसी ही एक बहुत अचरज भरी कहानी सुनाता हूँ।

4.52.5

अस्ति राजा महावीर्यो विख्यातो भुवनत्रये । नाम्ना खोत्थ इति श्रीमाञ्जगदाक्रमणक्षमः ॥ ५ ॥

asti rājā mahāvīryo vikhyāto bhuvanatraye | nāmnā khottha iti śrīmāñjagadākramṇakṣamaḥ || 5 ||

There is a king of great might, famous in all three worlds, glorious, named Khottha, able to overrun the whole world.

एक बहुत बलवान राजा है, जो तीनों लोकों में मशहूर है, तेजस्वी है, जिसका नाम खोत्थ है, और जो पूरी दुनिया पर छा जाने में समर्थ है।

4.52.7

यः साहसैकरसिको नानाश्चर्यविहारवान्। केनचित्त्रिषु लोकेषु न महात्मा वशीकृतः ॥ ७ ॥

yaḥ sāhasaikarasiko nānāścaryavihāravān | kenacitriṣu lokeṣu na mahātmā vaśīkṛtaḥ || 7 ||

He took pleasure only in daring deeds, he had many astonishing pastimes, and no great being in the three worlds could subdue him.

उसे सिर्फ़ साहस भरे कामों में मज़ा आता था, उसके पास बहुत सारे अचरज भरे खेल थे, और तीनों लोकों में कोई भी बड़ा इंसान उसे क़ाबू में नहीं कर सका।

4.52.8

यस्यारम्भसहस्राणि सुखदुःखप्रदान्यलम्। संख्यातुं केन शक्यन्ते कल्लोला जलधेरिव ॥ ८ ॥

yasyārambhasahasrāṇi sukhaduḥkhapradānyalam | saṃkhyātuṃ kena śakyante kalolā jaladheriva || 8 ||

Who could count his thousands of undertakings, which brought both pleasure and pain in full measure, like the waves of the ocean?

उसके हज़ारों कामों को, जो पूरी तरह सुख और दुख दोनों देते थे, कौन गिन सकता था, जैसे समुद्र की लहरों को कोई नहीं गिन सकता?

4.52.9

यस्य वीर्यं सुवीर्यस्य न शस्त्रैर्न च पावकैः। केनचिद्भुवने क्रान्तमाकाशमिव मुष्टिना ॥ ९ ॥

yasya vīryaṃ suvīryasya na śastrairna ca pāvakaiḥ kenacidbhuvane krāntamākāśamiva muṣṭinā || 9 ||

No one in the world could overcome the strength of him, the truly mighty one, with weapons or with fire, just as no one can grasp the sky with a fist.

दुनिया में कोई भी उस सचमुच बलवान की ताक़त को न हथियारों से जीत सका, न आग से, ठीक वैसे ही जैसे कोई मुट्ठी से आकाश को नहीं पकड़ सकता।

4.52.10

यदीयां विततारम्भां लीलां निर्माणभासुराम्। न मनागनुवर्तन्ते शक्रोपेन्द्रहरा अपि ॥ १० ॥

yadīyāṃ vitatārambhāṃ līlāṃ nirmāṇabhāsurām | na manāganuvartante śakropeindrahara api || 10 ||

Even Indra, Vishnu and Shiva could not match, even a little, his sport of vast undertakings, which shone with creation.

उसका वह खेल, जो बड़े-बड़े कामों से भरा था और रचना से चमकता था, उसकी बराबरी इंद्र, विष्णु और शिव भी ज़रा भी नहीं कर सके।

4.52.11

त्रयस्तस्य महाबाहो देहा विहरणक्षमाः। जगदाक्रम्य तिष्ठन्ति ह्युत्तमाधममध्यमाः ॥ ११ ॥

trayastasya mahābāho dehā viharaṇakṣamāḥ | jagadākramya tiṣṭhanti hyuttamādhamamadhyamāḥ || 11 ||

O mighty-armed one, three bodies of his, capable of moving freely, stood spread across the world, the highest, the lowest, and the middle one.

हे महाबाहु, उसके तीन शरीर थे, जो घूमने-फिरने में समर्थ थे, और वे पूरी दुनिया पर फैलकर खड़े थे, एक सबसे ऊँचा, एक सबसे नीचा, और एक बीच वाला।

4.52.12

व्योमन्येवातिविते जातोऽसौ त्रिशरीरकःतत्रैव च स्थितिं यातः शब्दपातश्च पक्षिवत्॥ १२॥

vyomanyevātivitate jāto'sau triśarīrakaḥtatraiva ca sthitiṃ yātaḥ śabdapātaśca pakṣivat || 12 ||

This three-bodied one was born in the vast sky itself, and stayed right there, and, like a bird, only the sound of him fell down.

यह तीन शरीर वाला उसी विशाल आकाश में पैदा हुआ, और वहीं टिका रहा, और पंछी की तरह, बस उसकी आवाज़ ही नीचे गिरती थी।

4.52.13

तत्रैवापारगगने नगरं तेन निर्मितम्। चतुर्दशमहारथ्यं विभागत्रयभूषितम्॥ १३॥

tatraivāpāragagane nagaraṃ tena nirmitam | caturdaśamahārathyaṃ vibhāgatrayabhūṣitam || 13 ||

There, in that same boundless sky, he built a city, with fourteen great roads, adorned with three sections.

वहीं, उसी अनंत आकाश में, उसने एक नगर बनाया, जिसमें चौदह बड़ी सड़कें थीं, और जो तीन हिस्सों से सजा था।

4.52.14

वनोपवनमालाढ्यं क्रीडाशिस्ररिसुन्दरम्। मुक्तालताविवलितवापीसप्तकभूषितम्॥ १४॥

vanopavanamālāḍhyaṃ krīḍāśisrarisundaram | muktālatāvivaltavāpīsaptakabhūṣitam || 14 ||

It was rich with rows of forests and groves, beautiful with pleasure hills, and adorned with seven pools wound about with strings of pearls.

वह जंगलों और बगीचों की कतारों से भरपूर था, खेलने की पहाड़ियों जैसा सुंदर था, और मोतियों की लड़ियों में लिपटी सात बावड़ियों से सजा था।

4.52.15

शीतलोष्णात्मकाक्षीणदीपद्वयविराजितम्। ऊर्ध्वाधोगतिरूपेण वणिङ्मार्गेण संकुलम्॥ १५॥

śītalōṣṇātmakākṣīṇadīpadvayavirājitam | ūrdhvādhogatirūpeṇa vaṇiṅmārgeṇa saṅkulam || 15 ||

It shone with two undying lamps, one cool and one hot, and it was crowded with a merchants' road running both up and down.

वह दो कभी न बुझने वाले दीयों से चमकता था, एक ठंडा और एक गरम, और ऊपर-नीचे दोनों तरफ़ जाने वाले व्यापारियों की सड़क से भरा था।

4.52.16

तस्मिन्नेवातिविपुले पत्तने तेन भूभृता। संसारिणो विरचिता मुग्धापवरका गणाः॥ १६॥

tasminnevātivipule pattane tena bhūbhṛtā | saṃsāriṇo viracitā mugdhāpavarakā gaṇāḥ || 16 ||

In that same very vast city, that king arranged the worldly beings, in groups, into bewildering chambers.

उसी बहुत विशाल नगर में, उस राजा ने सांसारिक जीवों को समूहों में, मोहित करने वाले कमरों में बसाया।

4.52.17

ऊर्ध्वं केचिदधः केचित्केचिन्मध्ये नियोजिताः। केचिच्चिरेण नश्यन्त केचिच्छीघ्रविनाशिनः॥ १७॥

ūrdhvaṃ kecidadhaḥ kecitkecinmadhye niyojitāḥ | keciccireṇa naśyanta keciścīghravināśinaḥ || 17 ||

Some were placed above, some below, some in the middle; some perish after a long time, some perish quickly.

कुछ को ऊपर रखा गया, कुछ को नीचे, कुछ को बीच में; कुछ बहुत देर बाद ख़त्म होते हैं, कुछ जल्दी ख़त्म हो जाते हैं।

4.52.18

असितच्छादनच्छन्ना नवद्वारविभूषिताः । अनारतवहद्वाता बहुवातायनान्विताः ॥ १८ ॥

asitacchādanacchannā navadvāravibhūṣitāḥ | anāratavahadvātā bahuvātāyanānvitāḥ || 18 ||

They were covered with a black covering, adorned with nine doors, with wind blowing without pause, fitted with many windows.

वे एक काली छत से ढके थे, नौ दरवाज़ों से सजे थे, उनमें हवा बिना रुके बहती थी, और उनमें बहुत सी खिड़कियाँ लगी थीं।

4.52.19

दीपपञ्चकसालोकास्त्रिस्थूणाः शुक्लदारवः । मसृणालेपमृदवः प्रतोलीभुजसंकुलाः ॥ १९ ॥

dīpapañcakasālokāstristhūṇāḥ śukladāravaḥ | masṛṇālepamṛdavaḥ pratolībhujasaṅkulāḥ || 19 ||

They were lit by a row of five lamps, resting on three pillars, built of white timber, made smooth and soft with plaster, crowded with branching streets.

वे पाँच दीयों की रोशनी से जगमगाते थे, तीन खंभों पर टिके थे, सफ़ेद लकड़ी से बने थे, चिकनी-मुलायम लेप से पुते थे, और गलियों की शाखाओं से भरे थे।

4.52.20

मायया रचितास्तेन राज्ञा तेषु महात्मना । रक्षितारो महायक्षा नित्यमालोकभीरवः ॥ २० ॥

māyayā racitāsten rājñā teṣu mahātmanā | rakṣitāro mahāyakṣā nityamālokabhīravaḥ || 20 ||

Among them, that great king fashioned, by his power of illusion, guardians, mighty Yakshas who were always afraid of light.

उनके बीच, उस महान राजा ने अपनी माया से पहरेदार बनाए, बड़े यक्ष, जो हमेशा रोशनी से डरते थे।

4.52.21

अथापवरकौघेषु चलत्सु स महीपतिः । करोति विविधां क्रीडां नीडेष्विव विहङ्गमः ॥ २१ ॥

athāpavarakaughēṣu calatsu sa mahīpatiḥ | karoti vividhāṃ krīḍāṃ nīḍēṣviva vihaṅgamaḥ || 21 ||

Then, as the many chambers stirred, that king carried out his various play there, like a bird among its nests.

फिर, जब वे बहुत सारे कमरे हिलते-डुलते थे, तो वह राजा वहाँ तरह-तरह की क्रीड़ा करता था, जैसे कोई पंछी अपने घोंसलों में करता है।

4.52.22

त्रिशरीरशतेष्वन्तस्तैर्यक्षैः सह पुत्रक । लीलावशमुषित्वा तु पुनर्निर्गम्य गच्छति ॥ २२ ॥

triśarīraśateṣvantastairyakṣaiḥ saha putraka | līlāvaśamuṣitvā tu punarnirgamya gacchati || 22 ||

Within the hundreds of chambers of his three bodies, my little one, together with those Yakshas, having stayed there absorbed in play, he then goes out again and departs.

अपने तीन शरीरों के सैकड़ों कमरों के भीतर, हे बच्चे, उन यक्षों के साथ, खेल में डूबे रहने के बाद, वह फिर बाहर निकलकर चला जाता है।

4.52.23

तस्येच्छा जायते वत्स कदाचिच्चलचेतसः । पुरं भविष्यन्निर्माणं किंचिद्यामीति निश्चला ॥ २३ ॥

tasyecchā jāyate vatsa kadāciccalacetasaḥ | puraṃ bhaviṣyannirmāṇaṃ kiṃcidyāmīti niścalā || 23 ||

Sometimes, my child, a wish arises in him, fickle minded though he is, and it becomes fixed: let me go and build some city that is yet to be.

कभी-कभी, हे बच्चे, उसके मन में, जो चंचल है, एक इच्छा उठती है, और वह पक्की हो जाती है, मैं जाकर कोई ऐसा नगर बनाऊँ जो अभी बनना बाक़ी है।

4.52.24

भूताविष्ट इवावेगात्तत उत्थाय धावति । पुरं तदप्यथाप्नोति गन्धर्वैरिव निर्मितम् ॥ २४ ॥

bhūtāviṣṭa ivāvegāttata utthāya dhāvati | puraṃ tadapyathāpnoti gandharvairiva nirmmitam || 24 ||

Then, as if possessed by a spirit, he leaps up restlessly and runs, and he reaches that city too, as though it had been built by the Gandharvas.

फिर, जैसे किसी भूत ने उस पर क़ब्ज़ा कर लिया हो, वह बेचैनी से उठकर दौड़ता है, और उस नगर तक भी पहुँच जाता है, मानो वह गंधर्वों ने बनाया हो।

4.52.25

तस्येच्छा जायते पुत्र कदाचिच्चलचेतसः । विनाशं संप्रयामीति तेनाशु स विनश्यति ॥ २५ ॥

tasyecchā jāyate putra kadāciccalacetasaḥ | vināśaṃ saṃprayāmīti tenāśu sa vinaśyati || 25 ||

Sometimes, my son, a wish arises in him, fickle minded though he is: let me go to my destruction, and by that very wish he swiftly perishes.

कभी-कभी, हे बेटा, उसके चंचल मन में एक इच्छा उठती है, मैं अपने विनाश की ओर चलूँ, और उसी इच्छा से वह जल्दी नष्ट हो जाता है।

4.52.26

पुनरुत्पद्यते तूर्णं स्वात्मनोर्मिरिवाम्भसः । व्यवहारं तनोत्युच्चैः पुनरारम्भमन्थरम् ॥ २६ ॥

punarutpadyate tūrṇaṃ svātmanormirivāmbhasaḥ | vyavahāraṃ tanotyuccaiḥ punarārambhamantharam || 26 ||

He rises again quickly, like a wave rising from the water by itself; he carries on his affairs vigorously, then again grows slow to begin anew.

वह फिर जल्दी से उठ खड़ा होता है, जैसे पानी से अपने आप एक लहर उठती है, वह ज़ोर-शोर से अपने काम फैलाता है, फिर दोबारा नई शुरुआत करने में सुस्त पड़ जाता है।

4.52.27

स्वयैव व्यवहृत्याथ कदाचित्परिभूयते । किंकरोस्म्यहमज्ञोऽस्मि दुःखितोऽस्मीति शोचति ॥ २७ ॥

svayaiva vyavahṛtyātha kadācitparibhūyate | kiṃkarosmyahamajño'smi duḥkhito'smīti śocati || 27 ||

Then, sometimes, by his own doing, he is humiliated, and he grieves, thinking, what am I to do, I am a fool, I am wretched.

फिर, कभी-कभी, अपने ही किए-धरे से वह बेइज़्ज़त होता है, और यह सोचकर दुखी होता है कि मैं क्या करूँ, मैं मूर्ख हूँ, मैं दुखी हूँ।

4.52.28

मुदमेत्य कदाचिच्च स्वयमायाति दीनताम् । प्रावृड्वर्षकलोल्लासपूरादिव नदीरयः ॥ २८ ॥

mudametya kadācicca svayamāyāti dīnatām | prāvṛḍvarṣakalollāsapūrādiva nadīrayaḥ || 28 ||

And sometimes, having found joy, he himself falls into misery, like the rushing force of a river swollen by the joyful flood of the monsoon rains.

और कभी-कभी, ख़ुशी पाकर, वह ख़ुद ही दुख में डूब जाता है, जैसे बरसात की ख़ुशी से उमड़ी नदी की तेज़ धार।

4.52.29

जयति गच्छति वल्गति जृम्भते स्फुरति भाति न भाति च भासुरः । सुत महामहिमा स महीपतिः पतिरपामिएव वातरयाकुलः ॥ २९ ॥

jayati gacchati valgati jṛmbhate sphurati bhāti na bhāti ca bhāsuraḥ | suta mahāmahimā sa mahīpatiḥ patirapāmievā vātarayākulaḥ || 29 ||

He conquers, he moves, he leaps, he swells, he flashes, he shines, and then he does not shine, that radiant, greatly glorious king. My son, he is like the lord of the waters churned by the rush of the wind.

वह जीतता है, चलता है, उछलता है, फूलता है, चमकता है, दमकता है, और फिर नहीं दमकता, वह तेजस्वी और बहुत महिमावान राजा है। हे बेटा, वह वैसा ही है जैसे हवा के वेग से मथा हुआ समुद्र।

Chapter 53

4.53.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अथापृच्छत्सुतस्तत्र जम्बूद्वीपे महानिशि । कदम्बाग्रावचूडस्थं पितरं पावनाशयम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | athāpṛcchatsutastatra jambūdvīpe mahāniśi | kadambāgrāvacūḍasthaṃ pitaraṃ pāvanāśayam || 1 ||

Sri Vasishtha said: Then, in Jambudvipa, in the depth of night, the son asked his father, who sat on the peak at the top of a kadamba tree, a man of pure mind.

श्री वसिष्ठ ने कहा कि फिर जम्बूद्वीप में, गहरी रात के समय, बेटे ने अपने पिता से पूछा, जो कदंब के पेड़ की सबसे ऊँची चोटी पर बैठे थे और जिनका मन पवित्र था।

4.53.2

पुत्र उवाच । कोऽसौ खोत्थ इति ख्यातो भूपस्तातोत्तमाकृतिः । कथितं च किमेतन्मे त्वयेति ब्रूहि तत्त्वतः ॥ २ ॥

putra uvāca | ko'sau khotttha iti khyāto bhūpastātottaṃākṛtiḥ | kathitaṃ ca kimetanme tvayeti brūhi tattvataḥ || 2 ||

The son said: Father, who is this king known as Khottha, of supreme form? Tell me truly what you meant by what you told me.

बेटे ने कहा कि हे पिता, यह जो राजा खोत्थ के नाम से जाना जाता है और जिसका रूप सबसे उत्तम है, वह कौन है? आपने मुझे जो बताया था, उसका सच्चा मतलब मुझे बताइए।

4.53.3

क्व भविष्यति निर्माणं वर्तमाने क्व गम्यता । उभयार्थविरुद्धत्वान्मन्मोहाय वचस्तव ॥ ३ ॥

kva bhaviṣyati nirmāṇaṃ vartamāne kva gamyatā | ubhayārthaviruddhatvānmanmohāya vacastava || 3 ||

How can something belong to the future when it is being made, and also belong to the present when it is passing away right now? Your words carry both meanings at once, and since they contradict each other, they only confuse me.

यह कैसे हो सकता है कि कोई चीज़ आगे बनने वाली भी हो, और अभी वर्तमान में हो भी रही हो? आपकी बातों में दोनों मतलब एक साथ हैं, और चूँकि वे एक-दूसरे से टकराते हैं, इसलिए वे मुझे बस उलझा देती हैं।

4.53.4

दाशूर उवाच । शृणु पुत्र यथाभूतमेतत्ते कथयाम्यहम् । येन संसारचक्रस्य तत्त्वमस्यावबुध्यसे ॥ ४ ॥

dāśūra uvāca | śṛṇu putra yathābhūtametatte kathayāmyaham | yena saṃsāracakrasya tattvamasya avabudhyase || 4 ||

Dashura said: Listen, son. I will tell you this exactly as it happened, so that you may understand the truth of this wheel of the world.

दाशूर ने कहा कि सुनो बेटे, मैं तुम्हें यह वैसे ही बताता हूँ जैसे यह हुआ था, ताकि तुम इस संसार-चक्र का सच समझ सको।

4.53.5

असदप्युत्थितारम्भमवस्तुमयमाततम्। संसारसंस्थानमिदमेवमाकथितं मया ॥ ५ ॥

asadapyutthitārambhamavastumayamātatam | saṃsārasaṃsthānamidamevamākathitaṃ mayā || 5 ||

This structure of the world, though unreal, has arisen with a beginning; it is made of nothing, yet it stretches out wide. This is what I have told you.

संसार का यह ढांचा, झूठा होते हुए भी, एक शुरुआत के साथ उठ खड़ा हुआ है; यह किसी चीज़ से नहीं बना, फिर भी दूर-दूर तक फैला हुआ है। यही मैंने तुम्हें बताया है।

4.53.6

परमान्नभसो जातः संकल्पः खोत्थ उच्यते। जायते स्वयमेवासौ स्वयमेव विलीयते ॥ ६ ॥

paramānnabhaso jātaḥ saṃkalpaḥ khottha ucyate | jāyate svayamevāsau svayameva vilīyate || 6 ||

A thought born from the highest sky is called Khottha. It is born by itself, and by itself it fades away.

सबसे ऊँचे आकाश से पैदा हुए एक विचार को खोत्थ कहा जाता है। वह खुद ही पैदा होता है, और खुद ही मिट जाता है।

4.53.7

तत्स्वरूपमिदं सर्वं जगदाभोगि विद्यते। जायते तत्र जाते तु तस्मिन्नष्टे विनश्यति ॥ ७ ॥

tatsvarūpamidaṃ sarvaṃ jagadābhogi vidyate | jāyate tatra jāte tu tasminnaṣṭe vinaśyati || 7 ||

This whole world, filled with enjoyments, exists as that very thought's own form. It is born when the thought is born, and when the thought is destroyed, the world too perishes.

यह पूरी दुनिया, जो तरह-तरह के भोगों से भरी है, उसी विचार का अपना रूप है। यह तभी पैदा होती है जब वह विचार पैदा होता है, और जब वह विचार मिट जाता है, तब यह दुनिया भी मिट जाती है।

4.53.8

ब्रह्मविष्णिवन्द्ररुद्राद्यास्तस्यैवावयवान्विदुः। विटपानिव वृक्षस्य शृङ्गाणीव महीभृतः ॥ ८ ॥

brahmaviṣṇvindrarudrādyāstasyaivāvayavānviduḥ | viṭapānivavṛkṣasya śṛṅgāṇīva mahībhṛtaḥ || 8 ||

Brahma, Vishnu, Indra, Rudra, and the rest are known to be limbs of that very thought — like the branches of a tree, like the peaks of a mountain.

ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र, रुद्र और बाकी सब उसी विचार के अंग माने जाते हैं — जैसे किसी पेड़ की डालियाँ, जैसे किसी पहाड़ की चोटियाँ।

4.53.9

शून्ये व्योमनि तेनेदं निर्मितं त्रिजगत्पुरम्। प्रतिभासानुसंधानमात्रेणैत्य विरिञ्चिताम् ॥ ९ ॥

śūnye vyomani tenenedaṃ nirmitaṃ trijagatpuram | pratibhāsānusaṃdhānamātreṇaitya viriñcitām || 9 ||

In the empty sky, that thought built this city of the three worlds. Just by stringing one appearance to another, it became a creator.

खाली आकाश में, उसी विचार ने इन तीनों लोकों के इस शहर को बनाया। बस एक दिखावे को दूसरे दिखावे से जोड़कर, वह एक बनाने वाला बन गया।

4.53.10

यत्रेमे विततालोका लोककोशाश्चतुर्दश । वनोपवनमालाश्च यत्रोद्यानपरम्पराः ॥ १० ॥

yatreme vitatālokā lokakośāścaturdaśa | vanopavanamālāśca yatrodyānaparamparāḥ || 10 ||

In it are these fourteen worlds spread wide with light, garlands of forests and groves, and rows of gardens one after another.

उसमें ये चौदह लोक हैं, जो रोशनी से दूर-दूर तक फैले हैं, जंगलों और उपवनों की मालाएँ हैं, और एक के बाद एक बगीचों की कतारें हैं।

4.53.11

क्रीडाशिखरिणो यत्र सह्यमन्दरमेरवः । शीतोष्णदीप्ती चन्द्रार्कौ दीपौ यत्रानलाकृती ॥ ११ ॥

krīḍāśikhariṇo yatra sahyamandarameravaḥ | śītoṣṇadīptī candrārkau dīpau yatrānalākṛtī || 11 ||

In it, Sahya, Mandara and Meru are its mountains for play; the moon and the sun, one cool and one hot in its glow, are its two lamps shaped like fire.

उसमें सह्य, मंदार और मेरु पहाड़ इसके खेलने के पहाड़ हैं; चाँद और सूरज, एक ठंडी और एक गरम रोशनी वाले, इसके आग जैसे दो दीये हैं।

4.53.12

सूर्यांशुकचदालोलतरङ्गोत्तुङ्गमौक्तिकाः । वहन्ति सरितो यत्र सन्मुक्तावलयश्चलाः ॥ १२ ॥

sūryāṃśukacadālolataraṅgottuṅgamauktikāḥ | vahanti sarito yatra sanmuktāvalayaścalāḥ || 12 ||

In it flow rivers whose restless waves glitter with sunlight and rise up tall like pearls, like strings of real pearls that move.

उसमें नदियाँ बहती हैं, जिनकी बेचैन लहरें सूरज की किरणों से चमकती हैं और मोतियों की तरह ऊँची उठती हैं, जैसे सच्चे मोतियों की हिलती हुई लड़ियाँ।

4.53.13

इक्षुक्षीरादिसलिला मणिरत्नबिसाङ्कुराः । और्वानलाम्बुजा यत्र वाप्यः सप्त महार्णवाः ॥ १३ ॥

ikṣukṣīrādisalilā maṇiratnabisāṅkurāḥ | aurvānalāmbujā yatra vāpyaḥ sapta mahārṇavāḥ || 13 ||

In it are pools whose water is sugarcane juice and milk, whose lotus-shoots are made of jewels and gems, whose lotuses hold the fire that lives under the sea — and it has seven step-wells, each as vast as a great ocean.

उसमें ऐसे तालाब हैं जिनका पानी गन्ने का रस और दूध है, जिनकी कमल की कोंपलें रत्नों और जवाहरातों से बनी हैं, जिनके कमल समुद्र के भीतर रहने वाली आग को थामे हैं — और उसमें सात बावड़ियाँ हैं, हर एक किसी बड़े समुद्र जितनी विशाल।

4.53.14

अध उर्व्यां तथोर्ध्वं खे पुण्यापुण्यधनश्रियः । नरामरकिरातानां यत्रान्तः क्रयविक्रयौ ॥ १४ ॥

adha urvyāṃ tathordhvaṃ khe puṇyāpuṇyadhanaśriyaḥ | narāmarakirāṭānāṃ yatrāntaḥ krayavikrayau || 14 ||

Below on earth and above in the sky are riches that come from good deeds and bad deeds; in it, these are bought and sold among men, gods, and hill-tribes.

नीचे धरती पर और ऊपर आकाश में, अच्छे और बुरे कर्मों से मिलने वाली दौलत है; उसी में मनुष्यों, देवताओं और पहाड़ी जनजातियों के बीच इसकी खरीद-बिक्री होती है।

4.53.16

केचिद्गीर्वाणनामान ऊर्ध्व एव नियोजिताः । नरनागादयः केचिदध एव नियोजिताः ॥ १६ ॥

kecidgīrvāṇanāmān ūrdhva eva niyojitāḥ | naranāgādayaḥ kecidadha eva niyojitāḥ || 16 ||

Some, called gods, are placed only above; some, such as men and serpents, are placed only below.

कुछ, जिन्हें देवता कहा जाता है, सिर्फ ऊपर रखे गए हैं; कुछ, जैसे मनुष्य और सर्प, सिर्फ नीचे रखे गए हैं।

4.53.17

वातयन्त्रप्रवाहेण चलन्तो मांसमृन्मयाः सितास्थिदारवश्चित्रास्त्वग्लेपमसृणामलाः ॥ १७ ॥

vātayantrapravāheṇa calanto māṃsamṛnmayāḥ sitāsthidāravaścitrāstvaglepamasṛṇāmalāḥ || 17 ||

These bodies move by the push of the breath, like a machine driven by wind. They are made of flesh and clay, their bones white like wood; they are many-colored, and their skin is a smooth, clean covering.

ये शरीर साँस के धक्के से चलते हैं, जैसे हवा से चलने वाली कोई मशीन। ये मांस और मिट्टी से बने हैं, इनकी हड्डियाँ लकड़ी जैसी सफ़ेद हैं; ये रंग-बिरंगे हैं, और इनकी त्वचा एक चिकनी, साफ़ परत है।

4.53.18

केचिच्चिरेण नश्यन्ति केचिच्छीघ्रविनाशिनः केचित्केशोलपोल्लासरचिताच्छादनश्रियः ॥ १८ ॥

keciccirēṇa naśyanti kecicchīghravināśinaḥ kecitkeśolapollāsaracitācchādanaśriyaḥ || 18 ||

Some perish quickly, some perish only after a long time, and some wear the beauty of a covering made from the shine of hair and grass.

कुछ जल्दी मिट जाते हैं, कुछ बहुत समय बाद मिटते हैं, और कुछ बालों और घास की चमक से बनी एक सुंदर ओढ़नी पहनते हैं।

4.53.19

कर्णाक्षिनासाप्रमुखैर्द्वारैर्नवभिरन्विताः अनारतवहत्प्राणपवनेनोष्णशीतलाः ॥ १९ ॥

karṇākṣināsāpramukhairdvārairnavabhiranvitāḥ anāratavahatprāṇapavanenauṣṇaśītalāḥ || 19 ||

They have nine gates, headed by the ears, the eyes, and the nose; and the breath that flows through them without stopping makes them warm and cool.

इनके नौ द्वार हैं, जिनमें कान, आँखें और नाक मुख्य हैं; और इनमें बिना रुके बहने वाली साँस इन्हें कभी गरम और कभी ठंडा बनाती है।

4.53.20

कर्णनासास्यताल्वादिवातायनगणान्विताः भुजाद्यङ्गप्रतोलीकाः पञ्चेन्द्रियकुदीपकाः ॥ २० ॥

karṇanāsāsyatālvādivātāyanagaṇānvitāḥ bhujādyaṅgapratolīkāḥ pañcendriyakudīpakāḥ || 20 ||

They have windows — the ears, the nose, the mouth, and the palate; their limbs, starting with the arms, are like its streets; and the five senses are its dim little lamps.

इनकी खिड़कियाँ हैं — कान, नाक, मुँह और तालू; इनके अंग, बाँहों से शुरू करके, इसकी गलियों जैसे हैं; और पाँचों इंद्रियाँ इसके धुंधले, छोटे दीये हैं।

4.53.21

मायया रचितास्तेषु संकल्पेन महामते अहङ्कारमहायक्षाः परमालोकभीरवः ॥ २१ ॥

māyayā racitāsteṣu saṃkalpena mahāmate ahaṅkāramahāyakṣāḥ paramālokabhīravaḥ || 21 ||

In these bodies, made by illusion and by thought, O wise one, live great demons of ego, who are afraid of the highest light.

हे बुद्धिमान, इन शरीरों में, जो माया से और विचार से बने हैं, अहंकार के बड़े-बड़े राक्षस रहते हैं, जो सबसे ऊँचे प्रकाश से डरते हैं।

4.53.22

देहापवरकेष्वन्तर्महाहङ्कारयक्षकैः सह संक्रीडतेऽत्यर्थं स सदैवासदुत्थितैः ॥ २२ ॥

dehāpavarakeṣvantarmahāhaṅkārayakṣakaiḥ saha saṅkrīḍate'tyarthaṃ sa sadāivāsadutthitaiḥ || 22 ||

Inside the rooms of the body, that thought plays on and on, with great delight, together with those ego-demons that have risen out of the unreal.

शरीर के कमरों के अंदर, वह विचार लगातार, बड़े मज़े से, उन अहंकार के राक्षसों के साथ खेलता रहता है जो झूठ में से उठे हैं।

4.53.23

यथा कुसूले मार्जारो भस्त्रायां भुजगो यथा मुक्ताफलं यथा वेणावहङ्कारस्तथा तनौ ॥ २३ ॥

yathā kusūle mārjāro bhastrāyāṃ bhujago yathā muktāphalaṃ yathā veṇāvahaṅkārastathā tanau || 23 ||

As a cat lives inside a grain-bin, as a snake lives inside a bellows, as a pearl lies inside a bamboo stalk — so does the ego live inside the body.

जैसे बिल्ली किसी अनाज के कोठे में रहती है, जैसे साँप किसी धौंकनी के अंदर रहता है, जैसे मोती किसी बांस की गाँठ में पड़ा रहता है — वैसे ही अहंकार शरीर के अंदर रहता है।

4.53.24

क्षणमभ्युदयं यान्ति क्षणं शाम्यन्ति दीपवत् देहगेहेषु संकल्पतरङ्गाः सागरेष्विव ॥ २४ ॥

kṣaṇamabhyudayaṃ yānti kṣaṇaṃ śāmyanti dīpavat dehageheṣu saṃkalpataraṅgāḥ sāgareṣviva || 24 ||

In the houses of the body, waves of thought rise for a moment and die down for a moment, like a lamp flickering, just as waves rise and fall in the ocean.

शरीर के घरों में, विचार की लहरें एक पल उठती हैं और एक पल शांत हो जाती हैं, जैसे दीया टिमटिमाता है, ठीक वैसे ही जैसे समुद्र में लहरें उठती और गिरती हैं।

4.53.25

भविष्यन्नवनिर्माणं स व्याप्नोति तदा पुरम् यदा संकल्पितं वस्तु क्षणादेव प्रपश्यति ॥ २५ ॥

bhaviṣyannavanirmāṇaṃ sa vyāpnoti tadā puram yadā saṃkalpitaṃ vastu kṣaṇādeva prapaśyati || 25 ||

As soon as it sees the thing it has imagined, that thought fills the city with a new creation still on its way.

जैसे ही वह विचार अपनी कल्पना की हुई चीज़ को देखता है, वह उस शहर को एक नई, अभी बन रही रचना से भर देता है।

4.53.26

असंकल्पनमात्रेण स्वेनेवाशु विनश्यति श्रेयसे परमायस्य नाशत्वेन तु संभवः ॥ २६ ॥

asaṃkalpanamātreṇa svenevāśu vinśyati śreyase paramāyasya nāśatvena tu saṃbhavaḥ || 26 ||

By simply having no thought, it fades away quickly on its own. Thought serves the highest good only by being destroyed.

बस विचार को न उठने देने से ही यह अपने आप जल्दी मिट जाता है। सबसे बड़े भले के लिए यह विचार तभी काम आता है जब यह खुद नष्ट हो जाए।

4.53.27

स्वयं संकल्पनामात्रं जायते बालयक्षवत् । अनन्तायात्मदुःखाय नानन्दाय कदाचन ॥ ॥ २७ ॥

svayaṃ saṃkalpanāmātraṃ jāyate bālayakṣavat | anantāyātmaduḥkhāya nānandāya kadācana || 27 ||

Thought is born by itself, merely as an idea, like a ghost that a child imagines. It only ever brings endless suffering to oneself, never joy.

विचार अपने आप जन्म लेता है, बस एक कल्पना की तरह, जैसे कोई बच्चा भूत की कल्पना कर लेता है। यह हमेशा अपने लिए अंतहीन दुख ही लाता है, कभी सुख नहीं।

4.53.28

इदं स्फारं जगद्दुःखं प्रतनोत्यात्मसत्तया । असत्तया नाशयति घनमान्ध्यं यथा तमः ॥ ॥ २८ ॥

idaṃ sphāraṃ jagaddhuḥkhaṃ pratanotyātmasattayā | asattayā nāśayati ghanamāndhyaṃ yathā tamaḥ || 28 ||

This vast suffering of the world spreads because thought seems real. When thought is not real, it destroys that same suffering, a blindness as thick as darkness.

यह जगत का विशाल दुख इसलिए फैलता है क्योंकि विचार सच्चा लगता है। जब विचार सच्चा नहीं रहता, तो यह उसी दुख को मिटा देता है, जो अंधेरे जैसा घना अंधापन है।

4.53.29

स्वयैव दुःखदायिन्या चेष्टया परिरोदिति । काष्ठावष्टब्धवृषणः कीलोत्पाटी कपिर्यथा ॥ ॥ २९ ॥

svayaiva duḥkhadāyinyā ceṣṭayā pariroditi | kāṣṭhāvaṣṭabdhavṛṣaṇaḥ kīlotpāṭī kapiryathā || 29 ||

Through its own painful actions, thought cries out loudly, like a monkey that pulls out a wedge and gets its testicles caught in the wood.

अपने ही दुख देने वाले कामों से विचार जोर से चिल्लाता है, जैसे कोई बंदर कील निकालकर लकड़ी में अपने अंडकोष फंसा लेता है।

4.53.30

संकल्पितानन्दलवस्तिष्ठत्युद्धरकन्धरम् । अकस्मात्प्रच्युतमधुबिन्दुभुक्करभो यथा ॥ ॥ ३० ॥

saṃkalpitānandalavastiṣṭhatyuddharakandharam | akasmātpracyutamadhubindubhukkarabho yathā || 30 ||

The small drop of joy that is only imagined stands there with its neck stretched up, like a camel waiting for a sudden drop of honey to fall.

जो थोड़ी सी खुशी बस कल्पना में बनाई गई है, वह गर्दन उठाए ऐसे खड़ी रहती है, जैसे कोई ऊंट अचानक गिरने वाली शहद की बूंद की राह देखता है।

4.53.31

क्षणं विरतिमायाति रतिमेति क्षणं स्वयम् । क्षणं विकारमायाति संकल्पेनैव बालवत् ॥ ॥ ३१ ॥

kṣaṇaṃ viratimāyāti ratimeti kṣaṇaṃ svayam | kṣaṇaṃ vikāramāyāti saṃkalpenaiva bālavat || 31 ||

For one moment it stops wanting; for another moment, on its own, it starts wanting again; for another moment it grows agitated, all through mere thought, like a child.

एक पल के लिए यह चाहना छोड़ देता है, दूसरे पल अपने आप फिर चाहने लगता है, और किसी और पल बेचैन हो जाता है, यह सब सिर्फ विचार से होता है, जैसे कोई बच्चा करता है।

4.53.32

एनं सकलभावेभ्यः कृत्वा निर्मूलमादरात् । मतिरन्तःपदं याति यथा पुत्र तथा कुरु ॥ ३२ ॥

enaṃ sakalabhāvebhyaḥ kṛtvā nirmūlamādarāt | matirantaḥpadaṃ yāti yathā putra tathā kuru || 32 ||

Carefully uproot this thought completely from all things, so that the mind reaches its innermost place. Do this, my son.

इस विचार को हर चीज़ से पूरी तरह और सावधानी से उखाड़ फेंको, ताकि मन अपने भीतरी स्थान तक पहुंच जाए। बेटा, ऐसा ही करो।

4.53.33

त्रयस्तस्या मतेर्देहा अधमोत्तममध्यमाः । तमःसत्त्वरजःसंज्ञाः कारणं जगतः स्थितेः ॥ ३३ ॥

trayastasyā materdehā adhamottamamadhyamāḥ | tamaḥsattvarajaḥsaṃjñāḥ kāraṇaṃ jagataḥ sthiteḥ || 33 ||

That thought has three forms, low, high, and middle, called tamas, sattva, and rajas. These are the cause of the world's continuing to exist.

उस विचार के तीन रूप हैं, नीचा, ऊंचा और बीच वाला, जिन्हें तमस, सत्त्व और रजस कहा जाता है। यही जगत के बने रहने का कारण हैं।

4.53.34

तमोरूपो हि संकल्पो नित्यं प्राकृतचेष्टया । परां कृपणतामेत्य प्रयाति कृमिकीटताम् ॥ ३४ ॥

tamorūpo hi saṃkalpo nityaṃ prākṛtaceṣṭayā | parāṃ kṛpaṇatāmetya prayāti kṛmikīṭatām || 34 ||

Thought in the form of tamas always acts in a low, crude way. It falls into the deepest misery and becomes like a worm or an insect.

तमस के रूप वाला विचार हमेशा नीच और ओछे तरीके से काम करता है। यह गहरी दीनता में गिरकर कीड़े-मकोड़े जैसा बन जाता है।

4.53.35

सत्त्वरूपो हि संकल्पो धर्मज्ञानपरायणः । अदूरकेवलीभावं स्वाराज्यमधितिष्ठति ॥ ३५ ॥

sattvarūpo hi saṃkalpo dharmajñānaparāyaṇaḥ | adūrakevalībhāvaṃ svārājyamadhitiṣṭhati || 35 ||

Thought in the form of sattva is devoted to right conduct and true knowledge. It comes close to the state of a freed being, and it rules over itself.

सत्त्व के रूप वाला विचार सही आचरण और सच्चे ज्ञान में लगा रहता है। यह मुक्त पुरुष की अवस्था के करीब पहुंच जाता है और खुद पर राज करता है।

4.53.36

रजोरूपो हि संकल्पो लोकसंव्यवहारवान् । परितिष्ठति संसारे पुत्रदारानुरञ्जितः ॥ ३६ ॥

rajorūpo hi saṃkalpo lokasaṃvyavahāravān | paritiṣṭhati saṃsāre putradārānurañjitaḥ || 36 ||

Thought in the form of rajas stays busy with ordinary worldly affairs. It remains fixed in this cycle of life, delighting in wife and children.

रजस के रूप वाला विचार सांसारिक कामों में उलझा रहता है। यह इस संसार चक्र में टिका रहता है, पत्नी और बच्चों में खुश होते हुए।

4.53.37

त्रिविधं तु परित्यज्य रूपमेतन्महामते । संकल्पः परमायाति पदमात्मपरिक्षये ॥ ३७ ॥

trividhaṃ tu parityajya rūpametanmahāmate | saṃkalpaḥ paramāyāti padamātmaparikṣaye || 37 ||

But, wise one, when thought gives up all three of these forms, and the self is completely worn away, thought reaches the highest state.

पर हे बुद्धिमान, जब विचार इन तीनों रूपों को छोड़ देता है, और स्वयं का भाव पूरी तरह मिट जाता है, तब विचार सबसे ऊंची अवस्था को पा लेता है।

4.53.38

सर्वा दृष्टीः परित्यज्य नियम्य मनसा मनः । सबाह्याभ्यन्तरार्थस्य संकल्पस्य क्षयं कुरु ॥ ३८ ॥

sarvā dṛṣṭīḥ parityajya niyamya manasā manaḥ | sabāhyābhyantarārthasya saṃkalpasya kṣayaṃ kuru || 38 ||

Give up all your views, control the mind with the mind itself, and destroy this thought completely, the thought that deals with things both outside and inside.

अपनी सारी धारणाएं छोड़ दो, मन से ही मन को काबू में करो, और इस विचार को पूरी तरह नष्ट कर दो, जो बाहर और भीतर दोनों की चीज़ों से जुड़ा है।

4.53.39

यदि वर्षसहस्राणि तपश्चरसि दारुणम् । यदि वा विलयात्मानं शिलायां चूर्णयस्यलम् ॥ ३९ ॥

yadi varṣasahasrāṇi tapascarasi dāruṇam | yadi vā vilayātmānaṃ śilāyāṃ cūrṇayasyalam || 39 ||

Even if you practice terrible austerities for a thousand years, or if you grind your own body completely to dust on a rock,

चाहे तुम हजार सालों तक भयंकर तपस्या करो, या अपने शरीर को पत्थर पर पूरी तरह पीसकर धूल बना दो,

4.53.40

यदि वाग्निं प्रविशसि वडवाग्निमथापि वा । यदि वा पतसि श्वभ्रे खड्गधाराजवेतथा ॥ ४० ॥

yadi vāgniṃ praviśasi vaḍavāgnimathāpi vā | yadi vā patasi śvabhre khaḍgadhārājavetathā || 40 ||

or if you enter fire, even the fire beneath the ocean, or if you fall into a pit as fast as the flash of a sword's blade,

या आग में कूद जाओ, यहां तक कि समुद्र के नीचे की आग में भी, या तलवार की धार जितनी तेजी से किसी गड्ढे में गिर जाओ,

4.53.41

हरो यद्युपदेष्टा ते हरिः कमलजोऽपि वा । अत्यन्तकरुणाक्रान्तो लोकनाथोऽथवा यतिः ॥ ४१ ॥

haro yadyupadeṣṭā te hariḥ kamalajo'pi vā | atyantakaruṇākrānto lokanātho'thavā yatiḥ || 41 ||

even if Shiva is your teacher, or Vishnu, or Brahma who was born from a lotus, or the lord of the world overwhelmed by boundless compassion, or an ascetic,

चाहे शिव तुम्हारे गुरु हों, या विष्णु, या कमल से जन्मे ब्रह्मा, या असीम करुणा से भरे जगत के स्वामी, या कोई तपस्वी,

4.53.42

पातालस्थस्य भूस्थस्य स्वर्गस्थस्यापि तत्तव । नान्यः कश्चिदुपायोऽस्ति संकल्पोपशमादृते ॥ ४२ ॥

pātālasthasya bhūsthasya svargasthasyāpi tattava | nānyaḥ kaścidupāyo'sti saṃkalpopaśamādṛte || 42 ||

for you, whether in the underworld, on this earth, or even in heaven, there is no other way except the quieting of thought.

तुम्हारे लिए, चाहे तुम पाताल में हो, इस धरती पर हो, या स्वर्ग में ही क्यों न हो, विचार को शांत करने के अलावा कोई और रास्ता नहीं है।

4.53.43

अनाबाधेऽविकारे च सुखे परमपावने । संकल्पोपशमे यत्नं पौरुषेण परं कुरु ॥ ४३ ॥

anābādhe'vikāre ca sukhe paramapāvane | saṃkalpopaśame yatnaṃ pauruṣeṇa paraṃ kuru || 43 ||

So make the greatest effort, through your own strength, to quiet thought, for the sake of that happiness which is free from trouble, unchanging, and supremely pure.

इसलिए अपनी पूरी शक्ति से विचार को शांत करने का सबसे बड़ा प्रयास करो, उस सुख के लिए जो किसी परेशानी से मुक्त है, कभी नहीं बदलता, और सबसे पवित्र है।

4.53.44

संकल्पतन्तावखिला भावाः प्रोताः किलानघ । छिन्ने तन्तौ न जाने ते क्व यान्ति विशरारवः ॥ ४४ ॥

saṃkalpatantāvakhilā bhāvāḥ protāḥ kilānagha | chinnne tantau na jāne te kv yānti viśarāravaḥ || 44 ||

On the thread of thought, all things are strung together, sinless one. When that thread is cut, I do not know where they go, scattering apart.

विचार के धागे में ही सारी चीज़ें पिरोई गई हैं, हे निष्पाप। जब वह धागा कट जाता है, तो मुझे नहीं पता वे कहां चली जाती हैं, बिखरकर।

4.53.45

असत्सत्सदसत्सर्व संकल्पादेव नान्यतः । संकल्पं सदसच्चैवमिह सत्यं किमुच्यताम् ॥ ४५ ॥

asatsatsadasatsarva saṃkalpādeva nānyataḥ | saṃkalpaṃ sadasaccaiavmihi satyaṃ kimucyatām || 45 ||

The unreal, the real, and what is both real and unreal, all of it comes only from thought, from nothing else. And thought itself is both real and unreal, so what here can truly be called real?

असत्य, सत्य, और जो सत्य और असत्य दोनों है, यह सब सिर्फ विचार से आता है, किसी और चीज़ से नहीं। और विचार खुद सत्य और असत्य दोनों है, तो यहां सच में किसे सच्चा कहा जाए?

4.53.46

संकल्प्यते यथा यद्यत्तत्तथा भवति क्षणात् । मा किंचिदपि तत्त्वज्ञ संकल्पय कदाचन ॥ ४६ ॥

saṃkalpyate yathā yadyattattathā bhavati kṣaṇāt | mā kiṃcidapi tattvajña saṃkalpaya kadācana || 46 ||

Whatever is imagined, in whatever way, becomes so in an instant. So, knower of truth, never imagine anything at all.

जो कुछ भी जिस तरह से सोचा जाता है, वह उसी पल वैसा ही हो जाता है। इसलिए, हे सत्य के जानने वाले, कभी भी कुछ मत सोचो।

4.53.47

निःसंकल्पो यथाप्राप्तव्यवहारपरो भव । चिदचेत्योन्मुखत्वं हि याति संकल्पसंक्षये ॥ ४७ ॥

niḥsaṃkalpo yathāprāptavyavahāraparo bhava | cidacetyonmukhatvaṃ hi yāti saṃkalpasankṣaye || 47 ||

Be without thought, but go on with whatever ordinary activities come to you. When thought is completely destroyed, you turn to face pure awareness, the one thing thought can never grasp.

विचार से मुक्त रहो, पर जो भी साधारण काम सामने आए, उसे करते रहो। जब विचार पूरी तरह नष्ट हो जाता है, तब तुम शुद्ध चेतना की ओर मुड़ जाते हो, जिसे विचार कभी नहीं पकड़ सकता।

4.53.48

उत्थाय सत्त्वरूपेण योन्या सत्यमयात्मकम् । न तज्जगदुःखमिदं व्यर्थं सदृशमात्मनः ॥ ४८ ॥

utthāya sattvarūpeṇa yonyā satyamayātmakam | na tajjagadduḥkhamidaṃ vyarthaṃ sadṛśamātmanaḥ || 48 ||

What arises from the true source, whose nature is sattva and which is made of truth, that is not this world of suffering. This world is useless, only resembling the self.

जो सत्त्व स्वभाव वाले और सत्य से बने सच्चे स्रोत से उठता है, वह यह दुखभरा जगत नहीं है। यह जगत बेकार है, बस अपने आप जैसा दिखता भर है।

4.53.49

तेन दुःखाय महते किं मृतेन तवानघ। यददुःखाय तत्प्राज्ञाः संश्रयन्तीह नेतरत्॥ ४९॥

tena duḥkhāya mahate kiṃ mṛtena tavānagha | yadadduḥkhāya tatprājñāḥ saṃśrayantīha netarat || 49 ||

So, sinless one, what good does it do you to die amid such great suffering? The wise take refuge only in what causes no suffering, nothing else.

तो हे निष्पाप, इतने बड़े दुख में मरने से तुम्हें क्या फायदा? बुद्धिमान लोग सिर्फ उसी का सहारा लेते हैं जो दुख नहीं देता, और किसी चीज़ का नहीं।

4.53.50

अधिगतपरमार्थतामुपेत्य प्रसभमपास्य विकल्पजालमुच्चैः। अधिगमय पदं तदद्वितीयं विततसुखाय सुषुप्तचित्तवृत्तिः॥ ५०॥

adhigataparamārthatāmupetya prasabhamapāsya vikalpajālamucchaiḥ | adhigamaya padaṃ tadadvitīyaṃ vitatasukhāya suṣuptacittavṛttiḥ || 50 ||

Come to know the highest truth, cast away completely and forcefully this net of doubt, and reach that one state, which has nothing else beside it, for the sake of a joy that has no limit, with the movements of your mind stilled as if in deep sleep.

सबसे बड़े सत्य को जान लो, इस शंकाओं के जाल को पूरी ताकत से पूरी तरह फेंक दो, और उस एक अवस्था को पा लो, जिसके सिवा कुछ और नहीं है, उस असीम सुख के लिए, जिसमें मन की हलचलें गहरी नींद जैसी शांत हो जाएं।

Chapter 54

4.54.1

पुत्र उवाच । कीदृशस्तात संकल्पः कथदुपद्यते प्रभो । कथं च वृद्धिमाप्नोति कथं चैष विनश्यति ॥ १ ॥

putra uvāca | kīdṛśastāta saṃkalpaḥ kathadupadyate prabho | kathaṃ ca vṛddhimāpnoti kathaṃ caiṣa vinaśyati || 1 ||

The son said, father, lord, what kind of thing is this thought? How does it arise? How does it grow? And how does it come to an end?

बेटे ने कहा, हे पिता, हे प्रभु, यह ख़याल आख़िर होता कैसा है? यह पैदा कैसे होता है? यह कैसे बढ़ता है? और यह कैसे ख़त्म होता है?

4.54.2

दाशूर उवाच । अनन्तस्यात्मतत्त्वस्य सत्तासामान्यरूपिणः । चितश्चेत्योन्मुखत्वं यत्तत्संकल्पाङ्कुरं विदुः ॥ २ ॥

dāśūra uvāca | anantasyātmatattvasya sattāsāmānyarūpiṇaḥ | cittaścetyonmukhatvaṃ yattatsaṃkalpāṅkuraṃ viduḥ || 2 ||

Dashura said, the true self is endless, and its nature is nothing but pure being. When awareness turns to face an object, that turning is what they call the first sprout of thought.

दाशूर ने कहा, अपना असली आत्मा अनंत है, और उसका स्वभाव बस शुद्ध होना भर है। जब चेतना किसी चीज़ की तरफ़ मुड़ती है, उस मुड़ने को ही ख़याल का पहला अंकुर कहा जाता है।

4.54.3

लेशतः प्राप्तसत्ताकः स एव घनतां शनैः । याति चित्तखमापूर्य दृढजाड्याय मेघवत् ॥ ३ ॥

leśataḥ prāptasattākaḥ sa eva ghanatāṃ śanaiḥ | yāti cittakhamāpūrya dṛḍhajāḍyāya meghavat || 3 ||

That same sprout, gaining just a trace of being, slowly thickens, filling the sky of the mind, and turns into solid dullness, like a cloud.

वही अंकुर थोड़ा सा वजूद पाकर धीरे धीरे घना होता जाता है, मन के आकाश को भरकर, बादल की तरह गाढ़े जड़पन में बदल जाता है।

4.54.4

भावयन्ती चितिश्चेत्यं व्यतिरिक्तमिवात्मनः । संकल्पतामुपायाति बीजमङ्कुरतामिव ॥ ४ ॥

bhāvayantī cittiścetyaṃ vyatiriktamivātmanaḥ | saṃkalpatāmupāyāti bījamaṅkuratāmiva || 4 ||

Consciousness, imagining an object as if it were separate from the self, turns into thought, the way a seed turns into a sprout.

चेतना जब किसी चीज़ को अपने आप से अलग मानकर सोचती है, तो वह ख़याल बन जाती है, जैसे बीज अंकुर बन जाता है।

4.54.5

संकल्पेन हि संकल्पः स्वयमेव प्रजायते । वर्धते स्वयमेवाशु दुःखाय न सुखाय तु ॥ ५ ॥

saṃkalpena hi saṃkalpaḥ svayameva prajāyate | vardhate svayamevāśu duḥkhāya na sukhāya tu || 5 ||

Thought is born from thought, all by itself, and it grows fast, all by itself, toward sorrow, not toward joy.

ख़याल से ख़याल अपने आप पैदा होता है, और अपने आप तेज़ी से बढ़ता है, दुख की तरफ़, सुख की तरफ़ नहीं।

4.54.6

संकल्पमात्रं हि जगज्जलमात्रं यथार्णवः । ऋते संकल्पमन्या ते नास्ति संसारदुःखिता ॥ ६ ॥

saṃkalpamātraṃ hi jagajjalamātraṃ yathārṇavaḥ | ṛte saṃkalpamanyā te nāsti saṃsāraduḥkhitā || 6 ||

The world is nothing but thought, just as the ocean is nothing but water. Apart from thought, there is nothing else in you that suffers in this world.

यह जगत सिर्फ़ ख़याल है, जैसे समंदर सिर्फ़ पानी है। ख़याल के अलावा तुझमें कुछ और नहीं है जो इस संसार में दुख भोगता है।

4.54.7

काकतालीययोगेन संजातोऽस्ति मुधैव हि । मृगतृष्णाद्विचन्द्रत्वभिवासत्यं च वर्धते ॥ ७ ॥

kākatālīyayogena saṃjāto'sti mudhaiva hi | mṛgatṛṣṇādvicandratvabhivāsatyam ca vardhate || 7 ||

It is born from mere coincidence, like a crow landing on a tree just as its fruit happens to fall. And, unreal as a mirage or as the sight of two moons, it goes on growing all the same.

यह महज़ इत्तेफ़ाक़ से पैदा होता है, जैसे कौआ पेड़ पर बैठे और ठीक उसी वक़्त फल गिर जाए। और मृगतृष्णा या दो चाँद दिखने जैसा झूठा होते हुए भी, यह बढ़ता ही जाता है।

4.54.8

निगीर्णमातुलिङ्गस्य कनकप्रत्ययो यथा । स्वयमभ्येत्य सत्योऽन्तः संकल्पस्ते तथा हृदि ॥ ८ ॥

nigīrṇamātuliṅgasya kanakapratyayo yathā | svayamabhyetya satyo'ntaḥ saṃkalpaste tathā hṛdi || 8 ||

Just as, to one who has swallowed a citron fruit, a false sense of gold rises up within on its own and feels real, so does thought rise up within your heart.

जैसे बिजौरे का फल निगलने वाले के भीतर सोने का झूठा एहसास अपने आप उठता है और सच्चा लगता है, वैसे ही ख़याल तेरे दिल के भीतर उठता है।

4.54.9

असत्यमेव जातस्त्वमसत्यमपि वर्तसे । अस्मिञ्ज्ञाते च विज्ञाने ह्यसत्यं संविलीयते ॥ ९ ॥

asatyameva jātastvamasatyamapi vartase | asmiñjñāte ca vijñāne hyasatyaṃ saṃvilīyate || 9 ||

You were born unreal, and unreal you remain. But once this is truly known and understood, the unreal melts away.

तू झूठा ही पैदा हुआ, और झूठा ही बना हुआ है। पर जब यह बात ठीक से जान ली और समझ ली जाती है, तो यह झूठ मिट जाता है।

4.54.10

असौ सोऽहमिमे भावाः सुखदुःखमया मम । व्यर्थमेवेति नानास्था येनान्तः परितप्यसे ॥ १० ॥

asau so'hamime bhāvāḥ sukhaduḥkhamayā mama | vyarthameveti nānāsthā yenāntaḥ paritapyase || 10 ||

That is him, I am he, these feelings of pleasure and pain are mine, all these different beliefs are useless, and it is because of them that you burn inside.

वह वही है, मैं वही हूँ, ये सुख दुख की भावनाएँ मेरी हैं, ये सब अलग अलग बातें बेकार हैं, और इन्हीं की वजह से तू भीतर ही भीतर जलता है।

4.54.11

असन्नेवास्य जातोऽसि कुतो जन्मविलासतः । व्यर्थमेवावमूढोऽसि संकल्पवशतः स्वतः ॥ ११ ॥

asannevāsya jāto'si kuto janmavilāsataḥ | vyarthamevāvamūḍho'si saṃkalpavaśataḥ svataḥ || 11 ||

You were born unreal out of this, out of nothing but the play of birth. For no reason at all, you have deluded yourself, by the power of your own thought.

तू इसी से झूठा पैदा हुआ, सिर्फ़ जन्म के खेल से। बिना किसी वजह के, तूने ख़ुद को अपने ही ख़याल की ताक़त से भरमा लिया है।

4.54.12

मा संकल्पय संकल्पं भावं भावय मा स्थितौ । एतावतैव भावेन भव्यो भवति भूतये ॥ १२ ॥

mā saṃkalpaya saṃkalpaṃ bhāvaṃ bhāvaya mā sthitau | etāvataiva bhāvena bhavyo bhavati bhūtaye || 12 ||

Do not keep building up thought. Hold instead to plain being, not to any fixed state. Just by holding to this much, a person becomes fit for true well-being.

ख़याल पर ख़याल मत बना। इसके बदले सीधे होने भर में रह, किसी बंधी हुई अवस्था में नहीं। बस इतना करने से ही इंसान असली भलाई पाने के लायक़ बन जाता है।

4.54.13

संकल्पनाशयत्नेन न भयान्यनुगच्छति । भावनाभावमात्रेण संकल्पः क्षीयते स्वयम् ॥ १३ ॥

saṃkalpanāśayatnena na bhayānyanugacchati | bhāvanābhāvamātreṇa saṃkalpaḥ kṣīyate svayam || 13 ||

Trying hard to kill off thought by force does not chase away your fears. But simply stop dwelling on things, and thought wastes away on its own.

ज़ोर लगाकर ख़याल को मार डालने की कोशिश से तेरे डर दूर नहीं भागते। पर बस चीज़ों में मन बसाना छोड़ दे, तो ख़याल अपने आप घटते घटते ख़त्म हो जाता है।

4.54.14

सुमनःपल्लवामर्दे किंचिद्व्यतिकरो भवेत् । सुसाध्यो भावमात्रेण नतु संकल्पनाशने ॥ १४ ॥

sumanaḥpallavāmarde kiṃcidvyatikaro bhavet | susādhyo bhāvamātreṇa natu saṃkalpanāśane || 14 ||

Even in crushing a flower's petals, some small mishap can happen. Thought is easy to overcome just by a change of feeling, not by trying to force thought to stop.

फूल की पंखुड़ियाँ मसलने जैसे छोटे काम में भी कभी कोई गड़बड़ हो सकती है। पर ख़याल को हराना सिर्फ़ भाव बदलने से आसान है, ख़याल को ज़बरदस्ती रोकने से नहीं।

4.54.15

पुष्पाक्रान्तौ करस्पन्दयत्नः पुत्रोपयुज्यते । तदप्युपकरोत्यस्मिन्न संकल्पपरिक्षये ॥ १५ ॥

puṣpākrāntau karaspandayatnaḥ putropayujyate | tadapyupakarotyasminna saṃkalpaparikṣaye || 15 ||

In gathering flowers, my son, one makes use of the hand's small effort, and that effort helps for that task. But it is no help toward wearing thought away.

फूल तोड़ने में, हे बेटे, हाथ की थोड़ी सी मेहनत काम आती है, और वह मेहनत उस काम में मदद करती है। पर ख़याल को घिसकर मिटाने में उससे कोई मदद नहीं मिलती।

4.54.16

संकल्पो येन हन्तव्यस्तेन भावविपर्ययात् अप्यर्धेन निमेषेण लीलयैव निहन्यते ॥ १६ ॥

saṃkalpo yena hantavyastena bhāvaviparyayāt apyardhena nimeṣeṇa līlayaiva nihanyate || 16 ||

The way to kill thought is this, through the opposite of feeling. By that, thought is destroyed playfully, in less than the blink of an eye.

ख़याल को मारने का तरीक़ा यही है, भाव को उल्टा कर देना। इससे ख़याल पलक झपकने से भी कम समय में, खेल खेल में ही ख़त्म हो जाता है।

4.54.17

भावमात्रोपसंपन्ने स्वात्मनि स्थितिमागते साध्यते यदसाध्यं तत्कस्य स्यात्किमिवाङ्ग ते ॥ १७ ॥

bhāvamātropasaṃpanne svātmani sthitimāgate sādhyate yadasādhyaṃ tatkasya syātkimivāṅga te || 17 ||

Once you have simply gained the right feeling, and come to rest in your own self, even what cannot be done gets done. For such a person what would be impossible? What indeed, dear one, could be impossible for you?

जब तूने बस सही भाव पा लिया, और अपने आप में टिक गया, तो जो नहीं हो सकता वह भी हो जाता है। ऐसे इंसान के लिए क्या नामुमकिन रह जाएगा? तेरे लिए भला क्या नामुमकिन होगा, प्यारे?

4.54.18

संकल्पेनैव संकल्पं मनसा स्वमनो मुने छित्त्वा स्वात्मनि तिष्ठ त्वं किमेतावति दुष्करम् ॥ १८ ॥

saṃkalpenaiva saṃkalpaṃ manasā svamano mune chittvā svātmani tiṣṭha tvaṃ kimetāvati duṣkaram || 18 ||

Cut thought with thought itself, mind with your own mind, wise one, and simply rest in your own self. What is so hard about that?

ख़याल को ख़याल से ही काट दे, मन को अपने ही मन से, हे बुद्धिमान, और बस अपने आप में टिक जा। इसमें भला मुश्किल क्या है?

4.54.19

उपशान्ते हि संकल्पे उपशान्तमिदं भवेत् संसारदुःखमखिलं मूलादपि महामते ॥ १९ ॥

upaśānte hi saṃkalpe upaśāntamidaṃ bhavet saṃsāraduḥkhamakhilaṃ mūlādapi mahāmate || 19 ||

Once thought is stilled, all this suffering of the world is stilled too, right down to its root, wise one.

जब ख़याल शांत हो जाता है, तो इस संसार का सारा दुख भी शांत हो जाता है, जड़ से भी, हे बुद्धिमान।

4.54.20

संकल्पो हि मनो जीवश्चित्तं बुद्धिः सवासना नाम्नैवान्यत्वमेतेषां नार्थेनार्थविदां वर ॥ २० ॥

saṃkalpo hi mano jīvaścittaṃ buddhiḥ savāsanā nāmnaivānyatvameteṣāṃ nārthenārthavidāṃ vara || 20 ||

Thought is the same as the mind, the same as the individual self, the same as awareness, the same as intellect together with its habits. These differ only in name, not in substance, best of the wise.

ख़याल ही मन है, ख़याल ही जीव है, ख़याल ही चेतना है, ख़याल ही आदतों समेत बुद्धि है। इनमें फ़र्क़ सिर्फ़ नाम का है, असल में कोई फ़र्क़ नहीं है, हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ।

4.54.21

संकल्पनाद्दते नेह किंचिदेवास्ति कुत्रचित् । तमेव हृदयाच्छिन्धि किमेतत्परिशोचसि ॥ २१ ॥

saṃkalpanādṛte neha kiṃcidevāsti kutracit| tameva hṛdayācchindhi kimetatpariśocasi || 21 ||

Except for imagination, nothing at all exists anywhere here. Cut that very thing out of your heart - why do you grieve over this?

कल्पना के अलावा यहाँ कहीं कुछ भी नहीं है। उसी कल्पना को अपने दिल से निकाल फेंको - फिर तुम इसका शोक क्यों करते हो?

4.54.22

यथैवेदं नभः शून्यं जगच्छून्यं तथैव हि । असन्मयविकल्पोत्थे उभे एते तते यतः ॥ २२ ॥

yathaivedaṃ nabhaḥ śūnyaṃ jagacchūnyaṃ tathaiva hi| asanmayavikalpotthe ubhe ete tate yataḥ || 22 ||

Just as this sky is empty, this world is just as empty too, because both of them rise out of thought built on what is unreal, and both spread out in the same way.

जैसे यह आकाश खाली है, वैसे ही यह दुनिया भी खाली है, क्योंकि दोनों उस कल्पना से पैदा हुए हैं जो असत्य पर टिकी है, और दोनों उसी तरह फैले हुए हैं।

4.54.23

असिद्धं सर्वमेवैतदसिद्धेनैव साधितम् । संकल्पेन जगद्यस्माद्भावना क्वावतिष्ठताम् ॥ २३ ॥

asiddhaṃ sarvamevaitadasiddhenaiva sādhitaṃ| saṃkalpena jagadyasmādbhāvanā kvāvatiṣṭhatām || 23 ||

All this is unreal, and it has been proved only by what is itself unreal. Since the world is made just by thought, where could such a belief ever find a place to stand?

यह सब असत्य है, और यह सिद्ध भी असत्य के ज़रिए ही हुआ है। जब यह दुनिया सिर्फ़ कल्पना से बनी है, तो यह विश्वास आख़िर कहाँ टिकेगा?

4.54.24

सत्यास्थायामसत्यां तु किंनिष्ठा वासना भवेत् । भावनाक्षयतः सिद्धिस्ततः प्राप्यं न शिष्यते । तस्मादसदिदं सर्वं विज्ञेयं हेलयेद्धया ॥ २४ ॥

satyāsthāyāmasatyāṃ tu kiṃniṣṭhā vāsanā bhavet| bhāvanākṣayataḥ siddhistataḥ prāpyaṃ na śiṣyate| tasmādasadidaṃ sarvaṃ vijñeyaṃ helayeddhayā || 24 ||

But when even the belief in what is true is itself untrue, what is left for a habit or desire to rest on? When this false conviction wears away, that itself is success - after that, nothing more is left to gain. So understand easily, without strain, that all this is unreal.

पर जब सत्य में यह विश्वास भी झूठा है, तो आदत या इच्छा किस चीज़ पर टिकेगी? जब यह झूठी धारणा मिट जाती है, वही असली सफलता है - उसके बाद पाने को कुछ बचता ही नहीं। इसलिए बिना ज़्यादा मेहनत के, सहज ही समझ लो कि यह सब असत्य है।

4.54.25

तनुभावनया तेन सुखदुःखैर्न लिप्यते । अवस्त्विति च निर्णीय स्नेहास्था न प्रवर्तते ॥ २५ ॥

tanubhāvanayā tena sukhaduḥkhairna lipyate| avastviti ca nirṇīya snehaāsthā na pravartate || 25 ||

As that conviction grows thin, one is no longer touched by pleasure or pain. And once you decide it is not a real thing at all, no attachment or trust in it arises.

जब यह धारणा कमज़ोर पड़ जाती है, तो सुख-दुख उसे छूते नहीं। और जब यह तय हो जाता है कि यह कोई सच्ची चीज़ नहीं है, तो उसके प्रति कोई मोह या भरोसा पैदा नहीं होता।

4.54.26

आस्थाक्षये न जायेते हर्षामर्षौ भवाभवौ । तस्मादसदिदं सर्वं सुखदुःखादिविभ्रमैः ॥ २६ ॥

āsthākṣaye na jāyete harṣāmarṣau bhavābhavau| tasmādasadidaṃ sarvaṃ sukhaduḥkhādivibhramaiḥ || 26 ||

When that trust is gone, joy and anger, gain and loss, do not arise at all. So all this, together with illusions like pleasure and pain, is unreal.

जब यह भरोसा ख़त्म हो जाता है, तो खुशी और गुस्सा, लाभ और नुकसान - कुछ भी पैदा नहीं होता। इसलिए सुख-दुख जैसे सारे भ्रम समेत, यह सब कुछ असत्य है।

4.54.27

मनो जीवः स्फुरत्युच्चैर्मानसं नगरं जगत्। भविष्यद्वर्तमानं च भूतं च परिवर्तयन्॥ २७॥

mano jīvaḥ sphuratyuccairmānasaṃ nagaraṃ jagat| bhaviṣyadvartamānaṃ ca bhūtaṃ ca parivartayan || 27 ||

The mind, as the living self, flashes out strongly as the world - a city built in thought - turning over the future, the present, and the past.

मन ही जीव के रूप में तेज़ी से उभरकर यह दुनिया बन जाता है - विचारों से बना एक नगर - जो भविष्य, वर्तमान और भूतकाल को बार-बार बदलता रहता है।

4.54.28

वासनावलितं लोके स्फुरच्छक्ति मनः स्थितम्। करोति स्वाशयेनेमां व्यवस्थां मलिनश्चलः॥ २८॥

vāsanāvalitaṃ loke sphuracchakti manaḥ sthitam| karoti svāśayenemāṃ vyavasthāṃ malinaścalaḥ || 28 ||

The mind, wrapped up in its own habits, standing in the world like a flashing force, dirty and restless, builds this whole arrangement out of its own liking.

यह मन अपनी पुरानी आदतों में लिपटा हुआ, दुनिया में एक चमकती हुई ताक़त की तरह टिका हुआ, मैला और चंचल होकर, अपनी मर्ज़ी से यह सारा तालमेल खुद बनाता है।

4.54.29

आत्मनः सदृशीं लीलां जीवो हृद्वनमर्कटः। दीर्घमाकारमादाय निमेषाद्याति ह्रस्वताम्॥ २९॥

ātmanaḥ sadṛśīṃ līlāṃ jīvo hṛdvanamarkaṭaḥ| dīrghamākāramādāya nimeṣādyāti hrasvatām || 29 ||

The living self is like a monkey in the forest of the heart, playing a game that suits its own nature - taking on a huge shape one moment, then shrinking small again within the blink of an eye.

जीव मानो दिल रूपी जंगल में एक बंदर है, जो अपने स्वभाव जैसा ही खेल खेलता है - अभी बड़ा रूप ले लेता है, और पलक झपकते ही छोटा हो जाता है।

4.54.30

ग्रहीतुं च न शक्यन्ते संकल्पजलवीचयः। मनाग्दृष्टा विवर्धन्ते ह्रसन्ति सपरिच्छदाः॥ ३०॥

grahītuṃ ca na śakyante saṃkalpajalavīcayaḥ| manāgdṛṣṭā vivardhante hrasanti saparicchadāḥ || 30 ||

The waves of thought's water cannot be caught in the hand. The moment they are glimpsed, they swell up, then they shrink away, trappings and all.

कल्पना रूपी पानी की लहरों को हाथ से पकड़ा नहीं जा सकता। ज़रा सी दिखते ही वे बढ़ जाती हैं, फिर अपने पूरे साज-सामान के साथ सिकुड़ जाती हैं।

4.54.32

भ्रमदा जडसंस्थानाः संकल्पास्तडिदग्नयः। यदेवासन्मयं पुत्र तदेवाशु चिकित्सितुम्॥ ३२॥

bhramadā jaḍasaṃsthānāḥ saṃkalpāstaḍidagnayaḥ | yadevāsanmayaṃ putra tadevāśu cikitsitum || 32 ||

Thoughts, which confuse the mind, though sitting inside dull matter, flicker like flashes of lightning-fire. Son, whatever is made only of what is unreal must be cured quickly.

कल्पनाएँ मन को भ्रमित करती हैं, भले ही वे जड़ पदार्थों में टिकी हों, बिजली की चमक की तरह पल भर में चमकती हैं। बेटा, जो कुछ केवल असत्य से बना है, उसे जल्दी ठीक कर लेना चाहिए।

4.54.33

शक्यते नात्र संदेहो नासत्सद्भवति क्वचित् । संस्थितो यदि संकल्पो दुश्चिकित्स्यः स्वतो भवेत् ॥ ३३ ॥

śakyate nātra saṃdeho nāsatsadbhavati kvacit | saṃsthito yadi saṃkalpo duścikitsyaḥ svato bhavet || 33 ||

There is no room for doubt here - the unreal never turns into the real, anywhere. If thought were something truly fixed and real, then by its very nature it would be hard to cure.

इसमें कोई शक नहीं - असत्य कभी कहीं भी सत्य नहीं बनता। अगर कल्पना सचमुच पक्की और असली होती, तो अपने आप में उसे ठीक करना मुश्किल होता।

4.54.34

किंत्वसद्भूत एवैष सुचिकित्स्यस्तदा भवेत् । अकृत्रिमं चेत्संसारमलमङ्गारकार्ष्ण्यवत् ॥ ३४ ॥

kintvasadbhūta evaiṣa sucikitsyastadā bhavet | akṛtrimam cetsaṃsāramalamaṅgārakārṣṇyavat || 34 ||

But since this is nothing but the unreal, it can then be cured with ease - the only way it could not would be if the stain of samsara were something we were born with, the way the blackness of charcoal is.

पर चूँकि यह सिर्फ़ असत्य है, इसलिए इसे आसानी से ठीक किया जा सकता है - हाँ, अगर यह सांसारिक मैल कोयले की कालिख जैसा जन्म से ही साथ होता, तो बात अलग होती।

4.54.35

तदेतत्क्षालने साधो कः प्रवर्तेत दुर्मतिः । किंत्वेतत्तण्डुलेष्वेव तुषकञ्चुकवत्स्थितम् ॥ ३५ ॥

tadetatkṣālane sādho kaḥ pravarteta durmatiḥ | kiṃtvetattuṇḍuleṣveva tuṣakañcukavatsthitam || 35 ||

So who but a fool, good sir, would even try to wash that away? No - this stain sits on us the way the husk sits on a grain of rice.

तो भला ऐसा कौन मूर्ख होगा जो उसे धोने में लगे, हे साधु? नहीं - यह मैल तो चावल के दाने पर छिलके की तरह टिका हुआ है।

4.54.36

यतस्ततः प्रयत्नेन पौरुषेण विनश्यति । अकृत्रिममपि प्राप्तं भृशं पुत्र तथा पुनः ॥ ३६ ॥

yatastataḥ prayatnena pauruṣeṇa vinaśyati | akṛtrimamapi prāptaṃ bhṛśaṃ putra tathā punaḥ || 36 ||

That is why effort and human striving destroy it - even if it seems inborn and deeply set, son, it can, in that same way, be undone again.

इसीलिए मेहनत और पुरुषार्थ से यह नष्ट हो जाता है - चाहे यह जन्मजात लगे और गहरे जमा हो, बेटा, फिर भी उसी तरह इसे मिटाया जा सकता है।

4.54.37

सुखोच्छेद्यतया ज्ञस्य संसारमलमाततम् । तण्डुलस्य यथा चर्म यथा ताम्रस्य कालिमा ॥ ३७ ॥

sukhocchedyatayā jñasya saṃsāramalamātatam | taṇḍulasya yathā carma yathā tāmrasya kālimā || 37 ||

For someone who understands, this widespread stain of samsara is easy to strip away - like the husk on a rice grain, like the black tarnish on copper.

जो समझदार है, उसके लिए यह फैला हुआ संसार का मैल आसानी से उतर जाता है - जैसे चावल का छिलका, जैसे ताँबे की कालिख।

4.54.38

नश्यति क्रियया पुत्र पुरुषस्य तथा मलम् । नश्यत्येव न संदेहस्तस्मादुद्यमवान्भव ॥ ३८ ॥

naśyati kriyayā putra puruṣasya tathā malam | naśyatyeva na saṃdehastasmādudyamavānbhava || 38 ||

In just that way, son, a person's stain is destroyed by action. It is destroyed, without doubt - so be diligent, make the effort.

उसी तरह, बेटा, कर्म से इंसान का यह मैल मिट जाता है। यह मिटता ज़रूर है, इसमें कोई शक नहीं - इसलिए मेहनती बनो, कोशिश करते रहो।

4.54.39

असत्कल्पैर्विकल्पैर्यत्संसारो न जितो मुधा । स्तोकेनाशु लयं याति क्वासद्वस्तु चिरं स्थितम् ॥ ३९ ॥

asatkalpairvikalpairyatsaṃsāro na jito mudhā | stokenāśu layaṃ yāti kvāsadvastu ciraṃ sthitam || 39 ||

Samsara was never conquered by unreal, empty ideas - all of that was wasted effort. With just a little real effort, it quickly falls apart - after all, where does an unreal thing stand firm for long?

झूठे, बेकार खयालों से संसार कभी जीता नहीं गया - वह सारी मेहनत बेकार गई। थोड़े से सच्चे प्रयास से ही यह जल्दी बिखर जाता है - आख़िर कोई असत्य चीज़ कब तक टिकी रह सकती है?

4.54.40

असत्यामेति संसारः स्वव्यवस्थां विचारतः । दीपालोकादिवान्धस्य द्वीन्दुत्वं स्वीक्षितादिव ॥ ४० ॥

asatyāmeti saṃsāraḥ svavyavasthāṃ vicārataḥ | dīpālokādivāndhasya dvīndutvaṃ svīkṣitādiva || 40 ||

Looked at closely, the order the world seems to have turns out to be unreal - the way lamplight and the rest mean nothing to a blind man, the way someone sees two moons because of their own way of looking at it.

गहराई से देखने पर, इस दुनिया की जो अपनी व्यवस्था लगती है, वह झूठी साबित होती है - जैसे किसी अंधे के लिए दीये की रोशनी का कोई मतलब नहीं होता, जैसे अपने ही देखने के ढंग से किसी को एक की जगह दो चाँद दिखाई देते हैं।

4.54.41

नासौ तव न चास्य त्वं भ्रान्तिं पुत्र परित्यज । असत्ये सत्यवद्दृष्टे भावना मा स्म हीदृशः ॥ ४१ ॥

nāsau tava na cāsya tvam bhrāntiṃ putra parityaja | asatyā satyavaddṛṣṭe bhāvanā mā sma hīdṛśaḥ || 41 ||

He is not yours, and you are not his - son, give up this delusion. Never hold on to such a conviction about something unreal that only looks real.

वह तुम्हारा नहीं है, और तुम उसके नहीं हो - बेटा, यह भ्रम छोड़ दो। जो चीज़ असत्य होकर भी सच जैसी दिखे, उस पर कभी ऐसा भरोसा मत रखो।

4.54.42

मम गुरुविभवोज्ज्वला विलासा इति तव मास्तु वृथैव विभ्रमोऽन्तः । त्वमपि च विततास्च ते विलासा विलसति सर्वमिदं तदात्मतत्त्वम् ॥ ४२ ॥

mama guruvibhavojjvalā vilāsā iti tava māstu vṛthaiva vibhramo'ntaḥ | tvamapi ca vitatāśca te vilāsā vilasati sarvamidaṃ tadātmatattvam || 42 ||

Do not let a pointless delusion take hold in you, thinking, 'These are my own splendors, blazing with great glory.' You too have your own vast, far-reaching splendors - all of this, everywhere, is simply that one same reality of the Self, shining forth.

यह मत सोचो कि 'ये तो मेरी ही शानदार, बड़े वैभव से चमकती लीलाएँ हैं' - ऐसा बेकार भ्रम अपने मन में मत पालो। तुम्हारी भी अपनी विशाल, फैली हुई लीलाएँ हैं - यह सब कुछ, हर जगह, बस उसी एक आत्म-तत्व का खेल है जो चमक रहा है।

Chapter 55

4.55.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । इत्याकर्ण्य तदा तत्र रात्रावालपनं द्वयोः । अहं रघुकुलाकाशशशाङ्क रघुनन्दन ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ityākarṇya tadā tatra rātrāvālapanam dvayoḥ | aham raghukulākāśaśaśāṅka raghunandana || 1 ||

Sri Vasishtha said: O Rama, joy of Raghu's line, moon in the sky of the Raghu clan, I had heard, there, that night, the conversation between the two of them.

श्री वशिष्ठ ने कहा, हे राम, रघुकुल के आनंद, रघुवंश के आकाश के चाँद, मैंने वहाँ उस रात उन दोनों की बातचीत सुनी थी।

4.55.2

पतितः खात्कदम्बाग्रे पत्रपुष्पफलाकुले । तूष्णीं निर्वृष्टमुक्तात्मा शृङ्गाग्र इव तोयदः ॥ २ ॥

patitaḥ khātkadambāgre patrapuṣpaphalākule | tūṣṇīṃ nirvṛṣṭamuktātmā śṛṅgāgra iva toya daḥ || 2 ||

I fell from the sky onto the top of a kadamba tree thick with leaves, flowers and fruit. I was silent, my feelings spent, like a cloud resting on a mountain peak after it has poured out all its rain.

मैं आकाश से गिरकर एक कदंब के पेड़ की चोटी पर आ गिरा, जो पत्तों, फूलों और फलों से भरा हुआ था। मैं चुप था, मानो मेरे मन का सारा भाव खाली हो गया हो, ठीक उस बादल की तरह जो अपनी सारी बारिश बरसाकर किसी पहाड़ की चोटी पर टिक गया हो।

4.55.3

अपश्यं तत्र दाशूरं शूरमिन्द्रियनिग्रहे । परेण तपसा युक्तं तेजसेव हुताशनम् ॥ ३ ॥

apaśyaṃ tatra dāśūraṃ śūramindriyanigrahe | pareṇa tapasā yuktaṃ tejaseva hutāśanam || 3 ||

There I saw Dashura, brave in mastering his senses, filled with the highest austerity, blazing like fire with his own brightness.

वहाँ मैंने दाशूर को देखा, जो अपनी इंद्रियों को वश में करने में वीर था, सबसे ऊँची तपस्या से भरा हुआ था, और अपने ही तेज से आग की तरह दहक रहा था।

4.55.4

तेजोभिर्देहनिष्क्रान्तैः काञ्चनीकृतभूतलम् । तापयन्तं प्रदेशं तं भुवनं भास्करो यथा ॥ ४ ॥

tejobhirdehaniṣkrāntaiḥ kāñcanīkṛtabhūtalam | tāpayantaṃ pradeśaṃ taṃ bhuvanaṃ bhāskaro yathā || 4 ||

The light streaming from his body had turned the ground to gold, and he warmed that whole place the way the sun warms the world.

उसके शरीर से निकलती रोशनी ने वहाँ की ज़मीन को सोने जैसा बना दिया था, और वह उस पूरी जगह को उसी तरह गरम कर रहा था जैसे सूरज पूरी दुनिया को गरम करता है।

4.55.5

मामथालोक्य संप्राप्तं दाशूरोऽर्घसपर्यया । वितीर्णविष्टरं पत्रपूजया पर्यपूजयत् ॥ ५ ॥

māmathālokya saṃprāptaṃ dāśūro'rghasaparyayā | vitīrṇaviṣṭaraṃ patrapūjayā paryapūjayat || 5 ||

Then, seeing that I had arrived, Dashura welcomed me with the offering of arghya. He gave me a seat and honored me fully with an offering of leaves.

फिर मुझे आया हुआ देखकर दाशूर ने अर्घ्य देकर मेरा स्वागत किया। उसने मुझे बैठने के लिए आसन दिया और पत्तों से पूजा करके मेरा पूरा सम्मान किया।

4.55.7

दृष्टवांस्तमहं वृक्षं कोरकोत्तरकोटरम्दाशूरस्येच्छया सर्वैरयतद्भिर्मृगव्रजैः ॥ ७ ॥

dṛṣṭavāṃstamahaṃ vṛkṣaṃ korakottarakoṭaramdāśūrasyecchayā sarvairayatadbhirmṛgavrajaiḥ || 7 ||

I saw that tree, its hollow higher up filled with buds, and all around it, because Dashura wished it so, herds of deer that felt no fear at all.

मैंने वह पेड़ देखा, जिसकी ऊपर की खोखल कलियों से भरी हुई थी, और दाशूर की इच्छा से उसके चारों ओर हिरणों के झुंड बिना किसी डर के घूम रहे थे।

4.55.8

सेव्यमानं वनमिव लतामण्डलमण्डितम्। स्मितेन विस्फुटमिव श्वसनस्फुरितच्छदम्॥ ८ ॥

sevyamānaṃ vanamiva latāmaṇḍalamaṇḍitam | smitena visphuṭamiva śvasanasphuritacchadam || 8 ||

It was frequented so much that it seemed like a whole forest. It was decked with a mass of creepers, seeming to break into a smile, its leaves trembling in the breeze.

उसके पास इतना आना-जाना रहता था कि वह पूरे जंगल जैसा लगता था। वह लताओं के झुंड से सजा हुआ था, जैसे मुस्कराकर खिल उठा हो, और उसके पत्ते हवा में काँप रहे थे।

4.55.9

लताकोटिगतैर्भ्रान्तैश्चामरैरिन्दुसुन्दरैः। शुभ्राभ्रखण्डनिकरैः शरन्नभ इवावृतम्॥ ९ ॥

latākoṭigatairbhrāntaiścāmarairindusundaraiḥ | śubhrābhraakhṇḍanikaraiḥ śarannabha ivāvṛtam || 9 ||

It was covered, like the autumn sky, with white tufts swaying at the tips of its creepers, beautiful as the moon, like clusters of bright, broken clouds.

वह उसी तरह ढका हुआ था जैसे शरद का आकाश ढका होता है, उसकी लताओं की नोकों पर सफेद गुच्छे हिल रहे थे, जो चाँद जैसे सुंदर थे, मानो चमकीले बादलों के टुकड़ों के समूह हों।

4.55.10

प्रालेयकणपद्धत्या मुक्तावल्याभ्यलंकृतम्। सर्वावयवमेवाच्छपुष्पपूरैः प्रपूरितम्॥ १० ॥

prāleyakaṇapaddhatyā muktāvalyābhyalaṅkṛtam | sarvāvayavamevācchapuṣpapūraiḥ prapūritam || 10 ||

A line of dewdrops decked it like a string of pearls, and every part of it was filled to the brim with clear, white flowers.

ओस की बूँदों की एक लाइन उसे मोतियों की माला की तरह सजा रही थी, और उसका हर हिस्सा साफ, उजले फूलों से पूरी तरह भरा हुआ था।

4.55.12

विवाहायेव वेषेण पुष्पभारातिभारिणा। लताङ्गनानुषक्तेन नागरेण कृतोपमम्॥ १२ ॥

vivāhāyeva veṣeṇa puṣpabhārātibhāriṇā | latāṅganānuṣaktena nāgareṇa kṛtopamam || 12 ||

It was like a young bridegroom dressed for his wedding, his clothes heavy with the weight of flowers, held close by the creepers clinging to him like women in love.

वह ऐसा लगता था जैसे कोई दूल्हा शादी के लिए सजा हो, जिसके कपड़े फूलों के बोझ से भारी हों, और लताएँ उससे इस तरह लिपटी हों जैसे प्रेम में डूबी स्त्रियाँ लिपटती हैं।

4.55.13

मुनिबद्धोटजाकारलतामण्डपमण्डितम् । मञ्जरीभिः पताकाभिर्युक्तं पुरमहोत्सवे ॥ १३ ॥

munibaddhoṭajākāralatāmaṇḍapamaṇḍitam | mañjarībhiḥ patākābhiryuktaṃ puramahotsave || 13 ||

It was decked with a bower of vines shaped like a hut, as if built by sages, hung with sprays of flowers like the banners of a great city festival.

वह लताओं से बने एक ऐसे मंडप से सजा था जो झोंपड़ी जैसा दिखता था, मानो किसी मुनि ने बनाया हो, और उस पर फूलों के गुच्छे झंडों की तरह लटक रहे थे, जैसे किसी बड़े शहर के उत्सव में लगते हैं।

4.55.14

मृगकण्डूयनध्वस्तपुष्पधूलिविधूसरम् । प्रोत्सारितोपान्तवनं वृषमल्लमिवोत्थितम् ॥ १४ ॥

mṛgakaṇḍūyanadhvastapuṣpadhūlividhūsaram | protsāritopāntavanaṃ vṛṣamallamivottitam || 14 ||

It was grey with flower-dust shaken loose where deer had rubbed themselves against it. It stood clear of the forest around its edges, as if it had pushed the woods back, and it rose up like a champion bull in a wrestling match.

हिरणों के शरीर रगड़ने से झड़ी हुई फूलों की धूल से वह धूसर हो गया था। वह अपने आसपास के जंगल से अलग खड़ा था, मानो उसने जंगल को पीछे धकेल दिया हो, और वह एक विजयी पहलवान साँड़ की तरह उठा हुआ खड़ा था।

4.55.16

प्रवालारुणहस्तेन कुसुमस्मितशोभिना । मधुना घूर्णमानेन प्रान्तेन पुलकत्विषा ॥ १६ ॥

pravālāruṇahastena kusumasmitaśobhinā | madhunā ghūrṇamānena prāntena pulakatviṣā || 16 ||

It had a hand red as young coral, shining with the smile of its flowers, swaying with its nectar as if drunk, the sheen of a thrill of joy along its edges,

उसका एक हाथ मूँगे की कोंपल जैसा लाल था, वह अपने फूलों की मुस्कान से चमक रहा था, अपने रस से डोल रहा था जैसे नशे में हो, और उसके किनारों पर खुशी की सिहरन जैसी चमक थी,

4.55.17

नीरन्ध्रपुष्पपूर्णेन घूर्णितेन वनानिलैः । निद्रालुकुड्मलदृशा स्तबकस्तनधारिणा ॥ १७ ॥

nīrandhrpuṣpapūrṇena ghūrṇitena vanānilaiḥ | nidrālukuḍmaladṛśā stabakastanadhāriṇā || 17 ||

dense with flowers, leaving no gap, swaying in the forest breeze, its buds like drowsy, half-closed eyes, its clusters of flowers like breasts.

वह फूलों से इतना भरा था कि कहीं जगह खाली नहीं थी, जंगल की हवा में डोल रहा था, उसकी कलियाँ नींद में झुकी आँखों जैसी थीं, और फूलों के गुच्छे स्तनों जैसे लगते थे।

4.55.18

पुष्पजालरजःपुञ्जकुङ्कुमारुणवाससा । लतावितानिलयवातायननिषङ्गिणा ॥ १८ ॥

puṣpajālarajaḥpuñjakukumāruṇavāsasā | latāvitānanilayavātāyananiṣaṅgiṇā || 18 ||

It wore a robe reddened like saffron by clouds of pollen-dust from its web of flowers, and its canopy of vines formed the windows of its home.

उसने अपने फूलों की धूल के बादलों से केसर जैसा लाल हुआ वस्त्र पहन रखा था, और उसकी लताओं की छतरी उसके घर की खिड़कियों जैसी बनी हुई थी।

4.55.19

नीलपुष्पलतादोलालीलालास्यविलासिना । आपादमस्तकप्रान्तं सर्वतो निर्मितालयम् ॥ १९ ॥

nīlapuṣpalatādolālīlālāsyavilāsinā | āpādamastakaprāntaṃ sarvato nirmitālayam || 19 ||

It took delight, like a graceful dancer, in the swinging play of its blue-flowered vines, and its bower was built all around it, covering it from top to bottom.

वह एक कुशल नर्तकी की तरह अपनी नीले फूलों वाली लताओं के झूलने के खेल में मगन था, और उसका मंडप चारों ओर से बना हुआ था, जो उसे सिर से पैर तक ढक रहा था।

4.55.20

वृन्देन वनदेवीनां कोकिलालापशालिना । संदिग्धमञ्जरीजालमलिनेत्रेण भासिना ॥ २० ॥

vṛndena vanadevīnāṃ kokilālāpaśālinā | saṃdigdhamañjarījālamalinetreṇa bhāsinā || 20 ||

Forest-goddesses came to it in crowds. It was rich with the calls of cuckoos and full of light, and its bees were so lost among the mass of flower-clusters that even their eyes seemed confused.

वन-देवियाँ झुंड बनाकर उसके पास आती थीं। वह कोयलों की आवाज़ों से भरा हुआ था और रोशनी से चमक रहा था, और उसकी मधुमक्खियाँ फूलों के गुच्छों की भीड़ में ऐसी खो जाती थीं कि उनकी आँखें भी उलझ जाती थीं।

4.55.21

अवश्यायोपशमितरतिखेदैर्मदालसैः । पुष्पधूलिसमालब्धैराश्लिष्टैर्निबिडं मिथः ॥ २१ ॥

avaśyāyopaśamitaratikhedairmadālasaiḥ | puṣpadhūlisamālabdhairāśliṣṭairnibiḍaṃ mithaḥ || 21 ||

Their weariness from passion soothed by the morning dew, languid with intoxication, smeared all over with flower-pollen, they clung to each other tightly.

प्रेम की थकान सुबह की ओस से शांत हो गई थी, वे नशे में सुस्त थे, फूलों की धूल से पूरी तरह लिपटे हुए थे, और आपस में कसकर एक-दूसरे से चिपके हुए थे।

4.55.22

पुष्पान्तरान्तःपुरगैः किमपि प्रणयोचितम् । ध्वनद्भिरभितः स्वच्छमत्तालियुगलैर्वृतम् ॥ २२ ॥

puṣpāntarāntaḥpuragaiḥ kimapi praṇayocitam | dhvanadbhirabhitaḥ svacchamattāliyugalairvṛtam || 22 ||

It was surrounded on every side by pairs of bright, drunk bees, buzzing as they nested among the flowers, filling the air with something that felt strangely like love.

उसके चारों ओर चमकीली, मस्त मधुमक्खियों के जोड़े भिनभिना रहे थे, जो फूलों के बीच अपना घोंसला बना रहे थे, और वहाँ का माहौल किसी अनजाने प्यार जैसा लगता था।

4.55.23

काननोपान्तनगरीघुंघुमाकर्णनेच्छया । क्षणमुत्कर्णमाशान्तचारुवर्वणटांकृतैः ॥ २३ ॥

kānanopāntanagarīghuṃghumākarṇanechchayā | kṣaṇamutkarṇamāśāntacāruvarvaṇaṭāṃkṛtaiḥ || 23 ||

For a moment, ears pricked up there, wanting to catch the far off hum of a town at the edge of the forest, amid the sweet cries sounding all around.

वहाँ एक पल के लिए कान खड़े हो गए, जंगल के किनारे बसे शहर की धीमी गूँज सुनने की चाह में, चारों ओर गूँजती मीठी आवाज़ों के बीच।

4.55.24

क्षणं दलाग्रविश्रान्तमुग्धमुग्धशिरस्तया । पश्यद्भिरिन्द्वंशुकवज्जालामर्णवमेखलाम् ॥ २४ ॥

kṣaṇaṃ dalāgraviśrāntamugdhmugdhśirastayā | paśyadbhirindvaṃśukavajjālāmarṇavamekhalām || 24 ||

For a moment they rested their gentle, innocent heads on the tip of a leaf, watching the belt of the sea that looked wrapped in moonlight.

एक पल के लिए उन्होंने अपने भोले भाले सिर पत्ते की नोक पर टिका दिए, और समुद्र की उस पट्टी को देखते रहे जो चांदनी में लिपटी हुई लग रही थी।

4.55.25

वनस्थलीनां तनयैर्नयैमूर्तिमिवास्थितैः । शुभैः पत्रपुटेष्वन्तर्मृगैः सारतलान्तरम् ॥ २५ ॥

vanasthalīnāṃ tanayairnayaimūrtimivāsthitaiḥ | śubhaiḥ patrapuṭeṣvantarmṛgaiḥ sāratālāntaram || 25 ||

The young fawns of the forest glades, whose gentle ways made them look like living images, lay in lovely leaf cups deep inside the trunk.

जंगल की घाटियों के नन्हे हिरन के बच्चे, जो अपने कोमल स्वभाव के कारण जीती जागती मूरतों जैसे लगते थे, तने के भीतर सुंदर पत्तों के दोनों में लेटे हुए थे।

4.55.26

नीडश्वसत्सुविश्वस्तसुप्तमात्रकपक्षिणम् । पाकच्युतफलोपान्तभूतकञ्चुकमण्डली ॥ २६ ॥

nīḍaśvasatsuviśvastasuptamātrakapakṣiṇam | pākacyutaphalopāntabhūtakañcukamaṇḍalī || 26 ||

Birds slept there in their nests, utterly at ease, breathing softly, and a ring of skins lay scattered near the ripe fruit that had fallen.

वहाँ पंछी अपने घोंसलों में पूरी तरह निश्चिंत होकर धीरे धीरे साँस लेते हुए सो रहे थे, और पके हुए गिरे फलों के पास छिलकों का एक घेरा बिखरा हुआ था।

4.55.27

संदिग्धमूकभ्रमरं गुच्छैः पूजाक्षसूत्रकैः । श्यामलीकृतपर्यन्तं नीडैः पल्लवमण्डितैः ॥ २७ ॥

saṃdigdhamūkabhramaraṃ gucchaiḥ pūjākṣasūtrakaiḥ | śyāmalīkṛtaparyantaṃ nīḍaiḥ pallavamaṇḍitaiḥ || 27 ||

The bees there were hushed, as if unsure whether to hum. Its clusters of flowers looked like strings of prayer beads, its edges had turned deep green, and it was decked with nests covered in fresh shoots.

वहाँ मधुमक्खियाँ चुप थीं, मानो गुनगुनाएँ या न गुनगुनाएँ। फूलों के गुच्छे किसी माला के दानों जैसे लगते थे, इसके किनारे गहरे हरे हो गए थे, और यह नई कोंपलों से ढके घोंसलों से सजा हुआ था।

4.55.28

सुगन्धिताशेषवनं पुष्पमेघीकृताम्बरम् । धूलीकदम्बशबलफलौघवलितं तले ॥ २८ ॥

sugandhitāśeṣavanaṃ puṣpameghīkṛtāmbaram | dhūlīkadambśabalaphalaughavalitaṃ tale || 28 ||

It filled the whole forest with fragrance and turned the sky into a cloud of flowers, and at its foot lay a mottled heap of dust and fallen fruit.

इसने पूरे जंगल को खुशबू से भर दिया था और आसमान को मानो फूलों के बादल में बदल दिया था, और इसकी जड़ के पास धूल और गिरे हुए फलों का चित्तीदार ढेर लगा था।

4.55.29

बहुनात्र किमुक्तेन न किंचिदपि विद्यते । पत्रं यत्र तरौ यत्र नोष्यते वा न युज्यते ॥ २९ ॥

bahunātra kimuktena na kiṃcidapi vidyate| patraṃ yatra tarau yatra noṣyate vā na yujyate || 29 ||

Why say more? There was not one leaf on that tree left empty or unused.

ज़्यादा क्या कहें? उस पेड़ पर एक भी पत्ता ऐसा नहीं था जो खाली पड़ा हो या किसी काम न आया हो।

4.55.30

पत्रे पत्रे मृगाः सुप्ता विश्रान्ताश्च पदे पदे । कच्छे कच्छे खगा लीनास्तस्य भूरुहभूपतेः ॥ ३० ॥

patre patre mṛgāḥ suptā viśrāntāśca pade pade| kacche kacche khagā līnāstasya bhūruhabhūpateḥ || 30 ||

On every leaf of that king of trees, deer lay sleeping and resting at every spot, and in every hollow, birds nestled.

उस वृक्षों के राजा के हर पत्ते पर हिरन सोए हुए थे और हर जगह आराम कर रहे थे, और हर छोटे गड्ढे में पंछी बसे हुए थे।

4.55.31

एवंगुणविशिष्टं तं समालोकयतो मम । महोत्सवेन सदृशी सा बभूव तमस्विनी ॥ ३१ ॥

evaṃguṇaviśiṣṭaṃ taṃ samālokayato mama| mahotsavena sadṛśī sā babhūva tamasyinī || 31 ||

As I gazed at that tree, so full of such fine qualities, the night became like a great festival.

जब मैं उस पेड़ को देख रहा था, जिसमें इतने सारे अच्छे गुण थे, तो वह रात किसी बड़े उत्सव जैसी लगने लगी।

4.55.32

ततः कथाभी रम्याभिः स तस्य तनयो मया । विज्ञानालोकरम्याभिर्नीतो बोधं परं पुनः ॥ ३२ ॥

tataḥ kathābhī ramyābhiḥ sa tasya tanayo mayā| vijñānālokaramyābhirnīto bodhaṃ paraṃ punaḥ || 32 ||

Then, with delightful stories bright with the light of wisdom, I brought him, the son of Dashura, once again to the highest understanding.

फिर मैंने सुंदर कहानियों से, जो ज्ञान के उजाले से जगमगाती थीं, दाशूर के बेटे को एक बार फिर सबसे ऊँची समझ तक पहुँचाया।

4.55.33

आवयोस्तत्र चित्राभिः कथाभिरितरेतरम् । शर्वरी सा व्यतीयाय मुहूर्त इव कान्तयोः ॥ ३३ ॥

āvayostatra citrābhiḥ kathābhiritaretaram| śarvarī sā vyatīyāya muhūrta iva kāntayoḥ || 33 ||

There, as we traded wondrous tales back and forth, that night passed for the two of us in a single moment, the way it does for two people in love.

वहाँ हम दोनों एक दूसरे को अनोखी कहानियाँ सुनाते रहे, और वह रात हमारे लिए पल भर में बीत गई, जैसे किसी प्रेमी जोड़े के लिए बीतती है।

4.55.34

प्रातः प्रतनुतां याते पुष्पर्द्धिघनजालके । स्वर्गाङ्गनाङ्गभोगाभे तारकानिकरे शनैः ॥ ३४ ॥

prātaḥ pratanutāṃ yāte puṣparddhighanajālake | svargāṅganāṅgabhogābhe tārakānikare śanaiḥ || 34 ||

At dawn, the thick mass of stars, dense as a cluster of blossoms and looking like the lovely limbs of heavenly women, slowly began to fade.

सुबह होते ही तारों का घना समूह धीरे धीरे फीका पड़ने लगा, जो फूलों के गुच्छे जैसा घना था और स्वर्ग की अप्सराओं के सुंदर अंगों जैसा लगता था।

4.55.35

आकदम्बनभोभागमुपयातं सुतान्वितम्। अहं विसृज्य दाशूरं ततोऽमरनदीं गतः ॥ ३५ ॥

ākadambanabhobhāgamupayātaṃ sutānvitam | ahaṃ visṛjya dāśūraṃ tato'maranadīṃ gataḥ || 35 ||

I left Dashura, who together with his son had risen into the region of the sky scattered with kadamba blossoms, and then I went on to the river of the gods.

मैं दाशूर को छोड़कर आगे बढ़ गया, जो अपने बेटे के साथ कदंब के फूलों से बिखरे आकाश के उस हिस्से में जा पहुँचा था, और फिर मैं देवताओं की नदी की ओर चला गया।

4.55.36

तत्राभिमतमासाद्य स्थानमेत्य नभस्तलम्। प्रविश्य खं मुनीनां च मध्यं स्वस्थ इव स्थितः ॥ ३६ ॥

tatrābhimatamāsādya sthānametya nabhastalam | praviśya khaṃ munīnāṃ ca madhyaṃ svastha iva sthitaḥ || 36 ||

There, having reached the place I wanted, arriving at the floor of the sky, I entered that space and stood, as if perfectly at ease, in the middle of the sages.

वहाँ अपनी मनचाही जगह पर पहुँचकर, आकाश के उस धरातल तक जाकर, मैं उस अंतरिक्ष में गया और ऋषियों के बीच मानो पूरी तरह सहज होकर खड़ा हो गया।

4.55.37

दाशूराख्यायिकैषा ते कथिता रघुनन्दन। जगतः प्रतिबिम्बाभा सत्याकाराप्यसन्मयी ॥ ३७ ॥

dāśūrākhyāyikaiṣā te kathitā raghunandana | jagataḥ pratibimbābhā satyākārāpyasanmayī || 37 ||

This, Raghunandana, is the story of Dashura that I have told you. It is like a reflection of the world, real in shape but made of what is not real.

रघुनंदन, यही है दाशूर की वह कहानी जो मैंने तुम्हें सुनाई। यह इस दुनिया के प्रतिबिंब जैसी है, देखने में सच्ची लगती है, पर बनी है उस चीज़ से जो असल में है ही नहीं।

4.55.38

स्वरेणुचन्दनालेपैः समालब्धमकहण्डितम्स्वच्छदाभोगविपुलरक्ताम्बरपरिच्छदम् ॥ ३८ ॥

svareṇucandanālepaiḥ samālabdhamakhaṇḍitamsvacchadābhogavipularaktāmbaraparicchadam || 38 ||

It was anointed all over with its own pollen and sandal paste, whole and unbroken, wrapped in a broad, bright red garment.

वह अपने ही पराग और चंदन के लेप से पूरी तरह लिपा हुआ था, बिना किसी टूट फूट के, और एक चौड़े, चमकीले लाल कपड़े में लिपटा हुआ था।

4.55.39

तस्मादवास्तवीं त्यक्त्वा वास्तवीमपि रञ्जनाम्। दाशूरसिद्धान्तदृशा सदोदारो भवात्मवान् ॥ ३९ ॥

tasmādavāstavīṃ tyaktvā vāstavīmapi rañjanām | dāśūrasiddhāntadṛśā sadodāro bhavātmavān || 39 ||

So let go of both the false attachment and even the true attachment, through the understanding taught by Dashura, and always stay noble and in control of yourself.

इसलिए झूठे मोह को भी छोड़ो और सच्चे मोह को भी, दाशूर की सिखाई समझ के ज़रिए, और हमेशा उदार बने रहो और अपने ऊपर काबू रखो।

4.55.40

तस्माद्विकल्पं मलमात्मनस्त्वं निर्धूय पश्यामलमात्मतत्त्वम् । आसादयिष्यस्यचिरात्पदं तद्भविष्यसीज्यो भुवनेषु येन ॥ ४० ॥

tasmādvikalpaṃ malamātmanastvaṃ nirdhūya paśyāmalamātmatattvam | āsādayiṣyasyacirātpadaṃ tadbhaviṣyasījyo bhuvaneṣu yena || 40 ||

So shake off the impurity that is confusion in your own mind, and see the pure truth of yourself. You will soon reach that state, and because of it you will be worshipped in every world.

इसलिए अपने मन की उलझन वाली इस मैल को झाड़ दो, और अपने भीतर के शुद्ध सच को देखो। तुम जल्द ही उस अवस्था तक पहुँच जाओगे, जिसकी वजह से तुम्हें हर लोक में पूजा जाएगा।

Chapter 56

4.56.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । नास्तीदमिति निर्णीय सर्वतस्त्यज रञ्जनाम् । यन्नास्ति तत्प्रति किल केवास्थेह विचारिणाम् ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | nāstīdamiti nirṇīya sarvatastyaja rañjanām | yannāsti tatprati kila kevāstheha vicāriṇām || 1 ||

Sri Vasishtha said, once you decide for certain that this world does not exist, give up every kind of liking for it. What concern can a person who really thinks about it have with something that does not exist?

श्री वसिष्ठ बोले, जब तुम यह पूरी तरह तय कर लो कि यह जगत है ही नहीं, तो इसके प्रति हर तरह का लगाव छोड़ दो। जो चीज़ है ही नहीं, गहराई से सोचने वाले लोगों को उसमें आखिर क्या दिलचस्पी हो सकती है।

4.56.2

दृश्यमानमथेदं चेदस्ति सत्तामुपागतम् । तिष्ठ स्वात्मनि बध्नासि त्वं किमत्र किलात्मत्ताम् ॥ २ ॥

dṛśyamānamathedaṃ cedasti sattāmupāgatam | tiṣṭha svātmani badhnāsi tvaṃ kimatra kilātmattām || 2 ||

But if this world that you see does exist, if it truly has being, then still stay firmly in your own self. Why do you tie your sense of self to it here?

लेकिन अगर यह दिखने वाला जगत सच में है, अगर इसका वाकई अस्तित्व है, तो भी तुम अपने आत्मा में मज़बूती से टिके रहो। तुम यहाँ अपनेपन का एहसास इससे क्यों जोड़ते हो।

4.56.3

अथ चेदस्ति नास्तीदमिति निश्चयवानसि । तथापि भावनासङ्गः कथं युक्तश्चलाचले ॥ ३ ॥

atha cedasti nāstīdamiti niścayavānasi | tathāpi bhāvanāsaṅgaḥ kathaṃ yuktaścalācale || 3 ||

Or if you are completely certain that this world does not exist, then how does it make sense to keep your mind attached to this world, where some things move and some stand still?

या अगर तुम्हें पूरा यकीन है कि यह जगत नहीं है, तो फिर चलने वाली और न चलने वाली इन सब चीज़ों में मन का यह लगाव कैसे ठीक बैठता है।

4.56.4

नेदमस्ति जगद्राम तव नास्ति महामते । केवलं स्वच्छमेवेत्थमाततं मितमीदृशम् ॥ ४ ॥

nedamasti jagadrāma tava nāsti mahāmate | kevalaṃ svacchamevetthaṃ ātataṃ mitamīdṛśam || 4 ||

Rama, this world does not exist, it does not exist for you either, wise one. There is only something clear and pure, which simply appears spread out like this, only seeming to have this shape and size.

हे राम, यह जगत नहीं है, हे बुद्धिमान, यह तुम्हारे लिए भी नहीं है। बस एक शुद्ध और निर्मल चीज़ है, जो इस तरह फैली हुई दिखती है, और बस इस रूप और नाप की लगती है।

4.56.5

नेदं कर्तृकृतं किंचिन्न वा कर्तृकृतक्रमम्। स्वयमाभासते चेदं कर्त्रकर्तृपदं गतम्॥ ५॥

nedaṃ kartṛkṛtaṃ kiṃcinna vā kartṛkṛtakramam | svayamābhāsate cedaṃ kartṛkartṛpadam gatam || 5 ||

This world was not made by any maker, and it is not a chain of actions made by a maker either. It appears on its own, so it stands in a place where made by someone and made by no one both fit it.

यह जगत किसी बनाने वाले ने नहीं बनाया, और न ही यह किसी के बनाए हुए क्रम से चला है। यह अपने आप प्रकट होता है, इसलिए यह ऐसी जगह पर है जहाँ किसी ने बनाया और किसी ने नहीं बनाया, दोनों बातें एक साथ बैठती हैं।

4.56.6

अकर्तृकं जगज्जालं भवत्वथ सकर्तृकम्। मा त्वमेतेन शबलं भावयन्नास्य चेतसि॥ ६॥

akartṛkaṃ jagajjālaṃ bhavatvatha sakartṛkam | mā tvametena śabalaṃ bhāvayannāsya cetasi || 6 ||

Whether this tangled world has a maker or has no maker at all, do not let that question make your mind confused and troubled about it.

यह उलझा हुआ जगत किसी ने बनाया हो या बिल्कुल न बनाया हो, इस बात को लेकर अपने मन को उलझा और परेशान मत करो।

4.56.7

सर्वेन्द्रियविहीनात्मा कर्तेव स जडोपमः। अकर्तृ च तदा मन्ये काकतालीयवज्जगत्॥ ७॥

sarvendriyavihīnātmā karteva sa jaḍopamaḥ | akartṛ ca tadā manye kākatālīyavajjagat || 7 ||

A self with no senses at all, even if it were called a doer, would be no different from lifeless matter. So I think this world has no real doer, it comes about like a crow landing on a branch just when a fruit happens to fall, a pure coincidence.

जिस आत्मा में कोई इन्द्रिय ही नहीं, वह चाहे कर्ता कहलाए, पर वह तो निर्जीव वस्तु जैसा ही है। इसलिए मैं मानता हूँ कि यह जगत बिना किसी सच्चे कर्ता के है, यह वैसे ही बनता है जैसे कौआ किसी डाल पर बैठे और ठीक उसी वक्त फल गिर पड़े, यह महज़ एक संयोग है।

4.56.8

काकतालीययोगेन जातं यत्किंचिदेव तत्। तस्मिन्भावानुसंधानं बालो बध्नाति नेतरः॥ ८॥

kākatālīyayogena jātaṃ yatkiñcideva tat | tasminbhāvānusandhānaṃ bālo badhnāti netaraḥ || 8 ||

Whatever happens by mere coincidence like that, only a child takes it seriously and builds real belief around it. No one wiser does.

जो कुछ भी महज़ संयोग से हो जाता है, उसे सच मानकर उस पर भरोसा तो बस एक बच्चा ही करता है, समझदार कोई नहीं करता।

4.56.9

न कदाचिदिदं शान्तं जगद्राम न च क्षयि। अजस्रं दृश्यमानत्वाद्भावित्वाच्च पुनःपुनः॥ ९॥

na kadācididaṃ śāntaṃ jagadrāma na ca kṣayi | ajasraṃ dṛśyamānatvādbhāvitvācca punaḥpunaḥ || 9 ||

Rama, this world never comes to rest, and it never truly ends either, because it keeps on being seen without a break, and it keeps on arising again and again.

हे राम, यह जगत कभी शांत नहीं होता, और कभी सच में नष्ट भी नहीं होता, क्योंकि यह लगातार दिखता ही रहता है, और बार-बार उत्पन्न होता रहता है।

4.56.10

न कदाचिदिदं चास्ति जगद्राम न च क्षयि । अजस्रं क्षीयमाणत्वान्नास्तित्वाच्चानुमानतः ॥ १० ॥

na kadācididaṃ cāsti jagadrāma na ca kṣayi | ajasraṃ kṣīyamāṇatvānnāstitvāccānumānataḥ || 10 ||

And Rama, this world never truly exists at all, and so it does not truly end either, because it keeps on perishing without a break, and because reasoning shows it was never there to begin with.

और हे राम, यह जगत सच में कभी है ही नहीं, इसलिए इसका सच में नाश भी नहीं होता, क्योंकि यह लगातार नष्ट होता रहता है, और तर्क से यह पता चलता है कि यह है ही नहीं।

4.56.11

सर्वेन्द्रियपदातीतो यदा कर्तेह विज्वरः । कुर्वाणः सर्वदा खेदं न कदाचन गच्छति ॥ ११ ॥

sarvendriyapadātīto yadā karteha vijvaraḥ| kurvāṇaḥ sarvadā khedaṃ na kadācana gacchati || 11 ||

When the one who acts here stands beyond the reach of all the senses and is free of any inner turmoil, then even though he keeps on acting all the time, he never falls into sorrow.

जब यहाँ कर्ता सभी इन्द्रियों की पहुँच से परे हो और भीतर से किसी हलचल से मुक्त हो, तो वह हमेशा काम करते हुए भी कभी दुख में नहीं पड़ता।

4.56.12

तेनेयं नियतिः प्रौढा भावाभावदशामयी । ईदृश्येव स्थिरा दीर्घा मिथ्योत्थापि च दृश्यते ॥ १२ ॥

teneyaṃ niyatiḥ prauḍhā bhāvābhāvadaśāmayī| īdṛśyeva sthirā dīrghā mithyotthāpi ca dṛśyate || 12 ||

So this order that governs everything is strong and firmly settled, it is made of both being and not being, and it looks exactly like this, steady and long lasting, even though it has risen out of falsehood.

इसलिए हर चीज़ को चलाने वाला यह नियम बड़ा मज़बूत और पक्का है, यह होने और न होने दोनों हालतों से बना है, और यह ठीक ऐसा ही दिखता है, स्थिर और लंबे समय तक टिकने वाला, भले ही यह झूठ से पैदा हुआ हो।

4.56.13

अपर्यन्तस्य कालस्य कश्चिदंशः शरच्छतम् । तावन्मात्रमहाश्चर्यः किमर्थं सोऽनुधावति ॥ १३ ॥

aparyantasya kālasya kaścidaṃśaḥ śaracchatam| tāvanmātramahāścaryaḥ kimarthaṃ so'nudhāvati || 13 ||

A hundred years is only a small piece of endless time. Why does a person, so amazed by that little bit, keep running after it?

सौ साल तो अनंत समय का बस एक छोटा-सा हिस्सा है। फिर इंसान इतनी-सी चीज़ से चकित होकर उसी के पीछे क्यों भागता रहता है।

4.56.14

स्थिराश्चेज्जगतां भावास्तत्त्वादास्था न शोभते । कथमन्योन्यसंश्लेषो जडचेतनयोः किल ॥ १४ ॥

sthirāścejjagatāṃ bhāvāstattvādāsthā na śobhate| kathamanyonyasaṃśleṣo jaḍacetanayoḥ kila || 14 ||

If the things of this world were truly permanent, holding on to them still would not fit with the truth. And how can lifeless matter and a conscious being ever truly join together anyway?

अगर मान लें कि जगत की चीज़ें सच में स्थायी हैं, तो भी सच्चाई को जानते हुए उनसे मोह रखना ठीक नहीं है। और वैसे भी, निर्जीव चीज़ और चेतन जीव का आपस में सच में मेल कैसे हो सकता है।

4.56.15

अस्थिराश्चेज्जगद्भावास्तदप्यास्था न शोभते । पयःफेनास्थिरस्यान्ते दुःखमेषा ददाति ते ॥ १५ ॥

asthirāścejjagadbhāvāstadapyāsthā na śobhate| payaḥphenāsthirasyānte duḥkham eṣā dadāti te || 15 ||

And if the things of this world are not lasting at all, then holding on to them is even less fitting. This attachment, to something as unstable as foam on water, will only give you sorrow in the end.

और अगर जगत की चीज़ें बिल्कुल भी टिकने वाली नहीं हैं, तो उनसे मोह रखना और भी गलत है। पानी के झाग जैसी अस्थिर चीज़ से यह मोह अंत में तुम्हें बस दुख ही देगा।

4.56.16

आस्थाबन्धो महाबाहो जगद्भावत्वमात्मनः । न स्थिरास्थिरयोः फेनशैलयोरिव राजते ॥ १६ ॥

āsthābandho mahābāho jagadbhāvatvamātmanaḥ | na sthirāsthirayoḥ phenaśailayoriva rājate || 16 ||

Strong armed one, tying your sense of self to the world, treating your self as if it were the world, does not look right either way, whether the world is stable or unstable, any more than foam looks like a mountain.

हे महाबली, अपने आत्मा को जगत के साथ बाँध लेना, अपने-आप को जगत जैसा मान लेना, न तो जगत के स्थिर होने पर ठीक बैठता है, न अस्थिर होने पर, ठीक वैसे ही जैसे झाग कभी पहाड़ जैसा नहीं लग सकता।

4.56.17

सर्वकर्ताप्यकर्तेव करोत्यात्मा न किंचन । तिष्ठत्येवमुदासीन आलोकं प्रति दीपवत् ॥ १७ ॥

sarvakartāpyakarteva karotyātmā na kiṃcana | tiṣṭhatyevamudāsīna ālokaṃ prati dīpavat || 17 ||

The self does everything, yet it acts as if it does nothing, like one who is not the doer at all. It stays detached just like this, the way a lamp simply gives light without caring what that light falls on.

आत्मा सब कुछ करता है, फिर भी ऐसे काम करता है मानो कुछ भी नहीं कर रहा हो, जैसे कोई कर्ता ही न हो। वह ठीक इसी तरह उदासीन बना रहता है, जैसे दीपक बिना किसी परवाह के बस रोशनी देता रहता है।

4.56.18

कुर्वन्न किंचित्कुरुते दिवाकार्यमिवांशुमान् । गच्छन्न गच्छति स्वस्थः स्वास्पदस्थो रविर्यथा ॥ १८ ॥

kurvann na kiṃcitkurute divākāryamivāṃśumān | gacchann na gacchati svasthaḥ svāspadastho raviryathā || 18 ||

Acting, it does nothing, the way the sun does its day's work without effort. Moving, it does not move, it stays settled in its own place, the way the sun stays fixed where it is.

वह काम करते हुए भी कुछ नहीं करता, जैसे सूरज बिना मेहनत के अपना दिन भर का काम कर देता है। वह चलते हुए भी नहीं चलता, अपनी ही जगह पर टिका रहता है, जैसे सूरज अपनी जगह पर स्थिर रहता है।

4.56.19

यतः कुतश्चिदेवेदं संपन्नमिव लक्ष्यते । अरुणातीरवद्वारिपूरावर्तवदाततम् ॥ १९ ॥

yataḥ kutaścidEvedaṃ saṃpannamiva lakṣyate | aruṇātīravadvāri pūrāvartavadātatam || 19 ||

This world only seems to have come from one place or another, spreading out like water at the bank of the Aruna, like a whirlpool spreading in a flood.

यह जगत मानो किसी न किसी जगह से बना हुआ दिखता है, जैसे अरुणा नदी के किनारे पानी फैलता है, जैसे बाढ़ में भँवर फैलता है।

4.56.20

इति चेद्भवता राम नैपुण्येनावधारितम् । प्रमाणपरिशुद्धेन चेतसा च विचारितम् ॥ २० ॥

iti cedbhvatā rāma naipuṇyenāvadhāritam | pramāṇapariśuddhena cetasā ca vicāritam || 20 ||

Rama, if you have grasped all this with real skill, and thought it through with a mind made clear by sound proof,

हे राम, अगर तुमने यह सब सच में कुशलता से समझ लिया है, और सही प्रमाण से साफ हुए मन से इस पर विचार कर लिया है,

4.56.21

तथापि भावनां साधो पदार्थं प्रति नार्हसि । अलातचक्रे स्वप्ने च भ्रमे वा केव भावना ॥ २१ ॥

tathāpi bhāvanāṃ sādho padārthaṃ prati nārhasi | alātacakre svapne ca bhrame vā keva bhāvanā || 21 ||

even so, good man, you should not hold real belief toward any object. In a circle of fire made by a whirled firebrand, in a dream, or in an illusion, what belief can there be?

फिर भी, हे भले पुरुष, तुम्हें किसी भी वस्तु पर सच्चा विश्वास नहीं रखना चाहिए। घुमाई गई जलती लकड़ी से बने आग के घेरे में, सपने में, या किसी भ्रम में, आखिर विश्वास किस बात का।

4.56.22

अकस्मादागतो जन्तुः सौहार्दस्य न भाजनम् । भ्रमोद्भूतं जगज्जालमास्थायास्तन्न भाजनम् ॥ २२ ॥

akasmādāgato jantuḥ sauhārdasya na bhājanam | bhramodbhūtaṃ jagajjālamāsthāyāstanna bhājanam || 22 ||

A creature that appears suddenly, for no real reason, is not something to feel true affection for. And this whole tangled world, born out of illusion, is not something to place your trust in either.

जो प्राणी अचानक, बिना किसी वजह के आ जाए, वह सच्चे प्यार और दोस्ती के लायक नहीं है। और यह उलझा हुआ जगत, जो भ्रम से पैदा हुआ है, वह भी भरोसे के लायक नहीं है।

4.56.23

औष्ण्येन्दौ शीतले भानौ मृगतृष्णाजले तथा । यथा न भावयस्यास्थामेवं भावय मा स्थितौ ॥ २३ ॥

auṣṇyendau śītale bhānau mṛgatṛṣṇājale tathā | yathā na bhāvayasyāsthāmevaṃ bhāvaya mā sthitau || 23 ||

Just as you do not believe there is heat in the cool moon, or coolness in the hot sun, or real water in a mirage, hold that same disbelief about this world being fixed and lasting.

जैसे तुम यह नहीं मानते कि ठंडे चाँद में गर्मी है, या तपते सूरज में ठंडक है, या रेत में दिखने वाले पानी में सच में पानी है, वैसे ही इस जगत के स्थिर और सच होने पर भी विश्वास मत करो।

4.56.24

संकल्पपुरुषस्वप्नजनद्वीन्दुत्वविभ्रमम् । यथा पश्यसि पश्य त्वं भावजातमिदं तथा ॥ २४ ॥

saṃkalpapuruṣasvapnajanadvīndutvavibhramam | yathā paśyasi paśya tvaṃ bhāvajātamidaṃ tathā || 24 ||

Just as a person who exists only in someone's imagination might, in his own dream, see two moons where there is only one, see this whole world of things in exactly the same way.

जैसे कोई सिर्फ कल्पना में गढ़ा हुआ व्यक्ति अपने ही सपने में एक चाँद की जगह दो चाँद देखने का भ्रम पाले, ठीक वैसे ही तुम इस पूरी दुनिया की हर चीज़ को देखो।

4.56.25

अन्तरास्थां परित्यज्य भावश्रीभावनामयीम् । योऽसि सोऽसि जगत्यस्मिँल्लीलया विहरानघ ॥ २५ ॥

antarāsthāṃ parityajya bhāvaśrībhāvanāmayīm | yo'si so'si jagatyasmiṃllīlayā viharānagha || 25 ||

Let go of the inner attachment that is just the imagining of the glory of things. Whatever you are, you are that. Play freely in this world, sinless one.

उस भीतरी लगाव को छोड़ दो जो चीज़ों की शोभा की कल्पना मात्र है। तुम जो हो, वही हो। हे निष्पाप, इस संसार में खेल-खेल में विचरण करो।

4.56.26

अकर्तृत्वपदं पीत्वा पीत्वेच्छामपि कुर्वतः । सर्वभावान्तरस्थस्य सर्वातीतस्य चात्मनः ॥ २६ ॥

akartṛtvapadaṃ pītvā pītvecchāmapi kurvataḥ| sarvabhāvāntarasthasya sarvātītasya cātmanaḥ || 26 ||

The self has fully taken in the state of not doing anything, yet it still carries out desire. It lives inside every state of being, and it is also beyond all of them.

आत्मा ने अकर्ता होने की स्थिति को पूरी तरह अपना लिया है, फिर भी वह इच्छा के अनुसार काम करती है। वह हर भाव के भीतर रहती है, और साथ ही सबसे परे भी है।

4.56.27

इयं संनिधिमात्रेण नियतिः परिजृम्भते । दीपसंनिधिमात्रेण निरिच्छैव प्रकाशते ॥ २७ ॥

iyam sannidhimātreṇa niyatiḥ parijṛmbhate| dīpasannidhimātreṇa niricchaiva prakāśate || 27 ||

This working of the world unfolds only because the self is near, just as a lamp gives light only because it is near, without wanting anything.

यह जगत का काम केवल आत्मा के निकट होने भर से चलता है, ठीक वैसे ही जैसे दीपक बिना कुछ चाहे, केवल अपनी उपस्थिति से ही प्रकाश देता है।

4.56.28

अभ्रसंनिधिमात्रेण कुटजानि यथा स्वयम् । आत्मसंनिधिमात्रेण त्रिजगन्ति तथा स्वयम् ॥ २८ ॥

abhrasannidhimātreṇa kuṭajāni yathā svayam| ātmasannidhimātreṇa trijaganti tathā svayam || 28 ||

Just as kutaja trees blossom on their own merely because clouds are near, so the three worlds carry on by themselves merely because the self is near.

जैसे बादलों के पास होने भर से कुटज के पेड़ अपने आप फूलने लगते हैं, वैसे ही आत्मा के निकट होने भर से तीनों लोक अपने आप चलते रहते हैं।

4.56.29

सर्वेच्छारहिते भानौ यथा व्योमनि तिष्ठति । जायते व्यवहारश्च सति देवे तथा क्रिया ॥ २९ ॥

sarvecchārahite bhānau yathā vyomani tiṣṭhati| jāyate vyavahāraśca sati deve tathā kriyā || 29 ||

Just as the sun, wanting nothing, simply stays in the sky, and the business of the world goes on, so too, when the self merely exists, action takes place.

जैसे सूरज बिना कुछ चाहे बस आकाश में स्थित रहता है, और संसार का सारा व्यवहार चलता रहता है, वैसे ही आत्मा के मात्र होने से ही काम होता रहता है।

4.56.30

निरिच्छे संस्थिते रत्ने यथालोकः प्रवर्तते । सत्तामात्रेण देवे तु तथैवायं जगद्गणः ॥ ३० ॥

niricche saṃsthite ratne yathālokaḥ pravartate| sattāmātreṇa deve tu tathaivāyaṃ jagadgaṇaḥ || 30 ||

Just as a jewel, wanting nothing, simply lies there and its light shines out, so too, merely by the self existing, this whole mass of the world comes to be.

जैसे एक मणि बिना कुछ चाहे बस पड़ी रहती है और उसका प्रकाश स्वयं फैलता है, वैसे ही केवल आत्मा के होने भर से ही यह सारा जगत बन जाता है।

4.56.31

अतः स्वात्मनि कर्तृत्वमकर्तृत्वं च संस्थितम् । निरिच्छत्वादकर्तासौ कर्ता संनिधिमात्रतः ॥ ॥ ३१ ॥

ataḥ svātmani kartṛtvaṃ akartṛtvaṃ ca saṃsthitam | niricchatvādakartāsau kartā saṃnidhimātrataḥ || 31 ||

So both doing and not-doing exist together in one's own self. Because it wants nothing, it does not act; but merely by being present, it acts.

इसलिए अपने आत्मा में करना और न करना दोनों एक साथ स्थित हैं। चूँकि वह कुछ नहीं चाहता, इसलिए वह अकर्ता है; परंतु केवल अपनी उपस्थिति से ही वह कर्ता भी है।

4.56.32

सर्वेन्द्रियाद्यतीतत्वात्कर्ता भोक्ता न सन्मयः । इन्द्रियान्तर्गतत्वात्तु कर्ता भोक्ता स एव हि ॥ ॥ ३२ ॥

sarvendriyādyatītatvātkartā bhoktā na sanmayaḥ | indriyāntargatatvāttu kartā bhoktā sa eva hi || 32 ||

Since it is beyond all the senses, the self, which is pure being, is not a doer or an enjoyer. But since it is also joined to the senses, that very same self is the doer and the enjoyer.

चूँकि वह सभी इंद्रियों से परे है, इसलिए वह शुद्ध सत्तारूप आत्मा न तो कर्ता है न भोक्ता। परंतु चूँकि वही इंद्रियों के भीतर भी जुड़ा है, इसलिए वही आत्मा कर्ता और भोक्ता भी है।

4.56.33

द्वे एवात्मनि विद्येते कर्तृताकर्तृतानघ । ययैव पश्यसि श्रेयस्तामाश्रित्य स्थिरो भव ॥ ॥ ३३ ॥

dve evātmani vidyete kartṛtākartṛtānagha | yayaiva paśyasi śreyastāmāśritya sthiro bhava || 33 ||

Only two things exist in the self, sinless one: doing and not doing. Whichever of the two you see as better, hold on to that and become steady.

हे निष्पाप, आत्मा में केवल दो ही बातें हैं: कर्ता होना और अकर्ता होना। इन दोनों में से जो तुम्हें भला लगे, उसी का सहारा लेकर स्थिर हो जाओ।

4.56.34

सर्वस्थोऽहमकर्तेति दृढभावनयानया । प्रवाहपतितं कार्यं कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥ ॥ ३४ ॥

sarvastho'hamakarteti dṛḍhabhāvanayānayā | pravāhapatitaṃ kāryaṃ kurvannapi na lipyate || 34 ||

With this firm conviction - 'I am present in everything, but I am not the doer' - a person is not stained, even while doing the work that comes his way in the flow of life.

इस दृढ़ भावना के साथ कि 'मैं सब में हूँ, पर कर्ता नहीं हूँ', मनुष्य जीवन की धारा में आ पड़े काम को करते हुए भी लिप्त नहीं होता।

4.56.35

याति नीरसतां जन्तुरप्रवृत्तेश्च चेतसः । यस्याहं किंचिदेवेह न करोमीति निश्चयः ॥ ॥ ३५ ॥

yāti nīrasatāṃ janturapravṛtteśca cetasaḥ | yasyāhaṃ kiṃcideveha na karomīti niścayaḥ || 35 ||

A person whose mind has gone still, who is sure that 'I do nothing at all,' becomes dry and joyless.

जिस मनुष्य का मन निष्क्रिय हो गया है, और जिसे यह विश्वास है कि 'मैं कुछ भी नहीं करता,' वह नीरस और उदास हो जाता है।

4.56.36

भोगौघकामवांस्तत्र कः करोतु जहातु वा । तस्मान्नित्यमकर्ताहमिति भावनयेद्धया ॥ ३६ ॥

bhogaughakāmavāṃstatra kaḥ karotu jahātu vā | tasmānnityamakartāhamiti bhāvanayeddhayā || 36 ||

So what does it matter if someone longs for a flood of pleasures - who is really there to seek them out or give them up? So always hold this firm belief: 'I am not the doer.'

तो चाहे किसी को सुखों की बाढ़ की चाह हो, वहाँ भला कौन उन्हें पाए या छोड़े? इसलिए सदा यह पक्का विश्वास रखो कि 'मैं कर्ता नहीं हूँ।'

4.56.37

परमामृतनाम्नी सा समतैवावशिष्यते । अथ सर्वं करोमीति महाकर्तृतया तया ॥ ३७ ॥

paramāmṛtanāmnī sā samataivāvaśiṣyate | atha sarvaṃ karomīti mahākartṛtayā tayā || 37 ||

That very equal feeling toward everything is all that remains - this is called the highest nectar of immortality. Or else, take up the great sense of doership, 'I do everything.'

यही सबके प्रति एक-सा भाव बचता है, जिसे परम अमृत कहा जाता है। अथवा, यह महान कर्तापन अपनाओ कि 'मैं सब कुछ करता हूँ।'

4.56.38

यदीच्छसि स्थितिं राम तत्तामप्युत्तमां विदुः । अहो यन्न करोमीमं समग्रं जागतं भ्रमम् ॥ ३८ ॥

yadīcchasi sthitiṃ rāma tattāmapyuttamāṃ viduḥ | aho yanna karomīmaṃ samagraṃ jāgataṃ bhramam || 38 ||

Rama, if you want a settled state of mind, know that this too is the best one: the wonder of seeing, 'I am not making this whole illusion of the world.'

हे राम, यदि तुम स्थिरता चाहते हो, तो जान लो कि यह भी सबसे श्रेष्ठ स्थिति है: यह अचंभा अनुभव करना कि 'मैं इस पूरे संसार के भ्रम को नहीं रच रहा हूँ।'

4.56.39

रागद्वेषक्रमस्तत्र कुतोऽन्यस्यात्यसंभवात् । यदन्येन शरीरं तु दग्धमन्येन लालितम् ॥ ३९ ॥

rāgadveṣakramastatra kuto'nyasyātyasaṃbhavāt | yadanyena śarīraṃ tu dagdhamanyena lālitam || 39 ||

So how could attachment and hatred ever arise there, since it is impossible for there to truly be anyone else? One person tends this body with love, another burns it.

तो वहाँ राग और द्वेष कैसे पैदा हो सकते हैं, जब वहाँ किसी और का होना ही असंभव है? इस शरीर को कोई प्रेम से पालता है, और कोई इसे जला देता है।

4.56.40

सोऽस्मदारम्भ एवातः कः खेदोल्लासयोः क्रमः । मत्सखासुखविस्तारे जगज्जालक्षयोदये ॥ ४० ॥

so'smadārambha evātaḥ kaḥ khedollāsayoḥ kramaḥ | matsakhāsukhavistāre jagajjālakṣayodaye || 40 ||

That is our own doing. So why should sorrow and joy take turns - in the spreading happiness of my companion, in the rising and passing of this web of the world?

यह तो हमारा ही किया हुआ है। तो फिर दुख और आनंद बारी-बारी से क्यों आएँ - मेरे साथी के सुख के फैलाव में, इस संसार-जाल के बनने और मिटने में?

4.56.41

अहं कर्तेति मत्वान्तः कः खेदोल्लासयोः क्रमः। खेदोल्लासविलासेषु स्वात्मकर्तृतयैतया ॥ ४१ ॥

ahaṃ karteti matvāntaḥ kaḥ khedollāsayoḥ kramḥ| khedollāsavilāseṣu svātmakartṛtayaitayā || 41 ||

When a person thinks within, 'I am the doer,' sorrow and joy begin to take turns. This same sense of being the doer of one's own self plays out through these very swings of sorrow and delight.

जब मनुष्य भीतर यह सोचता है कि 'मैं कर्ता हूँ,' तो दुख और आनंद बारी-बारी से आने लगते हैं। अपने आप को कर्ता मानने का यही भाव दुख और आनंद के इन्हीं खेलों में प्रकट होता है।

4.56.42

स्वयमेव लयं याते समतैवावशिष्यते। समता सर्वभूतेषु यासौ सत्या परा स्थितिः ॥ ४२ ॥

svayameva layaṃ yāte samataivāvaśiṣyate| samatā sarvabhūteṣu yāsau satyā parā sthitiḥ || 42 ||

When this sense of being the doer dissolves by itself, only an equal feeling toward everything remains. That equal feeling toward all beings is the true, highest state.

जब यह कर्ता होने का भाव अपने आप विलीन हो जाता है, तो केवल सबके प्रति एक-सा भाव ही शेष रहता है। सभी प्राणियों के प्रति यही एक-सा भाव ही सच्ची और सबसे ऊँची स्थिति है।

4.56.43

तस्यामवस्थितं चित्तं न भूयो जन्मभाक्मनाक्। अथवा सर्वकर्तृत्वमकर्तृत्वं च राघव ॥ ४३ ॥

tasyāmavasthitaṃ cittaṃ na bhūyo janmabhākmanāk| athavā sarvakartṛtvaṃ akartṛtvaṃ ca rāghava || 43 ||

A mind that rests in this equal feeling toward all is never again subject to birth, not even a little. Or else, Raghava, hold both total doership and total non-doership together.

जो मन इस एक-से भाव में टिक जाता है, वह फिर कभी जन्म नहीं लेता, तनिक भी नहीं। अथवा, हे राघव, संपूर्ण कर्तापन और अकर्तापन दोनों को एक साथ अपना लो।

4.56.44

सर्वं त्यक्त्वा मनःपीत्वा योऽसि सोसि स्थिरो भव। अहं सोऽहमयं नाहं करोमीदमिदं तु न ॥ ४४ ॥

sarvaṃ tyaktvā manaḥpītvā yo'si sosi sthiro bhava| ahaṃ so'hamayaṃ nāhaṃ karomīdamiṃdaṃ tu na || 44 ||

Give up everything, take the mind fully in hand, and become steady in whatever you are. 'I am that. I am this. I am not. I do this. This I do not do.'

सब कुछ छोड़कर, मन को पूरी तरह वश में करके, तुम जो हो उसी में स्थिर हो जाओ। 'मैं वह हूँ। मैं यह हूँ। मैं नहीं हूँ। यह मैं करता हूँ। यह मैं नहीं करता।'

4.56.45

इति भावानुसंधानमयी दृष्टिर्न तुष्टये। सा कालसूत्रपदवी सा महावीचिवागुरा ॥ ४५ ॥

iti bhāvānusandhānamayī dṛṣṭirna tuṣṭaye| sā kālasūtrapadavī sā mahāvīcivāgurā || 45 ||

This outlook, made up of chasing after such thoughts, does not bring contentment. It is the road to the hell of Kalasutra; it is the great net of surging waves.

ऐसे विचारों में उलझते रहने वाली यह दृष्टि संतोष नहीं देती। यही कालसूत्र नरक का रास्ता है, यही उफनती लहरों का बड़ा जाल है।

4.56.46

सासिपत्रवनश्रेणी या देहोऽहमिति स्थितिः । सा त्याज्या सर्वयत्नेन सर्वनाशेऽप्युपस्थिते ॥ ४६ ॥

sāsipatravanaśreṇī yā deho'hamiti sthitiḥ | sā tyājyā sarvayatnena sarvanāśe'pyupasthite || 46 ||

The notion 'I am the body' is a row of trees in the forest of sword-leaves. It must be given up with every effort, even if total ruin stands right in front of you.

'मैं यह शरीर हूँ' - यह सोच असिपत्रवन (तलवार जैसी पत्तियों वाले नरक के जंगल) की एक पंक्ति है। चाहे सामने सर्वनाश ही क्यों न खड़ा हो, इसे पूरी शक्ति से छोड़ देना चाहिए।

4.56.47

स्प्रष्टव्या सा न भव्येन सश्वमांसेव पुष्कसी । तया सुदूरोज्झितया दृष्टौ पटललेखया ॥ ४७ ॥

spraṣṭavyā sā na bhavyena saśvamāṃseva puṣkasī | tayā sudūrojjhitayā dṛṣṭau paṭalalekhayā || 47 ||

That notion should not be touched by a good person, just as one shuns an outcaste woman carrying dog's meat. It must be thrown far away, like a film of cataract over one's sight.

जैसे कोई भला व्यक्ति कुत्ते का मांस लिए हुए नीच जाति की स्त्री को नहीं छूता, वैसे ही इस सोच को नहीं छूना चाहिए। इसे आँख पर पड़े मोतियाबिंद के परदे की तरह दूर फेंक देना चाहिए।

4.56.48

उदेति परमा दृष्टिर्ज्योत्स्नेव विगताम्बुदा । ययाभ्युदितया राम तीर्यते भवसागरः ॥ ४८ ॥

udeti paramā dṛṣṭirjyotsneva vigatāmbudā | yayābhyuditayā rāma tīryate bhavasāgaraḥ || 48 ||

Then the highest vision rises, like moonlight once the clouds have cleared away. Once it has risen, Rama, one crosses the ocean of worldly existence.

तब बादल छँटने पर चाँदनी की तरह परम दृष्टि उदय होती है। हे राम, इसके उदय होने पर ही भवसागर पार होता है।

4.56.49

कर्ता नास्मि न चाहमस्मि स इति ज्ञात्वैवमन्तः स्फुटं । कर्ता चास्मि समग्रमस्मि तदिति ज्ञात्वाथवा निश्चयं । कोप्येवास्मि नकिंचिदेवमिति वा निर्णीय सर्वोत्तमे । तिष्ठ त्वं स्वपदे स्थिताःपदविदो यत्रोत्तमाः साधवः ॥ ४९ ॥

kartā nāsmi na cāhamasmi sa iti jñātvainamantaḥ sphuṭaṃ | kartā cāsmi samagramasmi taditi jñātvāthavā niścayaṃ | kopyevāsmi nakiṃcidevamiti vā nirṇīya sarvottame | tiṣṭha tvaṃ svapade sthitāḥpadavido yatrottamāḥ sādhavaḥ || 49 ||

Whether you decide, clearly and for certain within yourself, 'I am not the doer, I am not even that self,' or you decide, 'I am the doer, I am everything,' or you settle on 'I am someone,' or 'I am nothing at all' - in the highest of all these, stand firm in your own true place, the place where the best knowers of the path, the good and wise, themselves stand.

चाहे तुम अपने भीतर स्पष्ट रूप से यह तय करो कि 'मैं कर्ता नहीं हूँ, मैं वह भी नहीं हूँ,' या यह तय करो कि 'मैं कर्ता हूँ, मैं ही सब कुछ हूँ,' या यह तय करो कि 'मैं कोई हूँ' या 'मैं कुछ भी नहीं हूँ' - इन सबमें सबसे श्रेष्ठ यही है: तुम अपने सच्चे स्थान पर टिके रहो, जहाँ मार्ग के सबसे बड़े जानकार, वे भले और साधु पुरुष, स्वयं टिके रहते हैं।

Chapter 57

4.57.1

श्रीराम उवाच । सत्यमेतत्त्वया ब्रह्मन्यदुक्तं सूक्तिसुन्दरम् । अकर्तैव हि कर्तात्मा भोक्ताभोक्तैव भूतकृत् ॥ १ ॥

śrīrāma uvāca | satyametattvayā brahmannyaduktam sūktisundaram | akartaiva hi kartātmā bhoktābhoktaiva bhūtakṛt || 1 ||

Rama said, Brahmin, what you have told me is true, and it is beautiful in its words. The self that acts is truly a non-actor. The maker of beings enjoys, yet truly does not enjoy.

राम ने कहा, हे ब्राह्मण, आपने जो कहा वह सच है, और वह सुंदर शब्दों में कहा गया है। जो आत्मा कर्ता है, वह असल में अकर्ता है। प्राणियों को बनाने वाला भोगता तो है, पर असल में भोगता नहीं है।

4.57.2

सर्वेश्वरः सर्वगश्च चिन्मात्रममलं पदम् । स्थानं भुवि वपुर्देवः सर्वभूतान्तरस्थितः ॥ २ ॥

sarveśvaraḥ sarvagaśca cinmātramamalaṃ padam | sthānaṃ bhuvi vapurdevaḥ sarvabhūtāntarasthitaḥ || 2 ||

He is the lord of all and reaches everywhere. He is the pure state of consciousness alone. This god is the ground and the body here on earth, and he stands inside every being.

वह सबका स्वामी है और हर जगह मौजूद है। वह शुद्ध चेतना मात्र की निर्मल अवस्था है। यह देव पृथ्वी पर स्थान भी है और शरीर भी, और वह हर प्राणी के भीतर बसा हुआ है।

4.57.3

हृदयंगमतां प्राप्तमिदानीं ब्रह्म मे विभो । त्वदुक्तिभिर्यथाम्भोदधाराभिर्भूभृदव्यथः ॥ ३ ॥

hadayaṃgamatāṃ prāptamidānīṃ brahma me vibho | tvaduktibhiryathāmbhodadhārābhirbhūbhṛdavyathaḥ || 3 ||

Mighty one, because of your words the truth of brahman has now reached my heart, the way a mountain stays unshaken under streams of rain from the clouds.

हे विभो, आपके वचनों से ब्रह्म का यह ज्ञान अब मेरे हृदय तक पहुँच गया है, जैसे पर्वत बादलों की जलधाराओं से भी अविचलित रहता है।

4.57.4

औदासीन्यादनिच्छत्वान्न भुङ्क्ते न करोति च । समग्रालोककारित्वाद्भुंक्ते देवः करोति च ॥ ४ ॥

audāsīnyādanicchatvānna bhuṅkte na karoti ca | samagrālokakāritvādbhuṅkte devaḥ karoti ca || 4 ||

Out of indifference and freedom from wanting, he neither enjoys nor acts. Yet because he lights up everything and makes all things seen, this god enjoys and acts.

अपनी उदासीनता और इच्छा-रहितता के कारण वह न भोगता है, न कुछ करता है। फिर भी सब कुछ प्रकाशित करने और दिखाने के कारण यह देव भोगता भी है और करता भी है।

4.57.5

किंत्वयं भगवन्स्फारः संशयो मे हृदि स्थितः । तं त्वं छिन्धि गिरा ब्रह्मन्दीधित्येन्दुर्यथा तमः ॥ ५ ॥

kiṃtvayaṃ bhagavansphāraḥ saṃśayo me hṛdi sthitaḥ | taṃ tvaṃ chindhi girā brahmandīdhityenduryathā tamaḥ || 5 ||

But, lord, a great doubt still sits in my heart. Cut it away with your words, Brahmin, the way the moon's light cuts through darkness.

परंतु हे भगवन्, एक बड़ा संशय अब भी मेरे हृदय में बैठा है। हे ब्राह्मण, अपने वचनों से उसे काट दीजिए, जैसे चाँद अपनी किरणों से अंधकार को काट देता है।

4.57.6

इदं सत्तदिदं वाऽसदयं सोऽहमिदं नतु । अयमेको द्वितीयोऽयमित्यादिकलनामयम् ॥ ६ ॥

idaṃ sattadidaṃ vā'sadayaṃ so'hamidaṃ natu | ayameko dvitīyo'yamityādikalanāmayaṃ || 6 ||

It is made of thoughts like, this is real, or this is unreal, this is he, I am this and not that, this is one, this is a second, and so on.

यह इन्हीं विचारों से बना है, यह सत् है, या यह असत् है, यह वह है, मैं यह हूँ वह नहीं, यह एक है, यह दूसरा है, इत्यादि।

4.57.7

एकस्मिन्विद्यतेऽध्वान्ते नीहार इव भास्करे । इदं प्रथममेवाच्छे कथमात्मनि संस्थितम् ॥ ७ ॥

ekasminvidyate'dhvānte nīhāra iva bhāskare | idaṃ prathamamevācchhe kathamātmani saṃsthitam || 7 ||

How can this, clear as it seems from the very start, stand fixed in the one true, pure self, the way fog appears in front of the sun.

यह किस तरह पहले से ही स्पष्ट होकर उस एक, शुद्ध आत्मा में स्थिर हो गया है, जैसे सूर्य के सामने कोहरा दिखाई देता है।

4.57.8

श्रीवसिष्ठ उवाच । सिद्धान्तकाल एवास्य संप्रश्नस्योत्तरं स्थिरम् । कथयिष्यामि ते राम येन ज्ञास्यसि तत्त्वतः ॥ ८ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | siddhāntakāla evāsya saṃpraśnasyottaraṃ sthiram | kathayiṣyāmi te rāma yena jñāsyasi tattvataḥ || 8 ||

Vasishtha said, Rama, I will give you the lasting answer to this question only when the time for final teaching comes, so that you will know it as it truly is.

वसिष्ठ ने कहा, हे राम, इस प्रश्न का स्थिर उत्तर मैं तुम्हें सिद्धांत कहने के समय ही बताऊँगा, जिससे तुम इसे असली रूप में जान सको।

4.57.9

मोक्षोपायस्य सिद्धान्तमसंप्राप्य न राघव । श्रोतुं प्रश्नोत्तराण्येतान्यलं योग्यो भविष्यसि ॥ ९ ॥

mokṣopāyasya siddhāntamasamprāpya na rāghava | śrotuṃ praśnottarāṇyetānyalaṃ yogyo bhaviṣyasi || 9 ||

Raghava, until you have reached the final teaching about the way to freedom, you will not be ready enough to hear these questions and answers.

हे राघव, जब तक तुम मोक्ष के उपाय के सिद्धांत तक नहीं पहुँच जाते, तब तक तुम इन प्रश्नों और उत्तरों को सुनने के योग्य नहीं बन पाओगे।

4.57.10

कान्तागीतगिरां राम तरुणो भाजनं यथा । प्रश्नानामुत्तमोक्तीनां पुण्यकृद्भाजनं तथा ॥ १० ॥

kāntāgītagirāṃ rāma taruṇo bhājanaṃ yathā | praśnānāmuttamoktīnāṃ puṇyakṛdbhājanaṃ tathā || 10 ||

Rama, just as a young man is the right listener for songs of love sung by a woman he adores, so a person of pure deeds is the right listener for the best answers to these questions.

हे राम, जैसे एक युवक ही प्रिय स्त्री के गाए गीतों को सुनने का सुपात्र होता है, वैसे ही पुण्यकर्मा व्यक्ति ही इन प्रश्नों के श्रेष्ठ उत्तरों को सुनने का सुपात्र होता है।

4.57.11

वृथा भवति बालेषु यथा रागमयी कथा । निरर्थकाल्पबोधेषु तथोदारोदया कथा ॥ ११ ॥

vṛthā bhavati bāleṣu yathā rāgamayī kathā | nirarthakālpabodheṣu tathodārodayā kathā || 11 ||

Just as a love story is wasted on little children, so a noble, uplifting teaching is wasted on those of small, empty understanding.

जैसे प्रेम-कथा छोटे बच्चों पर व्यर्थ जाती है, वैसे ही उदार और उन्नत उपदेश उन लोगों पर व्यर्थ जाता है जिनकी समझ छोटी और खोखली है।

4.57.12

कस्मिंश्चिदेव समये किंचित्पुंसो विराजते । फलमाभाति वृक्षस्य शरद्येव न माधवे ॥ १२ ॥

kasmiṃścideva samaye kiṃcitpuṃso virājate | phalamābhāti vṛkṣasya śaradyeva na mādhave || 12 ||

Only at the right time does something become clear to a person, just as a tree's fruit appears in autumn, not in spring.

मनुष्य के लिए कोई भी बात केवल उचित समय पर ही स्पष्ट होती है, जैसे पेड़ का फल शरद ऋतु में ही दिखता है, वसंत में नहीं।

4.57.13

उपदेशगिरो वृद्धे रञ्जना निर्मले पटे । लगन्त्युदारविज्ञानकथा चाधिगतात्मनि ॥ १३ ॥

upadeśagiro vṛddhe rañjanā nirmale paṭe | lagantyudāravijñānakathā cādhigatātmani || 13 ||

Teaching words take hold in a mature person the way dye takes to clean cloth, and this great teaching of true knowledge takes hold in one who has already grasped the self.

उपदेश के वचन प्रौढ़ व्यक्ति पर वैसे ही असर करते हैं जैसे रंग साफ कपड़े पर चढ़ जाता है, और यह महान ज्ञान की बात उसी में ठहरती है जिसने पहले से आत्मा को जान लिया है।

4.57.14

प्रश्नस्यास्योत्तरं पूर्वं लेशतः कथितं मया । न विस्तरेण तेनैतन्न ज्ञातं भवता स्फुटम् ॥ १४ ॥

praśnasyāsyottaraṃ pūrvaṃ leśataḥ kathitaṃ mayā | na vistareṇa tenaitannajñātaṃ bhavatā sphuṭam || 14 ||

I already gave you the answer to this question once before, but only in brief, not in full, and that is why you have not understood it clearly.

इस प्रश्न का उत्तर मैं तुम्हें पहले भी दे चुका हूँ, पर केवल संक्षेप में, विस्तार से नहीं, इसीलिए तुम इसे साफ तौर पर समझ नहीं पाए।

4.57.16

मया सिद्धान्तकाले तु प्राप्तबोधे त्वयि स्थिते । वक्तव्यो विस्तरेणैव साधो प्रश्नोत्तरक्रमः ॥ १६ ॥

mayā siddhāntakāle tu prāptabodhe tvayi sthite | vaktavyo vistareṇaiva sādho praśnottarakramaḥ || 16 ||

But, good man, once you have reached real understanding and the time for final teaching comes, I will lay out the whole sequence of questions and answers in full.

परंतु हे साधो, जब तुम सच्चा बोध पा लोगे और सिद्धांत कहने का समय आएगा, तब मैं इन प्रश्नों और उत्तरों का पूरा क्रम विस्तार से बताऊँगा।

4.57.17

जानात्यात्मानमात्मैव कृत आत्मात्मनैव हि । आत्मैव संप्रसन्नः सन्नात्मानं प्रतिपद्यते ॥ १७ ॥

jānātyātmānamātmaiva kṛta ātmātmanaiva hi | ātmaiva saṃprasannaḥ sannātmānaṃ pratipadyate || 17 ||

The self alone knows the self. The self alone shapes the self. And the self, once it becomes clear and calm, reaches the self.

आत्मा ही आत्मा को जानती है। आत्मा ही आत्मा को बनाती है। और आत्मा ही, जब वह निर्मल और शांत हो जाती है, आत्मा को पा लेती है।

4.57.18

तदेतत्कथितं राम कर्त्रकर्तृविचारणम् । अज्ञातत्वात्तु तामेतामक्षीणवासनो भवेत् ॥ १८ ॥

tadetatkathitaṃ rāma kartṛkartṛvicāraṇam | ajñātatvāttu tāmetāmakṣīṇavāsano bhavet || 18 ||

Rama, this is what I have explained, the inquiry into the doer and the non-doer. But without knowing this, a person's old habits and desires stay alive, undiminished.

हे राम, यही है वह बात जो मैंने बताई, कर्ता और अकर्ता का विवेचन। पर जो इसे नहीं जानता, उसकी पुरानी वासनाएँ कम नहीं होतीं, बनी रहती हैं।

4.57.19

बद्धो हि वासनाबद्धो मोक्षः स्याद्वासनाक्षयः । वासनास्त्वं परित्यज्य मोक्षार्थित्वमपि त्यज ॥ १९ ॥

baddho hi vāsanābaddho mokṣaḥ syādvāsanākṣayaḥ | vāsanāstvaṃ parityajya mokṣārthitvamapi tyaj || 19 ||

To be bound is simply to be bound by desires and habits. Freedom is nothing but the ending of those desires. So give up your desires, and give up even your wish for freedom.

बंधन का मतलब ही है वासनाओं से बंधे होना। मोक्ष का मतलब है इन वासनाओं का पूरी तरह खत्म हो जाना। इसलिए वासनाओं को छोड़ दो, और मोक्ष पाने की इच्छा को भी छोड़ दो।

4.57.20

तामसीर्वासनाः पूर्वं त्यक्त्वा विषयवासिताः । मैत्र्यादिभावनानाम्नीं गृहाणामलवासनाम् ॥ २० ॥

tāmasīrvāsanāḥ pūrvaṃ tyaktvā viṣayavāsitāḥ | maitryādibhāvanānāmnīṃ gṛhāṇāmalavāsanām || 20 ||

First give up the dark desires that cling to worldly things. Then take up the pure state of mind called cultivating friendliness and the rest.

पहले उन तामसिक वासनाओं को छोड़ दो जो सांसारिक विषयों से चिपकी हैं। फिर मैत्री आदि भावनाओं वाली उस निर्मल वासना को अपनाओ।

4.57.21

तामप्यन्तः परित्यज्य ताभिर्व्यवहरन्नपि । अन्तःशान्तसमस्तेहो भव चिन्मात्रवासनः ॥ २१ ॥

tāmapyantaḥ parityajya tābhirvyavaharannapi | antaḥśāntasamasteho bhava cinmātravāsanaḥ || 21 ||

Then let go of even that pure state inwardly, though you may still act with kindness and the rest outwardly. With all your inner striving now stilled, become someone whose only desire is pure awareness itself.

फिर भीतर से उस निर्मल भावना को भी छोड़ दो, भले ही बाहर से मैत्री आदि का व्यवहार करते रहो। भीतर की सारी हलचल शांत करके, ऐसे बन जाओ जिसकी एकमात्र चाह शुद्ध चेतना ही हो।

4.57.22

तामप्यथ परित्यज्य मनोबुद्धिसमन्विताम्। शेषे स्थिरसमाधानो येन त्यजसि तत्त्यज ॥ २२ ॥

tāmapyatha parityajya manobuddhisamanvitām | śeṣe sthirasamādhāno yena tyajasi tattyaja || 22 ||

Next, give up even that desire joined with mind and intellect. Settle into steady, unmoving concentration, and give up even the very act of giving up.

फिर मन और बुद्धि से जुड़ी उस चाह को भी छोड़ दो। स्थिर और अडिग समाधि में टिक जाओ, और जिस त्याग के ज़रिए तुम त्याग करते हो, उस त्याग को भी छोड़ दो।

4.57.23

चिन्मयः कलनाकालप्रकाशतिमिरादिकम्। वासनां वासितारं च प्राणस्पन्दनपूर्वकम्॥ २३ ॥

cinmayaḥ kalanākālaprakāśatimirādikam | vāsanāṃ vāsitāraṃ ca prāṇaspandanapūrvakam || 23 ||

You, whose nature is pure consciousness, give up the ideas of time, of light and darkness, and the rest. Give up desire and the one who desires, together with the very stirring of the breath.

हे शुद्ध चेतना-स्वरूप, समय की, प्रकाश और अंधकार की धारणाओं को छोड़ दो। वासना को और वासना करने वाले को भी छोड़ दो, साथ ही प्राणों की स्पंदन-क्रिया को भी।

4.57.24

समूलमपि संत्यक्त्वा व्योमसौम्यप्रशान्तधीः। यस्त्वं भवसि सद्बुद्धे स भवानस्तु सत्कृतः ॥ २४ ॥

samūlamapi santyaktvā vyomasomyapraśāntadhīḥ | yastvaṃ bhavasi sadbuddhe sa bhavānastu satkṛtaḥ || 24 ||

Give up all this, down to the very root, and let your mind grow as calm and gentle as the sky. Whatever you then become, truly wise one, let that be your real, accomplished self.

यह सब कुछ जड़ से छोड़ दो, और अपने मन को आकाश जैसा शांत और कोमल हो जाने दो। इसके बाद तुम जो कुछ भी बनो, हे सच्चे ज्ञानी, वही तुम्हारा सच्चा और सिद्ध स्वरूप होगा।

4.57.25

हृदयात्संपरित्यज्य सर्वमेव महामतिः। यस्तिष्ठति गतव्यग्रः स मुक्तः परमेश्वरः ॥ २५ ॥

hṛdayātsaṃparityajya sarvameva mahāmatiḥ | yastiṣṭhati gatavyagraḥ sa muktaparameśvaraḥ || 25 ||

The person of great mind who casts out everything from the heart, and remains free of all restlessness, that one is liberated, the supreme lord.

वह महामति व्यक्ति जो हृदय से सब कुछ त्याग देता है और सारी बेचैनी से मुक्त होकर स्थिर रहता है, वही मुक्त है, वही परमेश्वर है।

4.57.26

समाधिमथ कर्माणि मा करोतु करोतु वा। हृदयेनास्तसर्वास्थो मुक्त एवोत्तमाशयः ॥ २६ ॥

samādhimatha karmāṇi mā karotu karotu vā | hṛdayenāstasarvāstho mukt evottamāśayaḥ || 26 ||

Whether such a person practices meditation or does deeds, or does not, it makes no difference. One whose heart has dropped every attachment to all of this is truly free, a person of the highest mind.

फिर चाहे वह समाधि लगाए या कर्म करे, या न करे, इससे फर्क नहीं पड़ता। जिसका हृदय हर चीज़ के प्रति लगाव छोड़ चुका है, वही सच में मुक्त है, वही सबसे ऊँचे मन वाला है।

4.57.27

नैष्कर्म्येण न तस्यार्थो न तस्यार्थोऽस्ति कर्मभिः । न समाधानजप्याभ्यां यस्य निर्वासनं मनः ॥ २७ ॥

naiṣkarmyeṇa na tasyārtho na tasyārtho'sti karmabhiḥ | na samādhānajapyābhyāṃ yasya nirvāsanaṃ manaḥ || 27 ||

For someone whose mind is free of all craving, there is no need to avoid action, and no need to do it either. There is no need for fixed concentration or for chanting prayers.

जिस व्यक्ति का मन हर वासना से मुक्त हो चुका है, उसे न तो कर्म न करने की ज़रूरत है, न कर्म करने की। उसे न स्थिर समाधि की ज़रूरत है, न जप-पाठ की।

4.57.28

विचारितमलं शास्त्रं चिरमुद्ग्राहितं मिथः । संत्यक्तवासनान्मौनादृते नास्त्युत्तमं पदम् ॥ २८ ॥

vicāritamalaṃ śāstraṃ ciramudgrāhitaṃ mithaḥ | santyaktavāsanānmounādṛte nāstyuttamaṃ padam || 28 ||

However much the scriptures are studied deeply and taught to one another for a long time, there is no highest state except through the silence that comes from giving up all desire.

शास्त्रों को चाहे कितना भी गहराई से समझा जाए और एक-दूसरे को लंबे समय तक पढ़ाया जाए, फिर भी सबसे ऊँची अवस्था तक नहीं पहुँचा जा सकता, सिवाय उस मौन के जो सारी वासनाओं के त्याग से आता है।

4.57.29

दृष्टं द्रष्टव्यमखिलं भ्रान्त्वा भ्रान्त्वा दिशो दश । जनाः कतिपया एव यथावस्त्ववलोकिनः ॥ २९ ॥

dṛṣṭaṃ draṣṭavyamakhilaṃ bhrāntvā bhrāntvā diśo daśa | janāḥ katipayā eva yathāvastvavalokinaḥ || 29 ||

People wander again and again through all ten directions and see everything there is to see, yet only a few of them ever see things as they truly are.

लोग बार-बार दसों दिशाओं में भटकते हैं और जो कुछ देखने लायक है सब देख लेते हैं, फिर भी बहुत कम लोग ही चीज़ों को वैसा देख पाते हैं जैसी वे असल में हैं।

4.57.30

यद्यदालोक्यते किंचित्कश्चिद्यत्तन्न विद्यते । ईप्सितानीप्सितादन्यन्न तत्र यतते जनः ॥ ३० ॥

yadyadālokyate kiṃcittyatkashcidyatnna vidyate | īpsitānīpsitādanyannna tatra yatate janaḥ || 30 ||

Whatever a person sees as some real thing, that thing does not actually exist. Except for chasing what they want and avoiding what they do not want, people make no other effort.

इंसान को जो कुछ भी कोई चीज़ दिखती है, वह असल में होती ही नहीं। लोग बस अपनी पसंद की चीज़ पाने और नापसंद चीज़ से बचने के अलावा और कोई कोशिश नहीं करते।

4.57.31

ये केचन समारम्भा ये जनस्य क्रियाक्रमाः । ते सर्वे देहमात्रार्थमात्मार्थं नतु किंचन ॥ ३१ ॥

ye kecana samārambhā ye janasya kriyākramaḥ | te sarve dehamātrārthamātmārtham natu kiṃcana || 31 ||

Whatever a person begins, whatever actions a person carries out, all of it is only for the body's sake, not even a little for the sake of the true self.

इंसान जो भी काम शुरू करता है, जो भी कर्म करता है, वह सब सिर्फ़ शरीर के लिए होता है, आत्मा के लिए बिल्कुल नहीं।

4.57.32

पाताले ब्रह्मलोके च स्वर्गे च वसुधातले। व्योम्नि कतिपया एव दृश्यन्ते दृष्टदृष्टयः ॥ ३२ ॥

pātāle brahmaloke ca svarge ca vasudhātale | vyomni katipayā eva dṛśyante dṛṣṭadṛṣṭayaḥ || 32 ||

In the underworld, in the world of Brahma, in heaven, on the earth, and in the sky, only a few are seen whose sight has truly seen reality.

पाताल में, ब्रह्मलोक में, स्वर्ग में, धरती पर और आकाश में, हर जगह ऐसे बहुत कम लोग दिखते हैं जिन्होंने सच में सच को देखा हो।

4.57.33

इदं हेयमुपादेयमिदमित्यसदुत्थितौ। निश्चयौ गलितौ यस्य ज्ञस्यासावतिदुर्लभः ॥ ३३ ॥

idaṃ heyaṃmupādeyamidaṃityasadutthitau | niścayau galitau yasya jñasyāsāvatidurlabhaḥ || 33 ||

The knower in whom both these false ideas have dropped away, that this should be rejected and this should be taken, is very rare to find.

जिस ज्ञानी के मन से ये दोनों झूठी धारणाएँ मिट चुकी हैं कि यह छोड़ने लायक है और यह लेने लायक है, ऐसा ज्ञानी मिलना बहुत मुश्किल है।

4.57.34

करोतु भुवने राज्यं विशत्वम्भोदमम्बु वा। नात्मलाभादृते जन्तुर्विश्रान्तिमधिगच्छति ॥ ३४ ॥

karotu bhuvane rājyaṃ viśatvambhodamambu vā | nātmalābhādṛte janturviśrāntimadhigacchati || 34 ||

Whether someone rules a kingdom in the world, or enters into a cloud as water, without gaining the true self, no creature finds rest.

चाहे कोई दुनिया में राज करे, या बादल के पानी में जा मिले, जब तक आत्मा को नहीं पाता, तब तक किसी भी जीव को चैन नहीं मिलता।

4.57.35

ये महामतयः सन्तः शूराश्चेन्द्रियशत्रुषु। जन्मज्वरविनाशाय त उपास्या महाधियः ॥ ३५ ॥

ye mahāmatayaḥ santaḥ śūrāścendriyaśatruṣu | janmajvaravināśāya ta upāsyā mahādhiyaḥ || 35 ||

Great and good people who are brave against the enemy that is the senses, those great minds should be honoured, because they destroy the fever of birth.

जो महान और भले लोग इंद्रियों रूपी शत्रुओं के सामने बहादुर हैं, उन महान बुद्धिमानों की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि वे जन्म के बुखार को मिटा देते हैं।

4.57.36

सर्वत्र पञ्चभूतानि षष्ठं किंचिन्न विद्यते। पाताले भूतले स्वर्गे रतिमेतु क्व धीरधीः ॥ ३६ ॥

sarvatra pañcabhūtāni ṣaṣṭhaṃ kiṃcinna vidyate | pātāle bhūtale svarge ratimetu kva dhīradhīḥ || 36 ||

Everywhere there are only the five elements, there is no sixth thing anywhere. So in the underworld, on earth, or in heaven, where can a calm, wise mind find any delight?

हर जगह बस पाँच तत्व ही हैं, इनके अलावा कोई छठी चीज़ है ही नहीं। तो पाताल में, धरती पर या स्वर्ग में, शांत बुद्धि वाला व्यक्ति आखिर कहाँ आनंद पाए?

4.57.37

युक्त्या वै चरतो ज्ञस्य संसारो गोष्पदाकृतिः। दूरसंत्यक्तयुक्तेस्तु महामत्तार्णवोपमः ॥ ३७ ॥

yuktyā vai carato jñasya saṃsāro goṣpadākṛtiḥ| dūrasaṃtyaktyayuktes tu mahāmattārṇavopamaḥ || 37 ||

To the knower who lives by right understanding, this world is no bigger than a puddle in a cow's hoof print. But to one who has thrown that right understanding far away, this same world looks like a vast, wild ocean.

जो ज्ञानी सही समझ के साथ जीता है, उसके लिए यह संसार गाय के खुर के निशान जितने छोटे गड्ढे के बराबर है। पर जिसने सही समझ को दूर फेंक दिया है, उसके लिए यही संसार एक विशाल, उफनते समुद्र जैसा है।

4.57.38

कदम्बगोलकैस्तुल्यं ब्रह्माण्डं स्फारचेतसः। किं प्रयच्छति किं भुंक्ते प्राप्तेऽस्मिन्सकलेपि सः ॥ ३८ ॥

kadambagolakais tulyaṃ brahmāṇḍaṃ sphāracetasaḥ| kiṃ prayacchati kiṃ bhuṅkte prāpte'smin sakalepi saḥ || 38 ||

To one whose mind has grown vast, the whole universe is no bigger than a little ball of kadamba flowers. Even if he gained this whole universe, what would he give away, what would he enjoy?

जिसका मन बहुत विशाल हो गया है, उसके लिए यह पूरा ब्रह्मांड कदंब के फूल की एक छोटी सी गोल गेंद जितना ही है। पूरा ब्रह्मांड पाकर भी वह क्या देगा, क्या भोगेगा?

4.57.39

एतदर्थमबुद्धीनां यन्महासमरक्रियाः। तन्मन्ये राम धिक्कार्यं द्वन्द्वलक्षक्षयावहम् ॥ ३९ ॥

etadarthamabuddhīnāṃ yanmahāsamarkriyāḥ| tanmanye rāma dhikkāryaṃ dvandvalakṣakṣayāvaham || 39 ||

For the sake of this tiny thing, fools wage their great wars. I think, Rama, that such action deserves only shame, since it destroys hundreds of thousands of people in mutual conflict.

इतनी छोटी सी चीज़ के लिए मूर्ख लोग बड़े-बड़े युद्ध करते हैं। हे राम, मुझे लगता है कि यह काम शर्म की बात है, यह आपस की लड़ाई में लाखों लोगों का नाश कर देता है।

4.57.40

कल्पमात्रेण कालेन सुमहापेलवोदरे। तस्मिन्नपि हि यो नाशः सर्वाधिरमहाधियाम् ॥ ४० ॥

kalpamātreṇa kālena sumahāpelavodare| tasminnapi hi yo nāśaḥ sarvādhiramahādhiyām || 40 ||

Within just one age of time, this whole universe, vast yet so delicate at its core, is itself destroyed. This very fact is the deepest grief for great minds.

बस एक कल्प जितने समय में यह विशाल पर कोमल ब्रह्मांड खुद ही नष्ट हो जाता है। यही बात बुद्धिमानों के लिए सबसे बड़ा दुख है।

4.57.41

आत्मनो ज्ञस्य सर्गादेर्यन्मनागपि नोद्गतम्। तस्मिञ्जगत्त्रये प्राप्ते किं चिदात्मा बली भवेत् ॥ ४१ ॥

ātmano jñasya sargāder yanmanāgapi nodgatam| tasmiñjagattraye prāpte kiṃ cidātmā balī bhavet || 41 ||

Since the very beginning of creation, the true self of the knower has not grown even a little. So even if he gained all three worlds, how would his conscious self become any greater?

सृष्टि की शुरुआत से लेकर आज तक ज्ञानी की आत्मा में ज़रा भी बढ़ोतरी नहीं हुई। तो तीनों लोक पा लेने से भी उसकी चेतन आत्मा कैसे और बड़ी हो जाएगी?

4.57.42

इतः शैलशतैर्व्याप्ता तथेतो जलराशिभिः। कियानस्य भुवो देहो येनोदारं प्रपूरयेत्॥ ४२॥

itaḥ śailaśatairvyāptā tathetaḥ jalarāśibhiḥ| kiyānasya bhuvo deho yenodāraṃ prapūrayet || 42 ||

This earth is covered with hundreds of mountains on one side, and with oceans of water on the other. Yet how big, really, is this earth's body, that winning it could satisfy a great soul?

यह धरती एक तरफ़ सैकड़ों पहाड़ों से ढकी है और दूसरी तरफ़ समुद्रों के पानी से। पर आखिर धरती का यह शरीर है ही कितना बड़ा, कि इसे पाकर किसी महान आत्मा को संतोष मिल जाए?

4.57.43

न तदस्ति जगत्यस्मिन्सपातालसुरालये। यन्नामात्मवतो ज्ञस्य किंचित्कार्यतरं भवेत्॥ ४३॥

na tadasti jagatyasmin sapātālasurālaye| yannāmātmavato jñasya kiñcitkāryataraṃ bhavet || 43 ||

In this whole world, including the underworld and the home of the gods, there is nothing that could ever be real work for the knower who has found the true self.

इस पूरे संसार में, पाताल और देवताओं के लोक समेत, ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो आत्मा को पा चुके ज्ञानी के लिए सच में कोई ज़रूरी काम हो।

4.57.44

एकतामनुयातस्य व्योमवद्वितस्य च। स्वस्थस्यात्मवतो ज्ञस्य स्थितस्यात्मन्यचेतसः॥ ४४॥

ekatāmanuyātasya vyomavadvitatasya ca| svasthasyātmavato jñasya sthitasyātmanyacetasaḥ || 44 ||

The knower has reached perfect oneness, he has spread out like the sky. He rests in his own true nature, he has found the self, and he stays fixed in the self, beyond all thought.

ज्ञानी पूर्ण एकता को प्राप्त हो चुका है, वह आकाश की तरह फैला हुआ है। वह अपने आप में टिका है, उसने आत्मा को पा लिया है, और वह आत्मा में स्थिर है, विचारों से परे है।

4.57.45

शरीरजालनीहारधूसरा शून्यकोटरा। शान्तसंसारसुभगा त्रिलोकीविपुलातटी॥ ४५॥

śarīrajālanīhāradhūsarā śūnyakoṭarā| śāntasaṃsārasubhagā trilokīvipulātaṭī || 45 ||

To him, the three worlds are like one huge slope, gray with the mist of countless bodies, full of empty hollows, yet made beautiful by a world now at peace.

उसके लिए तीनों लोक मानो एक विशाल ढलान हैं, अनगिनत शरीरों की धुंध से धुँधले, खाली गुफाओं से भरे, फिर भी एक शांत हो चुके संसार से सुंदर बने हुए।

4.57.46

स्फारब्रह्मामलाम्भोधिफेनाः सर्वे कुलाचलाः। चिदादित्यमहाभासमृगतृष्णाजलश्रियः॥ ४६॥

sphārabrahmāmalāmbhodhiphenāḥ sarve kulācalāḥ| cidādityamahābhāsamṛgatṛṣṇājalśriyaḥ || 46 ||

All the great mountain ranges are just foam on the vast, pure ocean of Brahman. Under the great light of the sun of consciousness, everything shines like the water of a mirage.

सारे बड़े-बड़े पर्वत ब्रह्म के विशाल, निर्मल समुद्र पर बस झाग हैं। चेतना रूपी सूरज की बड़ी रोशनी में, सब कुछ मृगतृष्णा के पानी जैसा चमकता है।

4.57.47

आत्मतत्त्वमहाम्भोधिवीचयः सर्गराजयः । अनुत्तमपदाम्भोदवृष्टयः शास्त्रदृष्टयः ॥ ४७ ॥

ātmatattvamahāmbhodhivīcayaḥ sargarājayaḥ | anuttamapadāmbhodavṛṣṭayaḥ śāstradṛṣṭayaḥ || 47 ||

All the rows of creation are only waves on the great ocean of the self's true nature. All the teachings of the scriptures are only rain falling from the cloud of that highest state.

सृष्टि की सारी पंक्तियाँ आत्मा के सच्चे स्वरूप रूपी विशाल समुद्र पर बस लहरें हैं। शास्त्रों की सारी शिक्षाएँ उस परम पद रूपी बादल से बरसी बूँदें हैं।

4.57.48

चन्द्राग्नितपनालोका घटकाष्ठादिसन्निभाः । प्रकाशनीयाश्चिद्रूपत्विषो मलकणास्तथा ॥ ४८ ॥

candrāgnitapanālokā ghaṭakāṣṭhādisannibhāḥ | prakāśanīyāścidrūpatviṣo malakaṇāstathā || 48 ||

The light of the moon, of fire, and of the sun are no different from ordinary things like a pot or a piece of wood. And everything they light up is, next to the light of pure consciousness, no more than a speck of dust.

चाँद, आग और सूरज की रोशनी भी घड़े या लकड़ी जैसी साधारण चीज़ों से अलग नहीं। और वे जिन चीज़ों को रोशन करते हैं, वे सब चेतना की रोशनी के सामने धूल के एक कण के बराबर ही हैं।

4.57.49

विहरन्ति स्वमात्मानः संसारवनचारिणः । कामभोगोलपग्रासमृगा नरसुरासुराः ॥ ४९ ॥

viharanti svamātmānaḥ saṃsāravana-cāriṇaḥ | kāmabhogolapagrāsamṛgā narasurāsurāḥ || 49 ||

Men, gods, and demons wander about like deer roaming the forest of this world, grazing on the fodder of desire and pleasure.

मनुष्य, देवता और असुर इस संसार रूपी जंगल में घूमते हिरणों की तरह भटकते हैं, कामना और भोग के चारे को चरते हुए।

4.57.50

अस्थिखण्डार्गलामूर्धपिधानाः स्नायुश्रृंखलाः । जगद्देहा जरज्जीवरक्तमांससमुवद्गकाः ॥ ५० ॥

asthikhaṇḍārgalāmūrdhapidhānāḥ snāyuśṛṅkhalāḥ | jagaddehā jarajjīvaraktamāṃsasamuvadgakāḥ || 50 ||

Their bodies have broken bones for bolts and a skull for a lid, sinews for chains, they are boxes of the world, holding the old blood and flesh of living beings.

उनके शरीर हड्डियों के टुकड़ों को कुंडी और खोपड़ी को ढक्कन बनाए हुए हैं, नसें ज़ंजीर जैसी हैं, वे मानो संसार के डिब्बे हैं, जिनमें जीवों का पुराना खून और मांस भरा है।

4.57.51

वनमालामृगा मुग्धाः पुरसंचारसंस्थितौ । बालबुद्धिविनोदाय योजिताश्चर्मपुत्रिकाः ॥ ५१ ॥

vanamālāmṛgā mugdhāḥ purasaṃcārasaṃsthitau | bālabuddhivinodāya yojitāścarmaputrikāḥ || 51 ||

These foolish deer of the forest, as they wander about in the city, are like leather puppets set up just to amuse a child's mind.

जंगल के ये भोले हिरण, जब शहर में घूमते-फिरते हैं, तो मानो चमड़े की गुड़िया हैं, जो बस बच्चे के मन को बहलाने के लिए बनाई गई हैं।

4.57.52

नैवंविधोदारमना मनागपि महामतिः । न ज्ञश्चलति भोगौधैर्मन्दवातैरिवाचलः ॥ ५२ ॥

naivaṃvidhodāramanā manāgapi mahāmatiḥ | na jñścalati bhogaudhairmandavātairivācalaḥ || 52 ||

But the great mind, so open and generous, is nothing like this. The knower is not shaken even a little by floods of pleasure, just as a mountain is not shaken by a gentle breeze.

पर वह महान, उदार मन ऐसा बिल्कुल नहीं है। ज्ञानी सुख की बाढ़ों से ज़रा भी नहीं डगमगाता, जैसे पहाड़ हल्की हवा से नहीं हिलता।

4.57.53

तस्मिन्किल पदे राम ज्ञस्तिष्ठति महोत्तमे । यस्मिंश्चन्द्रार्कदेशोऽपि न पातालमिव स्थितः ॥ ५३ ॥

tasmin kila pade rāma jñas tiṣṭhati mahottame | yasmiṃścandrārkadeśo'pi na pātālamiva sthitaḥ || 53 ||

In that highest state, Rama, the knower truly stands, a state in which even the realm of the moon and the sun means no more than the underworld.

हे राम, ज्ञानी सच में उस सबसे ऊँची अवस्था में टिका रहता है, जहाँ चाँद और सूरज का लोक भी पाताल से ज़्यादा कुछ नहीं है।

4.57.54

यस्यालोकाल्लोकपालाः समालोकाः सुवेदिनः । शरीरं पान्त्ययमिव पश्यन्मूढाः क्षपार्णवे ॥ ५४ ॥

yasyālokāllokapālāḥ samālokāḥ suvedinaḥ | śarīraṃ pāntyayamiva paśyanmūḍhāḥ kṣapārṇave || 54 ||

By his light, even the guardians of the world see truly and gain real knowledge. But foolish people, thinking the body alone is the self, protect only the body, and go on looking out from within an ocean of darkness.

उसकी रोशनी से लोकपाल भी सच में देख पाते हैं और असली ज्ञान पाते हैं। पर मूर्ख लोग, शरीर को ही आत्मा मानकर, सिर्फ़ शरीर की रक्षा करते हैं, और अंधेरे के समुद्र में से बाहर झाँकते रहते हैं।

4.57.55

न केचन जगद्भावास्तत्त्वज्ञं रञ्जयन्त्यमी । अप्यभ्यासगताः स्फारहृदयं खमिवाम्बुदाः ॥ ५५ ॥

na kecana jagadbhāvāstattvajñaṃ rañjayantyamī | apyabhyāsagatāḥ sphārahṛdayaṃ khamivāmbudāḥ || 55 ||

None of the things of this world can move the knower of truth, even if they come again and again out of habit, just as clouds cannot stain the vast, open sky.

इस संसार की कोई भी चीज़ सच के ज्ञानी को हिला नहीं पाती, चाहे वह बार-बार आदतन आती रहे, ठीक जैसे बादल विशाल खुले आकाश को दाग नहीं पाते।

4.57.56

न केचन जगद्भावास्तत्त्वज्ञं रञ्जयन्त्यमी । मर्कटा इव नृत्यन्तो गौरीलास्यार्थिनं हरम् ॥ ५६ ॥

na kecana jagadbhāvāstattvajñaṃ rañjayantyamī | markaṭā iva nṛtyanto gaurīlāsyārthinaṃ haram || 56 ||

None of the things of this world can move the knower of truth, just as monkeys dancing about cannot move Hara, who is absorbed in watching Gauri's dance.

इस संसार की कोई भी चीज़ सच के ज्ञानी को छू नहीं पाती, ठीक जैसे इधर-उधर नाचते बंदर हर को नहीं हिला पाते, जो गौरी के नृत्य में मगन हैं।

4.57.57

न केचन जगद्भावास्तत्त्वज्ञं रजयन्त्यमी । प्राक्तनप्रतिबिम्बश्री रत्नं कुम्भगतं यथा ॥ ५७ ॥

na kecana jagadbhāvāstattvajñaṃ rajayantyamī | prāktanapratibimbaśrī ratnaṃ kumbhagataṃ yathā || 57 ||

None of the things of this world can colour the knower of truth, just as a gem placed inside a pot still keeps its own inner brightness.

इस संसार की कोई भी चीज़ सच के ज्ञानी पर रंग नहीं चढ़ा पाती, ठीक जैसे घड़े के अंदर रखा हुआ रत्न भी अपनी भीतरी चमक बनाए रखता है।

4.57.58

वज्रार्पितोपममसन्मयमम्बुभङ्गतुङ्गं तरङ्गकृतबिम्बमिवावलोक्य । लोलां तदीहितसुखेषु रतिं न याति तज्ज्ञः कुशैवललवेष्विव राजहंसः ॥ ५८ ॥

vajrārpitopamamasanmayamambubhaṅgatuṅgaṃ taraṅgakṛtabimbaṃivāvalokya | lolāṃ tadīhitasukheṣu ratiṃ na yāti tajjñaḥ kuśaivalalaveṣviva rājahaṃsaḥ || 58 ||

Seeing the world as just an image formed by a wave, rising and cresting like a splash of water, seeming as fixed as a diamond though it is not real, the one who knows this truth does not run after the fickle pleasures it offers, just as a royal swan does not delight in bits of grass and moss floating on the water.

इस संसार को देखकर, जो लहर से बनी एक तस्वीर जैसा है, पानी की एक उठती हुई लहर जैसा, हीरे जैसा मज़बूत दिखते हुए भी असल में झूठा, सच जानने वाला इसके चंचल सुखों के पीछे नहीं भागता, ठीक जैसे राजहंस पानी पर तैरती घास और काई के टुकड़ों में मन नहीं लगाता।

Chapter 58

4.58.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अत्रैव वस्तुन्युदिता श्रृणु राघव पूर्वजाः । कचेन गाथा या गीता बार्हस्पत्येन पावनाः ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | atraiva vastunyuditā śṛṇu rāghava pūrvajāḥ | kacena gāthā yā gītā bārhaspatyena pāvanāḥ || 1 ||

Sri Vasishtha said: Listen, Rama, about this very matter there is an old and pure song, the one that Kaca, son of Brihaspati, sang.

श्री वशिष्ठ बोले - हे राम, सुनो, इसी बारे में बृहस्पति के पुत्र कच ने जो पुराना और पवित्र गीत गाया था।

4.58.2

कस्मिंश्चिन्मेरुगहनेऽतिष्ठन्सुरगुरोः सुतः । कदाचिदभ्यासवशाद्विश्रान्तिं प्राप चात्मनि ॥ २ ॥

kasmiṃścinmerugahane'tiṣṭhansuraguroḥ sutaḥ | kadācidabhyāsavaśādviśrāntiṃ prāpa cātmani || 2 ||

Once, in a thick grove on Mount Meru, the son of the gods' teacher was staying. One day, through the power of practice, he found rest within himself.

एक बार मेरु पर्वत के घने जंगल में देवताओं के गुरु का बेटा ठहरा हुआ था। एक दिन अभ्यास के असर से उसे अपने भीतर ही शांति मिल गई।

4.58.3

सम्यग्ज्ञानामृतापूर्णा मतिर्नारमतास्य सा । पञ्चभूतमयेऽमान्ये दृश्येऽस्मिन्पेलवात्मनि ॥ ३ ॥

samyagjñānāmṛtāpūrṇā matirnāramatāsya sā | pañcabhūtamaye'mānye dṛśye'sminpelavātmani || 3 ||

His mind, full of the nectar of true knowledge, took no joy in this visible world, made of the five elements, a weak and worthless thing.

सच्चे ज्ञान के अमृत से भरा उसका मन इस दिखने वाले संसार में नहीं रमा, जो पाँच तत्वों से बना है और कमज़ोर व तुच्छ है।

4.58.4

स तेन निर्विण्ण इव सदात्मत्वादृते पदम् । अपश्यन्समुवाचेदमेको गद्गदया गिरा ॥ ४ ॥

sa tena nirviṇṇa iva sadātmatvādṛte padam | apaśyansamuvācedam eko gadgadayā girā || 4 ||

As if wearied by that, and seeing no place except the true nature of the Self, he spoke alone, in a voice choked with feeling.

जैसे उससे ऊब गया हो, और सच्चे आत्मा के स्वरूप के सिवा कोई और जगह न देखकर, वह अकेला रुँधे गले से यह बोला।

4.58.5

किं करोमि क्व गच्छामि किं गृह्णामि त्यजामि किम् । आत्मना पूरितं विश्वं महाकल्पाम्बुना यथा ॥ ५ ॥

kiṃ karomi kva gacchāmi kiṃ gṛhṇāmi tyajāmi kim | ātmanā pūritaṃ viśvaṃ mahākalpāmbunā yathā || 5 ||

What should I do? Where should I go? What should I take, what should I leave? The whole universe is filled with the Self, the way everything fills up with water at the great flood that ends an age.

मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, क्या लूँ, क्या छोड़ूँ? यह पूरा संसार आत्मा से वैसे ही भरा है जैसे प्रलय के समय सब कुछ पानी से भर जाता है।

4.58.6

दुःखमात्मा सुखं चैव खमाशासुमहत्तया । सर्वमात्ममयं ज्ञातं नष्टकष्टोऽहमात्मना ॥ ६ ॥

duḥkhamātmā sukhaṃ caiva khamāśāsumahattayā | sarvamātmamayaṃ jñātaṃ naṣṭakaṣṭo'hamātmanā || 6 ||

The Self is pain, and the Self is pleasure too; it is the sky, and it is the vastness that fills every direction. I have come to know that everything is made of the Self, and through the Self my suffering is gone.

आत्मा ही दुःख है और आत्मा ही सुख भी है, वही आकाश है और वही हर दिशा में फैली विशालता है। मुझे पता चल गया कि सब कुछ आत्मा से बना है, और आत्मा के कारण मेरा दुःख मिट गया है।

4.58.7

सबाह्याभ्यन्तरे देहे अधश्चोर्ध्वं च दिक्षु च । इत आत्मा ततश्चात्मा नास्त्यनात्ममयं क्वचित् ॥ ७ ॥

sabāhyābhyantare dehe adhaścordhvaṃ ca dikṣu ca | ita ātmā tataścātmā nāstyānātmamayaṃ kvacit || 7 ||

In the body, outside and inside, below and above and in every direction, here is the Self, and there too is the Self. Nowhere is there anything that is not the Self.

शरीर के बाहर और भीतर, नीचे और ऊपर और हर दिशा में, यहाँ भी आत्मा है और वहाँ भी आत्मा है। कहीं भी कुछ ऐसा नहीं जो आत्मा से अलग हो।

4.58.8

सर्वत्रैव स्थितो ह्यात्मा सर्वमात्ममयं स्थितम् । सर्वमेवेदमात्मैवमात्मन्येव भवाम्यहम् ॥ ८ ॥

sarvatraiva sthito hyātmā sarvamātmamayaṃ sthitam | sarvamevedamātmaivamātmanyeva bhavāmyaham || 8 ||

The Self stands everywhere; everything that stands is made of the Self. All this is the Self alone, and I too exist only in the Self.

आत्मा हर जगह मौजूद है, जो कुछ भी है वह आत्मा से बना है। यह सब कुछ आत्मा ही है, और मैं भी आत्मा में ही हूँ।

4.58.9

यन्नाम नाम तत्किंचित्सर्वमेवाहमान्तरः । आपूरितापारनभाः सर्वत्र सन्मयः स्थितः ॥ ९ ॥

yannāma nāma tatkiṃcit sarvamevāhamāntaraḥ | āpūritāpāranabhāḥ sarvatra sanmayaḥ sthitaḥ || 9 ||

Whatever has a name, whatever it may be, all of it, deep inside, is me. I fill the boundless sky and stand everywhere, made of the one true reality.

जिसका भी कोई नाम है, वह जो कुछ भी हो, वह सब भीतर से मैं ही हूँ। मैं असीम आकाश को भरते हुए हर जगह उसी एक सच्चाई के रूप में मौजूद हूँ।

4.58.10

पूर्णस्तिष्ठामि मोदात्मा सुखमेकार्णवोपमः । इत्येवं भावयंस्तत्र कनकाचलकुञ्जके ॥ १० ॥

pūrṇastiṣṭhāmi modātmā sukhamekārṇavopamaḥ | ityevaṃ bhāvayaṃstatra kanakācalakuñjake || 10 ||

I stand full, my nature all joy, happy like a single ocean. Thinking this, there in a bower on the golden mountain,

मैं पूरा हूँ, मेरा स्वभाव ही आनंद है, मैं एक समुद्र जैसा सुखी हूँ - ऐसा सोचते हुए, वहाँ सोने के पर्वत की एक कुंज में,

4.58.11

उच्चारयन्नोङ्कारं च घण्टास्वनमिव क्रमात्। ओंकारस्य कलामात्रं पाश्चात्यं वालकोमलम्। नान्तरस्थो न बाह्यस्थो भावयन्परमे हृदि॥ ११॥

uccārayannōṅkāraṃ ca ghaṇṭāsvanamiva kramāt | oṃkārasya kalāmātraṃ pāścātyaṃ vālakomalam | nāntarastho na bāhyastho bhāvayanparame hṛdi || 11 ||

he uttered the sound Om, its sound trailing away step by step like the ring of a bell, down to the very last trace of that Om, as delicate as a strand of hair. Meditating in the deepest heart, resting neither inside nor outside,

घंटी की आवाज़ की तरह धीरे-धीरे ओंकार का उच्चारण करते हुए, उस ओंकार के आख़िरी हिस्से तक, जो एक बाल जितना नाज़ुक था, न भीतर टिका हुआ न बाहर, सबसे गहरे हृदय में ध्यान करते हुए,

4.58.12

व्यपगतकलनाकलङ्कशुद्धो हृदयनिरन्तरलीनवातवृत्तिः। गतघनशरदाशयोपमानः स्थित इति राम कचः स गायमानः॥ १२॥

vyapagatakalanākalaṅkaśuddho hṛdayanirantaralīnavātavṛttiḥ | gataghanśaradāśayopamānaḥ sthita iti rāma kacaḥ sa gāyamānaḥ || 12 ||

free from every stain of thought, and pure, his breath merging without a break into his heart, like an autumn sky grown clear once the clouds have gone, so he remained, Rama, Kaca, singing.

हर तरह के विचार के दाग़ से मुक्त और शुद्ध, जिसकी साँस लगातार बिना रुके हृदय में लीन होती रही, जैसे शरद ऋतु का आकाश बादल छँटने पर साफ़ हो जाए - हे राम, कच ऐसे ही गाता हुआ स्थित रहा।

Chapter 59

4.59.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । अन्नपानाङ्गनासङ्गादृते नास्तीह किंचन । शुभमस्त्विति संवादि महान्किमिव वाञ्छतु ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | annapānāṅganāsaṅgādṛte nāstīha kiṃcana | śubhamastviti saṃvādi mahānkimiva vāñchatu ||1||

Vasishtha said, for such people nothing exists in this world except food, drink, and closeness with women. May all go well, they tell each other. What would a truly great person want in that small way?

वसिष्ठ ने कहा, ऐसे लोगों के लिए इस संसार में खाने-पीने और स्त्री-संग के अलावा कुछ भी नहीं है। वे आपस में बस इतना कहते हैं कि सब ठीक हो जाए। कोई सच में महान व्यक्ति भला इतनी छोटी बात क्यों चाहेगा?

4.59.2

तिर्यञ्चः पशवो मूढा ये न तुष्यन्त्यसाधवः । भोगैः कृपणसर्वस्वैरादिमध्यान्तपेलवैः ॥ २ ॥

tiryañcaḥ paśavo mūḍhā ye na tuṣyantyasādhavaḥ | bhogaiḥ kṛpaṇasarvasvairādimadhyāntapelavaiḥ ||2||

Animals, beasts, fools and wicked people are never satisfied by such pleasures, pleasures that are utterly poor and weak from the start, through the middle, to the end.

पशु-पक्षी, मूर्ख और दुष्ट लोग भी ऐसे भोगों से कभी संतुष्ट नहीं होते, जो भोग शुरू से लेकर बीच और अंत तक पूरी तरह कंगाल और कमजोर होते हैं।

4.59.3

विश्वासं यान्ति ये लोके तैरलं नरगर्दभैःइतः केशा इतो रक्तमितीयं प्रमदातनुः ॥ ३ ॥

viśvāsaṃ yānti ye loke tairalaṃ naragardabhaiḥitaḥ keśā ito raktamitīyaṃ pramadātanuḥ ||3||

Those who put their trust in this world are no better than donkeys. Here is hair, there is flesh and blood, this is all a young woman's body really is.

जो लोग इस संसार पर भरोसा करते हैं, वे गधों से बढ़कर कुछ नहीं। यहाँ बाल हैं, वहाँ मांस और खून है, एक जवान स्त्री का शरीर बस इतना ही है।

4.59.4

एतया तोषमायान्ति सारमेया न मानवाः । मृन्महीदारुतरवो देहा मांसमया अपि ॥ ४ ॥

etayā toṣamāyānti sārameyā na mānavāḥ | mṛnmahīdārutaravo dehā māṃsamayā api ||4||

Dogs are pleased by such a body, not men. A body made of flesh is no different from clay, earth, wood, or a tree.

ऐसे शरीर से कुत्ते खुश होते हैं, इंसान नहीं। मांस से बना शरीर मिट्टी, धरती, लकड़ी या पेड़ से अलग नहीं है।

4.59.5

अधो भूरम्बरं पृष्ठे किमपूर्वं सुखाय तुमात्रास्पर्शानुसारिण्यो विवेकपदभङ्गुराः ॥ ५ ॥

adho bhūrambaraṃ pṛṣṭhe kimapūrvaṃ sukhāya tumātrāsparśānusāriṇyo vivekapadabhaṅgurāḥ || 5 ||

The ground below and the sky above are enough for anyone, so what is so special here for happiness? Pleasures that merely follow from a touch fall apart the moment real understanding steps in.

नीचे धरती है और ऊपर मानो आकाश ओढ़ा हुआ है, तो सुख के लिए यहाँ ऐसा खास क्या है? जो सुख बस एक छुअन से पीछे-पीछे चला आता है, वह सही समझ आते ही टूट जाता है।

4.59.6

मोहायैवापरामृष्टाः सकला लोकसंविदःसर्वस्या एव पर्यन्ते सुखाशायाश्च संस्थितम् ॥ ६ ॥

mohāyaivāparāmṛṣṭāḥ sakalā lokasaṃvidaḥsarvasyā eva paryante sukhāśāyāśca saṃsthitam || 6 ||

All the ways the world is understood, when left unexamined, serve only delusion. And at the end of every hope for happiness, that same delusion is what remains standing.

दुनिया को समझने के जितने भी तरीके बिना जांचे-परखे रहते हैं, वे सब सिर्फ भ्रम फैलाते हैं। और सुख की हर उम्मीद के आखिर में यही भ्रम बचा रहता है।

4.59.7

मालिन्यं दुःखमप्येवं ज्वालाया इव कज्जलमागमापायिनोऽनित्या मनःषष्ठेन्द्रियक्रियाः ॥ ७ ॥

mālinyaṃ duḥkhamapyevaṃ jvālāyā iva kajjalamāgamāpāyino'nityā manaḥṣaṣṭhendriyakriyāḥ || 7 ||

In the same way, sorrow is like the soot given off by a flame of pleasure. All the workings of the senses, with the mind as the sixth, come and go, they do not last.

उसी तरह दुख उस सुख की लौ से निकलने वाली कालिख जैसा है। मन को छठी इंद्रिय मानें तो सारी इंद्रियों के काम आते-जाते रहते हैं, वे टिकते नहीं।

4.59.8

लता नागेन्द्रमृदिता धारयन्ति न सम्पदःपुत्रिका रक्तमांसस्य कान्तेयमिति सादरम् ॥ ८ ॥

latā nāgendramṛditā dhārayanti na saṃpadaḥputrikā raktamāṃsasya kānteyamiti sādaram || 8 ||

Vines crushed by a great elephant no longer keep their beauty. In the same way, this doll made of flesh and blood is what people fondly call, this is my beloved.

बड़े हाथी के कुचले जाने पर बेलों की सुंदरता नहीं बचती। उसी तरह मांस और खून की यह गुड़िया है, जिसे लोग प्यार से कहते हैं, यह मेरी प्रिय है।

4.59.9

स्वदेहनाम्नास्थिचये श्लिष्यते मोहकक्रमःसर्वं सत्यमिदं राम स्थिरमज्ञस्य तुष्टये ॥ ९ ॥

svadehanāmnā'sthicaye śliṣyate mohakakramaḥsarvaṃ satyamidaṃ rāma sthiramajñasya tuṣṭaye || 9 ||

Onto a heap of bones called one's own body, the workings of delusion cling fast. All this seems real and lasting, Rama, only to a person who knows nothing.

हड्डियों के एक ढेर को अपना शरीर कहकर, भ्रम की यह पूरी प्रक्रिया उससे चिपक जाती है। हे राम, यह सब सच्चा और स्थायी सिर्फ उस इंसान को लगता है जो कुछ नहीं जानता।

4.59.10

ज्ञस्यास्थैर्यमसत्यं च जगद्राम न तुष्टयेअभुक्तेऽपि विषा यैषा विषमूर्च्छां प्रयच्छति ॥ १० ॥

jñasyāsthairyamasatyaṃ ca jagadrāma na tuṣṭayeabhukte'pi viṣā yaiṣā viṣamūrcchāṃ prayacchati || 10 ||

But for the one who knows, Rama, the world is unstable and unreal, not made for anyone's satisfaction. This is that poison which, even before it is swallowed, already brings on the fainting fit of poison.

पर हे राम, जो जानता है उसके लिए यह संसार अस्थिर और असत्य है, यह किसी को सुख देने के लिए नहीं बना। यह वह जहर है जो निगले जाने से पहले ही जहर जैसी मूर्च्छा ले आता है।

4.59.11

तां परित्यज्य भोगास्थां स्वात्मैकत्वगतिं भज । अनात्ममयभावेन चित्तं स्थितिमुपागतम् । यदा तदैतदाजातं जगज्जालमसन्मयम् ॥ ११ ॥

tāṃ parityajya bhogāsthāṃ svātmaikatvagatiṃ bhaja | anātmamayabhāvena cittaṃ sthitimupāgatam | yadā tadaitetadājātaṃ jagajjālamasanmayam || 11 ||

Give up that reliance on pleasure, and turn instead to the oneness of your own self. When the mind comes to rest through the sense that all this is not the self, then this whole net of the world that has arisen is seen to be made of what is unreal.

सुख के इस सहारे को छोड़कर, अपनी आत्मा की उसी एकता की ओर मुड़ो। जब मन इस भाव से टिक जाता है कि यह सब आत्मा नहीं है, तब संसार का यह पूरा जाल जो खड़ा हुआ है, असत्य से बना दिखाई देता है।

4.59.12

वासनावशतो ब्रह्ममनसा कल्पितं वपुः । तेजसा श्रितकुड्येन हेमाभत्वमिवात्मनः ॥ १२ ॥

vāsanāvaśato brahmanmanasā kalpitaṃ vapuḥ | tejasā śritakuḍyena hemābhatvamivātmanaḥ || 12 ||

Because of the force of old impressions, this body is shaped by Brahma's mind, just as the self's own light, falling on a wall, takes on the look of gold.

पुराने संस्कारों के जोर से, ब्रह्मा के मन ने यह शरीर गढ़ा है, ठीक वैसे जैसे आत्मा का अपना प्रकाश दीवार पर पड़कर सोने जैसा दिखने लगता है।

4.59.13

श्रीराम उवाच । वैरिञ्चपदमासाद्य मनो ब्रह्मन्महामते । इदं जगत्सुघनतां कथमानयति क्रमात् ॥ १३ ॥

śrīrāma uvāca | vairiñcapadamāsādya mano brahmanmahāmate | idaṃ jagatsughanatāṃ kathamānayati kramaāt || 13 ||

Rama said, having reached the position of Virinca, O wise Brahmin, how does the mind step by step bring this world to such solid thickness?

राम ने कहा, हे महाबुद्धिमान ब्राह्मण, विरिंच का पद पाकर मन धीरे-धीरे इस जगत को इतना ठोस कैसे बना देता है?

4.59.14

श्रीवसिष्ठ उवाच । गर्भतल्पात्समुत्थाय पद्मजः प्रथमः शिशुः । ब्रह्मेति शब्दमकरोद्ब्रह्मा तेन स उच्यते ॥ १४ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | garbhatalpātsamutthāya padmajaḥ prathamaḥ śiśuḥ | brahmeti śabdamakarodbrahmā tena sa ucyate || 14 ||

Vasishtha said, rising up from the bed of the womb, the first child, born from the lotus, made the sound Brahma, and so he is called Brahma.

वसिष्ठ ने कहा, गर्भ की सेज से उठकर, कमल से जन्मे उस पहले शिशु ने ब्रह्म शब्द का उच्चारण किया, इसी से वह ब्रह्मा कहलाया।

4.59.15

संकल्पजालरूपस्य मनसा कल्पिताकृतेः । अकरोत्तस्य संकल्पलक्ष्मीः पदमथोत्तरे ॥ १५ ॥

saṃkalpajālarūpasya manasā kalpitākṛteḥ | akarottasya saṃkalpalakṣmīḥ padamathottare || 15 ||

His very form was a web of intentions, a shape imagined by mind, and the power of that intention then went on to take its place in what came after.

उसका रूप ही इच्छाओं का एक जाल था, मन से गढ़ा हुआ आकार, और उस इच्छा की शक्ति ने आगे जो कुछ हुआ उसमें अपनी जगह बना ली।

4.59.16

ततः संकल्पयामास पूर्वं तेजो महाप्रभम् । शरदन्ते लताचक्रचक्रीकृतदिगन्तरम् ॥ १६ ॥

tataḥ saṃkalpayāmāsa pūrvaṃ tejo mahāprabham | śaradante latācakracakrīkṛtadigantaram || 16 ||

Then he first willed into being a great and brilliant light, one that turned the far horizon into a wheel, like a wheel of vines at the end of autumn.

फिर उसने सबसे पहले एक महान और तेजस्वी प्रकाश की कल्पना की, जिसने दूर क्षितिज को एक पहिये जैसा बना दिया, मानो शरद ऋतु के अंत में बेलों का एक घेरा हो।

4.59.17

पक्षप्रतिमनिस्यूतकर्मणातिगुणाक्षरम् । पुञ्जपिञ्जरपर्यन्तं हेमज्ञाननिभाम्बरम् ॥ १७ ॥

pakṣapratimanisūtakarmaṇātiguṇākṣaram | puñjapiñjaraparyantaṃ hemajñānanibhāmbaram || 17 ||

That light was interwoven with movement like a wing, supremely excellent and never destroyed. Its edges were heaps of golden brown, and it filled the sky with a glow like gold, like wisdom itself.

वह प्रकाश पंख की तरह गति से बुना हुआ था, अत्यंत उत्तम और कभी नष्ट न होने वाला। उसके किनारे सुनहरे-भूरे ढेरों जैसे थे, और उसने आकाश को सोने जैसी, मानो ज्ञान जैसी चमक से भर दिया।

4.59.18

जालहेमलताजालजटालनिजमन्दिरम् । कचत्प्रसरदुद्यानाकारकुण्डलमण्डितम् ॥ १८ ॥

jālahema latājāla jaṭāla nija mandiram | kacatprasara dudyānākāra kuṇḍala maṇḍitam || 18 ||

That palace of his was thick with a net of golden vines, and decorated with earrings shaped like a spreading, glittering garden.

उसका वह महल सोने की बेलों के जाल से घना था, और चमकते हुए फैलते बगीचे जैसी बालियों से सजा हुआ था।

4.59.19

तं शरीरं मनस्तस्मिंस्ततस्तेजसि भास्वरे । आत्माकारसमाकारं भास्वरं समकल्पयत् ॥ १९ ॥

taṃ śarīraṃ manastasmiṃstataḥ tejasi bhāsvare | ātmākārasamākāraṃ bhāsvaraṃ samakalpayat || 19 ||

Then, in that shining light, the mind shaped a body for him, glowing, and formed in the very likeness of the self.

फिर उस चमकते प्रकाश में, मन ने उसके लिए एक शरीर गढ़ा, चमकीला, और आत्मा के रूप जैसा ही बना हुआ।

4.59.20

स ततस्तेजसस्तस्मादभ्युदेति दिवाकरः । जालमण्डलमध्यस्थो ज्वलत्कनककुण्डलः ॥ २० ॥

sa tataḥ tejasastasmādabhyudeti divākaraḥ | jālamaṇḍalamadhyastho jvalatkanakakuṇḍalaḥ || 20 ||

Then, out of that radiance, the sun rose up, standing in the middle of a ring of light, with blazing earrings of gold.

फिर उसी तेज से सूर्य उदय हुआ, प्रकाश के एक घेरे के बीचोंबीच खड़ा, सोने की जलती हुई बालियों के साथ।

4.59.21

ज्वलज्जटाभारधरोपान्तविस्फारपावकः । ज्वालाविशालावयवः पूरिताकाशमण्डलः ॥ २१ ॥

jvalajjaṭābhāradharopāntavisphārapāvakaḥ | jvālāviśālāvayavaḥ pūritākāśamaṇḍalaḥ || 21 ||

He carried a mass of blazing matted hair, with fire spreading wide at its edges. His limbs were huge flames, filling the whole circle of the sky.

उसने जलती हुई जटाओं का भार धारण किया, जिसके किनारों पर आग दूर तक फैली हुई थी। उसके अंग विशाल ज्वालाएँ थे, जिन्होंने आकाश के पूरे घेरे को भर दिया।

4.59.22

अथ ब्रह्मा महाबुद्धिरन्यास्तास्तेजसः कलाः । अपाल्य यदसद्ब्रह्मा तरङ्गानिव सागरः ॥ २२ ॥

atha brahmā mahābuddhiranyāstāstejasaḥ kalāḥ | apālya yadasadbrahmā taraṅgāniva sāgaraḥ || 22 ||

Then Brahma, of great intelligence, brought forth other rays of that light, unreal as they were, just as the ocean brings forth its waves.

फिर महाबुद्धिमान ब्रह्मा ने उस तेज की और भी किरणें उत्पन्न कीं, जो असत्य होते हुए भी वैसे ही बनीं जैसे समुद्र अपनी लहरें बनाता है।

4.59.23

तेऽपि संकल्पसंप्राप्तसिद्धयः समशक्तयः । यथासंकल्पितं वस्तु क्षणाद्दृष्ट्वापुरग्रतः ॥ २३ ॥

teapi saṃkalpasamprāptasiddhayaḥ samśaktayaḥ | yathāsaṃkalpitam vastu kṣaṇāddṛṣṭvāpuragrataḥ || 23 ||

They too gained the power to fulfil their will, equal to him in strength, and the moment they willed a thing, they saw it standing right in front of them.

उन्होंने भी अपनी इच्छा पूरी करने की शक्ति पाई, उसके बराबर बल के साथ, और जो कुछ वे चाहते, वह उसी क्षण उनके सामने खड़ा दिखाई देता।

4.59.24

संकल्पयन्तो यान्यांस्ते नानाभूतगणान्बहून् । भूतेष्वन्यांस्तु तेष्वन्यांस्तेष्वन्यान्विविधानपि ॥ २४ ॥

saṃkalpayanto yānyāṃste nānābhūtagaṇānbahūn | bhūteṣvanyāṃstu teṣvanyāṃsteṣvanyānvividhānapi || 24 ||

Willing it so, they created many different groups of beings, and among those beings still others, and among those others again, many kinds, one after another.

इस तरह चाहकर, उन्होंने जीवों के कई अलग-अलग समूह बनाए, और उन जीवों में फिर और जीव, और उनमें फिर और भी कई तरह के जीव, एक के बाद एक।

4.59.25

संस्मृत्य वेदांस्तदनु यज्ञक्रमगुणान्बहून् । जगद्ग्रहादयं ब्रह्मा मर्यादां समकल्पयत् ॥ २५ ॥

saṃsmṛtya vedāṃstadanu yajñakramaguṇānbahūn | jagadgrahādayaṃ brahmā maryādāṃ samakalpayat || 25 ||

After that, having called the Vedas to mind, and then the many virtues of the order of sacrifice, Brahma took charge of the world and set its bounds.

इसके बाद वेदों को याद करके, और फिर यज्ञ की विधि के कई गुणों को याद करके, ब्रह्मा ने जगत का कार्यभार लेकर उसकी सीमाएँ तय कीं।

4.59.26

ब्राह्मं रूपमुपादाय मनोनाम महद्वपुः । तनोतीत्थमिमां दृष्टिं भूतसंततिसंकुलाम् ॥ २६ ॥

brāhmaṃ rūpamupādāya manonāma mahadvapuḥ | tanotītthamimāṃ dṛṣṭiṃ bhūtasaṃtatisaṃkulām || 26 ||

Taking on the form that belongs to Brahma, this great body called the mind spreads out, in just this way, the sight of a world crowded with an endless line of creatures.

ब्रह्मा से जुड़ा रूप लेकर, मन नाम का यह विशाल शरीर, इसी तरह, जीवों की अनंत कतार से भरी हुई इस दुनिया की दृष्टि फैलाता है।

4.59.27

समुद्राचलवृक्षाढ्यां कृतलोकोत्तरक्रमाम् । मेरुभूपीठदिक्कुञ्जजटालोदरमण्डलाम् ॥ २७ ॥

samudrācalavṛkṣāḍhyāṃ kṛtalokottarakramām | merubhūpīṭhadikkuñjajaṭālodaramaṇḍalām || 27 ||

This sight is rich with oceans, mountains and trees. It has set up the higher order of the worlds. Its middle is thick with Mount Meru, the plane of the earth, and the groves of every direction.

यह दृष्टि समुद्रों, पहाड़ों और पेड़ों से भरी है। इसने लोकों की उच्च व्यवस्था स्थापित की है। इसका मध्य भाग मेरु पर्वत, धरती के धरातल और हर दिशा के बागों से घना है।

4.59.28

सुखदुःखजराजन्ममरणस्वाधिबोधिताम् । रागद्वेषमयोद्विग्नां गुणत्रयमयात्मिकाम् ॥ २८ ॥

sukhaduḥkhajarājanmamarṇasvādhibodhitām | rāgadveṣamayodvignāṃ guṇatrayamayātmikām || 28 ||

It is stirred awake by its own troubles of pleasure and pain, old age, birth and death. It is disturbed by attachment and hatred, and its very nature is made of the three gunas.

यह अपने ही सुख-दुख, बुढ़ापे, जन्म और मृत्यु के कष्टों से जाग उठती है। यह राग और द्वेष से विचलित रहती है, और इसका स्वभाव ही तीनों गुणों से बना है।

4.59.29

मनोहस्तैर्विरिंचोत्थैर्यद्यथा कल्पितं पुरा । तत्तथैवाखिलं द्रष्टुं दृश्यतेऽद्यापि मायया ॥ २९ ॥

manohastairviriñcotthairyadyathā kalpitaṃ purā | tattathaivākhilaṃ draṣṭuṃ dṛśyate'dyāpi māyayā || 29 ||

By the hands of the mind that rose from Brahma, whatever was shaped in the past, all of it, exactly the same, can still be seen today, through the power of illusion.

ब्रह्मा से उठे हुए मन के हाथों ने अतीत में जो कुछ भी बनाया था, वह सब कुछ आज भी माया के कारण ठीक वैसा ही दिखाई देता है।

4.59.30

इत्थं सर्वेषु भूतेषु केषुचित्त्वथवा पुनः । संकल्पयति संसारं परं पश्यति चित्स्थितम् ॥ ३० ॥

itthaṃ sarveṣu bhūteṣu keṣucittvathavā punaḥ | saṃkalpayati saṃsāraṃ paraṃ paśyati citsthitam || 30 ||

In this way, in all beings the mind imagines the world; but in some, instead, it sees the highest truth resting in pure awareness.

इस तरह सभी जीवों में मन दुनिया की कल्पना करता है; लेकिन कुछ में, इसके बजाय, यह परम सत्य को शुद्ध चेतना में टिका हुआ देखता है।

4.59.31

मोह एवंमयो मिथ्या जागतः स्थिरतां गतः । संकल्पनेन मनसा कल्पितोऽचिरतः स्वयम् ॥ ३१ ॥

moha evaṃmayo mithyā jāgataḥ sthiratāṃ gataḥ | saṃkalpanena manasā kalpito'cirataḥ svayam || 31 ||

This delusion, made just like this, is false. Though it feels fixed and solid to the waking mind, it was shaped in an instant by the mind's own imagining, all by itself.

यह भ्रम, जो इसी तरह बना है, झूठा है। भले ही जागी हुई अवस्था में यह पक्का और ठोस लगे, यह मन की अपनी ही कल्पना से, अपने आप, पल भर में बन गया था।

4.59.32

संकल्पवशतः सर्वाः प्रसवन्ति जगत्क्रियाः । संकल्पवशतो देवा निर्यान्ति नियतिस्थिताः ॥ ३२ ॥

saṃkalpavaśataḥ sarvāḥ prasavanti jagatkriyāḥ | saṃkalpavaśato devā niryānti niyatisthitāḥ || 32 ||

Through the power of imagination, all the workings of the world are born. Through the power of imagination, the gods too come forth, set within a fixed order.

कल्पना की ताकत से ही दुनिया के सारे काम पैदा होते हैं। कल्पना की ताकत से ही देवता भी एक तय नियम में बंधकर सामने आते हैं।

4.59.33

कोपितायाः प्रजानाथैर्जगत्सृष्टेः कुलोद्भवः । ब्रह्मा संचिन्तयत्येष पद्मासनगतः प्रभुः ॥ ३३ ॥

kopitāyāḥ prajānāthairjagatsṛṣṭeḥ kulodbhavaḥ | brahmā saṃcintayatyēṣa padmāsanagataḥ prabhuḥ || 33 ||

Brahma, the very source of that whole lineage, seated on his lotus throne, this lord now turns his mind to the creation of the world, stirred up as it is by the lords of creatures.

उस पूरी वंश-परंपरा के मूल स्रोत ब्रह्मा, अपने कमल के आसन पर बैठे हुए, अब उस सृष्टि के बारे में सोचते हैं जिसे प्रजापतियों ने हिला-डुला दिया है।

4.59.34

मनःस्पन्दनमात्रेण चित्रं चित्तं यदुत्थितम् । सृष्टिर्वा भोगिनी स्फारा व्यवहारविकारिणी ॥ ३४ ॥

manaḥspandanamātreṇa citraṃ cittaṃ yadutthitam | sṛṣṭirvā bhoginī sphārā vyavahāravikāriṇī || 34 ||

By nothing more than a stir of the mind, this whole wondrous mind rises up, a vast creation, delighting in itself, forever changing through everyday activity.

सिर्फ मन की एक हलचल से ही यह पूरा अद्भुत मन उठ खड़ा होता है, एक विशाल सृष्टि, जो खुद में मगन है और रोज़मर्रा के कामकाज से लगातार बदलती रहती है।

4.59.35

रुद्रोपेन्द्रमहेन्द्राद्या शैलसागरसंकुला । पातालरोदोदिक्स्वर्गमार्गसंकटकोटरा ॥ ३५ ॥

rudropendramahēndrādyā śailasāgarasaṅkulā | pātālarododiksvargamārgasaṅkaṭakoṭarā || 35 ||

That creation holds Rudra, Vishnu, and Indra and the rest. It is packed with mountains and oceans, and its hollow spaces are the narrow paths leading to the underworld, the four directions, and heaven.

उस सृष्टि में रुद्र, विष्णु और इंद्र वगैरह सब समाए हैं। यह पहाड़ों और समुद्रों से भरी है, और इसके भीतर के खाली हिस्से पाताल, चारों दिशाओं और स्वर्ग की तरफ जाने वाले तंग रास्ते हैं।

4.59.36

संकल्पजालमत्यन्तं मयेदमभितस्ततम्। अधुनाविरतोऽस्म्यस्माद्विकल्पोल्लासनक्रमात्॥ ३६॥

saṃkalpajālamatyantaṃ mayedamabhitastatam | adhunāvirato'smyasmādvikalpollāsanakramāt || 36 ||

This whole net of imagination has been spread out everywhere by me. And even now, I have not stopped this cycle of throwing up one alternative after another.

कल्पना का यह पूरा जाल मैंने ही हर तरफ फैलाया है। और अभी तक मैं एक के बाद एक नए-नए ख़याल पैदा करने के इस सिलसिले से रुका नहीं हूं।

4.59.37

इति निश्चित्य विरतः कल्पनानर्थसंकटात्। अनादिमत्परं ब्रह्म स्मरत्यात्मानमात्मना॥ ३७॥

iti niścitya viratah kalpanānarthasaṃkaṭāt | anādimatparaṃ brahma smaratyātmānamātmanā || 37 ||

Realizing this, he stopped the harmful trap of pointless imagining, and through himself, remembered his own self as the beginningless, supreme Brahman.

यह समझकर, उसने बेकार की कल्पना के इस नुकसानदेह जाल को रोक दिया, और खुद के ज़रिए ही अपने आप को उस बिना शुरुआत वाले, सबसे ऊंचे ब्रह्म के रूप में याद किया।

4.59.38

तमासाद्य तदाभासे पदे गलितमानसे। सुखं तिष्ठति शान्तात्मा तल्पेऽधः श्रमवानिव॥ ३८॥

tamāsādya tadābhāse pade galitamānase | sukhaṃ tiṣṭhati śāntātmā talpe'dhaḥ śramavāniva || 38 ||

Having reached that state, its own reflection, with the mind dissolved away, the peaceful self rests at ease, like a tired man lying down on his bed.

उस अवस्था को पाकर, जो खुद अपनी ही झलक है, मन के घुल जाने पर, शांत आत्मा आराम से टिकी रहती है, जैसे कोई थका हुआ आदमी अपने बिस्तर पर लेटा हो।

4.59.39

निर्ममो निरहंकारः परां शान्तिमुपागतः। अविक्षुब्ध इवाम्भोधिरात्मनात्मनि तिष्ठति॥ ३९॥

nirmamo nirahaṃkāraḥ parāṃ śāntimupāgataḥ | avikṣubdha ivāmbhodhirātmanātmani tiṣṭhati || 39 ||

Free from mine and free from I, having reached the highest peace, like an ocean that is not stirred, he rests in himself, through himself.

मेरा और मैं दोनों से मुक्त होकर, सबसे ऊंची शांति को पाकर, वह उस समुद्र की तरह है जो हिलता-डुलता नहीं, वह खुद में, खुद के ज़रिए ही टिका रहता है।

4.59.40

ध्यानात्कदाचिद्भगवान्स्वयं विरमति प्रभुः। बन्धनात्सलिलस्यन्दात्सौम्यत्वादिव वारिधिः॥ ४०॥

dhyānātkadācidbhagavānsvayaṃ viramati prabhuḥ | bandhanātsalilasyandātsaumyatvādiva vāridhiḥ || 40 ||

Sometimes the lord, on his own, comes out of meditation, like the ocean, which stays calm and gentle even while held within its shores and always fed by flowing water.

कभी-कभी वह प्रभु अपने आप ही ध्यान से बाहर आ जाता है, ठीक उस समुद्र की तरह, जो अपने किनारों में बंधा होने और लगातार बहते पानी से भरते रहने के बावजूद शांत और नरम बना रहता है।

4.59.41

विचारयति संसारं सुखदुःखसमन्वितम्। आशापाशशतैर्बद्धं रागद्वेषभयातुरम्॥ ४१॥

vicārayati saṃsāraṃ sukhaduḥkhasamanvitam | āśāpāśaśatairbaddhaṃ rāgadveṣabhayāturam || 41 ||

He reflects on the cycle of the world, mixed together with pleasure and pain, tied down by hundreds of ropes of hope, and troubled by attachment, hatred, and fear.

वह संसार के बारे में सोचता है, जो सुख-दुख से गुंथा हुआ है, उम्मीद की सैकड़ों रस्सियों से बंधा हुआ है, और मोह, नफ़रत और डर से परेशान है।

4.59.42

ततः स करुणाक्रान्तमना भूतविभूतये। करोतीह महार्थानि शास्त्राणि विविधानि च॥ ४२॥

tataḥ sa karuṇākrāntamanā bhūtavibhūtaye | karotīha mahārthāni śāstrāṇi vividhāni ca || 42 ||

Then, with his mind overcome by compassion, for the good of all beings, he creates, in this world, many kinds of great and meaningful scriptures.

फिर, दया से भरे मन के साथ, सभी जीवों की भलाई के लिए, वह इस दुनिया में कई तरह के महान और सार्थक शास्त्र रचता है।

4.59.43

अध्यात्मज्ञानगर्भाणि वेदवेदाङ्गसंग्रहम्। पुराणादीनि चान्यानि मुक्तये सर्वदेहिनाम्॥ ४३॥

adhyātmajñānagarbhāṇi vedavedāṅgasaṃgraham | purāṇādīni cānyāni muktaye sarvadehinām || 43 ||

These are filled inside with knowledge of the self, a compendium of the Vedas and their auxiliary sciences, the Puranas, and other such texts, all for the freedom of every being that has a body.

ये अंदर से आत्मज्ञान से भरे हैं, वेदों और उनके सहायक शास्त्रों का संग्रह, पुराण, और ऐसे ही दूसरे ग्रंथ, ये सब हर देहधारी जीव की मुक्ति के लिए हैं।

4.59.44

पुनस्तत्पदमालम्ब्य परमापद्विनिर्गतः। स्वस्थस्तिष्ठति शान्तात्मा निर्मन्दर इवार्णवः॥ ४४॥

punastatpadamālambya paramāpadvinirgataḥ | svasthaṣtiṣṭhati śāntātmā nirmandara ivārṇavaḥ || 44 ||

Then, resting once again on that same state, having come out of the greatest danger, the peaceful self stays at ease, like the ocean once Mount Mandara, the churning rod, is gone.

फिर, उसी अवस्था पर दोबारा टिककर, सबसे बड़े संकट से बाहर आकर, शांत आत्मा आराम से रहती है, जैसे समुद्र मंदराचल पर्वत के हट जाने पर शांत हो जाता है।

4.59.45

अवलोक्य जगच्चेष्टां मर्यादां विनियोज्य च। ब्रह्मा कमलपीठस्थः पुनः स्वात्मनि तिष्ठति॥ ४५॥

avalokya jagacceṣṭāṃ maryādāṃ viniyojya ca | brahmā kamalapīṭhasthaḥ punaḥ svātmani tiṣṭhati || 45 ||

Having watched over the workings of the world and set its proper limits, Brahma, seated on his lotus throne, rests once again within his own self.

दुनिया के कामकाज पर नज़र रखकर और उसकी सही सीमाएं तय करके, ब्रह्मा, अपने कमल के आसन पर बैठे हुए, फिर से अपने ही भीतर टिक जाते हैं।

4.59.46

कदाचित्केवलं सर्वसंकल्पपरिहीनया । यदृच्छयानुग्रहार्थं लोकक्रमवदास्थितः ॥ ४६ ॥

kadācitkevalaṃ sarvasaṃkalpaparihīnayā | yadṛcchayānugrahārthaṃ lokakramavadāsthitaḥ || 46 ||

Sometimes, purely through a spontaneous urge free of all deliberate intent, for the sake of grace to living beings, he takes his place as though simply following the world's ordinary way.

कभी-कभी, बिना किसी जानबूझकर की गई सोच के, सिर्फ एक अपने-आप उठे आवेग से, जीवों पर कृपा करने के लिए, वह दुनिया के आम तौर-तरीकों का पालन करते हुए जैसा दिखता है।

4.59.47

नार्जवं नास्य संत्यागो वपुषो नच संग्रहः । नाना न चेतनं नेह न स्थितिर्नास्थितिः स्थिता ॥ ४७ ॥

nārjavaṃ nāsya saṃtyāgo vapuṣo na ca saṃgrahaḥ | nānā na cetanaṃ neha na sthitirnāsthitiḥ sthitā || 47 ||

In that, there is no honesty, and there is no giving up of the body, and no taking one up either. Nothing there is many, nothing is aware, nothing is even present. It is not a settled state, and being unsettled does not hold true of it either.

इसमें न कोई ईमानदारी है, न शरीर को छोड़ना है, न किसी शरीर को अपनाना है। इसमें न कुछ अनेक है, न कुछ जागरूक है, न कुछ मौजूद है। न यह कोई टिकी हुई अवस्था है, और न ही इसे बिना टिकी हुई अवस्था कहना सही है।

4.59.48

सर्वभावसमारम्भः समः सर्वासु वृत्तिषु । परिपूर्णार्णवाकारो मुक्तशेषोऽवतिष्ठते ॥ ४८ ॥

sarvabhāvasamārambhaḥ samaḥ sarvāsu vṛttiṣu | paripūrṇārṇavākāro muktśeṣo'vatiṣṭhate || 48 ||

He is the one who sets every kind of existence in motion, yet stays the same through all activities, shaped like a full, brimming ocean. With everything else gone, only he remains, standing so.

वह हर तरह के अस्तित्व को शुरू करने वाला है, फिर भी हर गतिविधि में एक जैसा बना रहता है, जैसे लबालब भरा हुआ समुद्र। बाकी सब कुछ छूट जाने पर, बस वही बचता है, और इसी रूप में टिका रहता है।

4.59.49

कदाचित्केवलं सर्वसंकल्पपरिहीनया । यदृच्छयानुग्रहार्थं लोकानां प्रतिबुध्यते ॥ ४९ ॥

kadācitkevalaṃ sarvasaṃkalpaparihīnayā | yadṛcchayānugrahārtha lokānāṃ pratibudhyate || 49 ||

Sometimes, purely through a spontaneous urge free of all deliberate intent, for the sake of grace to the worlds, he wakes.

कभी-कभी, बिना किसी जानबूझकर की गई सोच के, सिर्फ एक अपने-आप उठे आवेग से, दुनियाओं पर कृपा करने के लिए, वह जाग उठता है।

4.59.50

एषाब्राह्मी स्थितिः पुण्या या मयोक्ता महामते । यातां विधिसुरानीकौ तामेतां सात्त्विकीमपि ॥ ५० ॥

eṣābrāhmī sthitiḥ puṇyā yā mayoktā mahāmate | yātāṃ vidhisurānīkau tāmetāṃ sāttvikīmapi || 50 ||

This, wise one, is the sacred state of Brahman that I have told you about, the very same state that belongs to Brahma the creator and the whole host of gods, and which is also the state of pure goodness.

हे बुद्धिमान, यही वह पवित्र ब्रह्म-अवस्था है जो मैंने तुम्हें बताई है, यही अवस्था सृष्टिकर्ता ब्रह्मा की भी है और देवताओं के पूरे समूह की भी, और यही शुद्ध सात्विकता की अवस्था भी है।

4.59.51

चित्सर्गोपरमाकाशे ब्रह्मणो यन्मनःफलम्। उदेति प्रथमः सैव ब्रह्मत्वं समवाश्नुते ॥ ५१ ॥

citsargoparamākāśe brahmaṇo yanmanaḥphalam | udeti prathamaḥ saiva brahmatvaṃ samavāśnute || 51 ||

In the space that opens up when the flow of consciousness comes to rest, whichever fruit of Brahma's mind rises up first, that alone reaches the rank of Brahma.

जब चेतना की धारा थम जाती है, तब जो खाली जगह बनती है, उसमें ब्रह्मा के मन का जो भी फल सबसे पहले उठता है, वही अकेला ब्रह्मा का पद पाता है।

4.59.52

सर्गे स्थितिं गते त्वन्या योदेति कल्पनापरा। सा व्योमानिलमाश्रित्य प्रविश्यौषधिपल्लवान्॥ ५२ ॥

sarge sthitiṃ gate tvanyā yodeti kalpanāparā | sā vyomānilamāśritya praviśyauṣadhipallavān || 52 ||

But once creation has settled down, another thought that rises up afterward takes shelter in the sky and the wind, and enters into plants and their young shoots.

लेकिन जब सृष्टि टिक जाती है, तो उसके बाद उठने वाला एक और विचार आकाश और हवा का सहारा लेकर पौधों और उनकी नई कोंपलों में समा जाता है।

4.59.53

काचित्सुरत्वमायाति काचिदायाति यक्षताम्। उदेति प्रथमं सैषा ब्रह्मत्वं समवाश्नुते ॥ ५३ ॥

kācitsuratvamāyāti kācidāyāti yakṣatām | udeti prathamaṃ saiṣā brahmatvaṃ samavāśnute || 53 ||

One of them becomes a god, another becomes a yaksha, but whichever rises up first reaches the rank of Brahma.

उनमें से कोई एक देवता बन जाता है, कोई यक्ष बन जाता है, लेकिन जो भी सबसे पहले उठता है, वही ब्रह्मा का पद पाता है।

4.59.54

या यत्सत्त्वं समन्वेति सा तदेवाशु जायते। जाता संसर्गवशतस्तस्मिन्नेव च जन्मनि। बध्यते मुच्यते वासौ स्वयमन्वारभेदतः ॥ ५४ ॥

yā yatsattvaṃ samanveti sā tadevāśu jāyate | jātā saṃsargavaśatastasminneva ca janmani | badhyate mucyate vāsau svayamanvārabhedataḥ || 54 ||

Whatever nature something takes up, it is at once born as that very thing. And once born, pulled along by its connections, within that same life it is either bound or set free, on its own, depending on how it takes up its actions.

कोई भी जिस स्वभाव को अपनाता है, वह फ़ौरन वैसा ही बन जाता है। और बनने के बाद, अपने जुड़ावों के खिंचाव से, उसी जन्म में वह अपने आप बंध जाता है या मुक्त हो जाता है, यह इस पर निर्भर करता है कि वह अपने काम किस तरह शुरू करता है।

4.59.55

इत्थं गतास्थितिरियं किल रामभद्र सृष्टिः स्फुटप्रकटसंकटकर्मलब्धा । आविर्भवेद्विविधवेगविहारभारसंरम्भगर्भविधृता कलनापदे सा ॥ ५५ ॥

itthaṃ gatāsthitiriyam kila rāmabhadra sṛṣṭiḥ sphuṭaprakaṭasaṅkaṭakarmalabdhā |
āvirbhavedvividhavegavihārabhārasaṃrambhagarbhavidhṛtā kalanāpade sā || 55 ||

So it is, gentle Rama, this creation has truly come to stand exactly like this, produced through actions that are plain and crowded together. It can appear again, carried in the womb of the built-up force of countless swift movements, within that restless state of endless activity.

ऐसा ही है, प्रिय राम, यह सृष्टि सच में बिल्कुल इसी तरह खड़ी हुई है, ऐसे कामों से बनी है जो साफ़ और घने-भरे हुए हैं। यह फिर से सामने आ सकती है, अनगिनत तेज़ हरकतों की जमा हुई ताकत की कोख में समाई हुई, उस बेचैन, लगातार चलती रहने वाली अवस्था में।

Chapter 60

4.60.1

अस्मिन्भगवति ब्रह्मंश्चपलं पदमाश्रितेपितामहे महाबाहो कृतसर्गव्यवस्थितौ ॥ १ ॥

asminbhagavati brahmaṃścapalaṃ padamāśritepitāmahe mahābāho kṛtasargavyavasthitau || 1 ||

Mighty-armed one, this venerable Grandfather Brahma is restless by nature, and yet he has fixed the order of creation firmly in place.

हे महाबाहु, यह पूजनीय ब्रह्मा जी स्वभाव से चंचल हैं, फिर भी उन्होंने सृष्टि का पूरा इंतज़ाम ठीक से जमा दिया है।

4.60.2

जगज्जीर्णारघट्टेऽस्मिन्वहति स्वव्यवस्थयाविप्रेतभूतघटया रज्वा जीवितृष्णया ॥ २ ॥

jagajjīrṇāraghaṭṭe'sminvahati svavyavasthayāvipretabhūtaghaṭayā rajvā jīvitatṛṣṇayā || 2 ||

This world is like an old, worn-out well-wheel. It keeps turning by its own working, on the rope of the thirst for life, carrying pots that are the living and the dead.

यह संसार एक पुराने, घिसे हुए रहट जैसा है। यह अपने ही नियम से घूमता रहता है, जीने की प्यास की रस्सी पर, और जीते और मरे हुए प्राणियों के घड़े ढोता है।

4.60.3

ब्रह्मोत्थेषु च भूतेषु विशत्सु भवपञ्जरमावर्तेष्वीश्वरव्योमवालमध्यविवर्तिषु ॥ ३ ॥

brahmottheṣu ca bhūteṣu viśatsu bhavapañjaramāvarteṣvīśvaravyomavālamadhyavivartiṣu || 3 ||

Among the beings born from Brahma, entering the cage of worldly life, caught in its whirling eddies, they go round and round inside a single strand of hair in the Lord's sky.

ब्रह्मा से जन्मे प्राणियों में से, जो संसार के पिंजरे में घुसते हैं, वे उसके भँवरों में फँसकर, भगवान के आकाश के एक बाल के भीतर ही घूमते रहते हैं।

4.60.4

मनःस्वन्येषु वातान्तलोलाहतकणेष्विवानारतं विनिर्यान्ति विशन्त्यन्ये तथाभितः ॥ ४ ॥

manaḥsvanyeṣu vātāntalolāhatakaṇeṣvivaanārataṃ viniryānti viśantyanye tathābhitaḥ || 4 ||

Minds go endlessly out of one another and into one another, on every side, like dust grains knocked about by gusts of wind.

मन एक-दूसरे से लगातार निकलते और एक-दूसरे में घुसते रहते हैं, चारों ओर, जैसे हवा के झोंकों से धूल के कण इधर-उधर उछलते हैं।

4.60.5

राम ब्रह्मणि जीवौघास्तरङ्गा इव वारिधौअनाद्यन्तपदोत्पन्नाः कलनापदमागताः ॥ ५ ॥

rāma brahmaṇi jīvaughāstaraṅgā iva vāridhauanādyantapadotpannāḥ kalanāpadamāgatāḥ || 5 ||

Rama, streams of living souls rise up in Brahman the way waves rise up in the ocean. They are born from a state that has no beginning and no end, and they come into a state of change and motion.

राम, जीवों की धाराएँ ब्रह्म में वैसे ही उठती हैं जैसे समुद्र में लहरें उठती हैं। वे उस अवस्था से जन्मती हैं जिसका न कोई आरंभ है न अंत, और फिर हलचल और बदलाव की अवस्था में आ जाती हैं।

4.60.6

भूताकाशं विशन्त्येते धूमश्रीरिव चाम्बुदम् । एकतां यान्ति जीवौघा ब्रह्मण्याकाशमारुतैः ॥ ६ ॥

bhūtākāśaṃ viśantyete dhūmaśrīriva cāmbudam| ekatāṃ yānti jīvaughā brahmaṇyākāśamārutaiḥ || 6 ||

They enter the space of living beings the way a mass of smoke enters a cloud. The streams of souls become one in Brahman, together with the sky and the winds.

वे प्राणियों के आकाश में वैसे ही घुसते हैं जैसे धुएँ का ढेर बादल में जा मिलता है। जीवों की धाराएँ आकाश और हवाओं के साथ ब्रह्म में एक हो जाती हैं।

4.60.7

दिनं तन्मात्रवातेन तत्प्राणात्मतया यथा । आक्रम्यन्ते प्रचण्डेन दैत्यौघेनामरा इव ॥ ७ ॥

dinaṃ tanmātravātena tatprāṇātmatayā yathā| ākramyante pracaṇḍena daityaughenāmarā iva || 7 ||

Just as the gods are overrun by a fierce army of demons, the day is overrun by the pure wind that becomes its very life breath.

जैसे देवता राक्षसों की भयंकर सेना से घिर जाते हैं, वैसे ही दिन उस शुद्ध हवा से घिर जाता है जो उसकी अपनी प्राण-शक्ति बन जाती है।

4.60.8

भूतप्राणानिलं तेन गन्धवाहेन तेन च । निविशन्ति शरीरेषु जीवा गच्छन्ति वीर्यताम् ॥ ८ ॥

bhūtaprāṇānilam tena gandhavāhena tena ca| niviśanti śarīreṣu jīvā gacchanti vīryatām || 8 ||

Through that life breath of beings, the very wind that carries scent, souls enter into bodies and gain their strength.

प्राणियों की उसी प्राण-वायु से, जो गंध भी ढोती है, जीव शरीरों में घुसते हैं और अपना बल पाते हैं।

4.60.9

ततो जगति जायन्ते भवन्ति प्राणिनोऽस्फुटाः । अन्या धूमादिमाजाता राम जीवपरम्परा ॥ ९ ॥

tato jagati jāyante bhavanti prāṇino'sphuṭāḥ| anyā dhūmādimājātā rāma jīvaparamparā || 9 ||

Then, in the world, living creatures are born, faint and unclear at first, Rama, and there is another line of souls that forms gradually, the way smoke gathers together.

फिर, राम, संसार में प्राणी जन्म लेते हैं, पहले धुँधले और अस्पष्ट, और जीवों की एक और कड़ी धीरे-धीरे बनती है, जैसे धुआँ इकट्ठा होकर बनता है।

4.60.10

तन्मात्रवति तावद्भिरशून्येऽम्बरकोटरे । उदेति यावद्भगवानिन्दुरुद्दाममण्डलः ॥ १० ॥

tanmātravati tāvadbhiraśūnye'mbarakoṭare| udeti yāvadbhagavānindururuddāmamaṇḍalaḥ || 10 ||

The hollow of the sky is never empty; it stays filled with just these fine elements, and this goes on until the great moon rises with its full, unrestrained disc.

आकाश का खोखलापन कभी खाली नहीं रहता, वह इन्हीं सूक्ष्म तत्वों से भरा रहता है, और यह तब तक चलता है जब तक महान चंद्रमा अपने पूरे, खुले मंडल के साथ उदय नहीं हो जाता।

4.60.11

क्षीराम्बुधिनिधौ लोलैः पाण्डुवद्रश्मिभिर्जगत्। ततस्तेष्वतिरम्येषु चन्द्ररश्मिषु संपतत्॥ ११॥

kṣīrāmbudhinidhau lolaiḥ pāṇḍuvadraśmibhirjagat| tatasteṣvatiramyeṣu candrarśmiṣu saṃpatat || 11 ||

The world turns pale like milk under the moon's shimmering rays, as if resting in an ocean of milk; then it falls upon those very lovely moonbeams.

चाँद की काँपती किरणों से संसार दूध जैसा सफ़ेद हो जाता है, मानो दूध के समुद्र में पड़ा हो; फिर वह उन्हीं सुंदर चाँदनी किरणों पर आ गिरता है।

4.60.12

करोति विहगी लोला वने प्रेष्यान्तरेष्विव। तेभ्योऽपि स्वरसेनैव यान्ति पीवरतामपि॥ १२॥

karoti vihagī lolā vane preṣyāntareṣviva| tebhyo'pi svarasenaiva yānti pīvaratāmapi || 12 ||

Then, landing on those lovely moonbeams, a restless bird flits about in the forest as if running between errands; and through those same rays, by their own sap alone, the fruits too grow plump.

फिर उन्हीं सुंदर चाँदनी किरणों पर उतरकर, एक बेचैन पक्षी जंगल में इधर-उधर उड़ता है मानो काम पर दौड़ रहा हो; और उन्हीं किरणों से, अपने ही रस के बल पर, फल भी भरपूर मोटे हो जाते हैं।

4.60.13

फलेषु तेषु बघ्नाति पदमिन्दुकरात्क्षता। जीवाली क्षीरपूर्णेषु मातुः स्तनभरेष्विव॥ १३॥

phaleṣu teṣu baghnāti padamindukarātkṣatā| jīvālī kṣīrapūrṇeṣu mātuḥ stanabhareṣviva || 13 ||

Touched by the moon's ray, the stream of life plants its foothold on those fruits, which are full of milky juice like a mother's full breasts.

चाँद की किरण से छुए जाकर, जीवन की धारा उन फलों पर अपना पैर जमा लेती है, जो माँ के भरे हुए स्तनों की तरह दूध से भरे होते हैं।

4.60.14

ताः फलावलयः पक्का भविष्यन्ति मरीचिभिः। तेष्वेव वीर्यमागत्य तिष्ठन्त्यप्राप्तबोधिताः॥ १४॥

tāḥ phalāvalayaḥ pakvā bhaviṣyanti marīcibhiḥ| teṣveva vīryamāgatya tiṣṭhantyaprāptabodhitāḥ || 14 ||

Those clusters of fruit will ripen through the moon's rays; the life force arrives and settles right inside them, not yet awake.

फलों के वे गुच्छे चाँद की किरणों से पककर तैयार होंगे; जीवन-शक्ति उन्हीं के भीतर आकर टिक जाती है, अभी तक जागी हुई नहीं।

4.60.15

प्रसुप्तवासनाजालजीवतागर्भपञ्जरम्। अधितिष्ठति बीजश्रीः सुप्तपत्रा यथा वटम्॥ १५॥

prasuptavāsanājālajīvatāgarbhapañjaram| adhitiṣṭhati bījaśrīḥ suptapatrā yathā vaṭam || 15 ||

The seed's hidden power sits over this cage of life, wrapped in a net of sleeping impressions, the way a whole banyan tree with its sleeping leaves lies folded inside its seed.

बीज की छिपी हुई शक्ति जीवन के इस पिंजरे पर बैठी रहती है, सोए हुए संस्कारों के जाल में लिपटी हुई, जैसे पूरा बरगद का पेड़ अपनी सोई हुई पत्तियों के साथ अपने बीज के भीतर समाया रहता है।

4.60.16

यथा काष्ठे स्थितश्चाग्निर्यथा मृदि घटाः स्थिताः। अनेकक्रमयोगेन परागत्य महेश्वरात्॥ १६॥

yathā kāṣṭhe sthitaścāgniryathā mṛdi ghaṭāḥ sthitāḥ | anekakramayogena parāgatya maheśvarāt || 16 ||

The way fire lies hidden in wood, the way pots lie hidden in clay, so too souls come from the Great Lord through many stages, one after another.

जैसे आग लकड़ी में छिपी रहती है, जैसे घड़े मिट्टी में छिपे रहते हैं, वैसे ही जीव महान ईश्वर से अनेक चरणों में, एक के बाद एक, आते हैं।

4.60.17

अदृष्टान्यशरीरश्रीः क्रमते यो न चोदति । स हि सत्येव जातिः स्यादुदारव्यवहारवान् ॥ १७ ॥

adṛṣṭānyaśarīraśrīḥ kramate yo na codati | sa hi satyeva jātiḥ syādudāravyavahāravān || 17 ||

One who carries the promise of another body not yet seen, and moves forward without forcing it, is truly the well-born one, of noble and generous conduct.

जो व्यक्ति एक और, अभी न दिखने वाले शरीर की संभावना अपने भीतर लिए हुए है, और उसे जबरदस्ती किए बिना आगे बढ़ता है, वही सच में सुजात है, उदार और भला आचरण रखने वाला।

4.60.18

तेनैव मोक्षभागी चेज्जन्मना स तु सात्त्विकः । अथैतां योनिमासाद्य कृत्यां जन्मपरम्पराम् ॥ १८ ॥

tenaiva mokṣabhāgī cejjjanmanā sa tu sāttvikaḥ | athaietāṃ yonimāsādya kṛtyāṃ janmaparamparām || 18 ||

If, through that very birth, he becomes fit for freedom, then he is a person of pure nature. Now, having reached this origin, there remains a line of births still to be completed.

अगर उसी जन्म से वह मुक्ति के लायक बन जाता है, तो वह शुद्ध स्वभाव वाला है। अब, इस उत्पत्ति तक पहुँचकर, अभी जन्मों की एक कड़ी पूरी होनी बाकी रहती है।

4.60.19

रक्षार्थं प्राप्तजन्मा चेत्तमोराजससात्त्विकः । पाश्चात्यजन्मना पुंसो राम वक्ष्यामि चाधुना ॥ १९ ॥

rakṣārthaṃ prāptajanmā cet tamo rājasasāttvikaḥ | pāścātyajanmanā puṃso rāma vakṣyāmi cādhunā || 19 ||

If someone is born for the sake of protection, he may be dull, passionate, or pure by nature. Now, Rama, I will tell you about the births that come after, for such a person.

अगर कोई रक्षा के लिए जन्म लेता है, तो वह स्वभाव से जड़, जोशीला या शुद्ध हो सकता है। अब, राम, मैं तुम्हें बताऊँगा कि ऐसे व्यक्ति के आगे के जन्म कैसे होते हैं।

4.60.20

प्राधान्येन यथाऽऽयातः संसारमिति सात्त्विकः । स कदाचिन्न कश्चिच्च संभवत्यनघाकृते ॥ २० ॥

prādhānyena yathā''yātaḥ saṃsāramiti sāttvikaḥ | sa kadācinnna kaścicca saṃbhavatyanaṅhākṛte || 20 ||

One who has come into this world of rebirth mainly ruled by purity is not just some ordinary person, faultless one, in the form he now holds.

जो व्यक्ति इस जन्म-मरण के संसार में मुख्य रूप से शुद्धता के गुण से आया है, वह अपने इस रूप में कोई साधारण व्यक्ति नहीं है, हे निष्पाप।

4.60.21

संभवन्तीह पुरुषा राम राजससात्त्विकाःप्रविचार्य समायाता मन्तव्यं चेह तद्धिया ॥ २१ ॥

saṃbhavantīha puruṣā rāma rājasasāttvikāḥpravicārya samāyātā mantavyaṃ ceha taddhiyā || 21 ||

In this world, Rama, men are born who are a mix of the passionate and the pure. They come here after real thought, and this too should be understood here with that same understanding.

राम, इस संसार में ऐसे पुरुष जन्म लेते हैं जिनमें जोश और शुद्धता दोनों मिले होते हैं। वे यहाँ सोच-विचार के बाद आते हैं, और इसे भी उसी समझ से समझना चाहिए।

4.60.22

प्राधान्येन समायाता ये यदा परमात्मनःदुर्लभाः पुरुषा राम ते महागुणशालिनः ॥ २२ ॥

prādhānyena samāyātā ye yadā paramātmanaḥdurlabhāḥ puruṣā rāma te mahāguṇaśālinaḥ || 22 ||

Those who come, Rama, shaped mainly by the Supreme Self, are rare people, rich in great and good qualities.

राम, जो लोग मुख्य रूप से परम आत्मा से ढलकर आते हैं, वे दुर्लभ होते हैं, बड़े और अच्छे गुणों से भरपूर।

4.60.23

ये चान्ये विविधा मूढा मूकास्तामसजातयःतेषां स्थावरतुल्यानां किंच राम विचार्यते ॥ २३ ॥

ye cānye vividhā mūḍhā mūkāstāmasajātayaḥteṣāṃ sthāvaratulyānāṃ kiṃca rāma vicāryate || 23 ||

And the rest, of many kinds, the confused, the silent, those born of dullness, are just like unmoving things such as plants and stones. What is there to even discuss about them, Rama?

और बाकी लोग, कई तरह के, भ्रमित, चुप, जड़ता से जन्मे, पेड़-पौधों और पत्थरों जैसी अचल चीज़ों के बराबर हैं। राम, उनके बारे में सोचने को है ही क्या?

4.60.24

कतिपया न गता भवभावनां नरसुराः प्रकृतक्रमजन्मन्मनीव प्रविचारणयोग्यतामनुगतो ननु राजससात्त्विकः ॥ २४ ॥

katipayā na gatā bhavabhāvanāṃ narasurāḥ prakṛtakramajanmaniahamiva pravicāraṇayogyatāmanugato nanu rājasasāttvikaḥ || 24 ||

Only a few men and gods have not accepted the ordinary notion of worldly life. In the natural course of birth, does not simply having the fitness for reflection make a person the passionate-and-pure kind?

बहुत कम मनुष्य और देवता ही ऐसे हैं जिन्होंने संसार के आम खयाल को नहीं माना। जन्म के स्वाभाविक क्रम में, क्या केवल सोच-विचार की योग्यता होना ही किसी व्यक्ति को जोश और शुद्धता के मेल वाला नहीं बना देता?

4.60.25

स्थितस्य ते महापदाविचार्ययैवमायताविचार्य त्वमञ्जसा तदद्य चेह न द्वयम्॥ २५ ॥

sthitasya te mahāpadāvicāryayaivamāyatāvicāraya tvamañjasā tadadya ceha na dvayam || 25 ||

You are established in a great state reached through reflection alone. Consider this directly for yourself: today, here, there is no twoness.

तुम केवल विचार करने से पाई गई एक महान अवस्था में टिके हो। इसे खुद सीधे समझो: आज, यहाँ, कोई दूसरापन नहीं है।

Chapter 61

4.61.1

श्रीवसिष्ठ उवाच । ये हि राजससात्त्विक्या जाता भुवि महागुणाः । ते नित्यमेव मुदिताः प्रकाशाः ख इवेन्दवः ॥ ॥ १ ॥

śrīvasiṣṭha uvāca | ye hi rājasasāttvikyā jātā bhuvi mahāguṇāḥ | te nityameva muditāḥ prakāśāḥ kha ivendavaḥ || 1 ||

Vasishtha said: people born on this earth with great qualities, out of a nature that blends energy and clarity, are always joyful and shining, like moons in the sky.

वसिष्ठ बोले, इस धरती पर जो लोग ऊर्जा और शुद्धता के मेल वाले स्वभाव से बड़े गुणों के साथ जन्म लेते हैं, वे हमेशा खुश और चमकते रहते हैं, जैसे आकाश में चाँद।

4.61.2

न खेदमभिगच्छन्ति व्योमभागो मलं यथा । नापदा म्लानिमायान्ति निशि हेमाम्बुजं यथा ॥ ॥ २ ॥

na khedamabhigacchanti vyomabhāgo malaṃ yathā | nāpadā mlānimāyānti niśi hemāmbujaṃ yathā || 2 ||

They do not become sad, just as the sky never gathers any dirt. Troubles do not make them fade, just as night does not make a golden lotus wither.

वे कभी दुखी नहीं होते, जैसे आकाश पर कभी मैल नहीं चढ़ती। मुसीबतें उन्हें मुरझाती नहीं, जैसे रात सोने के कमल को नहीं मुरझाती।

4.61.3

नेहन्ते प्रकृतादन्यत्ते नान्यत्स्थावरो यथा । रमन्ते स्वसदाचारैः स्वार्थेभ्यः पादपा यथा ॥ ॥ ३ ॥

nehante prakṛtādanyatte nānyatsthāvaro yathā | ramante svasadācāraiḥ svārthebhyaḥ pādapā yathā || 3 ||

They do not reach for anything beyond their own nature, just as a fixed thing does not move toward anything else. They find their joy in their own good conduct, just as trees are content with only what is their own.

वे अपने स्वभाव से हटकर कुछ नहीं चाहते, जैसे कोई अटल चीज़ किसी और चीज़ की ओर नहीं बढ़ती। वे अपने अच्छे आचरण में ही आनंद पाते हैं, जैसे पेड़ केवल अपनी ही चीज़ों से संतुष्ट रहते हैं।

4.61.4

नित्यमापूर्यतां याति सुधायामिन्दुसुन्दरी । राम राजससत्त्वस्य मोक्षमायात्यसौ यथा ॥ ॥ ४ ॥

nityamāpūryatāṃ yāti sudhāyāmindusundarī | rāma rājasasattvasya mokṣamāyātyasau yathā || 4 ||

Rama, just as the moon, lovely with nectar, always moves toward becoming full, so one whose nature blends energy and clarity always moves toward freedom.

राम, जैसे अमृत से भरा सुंदर चाँद हमेशा पूर्णता की ओर बढ़ता है, वैसे ही ऊर्जा और शुद्धता के स्वभाव वाला व्यक्ति हमेशा मुक्ति की ओर बढ़ता है।

4.61.5

आपद्यपि न मुञ्चन्ति शशिवच्छीततामिव । प्रकृत्यैव विराजन्ते मैत्र्यादिगुणकान्तया ॥ ॥ ५ ॥

āpadyapi na muñcanti śaśivacchītatāmiva | prakṛtyaiva virājante maitryādiguṇakāntayā || 5 ||

Even in misfortune they do not lose their nature, just as the moon does not lose its coolness. By their own nature they shine, beautiful with qualities like kindness.

मुसीबत में भी वे अपना स्वभाव नहीं छोड़ते, जैसे चाँद अपनी ठंडक नहीं छोड़ता। वे अपने स्वभाव से ही चमकते हैं, दया जैसे गुणों की सुंदरता से भरे हुए।

4.61.6

नवस्तबकभाविन्या लतयेव वनद्रुमाः । समाः समरसाः सौम्याः सततं साधुसाधवः ॥ ६ ॥

navastabakabhāvinyā latayeva vanadrumāḥ | samāḥ samarasāḥ saumyāḥ satataṃ sādhusādhavaḥ || 6 ||

As forest trees are covered by a creeper about to burst into fresh clusters of flowers, the truly good are always equal to everyone, even in temper, and gentle.

जैसे जंगल के पेड़ नई कोंपलों वाली बेल से ढक जाते हैं, वैसे ही सच्चे भले लोग हमेशा सबके साथ समान, शांत स्वभाव के और सौम्य रहते हैं।

4.61.7

अब्धिवद्भुतमर्यादा भवन्ति भवता समाः । अतस्तेषां महाबाहो पदमापदवासनम् ॥ ७ ॥

abdhivadbhutamaryādā bhavanti bhavatā samāḥ | atasteṣāṃ mahābāho padamāpadavāsanam || 7 ||

Like the ocean, they have a wonderful limit they never cross, and they stay the same in every condition. So, mighty-armed one, misfortune leaves no mark on their state.

समुद्र की तरह उनकी एक अद्भुत सीमा होती है जिसे वे कभी नहीं लांघते, और वे हर हाल में एक जैसे रहते हैं। इसलिए, हे महाबाहु, मुसीबत उनकी स्थिति पर कोई निशान नहीं छोड़ती।

4.61.8

सततं तत्तु गन्तव्यं गन्तव्यं नापदर्णवे । तथा तथेह जगति विहर्तव्यमखेदिना ॥ ८ ॥

satataṃ tattu gantavyaṃ gantavyaṃ nāpadarṇave | tathā tatheha jagati vihartavyamakhedinā || 8 ||

That path alone should always be followed, never the path into the ocean of misfortune. In just this way, one free of sorrow should live and act in this world.

उसी राह पर हमेशा चलना चाहिए, मुसीबत के समुद्र में जाने वाली राह पर कभी नहीं। इसी तरह, इस दुनिया में बिना दुख के व्यक्ति को जीना और काम करना चाहिए।

4.61.9

आत्मोदयाश्च वर्धन्ते यथाऽराजससात्त्विकाः । अचिन्त्यगत्या सच्छास्त्रं विचार्य च पुनःपुनः ॥ ९ ॥

ātmodyāśca vardhante yathā'rājasasāttvikāḥ | acintyagatyā sacchāstraṃ vicārya ca punaḥpunaḥ || 9 ||

Rama, their inner growth keeps increasing, as it does for those who have gone beyond energy and clarity, moving by a way that thought cannot reach, and reflecting again and again on true scripture.

राम, उनकी भीतरी उन्नति बढ़ती ही रहती है, जैसे उनकी बढ़ती है जो ऊर्जा और शुद्धता से भी आगे निकल चुके हैं, एक ऐसे रास्ते से जिसे सोच नहीं पकड़ सकती, और सच्चे शास्त्र पर बार बार विचार करने से।

4.61.10

अनित्यता स्वमनसा विविधैवाशु भावतः । आदावन्ते च यां नित्यं क्रिया त्रैलोक्यवर्तिनीम् ॥ १० ॥

anityatā svamanasā vividhaivāśu bhāvataḥ | ādāvante ca yāṃ nityaṃ kriyā trailokyavartinīm || 10 ||

One should quickly see, with one's own mind, in many ways, the plain truth of impermanence, that constant process, present at the start and at the end, which runs through all three worlds.

व्यक्ति को अपने ही मन से, जल्दी और कई तरह से, अनित्यता यानी हर चीज़ के बदलते-मिटते रहने की सच्चाई देखनी चाहिए, वह लगातार चलने वाली प्रक्रिया जो शुरू से अंत तक तीनों लोकों में चलती रहती है।

4.61.11

पदार्थानापदेवाशु भावयेन्नेतरत्सुधीः । असम्यग्दर्शनं त्यक्त्वा व्यर्थमज्ञानसंततिम् ॥ ११ ॥

padārthānāpadevāśu bhāvayennetaratsudhīḥ | asamyagdarśanaṃ tyaktvā vyarthamajñānasantatim || 11 ||

The wise should quickly see all things as touched by loss, and think of nothing else, giving up wrong seeing and the useless chain of ignorance.

बुद्धिमान व्यक्ति को जल्दी से हर चीज़ को नाश होने वाली समझना चाहिए, और इसके अलावा कुछ और नहीं सोचना चाहिए, गलत समझ और बेकार की अज्ञानता की लंबी कड़ी को छोड़कर।

4.61.12

स्मर्तव्यं सम्यगेवेदं ज्ञानमर्थमनन्तकम् । कोऽहं कथमिदं जातं संसाराडम्बरं विभो ॥ १२ ॥

smartavyaṃ samyagevedaṃ jñānamarthamanantakam | ko'haṃ kathamidaṃ jātaṃ saṃsārāḍambaraṃ vibho || 12 ||

One should always keep this endless truth clearly in mind: who am I, how did this whole show of the world come about, o mighty lord.

इस अनंत सच्चाई को हमेशा ठीक से याद रखना चाहिए, मैं कौन हूँ, यह संसार का सारा तमाशा कैसे पैदा हुआ, हे शक्तिशाली प्रभु।

4.61.13

प्रविचार्य प्रयत्नेन प्राज्ञेन सह साधुभिः । नच कर्मसु मङ्क्तव्यं नानर्थेन सहावसेत् ॥ १३ ॥

pravicārya prayatnena prājñena saha sādhubhiḥ | naca karmasu maṅktavyaṃ nānarthena sahāvaset || 13 ||

Think this over with effort, together with the wise and the good. Do not sink into mere action, and do not keep company with what brings harm.

इस पर मेहनत से विचार करो, बुद्धिमान और भले लोगों के साथ मिलकर। सिर्फ काम-धंधे में मत डूबो, और नुकसान पहुँचाने वाली चीज़ों के साथ मत रहो।

4.61.14

द्रष्टव्यः सर्वविच्छेदः संसारानुगतः सदा । साधुरेवानुगन्तव्यो मयूरेणाम्बुदो यथा ॥ १४ ॥

draṣṭavyaḥ sarvavicchedaḥ saṃsārānugataḥ sadā | sādhurevānugantavyo mayūreṇāmbudo yathā || 14 ||

One should see how everything that follows this world comes to an end. Only the good should be followed, just as a peacock follows a rain cloud.

यह देखना चाहिए कि इस संसार के साथ चलने वाली हर चीज़ का अंत हो जाता है। सिर्फ भले लोगों का साथ पकड़ना चाहिए, जैसे मोर बादल के पीछे पीछे चलता है।

4.61.15

अहंकारस्य देहस्य संसारस्याप्लवस्य च । स्वविचारमलंकृत्य सत्यमेवावलोकयेत् ॥ १५ ॥

ahaṃkārasya dehasya saṃsārasyāplavasya ca | svavicāramalaṃkṛtya satyamevāvalokayet || 15 ||

Having carefully thought through the ego, the body, and this world, which is like a flood no one can cross, one should look only at the truth.

अहंकार, शरीर और इस संसार पर, जो एक ऐसी बाढ़ है जिसे कोई पार नहीं कर सकता, अच्छी तरह विचार करके, सिर्फ सच्चाई की ओर देखना चाहिए।

4.61.16

शरीरमस्थिरमपि संत्यक्त्वा घनशोभनम् । वीतमुक्तावलीतन्तुं चिन्मात्रमवलोकयेत् ॥ १६ ॥

śarīramasthiramapi saṃtyaktvā ghaṇaśobhanam | vītamuktāvalītantuṃ cinmātramavalokayet || 16 ||

Give up this body, even though it looks solid and lovely, for it does not last. Look instead only at pure consciousness, which has no parts strung together like beads on a thread.

इस शरीर को छोड़ दो, भले ही यह ठोस और सुंदर दिखे, क्योंकि यह टिकता नहीं। इसकी जगह सिर्फ शुद्ध चेतना को देखो, जिसके हिस्से धागे में पिरोए मोतियों की तरह जुड़े हुए नहीं हैं।

4.61.17

तस्मिन्पदे नित्यतते सर्वगे सर्वभाविते । शिवे सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा यथा ॥ १७ ॥

tasminpade nityatate sarvage sarvabhāvite | śive sarvamidaṃ protaṃ sūtre maṇigaṇā yathā || 17 ||

In that one reality, which lasts forever, spreads everywhere, is present in everything, and is at peace, all this is strung together, the way beads are strung on one thread.

उस एक सच्चाई में, जो हमेशा रहती है, हर जगह फैली है, हर चीज़ में मौजूद है और शांत है, यह सब कुछ इस तरह पिरोया हुआ है जैसे धागे में मोती पिरोए जाते हैं।

4.61.18

यैव चिद्भुवनाभोगे भूषणे व्योम्नि भास्करे । धराविवरकोशस्थे सैव चित्कीटकोदरे ॥ १८ ॥

yaivā cidbhuvanābhoge bhūṣaṇe vyomni bhāskare | dharāvivarakośasthē saivā citkīṭakōdarē || 18 ||

The same consciousness that fills the whole world, that shines in an ornament, in the sky, in the sun, and that lives in a hole in the ground, that very consciousness is also inside the belly of an insect.

जो चेतना पूरी दुनिया में भरी है, जो गहने में, आकाश में, सूरज में चमकती है, और जो ज़मीन के बिल में रहती है, वही चेतना कीड़े के पेट के अंदर भी है।

4.61.19

कुम्भव्योम्नां न भेदोऽस्ति यथेह परमार्थतः । चितौ शरीरसंस्थानां न भेदोऽस्ति तथानघ ॥ १९ ॥

kumbhavyomnāṃ na bhedo'sti yatheha paramārthataḥ | citau śarīrasaṃsthānāṃ na bhedo'sti tathānagha || 19 ||

Just as, in truth, there is no real difference between the space inside a pot and the space of the sky, so too, sinless one, there is no difference in the consciousness of those who live in different bodies.

जैसे सच में घड़े के अंदर की जगह और आकाश की जगह में कोई फर्क नहीं होता, वैसे ही, हे निष्पाप, अलग अलग शरीरों में रहने वालों की चेतना में कोई फर्क नहीं होता।

4.61.20

सर्वेषामेव भूतानां तिक्तकट्वादिभेदिनाम् । एकत्वादनुभूतेर्हि कुतश्चिन्मात्रभिन्नता ॥ २० ॥

sarveṣāmeva bhūtānāṃ tiktakaṭvādibhedinām | ekatvādanubhūterhi kutaścinmātrabhinnatā || 20 ||

All beings differ from one another, some bitter, some sharp, and so on, but since awareness itself is one, how could pure consciousness ever differ from one being to another?

सभी प्राणी एक दूसरे से अलग होते हैं, कोई कड़वा, कोई तीखा, वगैरह, लेकिन चूँकि चेतना खुद एक ही है, शुद्ध चेतना एक प्राणी से दूसरे में अलग कैसे हो सकती है?

4.61.21

एकस्मिन्नेव सततं स्थिते सन्मात्रवस्तुनि । जातोऽयमयमुन्नष्ट इति तेषां तवेह धीः ॥ २१ ॥

ekasminneva satataṃ sthite sanmātravastuni | jāto'yamayamunnaṣṭa iti teṣāṃ taveha dhīḥ || 21 ||

Only one thing always stays the same, pure existence itself. The thought this one was born and this one has died is only an idea in your mind and theirs.

सिर्फ एक चीज़ हमेशा एक जैसी बनी रहती है, शुद्ध अस्तित्व। यह खयाल कि यह पैदा हुआ और यह मर गया, बस तुम्हारे और उनके मन का खयाल है।

4.61.22

नच तन्नाम वस्त्वस्ति यद्भूत्वा संप्रलीयते । आभासमात्रमेवेदं न सन्नासच्च राघव ॥ २२ ॥

naca tannāma vastvasti yadbhūtvā saṃpralīyate | ābhāsamātramevedaṃ na sannāsaccarāghava || 22 ||

There is really no such thing that comes into being and then dissolves away. Raghava, all this is only appearance, it is neither fully real nor fully unreal.

सच में ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो पैदा होकर मिट जाए। हे राघव, यह सब सिर्फ एक दिखावा है, यह पूरी तरह सच भी नहीं है और पूरी तरह झूठ भी नहीं है।

4.61.23

उद्भूतेनाप्रशान्तेन चेतसा सपदि स्थितम् । नेह मोहान्त आमोक्षान्नेदं यत्तदवस्तु च ॥ २३ ॥

udbhūtenāprasaśāntenacetasā sapadi sthitam | neha mohānta āmokṣānnedam yattadavastu ca || 23 ||

Whatever the restless, unquiet mind suddenly takes to be real is not truly real. Until a person is free, delusion here does not end.

बेचैन, अशांत मन जिसे भी अचानक सच मान लेता है, वह सच में सच नहीं होता। जब तक इंसान मुक्त नहीं होता, यहाँ भ्रम खत्म नहीं होता।

4.61.24

किं किलासति रामेह मोहजाले समुज्झति । यत्किंचित्सङ्गसङ्गत्या विमोहे कारणं हि तत् ॥ २४ ॥

kiṃ kilāsati rāmeha mohajāle samujjhati | yatkiṃcitsaṅgasaṅgatya vimoha kāraṇaṃ hi tat || 24 ||

Rama, what is there really to hold on to here, in this unreal net of confusion? Whatever it is that we cling to through attachment, that alone is the cause of this confusion.

राम, इस झूठे भ्रम के जाल में यहाँ पकड़ने लायक सच में क्या है? जिस किसी चीज़ से हम मोह के कारण जुड़े रहते हैं, वही इस भ्रम का कारण है।

4.61.25

असति जगति किं किलेह मोदः सति च किमङ्ग विमोहकारणं तत् । जननमरणसंस्थितिष्वतस्त्वं भव खमिवातिसमः सदोपशान्तः ॥ २५ ॥

asati jagati kiṃ kileha modaḥ sati ca kimanga vimohakāraṇaṃ tat | jananamaraṇasaṃsthitiṣvatastvaṃ bhava khamivātisamaḥ sadopaśāntaḥ || 25 ||

If this world does not really exist, what joy is there in it? And if it does exist, dear one, what use is there in being confused about it? So, through birth, death, and every state in between, be like the sky, completely even, always at peace.

अगर यह दुनिया सच में है ही नहीं, तो इसमें खुशी किस बात की? और अगर यह है भी, तो प्रिय, इसके बारे में भ्रमित होने से क्या फायदा? इसलिए, जन्म, मृत्यु और इन सबके बीच की हर हालत में, आकाश जैसे बनो, बिलकुल एक समान, हमेशा शांत।

Chapter 62

4.62.1

धीरो विचारवान्साक्षादादावेव महाधियाशास्त्रेण विदुषा शास्त्रं सुजनेन विचारयेत् ॥ १ ॥

dhīro vicāravānsākṣādādāveva mahādhiyāśāstreṇa viduṣā śāstraṃ sujanena vicārayet || 1 ||

A steady and thoughtful man should examine the scriptures directly, right from the start, with a great mind, since he is learned and good, by means of the scriptures themselves.

एक शांत और सोच-समझ रखने वाला व्यक्ति शुरू से ही शास्त्रों को सीधे समझे, अपनी बड़ी बुद्धि से, क्योंकि वह विद्वान और भला इंसान है, और यह जांच शास्त्रों के सहारे ही करे।

4.62.2

सुजनेन वितृण्णेन विदुषा महता सहप्रविचार्य महायोगात्पदमासाद्यते परम् ॥ २ ॥

sujanema vitṛṇṇena viduṣā mahatā sahapravicārya mahāyogātpadamāsādyate param || 2 ||

By discussing deeply together with a good person who is free from craving, learned and great, one reaches the highest state through great yoga.

एक भले, इच्छाओं से मुक्त, विद्वान और महान व्यक्ति के साथ गहराई से चर्चा करके, इंसान बड़े योग के जरिए सबसे ऊंची अवस्था तक पहुंचता है।

4.62.3

शास्त्रार्थसुजनासङ्गवैराग्याभ्याससत्कृतःपुरुषस्त्वमिवाभाति निजविज्ञानभाजनम् ॥ ३ ॥

śāstrārthasujanāsaṅgavairāgyābhyāsasatkṛtaḥpuruṣastvamivābhāti nijavijñānabhājanam || 3 ||

A man perfected by the meaning of the scriptures, by the company of good people, by detachment and by practice, shines like you, holding his own true knowledge.

शास्त्रों के अर्थ से, भले लोगों की संगति से, वैराग्य से और अभ्यास से निखरा हुआ इंसान तुम्हारी तरह चमकता है, अपने ही सच्चे ज्ञान को थामे हुए।

4.62.4

त्वमुदारनिजाचारो धीरो गुणगणाकरःअधितिष्ठसि निर्दुःखं वीतसर्गमनोमलः ॥ ४ ॥

tvamudāranijācāro dhīro guṇagaṇākaraḥadhitiṣṭhasi nirduḥkhaṃ vītasargamanomalaḥ || 4 ||

You, noble in your own conduct, steady, a mine of every virtue, live free of sorrow, your mind washed clean of the stain of this world.

तुम अपने आचरण में उदार हो, स्थिर हो, हर गुण की खान हो; तुम बिना दुख के रहते हो, तुम्हारा मन इस संसार के दाग से धुला हुआ है।

4.62.5

नूनमुत्सर्जिताभ्रेण शरद्व्योम्ना समो भवान्भव भावनया मुक्तो युक्त उत्तमसंविदा ॥ ५ ॥

nūnamutsarjitābhreṇa śaradvyomnā samo bhavānbhava bhāvanayā mukto yukta uttamasaṃvidā || 5 ||

You are surely like the autumn sky once its clouds have cleared, free from the very thought of ordinary existence, and joined to the highest awareness.

तुम सचमुच उस शरद के आकाश जैसे हो जिसके बादल छंट चुके हैं; तुम सांसारिक होने के खयाल से भी मुक्त हो, और सबसे ऊंचे ज्ञान से जुड़े हुए हो।

4.62.6

चिन्तामुक्तकलावत्या मुक्तकल्पनया स्थितम् । मनो मुक्तविभागं च मुक्तमेव न संशयः ॥ ६ ॥

cintāmuktakalāvatyā muktakalpanayā sthitam | mano muktavibhāgaṃ ca muktameva na saṃśayaḥ || 6 ||

The mind, resting in an awareness free of worry and free of imagination, is itself free from all division, it is simply free, there is no doubt about it.

जो मन ऐसी समझ में टिका है जो चिंता से मुक्त है और कल्पना से भी मुक्त है, वह हर बंटवारे से भी मुक्त है; वह बस मुक्त ही है, इसमें कोई शक नहीं।

4.62.7

तवोत्तमानुभावस्य त इदानीं नरा भुवि । चेष्टामनुसरिष्यन्ति रागद्वेषविहीनया ॥ ७ ॥

tavottamānubhāvasya ta idānīṃ narā bhuvi | ceṣṭāmanusariṣyanti rāgadveṣavihīnayā || 7 ||

You have reached the highest realization, from now on, people on this earth will follow your way of acting, a way free from liking and hating.

तुमने सबसे ऊंचा अनुभव पा लिया है; अब से इस धरती के लोग तुम्हारे बर्ताव के तरीके का ही अनुसरण करेंगे, ऐसा तरीका जो पसंद और नापसंद से मुक्त है।

4.62.8

बहिर्लोकोचिताचारा विहरिष्यन्ति वै जनाः । भवार्णवं तरिष्यन्ति धीमन्तः पोतकान्विताः ॥ ८ ॥

bahirlokocitācārā viharişyanti vai janāḥ | bhavārṇavaṃ tariṣyanti dhīmantaḥ potakānvitāḥ || 8 ||

People will go about their lives, acting outwardly as the world expects, and the wise among them, having found a boat, will cross the ocean of this existence.

लोग अपनी जिंदगी जिएंगे, बाहर से वैसा ही बर्ताव करेंगे जैसा संसार में होता है, और उनमें से जो बुद्धिमान हैं, नाव पाकर, इस संसार-सागर को पार कर जाएंगे।

4.62.9

तव तुल्यमतिर्यः स्यात्सुजनः समदर्शनः । योग्योऽसौ ज्ञानदृष्टीनां मयोक्तानां सुदृष्टिमान् ॥ ९ ॥

tava tulyamatiryaḥ syātsujanaḥ samadarśanaḥ | yogyo'sau jñānadṛṣṭīnāṃ mayoktānāṃ sudṛṣṭimān || 9 ||

Any good person whose mind becomes equal to yours, who sees everything with the same eye, is fit for the insights of knowledge that I have spoken, he truly sees clearly.

जो भी भला इंसान अपने मन को तुम्हारे जैसा बना ले, जो हर चीज को एक ही नजर से देखे, वही उस ज्ञान की समझ के काबिल है जो मैंने बताया है, वही सच में साफ देख पाता है।

4.62.10

यावद्देहं धिया तिष्ठ रागद्वेषविहीनया । बहिर्लोकोचिताचारस्त्वन्तस्त्यक्ताखिलैषणः ॥ १० ॥

yāvaddehaṃ dhiyā tiṣṭha rāgadveṣavihīnayā | bahirlokocitācārastvantastyaktākhilaiṣaṇaḥ || 10 ||

As long as your body lasts, stay with a mind free from liking and hating. Outwardly act as the world expects, but inside, give up every desire.

जब तक तुम्हारा शरीर है, तब तक ऐसा मन रखो जो पसंद और नापसंद से मुक्त हो। बाहर से वैसा बर्ताव करो जैसा संसार में होता है, पर भीतर से हर इच्छा छोड़ दो।

4.62.11

परां शान्तिमुपागच्छ यथान्ये गुणशालिनः। अविचार्यास्त एवेह गोमायुशिशुधर्मकाः॥ ११॥

parāṃ śāntimupāgaccha yathānye guṇaśālinaḥ| avicāryāsta eveha gomāyuśiśudharmakāḥ||11||

Reach the highest peace, as other men rich in virtue do. Those who do not reflect are here in this world no better than jackal cubs.

दूसरे गुणवान लोगों की तरह तुम भी सबसे ऊंची शांति को पा लो। जो लोग सोचते-विचारते नहीं, वे इस दुनिया में सियार के बच्चों जैसे ही हैं।

4.62.12

ये स्वभावा महासत्या नृणां सात्त्विकजन्मनाम्। तान्भजन्पुरुषो याति पाश्चात्योदारजन्मताम्॥ १२॥

ye svabhāvā mahāsatya nṛṇāṃ sāttvikajanmanām| tānbhajanpuruṣo yāti pāścātyodārajanmatām||12||

Whatever true and great qualities belong to people born with a pure, good nature, a person who takes up those qualities will later be born into a noble life.

जो सच्चे और बड़े गुण उन लोगों में होते हैं जो अच्छे और शुद्ध स्वभाव के साथ पैदा होते हैं, जो इंसान उन गुणों को अपना ले, वह आगे चलकर एक अच्छे जीवन में जन्म लेता है।

4.62.13

यानेव सेवते जन्तुरिह जातिगुणान्सदा। अथान्यजातिजातोऽपि जातिं भजति तां क्षणात्॥ १३॥

yāneva sevate janturih jātiguṇānsadā| athānyajātijāto'pi jātiṃ bhajati tāṃ kṣaṇāt||13||

Whatever qualities of a certain kind a creature keeps following in this life, he will take on that same kind of birth in a moment, even if he was born into a different kind.

इस जीवन में कोई प्राणी जिस भी जाति के गुणों का हमेशा पालन करता है, वह उसी जाति में तुरंत जन्म ले लेता है, भले ही वह किसी और जाति में पैदा हुआ हो।

4.62.14

प्राक्तनानखिलान्भावान्यान्ति कर्मवशं गताः। पौरुषेणावजीयन्ते धराधरमहाकुलाः॥ १४॥

prāktanānakhilānbhāvānyānti karmavaśaṃ gatāḥ| pauruṣeṇāvajīyante dharādharamahākulāḥ||14||

All past conditions come under the sway of one's past deeds, but even great families as firm as mountains are overcome by human effort.

पिछले सारे हालात इंसान के पुराने कर्मों के अधीन हो जाते हैं; पर पहाड़ जैसे मजबूत बड़े कुल भी इंसान की मेहनत से हार जाते हैं।

4.62.15

धैर्येणाभ्युद्धरेद्बुद्धिं पङ्कान्मुग्धगवीमिव। तामसीं राजसीं चैव जातिमन्यामपि श्रितः॥ १५॥

dhairyenābhyuddharedbuddhiṃ paṅkānmugdhagavīmiva| tāmasīṃ rājasīṃ caiva jātimanyāmapi śritaḥ||15||

With patience, one should pull the intellect out of the mud, like freeing a bewildered cow stuck in mud, even someone who has settled into a dark or passionate nature, or into any other kind, can do this.

धैर्य से बुद्धि को कीचड़ से बाहर निकालो, जैसे कीचड़ में फंसी घबराई हुई गाय को निकाला जाता है, चाहे इंसान तामसी हो, राजसी हो, या किसी और स्वभाव में क्यों न बस गया हो, वह भी ऐसा कर सकता है।

4.62.16

स्वविवेकवशाद्यान्ति सन्तः सात्त्विकजातिताम्। अतश्चित्तमणौ स्वच्छे यद्राघव नियोज्यते ॥ १६ ॥

svavivekavaśādyānti santaḥ sāttvikajātitām | ataścittamaṇau svacche yadrāghava niyojyate || 16 ||

Good people become pure in nature through the power of their own good sense. So, Raghava, a person becomes whatever he fixes on the clear jewel of the mind.

भले लोग अपनी समझ के बल पर ही शुद्ध स्वभाव पा लेते हैं। इसलिए, राघव, इंसान मन के साफ रत्न पर जो भी टिकाए, वही बन जाता है।

4.62.17

तन्मयो विभवत्येवं तस्माद्भवति पौरुषम्। पौरुषेण प्रयत्नेनमहार्हगुणशालिनः ॥ १७ ॥

tanmayo vibhavatyevaṃ tasmādbhavati pauruṣam | pauruṣeṇa prayatnena mahārhaguṇaśālinaḥ || 17 ||

In that way he becomes filled with it, and from that comes true effort. Through effort and striving, people come to possess excellent, worthy qualities.

इस तरह वह उसी से भर जाता है, और इसी से असली मेहनत पैदा होती है। मेहनत और कोशिश से ही लोग बेहतरीन और अच्छे गुण पाते हैं।

4.62.18

मुमुक्षवो भवन्तीह पाश्चात्यशुभजातयः। न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा क्वचित्॥ १८ ॥

mumukṣavo bhavantīha pāścātyaśubhajātayaḥ | na tadasti pṛthivyāṃ vā divi deveṣu vā kvacit || 18 ||

Even those born, because of the past, into an unlucky life become, in this world, seekers of freedom. There is nothing anywhere, not on earth, not in heaven among the gods,

जो लोग पिछले कर्मों के कारण एक बदकिस्मत जिंदगी में पैदा होते हैं, वे भी इस दुनिया में मुक्ति के खोजी बन जाते हैं। ऐसा कुछ भी कहीं नहीं है, न धरती पर, न स्वर्ग में देवताओं के बीच,

4.62.19

पौरुषेण प्रयत्नेन यन्नाप्नोति गुणान्वितः। ब्रह्मचर्येण धैर्येण वीर्यवैराग्यरंहसा ॥ १९ ॥

pauruṣeṇa prayatnena yannāpnoti guṇānvitaḥ | brahmacaryeṇa dhairyena vīryavairāgyaraṃhasā || 19 ||

that a person of good qualities cannot reach through manly effort, through discipline, through steadiness, through the force of vigor and dispassion.

जिसे एक अच्छे गुणों वाला इंसान अपनी मेहनत से न पा सके, अनुशासन से, धैर्य से, और ताकत तथा वैराग्य के जोर से।

4.62.20

हितं महासत्त्वतयात्मतत्त्वं विधाय बुद्ध्या भव वीतशोकः। तव क्रमेणैव ततो जनोऽयं मुक्तो भविष्यत्यथ वीतशोकः ॥ २० ॥

hitaṃ mahāsattvatayātmatattvaṃ vidhāya buddhyā bhava vītaśokaḥ | tava krameṇaiva tato jano'yaṃ mukto bhaviṣyatyatha vītaśokaḥ || 20 ||

Settle the truth of the self in your mind, for your own good, with great strength of being, and become free of sorrow. Then, simply by following your example, these people too will become free, and free of sorrow.

अपनी भलाई के लिए, बड़ी आंतरिक ताकत से, आत्मा के सच को अपनी बुद्धि में बिठाओ, और दुख से मुक्त हो जाओ। फिर, तुम्हारे नक्शेकदम पर चलकर ही, ये लोग भी मुक्त हो जाएंगे और दुख से मुक्त हो जाएंगे।

4.62.21

पाश्चात्यजन्मनि विवेकमहामहिम्ना युक्ते त्वयि प्रसृतसर्वगुणाभिरामे । सत्त्वस्थकर्मणि पदं कुरु रामभद्र मैषा करोतु भवसङ्गविमोहचिन्ता ॥ २१ ॥

pāścātyajanmani vivekamahāmahimnā yukte tvayi prasṛtasarvaguṇābhirāme | sattvasthakarmaṇi padaṃ kuru rāmabhadra maiṣā karotu bhavasaṅgavimohacintā || 21 ||

In this later life, since you are joined with the great glory of true discernment, and are gracious with every virtue fully grown, take your stand in action rooted in goodness, good Rama. Do not let this confused worry about attachment to the world trouble you.

इस आगे के जीवन में, चूंकि तुम सच्ची समझ की बड़ी महिमा से जुड़े हो, और हर गुण के पूरी तरह खिलने से सुंदर लगते हो, अच्छाई में टिके हुए काम में अपना कदम रखो, हे भले राम। संसार से जुड़ाव की यह उलझी हुई चिंता तुम्हें परेशान न करे।